...न सुधा

महिला रोग विज्ञान

...—शशिकान्त मिश्र भिषगाचार्य

...लल कुमारी देवी

मुख सौन्दर्य

डा० कृष्णा कुमारी पण्डित

इस अंक का मूल्य २)

जीवनसुधा

महिला रोग विज्ञान

विशेषांक

सम्पादिका

डा० कुन्तलकुमारी देवी

R. L. M. P. & L. S. (B.&O)

डा० कृष्णाकुमारी पण्डित M. D.
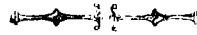
प्रकाशक—

बृहत् आयुर्वेदिक औषध भाण्डार

जौहरी बाजार देहली ।

वार्षिक मूल्य ३)

मूल्य १)

यह पत्र पं० महावीरप्रसाद त्रिपाठी वैद्यराज के लिए सदाबहार प्रेस, खारी बावली [illegible], देहली में छपा ।

विषय-सूची

क्रमांक लेख	पृष्ठ
१—औरत (कविता)	१६६
२—सम्पादकीय	१६७
३—डिम्बकोष का शोथ	१८१
४—पेरीटोनाइटिस और पलविक सल्युलाइटिस	१८३
५—गर्भाशय भित्ति शोथ	१८४
६—गर्भाशय की श्लैष्मिक कला शोथ	१८५
७—स्त्री की अन्तर्नेन्द्रिय के रोग और उनकी चिकित्सा	१८८
८—गर्भावस्था में रक्तस्राव	१९६
९—सुजाक	२०२
१०—प्रदर	२०६
११—प्रदर रोगविवेचन	२११
१२—रक्तप्रदर	२१९
१३—हिस्टीरिया	२२८
१४—सोमरोग	२४०
१५—एक लैम्पसिया	२४७
१६—प्रसूता का आक्षेप	२४९
१७—क्लोरोसिस	२५१
१८—उपदंश	२५४
१९—दांत और उसकी रक्षा के उपाय	२५९
२०—जलजात शिशुपालन	२६१
२१—गर्भकाल	२६५
२२—गर्भिणी के रोग तथा चिकित्सा	२७२
२३—आर्तव व्याधियों की चिकित्सा	२९२
२४—गर्भाशय में जल संचय	२९५
२५—गर्भपात और उस की रक्षा	२९६
२६—शिशुपोषण	२९७
२७—गर्भाशय और डिम्ब ग्रन्थियों को प्रथक कर देने से स्वास्थ्य पर हानिलाभ ।—	३०१
२८—स्त्री शरीर में चूने का अभाव और— उस से उत्पन्न व्याधियाँ ।—	३०५
२९—गर्भ न रहने के कारण—	३१२
३० प्रसूतज्वर	३१३
३१ पित्ताश्मरी	३२१
३२ सूतिका कीटावेश सेव्यथित प्रसूतास्त्री	३२४
३३ प्रसवोत्तर रक्तस्राव	३२६
३४ दुग्ध ज्वर	३२९
३५ गर्भावस्था में आवश्यक नियम	३३१
३६ प्रसवकाल	३३२
३७ शीघ्र प्रसव	३३४
३८ स्त्रियों के सौंदर्य साधन के उपाय	३३५
३९ योनीकण्डू	३४५
४० अनुभूत प्रयोग	३४७
४१ चित्रपरिचय	३५२

सफल-माता

वर्ष ३	वीर निर्माण सं० २४५१ वि० सं० १९८९ सन् १९३३ जनवरी-फरवरी	अङ्क ५—६

शुभ कामना

मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि "जीवन सुधा" स्त्री मात्र के लिये अपने नाम को सार्थक करे।

नारायण स्वामी,

मैं चाहता हूँ कि यह अङ्क गृहस्थ मात्र के घर में पहुंचे और इसका सर्वत्र प्रचार हो।

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति,

जीवनसुधा के विशेषांक की उत्तमता पर मैं बधाई देता हूँ यह जीवनसुधा पत्र कुल नारी जाति के लिये बड़ा लाभकारी होगा स्त्रियों की आरोग्यता और स्वास्थ्य अच्छा रखने के लिये यह पत्र बड़ा परिश्रम करता है अत्यन्त सराहनीय है। मेरे विचार में स्त्रियों की आरोग्यता पर ध्यान रखना इस समय हमारा एक मुख्य कार्य है इस देश का भविष्य स्त्रियों पर निर्भर है उनकी योग्यता और आरोग्यता पर ध्यान करना देश के नेताओं का विशेष कर्तव्य है।

मैं आशा करता हूँ इस देश की स्त्रियां और पुरुष इस पत्र के उद्देश्यों की सफलता में सहायक होंगे।

रायबहादुर हरविलास शारदा

एम. एल. ए.

इस विशेषांक द्वारा देश को बहुत लाभ पहुँचेगा। मैं इस पत्रकी हार्दिक उन्नति चाहता हूँ।

बी. ऐन. मिश्रा

बार ऐटला M. L. A.

She is an authority on women's health and women's diseases. As such, the special number will find welcome in every home and would go a long way to educate the mind of women of India. I do wish this special number wide circulation and wider appreciation.

B. DASS B. A., B. I. D.
(London)
M. L. A.

2-4-33

औरत

(रचियता—अख़्तर सीरानी)

हयातो-हुरमतो-महरो-वफ़ा की शान है औरत,
शबाबो-हुस्नो-अन्दाज़ो अदा की जान है औरत;
हिजाबो-असमतो-शर्मो-हया की कान है औरत,
जो देखो ग़ौर से हर मर्द का ईमान है औरत !
अगर औरत न आती—कुल जहाँ मातम कुदा होता !
अगर औरत न आती हर मकाँ इक ग़म कुदा होता !!
कहीं मासूम तुफ़्ली उस के नग़्मों से बहलती है,
कहीं बेख़ुद जवानी उसके नोशे लब से फलती है;
कहीं मजबूर-पीरी उस की बातों से सँभलती है,
कहीं आराम से जान उसके क़दमों पर निकलती है !
नहीं है क़िब्रिया लेकिन—वह शाने क़िब्रियाई है !
हमारी सारी प्यारी उम्र पर उसकी ख़ुदाई है !!
वह रोती है तो सारी काइनात आँसू बहाती है,
वह हँसती है तो फ़ितरत बे ख़ुदी में मुसकराती है;
वह सोती है तो सातों आसमाँ को नींद आती है।
वह उठती है तो कुल ख्वाबीदः दुनिया को उठाती है ।।
वही अर्माने हस्ती है वही ईमानेहस्ती है !
बदन कहिये अगर हस्ती को—तो वह जाने-हस्ती है !!
वह चाहे तो उलट दे पर्दये दुनियाए फ़ानी को !
वह चाहे तो मिटा दे जोश वहरे ज़िन्दगानी को !
वह चाहे तो जला दे नख़्ल ज़ोरे हुक्मरानी को !
वह चाहे तो बदल दे रङ्ग बज़्मे आसमानी को !
वह कह दे तो—बहारे-जलवा मिट जाये नज़ारो से !
वह कह दे तो—लिबासे नूर छिन जाये सितारों से !!

"इन्तख़ाब"

सम्पादकीय

हमें इस बात को सूचित करने में बड़ा दुःख होता है कि बहुत बाधा, विघ्नों का सामना करते हुए, बड़ी देर के बाद भी हम "जीवन-सुधा" का महिलारोग का विशेषांक पाठक पाठिकाओं को जैसा चाहते थे और जैसा होना भी चाहिए था वैसा भेंट नहीं कर पाये। तोभी जितना हुआ वह देश के वैद्य समाज की अवस्था दृष्टि से क्षमणीय है। हमारे पास जो लेख आये हैं, उनमें से पाँच, छः लेखों को छोड़ कर और सब देने के अयोग्य हैं। अश्लील एवं चिकित्सा विज्ञान विरुद्ध, मन घड़न्त ऊट पटाँग बातों से भरे हुये हैं। जो बचे, खुचे पाँच, छः लेख हैं उनमें से एक, दो को छोड़ कर बाक़ी सब अपूर्ण हैं। बड़े परिश्रम के बाद उन्हें प्रकाशित करने योग्य बनाया गया। लेखों की कमी के कारण ही हमें निर्दिष्ट, समय से अधिक समय लेना पड़ा, लेकिन तब भी आशानुरूप लेखों की प्राप्ति नहीं हुई। अब जो कुछ मिला वही पाठक, पाठिकाओं के सामने उपस्थित किया गया है। दोष गुणों के विचार का निश्चय उन्हीं के ऊपर है।

यहाँ एक बात और भी कह देना चाहती हूँ कि लेखों कीसंख्या में कोई कमी नहीं थी, बल्कि एक एक विषय पर आधे दर्जन से भी ज्यादा लेख आये थे, परन्तु कोई काम के न थे। इस से मुझे देश के वैद्य समाज का महिला-रोग विज्ञान सम्बन्धी ज्ञानाभाव देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। देश की जिस चिकित्सक मण्डली के ऊपर देशवासी जनसाधारण की अधिक श्रद्धा, विश्वास निर्भर है, जो चिकित्सा प्रणाली आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा विधान से बहुत सस्ती और सुलभ है, उसके प्रयोग करने वाले देश के वैद्य समाज का इस विषय के चिकित्सा विभाग का होना ज्ञानाभाव आज बीसवीं सदी की दृष्टि में क्षमणीय नहीं है। क्या वैद्यक शास्त्रों में महिला रोग सम्बन्धी निर्णय विधान अपूर्ण हैं या वैद्यों की शिक्षा प्रणाली का यह दोष है? क्या उनके पास साधन की कमी है? जो भी हो, ऐसी अपूर्ण शिक्षा से और काम नहीं चलने का दिन प्रति दिन देश में आधुनिक शिक्षा का विस्तार हो रहा है, जनता अब भली भाँति समझने लग गई है, ऐसा नहीं कि वैद्यक चिकित्सा की क़दर जाती रहे। विज्ञान युक्त आधुनिक प्रणाली से शिक्षा ग्रहण करना हरेक वैद्य और हकीमों को सर्वथा उचित है। क्योंकि चिकित्सा व्यवसाय एक महान लोक हित कर धार्मिक सेवा कार्य है। वैद्य, डाक्टर लोग-जान के जिम्मेवार होते हैं। जान से बढ़ कर दुनिया में कोई चीज कामती नहीं होती है। इस बात को सर्वथ य ध्यान में रख कर चिकित्सा व्यवसाय अवलम्बन करना उचित है। नहीं तो "वैद्यराज यमराज सहोदरम्" बन कर लोगों का धन प्राण अपहरण करने की ही कारसाज़ी करते रहेंगे।

एक विचित्र लेख में तो सिर्फ़ अपनी दवाइयों का विज्ञापन ही नजर में आया। साधारण लेख लिखते समय अपनी बनाई हुई दवाइयों का विज्ञापन न देकर सुलभा शास्त्रीय औषधियों का प्रयोग लिखना उचित था। और कोई २ लेखक, महाशय तो शीलता

की सब मर्य्यादा भंग करके आधुनिक चिकित्सा शास्त्र, पाश्चात्य,चिकित्सासम्मत चिकित्सालया (Hospitals) को नर्क और चिकित्साओं को भी कोसना शुरू कर दिया था। इस से उन्हीं लोगों के चिकित्सा शास्त्र सम्बन्धिय ज्ञानाभाव के सिवाय और कुछ कारण समझ में नहीं आता किसी २ लेखों में तो शास्त्रीय चिकित्सा को छोड़ कर गंडा, तावीज, काबा शरीफ का फूल, शिवाजी की तलवार आदि से चिकित्सा का गर्भिणी को कष्ट शमनोपायों का वर्णन देखकर लोगों का अन्ध-विश्वास और कुसंस्कार पर बड़ा खेद हुआ शेष इन तमाम बातों को विचारते हुये मुझे इस निश्चय पर पहुंचना पड़ा कि चाहे वैद्य ग्रन्थों में नारी रोग विज्ञान विषय की रचना का अभाव है या वैद्यो को अध्ययन की कमी हैं।

सब लेखों में वैद्यशास्त्री श्री कृष्णप्रसाद B. A. गर्भिणी-रोग को सम्बन्धी लेख मुझे बड़ा पसन्द आया। अगर वैद्य लोग इन्हीं के बरोबर देशीय और पाश्चात्य उभय विध चिकित्सा शास्त्रों का अध्ययन कर के विज्ञान सम्मत उपाय से चिकित्सा करें तो जनता को लाभ पहुँचाने के अतिरिक्त अपनी प्रतिष्ठा भी बढ़ाते रहेंगे।

आधुनिक मातृ विज्ञान अवहेलना की सामग्री नहीं है। समुदाय सभ्य देशों में मातृ-विज्ञान की चर्चा बड़ी विस्तृत भाव से होरही है। देश और जाति को सृष्टि करने वाली मातृ मण्डली के कल्याण से ही जाति का भविष्य निर्धारित होता है। जिस जाति की माताएं कमजोर रोग ग्रस्ता है। उस जाति का चाहे कितना भी राजनैतिक आन्दोलन क्यों न हो कभी उन्नति नहीं हो सकती है। मेरु दण्ड भग्न होने से प्राणियों का चलना फिरना जैसा असम्भव है वैसे ही स्वस्थ सन्तान रूपी मेरुदण्ड न होने से जाति सीधी खड़ी नहीं होसकती। "बृहत्तर भारत" (Greater India) निर्माण करने को देश में बलिष्ठ सन्तानोत्पति की विशेष आवश्यकता है और बलवान सन्तानों की बलवती जननीयों कीपरमावश्यकता है। यद्यपि भारतवर्ष में तो सब प्रकार का आन्दोलन जारी है। राजनैतिक, धार्मिक, अछूतोद्धार, विद्रोहात्मक,क्रान्तिकारी लेकिन जो जाति के जीवन मरण की समस्या है उस विषयक आन्दोलन की नाम मात्र चर्चा कहीं नहीं है। भारतीय जनता अपनी स्त्री जाति को नैतिक ख्याल में संसार भर की स्त्रियों से ऊँची समझ कर उनकी वास्तविक दुख परिस्थिति को सुधारने की कोई चिन्ता न करके लापरवाही की मिठी नीद में सो रही है। इसी कारण संसार भर की स्त्रियों से भारतीय नारियाँ कहीं अधिक कुसंस्काराछन्न, अन्ध, अज्ञान, तमसावृत हैं। इससे इनका श्रेष्टत्व प्रतिपादित नहीं होता है, बल्कि मिसमेयो जैसी व्यक्तियाँ इनकी हँसी उड़ाती हैं।

वस्तुतः भारतीय नारियों की आधुनिक परिस्थिति अति शोचनीय है। गत बारह साल डाक्टरी प्रैक्टिस की है जिससे मुझे कई हजार भारतीय बहिनों की शारीरिक और गार्हस्थ हालका जो विवरण मालूम हुआ है वह बड़ा दर्दनाक है। इस अभागे देश की अभागिनी नारियां सहज चिकित्सा से आराम होने वाली ऐसी सैकड़ों व्याधियों से पीड़ित होकर जल जल कर मर मिटती हैं जो दूसरे देशों की नारियों के अनुभव के सर्वथा परे हैं। श्वेतप्रदर एक अति साधारण स्त्री रोग है, और अनायास चिकित्सा व रहन सहन, खान, पान के परिवर्जन से ही अधिकांश स्त्री इस आयु क्षय करने वाले रोग से मुक्त हो सकती हैं। लेकिन स्त्रियों को स्वास्थ रक्षा सम्बन्धी अति साधारण ज्ञान तक के अभाव से वह जिन्दगी से

ऊब कर रात, दिन हा हा कार करती रहती हैं और दवाईयों की शीशीयों के सहारे जीवन बिताती हैं, नहीं तो मूर्ख दाईओं और अनभिज्ञ चिकित्सकों के पंजे में पड़कर धन और प्राण दोनों ही नष्ट कर देती हैं। वैसे ही बन्ध्या रोग से, शरीर में उपयुक्त खाद्याभाव वशतः चूने की कमी रोग से (Ovarian defficiency and calcium defficiency diseases) पीड़ित होकर कहां सुचिकित्सा करवाएं, वह जाती है स्याना, दिवाना, योगी, सन्यासीयों का पैर पकड़ने, मंत्र, जंत्र, तावीज, तिलस्मों से रोग दूर करने। हमारी सामाजिक कुरीतियां चाहे शास्त्रोय दृष्टि से कितनी ही महत्व पूर्ण क्यों न हो लेकिन शरीर विज्ञान की दृष्टि से सर्वथा निन्दनीय और वर्जनीय हैं। बाल्य विवाह और बालिका कन्या का गौना, युवती विधवा को ब्रह्मचारी बनाकर रखना प्रकृति विरुद्ध महापाप है, लौकिक और धार्मिक खयालात से चाहे हम उनके बारे में कितना ही महत्व पूर्ण व्याख्या क्यों न कर बैठें। इन रिवाजों के कुफल हमें बराबर भुगतने पड़ते हैं लेकिन हमारी आंखें नहीं खुलती। लाखों शिशु और प्रसूताओं की अकाल मृत्यु, सैकड़ों शीलवती सुकुमारिओं की वेश्यावृत्ति करना हम बुरा नहीं समझते हैं। अगर हम इन बातों का गम्भीर ध्यान से चिंतन करते तो कब के हमारे समाज में इन महा-व्याधीयों को दूर भगा देते। बाल-विवाह, निरोध और विधवा-विवाह विधान रूपी आईन कानून बनाने के लिए कोई जरूरत नहीं होती! जो बातें साधारण ज्ञान में भी समझने को कोई मुश्किल नहीं है इन बातों के लिए फिर क़ानून की भी क्या जरूरत है। हमारे देश की लड़कियां गुडियों के खेल से निवटने के पहले ही मां बनकर बैठ जाती हैं। नारी जीवन का मूल्य सिर्फ बच्चा पैदा करने में ही निर्धारित है। यदि कोई कारण वश, जिनमें ज्यादातर पुरुषों का शारीरीक दोष है, यदि कोई स्त्री को बच्चा नहीं होता है कहां उसका प्रकृत तथ्य अनुसंधान करके चिकित्सा करें घरों घरों में इन अभागिनीओं के ऊपर अकथनीय अत्याचार होता रहता है। समय समय पर ऐसी स्त्रियां जहर भी खाकर इहलीला समाप्त करती हैं। क्या बच्चा नहीं होना स्त्री का ऐसा महान अपराध है जो कि उसे उसके पति और ससुराल वाले सबके स्नेह प्रेम से वंचित कर देता है? स्त्री के सन्तान नहीं होने से बार बार विवाह करने को भी भारतीय पुरुषों का लज्जा नहीं होती। स्त्रियां विधवा रहने को जैसे विवश की जाती है अगर पुरुषों को वैसे ही विधुर रहने को मजबूर किया जाता तो विपत्नक पुरुषों की संख्या देखकर लोग घबड़ा जाते और तभी नारी मंगल उपायों को काम में लाने की कोशिश करते। परन्तु यहां नारी जीवन का मूल्य ही क्या है जो कोई इस तरफ ध्यान दें। धर्म शास्त्रों में ब्रह्मचर्य्य के बारे में जितने उपदेश हैं शायद और किसी विषय पर इतना हो, ब्रह्मचारी पुरुष को मर्य्यादा देवताओं से भी कम नहीं है। उन शास्त्रों को पूज्य मानने वाले हमारे भाईयों को अगर पूछा जाय तो क्या यह कह सकते हैं कि बारह साल की माता और पन्द्रह साल का पिता किस ब्रह्मचर्य्य धर्म का अनुयायी है? घर घर में उपदंश, धातु विकार, ऋतु सम्बन्धी रोगों का प्रादुर्भाव और हर अखबार में सूज़ाक, गर्मी, नामर्दी की सैकड़ों दवाओं के अचूक विज्ञापनों से हिन्दुस्तान के आजकल की नैतिक चरित्र का अच्छा पता लग सकता है। बचपनी वहीं जाने से पूर्व बच्चे के माँ बाप दूर रहा, उनको पालन पोषण, मनुष्य बनाना किसी क़दर अपनी किस्मत के जोर से वह दुनियां में पल जाय तो बाप, दादों के

स्वर्ग में दिया जलाकर, पिण्ड पानी देकर पुन्नामक नर्क कुण्ड मे त्राही करने के काम में आजाते हैं। इससे और क्या ज्यादा चाहिये ? सन्तान पालन की शिक्षा तो कहीं कोई लड़की को कभी दी नहीं जाती, नातो, आधुनिक स्कूल, कालेजों में भी उसके लिए कोई प्रबन्ध हैं। भाग्यबल से माता बन जाना, हर साल एक बच्चे. की माँ बनकर बीस वर्ष पूर्व ही यौवनश्री को खो बैठना जैसे हमारी बालिकाओं का फर्ज़ है।

सेहत के ऊपर बुरा प्रभाव डालने वाला और एक रिवाज है, वह है पर्दा। आज की बीसवीं सदी में पर्दे की क्या जरूरत है यह मेरी समझ में नहीं आता शुद्ध, वायु प्राणीमात्र का जीवन है। हर दम घूंघट से दम घुटना भले ही कोई धर्म हो, मनुष्यत्व की दृष्टि से तो यह एक भीषण अत्याचार हैं। जिसने फल स्वरूप भंयकर राजक्षमा हमारे देश में स्त्रियों का सर्वनाश कर रहा है। वायु आलोकहीन, अपरिसर कमरों में हर समय रहने से ही यह रोग होता है और वह इतना संक्रामक है कि घर में एक को होने से दूसरों को होने की बड़ी आशंका रहती है। सुस्वाद्य, उपयुक्त व्यायाम, परिश्रम, तन्दरुस्ती, युक्त वायु और रोगकीटाणु नाशक जीवन प्रद सूर्य्यालोक में रहने से यह रोग आक्रमण करने नहीं पाता। स्त्रियों को यह रोग गर्भावस्था प्रसूतावस्था और स्तन्यदानावस्था में ही ज्यादा होता है। इस रोग की आज तक सुफल प्रद चिकित्सा नहीं है। यह रोग जब दूसरी अवस्था में पहुच जाय तो फिर शंका है। अत एव रोग न होने का ही उपाय अवलम्बन करना बेहतर है। बाल्य विवाह जनित बहुप्रसव तो इस रोग का एक मुख्य कारण है। भारतवर्ष में लड़कीयों का ऋतु प्राय १२ से १४ साल के अन्दर आरम्भ होजाता हैं। ऋतु आरम्भ में ही लड़की की शादी न करके उसने गर्भाशय प्रसव यंत्रों को पूर्णत: प्राप्ति के लिए कम से कम तीन चार साल का समय देना चाहिये। इस लिए सोलह साल पहले तो कभी किसी बालिका का विवाह नहीं होना चाहिये, अगर अट्ठारह बीसमें हो तो बहुत अच्छा। सोलह के बाद और बीस के पूर्व प्रथम सन्तान होना सबसे अच्छा है। अति कोमल अवस्था की सन्तानें अपक्व, अल्पायु अल्पवीर्य्य होती हैं। वैसा ही बहुत ज्यादा उमर में पहला प्रसव हड्डियों की सख्ती की वजह से कष्टदायक भी है। परिणत वयस्क माता पिता की सन्तान बुद्धिमान शक्तिमान होती है। मासिक धर्म होने से पूर्व बालिकाओं को पति समागम में भेजना जैसा अमानुषिक और विवेक बुद्धि विरुद्ध है वैसानाना रोगों और अकाल मृत्यु का कारण भी है। ऋतु के पूर्व यातो ऋतु आरम्भ मात्र गर्भ होजाना। डिम्बकोष का प्रदाह होकरबन्ध्यात्व होना अथवा ऋतुदोष, अल्प या अधिक स्राव, कष्टरज: श्वेतप्रद,(Ovaritis sterility menorhagia dysmenorrhoea ammenorrhoea endometritis leucorrhoea and le

इत्यादि व्याधि अधिकतया इसी कारण से होना मुझे मालूम है। अपरिणत वयस्क स्त्री पुरुषों के रज, वीर्य उभय तरल और धातु अपुष्ट होने के कारण इन्द्रिय सम्भोग मस्तिष्क व मेधा बुद्धि में अत्यन्त हानिकारक है। नाना प्रकार की स्नायविक दुर्बलता, विकार, मूर्छा, हिसटिरिया, प्रलाप, मृगी, पागलपन इस पाप का फल है। भारतीय स्त्री, पुरुष पृथ्वी पर अगर अपनी स्वाधीन मानवता की धाक जमाना चाहते हैं तो उनको पहले अपनी सेहत की तरफ ध्यान देना उचित है। बावन होकर चाँद छूना असम्भव है। नारी रोग में सब से प्रधान रोग है ऋतु दोष

और श्वेत प्रदर, ऋतु दोष हिन्दुस्तान में जितना है शायद और कोई देशमें इतना हो, और ज्यादातर उच्च कुलकी हिन्दू स्त्रियां इसे भोगती रहती हैं। मासिक ऋतु होना नारी शरीर का एक स्वाभाविक धर्म है लेकिन हमारे समाजिक कुरीति से वह भी एक बड़ा ही छूत का व्यापार बन गया है। इस लिए कहीं तो ऋतुमति को अच्छा साफ़ कपड़ा पहनने को दे और आराम करवायें परन्तु उसे गन्दे कपड़ों में ही दूर बैठाने का रिवाज हर प्रान्त में पाया जाता है। अलग बैठाने का तरीका आराम के लिहाज़ से बहुत अच्छा है। शायद हमारे पूर्व पुरुषाओं का यही खयाल होगा, लेकिन आज कल का दूर बैठना याने एक वस्त्र होकर मैले, गन्दे कपड़ों में खनसे सनते रहे, ठंड के दिन में भी काफी गरम कपड़े बिछाने तथा इस्तेमाल करने न दिये जाँय सिर्फ छूत के मारे। शरीर की एक स्वाभाविक अवस्था को छूत समझ कर परहेज करना मूर्खता है। ऋतु के समय साफ कपड़ा बिछौना व्यवहार में लेना चाहिए। और स्नान के बारे में भी ध्यान में रखना चाहिए। कि ठंड न लगे अत: गर्म पानी का इस्तैमाल करना चाहिए। और विशेष लेटी रहना इस समय अच्छा हैं। भोजन भी हल्का ही हो. वजन का उठाना, जीना चढ़ना, उतरना, नाच, कूद करना, सैर, सफर करना भी अच्छा नहीं है और तीसरे दिन स्नान करने ही पति प्रसंग करना बहुत खराब है।

ऋतु धर्म सठीक पालन नहीं करके ही तो सैकड़ों स्त्रियां अपनी सेहत बिगाड़ बैठती हैं? ऋतुमति स्त्री को आयुर्वेद शास्त्रों में प्रथम तीन दिन जो रजकिनी, चाण्डालीनी, ब्रह्मघातिनी आदि संज्ञाओं से अभिहित की गई है। उसका कारण यह है। कि उन दिनों पुरुष को छूना भी पाप है।

केवल मात्र तीन दिन नहीं, जब तक रक्त जारी है, तब तक सहवास अत्यन्त हानिकारक है सिर्फ रस्मो रिवाज के खयाल से ही इन बातों का पालन करना ठीक नहीं है। रक्त-स्राव के समय सहवास से ही अनेक स्त्रीरोग की उत्पत्ति होती है। श्वेत स्राव का यह एक मुख्य कारण है। साधारणत: नारियां लज्जावशत: इन बातों को खुल्लमखुल्ला पुरुष चिकित्सकों के सामने प्रकट नहीं कर सकती और रोग भोगती जाती हैं। इसलिए भी नारी चिकित्सिकाओं की कितनी आवश्यकता है यह सब साधारण अनुभव कर सकते हैं।

मासिक ऋतु, सहवास, सन्तान प्रजनन, और शिशुपालन यह है नारी का जीवनचक्र इनके हर पहलू पर शिक्षा ग्रहण करना नारी जीवन के लिए जैसे अत्यन्त अवश्यक है पुरुषों के लिए उतना कदापी नहीं है। जीवन धारण के लिए परं प्रयोजन इन बातों को अश्लील और गन्दे समझ कर उनकी शिक्षा का कहीं भी कोई प्रबन्ध न होना देश की सामुद्रिक क्षति का कारण है। स्वास्थ रक्षा मातृत्व और ससन्तान प्रसव की शिक्षा (Hygeine, maternity and egenics) घर घरों में तथा हर बालिका विद्यालय में होना चाहिए। लड़किया को ड्राईंग ज्योमेट्री बीज गणित अंक गणित भूगोल से भी इन विषयों की शिक्षा की ज्यादा जरूरत है कोई स्त्री अगर उन तमाम विषयों को नहीं जान कर मातृ शिक्षा अधिक पाई हो तो उसके अपने जीवन में अधिक लाभ है। शारीरिक सौन्दर्य, धन, बिलासता से भी यह शिक्षा का मूल्य वास्तव में जीवन में बहुत है नारी का धर्म ही मातृ धर्म है। बार-व्रत शास्त्र-पाठ, परलोक के लिए उपयोगी हो लेकिन मातृ धर्म पालन तो इस लोक के लिए पहिले चाहिए। भारतीय

नारियों को जीविका निर्वाह के लिए विवाह और वेश्या वृति के सिवाय अन्य मार्ग नहीं है। उदर पोषण के लिए, शरीर बेचने के अतिरिक्त और अन्य उपाय ही नहीं। ज्यादा सहवास से जरायुगत रोगों का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ऋतु के तीन दिन में गर्भावस्था में, जाप से उठने न उठते ही पुरुष प्रसंग शायद सभ्य मनुष्य का धर्म ही पशुओं में भी यह बात पाई नहीं जाती है। गोद में तो तीन महीने का और पेट में डेढ़ महीने का बच्चा हो तो शरीर कैसे स्वस्थ रह सकता है? हर साल बच्चा होना कोई खेल है? इस लिए नलों में दर्द सूजन और सफेदी, महीने की खराबी, हिन्दुस्तानी स्त्रियों के जीवन के मित्र हैं, शरीर का आभूषण है। वैद्य, डाक्टर, लोग महिला रोग यानी इन्हीं रोगों की चिकित्सा कहते रहते हैं। मरिजाओं को तो दवाई घोट घोट के खूब पिलाते हैं, लेकिन रोग क्यों होता है, अथवा कारण प्रति विधान नहीं बतलाते अगर स्त्रियां खुद इन बातों को समझ जायें तो देश से ऋतु दोष जनित बहुबाध व्याधियां बिना चिकित्स दूर हो जायेगी।

वैद्य डाक्टरों का रोग चिकित्सा ही एकमात्र कर्त्तव्य नहीं है। रोग प्रति-विधान जनता को रोग निवारक शिक्षादान भी इन्हीं का कर्त्तव्य है। संयमी जीवन का मूल्य भारतीय पुरुषों को शीघ्र समझना चाहिए। उन्हीं के दोष से लाखों सुकुमार अबलाएं गर्मी सुजाक आदि भयानक रोग भोग करके हाहा कार मय जीवन बिताती रहती हैं। धातु और उपदंश, जरायु रोगों के प्रधान कारणों में गिने जाते है। और हिन्दुस्तान में भद्र कुलीन कहलाने वाले पुरुषों के चरित्र दोष से इन रोगों को भोगने वाली स्त्रियों की संख्या करोड़ो क तादाद में है। इसका प्रतिकार भी क्या स्त्रियों के हाथ में है? पुरुषों को खुद सोचना चाहिए।

बड़े घराने की अधिकांश स्त्रियों के पास साधारणतः कोई काम नहीं रहता। कारण ऐशोआराम के कारण अकर्मण्यता और आलस उनके शरीर को ऐसा बेकार बनादेता है। वह दिन पर दिन फूलती जातीं हैं और मोटापा के इलाज के लिए नाना उपाय करती रहती हैं। मोटापा का असल इलाज दवाईयों से नहीं होता है। चर्बी घटने का एक मात्र उपाय है परिश्रम। परिश्रम न करके नित्य गुरु भोजन करने से चर्बी खुद व खुद बढ़ती जायगी। इसमें अगर बांझपने का रोग हो जाय तो बस बादी के मारे शरीर दिन पर दिन भारी होता जायगा। व्यायाम यानी कसरत (वरजिश) ही इसका सबसे सरल इलाज है। भोली भाली गृहस्थी स्त्रियां कसरत का मतलब ही क्या जानती हैं, केवल दवाई खा खाकर पैसा व सेहत दोनों ही बरबाद करती जाती हैं। इनको इन तमाम बातों की शिक्षा कौन दे? यह भार किसके ऊपर है?

वैसे ही पेशाब में जलन और कभी २ उसके साथ योनि द्वार से श्वेतस्राव एक साधारण नारी रोग जो की मल कीटाणु (Bacillus coli infect ion) से होता है। असली सुजाक और इस रोग में बड़ा भारी अन्तर है। लक्षण कभी२ दोनों के एक दूसरे से मिलते जुलते हैं। तथापि भयंकरता के हिसाब से सुजाक खतरनाक और वंश नाशकारी है। विकोलाई (B. Coli) रोग से कभी भी वन्ध्यत्व और रक्त प्रदर आदि जरायुज रोग नहीं होते हैं। यह रोग पुरुषों को कभी २ होता है। अस्वाभाविक इन्द्रिय सुकुमार सेवन से ही हो जाता है। सुकुमार बच्चों को भी हो जाता है। इस रोग के बीजाणु दुषित जल में हैजा और मोती-

मारा बुखार के कीटाणु अधिक पाये जाते हैं। (Cholera Typhoid germs) इसकी चिकित्सा भी सुजाक से भिन्न है। अकारण साधारण व्याधियों का निदान न समझ कर खाली दवाइयों से काम लेना ठीक नहीं है।

दवाइयों से आराम नहीं होनेवाला और एक प्रधान रोग है हिष्टीरिया। यह शारीरिक रोग नहीं है, न तो यह जीवन घातक है। एक प्रकार का मानसिक विकार है। जो पारिपार्शविक कारणों से उत्पन्न होता है। जरायु गत रोग भोगने वालियों को मानसिक दुश्चिन्ता अधिक होने के कारण उन्हीं महिलाओं को यह ज्यादा सताता है। हिष्टीरिया रोगकी एक मजेदार ख़ूबी यह है कि उक्त रोग भोगने वाली ख़ुद उससे आराम होना नहीं चाहती और घरवाले ख़ामख़्वा परेशान होकर वैद्य डाक्टरों के पीछे फिरते रहते हैं। यह रोग पहले जमाने से आजकल ज्यादा होने का कारण कोई कोई सज्जन ख़्याल करते हैं आधुनिक शिक्षा का यह नतीजा है, यह बात नहीं है। शिक्षिता और काम धन्धा को करने वालियों को तो यह रोग क्वचित होता है, साधारण मजदूर श्रेणी में तो इसका नामो निशान मिलना कठिन है। विलास ललिता, ऐशाआरामवाली बड़े घरान की स्त्रियाँ जिनके पास जीवन धारण के लिए कोई फ़िक्र नहीं है, और जिनके पारिवारिक कारणों से दिल में किसी क़िस्म का दुःख बना रहता है, जैसे बच्चा नहीं होना, पति का अप्रेम, अत्याचार, सास नन्द का दुर्व्यवहार गुप्त असाध्य रोग इत्यादि इसका कारण है। कारण दूर होने से ही रोग का दूर होना ज्यादा आसान है। आज-कल स्त्रियों के पास कोई काम नहीं है। कुटीर शिल्प, लुप्त प्रायः अति सुलभ मूल्य से विलासिता की समुदाय वस्तुओं की प्राप्ति होने के कारण घर बैठे २ नित्य नई बीमारियाँ उत्पन्न होती जाती है। और जिनके पास काम है तो वह भी हद से ज्यादा है। बहु सन्तानों का अकेली ही ख़िदमत करना साधारण घर धन्धों को सम्भाल कभी कभी इतना अधिक कष्ट दायक हो जाता है। कि बिचारी स्त्रियाँ घबरा जाती हैं। मानसिक विकार के व शारीरिक कमजोरी के कारण कोई न कोई रोग हो जाता है। इन बातों का सामूहिक रूप से प्रतिकार करने के लिये कभी किसी ने ध्यान नहीं दिया नारी मङ्गलात्मक कार्य की सूचना तक कहीं नहीं मिलता है। समाज सुधारकों का भी इस ओर कितना काम करना है। यह किसीने सोचा भी है? जब तक स्त्रियाँ ख़ुद इन कामों को सम्बद्धभाव से नहीं करना शुरू करेंगी, देश की स्त्री जाति की उन्नति कल्पना आकाश कुसुम है।

एक मामूली बात, दांतों की सफाई, यह भी स्त्रियां अच्छी तरह से नहीं करतीं। इससे सैकड़ों बीमारियां, जैसे दांतों की जड़ों में मसूढ़ों में पीप होकर थोड़े दिनों में दांतों का नष्ट होजाना, श्वास में दुर्गन्धि, अजीर्ण, अग्निमांद्य, जिगर की खराबियां तपेदिक होजाता है क्या इन बातों को भी स्त्रियां नहीं समझ सकतीं? मुँह के भीतर की सफ़ाई जबान के मैल को तांबे, पीतल, चाँदी नहीं तो दांतन के जीभी से साफ़ नहीं करके ऊपर चाहे कितने ही इत्र, पाउडर मले तो कोई फायदा नहीं है।

उत्तरी हिन्दुस्तान में हड्डियों का टेढ़े होजाने का मर्ज विशेषकर स्त्रियों में बहुत पाया जाता है। इसको डाक्टरों में (Osteomalacia) अर्थात् अस्थि-विकृति कहते हैं इसका कारण शरीर में चूना का

अभाव है (Calcium deffieeney) चूना शरीर का एक स्वाभाविक धातु है, बगैर चूना के जैसे ईंट की इमारत खड़ी नहीं होसकती। बगैर चूना के हड्डियों में सख्ती नहीं होसकती है। दाँतों की मजबूती भी इसी चूने के कारण है। यह चूना रक्त के आधार पर हड्डियों में जाकर मिलती हैं। और खाद्य पदार्थ से ही यह चूना शरीर में संचित होता है। स्त्री शरीर में चूने की आवश्यकता पुरुष शरीर से कहीं ज्यादा है। मासिक धर्म के समय रक्त स्राव में गर्भस्थ सन्तान को बनाने में, और स्तन्यदान में चूना बहुत खर्च होता है और वह सब चूना खाद्य से ही मिलना चाहिये। यौवनारम्भ काल में जब की लड़कीयां जल्दी जल्दी बढ़ने लग जाती हैं उस समय उनका खान पान, रहन सहन, की तरफ बहुत ज्यादा ध्यान देना, हरेक माता, पिता का कर्त्तव्य है। लेकिन हमारे देश के माता-पिताओं को तो लड़की की विवाह की चिन्ता ऐसी सताती है कि वह लड़की लम्बी चौड़ी न होजाय, इस भय से उसका खाना पीना तक रोक देते हैं घरों में पुरुषों से स्त्रियों का भोजन सदैव हीन होता है। झूठा खाना बासी खाना, बार बार व्रत उपवास करना धार्मिक ख्याल से अनेक खाद्य वस्तुओं का त्याग देना केवल कुसंस्कार और शिक्षाभाव के सिवाय और क्या होसकता है? पर्दे का बुरा प्रभाव भी और व्यायाम अभाव भी इस रोग के कारणों में है। इस रोग में आहिस्ते आहिस्ते हड्डियाँ टेढ़ी होकर इन्सान अपाहिज बन जाता है। बस्ती देश की हड्डियां तो इतनी टेढी हो जाती हैं कि सन्तान प्रसव होना असम्भव होजाता है इस समय डाक्टर लोग पेट चाक करके बच्चे को बाहर निकालते हैं। जहाँ यह साधन मौजूद नहीं है वहाँ बिना प्रसव ही गर्भाणी की मृत्यु होजाती है। याती गर्भ का अल्प मास में ही गर्भपात करवाना पड़ता है। मेरे विचार में ऐसी अपाहिज बालिकाओं की शादी नहीं करनी चाहिए उनको उपयुक्त शिक्षा व साधन से स्वस्थ बनाना चाहिए। अगर कभी भी ऐसी किसी लड़की की शादी हुई तो हर प्रकार से उसकी सन्तान न होने का उपाय कर देना चाहिए।

गर्भ निरोध और सन्तान निग्रह (Birth control) अब हिन्दुस्तान के लिए बड़ा आवश्यक है। लेकिन यह भी आधुनिक विज्ञान सम्मत उपायों से ही होना चाहिए। जहरीला, खतरनाक औषधियों का व्यवहार करके गर्भ निरोध करने के बजाय फ़ायदे के कभी कभी नुकसान होजाता है। ऐसे कितनों के प्राणों को संकट में फंसते। हमने देखा है। अकाल बाध्य, दृष्टि क्षीणता—बालों का सफेद हो जाना, कुन्द विकार, जरायु में रसौली बन जाना आदि अनेक तकलीफे इस अवस्था से उत्पन्न हो जाता है। इसके लिए पाश्चात्य देशों के न्याय गर्भ निरोध केन्द्र बनना और वहाँ के सुचिकित्सकाओं से परामर्श ग्रहण करना ही उचित है।

देश में सचमुच मातृ मंगल और शिशुमंगल केन्द्रों की (Maternity Centres and Baby Clinics) बड़ी आवश्यकता है। आज कल कई वर्षों से यहाँ पर रेडक्रास सोसाईटियाँ काम कर रहा है। लेकिन उनको आज भी आशानुरूप सफलता प्राप्त नहीं हुई है। इसका प्रधान कारण है बदइन्तजामी निम्न कर्मचारियों की लापरवाही, हमारी भारतीय बहनों का इस विषय में शिक्षाभाव और वैदेशिक संस्थाओं के ऊपर श्रद्धा की हीनता में सोचती हूँ यह काम क्या खाली सरकार या इसाई मिशनरीयों के ही करने योग्य है? देश के साधारण हिन्दू, मुसलमान जनता को क्या अपनी मातृ जाति की स्वास्थ्य की तरफ ध्यान देना गुनाह है? स्वास्थ्य सम्पन्ना, सुमाता

प्रधान सम्पादिका " महिला रोग विज्ञान "

डा० कुन्तल कुमारी देवी जी R. L. M. P. & L. S. (B. & O.)

गवर्मेन्ट से २६ स्वर्ण तथा रजत पदक प्राप्त, विशेषज्ञ मिडवाइफ़री और गायनाकलोजी, सुपरिन्टेन्डेन्ट मातृ मन्दिर (**Maternity Home**) देहली

और बलवान सन्तानों की क्या हमारे देश को कोई आवश्यकता नहीं है ?

मेरे कहने का यह मतलब नहीं है कि सिर्फ वैदेशिक प्रणाली से ही इन केन्द्रों को बनाना। इसी ढँग से बने हुए होने के कारण ही तो जन साधारण उन्हें नहीं अपनाते हैं। सौ साल से भी ज्यादा होगया होगा कि पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान की बड़े २ स्कूल और कालेजों में शिक्षा दी जाती है, परन्तु आज भी साधारण जनता के समझ में बहु कुछ नहीं आता है क्यों ? इसका कारण शिक्षा का माध्यम अङ्गरेजी है। वैज्ञानिक शिक्षा को देशी भाषा में न देने से भले ही सरकार को लाभ हो लेकिन जनता को जितना फ़ायदा होना चाहिए उतना नहीं होता। देश के चिकित्सक सम्प्रदाय दो हिस्से में बट कर एक-दूसरे को शत्रु समझने लगते हैं। पारस्परिक सहयोग करके देशवासियों का स्वास्थ्य साधन करना तो दूर रहा एक दूसरे को मूर्ख या घमण्डी बतला कर अपनी प्रतिष्ठा स्थापन करने का प्रयास करते हैं। यह बहुत बुरा है। देश में चिकित्सकों का समवाय संगठित संघो को स्थापना होना प्रयोजन है। डाक्टर, वैद्य, हकीमों के एक दूसरे के सहयोग का लाभ उठाना चाहिए। स्त्री रोग के दो प्रधान विभाग हैं एक तो साधारण रोग विभाग (minor Gynaecology) और एक शस्त्रोपचार योग्य विभाग (major Gynaecology) देशी वैद्य गण कभी-कभी अस्त्रोपचार रोगों का भी जैसा ककंट व्याधी, नाना विध रसौलियों (Cancer and tumours in general) का औषधियों से इलाज करने लग जाते हैं। लाख दवाई करने पर भी अस्त्र चिकित्सा योग्य रोग आराम नहीं हो सकता, रोग निर्णय मात्र आशु अस्त्रोपचार के लिए रोगिणी को परामर्श देना चाहिए इससे सैकड़ों जीवन रक्षा हो सकती है।

वैसा ही गर्भा व प्रसव प्रक्रिया दो प्रकार के होते हैं। स्वाभाविक व अस्वाभाविक (normal and abnormal) कभी-कभी स्वाभाविक प्रसव भी दाइयों की ग़लती से अस्वाभाविक में परिणत होजाता है। इस लिए पूर्व शिक्षा और कर्मकुशलता (Midwifery and nursing trainig) दाइयों और नारीरोग चिकित्सक को मिलना चाहिए, इसके लिए क़ानून बन जाय तो और भी अच्छा ताकि कोई उक्त चिकित्सा अनभिज्ञ व्यक्ति इन कार्यों में हाथ डालकर रोगिणी और प्रसूता का जीवन संकट में न डाल दें। शरीर विज्ञान और अस्त्र चिकित्साकी शिक्षा प्राप्त करना अब प्रत्येक (Anatomy, Physiology, surgery) वैद्य और हकीमों को भी चाहिए। आयुर्वेदिक स्कूल कालिजों में आजकल इसका प्रबन्ध भी हो रहा है। केवल पुस्तकगत शिक्षा बेकार है।

नारी रोग चिकित्सा तो ज़्यादातर शिक्षित चिकित्सकाओं के द्वारा ही होना उचित है नारियों के गुप्त रोग स्त्रियां जैसी आसानी से समझ सकती हैं। हमारी लज्जा शीला हिन्दुस्तानी बहिनों के रोग पुरुष चिकित्सक गण वैसे नहीं समझ सकते हैं। इसलिए वैद्यक और यूनानी तथा डाक्टरी शास्त्रों में नारियां की शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए। घर बैठे-बैठे शास्त्राध्ययन करके चिकित्सक न बन कर, उपयुक्त स्कूल कालेजों में सम्मिलित चिकित्सा धाराओं का शिक्षा ग्रहण करना ही ठीक है, आयुर्वेद लाक्षणिक चिकित्सा ज्ञान का एक अनन्त भण्डार है। उसके साथ साथ अगर आधुनिक रीति से शरीर विज्ञान, रोगनिदान तत्व, महिला रोग विज्ञान, व प्रसूतिचर्य्या की शिक्षा का विधान हो तो सोने में सोहगा हो जाय। देशवासियों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। देश में जैसे अधिक से

अधिक संख्याओं में महिला वैद्यों काआविर्भाव हो। इससे और एक बड़ा भारी लाभ होगा। लुप्त प्राय: गृहस्थी साधारण जड़ी, बूटी मुष्ठियोग को चिकित्सा नारियाँ खुद घर बैठी कर सकेंगी। छोटी छोटी बीमारियों के लिए डाक्टर वैद्यों के पास न जाकर स्वयं ही आसानी से कर लेंगी।

हमारे देश में अगर नारियों के साथ सब से ज्यादा बुरा बर्त्ताव होता है तो वह जापे के वक्त होता है। मैली, कुचैली, सड़ी, गन्दी दाईयों के हाथ, मैले कपड़े, बन्द अँधियारे मैले कमरे में ही नवजात स्वर्गीय शिशु का अवाहन सिर्फ धार्मिक रिवाज छूत छात परहेज़ के वजह से होता है। यह खून का भूत क्या है, यह मेरी समझ में नहीं आता। इससे स्त्रियाँ और बच्चे जितनी बे मौत मरती हैं शायदही और कोई रोग में उतनी मरती होंगी। हर साल लाख लाख नव प्रसूता और नव जात शिशुओं को कराल काल कवलित कराके जो जाति अपने को सभ्य कहलाने का हक़ रखती है उसे पृथ्वी के दूसरे देश वाले असभ्य कहें तो क्या ज्यादती हैं?

गर्भावस्था और प्रसुतावस्था के साधारण रोग और तकलीफों के इलाज शुरू में तो बड़ी आसानी से हो सकते हैं। आजकल उन्नत प्रणाली की विज्ञान सम्मत गर्भचर्य्या प्रसूती और शिशुचर्य्या जगत के सब सभ्य देशों में होगई हैं। हिन्दुस्तान में भी बड़े प्रसूति चिकित्सालयों की कमी नहीं है। लेकिन दुःख तो यह है कि साधारण जनता की समझ में इन बातों की उपयोगिता क्या है, नहीं आया। डाक्टर खाना साधारण सरकारी नहीं तो ईसाई मिशनरियों के हैं। देश वासी हिन्दू मुसलमानों की खुद की संस्था शायद एक दो होगी और वहाँ भी पर्य्याप्त साधानाभाव। हिन्दू मुसलमान नर्स, डाक्टरनीयों की संख्या मुट्ठी भर है। हमारी देश की लड़कियाँ घर बैठे बैठे आलस्यमय जीवन बितायेंगी, कौमी खवाखाल से विधवायें निष्फल जिन्दगी में हाहाकार करती रहेंगी लेकिन देश व जाति के कल्याण कर कार्य में कभी हाथ नहीं डालेंगी। इसी हिन्दुस्तान जैसे इतने बड़े पैंतीस करोड़ की आबादी में सत्तरह करोड़ नारियों के बीच एक भी W. M. S. डाक्टरानी नहीं है। विदेशी नारियाँ सुदूर समुद्र पार से आकर हमारे घर के बच्चा और जच्चाओं को सँभालें, नारी रोग की चिकित्सा करें, बड़े बड़े आपरेशन वह करें हमारी बहू, बेटियाँ अपनी सहत के बारे में सलाह लेने को उन्हीं का मुँह ताकती रहती हैं और हम हिन्दुस्तान को आजाद करने का स्वप्न देखते रहें। कोई यह भी कह सकता है कि पहले जमाने में लोग कैसे रहते थे? क्या उस समय बच्चे पैदा नहीं होते थे? मैं इसका छोटा उत्तर देना चाहती हूँ। ऐसा कोई व्यक्ति भारत में होगा जो ताजमहल को न जानता हो। पृथ्वी विख्यात धनी, मानी प्रतापी मुग़ल सम्राट् शाहजहाँ की प्रियतमा महीषी मुमताज बेगम का वह स्मृति चिन्ह है। उनका सन्तान प्रसव में ही देहान्त हुआ था। जिस सम्राट ने उनके मरने के बाद करोड़ों रुपया लगा कर इतना बड़ा जगत् विख्यात महल बनवाया था अगर उनके वक्त में आज-कल के न्याय उन्नतधरण के सामान मातृचर्य्या होती तो वे निश्चय पहले उसकी शरण लेते।

मातृ विज्ञान का जन्म सोलहवीं सदी के बाद पहले आस्ट्रिया की वीयेना हास्पिटल में हुआ। इसके पहले आयुर्वेदिक ग्रन्थों में इसका कुछ कुछ जिक्र अवश्य है, लेकिन आजकल की वैज्ञानिक रीति से काम लेना उस जमाने में अज्ञात था। पहले जापे के बुखार का ही तत्व निर्णय में पाश्चात्य चिकित्सक

गणने बहुत परिश्रम किया। अट्ठारवीं सदी में जब कि विज्ञान की हर शाखाओं में अद्भुत उन्नति होने लगी तो नारी रोग विज्ञान और शिशु प्रसूति चर्य्या भी पीछे नहीं रही। आज कल का समुदाय पाश्च, पाश्चात्य सभ्य देशों में पुरानी रूढ़िओं को छोड़कर इस नूतन पन्था का अवलम्बन होरहा है। इस नूतन प्रथा में सफाई और विशोधन (cleanliness and sterilization) की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। प्रसूति और शिशु के व्यवहार लिये साफ सुथरा हवादार कमरा, साफ कपड़े के बिछौने, देख भाल करने वाली दाईयां साफ सुथरा, नाखून काटकर लोशन (विशोधक औषधियां) और साबुन से धुले हुए हाथ रखने चाहियें। आजकल ज्यादातर रबड़ के दस्ताने जो कि पहले लोशन या गरम पानी में उबाल लेते हैं, वह हाथों में पहन कर काम करती हैं। आवलनाल छेदने को और बांधने को कैंची व तागा भी पहले से उबाल के लोशन में डालकर रख लिया जाता है। यह सब दाईयां हमारी देश की चमारिन, भंगिन, नाईनों के भांति ख़ुद ब ख़ुद दाई नहीं बन जाती हैं। उन्हें प्रसूति विज्ञान की भली भांति शिक्षा मिलती हैं, उनका इमतहान होकर पास होने का प्रमाण-पत्र मिलता है जब जाकर वह काम कर सकती हैं। उनके ऊपर योग्य चिकित्सिकायें होती हैं जो इनसे न होने वाले कठिन कार्य्य को संभाल लेती हैं।

आजकल प्रायः सभी सभ्य देशों में घर में सन्तान प्रसव नहीं करवा कर प्रसूतिओं को सुपरचालित प्रसूति मन्दिरों (Maternity Houses) में भेज दी जाती हैं। वहां प्रसव कार्य आसानी से बिना किसी आफतको झेलकर करने के लिये सब सान्तवना और सहायता देने वाली नर्स, डाक्टरनीयां हर समय मौजूद रहती हैं। इसी से उन देशों में सन्तान प्रसव में मृत्यु संख्या दिन पर दिन इतनी घट गई है कि नाम मात्र ही होगी।

बच्चों को देख भाल करने के लिये शिशु मन्दिरों का भी अच्छा प्रबन्ध उन देशों में होगया है। गरीब अमीर तक के बच्चे जिस ख़ूबी से वहां पलते हैं वह देखने लायक हैं। गांव २ में ऐसे २ केन्द्र होने के कारण साधारण मज़दूरन तक उससे फायदा उठाती हैं दिन के वक्त नियत समय पर बच्चों को दूध पिला कर माँ अपने काम में लग जाती है। रात के नौ बजे आखिरी वक्त दूध देकर रात को देख भाल करने वाली दाई को सौंपकर रात को मजे से आराम की नींद लेती हैं इसमें अपनी भी और बच्चों की भी सेहत ठीक रहती है जो घरों में भी बच्चा पालती हैं वह भी नियत समय के पहले जब बच्चे को ज़रा सा रोवें भी पर दूध नहीं पिलाती हैं। हमारे देश की माताओं की यह बड़ी बुरी आदत है कि वह बच्चे को खिलाने पिलाने का एक निर्दिष्ट समय की पाबन्द नहीं रहती है। वह ज्यादातर मोहब्बत से काम लेती है बच्चा चाहे किसी कारण से भी रोने लगजाय तो वह उसे भूखा समझकर दूध पिलाने में लग जाती है। बेवक्त दूध पीकर बच्चे का हाज़मा बिगड़ जाता है और वह दिन पर दिन सूख सूख कर कांटा बनजाता है। (इसे मसान का मर्ज कहते हैं) बुरे भोजन का यह परिणाम है (Rickets) माँ का दूध न मिलने से और अखाद्य कुखाद्य भोजन से जैसे दो महीना का बच्चे को वार्ली वाटर (विलायती जौ दाने का पानी) पिलाना, ताजा दूध को छोड़कर पेटेन्ट डिब्बे का इस्तेमाल करना भी इस रोग के कारणों में हैं। इससे सैकड़ों बच्चे हर साल मरते रहते हैं। मूर्ख माताऐं अपनी ग़लती नहीं समझकर इसका

इलाज, टौना ताबीज, स्यानों, से झड़ फूंक कराती रहती हैं। कोई कोई तो और न गलती से अपना दूध पिलाना भी बन्द कर देती हैं। बच्चे को हर तीसरे घण्टे में दूध पिलाना चाहिए और नौ बजे के बाद बिलकुल दूध न देकर बच्चा-जच्चा दोनों को सोजाना चाहिए। इससे बच्चों को प्रातःकाल तक सोने की आदत पड़ जाती है। बच्चे को शुरु से जो आदत डाल दी जायगी वह उसी तरह सीख जाते हैं। दूध को हजम होने के लिए तो कुछ समय चाहिए, बार-बार पिलाने से हाजमा कहां तक ठीक रह सकता है, ६, ९, १२, ३, ६, ९ यह है दूध पिलाने का निर्धारित समय। बच्चों को इस क्रम पूर्वक दूध पिलाने से नियत समय पर वह जाग जाते हैं। नहीं तो भूखे रोते रहते हैं। और अन्य समय दूध पीने को नहीं चाहता है। बच्चों के पेट व जिगर की बीमारियां, कब्जियत, ज्यादा दस्त होना, क़ै होना यह सब प्रायः नहीं होता। दांत निकलते वक्त बच्चे का खाना पीना खूब ठीक रखना चाहिये एक दो दांत निकलने के बाद उसे खालिस माँ का दूध नहीं पिलाकर खूब हल्का और पतला अन्न देना चाहिए जैसे सागुदाना, और बार्ली, जौ, साठी का चावल, अराशेट आदि की खीर, बाद में ज्यादा दांत निकलने पर मूंग, मसूर की दाल की पतली २ खिचड़ी, रवे की खीर, फलों का रस आहिस्ते आहिस्ते खाना, पीना बढ़ाकर साल सवा साल में माँ के दूध को छुडा देना विशेष कारण न हो तो नौ महिना से पहले बच्चे का दूध कभी नहीं छुड़ाना और ज्यादा दिन तक भी दूध देना खराब है इससे माँ बच्चे दोनों कमजोर होजाते हैं। बोतलों से पिलाने में भी इन्हीं नियमों का पालन करना उचित है। बोतल को खूब साफ़ सुथरा रखना उचित है। गरम पानी में धोना भी २ उबाल लेना और अच्छा है। बड़े बड़े बच्चों को गाय का दूध बोतल में न पिलाकर कटोरी और चम्मच से देना ठीक है। वह बड़ी आसानी से जल्दी साफ़ हो सकती है कीड़े मकोड़े और मक्खियों से बच्चों को तो हमेशा बचा कर रखना चाहिए। इसी से बड़े बड़े संक्रामक व्याधियों के हाथ से छुटकारा मिलता है। बच्चों को सुलाने के लिये तथा उनका रोना बन्द करने के लिये अफ़ीम जैसे मादक द्रव्यों का व्यवहार बड़ा खतरनाक है इस प्रकार कितने बच्चोंका देहान्त होजाना मुझे मालूम है। नियत समय पर बच्चे को दूध पिलाने से वह अपनेआप खेलता रहता है। नींद लगने से सो जाना बजाय चिढ़ चिढ़े होने के खुश और हँस मुख रहता हैं।

हर काम के लिए नियत समय का मूल्य समझना आज भी भारतवासीओं के ध्यान में नहीं बैठा है। देश के शिक्षित समाज की भी वही दशा है तो शिक्षा दीक्षा हीन माता और धायों का क्या अपराध है?

बचपन में ही बच्चों को चेचक प्रतिशोधक गौबीज टीका लगा देना बड़ा अच्छा है टीके लगवाने के बाद कभी (चेचक) निकल आए भी तो बड़ी माता कभी नहीं होती है। बसन्त रोग में सुकुमार बच्चे बहुत मरते हैं। अगर मृत्यु न भी हो तो चेहरे पर बुरे निशान बन कर सुन्दर सुश्रीयुक्त शक्लको बिगाड़ देती है। विवाह के लिए लड़कीयों की सुन्दरता की मांग बहुत है इस लिए महिलाओं को और भी अधिक ध्यान देना उचित है।

मां बनना जितना आसान है, मातृ शिक्षा उतना आसान नहीं है। सन्तान अमूल्यरत्न है। जिस घर में यह रत्न नही है लाखों अशर्फीयाँ भी उसका स्थान पूर्ण नहीं कर सकती। हिन्दुस्तान में चौदह २,

अठारह अठारह वर्षकी बच्चों की माताओं की कमी नहीं है, बहु सन्तान प्रसव तो इस देश की एक मामूली बात है, लेकिन माताओं का उन बच्चों को जिन्दा रखने का तरीक़ा मामूली नहीं है। जिनकी सब की सब सन्तान जीवित हैं वैसी माताएं बहुत कम मिलेगीं, बहुत ज्यादा गर्भनाश और सन्तान नाश का ही विवरण सुनने में आता है।

मातृ दुग्ध सन्तान के लिए अमृत है। इस बात को भूल कर बड़े घराने की स्त्रियाँ अपने पेट के लाल को नीच जाति के चमारिन, कोलिनों के हाथ में पालने को देती हैं। जिस खून से बच्चा बनता है, उसी खून से बने हुए दूध में उसको सेहत जैसी अच्छी रह सकती है पराये माता के दुग्ध में वैसी कभी नहीं हो सकती और वंशानुक्रमक बीमारियाँ दोष, गुण, शील, स्वभाव सब बातों को जान कर तब दूसरी स्त्री से अपनी सन्तान को स्तन्य पान दिलाना चाहिए। सन्तान की माता अगर कोई विशेष व्याधि ग्रस्त हो तो जहाँ तक बने विशुद्ध गाय बकरी या गधीयों के दुग्ध से पालना अच्छा है। अगर धाय भी रखी जाय तो बच्चे को दूध पिलाने से पहले उसका अच्छी तरह से डाक्टरी मुआइना करवा कर तब उस बच्चे को पालने के लिए देना और उसकी सफ़ाई तन्दुरुस्ती खाना कपड़ा हर बातों की तरफ़ काफ़ी ग़ौर करना चाहिए। सिर्फ़ पेट के ख़ातिर अपने बच्चे को छोड़ कर पराया बच्चा पालना नारी के लिए कैसी दुःखदायी है वह हर माता जानती है। अगर वह दो बच्चों को साथ-साथ पाल सकती है तो उसे अपने बच्चे को भी पालने की इजाज़त देना मनुष्यत्व है। इन्सान को अपने बच्चे से जो मुहब्बत होती है पराये बच्चे से ऐसी कभी नहीं हो सकती। आधुनिक ऊपरी दूध से शिशुपालन में जैसी सफलता प्राप्त होने लग गयी है, दूध माँ का वह बुरा रिवाज देश से उठ जाने से कोई हर्ज नहीं है। दिक़, दमा, गर्मी आदि रोग संसर्गिक माने जाते हैं। किसी बच्चे और किसी धाय के अन्दर यह रोग है कि नहीं कैसे मालूम होगा? अतएव जहाँ तक बने दूध पिलाने वाली धायों को नहीं रखना चाहिए। जो माता सन्तान को जन्म देती है उसका पहला कर्त्तव्य है उस बच्चे का परवरिश करना, शौक़ीन ख़यालात से बच्चे को खुद नहीं पाल कर पराये हाथों में देने के बजाय, बच्चे की माँ न बनना ही अच्छा है। बच्चे को दूध पिलाने से जरायु का संकोच अच्छी तरह से होकर जरायु गत कई बीमारियाँ नहीं होने पाती। सिर्फ़ बच्चों की माँ बनना ही नारी जीवन का कर्त्तव्य नहीं है। शिशु पालन की शिक्षा हरेक लड़की को भली भाँति मिलना चाहिए। जो माता, पिता लड़की की शादी गहने कपड़े की तरफ़ और जो ससुराल वाले बहू के दहेज की ओर इतना ध्यान देते हैं। उन्हें उनकी मातृत्व सम्बन्धीय शिक्षा का तरफ़ बिल्कुल ख़याल ही नहीं रखना कैसी बुरी बात है। आधुनिक शिक्षा के माने इत्र, सैन्ट, पाउडर का इस्तमाल, ऊँची एड़ी के जूतियाँ पहनना, थियेटर, बायस्कोप, देखना नहीं है। नहीं दो लफ़्ज अंग्रेजी बोलना, आधुनिक शिक्षा से देहमन विकासकारी ज्ञान को समझना चहिये। पाश्चात्य नारियाँ स्वाधीन स्वतंत्र हैं तो क्या वह हम से अधिक इन बातों की तरफ़ ध्यान नहीं देती है? उनकी सेहत हमारी स्त्रियों की सेहत से बहुत अच्छी रहती है। वह संगठित रूप से इन कार्य्यों को अपनाये हुए हैं। गाँव २ में नारी रक्षा समितियाँ स्थापित हो गई हैं।

कब हिन्दुस्तानी बहिनें आत्मोद्धार कार्य्यों को

अपनाएंगी ? कब हमारे देश के पुरुष जाति उनको इस ओर ध्यान देने को उनको मार्ग में जितने सामाजिक और धार्मिक रुकावटें है दूर करने का प्रयत्न करेंगी ? कुछ कहा नहीं जाता।

पाश्चात्य स्त्रियों की और हमारी शिक्षा प्रणाली में अन्तर बहुत है। कोई भी युरोपियन बालिका विद्यालय की शिक्षा पद्धति की एक साथ तुलना करें, तो इस बात का पता अच्छी तरह से लग जायगा। आधुनिक भारतीय बालिका स्कूल कालेजों में ज्यादातर लड़कियों को बालकों की शिक्षा सूची क्रम से ही काम लिया जाता है। नारियों का अभाव अभियोग, अपनी गृहस्थी में क्या क्या चाहिए यह शिक्षा किस ढँग की हो, इन बातों के लिए शिक्षा विभाग में स्त्रियाँ कुछ ज्यादा ध्यान देकर काम नहीं करती हैं। पुरुष हमारे अभावों को क्या जान सकते हैं ? और सचमुच विदेश वासी भी भारतीय गृहस्थी का खबर क्या रखते हैं ? हर सभ्य देश में नारियों ने ही अपना पथपरिष्कित किया है। और हिन्दुस्तान में भी निकट भविष्य में वही बातें होंगी।

जगत मय नारियों के अन्दर प्रकाश, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, जोवन, सोम्यता, शोभा है, और हम अन्धकार के कोने में पर्दे की आड़ लाखों लाख बीमारियों में जकड़ कर रोती रहेंगी ? "पुत्रार्थी क्रीयते भार्य्या" इस छोटे से बचन को प्रायः प्रत्येक भारतीय जानते हैं। पूरे काल में सत्पुत्र रूपी रत्न के लिए हमारे पूज्य पूर्वज कन्याओं का लालन पालन और शिक्षादान अति यत्न के साथ करते थे, देश में बाल-विवाह का नाम कहीं न था। विधवाएँ देखने में भी न आती थीं, इन बातों का विस्तृत आलोचना यहाँ अप्रासंगिक होने के कारण हमने नहीं की। आज कल भाग्य बश से कोई भारतीय-सन्तान गान्धी, दयानन्द मालवीय, मोतीलाल, चित्तरञ्जन बन जावे होंगे लेकिन उनके ही संगठन के लिये हम माताए क्या करती हैं ? हम चाहे दिन रात लड़के होने के लिये सिर पीटती हैं। नहीं तो सयाने, दिवाने डाक्टर, वैद्य तक के शरण में आकर रात-दिन दवाई पीने में दाइयों के इलाज करने में जीवन बिताती हैं। मगर जाति के मुखोज्वल करने वाले कुन्ती के पंच पाण्डव, कौशल्या के श्रीरामचन्द्र सुभद्रा के अभिमन्यु, जीजाबाई के शिवाजी जैसे पुत्रों के लिये क्या साधन करती हैं ? सिर्फ सन्तान हमारी है। यह न सोच कर, हम देश और जाति के एक व्यक्ति, एक विशिष्ठ अंग तैयार कर रही हैं, इसलिये हमारे ऊपर एक बड़ी भारी जिम्मेवरी है यह बात सोच कर कब कौन भारतीय माता सन्तान को गर्भ में धारण करती है, और जाति आखिर परिवारों की समष्टि है। शरीर का एक अङ्ग रोगी होतो सारे शरीर को कष्ट पहुँचता है। हम जातीय परिवार के मुख्य अंग माता सन्तानों के हित के लिये वाकई क्या कर रही हैं ? लेकिन जो इन बातों को समझते हैं देश के वह चिकित्सक मण्डली का ही मुख्य कर्तव्य है कि इन बातों से अनभिज्ञ जनता का ध्यान इस ओर आकर्षित करें। देश का सुधार सिर्फ राजनैतिक स्वाधीन प्राप्ति में नहीं हो सकता है। और राजनैतिक स्वाधीनता भी बलिष्ट जाति को मिलती है कर्म वीर पुरुषसिंह को लक्ष्मी हस्तगत होती है। कर्मवीरों को वीरा-जननी आवश्यक है।

देशवासी वैद्यों के और चिकित्सक समुदाय के अन्दर नई जागृति पैदा हो यह कामना करते हुए हम इस विषय का उपसंहार करते हैं। किम अधिकम इति

श्रीमती डा० कुन्तलकुमारी देवी

डिम्बकोष का शोथ (ओवेरायटिस)

Ovaritis or Ophoritis

डा० कृष्णाकुमारी पण्डित M. D. सम्पादिका महिलारोगविज्ञान।

यह दो प्रकार का होता है।

(१) एक्यूट (तरुण) (२) क्रानिक (पुराना)

(१) एक्यूट (तीव्र) डिम्बकोष की कठिन सोज़िश या शोथ, इसी में दोनों डिम्ब ग्रन्थियां तो कमी२ ही ग्रसित होती हैं, परन्तु बहुधा, दाहिनी ग्रन्थि बाईं की अपेक्षा अधिक ग्रसित होती है। गर्भाशय पर चोट लगना, उसके मुंह पर तेज़ औषधियों का लगाना, गर्भाशय का मुख ज़बर्दस्ती चौड़ा करना, हृदय पर आघात होना, मासिक धर्म के समय सर्दी का लग जाना, जिसमें रज एकदम बन्द हो जावे, या सूज़ाक रोग के कारण से यह शोथ हो जाता है।

प्रसव के दर्द के सदृश बारी से कठिन दर्द होता है, और बहुधा धीमा और एकसा रहता है। जो कि पेट के नीचे का भाग, जांघ और रोग के ओर के जांघ पर दबाने से ज्यादह होता है। अगर आराम न हो, और रोग बढ़ता जावे, तो पेरीटोनियम (उदर की श्लैष्मिक कला) ग्रसित हो जाती है और मूत्राशय तक खराश पहुंचने के कारण मूत्र जलन से होने लगता है। यदि मल कठिन हो जावे, तो उसके निकलने तक रोगी को किनचना पड़ता है। दर्द बहुत होता है, ज्वर के लक्षण प्रगट होते हैं, जी मिचलाना, बेचैनी, अरुचि, पेट पर टटोलने से डिम्ब ग्रन्थि सूजी हुईसी मालूम होनी, यदि पीप पड़ जावे तो बार२ जाड़ा देकर ज्वर का चढ़ना, नाड़ी निर्बल तथा शीघ्र गति वाली होती है। जिव्हा, चौरस चमकदार, तथा उलटी होने लगती है, और पेड़ू के स्थान पर, भारीपन और तड़प मालूम होती है यदि पीप पेरीटोनियममें फूट जावे तो रोगिणी के मरने का भय रहता है, यदि रैक्टम (आंत) या योनि ग्रीवा में फूट जावे तो कुछ आराम मालूम होता है। परन्तु फिर बन्द होकर रतूबत जमा रहने से वही हालत हो जाती है। इसी तरह कुछ दिन रहने से रोगिणी निर्बल होकर मर जाती है,

चिकित्सा—रोगिणी को गर्म पानी में सुबह व शाम बिठाया करें, और एक लम्बी बत्ती निम्नलिखित औषधियों की बना कर गर्भाशय के मुंह पर रक्खें—

अफ़ीम	१ रत्ती
मोम	५ रत्ती
चर्बी	८ रत्ती

इसकी लम्बी बत्ती बना कर रक्खें

या—

आयोडाइड औफ़ लिड	८० ग्रेन
एक्सट्रैकिट बेलाडोना	२४ ग्रेन
एक्सट्रैकिट कोनाइम	१००ग्रेन
ओलियमथ्यो ब्रोमा	१ औंस

ओलिव ओइल २ ड्राम

इन सब को मिला कर ८ बत्तियां बना लेवें और इनको उचित समय में काम में लावें।

रुग्ण स्थान पर सेंक करें या अलसी की गरम पुलटिस बांधें, दर्द दूर करने को अफीम और बेलाडोना की उचित मात्रा पिलावें। एक नमकीन जुलाब देकर पुटेसियम आयोडाइड पिलावें। यदि ऋतु बंद हो गया हो तो गर्भाशय के मुंह पर जोंकें जितनी उचित हों लगावें। यदि पीप पड़ गई है, तो टूंकार कैन्यूला या यास्प्रैटिक एस्प्रेटर से निकाल देवें।

(२) कालिक ओवेराइटिस—

कारण—अधिक मैथुन, बच्चेदानी में सलाई का असावधानी से प्रवेश करना, गर्भाशय के मुख पर तेज़ दवा लगाना, गठिया और आतशक का विष होना, युवावस्था में लिंगेन्द्रिय में जोश आना।

लक्षण—डिम्ब ग्रन्थि, और सेकरम पर हर समय धीमा २ दर्द होता है, पेट के निम्न भाग को दबाने से अधिक हो जाता है। कोष्ठबद्ध, या कम मात्रा में मल निकला करता है, आमाशय के खराश के कारण जी मिचलाना, अजीर्ण, पेट फूलना, बहुत हुवा करता है। किसीर में योषापस्मार के दौरे भी होने लगते हैं, एक या दोनों स्तनों में दर्द और भारीपन मालूम होता है। कभीर उन्माद पैदा होजाता है। विषय के समय दर्द होने लगता है। भग की यदि परीक्षा की जावे, तो दर्द के सिवाय डिम्ब कोष, सोजा हुवा और बढ़ा हुवा निकलता है। यह रोग न्यूनाधिक बहुत दिनों तक बना रहता है।

चिकित्सा—आयोडाइड आफ पुटासियम-ब्रोमाइड आफ एमोनियम-मैंकम और एकोनाइट क्लोराइड आफ एमोनियम-पिपसिन-एमोनिया और बार्क-कोनेन और बेलाडोना आयोडाइड आफ आयरन लाभदायक हैं, पेसरीज़ जो एक्यूट ओवेराइटिस में बयान हुई हैं, काम में लावें, इसके सिवाय सेकरम पर बेलाडोना लगायें, सेंक करें और गर्म पानी में बिठायें, चिहल कदमी करायें, कठिन लक्षण कम हो जावें तो प्लस्टर या जोंक लगाना चाहिये, ऐर्गटामुनी और तेज़ परगेटिव देना हानिकारक है, रति संगम न करें

पेरीटोनाइटिस और पलविकसल्युलाईटिस

Peritonitis & Pelviccellulitis

इसको बोडलिगमेंट का शोथ भी कहते हैं यह वास्तव में बोडलिगमेंट या खानेदार बनावट जो पल्विक आर्गेन्स के साथ सम्बन्ध रखते हैं।

यद्यपि यह दोनों प्रथक २ हैं परन्तु एक दूसरे के साथ लक्षणादिक एक से होने के कारण एक का वर्णन करने से दूसरे का स्वयम ही हो जाता है।

भग, मसाना, बोडलिगमेंट आदि किसी स्थान में शोथ होकर पलियक, फासा और पेट की दीवार तक यह शोथ पहुंच जाता है। अकसर बोडलिगमेंट की दोनों तहों में भी शोथ होकर पल्विस के कुल

हिस्सों में फैल जाती है किसी मरीज़ा को कुछ खराश होता है और किसी में लिम्फ़ (Lymph) अधिक बह कर गर्भाशय की किसी जगह में जमा हो जाता है जिस के कारण भग की जड़ में एक कठोर उभार सा मालूम होता है। तथा पैलविसके सब हिस्से आपस में लिम्फ़ के कारण जुड़े हुए पाए जाते हैं।

पेलविस में दर्द होता है जो पेरिटोनाइटिस में कठिन तथा सल्यूलाइटिस में मंदज्वर शीत लग कर प्रारम्भ होता है नाड़ी की चाल १०० से १२० और शरीर का ताप १०० से १०४ तक बढ़ जाता है।

इसके अतिरिक्त वमन मतली चेहरा भिचा हुआ चिन्ता ग्रसित रहता है। जब मसाना और विजायना के मध्य में रतूबत प्रवाहित हो जाती है तब मल मूत्र करने में कष्ट होता है। यदि रोग प्रसव के बाद उत्पन्न हुआ हो तो यह रोग जाना जाता है। यदि कुछ सप्ताह के बाद हो तो इसका संदेह तक नहीं होता।

गर्भाशय की परीक्षा करने पर स्वस्थावस्था की अपेक्षा बड़ा होता है, भग उष्ण शोथ युक्त मालूम देती है कभी कभी गर्भाशय अपने स्थान से हट भी जाता है। प्राय कुछ दिन या सप्ताह बाद रिज़्यूल्यूशन हो कर मरीज़ा को आराम हो जाता है। गर्भाशय अपने स्थान पर आजाता है। यदि पेलविस की भित्ति या अन्य स्थान से न प्रथक हो तब पूय (राद) पड़ जाती है।

इस अवस्था में मरीज़ा को बार २ शीत लगकर ज्वर आता है। क्षुधा नहीं लगती मुखमंडल पीलाहट लिए हो जाता है फिर फोड़े की शक्ल में बदल कर जंघा, भग, गुदा तथा पेरीटोनियममें पूय अपना रास्ता कर लेती है कभी कभी अन्दर ही अंदर पलविस की अस्थि को मृत बना देता है, इन दोनों रोगों में भेद करना असम्भव हो जाता है। इस रोग को प्राय शीघ्र ही आराम आजाता है परन्तु किसी २ स्त्री को बहुत देर से आराम होता है इसमें मरीज़ा अधिक दुःख पाती है।

चिकित्सा

मरीज़ा को आराम से पलंग पर लेटा रहना चाहिए, दर्द तथा ज्वरको दूर करने के लिए ओपियम (अफ़ीम) के साथ कुनीन मिला कर देना लाभदायक है।

टट्टी हमेशा साफ़ आती रहे। पूय निकलने के कारण मरीज़ा अधिक दुर्बल हो जाए तो शक्ति-वर्द्धक तथा उत्तेजक औषधियां देनी चाहिए।

वैद्यक मतानुसार मकरध्वज, रजत भस्म लौह को कुचले के सत में मिला कर प्रयोग करें।

दर्द को शान्त करने के लिए "मार्फिया" का त्वचा के नीचे इंजकशन देना उचित है, खाने को अफीमका कोई मिश्रण या विजयासार दे सकते हैं। गुदा में रखना उष्ण जल से सेक करना या गर्म २ पुलटिस डिम्बकोष पर बांधना चाहिये।

स्पंज गर्म पानी में भिगो कर तथा निचोड़ कर रखना।

अलसी की पुलटिस में टिं० ओपियम या बेलाडोना मिलाकर लगाना विशेष लाभ देता है दर्द एक दम शान्त हो जाता है।

कठिन लक्षण न होने पर टिं० आयोडीन लगाएँ। जब पूय (राद) पड़ जाए स्यूमेटिक स्पाइरर से निकाल देनी चाहिए।

गर्भाशय भित्तिशोथ (Metritis)

श्रीमती डा० कृष्णाकुमारी पण्डित M. D., सम्पादक

गर्भाशय की भित्ति (दीवार) में शोथ हो जाने को मिट्राइटिस कहते हैं।

जब शोथ उग्र रूप धारण करले तो एक साथ शीत लग कर ज्वर हो जाता है। प्रायः कर के इस रोग के लक्षण धीरे२ प्रकट होते हैं, पलविस (पेड़ू) के स्थान पर भारीपन और गर्मी मालूम पड़ती है। जंघास्थि (जांघ) तथा पेरीनियम (सीवन का स्थान) पर दबाने से दर्द तथा तड़प भी होती है। मसाने की खराश, वमन, जी का मिचलाना तथा अतिसार प्रारम्भ हो जाता है। शोथ के दूसरे दिन दर्द अधिक होजाता है रोगी को यदि आप शान्ति पूर्वक लिटाए रखें तो कष्ट कम होता है। लेसदार पिच्छिल रक्तवत या कभी रक्त मिश्रित स्राव होता रहता है।

सातवें दिन रोगी को आराम प्रतीत होता है और शोथ भी घट जाती है कभी २ एक या इस से भी अधिक फोड़े हो जाते हैं।

गेंगरीन हो कर या पलविक सल्युलाइटिस से रोगिन मर जाती है।

कभी गर्भाशय बढ़ कर कड़ा हो जाता है कभी ल्यूकोरिया भी हो जाता है।

चिकित्सा

जब मरीज़ा की हालत चिन्ताजनक हो तब हिलने देना नहीं चाहिए आराम से लेटी रहे।

हलका सुपच द्रवभोजन देना चाहिए शीतल दवा तथा बर्फ का सेवन करना अच्छा है। वमन रोकने के लिए शक्कर कुछ बूंद क्लोरोफार्म डालकर खिलाएं या अश्वत्थ क्षार २ र० और निम्बूक्षार भी दे सकते हैं। अतिसार होता हो तो स्तम्भक दवाओं से बन्द करें यदि रोग पुराना हो जाए तो यह प्रयोग करना चाहिए—

आयोडाइड आफ् पुटासियम, और एकोनाइट, या कोजिब सबलीमेंट पिलाना चाहिए।

जब आराम होता जाए तब धीरे२ चलने फिरने की आज्ञा देनी चाहिए।

मरीज़ा को उष्ण जल में बिठलाए, चिन्ताजनक हालत में जौंकें गर्भाशय के मुखमें लगा देना चाहिए जौंकों से रक्त कितना निकाला जाए यह बात रोगी की हालत देखकर निश्चय करें।

गर्भाशय के मुख पर बर्फ रखें या मस्टर्डप्लास्टर हाइड्रोगैरिक रीजिन पर चिपकायें। दर्द दूर करने के लिए यह दवा रखें।

मरक्यूरियल आइन्टमेंट	१० ग्रेन
ओलियम थीओब्रोमा	१ ड्राम
एक्सट्रैक्ट बेलाडोना	३ ग्रेन
एक्सट्रैक्ट कोनाइम	३ ,,

मिलाकर एक साफ शुद्ध रुई का फोया इस दवा में भिगो कर रखें।

गर्भाशय की श्लैष्मिक कला शोथ
(Endometritis.)

श्रीमती डा० कृष्णाकुमारीजी पण्डित M. D. सम्पादक

इस रोग में गर्भाशय की श्लैष्मिक कला शोथ युक्त हो जाती है।

किसी कारण से गर्भाशय में खराश हो जाए या बार २ गर्भस्राव हो जाता हो, पर्लीपस फाइब्राइड ट्यूमर, शीत लग जाने, अधिक मैथुन करने, सूज़ाक की विषाक्त रतूबत लग जाने, भग का शोथ फैल जाने से यह रोग हो जाता है।

रक्त का दूषित होना भी इसका कारण है। जैसे उपदंश, टाइफाइडफीवर, टाइफस, हैज़ा, आमातिसार, कोमल स्वभाव वाली स्त्रियों को २-३ बार रजस्वला होने के पश्चात्, क्लोरोसिस, एमिनोरिया, बड़ी अवस्था में जब मासिकधर्म होगया हो, भयंकर ज्वरों के बाद।

यह रोग दो प्रकार का होता है—

१—एक्यूट (नया)

२—क्रानिक (पुराना)

एक्यूट—इसमें रोगी को थोड़ा बहुत ज्वर बना रहता है। मुख मंडल पीला, भूक नहीं लगती, पेट निम्न भाग सेक्रम तथा जंघा पर दर्द, पलिवस में गर्मी तथा भारी महसूस होती है। मूत्र बार२ आता है, इस रोग के प्रारम्भ में अतिसार फिर कोष्ठबद्धता हो जाती है।

प्रायः करके बवासीर या प्रोलेप्सस आफ दि रैक्टम हो जाता है।

गर्भाशय तथा डिम्बकोष पर दबाने से दर्द महसूस होता है। प्रत्यक्ष परीक्षा करने से कुछ बढ़े हुए मालूम देते हैं। पहले इसमें सफेद पतली रतूबत निकलती है तीसरे दिन वह रतूबत गाढ़ी लसदार पिच्छिल रक्त मिश्रित निकलनी प्रारम्भ होती है। गर्भाशय का मुख तथा गर्भाशय की गर्दन सहित खुल जाती है, जब रक्त से मिली रतूबत जारी होती है तब गर्भाशय सिकुड़ जाता है।

दर्द के साथ मासिक धर्म आता है सर में दर्द भी होता है। आलस अधिक आता है, कुछ दिन के बाद मुख मंडल पीला कमज़ोर तथा कुमलाया हुआ होता है।

शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम करने की इच्छा नहीं रहती।

जब गर्भाशय के मध्य में शोथ हो जाये तब चिन्ताजनक लक्षण समझा जाता है।

जी मिचलाता है, आध्मान होता है, यदि गर्भाशय की गर्दन रोगग्रस्त हो तो उपरोक्त लक्षण नहीं होते। परन्तु जो गर्भाशय से रतूबत जारी रहती है वह पिच्छिल, पीलापन लिए तथा रक्त मिश्रित

पीलापन लिए होता है कपड़ों पर धब्बे पड़ जाते हैं।

यदि आप गर्भाशय के मध्य का भाग अंगुली द्वारा स्पर्श करें तो बड़ा कष्ट होता है। यदि गर्भाशय की गर्दन रुग्ण हो तो यह बात नहीं होती।

मरीज़ा का झुकाव हिस्टीरिया तथा कन्वलसन की तरफ़ अधिक होता है।

क्रानिक (पुराना)—

पुराने, गर्भाशय की श्लैष्मिक कला शोथ में स्रुवन पिच्छिल अंडे की सफेदी के समान निकलती है कभी २ रक्त भी पाया जाता है। क्योंकि गर्भाशय के मुख पर क्षत (घाव) पड़ जाते हैं।

यदि यह दशा बहुत दिनों तक रहे तो "वेजाना यटिस" या "वलवा" की खुजली, डिम्बकोष (ovary) की खराश और मासिकधर्म अधिक हुआ करता है; गर्भाशय का मुख छिल जाने से उसमें तंगी आजाती है यहां तक कि स्त्रियें बंध्या भी हो जाती हैं।

यह रोग बहुत दिनों तक यदि रहे तो मरीज़ा दुर्बल होकर राजयक्ष्मा, ब्राइट्स के रोग, या एमीलाइटिड डीजनरेशन आफ़ दि लिवर होकर स्त्री मर जाती है। कष्टसाध्य रोगियों में श्लैष्मिक कला पहले शुष्क पश्चात् रक्त वर्ण तथा शोथ युक्त कोमल पाई जाती है। कभी२ छिछड़े भी निकलते हैं, जब गर्भाशय की गर्दन तथा मुख रोग युक्त हों तब शोथ तथा वह स्थान छिला हुआ पाया जाता है।

पुराना पड़ जाने पर श्लैष्मिक कला कहीं सूजी कहीं छिली हुई स्पंजी जिसके टुकड़े बतौर छिछड़ों के निकलते हैं। यदि इस रोग को पंद्रहवें दिन आराम न हो तो "क्रानिक" हो जाता है। श्लैष्मिक कला में छोटे २ उभार हो जाते हैं जिसमें से स्राव प्रवाहित होता रहता है।

चिकित्सा तरुण—

नया—रोगिणी को आराम से चारपाई पर लिटाए रखना चाहिए लघु शीघ्र पचनेवाला भोजन दें। और लुआबदार पदार्थ पिलाना चाहिए।

दर्द दूर करने के लिए सिडेटिव औषधियां दें। कोष्ठबद्धता हो तो कैलोमल या जलापा से टट्टी करायें। मासिक धर्म यदि बन्द हो गया हो तो एक हिपबाथ उष्ण जल से देना चाहिए। रात्रि में सोते समय योनि मार्ग में पिचु भिगोकर रखें, मरक्यूरी तथा बलाडौना, गर्म २ अलसी की पुलटिस पेट के नीचे के हिस्से में बांधें—रूई से सेंक करना चाहिए इस अवस्था में ब्रह्मचर्य से रहें।

पुराने की चिकित्सा—

इस रोग में रेड आयोडाइड आफ़ मर्करी या डनवन सल्यूशन, क्रोजिवसबलीमेंट, सारसापरेला के साथ देना विशेष लाभदायक है।

पोटास आयोडाइड देना भी लाभदायक है। जब गर्भाशय के मध्य में शोथ हो तब स्थानिक चिकित्सा से कन्वलसन का अधिक भय रहता है। इस लिए करना नहीं चाहिए।

डिम्बकोष की शोथ में कास्टिक टिंचरस्टील, कार्बोलिक एसिड इनको ग्लेसरीन में मिलाकर बत्ती रख सकते हैं।

यह किसी डाक्टर से ही तैयार किया व्यवहार में लाना चाहिए।

"सलफेट आफ़ ज़िंक" को ओलियमथीब्रोमा में मिलाकर लगाते हैं। मरकरी आइन्टमेंट भी लगा सकते हैं।

यदि उपरोक्त किसी से लाभ न होता हो तब

"लाइकर लिटीपुटासाफ्यूजा" प्रयोग करना चाहिए।

इस रोग में मुझे जो प्रयोग अच्छे सिद्ध हुए हैं वे लिखती हूँ—

इक्थ्योल ग्लीसरीन में पिचु (फोया) भिगोकर योनि मार्ग में रखना चाहिए।

दिन में एक बार पोटास परमेंगनेट से गर्भाशय को धोना चाहिए—जल नीमगरम लेना ठीक है।

वैद्य त्रिफले के क्वाथ से प्रक्षालन करा सकते हैं आयुर्वेदिक औषधियां अच्छी साबित हुई हैं ये हैं—

नीम की छाल ऽ=, गूलर की छाल ऽ=, त्रिफला ऽ–, दशमूल आधी छटांक, जल ४ सेर, जब सवा सेर रह जाये उतार कर छान ले।

इसकी पिचकारी से गर्भाशय को प्रति दिन धुलाना चाहिए।

खाने के लिए—

पुनर्नवादि मंडूर	२ र०
दशमूलारिष्ट	६ मा०
पुनर्नवादि आसव	६ मा०

दोनों की एक मात्रा १ तो० जल में मिला कर दोनों समय सेवन करें।

योनी प्रक्षालन के बाद इक्थ्योल ग्लीसरीन का पिचु (फाया) अंदर रखें।

इक्थ्योल ग्लीसरीन डाक्टर के यहां से बनी बनाई मिल जाएगी—यदि बनाना हो तो—इक्थ्योल को ग्लीसरीन में इतना मिलावे कि वह काले वर्ण का हो जाए फिर घोट कर रखले।

ऊपर के प्रयोग गर्भाशय के सब प्रकार के शोथ में लाभ देते हैं।

रमणी
– श्री प्रभातकुमार।

जिसके तरल नयनसे स्वर्गिक आभा नित झलका करती,
जिसकी सुधामयी सुन्दर छवि हृदय-ताप हलका करती
जिसके कोमल करुणाकर कर से पीड़ित पाते विश्राम,
जिसकी सत्ता शून्य सदन को कर देती है प्यारा धाम ॥१॥

पर्णकुटी जिसकी प्रसन्नता से नन्दन बन बन जावें,
जिसका दुख सम्पन्न सदन में नरक कष्ट क्रन्दन लावें।
जिसकी मृदु फिटकार भीरु में भर देती वीरोचित भाव,
जिसका प्रणय विजय करनेका ऋषि-मुनिभी रखतेहैं चाव॥२॥

मातृभाव से जो वसुधा पर स्नेह-सुधा सरसाती है,
जो रमणी के रम्य रूप में प्रेम प्रभा बरसाती है।
पुण्यमयि जिसकी सत्ता है कविकुल का केवल आधार,
जिसके चरणों में चिरसञ्चित तपका ऋषि देते उपहार ॥३॥

"सरस्वती"

स्त्री की जननेन्द्रिय के रोग और उनकी चिकित्सा

[श्रीयुत कविराज प्रो. हरदयालजी वैद्य वाचस्पति द. आयुर्वैदिक कालिज
अध्यक्ष शंकर औषधालय सूत्र मण्डी लाहौर]

संक्षेपतः स्त्रियों की जननेन्द्रिय सम्बंधी व्याधियों को नव भागों में विभक्त किया जा सकता है। यथा-

१—आर्त्तव व्याधि।
२—जरायु की व्याधि।
३—डिम्बकोष की व्याधि।
४—योनि की व्याधि।
५—कामोन्माद की व्याधि।
६—वन्ध्यत्व की व्याधि।
७—स्तन की व्याधि।
८—मेरुदण्ड की व्याधि।
९—त्रिकचक्र अस्थि की व्याधि।

अब इन व्याधियों पर संक्षिप्त प्रकाश के साथ २ चिकित्सा क्रम को लिखेंगे।

(१) आर्त्तव व्याधि—(Disorders of Menstruation) इस विवरण में प्रवृत्त होने से पूर्व स्त्री जननेन्द्रिय सम्बन्धी कुछ स्थूल बातें जाननी आवश्यक होंगी।

स्त्रियों के तल, पेट, या पेड़ू में मूत्राधार और मल भण्डार के बीच में गर्भाशय (uterus) है। यह एक खाली खोल मात्र है। इस की आकृति अमरूद या नाशपाती की तरह होती है। इसी गर्भाशय या खोल में भ्रूण या बालक नौ मास तक रहता है। यह गर्भाशय रबर की तरह प्रसादनाकुँचन स्वभाव वाला है। इस लिए गर्भावस्था में इसके भीतर शिशु की वृद्धि होती है। शिशु वृद्धि के साथ २ इसकी भी वृद्धि होती रहती है। बालक के जन्म लेते ही यह गर्भाशय भी संकुचित हो कर अपनी पूर्वावस्था में परिणत हो जाता है। गर्भाशय के ऊपरी भाग को fundus कहते हैं। गर्भाशय का नीचे का भाग ऊपर की अपेक्षा तंग होता है। इस लिये इस भाग को गर्भाशय की ग्रीवा या Cervix कहते हैं। इसी ग्रीवा में एक छिद्र है जो गर्भाशय का मुख या Os कहलाता है। यह प्रायः ३ इञ्च लम्बी एक टेढ़ी सुरंग है जिसका मुख गर्भाशय की ग्रीवा के चारों ओर जुड़ा हुआ है। इस सुरंग को 'योनिपथ' या Vagina कहते हैं। गर्भाशय के भीतर दोनों ओर बादाम के आकार के दो यंत्र लगे हुए हैं। इन्हें डिम्बकोष या Ovaries कहते हैं। इन्हीं का दूसरा नाम डिम्बाशय या डिम्बाधार है। गर्भाशय के दोनों किनारों पर ३—३ इञ्च लम्बे बाहु जैसे दो नल हैं। यह दोनों विस्त-

रित होकर गर्भाशय को डिम्ब कोषों से जोड़ देते हैं इन दोनों को स्त्री-वीर्यवाही नल या Fallopion Tubes कहते हैं। स्त्रियों के यौवन काल उपस्थित होने पर तथा समस्त जननेन्द्रियों के पूर्ण पुष्ट होने पर डिम्बकोष से डिम्ब निकलता है। उस समय ईश्वरीय लीला और यौवनकाल के प्रभाव से डिम्ब कोष, स्त्री-वीर्यवाही नल और जरायु के अंगों में रक्ताधिक्य होने के कारण योनि पथ से रक्त स्राव होता है। इसी को ऋतु, स्त्री-धर्म और आर्त्तव कहते हैं। यह प्रवृत्ति काल से ३—५ दिन रह कर बंद हो जाता है और पुनः प्रायः प्रति २८ दिन के पश्चात् फिर आरम्भ होता है। आर्तव में किसी प्रकार की गड़बड़ को आर्त्तव व्याधि कहते हैं।

शुद्ध आर्त्तव प्रवृत्ति में कोई कष्ट नहीं होता। शुद्धावस्था में मासिक धर्म के रुधिर का वर्ण अत्यंत लाल और पतला होता है इस वर्ण से भिन्न आर्त्तव दूषित और दोषल माना जाता है। आर्त्तव के वर्ण भेद से इसकी चार प्रकार की व्याधियां मानी जाती हैं यथा—

१ रक्त प्रदर—

इस रोग से जुष्ट अबला को मासिकधर्म के समय पर योनि मार्ग से शुद्ध रक्त अधिक मात्रा में स्रवित होता है तथा एक बार का ऋतु काल अधिक दिनों तक रहता है और पुनः पुनः १५-२० दिनों के अंतर से आना आरम्भ हो जाता है। इसके प्रभाव से स्त्री अत्यंत दुर्बल और पीताभा हो जाती है। इसकी

चिकित्सा—

(१) अपामार्ग के १ तोला हरित पत्तों को जल में पीसकर पान करने से यह व्याधि शांत होती है। तीन दिन पीना पर्याप्त है।

(२) अशोक की छाल का चूर्ण ३ माशे तण्डुलोदक से पान करना भी इस रोग को शांत करता है।

(३) पुष्यानुग चूर्ण, अशोकारिष्ट, प्रदररिपु रस का सेवन भी इस रोग को दूर करने में दिव्य औषधें हैं।

२—श्वेतप्रदर (Leucorrhoea)

इस रोग में योनि मार्ग से ऋतु काल पर अथवा रोग की वृद्धि पर नित्य चावलों के धोवन जैसा श्वेत और लेसदार स्राव होता है। कभी २ श्वेत, नील, पीत, दुग्धवत्, मांस धोवन जैसा, लाख के रंग जैसा अथवा अनेक वर्ण युक्त विविध प्रकार का स्राव होता है। इसी को श्वेत प्रदर कहते हैं। गण्डमाला धातुग्रस्ता, अल्पवयस्का बालिकाओं में भी यह रोग होता दिखाई देता है। उपयुक्त समय पर चिकित्सा न करने से क्रमशः गर्भाशय तथा अपत्य पथ से अधिक परिमाण में पीब जैसा स्राव होता है और इसके फल स्वरूप योनि के भीतर और मुख में क्षत उत्पन्न हो जाते हैं।

लक्षण—कोष्ठबद्धता, शिरोवेदना, पेट फूलना, परिपाक क्रिया में व्याघात और मुख मण्डल पर रक्त हीनता प्रभृति लक्षण दृष्टि गोचर होते हैं।

श्वेत प्रदर की चिकित्सा—

(१) खड़िया मिट्टी, दुग्धपाषाण, सूक्ष्मेला चूर्ण, सर्ज रस चूर्ण और स्वर्णवंग। प्रत्येक औषध को समान भाग लेकर चूर्ण करें और १ माशा की मात्रा से शीतोदक से प्रातः सायं दिया करें इस से यह व्याधि शांत होती है।

(२) योनिमार्ग प्रक्षालनार्थ—बब्बूल त्वक् २ तो०,

लोध्र २ तो० दोनों को १ सेर जल में क्वाथ कर अर्धावशेष रक्खे। इस क्वाथ को शुद्ध वस्त्र से छान कर इसमें ६ माशे अपक्वस्फटिका पीसकर मिलावे और इस क्वाथ में शुद्ध वस्त्र खण्ड को भिगोकर योनि और गर्भाशय के मार्ग को प्रक्षालन करे। अत्यन्त वृद्धि गत व्याधि में तथा पुरातन व्याधि की शांति के लिए इसी क्वाथ की उत्तर बस्ती करे। इसके व्यवहार से तुरंत लाभ होता है।

(३) प्रदरांतक रस, प्रदरारिलौह, पत्रांगासव आदि औषधें भी प्रयोग करने से इसमें लाभ होता है।

३—पीत प्रदर (Chlorosis)

इस रोग में मासिक स्राव पीत वर्ण युक्त होता है। इसको पित्त विकृति जन्य माना जाता है। इस रोग में रक्त के लाल कणों का भाग कम हो जाता है इसी लिए शरीर की त्वचा खड़िया मिट्टी जैसी, श्वेत, पीली या कुछ पीताभ हो जाती है। प्रायः मासिक स्राव नियमित समय पर नहीं होता। शरीर का ताप घट जाता है। शरीर में सर्वदा शीत प्रतीति होती है आंखों की पलकों में सूजन और आंखों के चारों ओर काले दाने पड़ जाते हैं। शिर के बाल कंघी से झड़ते रहते हैं। छाती की धड़कन, नाडी की क्षीणता, ओष्ठों पर श्वेतता, अजीर्ण, कोष्ठबद्धता, स्वभाव में चिड़चिड़ापन, अरुचि प्रभृति लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रक्त स्राव की अधिकता, हस्तमैथुन, ऋतु की गड़बड़ नियमित शारीरिक परिश्रम का अभाव और दुश्चिंता प्रभृति कारणों से यह रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा—

(१) चरकीय महाशतावरी घृत, शार्ङ्गधरोक्त फल घृत और भैषज्य रत्नावल्युक्त जरायुरोगाधिकारोक्त प्रमदानंद रस इस रोग की उत्तम औषधें हैं

(२) जीवनीय गण की यथाप्राप्त औषधों के क्वाथ के साथ स्वर्ण और रज तथा लौहभस्म एक२ रत्ती की मात्रा से देना भी उचित लाभ करता है।

(३) कुणपगन्धि शुक्रार्त्तव की चिकित्सा से भी विशेष लाभ होता है।

(४) काकमाची, पुनर्नवा, गुडूची, कृष्ण सारिवा। इन के कषाय से उत्तर बस्ति का प्रयोग भी साथ करना चाहिये।

४—सन्निपातज प्रदर—

प्रदर रोग की उपेक्षा करने से यह रोग प्राप्त होता है। इसमें योनि द्वारा निसृत होने वाले स्राव का एक वर्ण नहीं होता। स्रवित तरल में अनेक वर्ण होते हैं। मासिक स्राव में पूर्ण अनियमितता देखी जाती है। प्रायः नं० ३ के प्रदर के न्यूनाधिक सब लक्षण रहते हैं।

चिकित्सा—

शरीर में जिस दोष के लक्षण अधिक दुःखदायक प्रतीत हों उसी को लक्ष्य रख कर गर्भाशय तथा आर्त्तव शोधक औषधों से चिकित्सा करे। नं० ३ की चिकित्सा ही इसमें प्रयुक्त होती है।

आर्त्तव सम्बंधी आठ कष्ट और हैं—

(१) रजोरोध—(Amenorrhoea)

कभी २ रजः स्राव आरम्भ हो कर अकस्मात् रुक भी जाता है। आलस्य परायणता, संगम दोष, ऋतुकाल में बरफ अथवा शीतल पदार्थों का अधिक व्यवहार, शीत सेवन, जल में भीगना, रजोदर्शन होते

ही तुरंत स्नान करना, पर्य्यटन, एकाएक शोक, दुःख या भय प्रभृति के कारण से रजो रोध होता है।

लक्षण—मस्तिष्क में रक्त सञ्चार, शिरो वेदना, गर्भाशय तथा डिम्बाशय में तीव्र वेदना, प्रलाप, चित्तावसाद, रक्त पित्तादि लक्षण प्रकट होते हैं।

चिकित्सा—

यदि यह रोग रक्त हीनता वात कोप से उत्पन्न हुआ हो तो अश्वगन्धादि घृत और अश्वगंधादि अरिष्ट देने से यथेच्छ लाभ होगा। यदि इस से भिन्न कारण हो तो स्निग्ध विरेचनों से लाभ होता है।

(२) अनियमित ऋतु—

(Irregular Menstruation)

मासिक धर्म का समय निश्चित है। अर्थात् प्रति २८ वें दिन जरायु मार्ग से कुछ काला लाल और पतला स्राव होता है। तीन से पांच दिन तक यह रहता है। स्राव का परिमाण २-४ छटांक तक है। इस नियम में व्यतिक्रम हो तो 'अनियमित ऋतु' रोग होता है।

चिकित्सा—

जैसा व्यतिक्रम हो उसी के अनुसार चिकित्सा जो पीछे आर्त्तव व्याधि में बताचुके हैं करनी चाहिए

(३) अनुकल्प रजः—

(Vicarious Menstruation)

नियमित रूप से प्रवृत्त होने वाला रज का यदि एका एक लोप हो अथवा अल्प रजः स्राव हो तो—नाक, मुख, फेफड़े, पाकस्थली एवं गुदा और मूत्र मार्ग से अस्वाभाविक रक्त प्रवृत्ति होती है। इसी को अनुकल्प रज कहते हैं।

चिकित्सा—

कारणों पर पूर्ण विचार करने के पश्चात् सर्व प्रथम रजो दर्शन की प्राप्ति के उपायों से लाभ होता है।

(४) स्वल्प रजः—

(Scanty Menstruation)

स्त्री को किसी भयंकर रोग से ग्रस्त होने पर जब शरीर अत्यन्त दुर्बल तथा रक्त हीन हो जाता है तब स्वल्प रजः प्रवृत्ति होती है। इस की शांति के लिये तात्कालिक परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए रजोरोध की उपरोक्त चिकित्सा का अवलम्बन करने से शीघ्र लाभ होता है।

(५) अतिरजः— (Menorrhagia)

इस रोग में जरायु से अधिक परिमाण से रजः स्राव होता है। यह नियमित समय से पहले या बाद में भी हो सकता है और अल्प या अधिककाल तक रह सकता है। अनेक कारणों से रजसाधिक्य होता है;—इनमें जरायु की यान्त्रिक क्रिया का वैषम्य तथा डिम्ब कोष में रक्त-सञ्चय, पित्त प्रकोप और रक्ताधिक्य आदि कारण होते हैं। अत्यधिक संगम, पुष्टि कर भोजनों की अधिकता, उत्कट मानसिक चिन्ता, बारंबार गर्भ संचार तथा गर्भपात या गर्भ-स्राव भी इस रोग के कारण हुआ करते हैं।

लक्षण—

आलस्य, अंगड़ाई, जम्भाधिक्य, उदासीनता, सिर का भारीपन और वेदना, पीठ और कमर में वेदना, अरुचि, पाद तल में दाह और शीत बोध आदि लक्षण इस रोग में दिखाई देते हैं। अत्यधिक मात्रा में रक्त क्षय होने पर मुख मण्डल की पीतता

होती है। आंखें गढ़ों के बीच घुस जाती हैं। हाथ पांव शीतल रहते हैं। कानों में सांसां शब्द होता रहता है। दृष्टि तथा नाड़ी क्षीण हो जाती है और मूर्च्छा प्रभृति लक्षण प्रकट होते रहते हैं।

चिकित्सा—

प्राय: वही है जो ऊपर रक्त प्रदर में वर्णित की गयी है।

(६) बाधक वेदना— (Dysmenorrhoea)

रज: स्राव के वैलक्षण्य का कारण एक प्रकार की कष्टकर वेदना हुआ करती है, इसी को बाधक वेदना कहते हैं। ऋतुकाल के समय इस रोग में स्त्री को पेड़ू और कमर में अत्यधिक अथवा प्राणांत करने वाली वेदना अनुभूत हुआ करती है। बायें डिम्बाशय में अतिशय वेदना के साथ अल्प रज: प्रवृत्ति के साथ२ मेरु दण्ड, कमर, सर्वांग तथा सिर में भी वेदना होती है।

आलस्य, अग्निमांद्य, मितली या वमन प्रभृति लक्षण बाधक वेदना में दिखाई देते हैं।

अतिशय मैथुन, गर्भाशय की स्थान च्युति, रक्त संचय जनित जरायु प्रदाह और श्वेत प्रदर आदि इसके कारण हुआ करते हैं। इसी को 'उदावर्ता योनि कहते हैं।

चिकित्सा—

ज्योतिष्मती पत्र, वच, कुष्ठ, अमलतास का गूदा कर्पास मूल, उलट कम्बल, प्रत्येक वस्तु को समान भाग पीस कर २-४ माशा की मात्रा कांजी के साथ सेवन करने से बाधक वेदना जनित कष्ट दूर होता है अथवा इनका यथाविधि क्वाथ बनाकर घृत डालकर पान करने से भी लाभ होता है।

केवल छुहारों को दूध में उबाल कर पिलाना भी गुणकारक होता है।

बृ० योगराज गु० अश्वगन्धादि अरिष्ट,महाशतावरी घृत, अश्वगंधादि घृत भी यथा मात्रा देने से स्थाई लाभ होता है।

(७) रज: प्रवृत्ति—(Menses)

आद्य रजो दर्शन में कुछ भिन्नता देखी जाती है, सामान्यतया यह १३-१६ वर्ष की आयु में प्रवृत्त होने लग पड़ता है परन्तु कश्मीर अस्वस्थ और शीत प्रधान देशों की कन्याओं को यह १८-२० वर्ष की आयु में प्रवृत्त होता है। इस से भिन्न जिन कन्याओं को बाल्यकाल से ही आमोद प्रमोद में पोषित होना पड़ता है उन्हें शीघ्र ही रजोदर्शन होने लगता है। बालिका को कन्यापन से मुक्त करने के लिए आद्य रजोदर्शन आदि सूत्र है। रज:स्राव का आरम्भ होना जननेंद्रिय की परिपक्वता, शरीर की पुष्टि और यौवन-फल के पुष्प का परिचायक है। दोष रहित आर्तव प्रवृत्ति ३—५ दिन तक रहती है। इन दिनों में शुद्ध लाल वर्ण का पतला रक्त तथा लाक्षाभ श्यामता लिये हुए तरल का स्राव होता है। ३—४ छटांक तक इस की प्रवृत्ति की मात्रा अनुमानित की जाती है। स्थिरता रहित इस अव्यवस्था का कारण स्त्री का स्वास्थ्य वा अस्वास्थ्य तथा आहार विहारादि की न्यूनाधिकता हुआ करती है।

आर्तव के प्रवर्तन काल में रजस्वला की मानसिक और शारीरिक दशा में परिवर्तन हो जाता है। रज: प्रवृत्ति के एक दो दिन प्रथम से रज: समाप्ति तक रजस्वला को वंक्षण, कटी, गर्भाशय आदि में मीठी मीठी वा तीव्र पीड़ा होती है। अरुचि तथा मुख मालिन्य भी होता है।

रजस्वला की असावधानी और अज्ञान के कारण ही आर्तव सम्बंधी रोगों की उत्पत्ति होती है अतः इस अवस्था में पूर्ण नियमानुकूल रहना भविष्य जीवन के लिये सुख का कारण होता है। सर्व प्रथम रजोदर्शन में प्रायः यह बातें हुआ करती हैं यथा—शरीर में थकान, ग्लानि, सुस्ती, चिड़चिड़ापन, योनि-कंडू व अत्यल्पशोथ, स्नायुओं की दुर्बलता हो तो दिवानापन भी आ जाता है। पांच-सात दिन ऐसी अवस्था रहने के पश्चात् पहले सफेद पानीसा निकलता है फिर शनैः२ रक्त आने लगता है। प्रारंभ में प्रायः ही कन्याओं में रजः स्राव अनियमित रूप से दो दो चार २ मास के पश्चात् होता है। काल क्रम से जैसे २ आयु बढ़ती जाती है वैसे वैसे इसमें नियम बद्धता आती जाती है और विवाह होने के पश्चात् प्रायः यह ठीक २८ वें दिन आने लग जाता है। आगे चल कर स्त्री के जीवन में कोई अस्वाभाविक अथवा कृत्रिम परिवर्तन उपस्थित न हो तो प्रायः ४५ वर्ष तक आर्तव यथानियम प्रवृत्त होता रहता है।

८—रजो निवृत्ति-(Amenarrhoea) अथवा (menopause)

न्याय दर्शन के अनुकूल संयोग वियोग का सूचक हुआ करता है। कन्या की जिस १२—१४ वर्ष की आयु में रजोदर्शन का संयोग होता है उस रज का ४५—५० वर्ष की आयु में लोप हो जाता है। साधारणतः चालीस वर्ष की आयु में स्त्री की जननेन्द्रिय का रक्त-सञ्चय क्रमशः घटने लग जाता है और ४५-५० की आयु तक मासिक बिलकुल ही सदा के लिये बन्द होजाता है। रजः लोप होने पर गर्भाशय का आकार संकुचित होजाता है। योनि प्रदेश भी संकुचित होजाता है। दुर्बलता के लक्षण प्रकट होजाते हैं। इस प्रकार सहज ही ऋतु बंद होने से किसी प्रकार का रोग नहीं होता।

किन्तु यदि सहज में ऋतु बन्द न हो और स्नायुओं की उग्रता जैसे—बारंबार गर्मी जान पड़ना, शिरोव्यथा, हृत्स्पन्दन, कोष्ठबद्धता, उदर में आध्मान मूत्र और स्वेद की अधिक प्रवृत्ति आदि लक्षण प्रकट हों तो उचित चिकित्सा का आश्रय लेना उपयुक्त होता है।

२-जरायु (गर्भाशय के) रोग—Diseases of the Uterus)

गर्भाशय में होने वाले अनेक रोग हैं उनका संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है।

१—जरायु की उग्रता—(Hysteralgia)

इस रोग में गर्भाशय में वेदना जान पड़ती है और समग्र बस्ति प्रदेश में धीरे२ वेदना जान पड़ती है। यह वेदना स्नायविक होती है और ऋतु समय तथा चलने फिरने से बढ़ती है। क्षुधामांद्य, अस्थिरता, मितली, अनिद्रा, पाक यंत्रों का वैषम्य प्रभृति इस रोग के प्रधान लक्षण होते हैं।

चिकित्सा—

१—क्षीर काकोली, चोबचीनी, कर्पास के फलों की मज्जा, और कर्पास मूल प्रत्येक ६-६ माशा लेकर १६ तोले जल में क्वाथ करें। चतुर्थांश शेष रहने पर उतार कर वस्त्र पूत करें और इस क्वाथ को मन्दोष्ण पान करें। निरंतर कुछ दिन तक सेवन करने से यह रोग शांत हो जाता है।

२—अथवा प्रमदानंद रस प्रातः सायं मधु से चाटने से भी लाभ होता है।

३—भोजनोत्तर अश्वगंधादि अरिष्ट २।२ तोला प्रति दिन दो सप्ताह सेवन करने से भी बहुत लाभ होता है।

३—जरायु-प्रदाह (Metritis)

यह रोग दो प्रकार का होता है—तरुण और पुराना।

(क) तरुण जरायु-प्रदाह—प्रसव अथवा गर्भस्राव का रक्त दूषित होने से प्रायः यह उत्पन्न होता है। अत्यन्त शीतबोध, प्रबल ज्वर और पेडू में वेदना इसका प्रधान लक्षण होता है इस रोग का परिणाम भयंकर हो सकता है कारण कि गर्भाशय शोथ ग्रस्त होता है अतः अनुभवी चिकित्सक की सहायता अनिवार्य है। यदि जरायु-प्रदाह (गर्भाशय का शोथ) की दूषित रक्त से उत्पत्ति न हो तो आशंका जनित नहीं होता।

तरुण जरायु-प्रदाह की चिकित्सा—

१—सर्व प्रथम महानारायण तैल या बला तैल का पिचु गर्भाशय के द्वार तक पहुँचा कर धारण करावें।

२—संजीवनी सुरा का १-२ तोला की मात्रा में व्यवहार करना ज्वर और वेदना दोनों को कम करता है।

३—मृत्युञ्जय रस, बृ० कस्तूरी भैरव रस, कारस्कर लौह इन औषधों का प्रयोग कल्याण कर देता है

४—आवश्यकता होने पर शोथघ्न और वेदनाशामक द्रव्यों के क्वाथ से उत्तर बस्ति द्वारा गर्भाशय को शुद्ध करना भी अत्यन्त लाभकर और प्राण रक्षक सिद्ध होता है।

(ख) पुराना जरायु-प्रदाह—

प्रसव के पश्चात् गर्भाशय के समुचित संकुचित न होने से, कृत्रिम उपायों द्वारा गर्भस्राव कराने अथवा गर्भ स्थिति रोकने से, चिरकाल तक श्वेत पीत प्रदर से रुग्ण रहने से जरायु शनैः२ वेदनायुक्त कठिन और स्थूल हो जाता है। इसी को पुराना जरायु-प्रदाह कहते हैं।

उदर का भारी जान पड़ना, बाधक वेदना, स्तन और कमर में पीड़ा, प्रथम रजः स्राव के पश्चात् शोथ, सम्भोग काल में असह्य वेदना, मूत्राशय और मल द्वार में वेदना प्रतीति, हिस्टीरिया और दौर्बल्य इस रोग के प्रधान लक्षण होते हैं।

(ख) पुराने ज० प्र० की चिकित्सा—

१—कारस्कर लौह २।२ रत्ती प्रातः सायं मधु में प्रयोग करना पर्याप्त है। चिरकाल तक चिकित्सा करने से लाभ होता है।

२—रस सिन्दूर, अभ्रकभस्म, रजतभस्म, सूर्यतापी शिलाजीत, धतूर बीज प्रत्येक १।१ तोला। यथा विधि पीस कर धतूर स्वरस की ३ भावना देवे और २।२ रत्ती की गोली बनाकर प्रातः सायं मधु से प्रयोग करें। यह अत्यन्त लाभप्रद योग है। इसका नाम 'सिन्दूरादि वटी' स्मरण रक्खें। आगे भी इसका प्रयोग होगा।

४—गर्भाशय में वात संचय—
(Physometra)

जरायु-प्रदाह में प्रदर्शित कारणों से अथवा निर्बलता से, रक्तहीनता से, वमन विरेचनादि के उपरांत वात प्रकोप होने से तथा ऋतु काल में या उस के तत्काल पश्चात् में वायु कुपित होकर गर्भाशय में अवस्थित हो जाता है और उस प्रकुपित वायु का गर्भशय्या पर दबाव पड़ने से अधो वायु त्याग के शब्द के सदृश शब्द के साथ अथवा फुस फुस शब्द

से योनि मुख द्वारा गर्भाशय से निकलता है। इसको 'गर्भाशयज वात संचय' कहते हैं।

चिकित्सा—

बृ० वात चिन्तामणि रस १। १ रत्ती प्रातः सायं दशमूल क्वाथ से तथा भोजनोत्तर 'दशमूलाद्यरिष्ट' २। २ तोला सेवन करने और बाला तैल का पिचु प्रयोग करने से निश्चयात्मक लाभ होता है।

शोथ तथा क्षतादि के सूखने के उपरांत किसी२ स्त्री के गर्भाशय का मुख बन्द हो जाता है। और किसी२ का गर्भाशय मुख जन्म भर बन्द रहता है। गर्भाशय का मुख बन्द हो जाने पर गर्भाशय बढ़ने लगता है और उसे ढकने वाली झिल्ली से जल या रक्त क्षरित होकर गर्भाशय में 'जल-सञ्चय' (Hydrametra) या 'रक्त-सञ्चय' (Hematometra) हो जाता है।

चिकित्सा—

के लिये अनुभवी चिकित्सक का आश्रय लेना चाहिये।

४—गर्भाशयार्बुद—

(Uterine Tumours & cancer)

कभी२ गर्भाशय के भीतर के अन्तराल में अनेक प्रकार की ग्रन्थियां उत्पन्न हो जाती हैं। इनका आकार मटर के दाने से लेकर एक बड़े फल तक होता है। और यह ग्रन्थियां एक से पचास तक हो सकती हैं। किसी २ ग्रन्थि से जब वह फूट जाती है रक्त और पूय का स्राव होता है। कई ग्रन्थियां नहीं भी फूटतीं। कभी २ श्वेत प्रदर होता है मुख्यतया इस रोग के लक्षण रक्ताल्पता और बन्ध्यत्व होते हैं।

चिकित्सा—

इस रोग में शस्त्रचिकित्सा का आश्रय सिद्ध उपाय है।

५—गर्भाशय की स्थानच्युति या नाफ का उतरना।

(Displacement of the uterus)

रजः प्रवृत्ति काल अथवा प्रसूता के पश्चात् जब गर्भाशय प्रशिथिलीभूत होता है तब अनियमित उछल कूद करने से, कसकर धोती बांधने से, प्रसव के पश्चात् उदर के शिथिल बांधने से एवं आघातादि के कारण से गर्भाशय की स्थान च्युति अथवा गर्भाशय भ्रंश होता है। अर्थात् गर्भाशय अपने स्थान से कुछ इधर उधर हो जाता है। इसके दो भेद हैं—१—प्रथम भेद में स्वस्थान भ्रष्ट गर्भाशय का वस्ति-गह्वर में अवस्थित होना २—दूसरे भेद में भ्रष्ट गर्भाशय का योनि के बाहर निकलना होता है।

इसमें प्रायः गर्भाशय के अधो भाग में पेडू में वेदना होती है। मूत्र त्याग में कष्ट, श्वेत प्रदर, रजः स्राव या रजः स्वल्पता, बाधकता और बन्ध्यत्व प्रभृति इस रोग के प्रधान लक्षण होते हैं।

चिकित्सा—

उपरोक्त क्षीर काकोल्यादि क्वाथ के साथ केवल रजतभस्म १।१ रत्ती प्रयोग उत्कृष्ट लाभ दिखाता है।

किसी योग्य धाय से पेट पर बला तैल की मालिश कराकर नाफ को ठीक कराकर बंधाना चाहिये। इस प्रकार चिकित्सा करने और ३—४ मास तक निरंतर ब्रह्मचर्य धारण करने से इस रोग का मूलोच्छेद हो जाता है। (क्रमशः)

अत्यंत संक्षिप्त लिखने पर भी लेख बहुत लम्बा होगया है और इससे अधिक और लिखने का समय भी उपस्थित नहीं है अतएव पाठकों से प्रार्थना है कि इस लेख का शेष भाग 'जीवन सुधा' की किसी अगली संख्या में आपको भेंट करने का यत्न करूंगा। शमित्योम्।
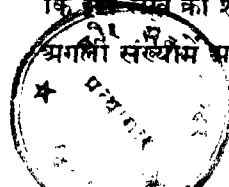
गर्भावस्था में रक्तस्राव

डा० के. पी. ब्रह्मचारी
L.M.P. वाचस्पति

गर्भावस्था में रक्त स्राव होना बड़ा ही खतरनाक होता है, इस रक्तस्राव से किसी किसी गर्भणी स्त्री की ऐसी हालत हो जाती है कि उसको अपनी जान से हाथ धोना पड़ता है । गर्भावस्था में रक्त स्राव के सात कारण हैं ।

(१) ऋतु (२) गर्भपात (३) मोल (४) स्वाभाविक प्लासन्टा (आंवल नाल की स्थानच्युति) (५) प्लासन्टा प्रिविया (अस्वाभाविक स्थान पर आंवल नाल) (६) अस्थानीय गर्भ (७) यूट्रास या भजानल रोग (जरायु और योनी सम्बन्धी रोग) ये सात कारण होते हैं ।

(१) ऋतु—नियमित ऋतु होने पर तीन, चार दिन तक स्राव होने के पश्चात् बन्द होने को मासिक धर्म कहते हैं । परन्तु इस के अतिरिक्त, दर्द होना, या अधिक दिन तक स्राव होने को गर्भपात कहते हैं । इस समय किसी लेडी डाक्टर या स्त्री रोग सम्बन्धी ज्ञाता से परामर्श करना उचित है ।

(२) गर्भपात—(एबरशन या मिसकैरिज) abortion or miscarriage.

गर्भपात का कारण—गर्भवती को चेचक, स्वास गर्मी, धातु इत्यादि संक्रामिक तथा आमाशय, उदरामय, जरायु, गुर्दा इत्यादि का नाना विधि रोग होने से गर्भपात होता है ।

(३) फटा हुआ सरविक्स (टोरन या रैपचर सरविक्स) Torn or ruptured cervix

(४) आघात लगना, भारी चीज़ उठाना, दौड़ना, सीढ़ी उतरना, चढ़ना, पैर फिसलना ।

(५) अतिरिक्त स्वामी सहवास ।

(६) मन का उद्वेग ।

(७) (क) अरगट कुनीन व भीषण दस्तावर औषध का सेवन ।

(८) बच्चेदानी के अंदर किसी प्रकार के यंत्र अथवा गर्भ नष्ट करने के लिए सींकड (टैन्ट) देना ।

(ख) भ्रूण की विकृति जिस प्रकार मोल ।

(ग) (१) स्वामी के कारण, गर्मी, धातु, यक्ष्मा आदि रोग ।

(२) जिसके स्वामी की कम उम्र और जो ज्यादा शराब पीते हैं उनके औरस जात भ्रूण की जीवन शक्ति कम हो जाती है ।

इन समस्त कारणों से गर्भपात होता है ।

किसी किसी गर्भवती के बारम्बार गर्भपात होता है इसको कोई कोई मृतवत्सा दोष कहते हैं । (हेविचुएल एबरशन) किन्तु मृतवत्सा दोष कोई रोग नहीं है । बार २ गर्भपात होने के कारण यह हैं ।

एबरशन (गर्भपात) के पांच प्रकार हैं ।

(१) थ्रेटैनड Threatened abortion

(२) इन एविटेबिल Inevitable
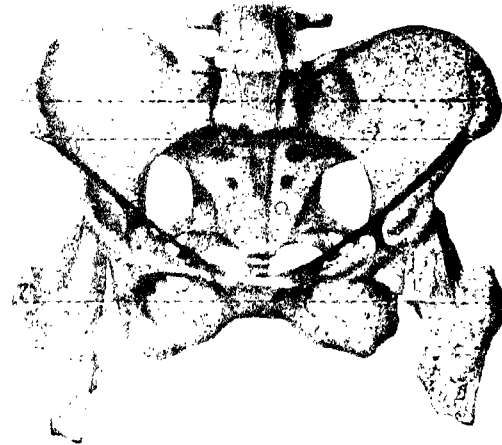
(३) कम्पलीट Complete

(४) इनकम्पलीट Incomplete

(५) मिस्ड Missed

(१) थ्रेटैनड एवरशन् (गर्भपात)

(Threatened abortion)

व गर्भपात की आशंका। (गर्भ ठहर सकता।

लक्षण :—

अल्प रक्तस्राव होना, अल्पव्यथा, अनियमित होना, Membranes मैमब्रेन (थैली) से पानी न आना। गर्भाशय का मुख इतना न खुले जिस से (अस्) के अंदर अंगुली जा सके और मैमब्रेन को छू सके। इसको थ्रेटन्ड एवरशन कहते हैं।

व्यवस्था:—

गर्भवती को बिस्तर में लिटाकर उठने नहीं देना चाहिए, पायखाना, पेशाब, लेटे लेटे चारपाई पर ही कराना चाहिए। "लाईकर विडैन्स" १ ड्राम, गर्मपानी के साथ प्रति घण्टे में दिन में ६ बार देना चाहिए। खानेके लिए हल्का भोजन, दूध, साबूदाना देना चाहिए यदि इस की व्यवस्था न हो सके तो "क्लोरोडिन" १५ बून्द आधी छटांक जलके साथ दिन में तीन बार देना चाहिए। किसी प्रकार का भय, भयंकर कठोर शब्द जिसमें गर्भवती भयभीत हो वह नहीं करना चाहिए। इस अवस्था में गर्भवती को ४–५ दिन से अधिक रखना चाहिए। यदि विशेष हो तो डाक्टर की अनुमति से ४ घण्टे के अन्दर, मलद्वार में 'क्लोरोडिन' का ऐनिमा लगाना चाहिए। यदि उसमें कब्जीयत हो तो ऐनिमा लगाना चाहिए।

इनऐविटेबिल एवरषन्—

(Inevitable abortion)

अथवा निश्चित गर्भपात। गर्भ ठहरने की कोई संभावना नहीं है।

लक्षण:—

रक्त स्राव का ज्यादा होना, अधिक व्यथा ठहर ठहर कर नियमित व्यथा होना (अस्) खुल जाना, (अस्) वा इतना खुल जाना कि अंगुली द्वारा मैमरेन या बच्चे का अंग भली प्रकार अनुभव होना। किन्तु थैली (मैमरेन) का पानी थोड़ा थोड़ा आना।

व्यवस्था:—

इस अवस्था में किसी योग्य लेडी डाक्टर को परामर्श लेना अधिक उचित है, डाक्टर के आने से पूर्व (आईडोफार्म गौज)'बोरिक गाज' अथवा बोरिक-काटन। यदि न मिले तो साफ कपड़े को पानी में पका कर 'लाईसोल लोशन' में भिगो कर उस का लंगोट बंधवाना उचित है। और गर्भवती को सुला कर उसके हाथ अच्छी प्रकार साफ करके गर्म पानी में 'लाईसोललोशन' बनाकर Vagina "विजाइना" (भग) को अंदर बाहर धुलाना चाहिए। धोने के पश्चात् गाज अथवा काटन से सरविक्स के चारों ओर गाजप्लग कर देना चाहिए।

कम्पलीट एवरषन—

(Complete abortion)

इसमें आवलनाल, मैमरेन और सबका सब बच्चे सके हित बाहर आ जाना। इसको कम्पलीट अवर्षन कहते हैं। इसमें पूर्ण मास में बच्चा होने पर जो जो कार्य करना होता है वही वही करना उचित है इसमें प्रति दिन आधा ड्राम तीन बार दिन में 'अरगट' देना चाहिए, जिसमें बच्चेदानी अपने नियमित रूप में आ जावे। इसमें जच्चा को कम से कम १०

दिन तक पूर्ण रूप से आराम लेना चाहिए । कोई २ गर्भवती इस गर्भपात के बाद शीघ्र अपने काम धंधे में लग जाती हैं। अतः उन्हें पीछे बहुत पछताना पड़ता है।

इनकम्पलीट एवरषन—

(Incomplete abortion)

समस्त सांचा न गिरकर थोड़ा कुछ कोई टुकड़ा भीतर रह जाता है। यदि उसके निकालने की कोई व्यवस्था शीघ्र न की जाय तो वह अन्दर सड़ कर गर्भवती के ज्वर विकार (सैपसिस) हो जाता है। जो अन्दर से (डिसचार्ज) मल निकलता है वह बहुत दुर्गंधमय होता है। ऐसी अवस्था में किसी औषधोपचार से कार्य चलना कठिन है। बिना किसी योग्य डाक्टर के काम चलना कठिन है। अतः डाक्टर को बुलाकर "क्यूरेटिंग" कराना चाहिए।

गर्भस्राव प्रायः ३ मास के मध्य में होता है या गर्भ के पूर्व जिस जिस समय में ऋतु के दिन होते हैं उस उस समय में गर्भ पात का भय रहता है। तीन मास से पांच मास के मध्य तक गर्भपात होने से विपत्ति की आशंका रहती है।

कारण ।

इस समय जो गर्भपात होता है वह "इनकम्पलीट" होता है। पांच मास के बाद में जो गर्भपात हो उसे "अकाल प्रसव" कहते हैं। उस समय 'सन्तान' और 'आवल नाल' अलग २ बन जाते हैं।

बार बार गर्भपात होने को "मृतवत्सा" रोग कहते हैं।

मुख्य कारण ।

इसके कारण अनेक हैं किंतु प्रधान कारण बच्चेदानी की सूजन है।

यदि इस प्रकार से बार बार गर्भपात हो तो गर्भ होने से पूर्व इन रोगों की चिकित्सा करानी चाहिए यदि उपदंश हो तो स्त्री, पुरुष दोनों की रक्त परीक्षा करके उपदंशकी नियत चिकित्सा करनी आवश्यक है

मिस्ड एवरषन (खोलड़ी) ।

(Missed abortion)

(पेट में बच्चा सूख कर केवल खाल रह जाना) गर्भपात के समुदाय लक्षण होने पर गर्भपात नहीं होना और बच्चा अन्दर सूख जाना और बहुत दिन बाद निकलना अथवा और कोई दूसरी बीमारी हो जाना।

व्यवस्था:—

किसी योग्य चिकित्सक द्वारा परीक्षा करा कर गर्भाशय की सफाई करानी चाहिये।

क्यूरेटिंग (छोटा अपरेशन) कोई खतरनाक अपरेशन नहीं है। इस रोग में दवा देने की अपेक्षा 'क्यूरेटिंग' करना अधिक लाभप्रद है।

(३) (mole) मोल—भ्रूण की विकृत अवस्था का नाम mole है।

मोल दो प्रकार का होता है।

(१) फ्लेशिमोल (खूनका जमाव) Felshymole

(२) वैसक्यूलर मोल (Vesicular mole)

(क) ब्लैंड या फ्लेशिमोल (खून का गोला)

भ्रूण के अंदर रक्त स्राव होते होते भ्रूण नष्ट हो जाता है और खून का गोला बन जाता है और कुछ समय तक अन्दर रहता है। अधिक दिन अन्दर रहने से बच्चे की हड्डी, चमड़ा आदि अन्दर अलग २ हो जाता है। मांस का एक कठिन जमाव

हो जाता है। यदि उस पिण्ड का रंग रक्त की तरह लाल हो तो उसको रक्त पिण्ड कहेंगे और यदि उस का रंग फीका मांस की भांति हो तो इसको फ्लेशिमोल कहेंगे या मांस पिण्ड कहेंगे।

लक्षण।

(१) गर्भ के लक्षण प्रतीत होते हैं।

(२) भ्रूण के मर जाने पर पेट बढ़ता नहीं।

(३) कुछ समय के बाद बीच बीच में रक्त स्राव होता है परन्तु गर्भ स्राव नहीं होता। रक्त का रंग प्रायः काला और गाढ़ा होता है।

चिकित्सा।

इसकी चिकित्सा केवल क्यूरेटिङ्ग है।

वेसिक्यूलर मोल

भ्रूण नष्ट होकर "कोरियन" (बच्चे की झिल्ली) की विकृति पैदा होजाती है। और उनमें छोटे छोटे संख्यातीत अंगूर की भांति पानी से भरे हुये दाने बन जाते हैं। इन दानों को अंग्रेजी में 'वेसिक्यूलर मोल' कहते हैं। यह सब जब निकलते हैं तो यह एक अंगुर गुच्छे की भांति होते हैं।

लक्षण।

(१) इसमें गर्भ के कई लक्षण होते हैं। जैसे ऋतु बन्द होना, पेट बड़ा मालूम होना, कै, इत्यादि होना। (२) कै का ज्यादा होना, (३) मांस के हिसाब से पेट ज्यादा बढ़ते जाना, दो, तीन मास में ही बच्चा टूंडी तक पहुँच जाता है और बहुत ऊँची प्रतीत होती है (४) पेट दबा कर देखने से गर्भावस्था के समय से अधिक सख्त मालूम होता है। बच्चे का कोई अंग हाथ में नहीं लगता। (५) पेट ५। ६ मास की भांति बड़ा होने पर भी बच्चे की दिल की धड़कन सुनाई नहीं देती (६) दो तीन मास में रक्त जारी हो जाना, (७) रक्त के साथ अंगूर दाने की भांति या अंगूर के छिलके की भांति कभी कभी निकलता है (८) बीच बीच में बच्चेदानी में दर्द भी होता है।

यह रोग स्त्रियों के लिए बड़ा भयंकर होता है उपयुक्त चिकित्सा न होने पर बहुत स्त्रियां मर जाती हैं। इस रोग के लिए सर्वथा योग्य चिकित्सक द्वारा ही चिकित्सा करानी उचित है।

इस रोग से एक और रोग उत्पन्न होता है जिस को (कोरियन ईपीथीलियोमा) Chorion epethelioma foetal cancer कहते हैं। इस रोग में समस्त बच्चेदानी को काट कर निकाल देना चाहिए। बच्चेदानी न निकालने से रोगणी बच नहीं सकती।

आकस्मिक रक्तस्राव।

गर्भ के शेष २ मास में किसी प्रकार की चोट लगने से अथवा मन में कोई उद्वेग होने से यूट्रस संकोच होता है। और उसी के कारण से स्वाभाविक प्लासन्टा के अंश अलहदा होते हैं। इस प्रकार होने से रक्त स्राव होता है। जिस कारण से गर्भपात होता है वह सब कारण जिसके अन्दर और जो स्त्री साल साल में बच्चे जनती हैं। उनकी बच्चेदानी कमजोर हो जाती है और थोड़े से कारणों से ही रक्त स्राव हो जाता है।

रक्तस्राव के चार लक्षण।

(१) बेहोश होजाना (२) चंचल क्षीण नाड़ी (३) मुख ठोड़ी नीली पड़ जाना (४) श्वास आने में कष्ट होना।

रक्त स्राव ज्यादा होने से रोगणी छटपटाती है, रुक रुक के सांस आता है क्रमश अज्ञान हो जाती है,

नाड़ी छूट जाती है, तदनन्तर मर जाती है।

गुप्त रक्त स्राव। (कनसिल्ड हैमरेज)

रक्त दिखाई नहीं देता परन्तु अन्दर जम जाता है। इस में प्रायः अधिक रक्त स्राव के लक्षण पाये जाते हैं। महीने के हिसाब से आकार की तुलना में बच्चेदानी ज्यादा बड़ी मालूम होती है। लकड़ी के तुल्य सख्त हो जाती है। पेट में अधिक दर्द होता है। प्रायः कभी कभी दर्द ऐसा होता है कि नाड़ी छूट जाती है।

इसकी चिकित्सा योग्य चिकित्सक द्वारा करानी चाहिए इस अवस्था में "आडिनर्लीन" और "पिट्यू-ट्रिन" इनजक्शन की व्यवस्था करनी आवश्यक है।

चिकित्सा।

रक्त स्राव थोड़ा२ होने से पेट में पेटी बांधकर लिटा देना चाहिए। रक्तस्राव के ज्यादा होने पर, दर्द होने से 'प्रज़नटेशन' स्वाभाविक रहने से और यदि गर्भवती के किसी विपत्ति की आशंका हो तो उसका डाईलिटेशन ३।४ इंच हो तो मैमब्रेन को फाड़ देना चाहिए। यदि इस प्रकार भी रक्तस्राव बन्द न हो तो "प्लग" कर देना चाहिए। सिर की ओर चारपाई को नीचा करके रखना चाहिए और पेट की ओर ऊंचा करना चाहिए। यदि हाथ पैर शीतल हो तो गर्म जल की बोतल से सेंक करना उचित है। जब नाड़ी खराब हो तो रेकटम (गुदा) में स्लाईन इंजक्शन करने चाहिएं।

(इंजेक्शन का परिमाण) एक पाईन्ट आधा गर्म पानी में एक चाय के चम्मच भर नमक मिला कर उसका इंजेशन करना चाहिए।

हाथ, पैर में अंगुली के उपरी भाग की ओर से पट्टी बांधनी चाहिए। दर्द की अधिकता में 'प्लग' की आवश्यकता नहीं है। यदि गुप्त रक्त स्राव मालूम हो तो मैमरेन को खोल देना उचित है। प्रसव के बाद रक्त स्राव हो सकता है। इसमें "एड्रिनलीन" इंजशन प्रस्तुत करना चाहिए।

प्लासन्टा प्रिविया

(Placenta Previa)

प्लासन्टा यूट्रस के ऊपर किम्वा मध्य भाग में न रहकर यदि नीचे के हिस्से में हो तो इस अवस्था को "प्लासन्टा प्रिविया" कहते हैं। प्लासन्टा को जब अस् (os) ढांक लेता है तो इसको "सेन्ट्रल प्लासन्टा प्रिविया" कहते हैं। प्लासन्टा अस् के नज़दीक रहने से इसको 'मारजिनस' (Marginus) कहते हैं। जब प्लासन्टा का कुछ अंश उस के अंदर रहे तो इसको पारशियल (Partial) कहते हैं। और अस् के कुछ ऊपर और एक ओर रहने से उसको "लेट-रेल" (Lateral) कहते हैं।

लक्षण

(१) रक्त स्राव—६ मास के आखिर से लेकर प्रसव पूर्व पर्यन्त किसी समय व समय समय पर बिना दर्द से, बिना चोट से, यदि अकस्मात् रक्त स्राव होता है तब 'प्लासन्टा प्रिविया' का सन्देह होता है। कभी ६ मास से पूर्व ही रक्त स्राव प्ला-सन्टा के गर्भिणी को देखा गया है।

(२) अस डाईलेट होने पर अंगुली से परीक्षा करने पर बच्चे का सिर किम्वा पैर हाथ न लग कर एक स्पंज की भांति कोई नर्म चीज़ प्रतीत होती है। इसको प्लासन्टा कहते हैं। किसी किसी समय रक्त के जमाव 'क्लाट' (Clot) का भी भ्रम हो सकता है।

किन्तु (ब्लड क्लाट) प्लासन्टा से नर्म होता है। ब्लडक्लाट को दबाने से वह टूट जाता है । ब्लडक्लाट होने से अंगुली में खून लग जाता है बहुत संभव है वह हाथ के लगाने से बाहर भी आ जावे परन्तु प्लासन्टा न टूटता ही है और न बाहर ही आता है । प्लासन्टा प्रिविया बहुत खतरनाक बीमारी है । इस के सन्देह होने पर फौरन किसी योग्य चिकित्सक को दिखाना चाहिए, इसमें अत्यधिक रक्त स्राव होता है । इस कारण जच्चा और बच्चा दोनों की ही मृत्यु होती है। दो छटांक दूध, दो चम्मच बरांडी का मल द्वार में डूश देना चाहिए । यदि रक्त स्राव ज्यादा हो तो और अस ज्यादा डाईलेट हुआ हो तो मेमब्रेन को फाड़कर इसमें रूई का प्लग कर देना चाहिए। नीचे की ओर पेट कर के उसमें पेटी बांध देनी चाहिए। इसकी चिकित्सा रोगणी की अवस्था पर निर्भर है।

अस्थायी गर्भ व एकटोपीक जैसटेशन

कदाचित गर्भाशय के अन्दर गर्भ न होकर 'पैरा फाईन ट्यूब' किम्बा 'ओवेरी' में होता है । उसके कारण भी किसी किसी समय रक्त स्राव होता है। रक्त स्राव के साथ साथ छोटे छोटे परदे की भांति रक्त के साथ निकलते हैं। गर्भ सामने में न होकर एक तरफ होता है उसके कारण समय समय पर दर्द होता है। यह जो अस्थानीय गर्भ किसी मन्द भाग्या स्त्री के होता है सब के नहीं । इसका उपाय केवल आपरेशन ही है। यह एक प्रकार का भयंकर गर्भ कहलाता है । कभी कभी ट्यूब फट कर रक्त नीचे पेट में जम जाता है। इसमें गर्भवती की मृत्यु हो जाती है। यह ट्यूबल प्रैगनेंसी (Tubel Pregnaney) यदि पूर्व में किसी समय मालूम हो जाय तो फौरन चिकित्सा करनी चाहिए।

यूट्रस रपचर होने के लक्षण

नीचे यदि तल पेट में असह्य वेदना हो, सिर आंख में अन्धकार प्रतीत हो, मुख पीला पड़ गया हो, पसीना अधिक होकर नाड़ी की गति खराब हो, और गुप्त रक्त स्राव के सब लक्षण प्रतीत होते हों तो जान लेना चाहिये कि यूट्रस में रपचर हो गया है। इस प्रकार होने से गर्भणी को लिटा देना चाहिए गुप्त रक्त स्राव की जो जो चिकित्सा ऊपर लिख आये हैं वह सब करनी चाहिये । फौरन योग्य चिकित्सक के सुपर्द कर देना चाहिए। इसी अवस्था में कभी कभी भ्रूण ट्यूब के मुख से निकल कर पेट के अन्दर चला जाता है। इसमें रोगणी शीघ्र ठीक हो जाती है। इसमें भी रक्त स्राव होता है— और भयंकर दर्द होता है। रक्त स्राव योनि द्वार से बहुत कम होता है यदि होता है तब काला पतला रंग का होता है। रक्त स्राव के परिमाण में यदि कोई टुकड़ा अन्दर से आता है तो वह भ्रूण का अंश नहीं होता है। वह डेसीडूआ (Decidua) का टुकड़ा होता है।

ऊपर लिखित रोग है उसकी चिकित्सा औषधि नहीं है यह सब ही शल्योपचार एवं इंजक्शन इत्यादि से करनी चाहिए।

लेखक —
धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि
प्रोप्राइटर मुरारी एण्ड कम्पनी देहली

आयुर्वेद के प्रवीण महारथियों की इस रोग के सम्बन्ध में अनेक राय हैं कोई इस रोग को स्वतन्त्र मानता है। किसी २ की राय में यह रोग प्रमेह के अंदर ही आ जाता है, किसी २ आचार्य के मत में उष्ण वात ही सोज़ाक माना जाता है। कुछ भी हो यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि, आयुर्वेद में न तो सूज़ाक नाम से कोई रोग मिलता है और न आयुर्वेद के अवान्तर्गत आये हुए रोगों का समस्त निदान सूज़ाक से मिलता है, यह रोग कब और कहां से और कैसे पैदा हुआ? इन प्रश्नों का उत्तर देना बड़ी टेढ़ी खीर है, इस रोग की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक दन्त कथायें प्रचलित हैं। किसी २ के मत से यह रोग सब से पूर्व यूनान से प्रारंभ हुआ, कहा जाता है, और इस रोग के पूर्व ज्ञाता डा० गिडसन हेनरी माने जाते हैं, यह बात सर्व सम्मति से सिद्ध हो चुकी है कि मुगल साम्राज्य से पूर्व यह रोग भारत वर्ष में नहीं था, मुगल बादशाहों के पदार्पण के समय ही यह रोग भारतवर्ष में आया, इस समय दुनियां का कोई भी देश ऐसा नहीं है, जो यह गर्व से कह सके कि हमारे देश में सूज़ाक के रोगी नहीं हैं। इस रोग ने अब सब जगह घर कर लिया है इस रोग की भयङ्करता से इस समय लाखों नर नारी पीड़ित हैं, आयुर्वेद में पूय मेह नाम से जो रोग प्रसिद्ध है उस के लक्षण सोजाक से अधिकतर मिलते हैं और पूय मेहोक्त चिकित्सा से सूज़ाक में लाभ भी होता है इस लिये सूज़ाक को पूयमेह नाम से पुकारना कोई अत्युक्ति न होगी, हम आगे इस रोग को पूयमेह नाम से ही पुकारेंगे पूयमेह में मूत्र मार्ग में से गोनोकोकस (Gonococus) नामक कीटाणुओं से छूत लगने के कारण पीप निकलती है अक्सर यह रोग बदफैली से होता है, (अनेक रोगियों के मुख से यह भी सुना है कि गर्म लोहे या रेते पर पेशाब करने से यह रोग हो जाता है," परन्तु यह कहां तक सत्य है हम नहीं कह सकते) ये कीटाणु मूत्रमार्ग की श्लैष्मिक कला की सेलों में और श्वेत कणों में पाये जाते हैं अक्सर मूत्र मार्ग की श्लैष्मिक कला से छूत शुरू होती है।

लक्षण और चिन्ह—

आरम्भ में मूत्र करते समय कुछ देर के वास्ते जलन होती है, और बाद में २ दिन से ८ दिन के बीच में पेशाब में एक प्रकार का स्राव निकलने लगता है, जो शुरू में पतला होता है और बाद में पीला और गाढ़ासा हो जाता है, इस समय श्लैष्मिक कला का प्रदाह इतना ज्यादा नहीं होता कि मूत्र रुक जाय या मूत्र मार्ग से खून आने लगे। परन्तु कभी २ यह प्रदाह इतना अधिक बढ़ जाता है कि रोगी पेशाब नहीं कर सकता और रक्त भी मूत्र के साथ निक

जाता है यदि इस समय रोग की चिकित्सा जल्द की जाय तो रोग बहुत जल्द नष्ट हो जाता है यदि चिकित्सा जल्द न की जाय तो मूत्रमार्ग के पश्चाद्भाग में प्रदाह हो जाता है जिससे मूत्र बार२ और दर्द के साथ आता है प्रदाह बढ़ता २ पौरुष ग्रंथि और अंड में हो जाता है इस हालत में रोग को पुराना माना जाता है। और एक प्रकार की ऐसी हालत हो जाती है कि सुबह पेशाब करने से पूर्व पीप की कुछ बूंदें निकलती हैं यह हालत जिसे, (Chronic Gonorrhoea) या (Gleet) कहते हैं। मूत्र मार्ग की ग्रन्थियों और श्लैष्मिक कला के बीच के तन्तु में छूत लगने से या पौरुष ग्रन्थि के पुराने प्रदाह से या शुक्राशय के प्रदाह से होती है कभी२ (गोनो कोकस) के अतिरिक्त अन्य प्रकार के पीपमय कीटाणु मूत्रमार्ग की श्लैष्मिक कला पर लग जाते हैं और एक प्रकार का प्रदाह पैदा करते हैं जिससे मूत्र में पीप निकलने लगती है और सूज़ाक हो जाता है।

चिकित्सा और परहेज़

रोगी को रोज़ाना टट्टी साफ़ हो जाय ऐसी दवा देनी चाहिये मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय करने की औषधि भी देनी आवश्यक है जिस से मूत्र अधिक और साफ़ आये यदि मूत्र के निकलने में दर्द हो तो ऐसी औषधि का प्रयोग करना चाहिये जिस से दर्द में लाभ हो ऐसे समय 'टिंचर बैलेडोना' अच्छा काम देता है। इसकी ५–६ बून्द देने से ही अच्छा लाभ मालूम पड़ता है। रोगी को शराब, गांजा, सिगरेट आदि नशीली चीज़ों से खास तौर पर परहेज़ करना चाहिये। और खास तौर पर स्त्री सङ्ग करने का परहेज़ रखना चाहिये इस रोग के अच्छा होने पर भी एक दो साल तक स्त्री सङ्ग करना निषेध है। यदि रोग अच्छा होने पर जल्दी से स्त्री सङ्ग किया जाय तो दुबारा रोग होने की संभावना रहती है; और ऐसी हालत में स्त्री और पुरुष दोनों के रोग हो जाता है।

स्थानिक चिकित्सा

जहां तक हो सके जल्दी करनी चाहिये मूत्र मार्ग को धोने के लिये डाक्टर्स कई दवाइयों के घोलों का प्रयोग करते हैं जैसे (पोटासियमपरमैंगनेट) Potassium permagnate 1/4000 या सिलवर नाइटरेट Silvernitrate 1/2000 (प्रोटार्गल) Protargal 1/000 ये घोल धोने के अत्यन्त उपयोगी। आयुर्वेद में धोने के लिये अनेक औषधि लिखी हैं। परन्तु वैद्य महानुभाव उनसे फ़ायदा न उठा कर डाक्टरों का मुख ताकते हैं उस रोग में त्रिफला के क्वाथ से वही लाभ पाया जाता है जो कि ऊपर लिखी हुई ऐलोपैथिक दवाओं में मिलता है बबूल का क्वाथ और पीपल का क्वाथ भी बड़ा ही उपयोगी धोने में सिद्ध हो चुका है और अनेक मरीज़ों पर आज़माया जा चुका है। पिलाने के लिये डाक्टर्स चन्दन का तेल (Sandal wood oil copaiba and Cubeb) आयुर्वेद में अनेक खाने की ऐसी उपयोगी औषधियों का वर्णन है जो सचमुच अमृत का काम देती हैं। जैसे वैद्यक शिक्षा का (एलादि चूर्ण) रसेन्द्र सार संग्रह की (इन्द्र वटी) (मेघनाद रस) (बंगावलेह) चक्रदत्त का (दार्व्यादि क्वाथ) और (निग्रोधादिचूर्ण) और चरक का मध्वासव इस रोग में अच्छा काम देता है। बहुत से वैद्यों को इस रोग में चन्द्रप्रभावटी बरतते देखा है परन्तु इस रोग में उससे कोई खास फायदा

नहीं होता आजकल डाक्टर्स लोग (वैक्सीन) का प्रयोग करते हैं यदि रोगी अपने पीप से वैक्सीन बनवावे तो कभीर फायदा हो जाता है। पुराने गनोरिया में रोगी के मूत्राशय को पोटासियमपरमैंगनेट १।४००० के ४० औन्स घोल से धोना चाहिये इस घोल की ताकत धीरेर १।४००० तक बढ़ा सकते हैं यदि इस हालत में भी कुछ फायदा न हो तो (सिलवर नाइट्रेट) के कुछ बूंद मूत्राशय में पिचकारी द्वारा डाल सकते हैं। परन्तु इसमें पूर्व मूत्राशय को सुन्न करने की खास ज़रूरत होती है इसके लिये (कोकीन) का प्रयोग करना चाहिये यदि (सिलवरनाइट्रेट) का प्रयोग किया जाय तो थोड़े दिन के वास्ते मूत्राशय का धोना बन्द कर देना चाहिये।

सूज़ाक और उसके उपद्रव

इसके उपद्रव तीन प्रकार के होते हैं (१) मूत्र मार्ग में प्रदाह के ऊपर की ओर बढ़ने से (२) मूत्र मार्ग के आस पास के अंगों में प्रदाह फैलने से (३) मूत्रमार्ग में कीटाणु और पीप के शोषण से

(१) प्रदाह के ऊपर की ओर बढ़ने से—

जैसे की शिश्न की त्वचा और शिश्न मुंड का प्रदाह और आसपास ग्रन्थियों और लसिका ग्रन्थियों का पीप से प्रदाह मूत्र मार्ग में खुलनेवाली ग्रंथियों का प्रदाह इसमें एक प्रकार का मूत्र मार्ग में फोड़ा हो जाता है जिसमें पेशाब करने में बहुत कष्ट होता है। यह या तो छूटकर मूत्र मार्ग में खुलता है या बाहर पृष्ठ पर खुल जाता है या अन्दर और बाहर दोनों तरफ खुलता है। शिश्न की पेशियों का प्रदाह प्रोसटेट और शुक्राशय का प्रदाह कौपर की ग्रंथियों का प्रदाह उपाण्ड का प्रदाह मूत्राशय की श्लैष्मिक कला का प्रदाह मूत्र मार्ग के आस पास के अंगों में प्रदाह होने से गुदा नाली का प्रदाह हो जाता है यह खास कर स्त्रियों में अधिक होता है। नाक की श्लैष्मिक कला का प्रदाह, आंख की श्लैष्मिक कला का प्रदाह यह खास कर छोटे बच्चों में माता की योनि में छूत लगने से होता है। शुरू में आंख में से श्लेष्मा निकलती है बादमें श्लेष्मा और पीप निकलती है कभीर खालिस पीप भी निकलती है आंख लाल सुर्ख रंग की और आंख की श्लैष्मिक कला का एक प्रकार का शोथ दिखाई देता है कभीर कनीनका भी सड़ जाती है और हमेशा के लिये आंख बन्द हो जाती है इस रोग में जिन रोगियों के मेद बढ़ा होता है और कभी उनके चोट लग जाती है तो उस घाव का भरना दुशवार हो जाता है इस प्रकार के हज़ारों मनुष्य छोटीर चोट से होने वाले घावों के कारण चल बसते हैं।

चिकित्सा

जब एक आंख की ऐसी दशा हो तो दूसरी आंख को छूत से बचाने के लिये किसी तरह का बन्धन बांध देना चाहिये जिस आंख में रोग पैदा हो गया हो उस आंख को हर एक २ घंटे के बाद बोरिक लोशन से धोना चाहिये १।१०० के (सिलवर नाइट्रेट) के घोल के लोशन की बून्द एक २ घंटे बाद आंख में डालना चाहिए बच्चा पैदा होने के बाद यह ध्यान रखना चाहिये कि उसकी दोनों आँखें १।४००० के घोल से धोकर साफ कपड़े से पोंछ डालनी चाहिये। या मामूली गर्म पानी से आंखों को धोने के बाद आंखों में १।१०० (सिलवर नाइट्रेट) की एक २ बून्द डालनी चाहिये। मूत्र मार्ग में

कविराज पं० धर्मेन्द्र नाथ शास्त्री
आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरी

आप मुरारी एण्ड कम्पनी देहली के
प्रोप्राइटर और एक योग्य चिकित्सक हैं

बा० श्यामबिहारीलाल जी गुप्त वैद्य भूषण
मन्त्री अखिलभारतीय नि० सम्मेलन
शाहजहांपुर यू० पी०

कविराज डा० कर्म वीर जी शर्मा
भिषगाचार्य
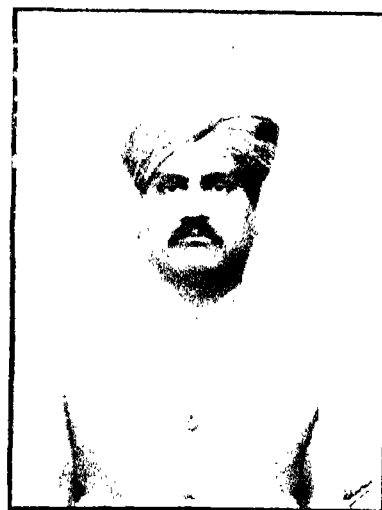
पं० नानक चन्द्र जी आयुर्वेदाचार्य
आप लाहौर के प्रसिद्ध चिकित्सक हैं।

मे कीटाणु और पीप के शोषण से होने वाले रोग, ये अकसर पुराने सूज़ाक में होते हैं इसमें संधियों की श्लैष्मिककला का प्रदाह या संधियों में भाग लेने वाले तन्तुओं का पीपमय या पीप विहीन प्रदाह हो जाता है। ऐसा प्रदाह या दर्द पुराने सूज़ाक में पैर की संधियों में ज्यादा होता है जिससे पैर की तली बिल्कुल साफ हो जाती है। इस रोग में पीपमय ज्वर या मलेरिया या जिसको आयुर्वेद में वातज्वर कहते हैं हो जाता है। और कभीर विषम ज्वर भी होजाता है ऐसे समय विषम ज्वर या मलेरिया ज्वर की चिकित्सा गौण रूप से करनी चाहिये और मुख्यतया चिकित्सा सूज़ाक की करनी चाहिये कभीर आंख के वाह्य पटल का भी प्रदाह हो जाता है। हृदय की श्लैष्मिक कला और बड़ी २ रक्त वाहिनियों के आस पास एक प्रकार का प्रदाह हो जाता है। जिस से हृदय रोग होकर रोगी इस संसार से दूसरे संसार में चला जाता है जिन सूज़ाक के रोगीयोंके शरीर में किसी भी कारण से फोड़े फुन्सी हो जाते हैं उनको आराम होना असाध्य समझा जाता है जब कभी यह पता चल जाता है कि इसके कभी सूज़ाक हुआ था या है और उसकी फोड़े फुंसी की चिकित्सा न करके सूज़ाक की चिकित्सा की जाती है तो फोड़े फुंसी जल्दी आराम होकर रोगी स्वस्थ होजाता है। जब रोगी को यह पता चल जाता है मुझे सूज़ाक होगया है तो फौरन किसी अच्छे वैद्य या डाक्टर से चिकित्सा करानी आरम्भ करके देनी चाहिये।

रोगियों को इस रोग से मुक्त होने के नियम

(१) ब्रह्मचर्य से रहना चाहिये
(२) लिंग को ठंडे पानी से धोना चाहिये
(३) आत्म शुद्धि के लिये ईश्वर का जाप करना चाहिये
(४) शरीर और कपड़े बिल्कुल साफ रखने चाहिये
(५) किसी अच्छे वैद्य या डाक्टरसे फौरन चिकित्सा करानी चाहिये और छूतछातसे बचना चाहिये।

प्रदर

पं० बलवन्त शर्मा आयुर्वेदाचार्य
रस भवन फार्मेसी.

डाक्टर लोग प्रदर की उत्पत्ति के तीन स्थान मानते हैं। एक तो योनिमुख दूसरा योनि मार्ग और तीसरा गर्भाशय, उनमें भी अर्बुद, ग्रन्थि, मस्से, चांदी, वगेरह से जो प्रवाह होता है उनको प्रदर में नहीं गिनते, क्योंकि प्रवाह को पण्डित लोग स्थानिक और सार्व देशिक कारणवशात दो भेद मानते हैं स्थानिक तो ऊपर कहे इत्यादि और सार्वदेशिक में क्षत उपदंश वगेरह को गिनते हैं। अब तीनों स्रावों के पृथक् २ लक्षण कहते हैं।

योनि मुख प्रदर में—चिकना पानी सा प्रवाह होता है।

योनिप्रदर में—अम्ल सफेद दही जैसा होता है।

गर्भाशय प्रदर में—चिकना स्वच्छ आलकलाईन होता है।

योनि दर्शक यन्त्र Vaginalspeculum वेजीनलस्पेक्युलम् द्वारा देखने से सब कारण मालूम पड़ जाता है कि प्रवाह कहां से होता है।

१—योनि मुख प्रदर प्रायः छोटी लड़कियों को और कदाचित् स्त्रियों को भी होता है इसमें पहिले खुजली लगती है खुजाने से योनिओष्ठ पर छाले पड़ जाते हैं। शोथ होता है, क्षत पड़ जाता है।

२—योनि प्रदर में श्वेत वर्ण का स्राव होता है। जिन्हें स्त्रियां धातु समझती हैं और कभी कभी स्राव पीला भी होता है प्रायः योनि मार्ग के भाग में कमलकन्द के ऊपर दाह और शोथ होता है और स्राव भी वहां से ही निकलता है वहां की उपत्वचा का आवरण उखड़ जाता है तथा कई बार योनि प्रदर तथा गर्भाशय प्रदर साथ ही मिलता है, योनि प्रदर का प्रवाह एसीडसा होने से उसके स्पर्श से कोमल भाग में लाली खुजली और जलन होती है, इस गर्भावस्था में अथवा आर्तव के आगे व पीछे अथवा आर्तव के बाद में जो प्रवाह होता है, उन्हें प्रदर में गिनना उचित नहीं है।

३-गर्भाशय प्रदर—यह रोग प्रायः तरुणावस्था की प्राप्ति के अनन्तर ही होता है। कारण-बहुत वार गर्भ रहना, अपूर्ण प्रसूत, अति मैथुन, बहुत ठंडी, योनी दाह, गरमी, कोई खास ज्वर, पाण्डुरोग, आर्त्तव दोष इत्यादि से होता है अथवा आर्तव बन्द होने का समय भी गर्भाशय के अन्तर्पट में दाह हो जाता है प्रदाह दो प्रकार का होता है। एक तो तीक्ष्ण दाह, और दूसरा दीर्घ दाह, प्रायः दाह के अनुसार प्रवाह की कमती बढ़ती चिकनापन कपड़ा पर हरे नीले पीले दाग भी होते हैं और कमलकन्द के ऊपर शोथ होता है व छाले पड़ जाते हैं और उसी के बढ़ने से मर्म अर्बुद अथवा भयंकर ऋतुस्राव भी हो जाता है।

तीक्ष्ण दाह में ज्वर कमती रहता है कमर में दर्द, वार वार पेशाब की हाजत होती है, गर्भाशय अथवा स्त्री अंड को दबाने से असह्य पीड़ा होती है, गर्भ स्थान बड़ा हो जाता है, तथा दो वा तीन दिन में प्रवाह होते ही दर्द मंद होने लगता है और कमल मुख बिस्तृत होता है।

दीर्घ दाह में प्रवाह ज्यादा होता है तथा पीड़ा

भी ज्यादा होती है तथा शलाका (Sound) साउन्ड परीक्षा में शलाका विशेष भीतर जाती है यदि गर्भ स्थान के सारे अन्तर्पट में दाह हो तो जी मिचलाता है, स्तन दृढ़ तथा पुष्ट हो जाते हैं, हिस्टीरिया के चिन्ह होने लगते हैं तथा शलाका प्रवेश से असह्य दर्द होता है।

इस विषय को पूर्ण रूप से समझाने के लिए ठीक २ स्त्रियों के जननावयवों की पूर्ण विस्तृत व्याख्या करनी चाहिए तथा चित्रों द्वारा पदार्थ ज्ञान कराना चाहिए परन्तु ऐसा करने के लिए तो खास पुस्तक लिखी जाय तब ही पर्याप्त हो सके। यहां तो स्थूल रूप से अपने अनुभव के साथ इस विषय के रूप रेखा का दर्शन कराना इतना ही पर्याप्त है।

अब चिकित्सा की ओर जाते२ कह देना उचित है कि चिकित्सक बन्धु इस प्रदर को अधोगामी रक्त पित्त न गिन ले लेकिन निदान को ठीक२ जांच के विचार पूर्वक चिकित्सा करें क्योंकि दूषित रक्त प्रवाह की एकाएक रुकावट से बहुत ही नुकसान होता है, तथा शुद्ध रक्त की अति प्रवृत्ति भी बड़ी हानि करती है।

"तदतिप्रवृत्तं शिरोभितापमान्ध्यम् अधिमन्थं तिमिरप्रादुर्भावं धातुक्षय माक्षेपकं पक्षाघातयेकाङ्ग विकार तृष्णादाहौ हिक्का कासं श्वास पांडु रोग मरणं चाया दधातिः ॥

शुद्ध रक्त अति बह जाने से शिरोभिताप, अन्धता, अधिमन्थ, तिमिर, धातु क्षय, आक्षेप, पक्षाघात, एकांग विकार, तृषा, दाह, हिक्का, कास, श्वास, पांडु और मरण होता है, इसीसे पहिले जान लेना चाहिए कि यह शुद्ध रक्त है या दुष्ट है, क्योंकि चरक में लिखा है कि—"असृग्वि जार्ती यादतान्यद्रक्त लक्षणात्।" शुद्ध रक्त के लक्षण जिनमें न हो उन्हें रक्त प्रदर जानना यहां प्रथम शुद्ध रक्त का लक्षण लिखते हैं—

इन्द्र गोपप्रतीकाशं असंहत मवि वर्णं चप्रकृतिस्थंविजानीयात्।

बीर बहूटी के समान लाल न बहुत पतला तथा न बहुत गाढ़ा और वस्त्र को धोने से भी रंग को न छोड़ने वाला शुद्ध रक्त जानना चाहिए।

"जिज्ञासार्थं तस्मिन् पिचु प्लोतं वाक्षिपेत् यदुष्णोदक प्रक्षालितं अपिवस्त्रं रञ्जयति तज्जीव शोणितमप्य गन्तव्यं समुत्कंच शुने दद्यात् सक्तु सं-मिश्रं वामयद्युपभुञ्जीत तज्जीवशोणितमप्यवगन्तव्यम्।

प्रवाह के पदार्थ में रूई का फोया देके फिर उसको गरम जल से धोना चाहिये यदि धोने पर भी रंग चला न जाय तो समझो कि जीवन रूप रक्त याने शुद्ध रक्त बह रहा है, अथवा भात के साथ व सत्तू के साथ मिलाय कुत्ते को खिलाना यदि कुत्ता खा जाय तो समझना कि शुद्ध रक्त बह रहा है। ऐसी दशा में तुरन्त ही उपाय करना चाहिए।

अब चिकित्सा का सामान्य निर्देश किया है कि-

योनीनां वातलाद्यानां यदुक्तमिह भेषजम्।
चतुर्णां प्रदराणां च तत्सर्वं कारयेद्भिषक्॥
रक्तातिसारिणां चैव तथा लोहितपित्तिनाम्।
रक्तार्शसां चयत् प्रोक्तं भेषजं तच्च कारयेत्॥

वातला इत्यादिक योनि विकार, रक्तातिसार, रक्तपित्त, रक्तार्श इन रोगों में जो२ चिकित्सा लिखी है उन्हीं का यहां उपयोग करना इस विषय में प्रायः सब वैद्य जन समझदार होते हैं, और यहां लिखने

में लेख भी लम्बा हो जाता है । इसी से यहां नहीं लिखते हैं।

सामान्य चिकित्सा—

तण्डुलीयकमूलं च सक्षौद्रं तण्डुलाम्बुना ।
रसाञ्जनं लाक्षां वा आजेन पयसापिवित् ॥

चौलाई का मूल शहद तथा चावल के धोवन के साथ पीना रसाञ्जन तथा लाख बकरी के दूध से पीना।

पत्र कल्को घृते भृष्टौ राजादन कपित्थयोः ।
पित्तानि च हरा वे ते सर्वं चैवास्रपित्तजित् ॥

खिरनी तथा कैथ की पत्ती का कल्क का क्वाथ कर पान करे।

मधुकं त्रिफलां लोध्रं मुस्तं सौराष्ट्रिकां मधु ।
मद्यैर्निम्बु गुडूच्यौतु कफ जे सृग्दरे पिवेत् ॥

यष्टि मधु, त्रिफला, लोध, मोथा, सौराष्ट्री, इन को शहद के साथ सेवन करना मद्य के साथ नीमकी छाल तथा गिलोय का कल्क लेना यह कफज प्रदर में अच्छा है।

शुभं गर्भ परिस्रावे चोक्तं सर्वेषुयोजयेत ॥

गर्भ स्राव के रोकने की जो जो चिकित्सा शास्त्र में वर्णित हैं उन्हीं का उपयोग करे।

दध्ना सौवर्चला जाजी मधुकं नीलमुत्पलं ।
पिवेत्क्षौद्र युतम् नारी वातासृग्दर शान्तये ॥

काला नमक, सफेद जीरा, मुलहठी, नील कमल, प्रत्येक बारह बारह रत्ती, दही चार तोला, शहद ४८ रत्ती मिलाकर खाने से वातिक प्रदर नष्ट होता है।

मधु मेकं कर्षमेकं तु कर्षकांतु मितां क्षिपेत्।
तण्डुलोदक संपिस्टा लोहित प्रदरे पिवेत ॥

मुलहटी १ तो०, मिश्री १ तो०, चावल के जल में पीने से रक्त प्रदर नष्ट हो जाता है।

अशोक वल्कल क्काथ शृतदुग्धंसुशीतलम् ।
यथाबलं पिवेत् प्रातस्तीव्रा सृग्दरनाशनम् ॥

अशोक की छाल चार तोला १२८ तोला पानी में क्वाथ करके ३२ तोला रहने पर उस में ३२ तोला दूध डाल के पकावे दूध केवल शेष रहे तब उतार के शीतल होने पर शक्ति अनुसार चार पांच तोला पीने से तीव्र रक्त प्रदर नष्ट होता है।

कुशमूलं समृद्धृत्य पेषयेत् तण्डुलाम्बुना ।
एतत्पीत्वा त्र्यहं नारी प्रदरात्परि मुच्यते ॥

दर्भ का मूल चावल के पानी में पीने से तीन रोज में प्रदर नष्ट होता है उदुम्बर के फल का रस और शहद मिलाय के पीना और भोजन में दूध भात लेना।

दारुहलदी रसौंत चिरायता पाढल अडूसा बेलगिरी रक्त चंदन का क्वाथ करके ठंडा होने पर मधु मिलाय के पीना बहुत अच्छा है ढाक का मूल पाना रोहिडाका मूल का क्वाथ करके ठंडा होने पर मिश्री या शहद मिलाय के पीने से अवश्य श्वेत प्रदर मिट जाता है चूहे की मेंगनी तथा मिश्री मिलाय के बलाबल देखके छः माशा तक देना अच्छा है।

केसर, इलायची, जायफल, वंशलोचन, नागकेशर संगजराहत, सब समान भाग लेके चूर्ण करना उनमें से २ माशा चूर्ण २ माशा शहद ६ माशा गौ का घृत तथा तीन माशा मिश्री मिलाय के खाने से रक्त प्रदर रक्त मेह रक्तार्श वगैरा नष्ट हो जाता है। त्रिफला,

मुण्डी, दारू हलदी, का क्वाथ करके ठंडा होने पर शहद तथा लोध्र का चूर्ण मिलाय के पीने से त्रिदोषज प्रदर नष्ट हो जाता है।

दारू, हलदी, रसौंत, चिरायता, बासा, बेलफल, भिलावा का क्वाथ शहद डाल के पीना अच्छा है।

दारू हलदी, भिलावां लज्जावन्ती तिल के पुष्प रसौत का क्वाथ भी बहुत अच्छा काम करता है।

गोपी चन्दन ४ तो०, फिटकरी १ तोला साथ मिलाय के फूंक देना इसकी मात्रा १ से ३ गुन्जा तक चावल के धोवन में देना अथवा शहद तथा मिश्री में खिलाना अच्छा है।

चौलाई की जड़, लाख रसौंत इन को बकरी के दूध के साथ पीने से एक सप्ताह में अवश्य प्रदर दूर जाता है।

धाय के पुष्प, बीजाबौल, मूसे की मेंगनी सब मिलाय ४ माशा कोई अच्छे अनुपान से लेना अवश्य फायदा करता है।

ढाक का मूल रोहिड का मूल पाठा, कासमूल श्वेतदूर्वा ओंगे की पत्ती कुड़े की छाल इन का क्वाथ अवश्य रक्त प्रदर को नष्ट करता है।

चौलाई की जड़, कुड़े की छाल, रसौंत, अशोक की छाल धाय के पुष्प का क्वाथ करके ठंडा होने पर शहद २ तोला तथा चंदन घिस के पांच तोला डालने से जादू की नाईं रक्त प्रदर को हटाता है।

करोंदे की जड़ को दूध में घिस के चार माशा पिलाने से २ और ३ रोज़ में ही अलौकिक चमत्कार मालूम होता है।

तथा पुष्यानुगचूर्ण, जीरकावलेह, प्रदरारिरस प्रदरारिलोह, अशोकघृत, अशोकारिष्ट, पत्रांगासव, बोल पर्पटी रस, शाल्मली घृत, चन्द्रप्रभा, च्यवन-प्राशावलेह कुटजावलेह, मूशलीपाक, कूष्माण्डपाक, वसन्तमालती इन में से कोई एक या दो साथ में उपयोग करने से अवश्य प्रदर मिटाता है यदि साध्य हो तो।

असाध्य का लक्षण

नारी त्वाति परिक्लिष्टा यदा स्यात्क्षीण लोहिता।
सर्वहेतुसमाचारा दन्ति वृद्ध स्तथा निल ॥
रक्त मार्गेण सृजति प्रत्यनीकं गुणं कफम्।
दुर्गन्धि पिच्छिलं पित्तं विदग्धं पित्ततेजसा ॥
वसां मेदश्चया वह्नि समुपादाय वेगवान्।
सृज त्यप त्यमार्गेण मपि मज्जां वसोपमम् ॥

जब स्त्री अत्यन्त रक्तस्राव वशात् परिक्लिष्ट तथा क्षीण हो जाती है तब सब दोष प्रबल हो जाते हैं और वायु कुपित होकर रक्त मार्ग द्वारा विपरीत गुण कफ से मिलता है तब रक्त दुर्गन्धित पिच्छिल पीत पित्त तेज से विदग्ध हो जाता है उसी समय बलवान वायु वसा और मेद को ग्रहण करके घृत मज्जा या चर्बी के समान निरन्तर प्रवाह करता है तथा तृषा, दाह, ज्वर, भी होता है ऐसी स्त्री को दुश्चिकित्स्य यानी असाध्य समझना, क्योंकि वह क्षीण रक्त तथा दुर्बल होने से क्रिया को सफल नहीं कर सकती अब ऐलोपैथिक उपचार का विचार करते हैं जिनमें डा० लोगों में प्रचलित अच्छे नुकसे यह हैं।

योनि के प्रक्षालन के लिये।

१, लाईकर एलामवाई सबएसिटेटिस ४ से ६ ड्राम पानी १ पाईंट

२, जिंक सल्फेट २ ड्राम, फिटकी आधा ड्राम टेनिकएसिड १ ड्राम पानी एक पाईंट

पीने की दवा

१, लाईकर डाईड्रो जिराई परक्लोराईड डेढ़ ड्राम कम्पाउन्ड टिंचर सिनकोना डेढ़ ड्राम, कं० डिकोक्शन आफ सारसा परेला ३ औंस सब मिला कर तीन भाग करके तीन दफह दिन में पीएँ।

२, पोटासआयोडाईड ६ ग्रेन अशोकारिष्ट १तो. चिरायते का इनफ्युजन ३ औंस सब मिलाकर तीन भाग दिन में तीन मर्तबा पीना।

आयुर्वैदिक रीति अनुसार पंचवलकल कषाय फिटकरी के पानी वगैरह में यानी प्रक्षालन करना।

पथ्यापथ्य

ब्रह्मचर्य, मद, मांस गरिष्ठ वातल भोजन का त्याग करना, सुपच भोजन करना, तैल, मिरच, बहुत खट्टा, खारी, बज़ारु मिठाई, बासी भोजन बन्द करना गर्म पानी में स्नान करना दिन में २ दफह योनी को अनुकूलता मुताबिक ठंडे या गर्म पानीमें धोना चिंता भय क्रोध उद्वेगादि त्याग करना और दस्त साफ आए ऐसा उपाय करना, इस तरह योग्य आहार विहार और औषध करने से अवश्य प्रदर नष्ट हो जाता है।

प्रदर रोग विवेचन

आयुर्वेदाचार्य पं० रामनारायण 'हृषुत' मिश्र

प्रदर रोग के सम्बंध में विद्वानों के भिन्न २ मत हैं। आधुनिक वैद्यक विद्वानों ने लक्षण भेद से प्रदर रोग दो प्रकार का सिद्ध किया है—एक 'रक्तज' दूसरा 'श्लेष्मज' अर्थात् श्वेत प्रदर। शास्त्रोक्त प्रदर रोग की यह संख्या सम्प्राप्ति सर्व साधारण के समझाने के लिये किसी सीमा तक ठीक भी हो सकती है किन्तु जब 'रक्त प्रदर' को (Menorrhagia) मनोरंजिया और श्वेत प्रदर को अस्थि स्राव सिद्ध किया जाता है तब प्रदर रोग के शास्त्रोक्त विवेचन पर हरताल फिर जाती है।

एक बार मैंने धन्वन्तरि के नारी रोगाङ्क में प्रकाशनार्थ रक्त प्रदर पर स्वानुभूत तथा शास्त्रीय विवेचन लिख भेजा था। उसके बाद असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के कारण १ वर्ष के लिये जेल चला गया था। गत माह में जेल से लौटने पर धन्वन्तरि के नारी रोगाङ्क की प्रति पढ़ने को मिली, उसमें मैंने अपने लेख के शीर्षक में रक्त प्रदर के सामने 'मनोरंजिया' लिखा हुआ देखा * मुझे शंका हुई मैंने तुरंत अपने एक मित्र (डाक्टर) के यहां से अंग्रेजी का चिकित्सा शास्त्र मंगाकर (Menorrhagia) मनोरंजिया का अध्ययन किया। मुझे मनोरंजिया और रक्त प्रदर में बृहदन्तर मालूम हुआ। मनोरंजिया के लक्षण से अत्यधिक ऋतु स्राव का स्पष्ट अर्थ निकलता है। अब यहां प्रश्न होता है कि यदि अत्यधिक ऋतुस्राव ही 'रक्तप्रदर' माना जाता है तो यह रक्त प्रदर माधवोक्त वात तथा पित्त प्रधान रक्त प्रदर से भिन्न है और यदि शास्त्रीय रक्त प्रदर ही मनोरंजिया माना गया है तो हमारा स्पष्ट मत है कि रक्त प्रदर का अंग्रेजी नाम देने में 'मनोरंजिया' पर बलात्कार किया गया है।

डा० थामस डिक्सन साविल एम. डी. (Dr. Thomas dixan Savill M.D.) अपनी पुस्तक सिस्टिम आफ क्लिनिकल मेडिसिन (A system of Clinical Medicine) में मनोरंजिया (Menorrhagia) का परिचय देते हुए लिखते हैं:— Menorrhagia indicates an exessive flow at the monthly period— मनोरंजिया केवल मासिक धर्म के समय अधिक रज स्राव का होना प्रदर्शित करता है।" यदि माधवोक्त वातज तथा पित्तज प्रदर 'रक्त प्रदर' कहलाता है तो मनोरंजिया

* रक्त प्रदर का मेनोरंजिया अंग्रेजी नाम सम्पादक ने अपने विशेष अधिकार से दिया था।

उपरोक्त परिभाषा के अनुसार पृथक रोग कहलाना चाहिये। इसी तरह योनि स्थित श्लेष्मा ही यदि अस्थियों का सार समझा जाता है तो उसे शास्त्रोक्त श्लेष्मज (श्वेत) प्रदर को अस्थि स्राव कहने में कोई हानि नहीं है किन्तु बहुत से विद्वान अस्थिस्राव को योनि स्थित श्लेष्मा मानते हुए भी उसे श्वेतप्रदर से पृथक कहते हैं तब प्रश्न होता है कि श्वेत प्रदर में होने वाला श्वेत रंग का योनि स्राव कौनसी वस्तु होनी चाहिये। मैंने अस्थि स्राव को श्वेत प्रदर से पृथक लिखने वाले वैद्यक पंडितों के लेख पढ़े किन्तु उन्होंने अपने लेख में श्वेत प्रदर और अस्थि स्राव की सम्प्राप्ति में कोई विशेष अंतर नहीं दर्शाया और न स्राव में ही भिन्नता बताई। इन्हीं सब गड़ बड़ी को देखकर हमने अपने इस लेख में शास्त्रोक्त प्रदर रोग पर अपना स्वतन्त्र तथा स्पष्ट मत बताने का साहस किया है:—

प्रदर रोग का शास्त्रोक्त कारण

विरुद्ध मद्या ध्यशनादजीर्णाद्
गर्भ प्रपातादति मैथुनाच्च ।
यानाति शोका दति कर्षणा च,
भारा भिघाता च्छयनाद्दिवाच ॥
तं श्लेष्म पित्ता निल सन्निपाते-
श्चतुष्प्रकारं प्रदरं वदंति ॥ १ ॥

अर्थ—विरुद्ध भोजन, मद्य, अध्यशन (भोजन पर भोजन) अजीर्ण, गर्भपात, अतिमैथुन, बहुत चलना, अति शोक, उपवास आदि से कृश होना, भार उठाने से, चोट अर्थात् शरीर पर मार लगने से कफ पित्त वायु और सन्निपात इन भेदों से प्रदर चार प्रकार के होते हैं।

उपरोक्त कारणों में अति मैथुन प्रदर रोग होने का प्रधान कारण है। स्त्री पुरुषों में संयम की कमी होने से अथवा प्रकृति विरुद्ध अत्यधिक सहवास करने से प्रदर रोग होता है। गर्भावस्था में प्रदर रोग होने के कारण गर्भावस्था में अति मैथुन का करना है। अति प्रसव तथा प्रसव के महिना दो महिना के बाद ही पुरुष संग प्रारंभ कर देना वर्तमान समय में प्रदर रोग के प्रधान कारणों में से समझे जाते हैं। ये कारण प्रतिलोम रीति से प्रदर रोग उत्पन्न करते हैं। प्रकृति विरुद्ध आहार, अति शोक, अति दुःख उपवास आदि अनुलोम रीति से प्रदर रोग उत्पन्न करते हैं।

प्रदर रोग में होने वाला स्राव क्या वस्तु है ?

प्रदर स्राव दो प्रकार का हुआ करता है। एक तो योनि स्थित श्लेष्मा ही दूषित हो योनि मार्ग से बाहर निकलती है। दूसरा योनि स्थित रक्तादि धातुएं वातादि दोषों से दूषित हो विकृतावस्था में योनि द्वार से बाहर निकलती हैं। कभी दोनों मिश्रित होकर निकलते हैं।

योनि स्थित श्लेष्मा का परिचय—

१—शरीर स्थित सप्त धातुओं की रसायनिक क्रिया से योनि स्थान में एक प्रकार का रस उत्पन्न हुआ करता है। योनि प्रदेश के अंतर भाग में रसोत्पादक ग्रंथियां रहती हैं। ये ग्रन्थियां योनि स्थान में पोषणार्थ आने वाले रक्तादि धातुओं से उक्त तरल रस को खींच कर योनि स्थित अवयवों को प्रदान करती है जिस तरह मुख में लाला ग्रंथियां और नासिका में श्लेष्मोत्पादक ग्रन्थियां मुख तथा नासिका की झिल्लियों के अंदर से तरल रस (लार)

तथा श्लेष्मा क्रमशः छोड़ती रहती हैं जिस से मुख तथा नासिका का अंदर का भाग तर बना रहता है। उसी तरह योनिस्थित रसोत्पादक ग्रंथियां तरल रस सिंचन कर योनि मार्ग तर बनाए रखती हैं यही ग्रंथियां जब अस्वभाविक रीति से दूषित तथा अधिक रस (श्लेष्मा) उत्पन्न करने लगती हैं तब वह श्लेष्मिक द्रव्य योनि द्वार से बाहर बहने लगता है। इस प्रकार होने वाला योनि स्राव श्वेतप्रदर तथा श्लेष्मज प्रदर कहलाता है।

२—स्वस्थ अवस्था में परिमित मात्रा में उत्पन्न होकर यह श्लेष्मिक रस योनि स्थित अवयवों को तर रखता है। प्रसंग की इच्छा होने पर यह द्रव पदार्थ अधिक मात्रा में उत्पन्न हो कर योनि मार्ग को अधिक तर कर देता है जिससे उसमें एक प्रकार की सुरसुराहट तथा खुजलाहट का अनुभव होने लगता है। गर्भ काल में एवम् प्रसूति के समय यह श्लेष्मज पदार्थ इतने अधिक मात्रा में उत्पन्न होने लगता है कि सारा योनि मार्ग कोमल होकर फैल जाता है जिससे गर्भ को निकलने में सुविधा होती है। यदि यह द्रव पदार्थ योनि स्थान में निकलना बंद होजाय तो मैथुन एवम् प्रसव कार्य कठिन ही नहीं किन्तु असम्भव हो जाए एवम् योनि मार्ग शुष्क हो कर क्रिया हीन होजाय। योनि स्थित अवयवों को मैथुन आदि कार्यों में प्रवृत्त होने की शक्ति इसी पदार्थ से प्राप्त होती है। यही 'द्रव' मिथ्या आहार विहार के कारण कुपित दोषों द्वारा दूषित होकर कई रंग का और दुर्गंध युक्त योनि द्वार से बहने लगता है।

रक्तादि धातुओं का दूषित स्राव—उपरोक्त अति मैथुनादि कारणों से एवम् गरम तथा तीखे पदार्थों के सेवन से जरायु के मुख प्रदेश तथा योनि स्थान की झिल्लियां प्रदाह युक्त हो विक्षित हो जाती हैं जिससे झिल्लियों के अंतर भाग में फैली हुई रक्त केशिकाएं छिल जाती हैं और उनमें से रक्त झर २ कर योनि मार्ग से बाहर निकलने लगता है। विक्षित झिल्लियों से झरने वाला रक्त योनि स्थित दोषों से दूषित होने के कारण लाल हरा पीला काला रंग होकर स्राव होता है। कभी २ जरायु के मुख प्रदेश के विक्षति हो जाने से जरायु में बहने वाला रज भी दूषित होकर योनि स्राव के साथ मिल कर बाहर निकलने लगता है। इस प्रकार के मिश्रित स्राव को रक्त प्रदर कहते हैं। (श्वेत प्रदर तथा रक्त प्रदर के हो जाने के कुछ दिन के बाद रज दोष अवश्य हो जाता है। रजोरोध (Ammenorrhoea) अत्यधिक रजस्राव (Menorrhagia) ऋतु शूल (Dysmenorrhoea) आदि कष्टदायक रोग हो जाते हैं। ये रोग उपरोक्त प्रदर रोग के साथ२ चलते हुए भी रोग गणना के समय उससे पृथक ही माने जाते हैं)

प्रदर रोग की अनुलोम सम्प्राप्ति—

जिस तरह सर्दी करने वाले खाद्य पदार्थों के सेवन से शरीर के ऊर्ध्व भाग में रहने वाले वातादि दोष कुपित होकर फुफ्फुस तथा श्वास नली आदि में प्रदाह उत्पन्न कर खांसी पैदा कर देते हैं, मुख और नाक से श्लेष्मिक द्रव्य बाहर निकलने लगता है किन्तु उक्त खाद्य पदार्थों से अन्य अवयवों को विशेष हानि नहीं होती उसी तरह अधिक गर्म तथा तीखे पदार्थों का सेवन, अजीर्ण में भोजन, अति भोजन, और प्रकृति विरुद्ध आहार से स्त्रियों के योनि मार्ग में अधिक श्लेष्मा (श्वेत रंग की तरल तथा दूषित वस्तु) पैदा होने लगती है तथा योनि

तथा जरायु के मुख प्रदेश की झिल्लियां के घिसजाने से रक्त केशिकाओं से दूषित रक्त झरने लगता है। यह रक्त कुपित दोषों से दूषित हो दोषों की प्रधानता के अनुसार अनेक रंग का एवम् दुर्गंध युक्त योनि प्रदेश से बाहर निकलता हैं। इस प्रकार दूषित और अप्राकृतिक द्रव्य योनि स्थान में निरन्तर उत्पन्न होते रहते हैं और योनि स्थित वायु उन्हें ढकेल कर योनि मार्ग से बाहर करती रहती है। इस प्रकार शरीर स्थित धातुएँ वातादि दोषों द्वारा योनिस्थान में दूषित होकर जब योनि मार्ग से निकलने लगती हैं तब प्रदर इस संज्ञा को प्राप्त होती हैं।

अति शोक, अति चिन्ता, अति उपवास, अति परिश्रम, अति दुःख, इन कारणों से जो प्रदर होता है उसकी भी सम्प्राप्ति उपरोक्त प्रकार की है क्योंकि इन कारणों से भी जठराग्नि के स्वभाविक कार्यों में गड़बड़ी मच जाती है अतः खाए हुए आहार से दूषित रस उत्पन्न होता है और यह दूषित रस जब वातादि दोषों से प्रभावित हो रक्त रूप में परिणित होता है तब वह रक्त योनि स्थान में जाकर प्रदररोग उत्पन्न करता है।

प्रदर रोग की प्रतिलोम सम्प्राप्ति—

अति मैथुन, अति प्रसव, गर्भपात, गर्भावस्था तथा प्रसूतावस्था में मैथुन आदि अप्राकृतिक कार्यों के करने से योनि स्थित रसोत्पादक ग्रंथियां बार २ तरल रस (श्लेष्मा) छोड़ने की आदी हो जाती हैं और उसे उत्पन्न करने के लिए सदा प्रयत्नशील बनी रहती हैं, फल यह होता है कि योनिमें विचरनेवाला। वायु कुपित होकर योनि स्थित श्लेष्मा के साथ २ रक्तादि धातुओं को भी विकृतावस्था में योनि मार्ग से बाहर ढकेलने लगता है। योनि स्थित वायु रक्तादि धातुओंको दूषित कर तभी बाहर निकालता है जब उपरोक्त मैथुनादि कारणों से योनि एवम् गर्भाशय के मुख की झिल्लियां विक्षित तथा प्रदाह युक्त हो जाती हैं और उनके अंतर भाग में फैली हुई रक्त केशिकाएं घिस जाने पर योनि मार्ग में दूषित रक्त छोड़ने लगती हैं।

विशेष-सम्प्राप्ति—

अनुलोम या प्रतिलोम किसी भी सम्प्राप्ति के द्वारा प्रदर रोग होने पर प्रधानता कुपित दोषों की ही रहती है अतः दोषों के प्रधानता के अनुसार शास्त्रकारों ने प्रदर चार प्रकार का कहा है :—

१ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज।

१ वातज प्रदर की सम्प्राप्ति—वात जब अपने ही कारणों से कुपित होकर अनुलोम या प्रतिलोम रीति से प्रदर रोग उत्पन्न करता है तब उसे 'वातज प्रदर' कहते हैं।

२ पित्तज प्रदर—वायु उपरोक्त अनुलोम या प्रतिलोम रीति से कुपित होकर रक्तादि धातुओं में स्थित पित्त को उभार कर उसकी प्रधानता में योनि प्रदेश में जो धातु स्राव उत्पन्न करता है उसे 'पित्तज प्रदर' कहते हैं।

नोट:—वातज तथा पित्तज प्रदर प्रचलित रक्त प्रदर के भेद मात्र हैं।

३ श्लेष्मज प्रदर (श्वेतप्रदर)—वात उपरोक्त रीति से कुपित हो कर शरीर स्थित कफ को उभार कर योनि मार्ग में जब स्राव उत्पन्न करता है तब उसे श्वेत प्रदर कहते हैं।

४ जब वायु अपनी तथा कफ और पित्त की प्रधानता से शरीर स्थित धातुओं को दूषित कर

योनि स्थान में भयंकर स्राव उत्पन्न करता है तब वह स्राव त्रिदोषज कहलाता है।

प्रदर रोग का पूर्वरूप–

मैथुन की अतिशय इच्छा होना, योनि मार्ग में खाज आना, शरीर में दाह होना, मूत्र में पीलापन होना, मन्दाग्नि, उदासीनता आदि लक्षण प्रदर होने के पूर्व होते हैं।

प्रदर रोग का सामान्यरूप–

"असृग्दरं भवेत् सर्वं सांगमर्दं सवेदनम्"।

(योनि स्थान से स्राव) अंगों का टूटना, हाथ पैरों में पीड़ा ये प्रदर रोग के सामान्य लक्षण हैं। (मंदाग्नि, मलावरोध, योनि दाह आदि लक्षण भी सामान्य रूप में पाये जाते हैं।

रक्त प्रदर तथा श्वेत प्रदर भेद से शास्त्रोक्त प्रदर रोग के लक्षण–

रक्त प्रदर—

इसके दो भेद हैं—१ वातज, २ पित्तज।

१–वातज रक्त प्रदर के लक्षण—"रूक्षारुणं फेनिल मल्पमल्पं वातार्ति वातात्पिशितोदकाभम्" वात से रूक्ष, लाल झाग से युक्त मांस के धोवन के समान थोड़ा२ स्राव होता है। शरीर में वात से पीड़ा होती है।

विशेष तथा स्वानुभूत लक्षण—जरायु की ज्यादा दुर्बलता के कारण जंघा में अकड़ने के समान पीड़ा होती है। योनि मार्ग से पीड़ा युक्त गाढ़ा तथा लाल फेन युक्त स्राव होता है। योनि प्रदेश में रह२ कर ऐंठन तथा पीड़ा होती है। हाथ पैर ऐंठते हैं, दस्त साफ नहीं होता, भोजन के बाद आध्मान होता है, इसके अतिरिक्त आक्षेपक आदि वात रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं।

२–पित्तज प्रदर के लक्षण—"सपीत नीला सित रक्त मुष्णं पित्तार्तियुक्तं भृशवेग पित्तात्" नीला, पीला, काला, लाल रंग का गर्म स्राव होता है योनि मार्ग में दाह तथा चिलकने की सी पीड़ा होती है स्राव का वेग अधिक होता है।

स्वानुभूत विशेष लक्षण—लाल हरा तथा मिश्रित वर्ण का दाह युक्त स्राव होता है स्राव दिन में अधिक और रात्रि में कम होता है। शिर दर्द, हाथ पैर तथा आंखों में जलन और पेशाब का रंग पीला होता है। स्राव के शरीर में लगने से छाले पड़ जाते हैं स्राव पित्त के समान पीला और लाल मिश्रित होता है। यह स्राव कभी२ इतना अधिक हो जाता है खड़े होने पर योनि मार्ग से टपकने लगता है। स्राव वाष्प युक्त और दुर्गंध वाला होता है। मूर्च्छा बेचैनी आदि लक्षण भी होते हैं।

नोट:–रक्त प्रदर के साथ २ रज सम्बन्धि बीमारियां भी उत्पन्न होती हैं, ये बीमारियां गर्भाशय में प्रदाह उत्पन्न होने से या गर्भाशय के अंतर भाग के विकृत हो जाने से होती हैं। विशेषतः ऋतु काल में अत्यधिक ऋतु स्राव (Menorrhagia), ऋतु काल के अतिरिक्त समय में बार २ रज स्राव होना इस प्रकार के रज स्राव को अंग्रेजी में (Metrorrhagia) मेट्रोरेजिया कहते हैं। ऋतु शूल (Dysmenorrhagia) डिसमेनोरेजिया आदि रोग होते हैं। ये रोग श्वेत प्रदर में भी होते देखे गये हैं।

श्लेष्मज (श्वेत प्रदर)—

"आमं सपिच्छा प्रतिमं सपाण्डु

पुलाक तोयं प्रतिमं कफात् ।

कफ युक्त (कच्चा आम रस) मिला हुआ चिकना किंचित पीला मांस के धोवन के समान स्राव होता है।

स्वानुभूत लक्षण—इस प्रदर में योनि में उत्पन्न होने वाली श्वेत श्लेष्मा वात द्वारा दूषित होकर योनि मार्ग से बाहर निकलती है। यह स्राव कफ के समान गाढ़ा किंचित् पीलापन लिये श्वेत वर्ण का होता है। कभी यह स्राव शुभ्रदुग्ध के समान पतला होता है और जब योनि द्वार से बाहर आकर वस्त्र में लगता है तब वस्त्र के दाग में पीलापन आ जाता है। स्राव कभी अल्प गंध वाला तथा अधिक गंध युक्त होता है। पीठ में और कमर में दर्द होता है। पुरुष संग के समय योनि स्थान में कष्ट का अनुभव होता है, और २ पुरुष संग की इच्छा भी कम होती जाती है।

किसी २ स्त्री को श्वेत प्रदर कष्ट रहित होता है योनि में खुजलाहट होती रहती है पुरुष संग की अप्राकृतिक इच्छा बनी रहती है। रमण की अधिकता से यह रोग और भी बढ़ता है क्योंकि अधिक रमण से योनि स्थित स्नायु मंडल बहुत कमज़ोर हो जाते हैं जिस से योनि स्थित अवयवों की ग्राहक शक्ति नष्ट हो जाती है फल स्वरूप श्लेष्मा बार२ उत्पन्न हो कर दूषितावस्था में योनिमार्ग से निकलता रहता है।

इस श्वेत प्रदर में अल्प रज स्राव, गर्भाशय का च्युत हो जाना, ऋतु शूल, ऋतु दोष, हिस्टेरिया, पायरिया, योनि शूल, योनि क्षत, जरायु के मुख प्रदेश की झिल्ली में प्रदाह आदि उत्पन्न हो जाते हैं। कभी २ झिल्लियों का बहिर्भाग छिल २ कर स्राव रूप से बाहर निकलने लगता है।

गर्भावस्था में श्वेत प्रदर—

गर्भावस्था में योनि स्थित श्लेष्मोत्पादक ग्रंथियां निरन्तर रसोत्पादन द्वारा योनि मार्ग को सींचती रहती हैं जिससे योनि मार्ग कोमल होता रहता है ऐसी अवस्था में यदि मैथुन आदि कार्य किये जाएं तो योनि स्थित स्नायु मण्डल कमज़ोर हो जाते हैं जिससे योनि स्थित ग्रन्थियों की धारण शक्ति क्षीण हो जाती है श्लेष्मा वेग के साथ स्राव रूप में बाहर निकलने लगता है। यह स्राव श्वेत वर्ण का दुर्गंध युक्त होता है। योनि से दुर्गंध युक्त वाष्प निकलती है योनि के अंदर मुख में छाले हो जाते हैं यह गर्भिणी स्त्री के लिये बड़ा कष्ट दायक होता है।

प्रसूतावस्था में श्वेत प्रदर—

इसका कारण भी स्नायु मंडल की कमज़ोरी है। यह कमज़ोरी पौष्टिक अन्न के सेवन न करने से तथा प्रसूतावस्था में मैथुनादि कार्य करने से ज्यादा बढ़ जाती है। प्रदर स्राव के लक्षण उपरोक्त ही रहते हैं, केवल मन्दाग्नि, आध्मान, मलावरोध, हड़ फूटन, सिर में दर्द, मूर्च्छा आदि लक्षण अधिक पाए जाते हैं।

कुमारिकावस्था में श्वेत प्रदर—

१० या १२ वर्ष की लड़कियों को रजस्वला होने के पूर्व होते देखा गया है। इसका कारण बाल्यावस्था में मैथुनादि क्रिया का होना ही पाया जाता है।

लक्षण—उपरोक्त लेखानुसार श्वेत रंग का स्राव मात्र होता है।

सन्निपातज प्रदर के लक्षण—

स्राव कई रंग का सड़ी वस्तु के समान दुर्गंध वाला होता है। योनि मार्ग में तथा जरायु के मुख
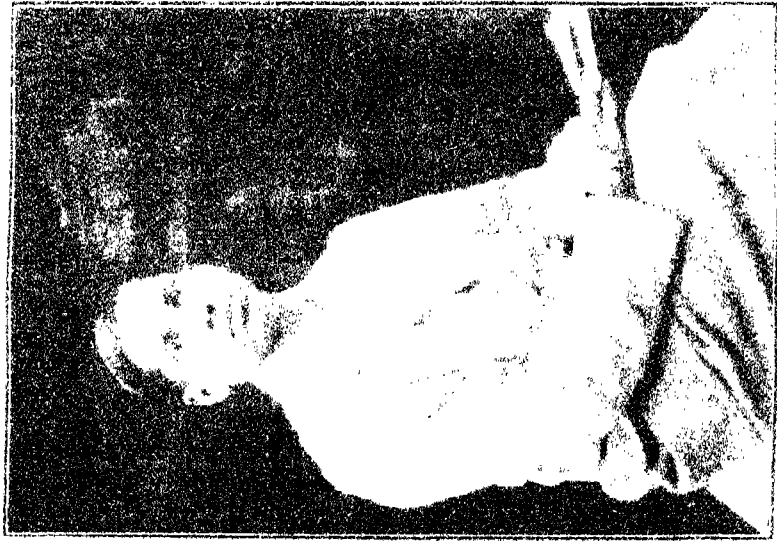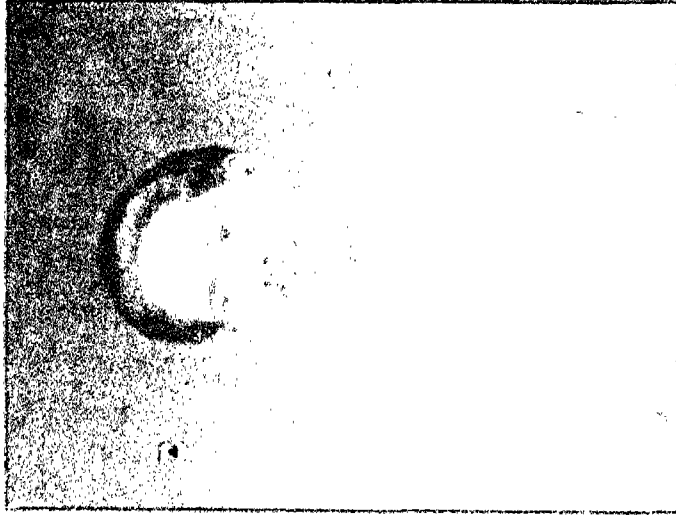
प्रदेश में क्षत हो जाते हैं स्राव गोंद के समान चिकना हरे रंग का, काले रंग का, कभी पीब के समान होता है। स्राव वस्त्र में लगते ही वस्त्र गल जाता है। स्राव अधिक मात्रा में और निरन्तर होता रहता है। इस प्रदर में शरीर की समस्त धातुएं विकृत हो योनिद्वार से बाहर निकलने लगती हैं। योनि प्रदाह, मासिक धर्म का लोप, ज्वर, हाथ पैर के तलुओं में तथा आंखों में जलन, सिर में भीषण वेदना, मूर्च्छा, प्रलाप, योनिशूल, मैथुन शक्ति का अभाव आदि कष्टप्रद लक्षण होते हैं। यही सन्निपातिक प्रदर कुछ समय के बाद 'क्षय' का रूप धारण कर लेता है जिसका परिणाम मृत्यु होना है।

प्रदर रोग के असाध्य लक्षण—

जिस स्त्री को सन्निपातिक प्रदर के साथर तृष्णा, दाह तथा ज्वर हो। नख, आंख का अंतर भाग श्वेत तथा पीत वर्ण हो जाय तो वह असाध्य है।

नवीन प्रदर साध्य तथा पुराना कष्ट साध्य होता है।

प्रदर रोग की संक्षिप्त चिकित्सा—

प्रदर पर पिचकारी—

१—त्रिफला, माजूफल, खैर (कानपुरी) इनका पृथक तथा मिश्रित क्वाथ की पिचकारी देने से प्रदर से उत्पन्न योनि स्थित व्रण और छाले शीघ्र आराम हो जाते हैं। योनि शुद्ध हो जाती है।

२—फिटकरी, यशदभस्म प्रत्येक २ रत्ती जल ४ तोले में घोल कर प्रातः सायं पिचकारी देने से श्वेत प्रदर का स्राव शीघ्र अवरोध होता है।

मृदुरेचन—

सनाय १६ तोला, मुलहटी १६ तो०, सौंफ ८ तो०, शुद्ध गंधक ४ तो०, मिश्री ४४ तोला। विधि—सब का चूर्ण करले। मात्रा—१॥ माशा से ३ माशा तक। समय—रात्रि को सोते समय।

अनुपान—गर्म जल के साथ।

गुण—प्रदर रोग पर लाभप्रद है, दस्त साफ लाता है, गर्भिणी स्त्री को देने से कोई हानि नहीं होती।

अनुभूत योग—

प्रदर नाशक चूर्ण—धाय के फूल, गूलर के सूखे फल, नाग केशर (असली) कमल गट्टे की मींगी, सब दो २ तोला। श्वेत चन्दन, सफेद जीरा, माजूफल (भुना हुआ), कमल केशर, आंवला, सौंफ, मीठी अतीस, नीलोफर सब एक २ तोला।

विधिः—सब का चूर्ण कर लें। सब के बराबर मिश्री पीस कर मिलादें।

मात्रा-४ माशा। समय-दिन में ३ बार। अनुपान- जल।

गुणः—सब प्रदरों पर लाभ करता है।

प्रदरांतक लौह-(रस राज सुन्दरोक्त) २ रत्ती मधु के साथ चाट कर ऊपर से कुनकुना गोदूध पीना चाहिए। सर्व प्रकार के प्रदर पर आशा जनक लाभ करता है। प्रदरांतक लौह के साथ २-२ माशा चन्दन चूर्ण मिलाकर चाटनेसे विशेष लाभ होता है।

श्वेत प्रदर पर—

१—सितोपलादि चूर्ण २ माशा, खर्पर भस्म १ रत्ती, मधु के साथ प्रातः सायं चाटने से श्वेत प्रदर पर अचूक लाभ दिखाता है। इस योग से नवीन प्रदर पर शीघ्र लाभ होता है।

२—चन्द्रप्रभा वटी—(सारंगधरोक्त) २ माशा प्रातः सायं शीतल जल से दें और भोजन के बाद १। तोला दशमूलारिष्ट जल मिलाकर पीने के लिये

दें। श्वेत प्रदर पर आशातीत लाभ करता है।

३—ईसबगोल साबित ८ माशा, छोटी इलायची का चूर्ण ४ माशा, मिश्री १२ माशा। सब वस्तुओं को पत्थर की कूंडी में आध पाव पानी डालकर भिजादें। इस तरह प्रातः काल की भिजो हुई संध्या को, और संध्या की भिजी हुई प्रातः सुवर्ण माक्षिक भस्म ४ रत्ती मिलाकर दें। श्वेत प्रदर पर आशातीत लाभ होगा।

४—चन्द्रपुटि प्रवाल और निरत्थ लौह भस्म एक २ रत्ती, नागबला के चूर्ण और मधु के साथ सेवन करावें। चार दिन के बाद आश्चर्यजनक लाभ होगा। यह योग श्वेत प्रदर के अतिरिक्त रक्त प्रदर पर भी लाभ करता है।

चतुर बलारिष्ट (स्वानुभूत योग)

सर्व प्रकार के प्रदर पर—

नाग बला, अति बला, महा बला, बला (सबका पंचाग) अशोक की छाल प्रत्येक एक २ पाव। क्वाथार्थ जल २० सेर। शेष जल ५ सेर।

प्रक्षेप के लिये औषधि—मुलहठी, नाग केशर, नागरमोथा, सफेद जीरा, पठानी लोध, सफेद चंदन प्रत्येक चार२ तोला, धाय के फूल १६ तो०, दाख ३२ तो०, असली शहद २॥ सेर।

विधि—काष्ठादिक औषधियों का चूर्ण कर मधु सहित क्वाथ में मिला कर एक हांडी में भर आसव सिद्ध करलें। एक मास में आसव तय्यार हो जायगा।

सेवन विधि—१। तोला से २॥ तोला तक दुगुना जल मिलाकर भोजन के बाद दें।

गुण—सर्व प्रकार के प्रदर पर आश्चर्यजनक लाभ करता है इसके अतिरिक्त प्रमेह पर भी लाभप्रद है।

नोट—इस लेख में मैंने शास्त्रीय निदान की पुष्टि करते हुए अपना स्वतंत्र तथा निष्पक्ष मत प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया है अतः इस लेख की वास्तविकता पर विचार करने का पूर्ण अधिकार पाठक पाठिकाओं को है।

रक्त प्रदर

ले० वैद्यराज जगन्नाथप्रसाद विद्याश्रमी

रक्त प्रदर का दूसरा नाम असृग्दर है। यूनानी हुकमा इसे 'इस्तहाजा' और डाक्टर मनोरेजिया (Menorrhagia) कहते हैं। व्रज भूमि में इसे 'पैर चलना' 'पैर कटना' और कहीं कहीं लाल पैरा भी कहते हैं क्योंकि इस रोग में योनि से लाल लाल स्राव होता है। यह रोग स्त्रियों में इस अधिकता से फैला हुआ है कि कोई ठिकाना नहीं। शायद ही कोई दिन ऐसा जाता हो जिस दिन एक दो रोगिणी इस रोग से पीड़िता न आती हो। ऐसे आम रोग के सम्बन्ध में वैद्यों को ही नहीं बल्कि प्रत्येक गृहस्थी को भी थोड़ा बहुत ज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिए इसलिये जन साधारण की जानकारी के लिये संक्षेप से यह बताने का उद्योग करेंगे कि यह रोग क्यों होता है और कैसे दूर किया जा सकता है। सब से पहिले यह जानना चाहिये कि

रक्त प्रदर क्या है ?

इस प्रश्न का उत्तर श्रीसुश्रुताचार्य यह देते हैं:-

तदेवाति प्रसंगेन प्रवृत्तमनृतावपि ।
असृग्दरं विजानीया दतोऽन्यद्रक्तलक्षणात् ॥

स्त्रियों की योनि से प्रति मास नियत दिनों में नियत परिमाण और काल तक आर्तव-शोणित निकला करता है। यदि यह आर्तव अधिक मात्रा में निकलता है या अधिक दिन तक निकलता है अथवा ऋतु के समय के अतिरिक्त समय में प्रवृत्त होता है तो उसे असृग्दर-रक्त प्रदर जानना चाहिए। इस अवस्था में जो रक्त स्राव होता है, उसके लक्षण प्राकृतिक आर्तव के लक्षणों से भिन्न होते हैं।

शुद्धार्तव के लक्षण

शशासृक् प्रतिमंयत्तु यद्वा लाक्षारसोपमम् ।
तदार्तवं प्रशंसन्ति यद्वासो न विरञ्जयेत् ॥

जो आर्तव खरगोश के खून या लाख रस के समान (कुछ स्याही माइल लाल) वर्ण एवं घनतादि गुण युक्त हो और उसमें वस्त्र न रंगे अर्थात् धोने पर उसका धब्बा साफ हो जाय उस रक्त को शुद्ध आर्तव समझना चाहिए।

इस शुद्ध रक्त (आर्तव) में श्लेष्मा मिला रहता है इस लिये रक्त की अपेक्षा जल्द जम जाता है, श्लेष्मा के अतिरिक्त इसमें गर्भाशय और योनि की दीवारों से गिरी हुई मैलें भी होती हैं। साधारण रक्त की अपेक्षा आर्तव में खटिक यौगिक (Calcium-Compounds) अधिक होते हैं इसकी प्रतिक्रिया क्षारीय (Basic) होती है।

आर्तव कहां से आता है ?

आर्तव गर्भाशय से आता है। जब स्त्री का बीज फल (डिंबा) पक कर निकलने को होता है तो उस के निकलने से पहले गर्भाशय की श्लैष्मिककला में रक्त अधिक संचय होने लगता है जिससे वह मोटी हो जाती है। रक्त केशिकाओं से रक्त के निकल कर कला में स्थान स्थान पर इकट्ठे होने से

वह कोमल हो जाती है, फलतः कला में से रक्त निकल २ कर बहने लगता है इसी को रजस्वला होना कहते हैं। जब रक्त निकल जाता है तो श्लैष्म-कला पहली तरह सुकड़ जाती है और दीवार की जो सेलें टूट गई थी वह भी नई बन जाती हैं। फल कोष (Ovary) फल स्रोत (Fallopian tubes) भी सुकुड़ कर छोटे हो जाते हैं।

रजस्वला होने से लाभ

यह होता है कि रक्त स्राव होजाने से गर्भाशय की श्लैष्मिक कला इस योग्य-सिलवटदार हो जाती है कि पुरुष शुक्र और स्त्रीबीज मिलकर उससे चिपक जायें ताकि गर्भ स्थिर हो जाये। गर्भ दोनों के मिल कर चिपकने ही पर रहता है। रजस्वला होपर यदि गर्भ न रहे तो कम से कम शरीर तो हलका हो जाता है।

रजस्वला होने का समय

सब स्त्रियां में एक सा नहीं होता। साधारणतया स्त्रियां चांद्रमास (चांद्रमास २८ दिन का होता है दे० शृंगार दीपिका) की प्रथम तिथि को रजस्वला हुआ करती हैं। डा० रीगर (Krieger) के अन्वेषण का सार यह है कि प्रायः सौ में से ७० स्त्रियां पहले रजः स्राव से दूसरे रजः स्राव का अन्तर २८ दिन होता है। सौ में से १३. ७ स्त्रियां ३० दिन के अन्तर से रजस्वला होती हैं और १०० में १. ४ स्त्रियां २७ दिन और १. ६ स्त्रियां २१ दिन बाद रजस्वला होती हैं।

आर्तव स्राव की अवधि

भी भिन्न भिन्न स्त्रियों में भिन्न भिन्न होती है। साधारणतया चार दिन की अवधि मानी जाती है। बहुत सी तन्दुरुस्त स्त्रियां एक दो ही दिन तक रजस्वला रहती हैं और इसके विपरीत अनेक तन्दुरुस्त स्त्रियां ६-७ दिन तक कपड़ों में होती रहती हैं। चरक ने लिखा है कि :—

> मासान्निष्पच्छदाहाति पञ्चरात्रानुबन्धि च।
> नैवाति बहुलात्यल्पमार्तवं शुद्धमादिशेत्॥

प्रति मास पांच दिन तक निकलता रहता है और उस के निकलने के समय न तो दाह होता है और न बेचैनी ही होती है, एवं मात्रा में भी न तो अधिक होता है और न कम। वह आर्तव शुद्ध है।

आज कल प्रायः आर्तव निकलने से दो चार दिन पहले से जब तक आर्तव निकलता रहता है अनेक स्त्रियों की कमर कूल्हे और पेड़ू में दर्द, आलस्य, अरुचि, चिड़चिड़ापन आदि लक्षण होते देखे जाते हैं। यह लक्षण उन्हीं स्त्रियों में होते हैं, जो आलसिन, विलासिनी हैं, अजीर्ण या कब्ज से पीड़ित हैं।

आर्तव की मात्रा

भी सब स्त्रियों में एक सी नहीं होती। प्रायः एक छटांक से ४ छटांक तक निकलता है। प्रोफेसर मेग्स कहते हैं कि "मैंने अनेक ऐसी तन्दुरुस्त स्त्रियां देखी हैं जिनको कभी नीचे रूमाल रखने का अवसर ही नहीं हुआ। कई ऐसी भी स्त्रियां देखने में आई हैं जिनका मुशकिल से एक औंस (आधी छटांक) भी रुधिर नहीं निकला। मैंने ऐसी भी विवाहिता और अविवाहिता स्त्रियां सुनी हैं कि जिनके ऋतु काल के समय कपड़े पर दाग़ तक नहीं पड़ता। चार पांच दिन तक एक प्रकार का रस सा निकलता रहता है,
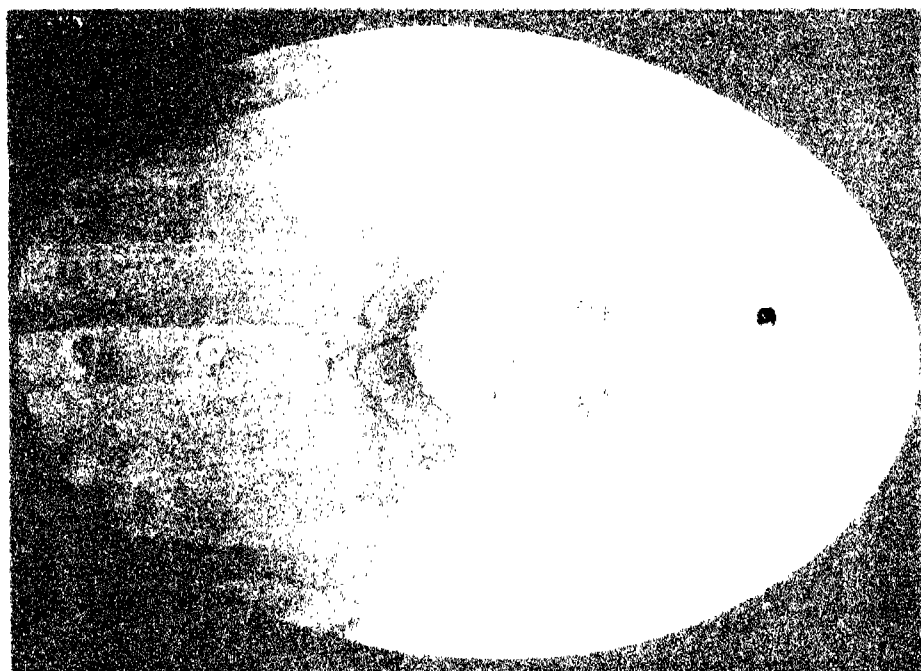
एक दो दिन केवल बहुत ही हल्का सा रंग होता है। इन सब स्त्रियों का स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा रहता है।"

इस के विरुद्ध हमने ऐसी भी अनेक स्वस्थ स्त्रियां देखी हैं जिनको दिन में इतनी बार कपड़ा बदलना पड़ता है कि बेचारी बैठ भी नहीं पाती। ऐसी हालत ५-६ दिन तक रहती है परन्तु इस से उन्हें निर्बलता नहीं होती, अन्त में बल अनुभव करती हैं।

कारण—

विरुद्ध मद्याध्यशनादजीर्णाद्गर्भ प्रपातादतिमैथुनाच्च यानाध्वशोकादतिकर्षणाच्च माराभिघातात्छयनाद्दिवाच तं श्लेष्मपित्तानिल सन्निपाच्चतुः प्रकारं प्रदरं वदंति।

जिन पदार्थों को एक साथ न खाना चाहिए उन पदार्थों का एक साथ खाना। जैसे—दही दूध मिला कर पीना, अनेक तरह का मांस एक साथ मिलाकर खानादि, अधिक मद्य पीना, पहला भोजन पचा भी न हो और भोजन खा लेना, हर समय भोजन, चाट पकौड़ी आदि खाते रहना, अजीर्ण, गर्भपात, बहु मैथुन, घोड़े, गाड़ी आदि की अधिक सवारी करना, अधिक पैदल चलना, अधिक शोक, चिन्ता, उपवास, आदि शरीर को कर्षित करनेवाले कार्य करना, अधिक भारी बोझ उठाना, शक्ति से अधिक कार्य करना, और दिन में सोने से प्रदर रोग होता है, वह कफ, पित्त, वात और सन्निपात दुष्टि से चार प्रकार का होता है। वसवराजीय ने लिखा है :—

शोकोपवासादति मैथुनाच्च-
विदाहिमिश्चान्नमतीव दुष्टम्।
प्रवर्तते योनिषु नाद शालि-
ह्यसृग्दरं तं प्रवलं हि विद्यात्॥

शोक, उपवास, अति मैथुन और राई तेल लाल मिर्च आदि विदाहि पदार्थों के खाने से रक्त अधिक दुष्ट कुछ शशकना हुआ होकर योनि से निकलता है उसे प्रदर समझना चाहिए।

कुछ लोग अधोगत रक्त पित्त को रक्त प्रदर नहीं मानते उनका यह हट शास्त्र विरुद्ध है। रुद्र संप्रदायी श्री माधवाचार्य का कथन है :—

अपत्यवर्त्मगं स्त्रीणां रक्तपित्तमसृग्दरम्।
शाल्यन्नं पयसः पानं शीतं शस्त विरेचनम्॥

जो रक्त पित्त स्त्रियों के सन्तान होने के छिद्र (गर्भाशय) में जाता है वह असृग्दर कहाता है। इसमें शालि अन्न (चावल) दूध पान और शीतल विरेचन देना अच्छा है।

श्री नित्यनाथजी कहते हैं :—

अपथ्यदोषात्स्त्रीणां वैरक्त पित्तमसृग्दरम्।
तदेव प्रदरं प्रोक्तं क्रियाकार्याश्च पैत्तिकी॥

अपथ्य सेवन के कारण स्त्रियों को जो रक्त पित्त होता है उसे असृग्दर कहते हैं और उसी को प्रदर कहते हैं इसमें रक्त पित्त नाशक चिकित्सा करनी चाहिये।

भेद

स्वतन्त्रश्चा स्वतन्त्रश्च द्विधा रोगस्तु दृश्यते।
आर्तवस्यविकारेण स्वतन्त्रः पूर्व मुच्यते॥

रक्त प्रदर स्वतन्त्र और अस्वतन्त्र भेद से दो प्रकार का होता है, जो प्रदर आर्तव में ही विकार हो जाने से उत्पन्न होता है, स्वतन्त्र कहलाता है।

लक्षण

मासात्पूर्वं प्रवर्त्तेत यद् वा सुबहुनिःसरेत् ।
चिरकालं प्रतिष्ठेत यद्वा संकर लक्षणम् ॥

१—यदि आर्तव २८ दिन से पहिले प्रवर्तित होता है

२—अथवा अधिक मात्रा में निकलता है—एक दो बार कपड़ा बदलने के बजाय बार बार कपड़ा तर हो जाने से बदलना पड़े अथवा

३—अधिक समय तक आर्तव निकलता रहे, ४-५ दिन के बजाय १०-१२ दिन तक निकलता रहे।

अथवा उपरोक्त दो या तीन लक्षण मिले हुए हों-जैसे, कोई स्त्री स्वाभाविक दशा में २८ दिन बाद ३ दिन तक रजस्वला रहती है और उसे दिन रात में १-२ बार ही कपड़ा बदलना पड़ता है। प्रदररोग होने पर यह आवश्यक नहीं कि वह बजाय २८ दिन के २१, २२ दिन में हो और रक्त भी ३ दिन ही जाय हो सकता है कि उसके २१ दिन में ऋतु मती होने के साथ रक्त भी ८, १० दिन तक जाय और वह भी काफी मिकदार में जाय वह स्वतन्त्र रक्त प्रदर है। स्वामी आत्मारामजी अपने आत्मप्रकाश नामक वैद्यक ग्रन्थ में लिखते हैं :-

पृथक दोष पुनि मिश्रतें, नाना वर्ण दिखात ।
श्रोणित स्रवित होत हैं, योनी द्वारे आत ॥
ऋतुकाल उल्लंघ के, होय अकाले पात ।
प्रदर लक्षण जानिये, ग्रंथ रहस्य विख्यात ॥

तात्पर्य यह है कि ऋतु स्राव चाहे अधिकता से होता हो, चाहे एक दम से बहुत सा स्राव हो, चाहे थोड़ा थोड़ा अधिक दिन तक स्राव होता रहे। हम ने ऐसी अनेक रोगणियां देखी हैं जिन्हें ३-४ महीने तक बराबर थोड़ा थोड़ा रक्त स्राव होता रहा है। अस्तु ऐसी सारी अवस्थाएँ रक्त प्रदर में गिनी जाती हैं। परन्तु रक्त प्रदर का निर्णय करते समय पहले बताई हुई स्वाभाविक दशाओं का ध्यान रखते हुए रोग निर्णय करना चाहिये।

अस्वतन्त्र प्रदर—

रोगः परतन्त्रस्तत्र विद्रध्यादिक संभवः ।
लक्षणं च चिकित्सा च तत्तत् रोगेषु दृश्यताम् ॥

जो असृग्दर गर्भाशय में विद्रधि, अर्श, व्रण आदि हो जाने से होता है वह परतन्त्र अथवा अप्रधान असृग्दर है। उस रक्त प्रदर में उस ही रोग के लक्षण होते हैं जिसके कारण कि वह उत्पन्न हुआ है जैसे—यदि प्रदर विद्रधि के कारण है तो उसमें रक्त काला निकलेगा तीव्र दाह शूल आदि विद्रधि के से लक्षण होंगे। यदि गर्भाशय में रक्तार्श के अंकुर हैं और उसके कारण रक्त प्रदर है तो उसमें रक्तार्श की तरह रक्त के दौरे होंगे जब मस्सों से रक्त निकल जायगा प्रदर बंद हो जायगा उस के साथ ही शिर शूलादि भी शान्त हो जायंगे। जब मस्सों में रक्त भर जायगा फिर प्रदर प्रारंभ हो जायगा। ऋतु काल के समय में गर्भाशय की ओर रक्त की गति अधिक हो जाने से रक्त बढ़ जाता है इस लिये उस समय रक्तार्श का दौरा भी हो जाया करता है परंतु इसके लिये यह आवश्यक नहीं कि रक्तार्श का दौरा ऋतु काल के समय ही हो, किसी समय हो सकता है। जब प्रदर गर्भाशय व्रण के कारण हो तो रक्त पूय मिश्रित निकलता है। इसी प्रकार गर्भाशय में आवल खंड हो जाने, रुधिर जम जाने (गुल्म होने) आदि जिस कारण से प्रदर हो उसे अच्छी तरह देखकर उस रोग के अनुसार ही चिकित्सा करनी चाहिये।

प्रदर के सामान्य लक्षण

असृग्दरं भवेत्सर्वं साङ्गमर्दं स वेदनम्।

सा० नि०

सब रक्त प्रदरों में रक्त स्वाभाविक परिमाण से अधिक जाता है और निकलते समय कुछ वेदना होती है रक्त के अधिक निकल जाने से अङ्गों में ऐंठन-हड़कल होने लगती है और सारे शरीर में पीड़ा प्रतीत होती है।

इनके अतिरिक्त रक्त क्षीणता के लक्षण, चेहरे का निस्तेज होना, शरीर रूक्ष, निर्बल-क्षीण होना, ज्वर प्यास की अधिकता, भूख की कमी आदि लक्षण होते हैं। हकीम जालीनूस का कथन है कि:-"खून के अधिक निकल जाने से आमाशय में बहुत निर्बलता। आ जाती है इस लिये पाचन क्रिया में कमी आ जाती है, भूख कम हो जाती है, रंग बिगड़ जाता है, सूजन और बुखार भी हो जाता है।"

वातिक प्रदर

रूक्षारुणं फेनिल मल्पमल्पं

वातार्ति वातात् पिशितोदकाभम्।

वातिक प्रदर में रूक्षता होती है, जब रक्त निकलता है तो भागदार होता है और दर्द के साथ थोड़ा ही थोड़ा निकलता है। उसका रङ्ग अरुण अथवा मांस के धोये हुए पानी की सी होती है। इस प्रदर में शूल, ऐंठन आदि वातिक पीड़ाएँ हुआ करती हैं।

पैत्तिक प्रदर

सपीतनीलासित रक्त मुष्णं-

पित्तार्ति युक्तं भृशवेगिपित्तात्॥

पैत्तिक प्रदर में आर्तव का रंग या तो पीलाई लिये हुए होता है, या नीला अथवा काला। कभी कभी तो बहुत ही लाल होता है परन्तु जब निकलता है तो बड़े वेग से निकलता है। निकलते हुए गर्म मालूम पड़ता और जलन चिपचिपी आदि विशेष होती हैं। इसमें प्रायः प्यास, बेचैनी, ज्वर आदि पैत्तिक लक्षण हुआ करते हैं।

कफज प्रदर

आमं सपिच्छा प्रतिमं स पाण्डु-

पुलाक तोय प्रतिमं कफात्तु।

कफ प्रदर में रक्त लिपलिपा-गाढ़ा निकलता है, कभी चावल का मांड मिलासा पीव-रक्त मिश्रित कचलोहू होता है। मांस धोवन जैसा पाण्डुतायुक्त होता है। इसमें निकलते समय न तो चबक-शूल होता है और न गरमी मालूम पड़ती है। इस में अरुचि, भारीपनादि कफज लक्षण अधिक होते हैं।

सन्निपातज प्रदर

सक्षौद्रसर्पिर्हरिताल वर्णं-

मज्जप्रकाशं कुणपं त्रिदोषात्।

तं चाप्य साध्यं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः

न तत्र कुर्वीत भिषक् चिकित्साम्।

त्रिदोषज प्रदर में रुधिर शहद या घृत के समान गाढ़ा हरिताल वर्ण का मज्जासा होता है। उसमें से मुर्दे की सी गंध आती है। यह असाध्य होता है। इसमें तीनों दोषों के लक्षण होते हैं। चक्रपाणि जी ने

असाध्य प्रदर के लक्षण

लिखते हुए लिखा है :—

त्यजेन्मूर्च्छाज्वरयुतं त्रितयं सान्निपातिनम्।

जो रोगिणी सन्निपात प्रदर से पीड़िता हो—

जिसमें तीनों दोषों के लक्षण हों, मूर्छा और ज्वर हो उसे त्याग देना चाहिए।

माधवाचार्य कहते हैं :-

शश्वत् स्रवन्तीमास्रावं तृष्णादाह ज्वरान्वितम्।
क्षीण रक्तां दुर्बलां च तामसाध्यां विनिर्दिशेत्॥

जिसके हर समय रक्त-पानी बहता रहे, कभी बन्द ही न हो, प्यास, जलन और ज्वर हो, रक्त क्षीण हो गया हो, शरीर दुर्बल पड़ गया उसको असाध्य समझना चाहिए।

प्रदर के उपद्रव

तस्यातिवृत्तौ दौर्बल्यं भ्रमो, मूर्च्छा मदस्तृषा।
दाहः प्रलापः पाण्डुत्वं तन्द्रा रोगाश्च वातजाः॥

प्रदर के बढ़ने पर, दुर्बलता, भ्रम, मूर्च्छा, मद (नशे की सी दशा) तृषा, जलन, प्रलाप, पीलापन तन्द्रा और कम्प आक्षेपादि वातिक रोग हो जाते हैं उपद्रवों की अधिकता से रोग असाध्य होता है और कभी ये कष्ट साध्य अथवा असाध्य होता है।

प्राचीन आचार्यों ने प्रदर—

चिकित्सा की सीधी सड़क

यह बताई है :—

तरुण्याहितसेविन्यास्तदल्पोपद्रवंभिषक्।
रक्तपित्तविधानेन यथावत् समुपाचरेत्॥

हितकर आहार विहार करने वाली, तरुण स्त्री को यदि थोड़े उपद्रवों से युक्त प्रदर हो तो उस की रक्त पित्त की चिकित्सा विधि की तरह चिकित्सा करे। यदि आक्षेप मूर्च्छा प्रलापादिक उपद्रव बढ़े हुए हों तो रोग को असाध्य समझना चाहिये। उस समय क्या करना चाहिये ? इस सम्बन्ध में एकमत तो यह है कि :—

न तत्र कुर्वीत भिषक् चिकित्साम्।

वैद्य को ऐसी दशा में चिकित्सा ही न करनी चाहिये। दूसरा मत यह है :—

प्रत्यासन्नेपि मरणे रक्षोपायो विधीयते।
उपाये सफले रक्षा भवत्येव न संशयः॥
यावत्कण्ठगताप्राणास्तावत्कार्या प्रतिक्रिया।
कदाचिद्दैवयोगेन दृष्टरिष्टोऽपि जीवति॥

मरने का समय बिलकुल निकट भी हो तो भी रक्षा का उपाय करना चाहिये उपाय के सफल होने पर रक्षा सफल ही है इसमें संदेह नहीं। इस लिये जब तक कण्ठ में प्राण हैं तब तक चिकित्सा करनी चाहिये कदाचित् दैवयोग से जिनमें अरिष्ट लक्षण-निश्चय मरण को बताने वाले असाधारण लक्षण भी दिखाई देते हैं वे भी जी जाते हैं।

रक्त प्रदर की चिकित्सा अधोगत रक्त पित्त के समान करनी चाहिये ताकि रक्त की अधोगति हो कर ऊर्ध्व हो जाय, रक्त का रोजान कम हो जाने में रक्त प्रदर स्वतः बन्द हो जायगा। इसके लिए निम्न लिखित

बाह्योपचार

करने चाहिये :—

१—रोगिणी को उठने बैठने और कोई काम न करने दिया जाय। खटिया या तख्त पर लिटाई जाय पांयती (पैरों की ओर) पायों के नीचे ईंटे रख कर सिरहाना नीचा कर दिया जाय। शोणित का झुकाव ऊपर की ओर होने में सहायता मिलेगी। लेटने में रक्त की गति कम हो जाती है, बनिस्बत चलने फिरने और बैठने में।

२—दोनों स्तनों के नीचे पछने लगाने चाहिये इससे भी रक्त की गति बदलने में बड़ी सहायता

मिलती है क्योंकि गर्भाशय और स्तनों का बड़ा गहरा संबंध है, जब गर्भाशय में फोड़ा आदि होजाता है तो उसका सबसे पहले प्रभाव स्तनों पर ही दिखाई देता है-उनमें भी शूल सूजन हो जाती है, पछने से गर्भाशय को जाने वाले स्रोत जोर से ऊपर को खिचते हैं रास्ता तंग हो जाता है—रक्त का रुझाव नीचे की ओर कम हो जाता है।

३—कषाय-स्तम्भक, द्रव्यों का आवश्यकतानुसार लेप, पिचु व्यवहार करना।

अन्तरोपचार

१—वमन-के कराने से दोषों की गति ऊर्ध्व होने से रक्त स्तम्भन हो जाता है।

२—स्तंभन—

एक सावधानी

की बड़ी आवश्यकता है वह यह कि यदि दूषित रक्त अधिक होने से स्रवित हो रहा हो तो उसे सहसा कभी न रोकना चाहिये। ऐसे रक्त का तो निकल जाना ही अच्छा है। इसके रुक जाने से हृद्रोग, पांडु प्लीह, गुल्म, ज्वर आदि रोग होने की संभावना रहती है। ऐसी रोगिणी को हलका, रूक्ष, भोजन देना चाहिये, तर वस्तुएँ बहुत कम देनी चाहिये। परन्तु यह बातें उन्हीं के लिये हितकर हैं, जो बलवान हैं, युवा हैं, निर्बलों के लिये नहीं :—

> क्षीणमांसबलं बालं वृद्धं शोषानुबन्धिनम्।
> अवम्यमविरेच्यञ्च स्तम्भनैः समुपाचरेत्॥

जिन रोगियों का मांस तथा शारीरिक बल क्षीण हो गया हो अथवा जो बालक, वृद्ध, अथवा शोष रोग से पीड़ित हों या वमन विरेचन के योग्य न हों उनके अधिक रक्त प्रवृत्त हो रहा हो तो उसे रक्त स्तंभक औषधियां देकर बंद कर देना चाहिए।

तात्कालिक उपचार

हमारा अनुभव

है कि:—

(१) कबूतर की बीट ४ माशा
गिल अरमनी २ माशा

यह एक मात्रा है इसे आधपाव चावल के पानी के साथ दें, चार घंटे से पहले दूसरी मात्रा दें। प्रायः एक ही मात्रा में रक्त स्तंभन हो जाता है। अधिक देने से आध्मान होने की आशंका रहती है।

(२) भोजपत्र की भस्म ३ रत्ती मधु में चटाने से रक्त स्तंभित हो जाता है।

(३) चौलाई की जड़ ६ माशा
लाख ३ माशा
चावल के जल के साथ ३-३ घंटे बाद दें

(४) चौलाई की जड़ ३ माशा
गूलर ३ ,,
कमल की जड़ ३ ,,
दूब की जड़ ३ ,,
चावल के जल से दें

जब सब वस्तुएँ न मिले तो आपको एक आध जो भी मिल जाय बरत सकते हैं।

स्थानिक उपचार

१—फिटकरी २ माशे, माजूफल १ नग महीन पीस कर जल में घोल कर उत्तर बस्ति दें।

२—फिटकिरी, माजूफल, अफीम, मोम, विधिवत् प्रियग्वादि तैल या घृत में मिलाकर योनि में पिचु रक्खे।

३—मेरे मित्र पं० उमरावदत्तजी शास्त्रीजी का कथन है कि इसमें निम्न लिखित बत्ती भी बड़ा लाभ करती है —

सुरमा, फिटकरी, सुहागा, अनार की कली, माजूफल, अकाकिया, कुन्दरुगोंद पीसकर लंबीर वर्ती बना सुखाकर रखलें। एक बत्ती गर्भाशय के मुँह में रक्खे वह बह जाय तब दूसरी रक्खें, यहां तक कि वह बन्द हो जाय।

४—पेड़ू पर बर्फ या शीतल जलकी पट्टी रखना भी खून को रोकता है।

स्थायी उपचार

जब रक्त का वेग रुक जाय तब प्रदर का मूल नाश करने के उपायका समय आता है हम तो प्रायः

प्रातः सायं काल

प्रदरादि लौह (भै०र०)	१, २ वटी
मधु	६ माशे

मिलाकर चटाते हैं ऊपर से त्रिफला का शीत कषाय या फांट देते हैं।

दो पहर के समय—

पाताल गरुड़ी (छरेंटा) चूर्ण	४ माशे
शिवलिंगी के बीज	,, २ ,,
पुष्यानुग चूर्ण	,, २ ,,

फांककर ऊपर मे २ तोले अशोकारिष्ट थोड़ासा जल मिलाकर पीवें।

रात्रि काल

देवदार्व्यादि क्वाथ—

देवदारु	३ माशे
रसोंत	३ ,,
बासा	३ ,,
विशेष शुद्ध भल्लातक	३ ,,
नागर मोथा	३ ,,
बेल	३ ,,
जल	ऽ।=
शेष	ऽ-

रहने पर उतारलें जब शीतल हो जाय मसलकर छान लें फिर उसमें—

घृत	२ तो०
मधु	९ माशे

मिलाकर पिलावें।

हमने अनुभव किया है कि यदि और भी कोई वस्तु रोगिणी को न देकर केवल यही क्वाथ ही दिया जाय तो सब प्रकार का प्रदर अवश्य ठीक हो जाता है। जो प्रदर गर्भाशय में व्रण होने के कारण है वह भी ठीक हो जाता है। इस योग में भल्लातक ही एक ऐसी वस्तु है जो आतशक, सोज़ाक, विद्रध्यादिजन्य सर्व व्रणों के लिए अक्सीर है। परन्तु भल्लातक मिश्रित योगों में पथ्य पालन की बड़ी भारी आवश्यक्ता है ज़रा से अपथ्य से भी विशेष हानि हो सकती है। इसके सेवन के समय मिर्च, तैल, खटाई, राई, लहसन आदि तीक्ष्ण वस्तुएँ कुतई न खानी चाहियें, दूध, दलिया, मूंग की दाल, आदि हलके और सौम्य पदार्थ खाने चाहियें। कफज प्रदर में विशेष हितकर हैं।

एक और अनुभूत शास्त्रीय योग

* आम्वादि घृत *

लोध	८ सेर
जल	६४ सेर
अवशेष	१६ सेर

रहने पर छानलें। इस छने हुए क्वाथ में

जामुन चूर्ण ४ सेर

डाल कर फिर क्वाथ करें जब चार सेर ऽ४ जल शेष रहे तब उतार कर मल छान लें। यह क्वाथ और

दही का तोड़ ऽ १ सेर

गुड़ ,, ,,

घी ,, ,,

पातालगरूड़ी (छरेंटा) का रस ,, ,,

कल्क द्रव्य—बेल, मुलैठी, लोध, मोचरस, कमल, केसर सहित, दाख, इन्द्र जौ मीठे, धाय के फूल, खजूर, आम की गुठली, जामन के फल, कसेरू, कैथ, सौंफ, प्रष्ठ पर्णी, पाठा, नागरमोथा अजमोद, प्रत्येक १-१ तोला

ऽ≡ सुपारी के क्वाथ में रगड़ कर कल्क बनावें। और सब को विधि वत् पाक कर घृत छान कर रखलें।

मात्रा—३ माशे से १॥ तोले तक।

गुण—रक्त प्रदर, रक्तार्श, रक्तातिसार और योनि रोगों में हितकर है। पैत्तिक प्रदर में विशेष लाभकारी है, इस घृत को (प्रदर की अन्य औषधियां भी इसी प्रकार) ऋतु काल से कुछ दिन पहिले से देनी आरम्भ कर देना चाहिये और ऋतु समय में भी बन्द न करना चाहिये। यदि रोग पुराना है तो और अधिक दिन तक औषधि देते रहना चाहिये।

शास्त्रीय प्रसिद्ध योग

पुष्यानुग चूर्ण	(भै०र०)
सुपारी पाक	(योग चिन्तामणि)
अशोकारिष्ट पत्रांगासव	(भै०र०)
अशोकघृत कल्याणघृत	,,
धात्री घृत फल घृत	,,
प्रियंग्वादि तैल	,,
प्रदरारिलोह प्रदरान्तक रस	,,
पुष्करादि अवलेह	,,

प्रदर नाशक द्रव्य

लोध, राल, चंदन, लाख आदि जितनी शीतल रक्त स्तंभन और जायफल आदि कषाय रस प्रधान स्तंभक द्रव्य हैं सब प्रदर में लाभ करते हैं।

※ पथ्यापथ्य ※

पथ्याहार

मूंग, गेहूं, शाली, षष्टिक चावल, पका पेठा, परवल, चौलाई का शाक, दाख, खजूर, अनार, आमला, गूलर, घृत, मधु, बकरी, गाय, भैंस का दूध हितकर है।

अपथ्याहार

उर्द, तिल, कुलथी, लहसन, दधि, मद्य, मछली, और जितनी चरपरी, खट्टी, खारी, विदाही पदार्थ हैं सब त्याग देने चाहिए।

हितकर विहार

रक्तावेग के समय रोगिणी को आराम से चित लिटादें, उठने बैठने चलने फिरने न दें। रक्त स्राव बंद हो जाने पर भी अधिक चलना फिरना छोड़ दें। कोई भारी चीज़ न उठायें, खाट आदि न सरकावें। कोई श्रम जनक कार्य न करें, मैथुन से बचें।

योषापस्मार (Hysteria)

(लेखक — कविराज रामेश्वरसिंह वैद्यवाचस्पति)
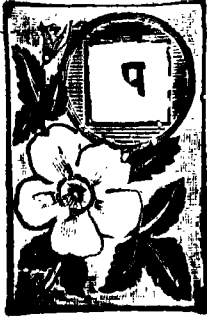
परिवर्तनशील संसार में सब वस्तुओं में परिवर्तन होता रहता है, स्वतन्त्रता से अस्वतन्त्रता, गरीब से अमीर होते रहते हैं। इस चक्र से भारतवर्ष भी पृथक नहीं रह सका क्योंकि इसमें स्वतन्त्रता के स्थान पर पराधीनता आई। जो अपने साथ निर्धनता और पश्चिमी सभ्यता को भी लाई। संसार की भांति भारतवर्ष ने भी प्रायः पश्चिमी सभ्यता का स्वीकार किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि आचार, विहार के बदलने और मर्यादा के उल्लंघन करने से नई नई बीमारियां उत्पन्न होने लगी।

हिस्टीरिया (Hysteria) रोग की गणना उपर्युक्त रोगों में है ये रोग ऐसा है जो पश्चिमी स्त्रियों में अधिक होता है, और भारत में भी प्रायः पश्चिमी सभ्यता के पुजारियों को होता है। जैसा कि आगे वर्णन किया गया है। अतः आयुर्वेदीय किसी रोग के पूरे पूरे लक्षण इस रोग से नहीं मिलते कई कई महानुभाव वैद्य महोदय इस रोग को अपतानक वा अपतन्त्रक रोग में गणना करते हैं, परन्तु इनके निम्न लिखित लक्षणों से हिस्टीरिया नहीं मिलता।

श्लोक—"क्रुद्धः स्वैः प्रकोपनै र्वायुः स्थानादूर्द्ध्वं प्रपद्यते पीड़यन हृदयं गत्वा शिरः शंखौ च पीड़यन। धनुवन्नामयेद्गात्राण्यक्षिपेन्मोहयं त्तथा सकृच्छ्रादुच्छ्वसेदुच्चैः स्तब्धाक्षोऽथनिमीलकः॥ कपोत इव कूजेच्च निः संज्ञासो अपतन्त्रकः॥"

श्लोकः—"दृष्टिं संस्तभ्य संज्ञाञ्च हत्वा कण्ठेन कूजतिहृदि मुक्ते नरः स्वास्थ्यं याति मोहं वृते पुनः वायुनादारुणं प्राहुरेके तमपतानकम्॥"

इन श्लोकों से सिद्ध होता है कि हिस्टीरिया (Hysteria) एक बिलकुल नई बीमारी है, प्रयत्न ऐसा किया जाना चाहिये कि जो रोग हमारे यहां न हों उनको अपने यहां दिखलाने के लिये खींचातानी नहीं करनी चाहिये। कोई कोई वैद्य महोदय ऐसा न करने से आयुर्वेद की हानि बतलाते हैं; परन्तु ये बात नहीं, जैसा कि इस रोग के कारणों से विदित होता है कि यह रोग उनको होता है जो कि प्रेम के किस्से कहानियों के पढ़ने सुनने और ऐसे ही नाटक देखने के अधिक अभ्यासी होते हैं उनको ग्रामीणों की अपेक्षा अधिक होता है, क्योंकि ग्रामों में अभी पश्चिमी हवा नहीं पहुँची है, इसी तरह हमारे पूर्वज नेक, पारसा सादा, और सख्त जीवन

व्यतीत करते थे अतः वो हिस्टीरिया जैसे रोग से ग्रसित नहीं हो सकते थे।

बंगीय वैद्य महोदय इसको "योषापस्मार" का नाम देते हैं जो कि यूनानी वैद्यों के "इख्तनाक़ुल रहम" से मिलता जुलता है, इन दोनों से सिद्ध होता है कि यह रोग केवल स्त्रियों को ही ग्रसित करने को उत्पन्न हुआ है और पुरुषों से इसे कोई बैर नहीं। परंतु हिस्टीरिया में हम ये बात नहीं देखते वह स्त्री और पुरुष दोनों को अपना शिकार बनाता है परन्तु पुरुषों को बहुत कम।

इससे ज्ञात होता है कि "योषापस्मार" बंगीय वैद्य महोदयों का दिया हुआ "हिस्टीरिया" का नाम "अपतानक" आदिवत् ठीक नहीं है। क्योंकि योषा का अर्थ स्त्री होता है और अपस्मार मृगी को कहते हैं अर्थात् वह अपस्मार जो कि केवल स्त्रियों को हो वह योषापस्मार है। इससे "हिस्टीरिया" रोग सिद्ध नहीं होता परंच अपस्मार रोग कह सकते हैं जो कि केवल स्त्रियों को हो, परन्तु "हिस्टीरिया" स्त्री और पुरुष दोनों को होता है। हिस्टीरिया का योषापस्मार नाम ठीक न होने का उपरोक्त पहला कारण दर्शाने के बाद दूसरा कारण यह है कि हिस्टीरिया को अपस्मार कहना ही रोग के लक्षणों को न समझने के तुल्य है क्योंकि अपस्मार और हिस्टीरिया में ज़मीनो आस्मान का अंतर है जैसा कि यह अन्तर आगे बतलाया गया है। अतः हर तरह ज्ञात होता है कि हिस्टीरिया का योषापस्मार नाम रखना ठीक नहीं। इससे श्रेष्ठ और कम त्रुटि वाला यूनानी वैद्यों का इख्तनाक़ुलरहम नाम ही अच्छा है, यहां तक कि इस रोग का सम्बन्ध स्त्रियों से है।

उपरोक्त बातों से सिद्ध होता है कि नवीन सभ्यता की नांई यह रोग भी नवीन है और इसका नाम भी नवीन होना चाहिये, चाहे हिस्टीरिया नाम को ही अपना लिया जाय।

* हिस्टीरिया के भिन्न २ नाम *

डाक्टरी नाम—हिस्टीरिया (Hysteria)
यूनानी नाम—इख्तनाक़ुलरहम
बंगाली—योषापस्मार

व्युत्पत्ति—

यह एक प्रसादात्मिक (ज्ञान तन्तु) विकृतिवाला (Nerves) का रोग है इस से शारीरिक तथा मानसिक कार्य में थोड़ा बहुत अन्तर आ जाता है परंतु वास्तव में यह रोग मानसिक है। जो प्रायः स्त्रियों में होता है पुरुषों को भी हो जाता है। स्त्रियों को भी विशेष करके उनको होता है जो युवा अवस्था की हों, कोमल स्वभाववाली हों, और जिनको प्रदरादि रोग हों।

यूनानी मतानुसार व्युत्पत्ति—

इख्तनाक़ का अर्थ गला घुटना है और क्योंकि इस रोग में रोगी का दम घुटता है, दूसरे ये रोग गर्भाशय (रहम) से शुरू होता है और वह वक्षोदर मध्यस्थ पेशी के द्वारा दिल और मस्तिष्क तक पहुँचता है इस वास्ते इसके नाम में रहम (गर्भाशय) आता है अतः यह ऐसा रोग है जिसमें कि रोग गर्भाशय से आरम्भ होकर हृदय और मस्तिष्क तक वक्षोदर मध्यस्थ पेशी (Diaphragma) द्वारा पहुँचता है। और मूर्छा हो जाती है, साथ ही इसमें गला भी घुटता है इस वास्ते इसको "इख्तनाक़ुल रहम" कहते हैं।

यह रोग लड़कों और पुरुषों को भी होता है परन्तु स्त्रियों को अधिक होता है कारण यह है कि स्त्रियां पुरुषों से अधिक कोमल होती हैं उनका मन मजबूत नहीं होता छोटी २ सी बातों में घबरा जाती हैं जब मन में किसी प्रकार से घबराहट पैदा होती है चाहे वह घबराहट उनके यहां संतान का न होना हो, पति का झगड़ते रहना, इच्छानुसार आभूषणों का न मिलना आदि हो तब ही हिस्टीरिया का दौरा आना आरम्भ होने लगता है। जो कि अधिकतर धनाढ्य कोमल प्रकृति वाली और शहरी स्त्रियां को होता है।

कारण

इसका ठीक २ कारण और सम्प्राप्ति मालूम नहीं और इसके बारे में बहुत मतभेद हैं। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि जब मन में किसी प्रकार से घबराहट होती है इसका दौरा आना शुरू हो जाता है। अतः इसके कारणों में मानसिक कारण शोक आदि बहुत ही सहायता देते हैं। मासिक धर्म के बाद पुरुष समागम का न होना, पति का मरजाना, पति का अधिक दुर्बल होना, आयु में स्त्री से छोटा होना, अपनी स्त्री से प्रेम न रखकर दूसरी से प्रेम करना, मासिक धर्म का कष्ट से आना, रक्त का अधिक आना, या कम आना, या बिल्कुल न आना, या किसी अन्य रोग से पीड़ित होना जैसे कोष्ठबद्धता, अफारा, शोक, क्रोधादि हों तब यह रोग होता है, यह प्रायः करके आरामसुख (ऐशोइशरत) के जीवन व्यतीत करने वाली, व्यायाम न करने वाली, अत्यंत कामातुर, और प्रेममय उपन्यासों को पढ़ने वाली स्त्रियों को होता है। और परीक्षा का डर या इस में असफलता का होना, धन या किसी सम्बन्धी का वियोग, प्रेम में असफलता या उसके कारण अकीर्ति का होना, इत्यादि, और पुरुषों में विशेष करके हस्त-मैथुन अति व्यायाम, अतिपरिश्रम, मानसिक वा शारीरिक अनिद्रा और अजीर्णादि भी इस रोग के कारण हैं। सहज भी इसके कारणों में सहायक है अर्थात् यदि माता पिता को अपस्मार, हिस्टीरिया, गण्डमाला, फिरंगवात होतो सन्तानों को भी ये रोग हो जाता है।

यूनानी मतानुसार इसके दो कारण हैं—

१—शुक्राशय में शुक्र का अधिकता से एकत्रित होना, और पुनः कारण विशेष से उस शुक्राशय का बन्द होजाना जिसके कारण गर्भाशय ठण्डा हो जाता है और सर्दी के कारण वहां विष उत्पन्न होने लगता है, इसका अर्थ यह है कि शुक्र के एक ही स्थान पर पड़ा रहने के कारण और साथ ही गर्भाशय के शीत पड़ जाने के कारण सड़नक्रिया (Tormantation) होकर शुक्र विषमय हो जाता है।

२—इसका दूसरा कारण मासिक धर्म का कुछ काल के लिये बन्द रहना है, इस में भी गर्भाशय में शुक्र के बन्द होजाने की तरह विकार (विष) उत्पन्न होजाता है।

सम्प्राप्ति

(Pathology)

जैसा कि पहले निवेदन किया गया है कि इसकी सम्प्राप्ति ठीक तौर पर ज्ञात नहीं है परन्तु प्रतीत यह होता है कि स्त्रियां के गर्भाशय सम्बन्धी वातकारणों वश विकृत हो जाती है और वह मनो वहा ओनों

के द्वारा हृदय और मस्तिष्क को आवृत करके रोग पैदा करती है, अर्थात् गर्भाशय में विकृत हुई प्रसादात्मिक वायु प्रतिलोम होकर ऊपर हृदय की ओर आनी आरम्भ हो जाती है, इसी से रोगिणी ये प्रतीत करती है कि एक गोला सा पेट से उठकर आमाशय की तरफ आता है जब ये गोला हृदय तक पहुंचता है तो हृदय ज़ोर से धक २ करना शुरू कर देता है अर्थात् उस प्रसादात्मिक विकृत वायु ने हृदय के कार्य को बिगाड़ (Abnormal) दिया, जब यह गोला गले तक आता है तो मूर्च्छा हो जाती है। अर्थात् उस विकृत वायु ने मस्तिष्क पर अपना प्रभाव जमा लिया है।

पुरुषों में प्रायः हस्त मैथुन आदि से शुक्र क्षीण होने के कारण रोग होता है अतः शुक्र क्षय से वात का प्रकोप होकर हृदय और मस्तिष्क के सम्यक् कार्य में अन्तर कर देती है जिस के कारण यह रोग होता है।

यूनानी वैद्य इसको निम्न लिखितरूप से मानतेहैं:-

जब कारण वश शुक्र विषमय हो जाता है तो उस विष का प्रभाव हृदय और मस्तिष्क पर दो प्रकार से पहुंचता है।

(क) गर्भाशय इस विष से कष्ट पाकर संकोच करता है और इससे गर्भाशय में ऊपर या किसी दूसरी ओर संकोच होता है। संकोच होने का कारण यह है कि गर्भाशय उस विष से बचना चाहता है क्योंकि गर्भाशय हृदय और मस्तिष्क का परस्पर सम्बन्ध वक्षोदर मध्यस्थ पेशी और पर्दे से (जो कि दिमाग़ के नीचे बिछा हुआ है) है इस वास्ते गर्भाशय के संकोच का प्रभाव भी दिल और मस्तिष्क पर होता है।

(ख) गर्भाशय में विषमय शुक्र में से गन्दे वाष्प ऊपर की ओर दिल और दिमाग़ तक पहुँचते हैं जिस से यह रोग पैदा होता है इसमें मूर्च्छा इस लिए उत्पन्न होती है कि हृदय में विष का प्रभाव अधिक होता है और दौरा इस लिए (हाथ पांव मारना इत्यादि) होता है कि मस्तिष्क गन्दे वाष्पों से बचने के लिए कुछ सुकड़ता है।

(२) दूसरा कारण मासिक धर्म का बन्द रहना है और गर्भाशय में नियमानुसार प्रकृति प्रति मास रक्त भेजती रहती है अतः वहां पर रक्त बहुत एकत्रित हो जाता है जो कि बाहर न निकल सकने के कारण शुक्र की भांति विषमय हो जाता है। जिसके कारण गर्भाशय में संकोच होता है या तो विकृत रक्त सारे गर्भाशय में प्रसार करता हुआ उसको सुकेड़ देता है या वह गर्भाशय के किसी स्थान विशेष में जाकर शोथ उत्पन्न कर देता है जिसके कारण गर्भाशय सुकड़ता है और उसमें पीड़ा होती है। जब दूसरा मासिक धर्म आने को होता है तो इसके (रक्त के) गर्भाशय में आने से पीड़ा आदि और भी अधिक हो जाती है। संकोच के कारण गर्भाशय का मुख, धमनी और शिराएँ मोटी और बंद हो जाती हैं इस से रक्त वहीं रहता है इस संकोच से और सड़े हुए गन्दे वाष्प से (क) वत् हृदय और मस्तिष्क पर प्रभाव होता है और रोग पैदा होता है।

लक्षण

इसके लक्षणों की सूची बनाना असम्भव है, क्योंकि इसमें किसी भी रोग के सारे लक्षण उप-

स्थित हो सकते हैं परन्तु वास्तविक रोग नहीं होता है और लक्षण घोर और स्थायी नहीं होते । इस रोग के होने से प्रथम आलस्य बढ़ने लगता है, दिल धड़कने और अंगड़ाईयां आने लगती हैं, शिर में चक्कर, आंखों के सामने अंधेरा होने लगता है, शरीर पत्थर की तरह कड़ा होने लगता है, मनोभ्रम होने लगता है, पेट में दर्द होकर उसमें से एक गोला सा उठता है जो गले तक आता मालूम होता है फिर दम घुटने लगता है गर्मी और खुश्की प्रतीत होती है किसी बात का वहम उत्पन्न होकर मूर्छा हो जाती है, दांत बन्द हो जाते हैं, कमर कमान की तरह टेढ़ी हो जाती है। इसमें दौरे (Fits) अपस्मार वत् होते हैं कम्प, उत्क्लेश, पक्षाघात, स्पर्शहीनता (Anesthesia) स्पर्श सहिष्णुता, (Hyperaesthesia) क्षेपण, श्वास, मूकता आदि लक्षण होते हैं । इस रोग में प्रत्यावर्तन (Reblexaction) प्रायः बढ़ जाते हैं विशेष करके जानु के। यदि ध्यान पूर्वक इस रोग के लक्षणों को देखा जावे तो तुरंत ज्ञान हो जावेगा कि यह वास्तविक रोग नहीं परन्तु इसके नकली लक्षण हैं।

लक्षणों के अनुसार यह रोग दो प्रकार का है—

(क) मृदु हिस्टीरिया (Hysteria Minor)

(ख) दारुणाहिस्टीरिया (Hysteria major)

मृदु के लक्षणः—

पहले पहल रोगी को बांयी बंक्षण संधि में कष्ट प्रतीत होता है जिसके कुछ समय बाद ऐसा जान पड़ता है कि उदर में से एक गोलासा उठकर गले में जाकर रुक गया हो जिसको दूर करने के लिये वह बार२ निगलनेका प्रयत्न करती है। उसका दम घुटने लगता है। यह अवस्था कुछ समय रहकर स्वयं ही ठीक हो जाती है परन्तु शिरो पीड़ा, गर्दन कठोर, अफारा, दिल धड़कन, इत्यादि प्रतीत होते हैं डकार (उद्गार) अधिक आते हैं, मूत्र अधिक और पतला आता है और वो अपनेको थकी हुई और शोकातुर प्रतीत करती है; इसमें दौरे बहुत देर के बाद आते हैं परंतु ज्यों २ समय व्यतीत होता जावे दौरे अधिक शीघ्र२ आने लगजाते हैं, अन्तमें वह दारुण अवस्था को प्राप्त हो जाता है।

दारुण के लक्षण—

जब दौरा आने को हो तो रोगी कदाचित् सुस्त और बुद्धि विभ्रम हो जाता है, शिरोपीड़ा, आंखों के सामने अंधेरा रंग पीला, नेत्र स्राव, संधिशिथिलता, और पिण्डलियां निर्बल हो जाती हैं। वह सहसा बिना कारण के ही चीख मारकर रोने लगती है या जोर से हंसने लगती है एक गोला सा उठकर गले की तरफ पहुंचता मालूम होता है वह मूर्छित हो जाती है। भूमि पर जोर से गिर जाती है या मूर्छित होने से प्रथम ही वह सुरक्षित स्थान पर लेट जाती है। मूर्छावस्था में वह छाती को पीटती है, सिर पीछे झुका कर गला आगे करती है ताकि वो गोला जो गले में अटक गया था वह निकल जावे। हाथ पांव मुड़ जाते हैं शरीर कांपने लगता है, कमर कमानवत् हो जाती है किसी का शरीर ठण्डा, किसी का उष्ण, होजाता है, जिव्हा स्तब्ध हो जाती है, स्तन उछलने लगते हैं, कभी उठती है कभी बैठती है, हाथ पांव मारती है, नथने फूल जाते हैं, और श्वास लेने में कष्ट अनुभव करती है कभी २ बकवास करती है लड़ती है, या चुप रहती है, और कपोल भीतर धस

जाते हैं। श्वास का गहरा अनियमित होना, दिल का धड़कना, चेहरे का सुर्ख होना, और गले की धमनियों का रक्त से पूर्ण होना आदि लक्षण होते हैं। वह बार २ गले की ओर अंगुली ले जाकर संकेत करती है कि उसके गले में कोई चीज़ अटकी हो।

जब वेग का ज़ोर मन्द होजाता है तो वह कांपती और स्पर्श से डरती है, परंतु कभी २ चुप पड़ी रहती है। फिर वेग होता है और लक्षणों में तीव्रता आ जाती है। अन्त में वह ज़ोर से हंसती या रोदेती है या वमन हो जाने के बाद सो जाती है। रोग का वेग जाता रहता है मूत्र अधिक आता है। यदि इसमें प्रलापावस्था हो जाए तो बकवास करना, कुत्ते की तरह भोंकना या रोने लगना इत्यादि अनेक तरह के लक्षण दृष्टि गोचर होते हैं।

वेगकाल

Duration of fits

किसी को थोड़ी देर रहता है और किसी को बहुत देर अर्थात् इसका वेग कुछ मिनिट से चारघंटे पर्यन्त और कभी २ सात २ दिन तक रहता है। एक स्त्री ऐसी देखी गयी है जिसको कि तीन मास के बाद वेग आता है। और सातदिन मूर्छित पड़ी रहती है। इस अवस्था का यह कारण है कि एक वेग समाप्त होने ही नहीं पाता कि उसी हालत में दूसरा आरम्भ हो जाता है।

वेग मासिकधर्म के दिनों में प्रायः हुआ करता है और निद्रा की अवस्था में कभी नहीं होता।

वेगान्तरकालः—

यह काल प्रत्येक रोगियों में भिन्न २ होता है और इस काल में रोगी मिथ्या तौर पर बहुत से रोगों से अपने आपको पीड़ित पाता है यथाः—पक्षाघात हाथ पांव का मारा जाना, शरीर में किसी २ स्थान पर दर्दों का होना जैसे वक्ष, उदर, टांग, गर्दन, इत्यादि स्वरभंग उद्गार, हिचकी, अफारा, मूत्र का बंद होना, दिल धड़कना आदि रोग।

उनकी बुद्धि में भ्रम आजाता है, वह हठी हो जाती हैं, और अपने रोग को दारुण और मिथ्या लक्षणों युक्त बतलाती हैं।

नोट—कभी२ यह रोग वास्तविक नहीं होते हैं इस वास्ते मिथ्या और वास्तविक की परीक्षा करें, यदि मासिक धर्म में खराबी हो या गर्भाशय का रोग हो और उस रोगी को हिस्टीरिया भी हो चुका हो फिर यदि उसको पीड़ा होने लग जाए और वह पीड़ा शरीर को हाथ लगाने से मालूम हो या विचार के हट जाने से दर्द भी जाता रहे तो इसको वास्तविक हिस्टीरिया रोग समझें।

यूनानी सम्प्रदाय वाले इस रोग के वेग निम्न लिखित मानते हैं :—

वेग देर से आते हैं या शीघ्रता से परन्तु इनका शीघ्रता से आना भयानक है कभी २ वेग प्रति दिन आते हैं। वेगों के आने का कारण यह है कि जब विष गर्भाशय में अधिक हो जाता है उस से हृदय और मस्तिष्क में कष्ट पहुँचता है और गर्भाशय में संकोच उत्पन्न होता है अथवा विष से गन्दे वाष्प उत्पन्न होकर ऊपर की ओर जाते हैं प्रकृति इस विष को दूर करने के लिए प्रतिविष (Antitoxin) उत्पन्न करती है जो कि धीरे २ विष का नाश करके रोग के लक्षण दूर करके रोगी को आरोग्य कर देता है। इसके पश्चात् उस समय तक वेग नहीं होता

जब तक कि पुनः विष बलवान होकर प्रतिविष का आघात न करदे।

लक्षणः—Symptoms :—वेग होने से पूर्व बुद्धि क्षुष्ट हो जाती है और गति व स्पर्श शक्तिनिर्बल होने के कारण रोगी सुस्त हो जाता है, पिंडलियां निर्बल हो जाती हैं, क्योंकि यह हृदय और मस्तिष्क से दूर होती हैं और इन पर सारे शरीर का भार होता है, रंग पीत हो जाता है, क्योंकि प्रकृति रक्त को प्रति विष बनाने की तरफ लगा देती है आंखों में पानी आजाता है पेड़ू में दर्द होकर कोई वस्तु ऊपर को चढ़ कर हृदय के समीप पहुँचती है तो मूर्च्छा हो जाती है स्पर्श शक्ति, वाक् शक्ति, अर्थात् कर्म और ज्ञानेन्द्रियें अपने २ विषयों को त्याग देती हैं।

रोग परिक्षा Diagnosis :—

इस रोग को अपस्मार और मूर्च्छा से भेद करना चाहिए जब कि यह दोनों एक साथ उत्पन्न हुऐ हों, समनः—अपस्मार से इसकी समता ये है कि अपस्मार में भी वेग होते हैं रोगी गिर पड़ता है और कई अंगों में ऐंठन उत्पन्न हो जाती है।

मूर्च्छा से इसकी समता ये है कि मूर्छावत् रोगी इस रोग में उन बातों को सुनता है जो उसे ज़ोर से कही जावें इसमें भी हाथ पांव शीतल हो जाते हैं रंग पीत हो जाता है श्वास और नाड़ी की गति मन्द हो जाती है। अपस्मार और मूर्छा के साथ इस रोग की समता यह है कि उपरोक्त दोनों रोगों की तरह गति आदि बंद होजाती है जिस तरह कि उन लोगों की गतियें बंद हो जाती हैं कि मानों गले घोट दिये गये हों।

भेदः—

हिस्टीरिया	अपस्मार	मूर्च्छा
१—देखने में रोगी मूर्छित होता है परन्तु दूसरों की आवाज़ सुन सकता है पर उत्तर नहीं दे सकता।	सहसा मूर्छित हो जाता है न दूसरों की आवाज सुन सकता है। और सचेत होने पर वेग के सम्बन्ध की कोई बात नहीं बतला सकता।	इस में मृगीवत् अवस्था होती है।
२—वेग आने से पूर्व रोगी स्वयं लेट जाता है अतः चोट कोई नहीं आती	दौरे में रोगी को गिरने से चोट लगती है अतः जिह्वा काटता है।	मृगीवत्
३—मूर्छावस्था में मल मूत्रादि स्वयं नहीं निकलता	स्वयं नहीं निकलते।	कभी निकलते हैं कभी नहीं।
४—मुख लाल आंखें बन्द पलकें बार२ मारती है दांतों का पीसना, जिह्वा कटती नहीं, प्रकाश से आंखों की पुतलियां सुकड़ जाती हैं।	मुख नीला, नेत्र उभरे हुए, दांत पीसना, दांतों के नीचे जिह्वा का कट जाना, और मुख से झाग सा आना	नेत्रोंमें कोई अन्तर नहीं आता न झाग आता है और न दांत पीसती है

५-आक्षेप सहसा और अनियमित होते हैं प्रायः मुख विकृत नहीं होता।	आक्षेप (Convulsions) नियम पूर्वक होता है, अर्थात् पहले और मृदु पुनः दारुण और शरीर के एक ओर अधिक होता है। रोगी का मुख विकृत हो जाता है।	इसमें होने न होने का कोई नियम नहीं है।
६-वेग देर तक रहता है, रोगी लम्बे२ श्वास लेता है, कभी रोता कभी हंसता है।	वेग बहुत देर नहीं रहता, श्वास खर्राटे से आता है, हंसना, रोना आदि कुछ नहीं।	
७-पेट से गोला उठ कर गले में रुका हुआ प्रतीत होता है।	पेट या पांवसे विशेषप्रकारकी लहर (सरसराहट)सी आरम्भ हो कर धीरे२ ऊपर जाकर शिर तक पहुंचते ही दौरा हो जाता है।	
८-वेग समाप्त होने के बाद निद्रा नहीं आती, क्लम मूत्र अधिक आता है।	वेग समाप्ति के पश्चात् गाढ़ निद्रा आती है या मूर्छा हो जाती है। शिर पीड़ा और बुद्धि कम होना प्रतीत होता है।	
९-तबियत सुस्त होती है और दौरे से पूर्व कृष्ण पीतादि मनुष्यों को नहीं देखता।	वेग होने से पूर्व पीत, नील, कृष्ण, श्वेत, वर्ण के आदमियों को देखकर बेहोश हो जाता है	

परिणाम (Prognosis):-

यदि सहज हो और रोगी कोमल प्रकृति और लाड़ चाव से पाला गया हो तो रोग मुक्त होना कठिन है परन्तु समय पर और यथोचित चिकित्सा करने से रोग बहुत कम हो जाता हैं। रोगी यदि अविवाहित हो तो विवाह होने पर प्रायः रोग मुक्त हो जाता है युवावस्था का रोग हो तो आयु के बढ़ने से धीरे२ लक्षण मन्द होते जाते हैं।

चिकित्सा Treatment

इस रोग की चिकित्सा विधि दो प्रकार से की जाती हैं—

१-वेगकाल

२-वेगान्तर काल

वेग काल की चिकित्सा विधिः—

वेग के समय अर्थात् जिस समय रोगी मूर्छित होकर हाथ पांव मारने लगे तब उसे एक हवादार कमरे में लिटा दें रोगी के गले के बटन खोल दें और शिर को ऊंचा करदें मुख पर शीतल जल के छींटे मारें, हाथ पांव मलें, और उनको बांध दें। इसी तरह भुजाओं को भी बांध दें। शरीर पर खूब मालिश करें, परन्तु पांव के तलुवों पर राई और नमक ज़ोर से मलें, नाभी के नीचे और उरुओं पर ग्लास (Cupping glass) लगावें। पैरों पर गरम पानी की धारा छोड़ दें। नौसादर पानी में घोल कर उस पानी में कपड़े को तर करके गद्दी सी बना कर माथे पर रखें, बार२ रखते जावें जब तक कि होश न आजावे, बहुत उच्च स्वर से उसके कानों में नाम लेकर पुकारें, क्योंकि इस रोग में घोर मूर्छा नहीं होती प्रत्युत रोगी शब्दों को इस तरह से सुनता है जैसे कि कोई दूर से बुला रहा है या दीवार की दूसरी तरफ़ से आवाज़ आ रही है अतः रोगी के कानों में ज़ोर से बुलाने से वह सचेत हो जाता है और कभी२ पूरे तौर पर स्वस्थ भी हो जाता है नेत्रों में पौदीना का सत्व (Peppermint) को सलाई से लगावें. यदि उपर्युक्त उपायों से रोगी सचेत न हो तो दुर्गन्धयुक्त वस्तुएं सुंघावें कारण यह है कि इन दुर्गन्धित वस्तुओं से उष्णता पहुंच कर शीत और सड़े वाष्प मस्तिष्क से निकल जाते हैं या मन्द पड़ जाते हैं या फिर गर्भाशय की ओर उतर जाते हैं जिससे कि गर्भाशय का संकोच दूर हो जाता है। गर्भाशय का यह गुण है कि वह दुर्गन्ध से दूर भागता है और सुगन्धित की ओर आकर्षित होता है अतः गर्भाशय में ऊष्ण और सुगन्धित तैल यथाः-कस्तूरी आदि को चमेली आदि के तेल में घोल कर पिचुतर करके गर्भाशय में दें ताकि गर्भाशय संकोच दूर हो।

सुंघाने के लिये अमोनियां अर्थात् (Quicklime) चूना और नूसार सम भाग लेकर एक शीशी में डालें पुनः उस में थोड़ासा जल डालकर डाट अच्छी तरह से बंद करदें आवश्यकता पड़ने पर इस शीशी का मुंह खोल कर सुंघावें इससे छींक आकर दौरा दूर हो जावेगा। या हींग, मार्जारवीर्य (जुन्दबेदस्तर) तमाखू के पत्ते, नक छिकनी की नस्य देवें एक दो मिनिट के लिये नाक के नथने बंद करदें। मूर्छा दूर करने के लिए किसी कष्ट दायक प्रयोग का उपदेश करें यथाः-आग का कोयला या गरम लोहा उसके समीप लाकर रोगी के शरीर पर रखने को कहा जावे कभी२ उदरादि दबाने से भी वेग हट जाता है।

नोट—सुंघाने के लिये सुगन्धित द्रव्यों का कभी प्रयोग नहीं करना चाहिये प्रत्युत दुर्गन्धित द्रव्यों का ही प्रयोग करें। इस रोग में कभी भी निरूहण या वमन नहीं कराना चाहिये, प्रत्युतः तीक्ष्ण नस्य देकर संज्ञा प्राप्त करावें।

मरिचं शिग्रु बीजानी विडंगश्च फणिजकम्
एतानि सूक्ष्म चूर्णानि दद्याच्छीर्ष विरेचने॥

रोगी को मूर्छित देखकर घबराना नहीं चाहिये सुरक्षित स्थान पर लिटा कर या तो उसे बिल्कुल ही अकेला छोड़ दिया जावे या उसके समीप खड़े हो कर उसके सम्बन्धि उसके विषय में सहानुभूति की बात चीत न करें, क्योंकि ऐसे वार्तालाप से रोगी का कष्ट बढ़ जाता है।

एक सहल और शतशोऽनुभूत पूज्य गुरु श्रीमान् वैद्य प्रो. हरदयालुजी सम्पादक आयुर्वेद संदेश लाहौर का मूर्छा दूर करने के लिये प्रयोग लिखा

जाता है:-रोगी के दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुली के नाखून को अपने दाहिने अंगुष्ठ के नाखून से ज़ोर से दबाने से रोगी आंखें खोल लेता है और शीघ्र सचेत हो जाता है। यह मैंने भी कई बार प्रत्यक्ष किया है। कस्तूरी को तेल बदाम या गुलरोग़न में हल करके उसको अंगुली में लगाकर गर्भाशय में अंगुली प्रवेश करके मला जावे तो रोगी सचेत हो जाता है। यदि ऐसे समय पर मैथुन किया जावे तो बहुत ही अच्छा है इससे भी चेतना आजाती है। (तिब्ब अकबर)

२-वेगान्तर काल चिकित्सा:-

वेग हो चुकने के बाद जो मिथ्या रोग उपद्रव रूप से पैदा हो गये हैं तो उनकी यथा योग्य चिकित्सा करें यथा:-यदि शरीर में पीड़ा हो तो शनैः२ शरीर को दबावें (मुट्ठी चापी) और सरसों के तेल की या नारायण तैल की मालिश करें।

२-यदि स्पर्श शक्ति (Hyperaesthesia) बढ़ गई हो तो ३-४ रत्ती कपूर दिन में एक दो बार देवें यदि शूलवात हो तो महायोगराज गुग्गुल, विषमुष्टिवटी या कुचले का कोई और योग देवें, और विषगर्भ तैल की मालिश करावें।

३-यदि पक्षाघात हो तो रोग़नबाबूना, तिलतैल, समभाग और किसी एक तैल से आधा भाग तारपीन का तैल तीनों को लेकर मिलाकर मर्दन करें, या अन्य वात नाशक तैल का मर्दन करें, और खाने को कोई वात नाशक योग देवें या ये नीचे लिखा हुआ योग भी दिया जा सकता है:—

योग:-शु० विष ६ मासा, शु० विषमुष्टि (कुचला) ६ मासा, मार्जारवीर्य (जुन्द बेदस्तर) ६ मासा, काली मिर्च १ तोला, पिप्पली १ तो०, दालचीनी १ तो०, सौभाग्य भस्म १ तो०, शु० शिंगरफ़ १ तो०, शु० संखिया २ मा० घीग्वार के रस में खरल करके ३६० गोलियां बनावें प्रयोग-अर्धांग वात, इत्यादि, मात्रा:- १ गो० सायं, १ गो० प्रातः भोजनोपरान्त अनुपान:-सौंफ के क्वाथ में मधु मिलाकर या जल से इस योग को मेरे पिताजी पूज्य ठा० रामनाथसिंह जी स्वतन्त्र पक्षाघात आदि में प्रयोग करते हैं।

४-अजीर्ण की अवस्था में लवण भास्कर, दाड़िमाष्टक, या अग्नि तुण्डी रस देवें।

५-कोष्ठबद्धता में कोई भी लघुविरेचक औषधि देवें सनायपत्र चूर्ण ९ मा० लाल शक्कर ४ तो० पाव भर गाय का दूध और पावभर जल में पका कर देवें।

६-वमन की अवस्था में लवण भास्कर अथवा केवल नूसार या लाजा में मधु मिलाकर देवें।

७-ज्वर होवे तो मृत्युंजय या स्फटिका भस्म, गंधक ये दोनों समभाग और नूसार एक द्रव्य से अर्धभाग लेकर तीनों को मिलाकर ३-३ रत्ती की मात्रा कोष्ण जल से देवें।

८-शिरशूल में लक्ष्मीविलास, पिप्पलामूल चूर्ण, दोनों को उचित मात्रा में मिला कर देवें।

९-यदि मूत्र बन्द होगया हो तो यवक्षार और खांड मिला कर देवें। यदि इससे मूत्र न आवे और वहां पर पीड़ा हो तो केथिटर से मूत्र निकालें।

१०-अनिद्रा होगई हो तो शिर पर रोग़नकद्दू, रोग़न खश ख़ाश मिलाकर मलें। गले में चमेली के फूलों का हार डालें। और खाने के लिये आलुबुखारा, और भांग चूर्ण यथोचित मात्रा में देवें (यह योग ज्वरावस्था में अनिद्रा पर अचूक औषधि है)

११-हिचकी यदि आती हो तो शीत जल पिलावें या थोड़ासा कपूर मिला कर देवें। अथवा बड़ी इलायची के छिलके की भस्म करके नस्य देवें। शु० गंधक, शहद मिलाकर चटावें ऊपर से गरम पानी पिलावें। सोंठ चूर्ण डाल कर पकाया हुआ बकरी का दूध पिलावें। अथवा हाज़ों (चन्द्रशूर) को अष्ट गुण जल डाल कर पकावें जब वह घन हो जावे तो कपड़े से छानकर ४-४ घंटे बाद पिलावें।

१२-यदि ऋतु बन्द हो जावे तो उलट कम्बल मूल का क्वाथ बनाकर पुराना गुड़ मिलाकर देवें या कोई अन्य ऋतुप्रवर्तक औषधि या वर्ती का प्रयोग करें वर्ती:-वायविडंग, समुद्रफेन ३-३ मासे, बिरोज़ाशुष्क, सैन्धव ६-६ माशे, इनको कूट कर तीन पोटलियें बनावें गर्भाशय के मुख में और दायें बांयें तरफ रक्खे और तीन दिन तक इसी तरह से रखते रहें।

यदि पित्त प्रधान रोग हो और रक्त के गाढ़े होने के कारण हो जिसमें कि मूत्र और सारे शरीर पर शबलेता, और अंगों का ढीला होना, शिराओं का हरासा होना, लाला का अधिक आना, आदि होता हो तो उसका कोष्ठ मृदु करके साधारण विरेचन देवें। यदि रक्त की अधिकता के कारण रोग की उत्पत्ति हुई हो तो इसमें उष्ण द्रव्य न देवें प्रत्युत शर्बत नीलोफर आदि देवें और वेगावस्था में प्रायः शीत क्रिया करें। यदि गर्भावस्था में ये रोग हो तो प्रसूत के बाद स्वयं ही ठीक हो जाता है। और वेगावस्था में बाह्योपचार तेल मर्दन आदि ही करें सचेतावस्था में केवल गुलकन्द ही श्रेष्ठ है निम्नलिखित प्रयोग अत्यन्त श्रेष्ठ सद्योफल दायक और अनुभूत हैं:-

(१) तैलः-सत पोदीना ६मा०, इतरखश १तो० दालचीन तैल १ तो०, सन्दल तैल ४ तो०, इलायची तैल ५तो० सरसों तैल २छ०, रौगन चमेली २छ०, सन्तरे का तैल ६छ० तिल तैल ५से०, कपूर १तो०, इन सबों को एकत्र करके २तो० रतनजोत चूर्ण डाल कर कनस्तर का मुख बन्द करदें प्रतिदिन दो तीन बार कनस्तर को उठाकर खूब हिला दिया करें एक मास के पश्चात् कपड़े में छानकर बोतलों में भरदें। प्रयोगः-शिरपीड़ा, शिरोदुर्बलता, पित्त, हिस्टिरिया के रोग ललाट पर लगाने से दूर होजाते हैं यह तेल अत्यन्त सुगन्धित है जो कि दिमाग़ी परिश्रम करने वालों (विद्यार्थी वकील आदि) के लिये बहुत लाभकारी है।

(२) गोलियांः-जद्वार खताई, शोरक, मस्तगी रूमी, मार्जारि वीर्य, उदस्लीब, अकरकरा, प्रत्येक ३ माशे, फादज़हर हैवानी १॥ माशे कस्तूरी १ मासा सबों का चूर्ण करके द्राक्षारस में खरल करके चणक प्रमाणवटी बनावें प्रातः सायं एक एक सेवन करें अनुपान-गुलाब अर्क

(३) चिन्तामणि चतुर्मुख रस, चतुर्मुख रस, खमीरा गाजुबान अम्बरी आदि, अर्क मकोय, अर्क सौंफ या अर्क गाजुबान से देवें।

(४) राजावृत भस्म, इसके अतिरिक्त स्वर्णयुक्त योग बड़े उपयोगी हैं। यदि काढ़ा देने की इच्छा हो तो बालछड़, (जटामांसी) ब्राह्मी, शंखपुष्पी, समभाग लेकर इनका क्वाथ बना कर अनुपान के तौर पर दिया जा सकता है। या इसका अर्क खिचवा कर देवें।

कोई२ इसमें हींग का प्रयोग अधिक फलदायक बतलाते हैं।

पथ्यापथ्यः-पथ्य-गाय का दुग्ध, पुराने चांवल, गेंहू का आटा, घृत, मूंग, खिचड़ी, दलिया, खीर, अंगूर अनार, सेब, नारंगी, आदि फल देवें।

घीया, मूली, बाथू, पालक का शाक, केला कच्चा आदि पथ्य हैं। और इसके अतिरिक्त शीघ्र पचने वाले भोजन देवें। प्रातः सायं भ्रमण, स्नान लाभदायक है यदि रोगी अविवाहित हो तो विवाह किया जावे नेक और सदा प्रसन्न रहनेवाले की संगति करावें कारणों का परित्याग अर्थात् कामोत्पादक विचार और ऐसे ही उपन्यास न पढ़ना, स्वच्छ वायु में रहना और जल वायु परिवर्तन करावें।

अपथ्यः-खटाई, लाल मिर्च, धूप में फिरना, गरिष्ठ भोजन, आग के सामने बैठना, क्रोध करना, वहम करना, मलमूत्र रोकना, अधिक व्यायाम करना, भार उठाना, परिश्रम बहुत करना, बहुत चलना फिरना, और एकान्त सेवन आदि अपथ्य हैं।

— —

सोम-रोग

[ले० आयुर्वेदमार्तण्ड-आयुर्वेदमहोपाध्याय-आयुर्वेदाचार्य-कविराज डा० पं० रामगोपालजी मिश्र राजवैद्य]

प्राक्कथन

हमारे देश की स्त्रियों में इस रोग की मात्रा अधिक प्रमाण में देखी जाती है यद्यपि इस रोग से ग्रसित स्त्रियां अन्य देशों में भी पाई जाती हैं, पर जितने अधिक प्रमाण में इस रोग से ग्रसित हमारे देश की स्त्रियें प्राप्त होंगी उस संख्या के सम्मुख अन्य देश की स्त्रियों की संख्या प्रायः नहीं के बराबर ठहरेगी! कारण यही कि हमारे देश में इस रोग का सर्वोपरि कारण बाल विवाह, बेजोड़ विवाह, वृद्ध विवाह, जो हमारे समाज के धर्मांध बन्धुओं की कृपा से आज भी मौजूद हैं, है आयुर्वेद में यद्यपि "मिथ्या हार विहाराभ्यां दुष्टैर्दोषैः प्रदूषितात् ॥ आर्तवा द्वीजतश्चापि दैवाद्वास्यु र्भगे गदाः ॥ मिथ्या आहार और मिथ्या विहार रूप विप्रकृष्ट कारणों को ही वातादि दोषों को दुष्ट करने का कारण मानते हुये इस रोग का निदान करने में आया है! पर हम जब इस बात पर गवेषणात्मक बुद्धि से विचार करते हैं तो हमें यह स्पष्ट प्रतीत होने लगता है कि विहार शब्द के मिथ्या, अति, हीन योग के साथ इस रोग के लिये सामाजिक कुप्रथा का समावेश भली प्रकार से हो जाता है अर्थात् बाल विवाह, बेजोड़ विवाह, और वृद्ध विवाह की घृणित प्रथा से स्त्री पुरुषों के सहवास रूप विहार का निराकरण करते हुये वातादि दोषों के दुष्ट होने रूप सन्निकृष्ट कारण का स्वरूप मिथ्या शब्दके साथही मिल जाता है स्मरण रहे " आर्तवा द्वीज तश्चापि" यह वाक्य उपर्युक्त कथन को पुष्ट करने वाले हैं प्रत्युत रज दोष और पुरुष के वीर्य विकृति के लिये, यदि वर कन्या का वयस्क होने पर सम्बंध किया जाय तो कोई कारण ही नहीं रह जाता, हां इसके साथ ही साथ उन्हें संयमी होने की आवश्यका तो अब शेष रह जाती है पर जब उनके वयस्क होने तक उनमें ब्रह्मचर्य का पालन करा दिया जाय तो यह कमी भी दूर हो जा सकती है कारण यह है कि ब्रह्मचर्य के लिये संयमी होने की पूर्ण आवश्यका होती है और उसका उन्हें उस दशा में पालन करना अनिवार्य हो उठता है अतएव संयम से भी वे उत्तम परिचित हो जाते हैं और समय पर अति विषयी बनने से बच जाते हैं पर यह तो स्पष्ट है कि सामाजिक कुप्रथा का परिणाम ही भारतीय स्त्रियों के लिये अन्यान्य प्रकार के स्त्रीरोगों के साथ सोम रोग का भी अकाट्य कारण है! ऐसी दशा में "दैवात्" शब्द खटकता है कारण यह है कि "चलनी में दूध दुहैं कर्मों को दोष देंय' यह उक्ति चरितार्थ करना उचित नहीं जंचता तौभी कर्मज रोगोंके ऊपर विचार करते हुए यह मानने को तैयार हैं कि उपर्युक्त कुरीति के विष से और संयम त्याग की ज्वाला से बचे रहने पर भी कदाचित इस रोग से ग्रसित होने का प्रसंग आजाय तो अवश्य दैवात् शब्द उपयुक्त

हो सकता है ! जो भी हों लेकिन यह सोम रोग स्त्रियों के लिये महान घातक है ! यह रोग जिस स्त्री को घर दबाता है उसे अनेकों कष्टों का सामना करना होता है। यही नहीं प्रत्युत उसे रोग बढ़ जाने पर तो अपने प्राणों को भी खोने का औसर आ पहुंचता है ! आज हमारे देश में ऐसे कष्ट प्रद और महान घातक रोग से आक्रान्त हमारी अनेक भगिनीयें पड़ी हैं। और लज्जा वश उसे प्रगट करने का साहस तक नहीं कर सकती।

सोम रोग और बहुमूत्र

जिस प्रकार पुरुष को बार बार मूत्र त्याग की इच्छा होकर वह बार बार बहुत प्रमाण में मूत्र का त्याग करता है, उसी प्रकार सोम रोग में भी स्त्रियों को बार बार मूत्र त्याग की इच्छा होती है और वे अधिक प्रमाण में मूत्र का त्याग करती हैं ! रोग बढ़ जाने पर तो उनकी मूत्रधारक कला निर्बल पड़ जाने से उन्हें बार बार मूत्र त्यागके लिये दौड़ना होता है, यही नहीं प्रत्युत ऐसी अवस्था में उनकी जांघों पर जल सदृश तरल चोबीसों घन्टे बहता रहता है, जिससे उनकी जांघें एकदम भीगी और वस्त्र तर रहते हैं। उनकी मूत्र संकोचिनी पेशयें निर्बल पड़ जाती है। जिससे मूत्राशय में इकट्ठा हुवा उनके शरीर का जलीय भाग जो कि मूत्र रूप में बाहर निकलने को होता है उसे वे रोकने में क्षण भर के लिये भी असमर्थ हो जाती हैं कमीर तो उन्हें उसके झरने का बोध भी नहीं होता बेखबरी में ही झरता रहता है। बहुमूत्र रोग के समान ही सोमरोग से आक्रांत अबलाके लिये मूत्र कर खाद्य पेय यथा नये चावलों का भात नया या गदला जल महान अपथ्य कर होता है कारण यह है कि इनके खान पान से उनके मूत्रकी मिकदार अत्यधिक बढ़ जाती है वह भी इसी कारण कि उनकी पाचनेन्द्रिय और मूत्र कर यन्त्र सुचारू रूपेण अपना कार्य सम्पादन करने में असमर्थ हो जाते हैं और इसी लिये उनका शारीरिक जलीय भाग दूषित होकर खानपान के जलीय भाग में आकर मिल जाता है और तुरत ही मूत्र कर यंत्रों की निर्बलता के कारण भर २ कर मूत्राशय में आने वाले तुरत के पीये जल के साथ मिलकर मूत्राशय में एकत्र होने लगता है। और रोगणी को बार२ पेशाबकी हाजत होकर वह उसे त्यागा करती है। सोमरोग की रोगिणी को प्रायः क्षोभ के तप्त हो जाने से तृषा अधिक प्रमाण में लगा करती है लेकिन जलपान करते ही उसके मूत्रकी मिकदार बढ़ जाती है उसका केवल कारण यही होता है कि उपर्युक्त कथित कारणों से दोष दुष्टी हो कर शारीरिक जलीय द्रव जो कि शारीरिक धातुओंसे भर कर कई एक खनिज अणुओं को घटकाणुओं से प्रथक कर उनके सहित बहने को उद्यत होता है अर्थात् सोम विकृति को इस प्रकार प्राप्त होकर मूत्र कर यन्त्रों को निर्बल कर देता है और पाचनेन्द्रिय की क्रिया को बिगाड़, खान पान के जलीय भाग में मिश्रित हो मूत्र प्रणालियों से बहता हुआ मूत्राशय में आकर एकत्र होने लगता है और मूत्र धारिणी कला और मूत्र संकोचिनी पेशियों को निर्बल करके बाहर बहने का प्रयत्न करता है यही कारण है कि उनमें मूत्र रोकने की शक्ति नाम मात्र भी नहीं रह जाती। जिस समय शरीर का जलीय भाग रोग के बढ़ जाने पर ज़ियादे प्रमाण में आने लगता है उस समय पान किया हुआ जल तुरन्त ही मूत्रा-

शय में झर आता है और उसमें सोमात्मक शारीरिक जलीय द्रव भी मिला होता है जिसमें बिगड़े हुए कई प्रकार के खनिजाणुओं का मिश्रण रहता है ऐसी दशा में योनिमार्ग से द्रव रूप जलांश झरता ही रहता है। रोगिणी को क्षुधामान्द्य और निर्बलता आ घेरती है, यही ही नहीं? प्रत्युत सोम रोगसे आक्रांत रोगिणी के यकृत की क्रिया भी बिगड़ जाती है जिस से रक्त का बनना भी कम पड़ जाता है और क्लोम तप्त होने लगता है और इसी लिए उसकी उत्तरोत्तर धातु पोषणीय क्रिया में व्यत्यय उत्पन्न होकर वह एकदम निर्बल हो जाती हैं। हृदय भी निर्बल पड़ जाने के कारण रुधिर शुद्धि में भी व्यत्यय पड़ कर शरीर में थकान सी मालूम होने लगती है। चेहरा फीका और रुधिर हीन प्रतीत होता है। फुप्फुसों की निर्बलता के कारण श्वासोच्छ्वास और नाड़ी की गति भी मंद पड़ जाती है नखों में रक्ताल्पता भासने लगती है बातचीत करने में श्रम बोध होता है हृदय में कभी२ धड़कन और कभी डूब रहा है ऐसा मालूम देता है रक्त के लाल कणों का भाग घट जाता है, शरीर का चर्म खुरदरा सा प्रतीत होने लगता है, मासिक धर्म नियमित समय पर नियमित परिमाण में नहीं होता, अथवा बिलकुल ही बन्द हो जाता है, शारीरिक ताप घट जाता है, हाथ और पांव में झुनझनी और बांयटे भी प्राय आने लगते हैं। कभी कभी हाथ पांव ठंडे मालूम देते हैं। उठने बैठने में त्रास और अंधेरी आया करती है प्राय: ऐसे लक्षणों पर विचार करते हुए बहुत से वैद्य सोम रोग को स्वेत प्रदर ही गिन कर उसकी चिकित्सा प्रदरवत् करने बैठ जाते हैं।

सोम रोग और स्वेत प्रदर

पर उनको इस बात की गवेषणा की इच्छा भी नही होती कि "सोम रुङ् मूत्र मार्गे स्यात्प्रदरो गर्भ वर्त्मनि" सोम रोग मूत्र से सम्बन्ध रखने वाली व्याधि है और प्रदर रोग गर्भाशय से सम्बन्ध रखता है यानें दोनों व्याधियों के दूष्य स्थान में आकाश पाताल का अन्तर है। ऐसी दशा में सोम रोग की और प्रदर की चिकित्सा में गड़बड़ाध्याय होकर अनिष्ट को सहज ही ठीक किया जा सकता है। क्योंकि सोम ओज का ही परयाय है इस लिये ओज को ही सोम कहा गया है "ओजः सोमात्मकं स्निग्धम्" जब ऐसा है तब ऐसी दशा में श्वेत प्रदर और सोम रोग एक नहीं हो सकते, यद्यपि लक्षणों में कुछ समता भले ही मिलती हो लेकिन बारीकी से लक्षणों की तालिका बनाकर देखें तो पता लग जायगा कि सोम रोग श्वेत प्रदर से बिल्कुल भिन्न रोग है। हां यह तो अवश्य है कि सोम रोग के समान ही बहुमूत्र में भी ओज का क्षरण होता है अतएव उसे यदि स्त्रियों को होने वाला बहुमूत्र या मूत्रमेह रोग कहें तो हमारी समझ से कोई व्यत्यय नहीं आ सकता। वस्तुत: गवेषणा की कसौटी पर कस कर देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि सोम रोग और बहुमूत्र में कुछ ही भेद के अतिरिक्त यह दोनों समान धर्मी हैं। वह इसी लिये कि आहार इसको जिस समय क्षीरिणी नाड़ियों से गुज़रना होता है उस समय उस रस को लसिका संज्ञक मानते हैं, और यह लसिका भोज्य के कई पोषणीय खनिजों के सहित और सोम (ओज) सोम रोग में क्षरण होते हैं। सोमरोग

में क्षरण होने वाला जल वहीं शारीरिक जल है जो शरीर में प्रोटीनों, वसा कार्बोज के ओषजनी करण से उत्पन्न हुआ करता है और जो एक से अधिक मौलिकों से बना हुआ होने कारण यौगिक कहलाता है शरीर में ऐसा कोई घटकाणु नहीं जिसमें खनिज परमाणुओं का संमिश्रीकरण न हो और ऐसे यौगिक मिश्रण को धारण करने वाला ऐसा कोई घटकाणु नहीं जिसमें जल का कुछ न कुछ अंश न हो। और इसी लिए ओज की प्रवृत्ति इसमें मानी गई है और यही कारण है "ओजः सोमात्मकं स्निग्धम्," कहने में आया है। बहुमूत्र में उपर्युक्त कथित लसिका का क्षरण है और उस लसिका का अधिक भाग जल ही है, ऐसी वस्तु स्थिति में बहुमूत्र और सोम रोग ही नहीं प्रत्युत सोम रोग और मधुमेह में भी कुछ ही भेद मानने में व्यत्यय नहीं आ सकता। बात यह है कि मधुमेह में भी शर्करा, अम्ल, वसा, ओज और लवण का क्षरण होता है इतना ही भेद है पर श्वेत प्रदर और सोम रोग में बड़ा ही अन्तर है वात प्रदर का दूषय स्थान, बहने वाले पदार्थ और लक्षणों में बड़ा अन्तर है। इसे समझना वैद्यसमुदाय का कर्तव्य है।

सोम स्राव में बहने वाले मौलिक

यह बात तो निर्विवाद मानी जा सकती है, कि हमारे शरीर में अनेकों प्रकार के मौलिकों का भण्डार भरा पड़ा है, कारण यह है कि जिस अभौतिक विभुतत्व की भूमिका पर प्रकृति द्वारा भौतिक पंच महाभूतों के पंची करण से ब्रह्माण्ड रचना के समान ही हमारे पिण्ड की रचना करने में आई है ऐसी दशा में ब्रह्माण्ड गत मौलिकों का सूक्ष्मांश रूप में, पिण्ड में उसकी स्थिति और कार्य सम्पादन के लिये रहना अनिवार्य हो उठता है, जब ऐसी वस्तु स्थिति है तब इन मौलिकों का सम्मिलित परमाणु भाग ही घटकाणुओं में परिवर्तित है यह स्पष्ट हो जाता है और ऐसी दशा में इन घटकाणुओं का पोषकद्रव्य द्रव रूप जल जब दुष्ट होता है तो मौलिक द्रव्यों के संगठन से बने घटकाणु उन मौलिकों सहित दूषित नहीं होते अथवा कुत्सित होकर उस जलीय भाग के साथ मूत्राशय में नहीं आते ! हमें इस दशा में स्पष्ट मानना होगा कि सोम रोग में जो सोमात्मक द्रव झरता है उसमें शारीरिक मौलकों का भी अवश्य कुछ न कुछ अंश होता है वह रोगारम्भ की दशा में न्यून प्रमाण से आने के कारण हमारी जांच में प्रत्यक्ष न हों अथवा रोग की भयंकरता में अत्यंत कुत्सित हो जाने से समझमें न पड़ सकते हों यह बात दूसरी है, कारण यही कि अभी हमारी विश्लेषण शक्ति भी तो पूर्णता को पार नहीं कर सकती। जो भी हो लेकिन यह बिल्कुल ठीक रीति से मानना होगा कि सोम रोग में बहने वाले सोमात्मक जल में हर प्रकार के मौलिक किसी न किसी अंश में अवश्य बहते हैं। जिसमें प्रायः रौप्य, ताम्र आलमोनियम लोह गंधक के कुत्सित हुए मौलिक और लवण चूना आदि भी बहते हैं। यही कारण है कि सोमरोग की रोगिणी अत्यन्त शीघ्रता से रोगाभिमुख होती जाकर शक्ति हीन, कृश होती चली जाती है और उपयुक्त चिकित्सा न हो सकी तो शीघ्र ही उस की जीवनी शक्ति का ह्रास होकर वह मृत्यु शय्या पर सो जाती है और आखिर में उसे अपने प्राण खोना होता है।

सोम रोग होने के कारण

बेजोड़ सहवास, अत्यन्त सहवास, अत्यन्त शोक, चाय, काफ़ी, का अत्यन्त पीना अत्यंत श्रम, विषदोष रजदोष, अत्यंत मद्यपान, विषयेच्छा की पूर्ण तृप्ति न होना आदि कारणों से शारीरिक जल क्षुभित हो अनैच्छिक कलाओं से स्रवता है।

सोम रोग और उनके लक्षण

बेचैनी, मूत्रवेग रोकने में असमर्थता, बेखबरी में स्राव, दुर्बलता, मुख, तालु का सूखना, मस्तक शिथिल, शारीरिक चर्मरूक्ष, मूर्छा, तृषा, रज का निर्बल होना, रज का अनियमित स्राव होना, या बिल्कुल न होना, गर्भधारण शक्ति का नष्ट होना, क्षुधामांद्य, आदि लक्षण सोम रोग में प्रगट होते हैं विशेष विवेचन ऊपर हो चुका है।

सोम रोग और उसकी सांसरिकिता

यद्यपि सोम रोग के कारण बहने वाले शारीरिक जल में हमें प्रत्यक्ष जीवाणु सृष्टि देखने में नहीं आती और संभव है अणुवीक्षण यंत्रसे देखनेपर भी हमें वे दृष्ट न हों पर फिरभी हमें यह गवेषणा करने पर पता चलता है कि सोमरोग सांसरिक अवश्य होना चाहिऐ याने सोम रोग से आक्रान्त स्त्री के संसर्ग से पुरुष भी रोगी हो सकता है। कारण यह कि जिस दशा में शारीरिक जलीय भाग दूषित हो कर बहता है उस दशा में सजीव घटकाणुओं का कुत्सित होकर अथवा रोग भयंकर हो उठने पर रोगाणुओं में परिवर्तित होकर उनका बहना अनिवार्य हो उठता है जब 'ऐसा है' तब क्या कारण है जो वह सांसरिकता को धारण न करे, अर्थात उसमें सांसरिकता गुण अनिवार्य हो उठता है, अतएव यहां यह भी स्पष्ट किये देते हैं कि बहुमूत्र और सोम रोग में यह एक बहुत बड़ा भेद है, सोम रोग सांसरिकि होता है बहुमूत्र नहीं।

सोम रोग की सामान्य चिकित्सा

(१) काली मूसली, खारिक, मलहटी, विदारीकन्द, समान भाग चूर्ण करके रखले, मात्रा प्रमाण ४ मासे, ६मासे मधु ६मासे मिश्री के साथ दोनों काल देवे. ७, १४, २१ दिन

(२) गिरी आंवला १ तोला १० तोले पानी में भेदेवे बाद पीस कर कल्क करे ६ मासे मधु ६ मासे मिश्री मिलाकर दोनों काल पीने को देवे दिन ३, ७, १४.

(३) नागकेशर १तोला पीस कर १०तोले गोतक में मिला कर पीने को देवे दिन ३, ७, १०

(४) गोपीचन्दन १ तोला फिटकरी ३ मासे दोनों को पीस सराव सम्पुट में बन्द कर गजपुट में फूंक दे मात्रा २रत्ति ६मासे शक्कर से दोनों काल देवे. दिन ७, १४, पथ्य अलौन देवे

५ लोध का चूर्ण ४मासे अदरक रस३मासे केले के कन्द का रस ९मासे मिलाकर दोनों काल देवे दिन, ३, ७,

(६) शालब मिश्री, रूमीमस्तंगी, कौंच बीज, बला बीज, तालमखाना, गोंदपलाश इलायचीदाना, बंशलोचन, बड़की कोंपल; सब के समान मिश्री मिला चूर्ण करे मात्रा ६ मासे, व गौ दुग्ध दिन, ७, १४

(७) रेवाचीनी, गोखरू मलहटी, धनिया, बालहैड़,

दारु,पाषाणभेद, धमासा, शिलाजीत, शतावर, सब को एक एक तोला लेकर चूर्ण तैयार करें प्रमाण मात्रा, १तोला लेकर १६ तोला पानी में चतुर्थांश गाढ़ा करें, डेढ़ मासा मधु डाल कर दोनों काल रोगिणी को देवे, दिन ७

(८) कीकर की फली का चूर्ण ३ मासे मधु घृत १॥ मासे मिलाकर दोनोंकाल देवे ऊपर से गौ दुग्ध मन्दोष्ण देवे दिन ७, १४

(९) जामुन के बीजों का चूर्ण १॥ मासा मधु मिलाकर चटावे ऊपर से मन्दोष्ण गौदुग्ध देवे. दिन ७, १४

सोम रोगकी रोगावस्थानुरूप चिकित्सा

चन्द्रप्रभावटी—सोम रोग के आरम्भ में जबकि रोगिणी को सोम स्राव की आशंका हो मात्रा एक२ गोली मन्दोष्ण दूध से दोनों काल देते ही तुरन्त गुण होता है, ३, ७, १४ दिन अवश्य देना चाहिये । चन्द्रप्रभा इस रोग की प्रधान औषधि है ।

(२) चन्द्रप्रभावटी—सोम का श्री स्राव होने लग कर, बेखबरी में बहना, रोगिणी में रक्ताल्पता और बेचैनी होने पर चन्द्रप्रभा प्रमाण मात्रा एक२ गोली अशोकारिष्ठ के साथ सेवन कराना। दिन १४, या २१ आशु गुण होकर रोग निर्मूल होगा बिल्कुल अनुभूत है ।

विशेष वक्तव्य-चन्द्रप्रभा, और अशोकारिष्ठ आयुर्वेदीय ग्रन्थों में देख कर बना लेवें चन्द्रप्रभा शारङ्गधरोक्त प्रमेहाधिकार में कही हुई और अशोकारिष्ठ भैषज्य रत्नावली में देख कर बना लेना चाहिये ।

(३) गगनादि लौह—रोगिणी को सोम रोग के साथ मूत्रातिसार हो जाने पर या मूत्र के साथ बार बार सोम निकलने पर रोगिणी के जब चेहरा रक्त से हीन दिखाई देने पर ६ मासे से १।। तो० प्रमाण तक मात्रा शहद से दोनों काल रोगिणी को देना चाहिये ।

गगनादि लौह के द्रव्य – अभ्रकभस्म, छोटी हर्रा, बहेड़ा, आंवला, लोह भस्म, कुड़े की छाल, सोंठ मिरच, पीपल, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शुद्ध मीठातेलिया, सुहागे की खील, सज्जी खार, दालचीनी, इलायची, तेजपात, वंगभस्म, सफेद जीरा, स्याह जीरा समान भाग

बनाने की विधि—सब को कूट कर कपड़ छन कर लीजिये ।

अनुपान—गगनादि लौह की मात्रा ऊपर विधि से चटा कर आंवले के फलों का रस दो तोले, ३ मासे मधु मिलाकर देना चाहिये ।

(४) पिप्पली खंड—अत्यधिक निर्बलता, क्लम, शोष सोमस्राव की अधिकता, रक्तनुबन्ध, दाह, तृषा, भ्रम, वमन, मूर्च्छा आदि उपसर्ग दिखाई देने पर—यह औषधि अपूर्व गुण करती है ओजक्षय को तुरन्त दूर करने में समर्थ है ।

पिप्पली खंड के द्रव्य और बनाने की विधि—

पिप्पली १ सेर, ४ सेर दूध में पकावे मावा तैयार हो जाने पर पिप्पली को निकाल कर पीस लेवे मावे को खरा कर लेवे, ४ सेर शक्कर की चासनी तैयार करें बाद तज, पत्रज, इलायची, सोंठ, मिरच, पीपल, नारियल, खस, नागरमोथा, शुद्ध कपूर, जावित्री, केशर, मुलहटी, और तगर दो दो कर्ष अभ्रक १६ कर्ष मधु

१६ कर्ष २ सेर घृत इनके सहित मावा और पिप्पली को चासनी में डालकर मिला लेवे।

सेवन विधि—पिप्पली खंड को सेवन कर के आध पाव या पाव भर मन्दोष्ण गौदुग्ध पीना।

मात्रा प्रमाण—रोगिणी का बलाबल देख कर ३ मासे ६ मासे से १ तोला और दो तोले तक की मात्रा दे सकते हैं।

(८) कामदुधा—सोमस्राव की अधिकता, भ्रम, हाथ पांव में शीत बोध, मन्द ज्वर, आदि लक्षण प्रकट होने पर

कामदुधा के द्रव्य और बनाने की विधि—

मोती असली, प्रवाल असली, मोती की सीप असली, कौडी, शंख, इन प्रत्येक की भस्में, सोना गोंद, गुडुची सत्व सब समान भाग लेकर घोट कर रखें।

मात्रा प्रमाण—दो रत्ती

सेवन विधि—जीरा ३ मासे, शक्कर ३ मासे के साथ अथवा शहद के साथ चटाकर ऊपर से अडूसे का रस २ तोले, गौदुग्ध २ तोले, मधु ३ मासे मिलाकर ऊपर से पीने को देवे।

(९) जम्बु घन बटी—मूत्र ज्यादे परिमाण में आना, मूत्र त्याग की बारम्बार इच्छा आदि उपसर्ग दिखाई देने पर

जम्बुघन बटी के द्रव्य और बनाने की विधि—

जामुन की ताज़ी छाल लाकर कूटे और अठगुने जल में चौथाई क्काथ करे बाद में छानकर पकावे और लेह समान गाढ़ा करले बाद यह घन १ पौंड हो तो इसमें २॥ तोला रसौत, २॥ तोला छुहारा, २॥ तोला लोध, २॥ तोला आंवले का चूर्ण डालकर चने प्रमाण गोलियां बनावे

सेवन विधि और मात्रा—दो दो गोली सुबह दुपहर और शाम को आमले का स्वरस और मधु अथवा अशोकारिष्ट के साथ सेवन करावें।

(१०) सोम पंच भद्र—अडूसे के पत्ते, नागकेशर, जामुन की छाल, शिलाजीत, अशोक की छाल डेढ़ डेढ़ माशा प्रमाण में लेकर सोलह गुने जल में पकावे चतुर्थांश रहने पर छानले और ३ मासा मिश्री डेढ मासा मधु मिला कर दोनों काल दो दिन ७, १४

पथ्यापथ्य—सोम रोग की रोगिणी को गेहूँ की भूसी पुराने चावलों का भात, छोटे करेले, परवल, मूँग, गौदुग्ध आदि पथ्य में देना चाहिये। तेल खटाई, गुड, लाल मिरच, मैथुन, गरिष्ठ भोजन अपथ्यकर है।

एकलैम्प्सिया (Eclampsia)

डा० आशानन्द जी M.B.B.S. आयुर्वेदाचार्य वाइस प्रिंसिपिल आयुर्वेदिक कालिज लाहौर

यह एक अकस्मात् होने वाली व्याधि है, जो गर्भवती स्त्री को अथवा प्रसूतिका को होती है। यह प्रायः गर्भपात के समय होती है या प्रसूताके समय, कभी२ यह रोग गर्भावस्था में भी हो जाता है, जब कभी यह गर्भावस्था में हो तब इसके कारण गर्भपात हो जाता है। यह विचार किया जाता है कि गर्भ में एक विशेष प्रकार का विष उत्पन्न होता है जो माता के रक्त में प्रविष्ट होकर इस रोग के लक्षण उत्पन्न करता है।

परन्तु बहुत से आचार्यों का मत है कि विष गर्भ में उत्पन्न नहीं होता परन्तु गर्भाशय में ही उत्पन्न होता है। कई एक डाक्टरों का ऐसा भी मत है कि "विष" से कमल में (अर्थात्–जहां गर्भ नाल द्वारा गर्भाशय से लगा रहता है) विकृति हो जाती है और वहां की सेलें मरने लगते हैं।

जिनका विष रक्त द्वारा संचलन होता हुआ इस रोग के लक्षण उत्पन्न करता है। यद्यपि यह कहना इस समय कठिन है कि उपरोक्त में से कौनसा वास्तविक कारण है तथापि निःसंदेह इतना कहा जा सकता है कि विष गर्भ या गर्भाशय में से किसी स्थान पर उत्पन्न हो परन्तु उसका प्रभाव गर्भ पर भी पड़ता है तथा गर्भाशय पर भी पड़ता है इसके कारण से गर्भ प्रायः मर जाता है और यदि इसी कारण से गर्भपात या काल से पूर्व प्रसूत हो जाय तो मृत गर्भ उत्पन्न होता है। यह होना हमेशा ६ मास के बाद ही है प्राय ८वें तथा ९वें मास में ही होता है।

यहां यह प्रश्न उठ सकता है कि विष को उत्पन्न करने वाले कौनसे कारण हैं इस बात का यथार्थ उत्तर देना कठिन है—हालांकि यह देखा जाता है कि विबन्ध तथा चिन्ता मानसिक या शारीरिक लक्षण आहार की न्यूनता तथा स्वास्थ्य के नियमों के प्रतिकूल जीवन व्यतीत करने से यह रोग अधिकतर होता है।

एक बार जब यह रोग गर्भिणी को हो जाय उसके बाद फिर गर्भ स्थिती नहीं होती इसका कारण प्रायः यही होता है। स्त्री का आहार व्यवहार तथा आचारादि नियमानुकूल हो जाते हैं और वह पहले की अपेक्षा अधिक सावधान होकर रहती है।

यह विष रक्त में संचरण करता हुआ यकृत् और वक्कों के कार्य में बाधा डालता है इसलिये मूत्र में एल्ब्यूमन आने लगता है। सिर में चक्कर भी आने लगते हैं। यह विष वात संस्थान को क्षुब्ध करता है और इसी कारण आक्षेप के दौरे आते हैं। तथा मूर्छा हो जाती है।

लक्षण—

आक्षेपक रोग में अपस्मार वत वेग आने लगते हैं। परन्तु इन वेगों के आने से पूर्व कभी २ रोगीको

शिर: पीड़ा होती है यदि मूत्र परीक्षा की जाए तो उसके मूत्र में ऐलब्यूमन उपस्थित होती है।

वेग-जैसा ऊपर लिख आये हैं वेग हमेशा गर्भ के ६ मास बाद तथा प्राय अंतिम दो मासों में होते हैं। वेग अधिकतर प्रसूत काल में या प्रसूत से फौरन पहले होते हैं, अथवा बच्चा जनने के बाद ही उसी समय होते हैं

एक वेग (दौरा) १ या १॥ मिन्ट रहता है इस दौरे की अपस्मारवत तीन अवस्थाएं होती हैं।

१—इस वेग में आंखें ज़ोर से फड़कती हैं और कि मांस पेशियां जकड़ जाती हैं।

२—इसके बाद दूसरी अवस्था आती है जिसमें सारे शरीर की मांस पेशियां जकड़ जाती हैं और रोगी दण्डवत् हो जाता है।

रोगी के मुख से भाग आने लगते हैं श्वास रुका हुआ होता है तथा रंग नीला पड़ जाता है

३—इस अवस्था में शरीर की मांस पेशियां ढीली हो जाती हैं तथा श्वास शनैः२ पुनः वापिस आ जाता है।

परन्तु रोगी मूर्च्छावस्था में पड़ा रहता है आम तौर पर एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा, आक्षेप के वेग (दौरे) आते हैं।

कभी ऐसा भी होता है कि वेग एक दूसरे के बाद शीघ्र२ आने लगते हैं और कभी देर में आते हैं जब शीघ्र२ आने लगें तो मूर्च्छा अधिक होती है तथा परिणाम भयानक होता है रोगी प्रायः मर जाता है।

जब वेग देर देर में आते हैं तो परिणाम इतना भयानक नहीं होता यह नहीं कहा जा सकता कि कितने वेग के बाद मृत्यु होती है। कई रोगी तो कठिनता से दो वेगों को सह सकते हैं और कई बीस२ वेग के बाद भी बच जाते हैं।

रोगीकी अवस्था तब भयानक समझनी चाहिए जब हृदय कमज़ोर हो जाय और फुफसों में रक्त संचार के कारण तरल एकत्रित हो जाये। तथा ताप जो पहले स्वस्थ रेखा तक था चढ़ कर १०४ डि० तक पहुंच जाऐ नाड़ी की गति बहुत तीव्र और अति दुर्बल हो जाती है।

इन लक्षणों से साधारण से साधारण वैद्य भी रोग की भयानक अवस्था को जान सकता है। कभी२ इन लक्षणों के होते हुऐ भी रोगी बच जाता है।

बहुधा दृष्टि मारी जाती है या स्मृति जाती रहती है और बहुत अरसे तक नहीं आती। यह याद रखना चाहिये कि यदि गर्भपात के बाद वेग आने प्रारम्भ होवें तो प्रायः वेग मृदु तथा थोड़े आते हैं और वेग सुख साध्य होते हैं।

दारु,पाषाणभेद, धमासा, शिलाजीत, शतावर, सब को एक एक तोला लेकर चूर्ण तैयार कर प्रमाण मात्रा, १तोला लेकर १६ तोला पानी में चतुर्थांश गाढ़ा करे, डेढ़ मासा मधु डाल कर दोनों काल रोगिणी को देवे, दिन ७

(८) कीकर की फली का चूर्ण ३ मासे मधु घृत १॥ मासे मिलाकर दोनोंकाल देवे ऊपर से गौ दुग्ध मन्दोष्ण देवे दिन ७, १४

(९) जामुन के बीजों का चूर्ण १॥ मासा मधु मिलाकर चटावे ऊपर से मन्दोष्ण गौदुग्ध देवे. दिन ७, १४

सोम रोगकी रोगावस्थानुरूप चिकित्सा

चन्द्रप्रभावटी—सोम रोग के आरम्भ में जबकि रोगिणी को सोम स्राव की आशंका हो मात्रा एक२ गोली मन्दोष्ण दूध से दोनों काल देते ही तुरन्त गुण होता है, ३, ७, १४ दिन अवश्य देना चाहिये । चन्द्रप्रभा इस रोग की प्रधान औषधि है ।

(२) चन्द्रप्रभावटी—सोम का ज्यादा स्राव होने लग कर, बेखबरी में बहना, रोगिणी में रक्ताल्पता और बेचैनी होने पर चन्द्रप्रभा प्रमाण मात्रा एक२ गोली अशोकारिष्ट के साथ सेवन कराना। दिन १४, या २१ आशु गुण होकर रोग निर्मूल होगा बिल्कुल अनुभूत है ।

विशेष वक्तव्य-चन्द्रप्रभा, और अशोकारिष्ट आयुर्वेदीय ग्रन्थों में देख कर बना लेवें चन्द्रप्रभा शारङ्गधरोक्त प्रमेहाधिकार में कही हुई और अशोकारिष्ट भैषज्य रत्नावली से देख कर बना लेना चाहिये ।

(३) गगनादि लोह—रोगिणी को सोम रोग के साथ मूत्रातिसार हो जाने पर या मूत्र के साथ बार बार सोम निकलने पर रोगिणी के नख चेहरा रक्त से हीन दिखाई देने पर ६ मासे से १। तो० प्रमाण तक मात्रा शहद से दोनों काल रोगिणी को देना चाहिये ।

गगनादि लोह के द्रव्य – अभ्रकभस्म, छोटी हर्रा, बहेड़ा, आंवला, लोह भस्म, कुड़े की छाल, सोंठ मिरच, पीपल, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शुद्ध मीठातेलिया, सुहागे की खील, सज्जी खार, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बंगभस्म, सफेद जीरा, स्याह जीरा समान भाग

बनाने की विधि—सब को कूट कर कपड़ छन कर लीजिये ।

अनुपान—गगनादि लोह की मात्रा ऊपर विधि से चटा कर आंवले के फलों का रस दो तोले, ३ मासे मधु मिलाकर देना चाहिये ।

(४) पिप्पली खंड—अत्यधिक निर्बलता, कृशता, शोष सोमस्राव की अधिकता, ऋतुबन्द, दाह, तृषा, भ्रम, वमन, मूर्च्छा आदि उपसर्ग दिखाई देने पर—यह औषधि अपूर्व गुण करती है ओजक्षय को तुरन्त दूर करने में समर्थ है ।

पिप्पली खंड के द्रव्य और बनाने की विधि—

पिप्पली १ सेर, ४ सेर दूध में पकावे मावा तैयार हो जाने पर पिप्पली को निकाल कर पीस लेवे मावे को खरा कर लेवे, ४ सेर शक्कर की चासनी तैयार करे बाद तज, पत्रज, इलायची, सोंठ, मिरच, पीपल, नारियल, खरा, नागरमोथा, शुद्ध कपूर, जावित्री, केशर, मुलहटी, और तगर दो दो कर्ष अभ्रक १६कर्ष मधु

१६ कर्ष २ सेर घृत इनके सहित मावा और पिप्पली को चासनी में डालकर मिला लेवे।

सेवन विधि—पिप्पली खंड को सेवन कर के आध पाव या पाव भर मन्दोष्ण गौदुग्ध पीना।

मात्रा प्रमाण—रोगिणी का बलाबल देख कर ३ मासे ६ मासे से १ तोला और दो तोले तक की मात्रा दे सकते हैं।

(८) कामदुधा—सोमस्राव की अधिकता, भ्रम, हाथ पांव में शीत बोध, मन्द ज्वर, आदि लक्षण प्रकट होने पर

कामदुधा के द्रव्य और बनाने की विधि—

मोती असली, प्रवाल असली, मोती की सीप असली, कौडी, शंख, इन प्रत्येक की भस्में, सोना गेरू, गुडुची सत्व सब समान भाग लेकर घोट कर रखें।

मात्रा प्रमाण—दो रत्ती

सेवन विधि—जीरा ३ मासे, शक्कर ३ मासे के साथ अथवा शहद के साथ चटाकर ऊपर से अडूसे का रस २ तोले, गौदुग्ध २ तोले, मधु ३ मासे मिलाकर ऊपर से पीने को देवे।

(९) जम्बु घन बटी—मूत्र ज्यादे परिमाण में आना, मूत्र त्याग की बारम्बार इच्छा आदि उपसर्ग दिखाई देने पर

जम्बुघन बटी के द्रव्य और बनाने की विधि—

जामुन की ताज़ी छाल लाकर कूटे और अठगुने जल में चौथाई क्वाथ करे बाद में छानकर पकावे और लेह समान गाढ़ा करले बाद यह घन १ पौंड हो तो इसमें २॥ तोला रसौंत, २॥ तोला छुहारा, २॥ तोला लोध, २॥ तोला आंवले का चूर्ण डालकर चने प्रमाण गोलियां बनावे

सेवन विधि और मात्रा—दो दो गोली सुबह दुपहर और शाम को आमले का स्वरस और मधु अथवा अशोकारिष्ट के साथ सेवन करावें।

(१०) सोम पंच भद्र—अडूसे के पत्ते, नागकेशर, जामुन की छाल, शिलाजीत, अशोक की छाल डेढ़ डेढ़ माशा प्रमाण में लेकर सोलह गुने जल में पकावे चतुर्थांश रहने पर छानले और ३ मासा मिश्री डेढ मासा मधु मिला कर दोनों काल दो दिन ७, १४

पथ्यापथ्य—सोम रोग की रोगिणी को गेहूँ की भूसी पुराने चावलों का भात, छोटे करेले, परवल, मूँग, गौदुग्ध आदि पथ्य में देना चाहिये। तेल खटाई, गुड, लाल मिरच, मैथुन, गरिष्ठ भोजन अपथ्यकर है।

एकलैम्प्सिया (Eclampsia)

डा० आशानन्दजी M.B.B.S. आयुर्वेदाचार्य वाइस प्रिंसिपल आयुर्वेदिक कालिज लाहौर

यह एक अकस्मात् होने वाली व्याधि है, जो गर्भवती स्त्री को अथवा प्रसूतिका को होती है। यह प्रायः गर्भपात के समय होती है या प्रसूता के समय, कभी२ यह रोग गर्भावस्था में भी हो जाता है, जब कभी यह गर्भावस्था में हो तब इसके कारण गर्भपात हो जाता है। यह विचार किया जाता है कि गर्भ में एक विशेष प्रकार का विष उत्पन्न होता है जो माता के रक्त में प्रविष्ट होकर इस रोग के लक्षण उत्पन्न करता है।

परन्तु बहुत से आचार्यों का मत है कि विष गर्भ में उत्पन्न नहीं होता परन्तु गर्भाशय में ही उत्पन्न होता है। कई एक डाक्टरों का ऐसा भी मत है कि "विष" से कमल में (अर्थात्-जहां गर्भ नाल द्वारा गर्भाशय से लगा रहता है) विकृति हो जाती है और वहां की सेलें मरने लगते हैं।

जिनका विष रक्त द्वारा संचलन होता हुआ इस रोग के लक्षण उत्पन्न करता है। यद्यपि यह कहना इस समय कठिन है कि उपरोक्त में से कौनसा वास्तविक कारण है तथापि निःसंदेह इतना कहा जा सकता है कि विष गर्भ या गर्भाशय में से किसी स्थान पर उत्पन्न हो परन्तु उसका प्रभाव गर्भ पर भी पड़ता है तथा गर्भाशय पर भी पड़ता है इसके कारण से गर्भ प्रायः मर जाता है और यदि इसी कारण से गर्भपात या काल से पूर्व प्रसूत हो जाय तो मृत गर्भ उत्पन्न होता है। यह होना हमेशा ६ मास के बाद ही है प्राय ८वें तथा ९वें मास में ही होता है।

यहां यह प्रश्न उठ सकता है कि विष को उत्पन्न करने वाले कौनसे कारण हैं इस बात का यथार्थ उत्तर देना कठिन है—हालांके यह देखा जाता है कि विबन्ध तथा चिन्ता मानसिक या शारीरिक लक्षण आहार की न्यूनता तथा स्वास्थ्य के नियमों के प्रतिकूल जीवन व्यतीत करने से यह रोग अधिकतर होता है।

एक बार जब यह रोग गर्भिणी को हो जाय उसके बाद फिर गर्भ स्थिती नहीं होती इसका कारण प्रायः यही होता है। स्त्री का आहार व्यवहार तथा आचारादि नियमानुकूल हो जाते हैं और वह पहले की अपेक्षा अधिक सावधान होकर रहती है।

यह विष रक्त में संचरण करता हुआ यकृत् और वक्कों के कार्य में बाधा डालता है इसलिये मूत्र में ऐलब्यूमन आने लगती है। सिर में चक्कर भी आने लगते हैं। यह विष वात संस्थान को क्षुब्ध करता है और इसी कारण आक्षेप के दौरे आते हैं। तथा मूर्च्छा हो जाती है।

लक्षण—

आक्षेपक रोग में अपस्मार वत वेग आने लगते हैं। परन्तु इन वेगों के आने से पूर्व कभी २ रोगीको

शिरः पीड़ा होती है यदि मूत्र परीक्षा की जाए तो उसके मूत्र में ऐलब्यूमन उपस्थित होती है।

वेग-जैसा ऊपर लिख आये हैं वेग हमेशा गर्भ के ६ मास बाद तथा प्राय अंतिम दो मासों में होते हैं। वेग अधिकतर प्रसूत काल में या प्रसूत से फौरन पहले होते हैं, अथवा बच्चा जनने के बाद ही उसी समय होते हैं

एक वेग (दौरा) १ या १॥ मिन्ट रहता है इस दौर की अपस्मारवत तीन अवस्थाएं होती हैं।

१—इस वेग में आंखें ज़ोर से फड़कती हैं और कि मांस पेशियां जकड़ जाती हैं।

२—इसके बाद दूसरी अवस्था आती है जिसमें सारे शरीर की मांस पेशियां जकड़ जाती हैं और रोगी दण्डवत् हो जाता है।

रोगी के मुख से झाग आने लगते हैं श्वास रुका हुआ होता है तथा रंग नीला पड़ जाता है

३—इस अवस्था में शरीर की मांस पेशियां ढीली हो जाती हैं तथा श्वास शनैः२ पुनः वापिस आ जाता है।

परन्तु रोगी मूर्च्छावस्था में पड़ा रहता है आम तौर पर एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा, आक्षेप के वेग (दौर) आते हैं।

कभी ऐसा भी होता है कि वेग एक दूसरे के बाद शीघ्र२ आने लगते हैं और कभी देर में आते हैं जब शीघ्र२ आने लगें तो मूर्च्छा अधिक होती है तथा परिणाम भयानक होता है रोगी प्रायः मर जाता है।

जब वेग देर देर में आते हैं तो परिणाम इतना भयानक नहीं होता यह नहीं कहा जा सकता कि कितने वेग के बाद मृत्यु होती है। कई रोगी तो कठिनता से दो वेगों को सह सकते हैं और कई बीस२ वेग के बाद भी बच जाते हैं।

रोगीकी अवस्था तब भयानक समझनी चाहिए जब हृदय कमज़ोर हो जाये और फुफसों में रक्त संचार के कारण तरल एकत्रित हो जाये। तथा ताप जो पहले स्वस्थ रेखा तक था चढ़ कर १०४ डि० तक पहुंच जाऐ नाड़ी की गति बहुत तीव्र और अति दुर्बल हो जाती है।

इन लक्षणों से साधारण से साधारण वैद्य भी रोग की भयानक अवस्था को जान सकता है। कभी२ इन लक्षणों के होते हुऐ भी रोगी बच जाता है।

बहुधा दृष्टि मारी जाती है या स्मृति जाती रहती है और बहुत अरसे तक नहीं आती। यह याद रखना चाहिये कि यदि गर्भपात के बाद वेग आने प्रारम्भ होवें तो प्रायः वेग मृदु तथा थोड़े आते हैं और वेग सुख साध्य होते हैं।

प्रसूता का आक्षेप (Eclampsia)

(ले० श्रीमती डाक्टर प्रेमकुमारी जी)

मको आयुर्वेदीय ग्रन्थों में इस रोग का पूरा विवरण प्राप्त नहीं होता।

प्रसूतावस्था में योग्यता पूर्वक कार्य सम्पादन करने की आवश्यकता होती है ज़रा असावधानता से बड़े भयंकर रोग हो जाने की सम्भावना है प्राय प्रसूता को ज्वर आ घेरता है। प्रसूता का कोई रोग क्यों न हो सब ही बुरे हैं।

यहां मैं भी एक ऐसे ही रोग का वर्णन कर रही हूं इसे प्रसूत का आक्षेप (Eclampsia) कहते हैं। यह रोग प्रसूतावस्था में होता है इसमें स्त्री को एक दम बेहोशी होकर हाथ पैरों में ऐंठन तथा खिंचाव होने लगता है। कम आयु वाली स्त्रियों के ज्ञानतन्तु कमजोर होते हैं, जो कम उम्र में पहले पहल प्रथम बार बच्चा उत्पन्न होने को हो। कभी गुर्दों के रुग्न हो जाने से "यूरीया" रक्त में मिल जाये, चिन्ता, शोक, डरावने काण्ड सामने आने से यह रोग हो जाता है। प्रसव से ३ मास पूर्व भी यह रोग हो सकता है। साधारणतया इसमें यह लक्षण मिलते हैं। आंखों के सामने भुनगे से उड़ते हैं नेत्रों की बिनाई कुछ कम हो जाती है बुद्धि में भी विकार उत्पन्न हो जाते हैं। रोगी कुछ२ बहकी बातें करता है मस्तिष्क में चक्कर आते हैं।

यदि यह रोग गर्भिणी को होजाए तो शीघ्र उपाय करना चाहिये। एकदम दौरों को रोकना चाहिये।

यदि गर्भिणी के मुख पर शोथ हो तो मूत्र परीक्षा करके देखें कि मूत्र में "एल्बुमन" की मात्रा अधिक तो नहीं जा रही।

जब रोग का वेग प्रारम्भ होता है तब रोगिणी के शरीर में ऐंठन होने लगती है फिर मुख पर आकुंचन (खिंचाव) होता है। मुख मंडल विकृत हो जाता है नेत्र ऊपर को चढ़ जाते हैं चेहरा एक तरफ को खिंच जाता है अगर दौरे के समय दांतों के बीच में जीभ आ जाए तो कट जायगी।

गले की शिराऐं फड़कती हैं मुख का रंग नीला सा हो जाता है गले की शिराएं फूल भी जाती हैं पैर कड़ा सीधा डंडे के समान सीधा होता है सारे शरीर की मांस पेशियों में आकुंचन जल्दर होना प्रारम्भ हो जाता है।

इस समय स्त्री को मर्मान्त कष्ट होता है। मुख में भाग आते हैं यहां तक कि कुछ समय के लिये मरीज़ा का श्वास रुक सा जाता है। धीरे धीरे श्वास चलने लगता है श्वास फुनकार के साथ चलता है मानो पास में सर्प फुंकार मार रहा हो।

जब वेग शांत होता है स्त्री को वेग के समय कुछ भी ज्ञान नहीं रहता दौरे के बाद इस प्रकार उठती है कि सोकर उठी हो, वेग के समय में मर्मान्तक कष्ट सहे थे वे सब विस्मृत हो जाते हैं। वेग के शान्त होने पर मरीज़ा अपने आपको रोगमुक्त समझती है

यह वेग ३-४ मिनट रह कर शान्त हो जाते हैं जब वेग बार २ आक्रमण कर रहे हों तब स्त्री की अवस्था सोचनीय है। इसका बहुत शीघ्र प्रतीकार करना चाहिए क्योंकि पहले दौरे के बाद होने वाले वेगों के विराम के समय में मरीज़ा बेहोश रहती है।

यदि गर्भिणी को यह रोग हो जाए तब बच्चा मृत उत्पन्न होगा अगर रोग प्रसव के समय यकायक शुरू हो जाए तो प्रसव कालीन कष्ट अधिक होता है स्त्री की मांस पेशियों में खिचाव होने से बच्चा समय से पहले उत्पन्न हो जायगा।

इस रोग में ३।४ स्त्रियों में १ स्त्री मर जाती है। विशेषकर वेगके समय श्वास के अवरोध होनेसे

चिकित्सा—

मरीज़ा को एनिमा देकर पेट साफ कर देना चाहिये यदि दवा देने की ज़रूरत हो तो कम्पौन्ड जेलपकम्पौन्ड या पाउडर दें।

यदि स्त्री औषधि को निगल न सके तब "क्रोटन आईल" १ बू० इलाटिरियम शकर चौथाई ग्रे० में मिलाकर जिह्वा पर मल देना चाहिये।

क्लोरल हाइड्रेट २० ग्रे०
पोटास आयोडाइड २० ग्रे०

चार या पांच घन्टे के अन्तर से देना चाहिये निगल न सके तो एनिमा कर दें।

इस रोग का कारण—"यूरिया" न हो तो "मार्फीया,, तिहाई ग्रे० इंजकन त्वचा के नीचे करें। यदि सायानेसिस की दशा न हो तो "क्लोरोफाम" सुंघाना भी लाभदायक है।

मैं पहले बता चुकी हूं कि दौरे के समय जीभ दांतों के नीचे आजाने से कट सकती है।

इसलिये रोगी की देख भाल अच्छी रखनी चाहिये दांतों के नीचे एक "कार्क" रख दीजिए इस से जीभ सुरक्षित रहेगी।

किसीर डाक्टर के मत में प्रसव से पूर्व यदि यह रोग हो जाए तो अवश्यकता पड़ने पर शिशु बाहर निकाल देना चाहिये।

यदि मरीज़ा हृष्ट पुष्ट सबल है तो या मस्तिष्क की मांस पेशियों में आकुंचन हो, मुख मंडल नीला होगया हो, नाड़ी परीक्षा करनेपर भारी चलरही हो, शिराऐं फड़कती हों तो रक्त मोक्षण करदेनाचाहिये। रक्त मोक्षण में कितना रक्त निकाला जाऐ इस बातको देश काल परिस्थिति को देख भाल कर निश्चय करें।

कभी शिराओं को अंगुली से दबाने पर भी काम निकल जाता है।

शरीर में रक्त का वेग अधिक होने पर विरेचक औषधियां देकर पेट साफ कर देना चाहिये।

जब वेग शान्त हो जाऐ और विराम अवस्था में रोग फिर न दौरा करे इसलिए औषधियों का सेवन करते रहना अच्छा है।

फिर दौरे न हों इस लिऐ वात नाशक औषधियों का सेवन कराना चाहिए।

चिन्तामणि चतुर्मुख रस, वातकुलान्तक रस, चतुर्भुज रस, उन्माद गजकेशरी रस, कोई रस सेवन कराना चाहिए इन रसों को दशमूल-जटामांसी-अजवायन के क्वाथ के साथ देना चाहिए।

पुटासियम ब्रोमाइड २ ग्रे०
जिनसाई विलेरियानेट २ ग्रे०

दोनों की एक गोली बना कर दौरे को रोकने के लिए दी जा सकती है यदि ज्वर हो "कुनीन विलेरियन" मिश्रण दी जा सकती है।

क्लोरोसिस (Chlorosis)

श्रीयुत कविराज एस० ऐम० भारद्वाज
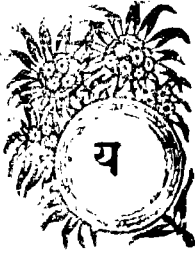
यह रोग १५ वर्ष से २५ वर्ष की युवतियों में अधिक होता है। यह एनीमियाका ही एक भेद है जिन स्त्रियों का मासिक धर्म खराब है प्राय: उनको होता है इसमें शरीर का वर्ण हरा तथा पीला सा होजाता इस कारण एलोपैथि में ग्रीनसिकनेस भी कहते हैं।

रक्त में रसायनिक परिवर्तन से ही यह अवस्था होती है। हमारे रक्त में दो प्रकार के अणु होते हैं १-रक्ताणु २-श्वेताणु।

इस रोग में स्वास्थावस्था में जितने रक्ताणुओं की आवश्यकता होती है उससे तिहाई कम हो जाते हैं तथा श्वेताणु बढ़ जाते हैं।

जिन स्त्रियों को कोष्ठवद्धता (कब्ज़) सदा बनी रहती है वे अधिक ग्रसित हो जाती हैं। कब्ज़ के कारण डाइजिसटिव ओरगेन्स में विगाड़ होने से शरीर के पालन में गड़बड़ी हो जाती है। व्यायाम न करना शोक, चिन्ता, मलिन गंदे घरों में रहना जिस में प्रकाश न पहुंचता हो आदि सहायक कारण हैं।

वास्तवमें इसका मूल कारण मासिक धर्म विकृत होना ही है गर्भाशय भी अपने स्थान से हट जाता है।

मरीज़ा शारीरिक तथा मानसिक किसी प्रकार का परिश्रम करना नहीं चाहती, हिस्टीरिया के वेग भी कभी२ सताते हैं। शिर: पीड़ा तथा चक्कर आते हैं भूक नहीं लगती कोष्ठवद्धता रहती है इस रोग से ग्रसित रोगिणी को मांस से अधिक घृणा हो जाती है अस्वाभाविक पदार्थों के खाने की अभिलाषा बनी रहती है मुख में दुर्गन्ध आने लगती है।

यकृत भी अच्छी प्रकार कार्य नहीं करता है मूत्र अधिक प्रमाण में बार२ आता है

मासिक धर्म बन्द हो जाता है। यदि अचानक हो भी तो फीके रंग का कम परिमाण में होता है। त्वचा फटी हुई खुरदरी होती है।

रोशनी तथा आवाज सह नहीं सकता हृदयोद्वेग (हौलदिल) दिल धड़कने लगता है। बाई तरफ की पसलियों में तथा पीठ शरीर के भिन्न२ स्थानों में दर्द होता रहता है।

श्लैष्मिक कला ढीली तथा फीकी हो जाती है। जीभ ढीली फैली हुई तथा किनारों पर दांतों के निशान पड़ जाते हैं नाड़ी शीघ्रगामी तथा बारीक चलती है मसूढ़े फीके ढीले पड़ जाते हैं।

आमाशय तथा आंतों से रक्तस्राव होता रहता है बाह्य लक्षणों से ऋतुकष्ट (Dysmenorrhoea) या श्वेत प्रदर (Leucorrhoea) का ही अनुमान होता है जब ऋतुकष्ट के बाद उपरोक्त लक्षण प्रगट होते हैं। यदि रोगिणी का हृदय कमज़ोर है तो "सिन्कोपी" से मृत्यु हो जाती है कभी "कोमा" मृत्यु का कारण होता है। ऋतु देर से तथा कम

कम होता है सर्दी लगती है नेत्रों की पलकें सूज जाती हैं आंखों के चारों तरफ काले दाग हो जाते हैं

चिकित्सा

रोगिणी के पथ्यापथ्य का ध्यान हमेशा रखें ऋतु खोलने को यह प्रयोग दें—

लोहभस्म १ तो०, हींग १ तो०, अमरबेल १ तो०, मेथी के बीज ६ मा०, एलुवा २ तो०, मुरमकी १ तो०, केशर ३ मा० सबको मिलाकर ३-३ र० की गोलियां बना लीजिए।

प्रातः सायं १-१ गोली देनी चाहिए। हमने इस रोग में तारामंडूर विशेष लाभप्रद देखा है। तारामंडूर के साथ कुमारीआसव या लौहासव १-१ तोला अवश्य देना चाहिए। जब लौहमिश्रित औषधियों से लाभ न हो तब लाइकर पुयसी १० बू० म्युसलेज के साथ काम में लावें क्योंकि यह फाईब्रिन को कम कर देता है। कुचला या इसका सत्व देना चाहिए।

लाइकर स्ट्रिकनियां ४ बू०
टिंचरस्टील १० बू०
जल १ औं०

यह एक मात्रा है इस प्रकार की मात्रा दिन में ३ बार देनी चाहिए।

कोष्ठबद्धता हो तो—

सल्फेट आफ आयरन २ ग्रेन
एक्सट्रैक्ट एलोज़ आधा ग्रेन

मिलाकर गोली बना कर यह एक मात्रा है ऐसी दिन में ३ बार देनी चाहिए। या

सल्फेट आफ आयरन २ ग्रे०
एलोज़ २ ग्रे०
सिनमैनपाउडर २ ग्रे०

मिला कर २ गोलियां बना लीजिए रात्रि को सोते समय सेवन करें।

पसली का दर्द शान्त करने के लिए-बेलाडोना-प्लास्टर दर्द के स्थान पर लगायें या इस तेल की मालिश करें—

धतूरे का स्वरस ऽ॥ मीठाविष ४ तो० अकरकरा १ तो० सोंठ २ तो० लसुन ४ तो० अफीम ६ मा० तेल आध सेर तेल सिद्ध कर लीजिए इस तेल की मालिश करनी चाहिए, यदि तेल गाढ़ा बनाना हो तो गर्म तेल में मोम २ तो० गेर दीजिए यह जम जाएगा

अपच को नष्ट करने के लिये विस्मिथ तथा डायल्यूट हैड्रोसायनिक एसिड काम में लाना चाहिए

आयुर्वेदीय यह दवा प्रयोग कर सकते हैं—चित्रकादिलोह-नवायसलोह, कुमारी आसव के साथ देना चाहिए।

अपने दो सिद्ध प्रयोग—

लोहभस्म १ तो०
चीता ,, ,,
त्रिफला ,, ,,
शु० कुचला ,, ,,

कूट कपड़ छन कर घृतकुमरी के रस में २ बार भावित कर २-२ र० की गोलियां बना लीजिए।

प्रातः एक गोली

दशमूलारिष्ट ६ मा० लौहासव ६ मा० सम जल मिला कर दोनों समय देनी चाहिए।

एलुवा १ तो०
लौहभस्म १ तो०
चीता १ तो०

उसारारेवन ६ मा०
हींग भुना १ तो०
अबहल १तो०

सब वस्तुओं को कपड़ छन कर घृतकुमारी के रस में ३-३ र०की गोलियां बना लीजिए इससे ऋतु साफ आयेगा ऊपर के आसव के साथ होम्योपैथिक चिकित्सा का थोड़ा दिग्दर्शन करेंगे।

आरसेनिक ३० शक्ति वाला-नेत्रकी शोथ अधिक क्षीणता प्यास की अधिकता पर दीजिए।

इग्नेशिया ३ शक्ति वाला चिन्तित रहना, शोक, प्रेम भय, असंतोष इन लक्षणों में दो।

नेट्रमर ३० शक्ति वाला-शोथ, बदहजमी मासिकधर्म का बन्द होना कमीर धोती पर धब्बा सा पड़ जाये बेचैनी घबराहट, इन लक्षणों पर दीजिए।

फेरम २ इस रोग की यह प्रधान दवा है प्रतिदिन दोनों समय १ ग्रेन अवश्य सेवन करें।

पलसाटीला ३०—ऋतु का सर्वथा बन्द होना, या कम होता हो, शीत लगजाने से मासिक धर्म बन्द होकर स्त्री कमज़ोर हो गई हो तब देना चाहिए।

केलकेरीयाकार्व ६—पैरों के शोथ श्वास लेते कष्ट हो उसमें देना चाहिए।

एसिडफास, सल्फर, सीपीया, प्लंबम, प्लाटीना यह औषधियां भी लक्षणों को देख कर दी जाती हैं प्रातः सूर्य से पहले भ्रमण करना चाहिए शीतल जल या समुद्र जल में नहाना चाहिए। धूप में घूमना भी लाभप्रद है, सुपच हलका भोजन दलियादि खाना चाहिए-खाली कभी नहीं बैठना कुछ न कुछ कार्य करते रहना ज़रूरी है।

होम्योपैथिक औषधियों में यह आवश्यक है कि लक्षणों को जान कर औषधि का प्रयोग किया जाए यदि बिना लक्षण मिलाए औषधि प्रयोग की जाएगी तो लाभदायक न होगी।

क्लोरोसिस में जल चिकित्सा भी अच्छा लाभ देती है, प्रातः काल सूर्य निकलने से पहले २० मिन्ट का मेहन स्नान (Sitz bath) शीतल जल में लिया करें तथा शाम को कटि स्नान (hip bath) ३० मिन्ट करें इससे विशेष लाभ होगा।

फल—सेब, अंगूर, नारंगी आदि अधिक सेवन किया करें बिना छना आटे की रोटी खाएं मोटे आटे के खाने से कब्ज़ नहीं रहेगा जो इस रोग का वास्तव में मूल कारण है। जल चिकित्सा धैर्य पूर्वक कुछ दिन तक लगातार करते रहना आवश्यक है।

उपदंश (Syphilis)

(ले० पं० नानकचन्दजी आयुर्वेदाचार्य)

निदान

यह रोग प्रायः उन पुरुषों वा स्त्रियों को होता है जो सदा ही दुष्टाचरण में प्रवृत रहते हैं; यथा- जो पुरुष हस्तमैथुन करते हों; नख अथवा दांत के मूत्रेन्द्रिय पर लग जाने से, मूत्रेन्द्रिय को भली प्रकार न धोने से अथवा अत्यन्त पशुवत व्यवाय सेवन से तथा दुष्ट योनि के संसर्ग से तथा अन्य विरुद्ध व्यवहार करने से अर्थात् क्षार तथा उष्ण जलादि से प्रक्षालन करने से तथा ब्रह्मचारिणी अर्थात् ऋतुमती के साथ गमन करने से यह रोग उत्पन्न हो जाता है।

यथाचोक्तं-

हस्ताभिघातान्नखदन्त पाताद धावनादत्युपसेवनाद्वा।
योनि प्रदोषाच्चभवन्तिशिश्नेपञ्चोपदंशाविविधापचारैः॥

बहुत अनुराग के असमञ्जस से मूत्रेन्द्रिय पर दन्त पात करना वा हस्तमैथुन से नखपात का होना; यह केवल रत्युत्कट के अनुराग से ऐसा हो जाता है इस में कोई नियम वा विधि नहीं चल सकती।

कामशास्त्रे-यथाचोक्तं-

"शास्त्रस्य विषय स्ताव धावन्मन्द रसा नराः।
प्रवृत्ते रति चक्रे तु न शास्त्रं नापि च क्रमः॥"

अर्थात् शास्त्र का विषय विचार तब तक रहता है जब तक मनुष्य मन्दरस रहे परञ्च रति चक्र की प्रवृत्ति हो जाने पर फिर मनुष्य का कोई ध्यान नहीं रहता, अतः उस समय जो न कर्तव्य हो वह भी कर डालता है। मैथुन का अत्यन्त सेवन भी इसका विशेष हेतु है "योनि प्रदोषात्" इति दीर्घ कर्कश रोगादि युक्त योनि का प्रयोग भी इसका विशेष कारण होता है।

संख्या सम्प्राप्तिः-

यहां उक्त श्लोक में उपदंश पांच प्रकार का वर्णन किया है परञ्च अभिघात जन्य उपदंश भी हो जाया करता है इसलिये कई आचार्य छः प्रकार मानते हैं परञ्च वह दोषज के अन्दर ही मान कर माधवाचार्य ने पांच ही उपदंश कहे हैं।

वातादिभेदेन-यथाचोक्तं-

"सतोदभेदैःस्फुरणैःस कृष्णैःस्फोटैर्व्यवसेत्पवनोपदंशं"

अर्थात् सुई के चुभने सरीखी, फटने सरीखी जिस में पीड़ा हो तथा स्फुरण हो और काले रंग की फुन्सियें हो जायें वह वायु से जानें।

पैत्तिकमाह—

"पीतैर्बहुक्लेदयुतैःसदाहैःपित्तेन, रक्तात्पिशितावभासैः
स्फोटैःसकृष्णैःरुधिरं स्रवन्तं रक्तात्मकंपित्तसमानलिङ्ग

अर्थात् पित्त से पीतवर्ण तथा बहुत क्लेदयुक्त तथा दाहयुक्त व्रण होते हैं।

रक्तेन यथा-

रक्त से मांसकी तरह लाल व्रणों को जो कालिमा

लिये हुए दाहयुक्त हों तथा पित्त के व्रणों के समान लक्षण वाले होते हैं जिनमें से रुधिर का स्राव होता रहे वह रक्तज जानना चाहिये ॥

कफेन यथा—

"सकुण्डरैः शोथयुतैर्महद्भिःशुक्लैर्घनैःस्रावयुतै कफेन"

अर्थात् कंडुयुक्त महान् शोफ से युक्त सफेद तथा गाढ़ा स्राव हो जिन में, ऐसे व्रणोंयुक्त उपदंश को कफ से जानो।

सान्निपातिकमाह—

'नानाविधस्रावरुजोपपन्नमसाध्यमाहुस्त्रिमलोपदंशम्'

अर्थात् जिस उपदंश में नाना प्रकार का स्राव और पीड़ा हों अर्थात् तीनों दोषों के समान स्राव तथा तोद भेद दाह कण्डु आदि लक्षण प्राप्त हों वह तीनों दोषों से उत्पन्न असाध्य उपदंश होता है"

असाध्यमाह—

"विशीर्ण मांसंकिमिभिःप्रजग्धंमुष्कावशेषं परिवर्जयेच्च"

अर्थात् जिस मनुष्य के लिंगेन्द्री का मांस फट गया हो तथा क्रिमियों से खाया गया हो और केवल मुष्क (अण्डकोष) शेष रह गये हों उसे त्याग देना चाहिये।

चिकित्साऽकरणे दोषमहा—

"संजाते मात्रेन करोति मूढः-
क्रियां नरो यो विषयं प्रसक्तः
कालेन शोथ क्रिमि दाह पाकै-
र्विशीर्ण शिश्नो म्रियते स ते न" ॥

अर्थात्-जो पुरुष प्रमाद से उत्पन्न होते ही उपदंश की चिकित्सा नहीं करता और विषयों में लगा रहता है तो उसका कुछ समयके अन्तर शोथ, क्रिमि, तथा दाह और पाक से मांस फट कर लिंगेन्द्री को नष्ट कर देता है और उसी से उसकी मृत्यु हो जाती है।

इतना ही नहीं यह रोग यदि चिरकालिक हो जाये तो इससे आगे उत्पन्न होने वाली सन्तान भी ग्रसित हो जाती है क्योंकि यह व्याधि संसर्गज मानी गई है इसमें पाश्चात्यवेत्ता एक प्रकार का क्रिमि कारण मानते हैं जिसको "Ireponema pallidum" कहते हैं, यह क्रिमि सन् १९०५ में मालूम किया गया था जिसको Dt. Schaudu ने कुछ समय के अनन्तर "Spirochoeta pallida" नाम दिया पुनः Dr C. Dobu के कुछ कारण देकर Spironema pallidum नाम से प्रसिद्ध किया। यह क्रिमि अत्यन्त सूक्ष्म होता है और इसका टैस्ट "dark ground illumination" से होता है। इसका वर्ण Bluish white होता है। तथा इसका आकार कार्क इसक्रयू की तरह होता है। लम्बाई ४ से २४ म्यू तक होती है ("म्यू" इञ्च का दस हजारवां भाग है(औसत इसकी ८ से १० म्यू तक होती है coil एक म्यू की होती है गहराई भी इतनी ही होती है यह अपने आप में बड़ा active होता है और शनैः शनैः चलता है और सुकड़ता है। इसको पहिली पहिल डा० noguchi ने cultivate किया था उस ने इसे Anaerobe स्वीकार किया था। यह क्रिमि देह के बाहिर थोड़ी देर जी सकता है और जल्दी सुखाने से मर जाता है। यह एक दूसरे के संसर्ग से देह में प्रविष्ट होता है। यह मनुष्य के वीर्य में जो दूषित उसमें होते हैं। यह आवश्यक नहीं कि जिस को सीफिलिस के ज़ख्म हों वह दूसरे को करदे। जिस पुरुष के सिफिलिस हुए दो वर्ष व्यतीत हो

गये हैं वह अन्य व्यक्ति को अल्पमात्रा में कौनटेजस होता है परन्तु पांच वर्ष के अनन्तर बिलकुल ही नहीं कर सकता। लेकिन माता अपने बच्चे को १८ वर्ष तक यह रोग दे सकती है।

Early course-इस व्याधि के उत्पन्न होने का समय १० दिन से ६० दिन तक स्वीकार करते हैं औसतन ४ से पांच सप्ताह तक हो सकती है। जिस स्थान में उक्त क्रिमि का प्रवेश होता है वहां एक छालासा पड़ जाता है जो प्याले की तरह गहरा होता है किनारे सख्त हो जाते हैं। छिलने पर रक्त जल्दी नहीं निकलता। लेकिन पानीसा निकलता है। इस पानी में क्रिमि अधिक पाये जाते हैं। इसमें पीड़ा कम होती है। इस रोग के पाश्चात्यवेत्ता तीन stages स्वीकार करते हैं

I. इस अवस्था में जखम जहां कहीं हो संसर्ग से ही होता है, शेफस् पर, विषय करने से तथा माता के स्तनों पर, बच्चे के दूध पीने से, दाई को तथा नरसों को जो इन छालों को साफ करती हैं उनके हाथों पर हो जाते हैं इसमें समीप होने वाले गुदूद फूल जाते हैं जैसे हाथ पर हो जायं तो कक्षा में, तथा ओष्ठ पर छाला चुम्बन आदि से हो तो गले के गुदूद और यदि मूत्रेन्द्रिय पर हो तो वंक्षण के गुदूद फूल जाते हैं। परन्तु इस में पीप नहीं पड़ती। रक्तटैस्ट करने पर इसका विशेष ज्ञान हो सकता है इन छालों को Hard chancar" कहते हैं॥

II. हार्ड शेंकर के तीन या चार सप्ताह बाद सारी देह में छपाकी की तरह निकलते हैं जो मटर के दाने से लेकर नखून तक हो जाते हैं इसका रंग गुलाबी होता है फिर कुछ समयके बाद लाल (Red) फिर भूरे (Brown) हो जाते हैं और पार्श्वों में अधिक होते हैं। फिर सारे देह में फैल जाते हैं। कुछ सप्ताह के अनन्तर हटने आरम्भ हो जाते हैं। निशान इनका कभी रह जाता है कभी बिल्कुल हट जाता है। यदि यह पुनः निकलें तो गोल आकार लिये होते हैं तब इसका नाम Roseolar rash कह देते हैं।
इसके अनन्तर यह "कबर" की तरह होकर अत्यन्त रक्त वर्ण के हो जाते हैं और सारे देह में फैल जाते हैं इनमें से एक का रंग रबर की तरह होता है तब दबाने से भी रबर की तरह ही मोलूम पड़ता है। इसमें यदि पस् पड़ जायें तो इसे पस्यूलर कह देते हैं। कभीर छिलका भी आ जाता है। कभीर "कोनिकल" हो जाते हैं। मुख में, केशों में हो जाते हैं। जोड़ों में पीड़ा और शोथ हो जाती है तथा Synovial membrances में जो जोड़ों की झीली स्नेह प्रदान करती है उसमें Synavitis रोग उत्पन्न हो जाता है। पीड़ा रात्रि में अधिक होती है कभीर न्यून हो जाती है मनुष्य चेष्टा रहित भी हो जाता है। Periostitis जो हड्डियों की झिल्ली है उसमें भी शोथ हो जाता है। छः मास के बाद दिमागी रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसमें ज्वर भी हो जाता है। कभी उतर जाता है कभी निरन्तर ज्वर रहता है। रक्त की कमी हो जाती है।

III. Popular इस अवस्था में सख्त होकर Nodular हो जाते हैं पांच या सात इकट्ठे होने पर इसका नाम gummatu होता है यह मटर के बराबर होता है एकके ऊपर दूसरा हो जाता है और रंग में ब्रोनिशरेड लाईन बन जाती है।

सर्प की तरह फैलते हैं। यह सब स्थानों पर हो सकते हैं परन्तु पेडुओं में अधिक होते हैं और माड़ों पर और नलुओं में भी होते हैं तथा जोड़ों के अगले भाग में भी हो जाते हैं इनका स्पर्श रबर की तरह होता है। और बढ़ कर नारंगी की तरह होते हैं पीड़ा कम होती है। चर्म से लेकर अस्थियों तक फैल जाते हैं बाजे वक्त फट जाते हैं और पानी बहने लगता है। और यह भी प्याले की तरह होता है इसमें नीचे भागसी देख पड़ती है सिफलिस अस्थियों में भी हो जाता है और टेर्स्टीकल में दोनों तरह की होती है यह सब पाश्चात्यवेत्ताओं के मत से वर्णन किया गया है। यह रोग फिरंग रोग से बहुत कुछ मिलता जुलता है जैसे वर्णन किया गया है यथा—माधव परि शिष्टे—

तत्सामान्यात्-फिरङ्गमाह—

"फिरङ्ग संज्ञके देशे बाहुल्ये नैव यद्भवेत्।
तस्मात्फिरङ्ग इत्युक्तो व्याधिर्व्याधि विशारदैः॥
गन्धरोगः फिरङ्गो ऽयं जायते देहिनां ध्रुवम्।
फिरङ्गिनो ऽङ्ग संसर्गा त्फिरङ्गिण्याः प्रसंगतः॥
व्याधिरागन्तुजो ह्येष दोषाणामत्र संक्रमः।
भवेत्तल्लक्षयेत्तेषां लक्षणै भिषजां वरः॥
फिरङ्गास्त्रि विधो ज्ञेयो वाह्य आभ्यन्तर स्तथा।
बहिरन्तर्भवश्चापि तेषां लिङ्गानि चक्ष्महे॥

वाह्य माह—

तत्र वाह्यः फिरङ्गः स्याद्विस्फोट सदृशोऽल्परुक्।
स्फुटितो व्रणवद्वैधैः सुख साध्योऽपि सो मतः॥

आभ्यन्तर माह—

सन्धिष्वाभ्यन्तरः स स्यादामवात इव व्यथाम्।
शोफं च जनये देव कष्ट साध्यो बुधै मतः॥

उभयात्मको यथा:—

बहिरन्तर्भवश्चापि क्षीणास्थो पद्रवैर्युतः।
व्याप्तो व्याधि मसाध्योय मित्याहुर्मुनयः पुरा॥

उपद्रवानाह—

"कार्श्यं बलक्षयो नासाभङ्गो वन्हेश्च मन्दता।
अस्थिशोषो ऽस्थिवक्रत्वं फिरङ्गो पद्रवा अमी।"

साध्यासाध्य विवेक माह—

बहिर्भवो भवेत्साध्यो नवीनो निरुपद्रवः।
आभ्यन्तरस्तु कष्टेन साध्यः स्याद यमामयः॥"

यह जितने लक्षण फिरङ्ग के आचार्य ने लिखे हैं वह प्रायः पाश्चात्य 'सिफलिस' से मिलते हैं जैसे ऊपर वर्णन कर आये हैं कि यह रोग संसर्ग से होता है तो यह भी गन्धरोग स्वीकार किया और कहा कि सम्पर्क से व प्रसंग से इसकी उत्पत्ति होती है। सिफलिस की तीन अवस्था स्वीकार की गई है यहाँ फिरङ्ग की भी वर्णन की है। इसमें भी स्फोटों का होना कहा है और उसमें भी हार्ड शकर कहे हैं; इसमें जैसे कृशता, बलक्षय, नासाभंग, अस्थिशोथ तथा अस्थि की वक्रता स्वीकार की गई है वैसे ही सिफलिस में भी अस्थि में होना स्वीकार किया है उसमें रक्त की न्यूनता, जोड़ों की पीड़ा आदि लक्षण किये हैं तो फिरंग में भी बलक्षय, और आमवाता-दियों का वर्णन किया है आमवात सन्धिशूल तथा शोथ का होना आवश्यकीय होता है। अतः इससे सिद्ध होता है सिफलिस ही फिरंग रोग है। अब अधिक न बढ़ा कर इसकी चिकित्सा को यथामति वर्णन करते हैं।

चिकित्सारम्भः—

सर्व प्रथम उपदंश के रोगी को यह ध्यान रखना

आवश्यक है कि वह किसी योग्य वैद्य की चिकित्सा में प्रवृत्त हो ताकि यह रोग अधिक न बढ़ जाये। क्योंकि इस रोग के चिकित्सक नाई, डूम, धोबी, सुनार आदि व्यभिचारी लोग सलाह देने वाले बहुत हैं। उनसे कभी लाभ नहीं होता प्रत्युत रोग भयंकर होकर मनुष्य मृत्यु का ग्रास ही हो जाता है।

उपदंश जिसको हुआ हो वैद्य उसे पहिले स्नेह पान करायें तदनन्तर स्वेद करायें तदनन्तर यदि रोग भयंकर हो तो ध्वज के मध्य भाग में से शिरावेधन करायें वा जौंक लगादें। पश्चात् वमन, विरेचन द्वारा संशोधन करें। इसप्रकार करनेमें शोथादि दोष शीघ्र शान्त होजाते हैं। इसको पकने नहीं देना चाहिये शोथके पकजाने से शिश्न नष्ट होनेका भय होता है।

क्काथ माह—परवल के पत्ते, निम्ब के पत्ते, त्रिफला, चिरायता, इनका क्काथ करके पीने से सब प्रकार का उपदंश नष्ट हो जाता है।

अन्यच्च—जिस व्यक्ति को पित्ताधिक्य हो तो उसे—गेरू, सुरमा, मजीठ, मुलहठी, खस, पद्म काष्ठ, रक्त चन्दन, कमल समान भाग लेकर क्काथविधि से पीवे तो लाभ होता है।

लेप—त्रिफले को जला कर भस्म बनालें यदि शुष्क व्रण हों तो मधु के साथ लगादें यदि गीले व्रण हों तो सूखा ही धुड़दें इससे शीघ्र लाभ होता देखा गया अथवा सुपारी को जला कर उसी तरह धुड़ने से लाभ होता है।

अन्यच्च—वट के कोमल कोंपल, अर्जुन, जम्बु की कोंपल, हरड़, लोध, हलदी, इनका लेप करने से सब प्रकार के उपदंश के व्रणों को साफ कर के रोपण कर देता है।

स्वरस—आम्र की छाल को पीड़न कर उसका स्व-रस २ तोला से ४ तोला तक प्रातः ४ पल बकरी के दुग्ध के साथ पीने से सात दिन में उपदंश के व्रणों को शान्त कर देता है।

प्रक्षालन माह—त्रिफला के काढ़े से अथवा भांगरे के रस से वा नीम की पत्ती से व्रणों को धोया जाय तो हितकर होता है।

चोबचीनी पाक—चोबचीनी का चूर्ण १२ पल, पिपली, पिपलीमूल, मरिच, सुएठ, दालचीनी, अकरकरा, लौंग, प्रत्येक १ तोला, सब के बराबर चीनी की चासनी बनाकर सब द्रव डालें, पीछे मोदक बना कर ६ मासे से १ तोला तक नित्य प्रातः मधु घृत में मिलाकर खाने से उपदंश, व्रण, कुष्ठ, वात रोग, भगन्दर, धातुक्षयादि दूर करता है।

वटी—जंगी हरड़ १ पल, शुद्ध नीला थोथा ४ मासे, दोनों को नीम्बू रस की सात दिन भावना देकर पीसें पीछे १ रत्ती से ३ रत्ती तक नित्य सेवन कराने से उपदंश शीघ्र ही नष्ट होता है इस पर शालि चावल, गोधूम, मूँग, गौ का घृत, पथ्य सेवन करना चाहिये अनुभव सिद्ध है।

अन्यच्च—यदि भयंकर तथा चिरकालिक उपदंश हो तो संखिया की भस्म चौथाई रत्ती मक्खन में या हलवे में रख कर सात दिन तक दें तो शीघ्र लाभ होता है परञ्च सब प्रकार से पथ्य रखना चाहिये अर्थात् गोधूम, मूँग का यूष बिना लवण के घी मिलाकर देना चाहिये।

पथ्यापथ्य—दिन का सोना, मूत्र का वेग रोकना, भारी अन्न, मैथुन, गुड़, थकावट का काम, अम्ल पदार्थ, तक्र, लवण यह सब पदार्थ उपदंश वाला न खाये वा सेवन करें, गोधूम, मूँग, चना, घृत मधु यह सब हितकर होते हैं।

श्रीमती डा० कुमारी लीला वती L. D. Sc. देहली

"स्नातिका—कन्या महा विद्यालय जालंधर"

आप महिला समाज में सर्व प्रथम दन्त चिकित्सक (Dental Surgeon) हुई हैं

दांत और उनकी रक्षा के उपाय

(श्रीमती डा० लीलावती L. D. S. (दंत चिकित्सक देहली)

जब हम एक दुर्ग या नगर को सुरक्षित रखना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि उसके मुख्य-द्वार की भली प्रकार रक्षा की जाय। क्या इसी सिद्धान्त पर अनुकरण कर हम ईश्वर प्रदत्त धरोहर (शरीर) की चौकसी करते हैं ?

मुंह शरीर रूपी-दुर्ग का मुख्य द्वार है। अतः जिस बुद्धिमानी से एक होशियार सेनापति अपने दुर्ग के मुख्य द्वार की रक्षा करता है। ठीक उसी तरह हमें भी अपने मुख्य द्वार-मुंह की सावधानी से रक्षा करनी चाहिये। क्योंकि—

(क) मज़बूत दांतों के बिना खाना चबाया (Mastication) नहीं जा सकता।

(ख) अच्छी तरह चबाये बिना भोजन हज़म (Digest) नहीं हो सकता।

(ग) भली प्रकार हज़म हुए बिना रस (assimilate) नहीं बन सकता

(घ) बिना रस बने शरीर में पोषण (nutrition) नहीं आ सकती।

(ङ) बिना (Nutrition) मनुष्य स्वस्थ नहीं रह सकता।

(च) स्वास्थ्य बिना जीवन क्या है ?

अतः मज़बूत और सुन्दर दांतों का होना शरीर की उन्नति के लिये अवश्यम्भावी है यदि हम अपना मुंह और दांत भली प्रकार स्वच्छ रखें तो दांतों को कीड़ा (carries) लगने की बहुत कम सम्भावना रह जाती है। इस प्रकार के साफ सुथरे मुंह में पायोरिया Pyorrhea alveolaris जैसा घातक रोग उत्पन्न होने नहीं पाता। और ना दांत उखड़वाने की नौबत आती है। मुंह और दान्तों की रक्षा चाहने वाले पाठकों को निम्न लिखित अत्यन्त सरल नियमों पर ध्यान देना चाहिये।

(१) जैसे ही बच्चा दांत निकाले उसे नर्म सा ब्रश और कोई हल्का कीटाणु शोधक (Mild antiseptic) पौडर से दांत साफ रखने सिखाये जायें।

(२) नीम तथा बबूल की दातुन के ब्रश से प्रति दिन दांत साफ करने चाहियें। परन्तु बड़े शहरों में ताज़ी दातुन मिलनी कठिन हो तो दान्तों का ब्रश tooth brush का व्यवहार करना चाहिये इसे हर रोज़ साबुन से धोकर धूप में सुखा डालना आवश्यक है। सप्ताह में एक बार Steralize (खोलते हुए पानी में धोना) कर लेना चाहिये।

(३) Pastes की अपेक्षा Powders अच्छे समझे गये हैं यह दान्तों को साफ भी खूब रखते हैं। इस प्रकार के विज्ञापनों पर कभी मत जाइये कि अमुक Paste micro organism (कीटा-

णुओं) को नष्ट कर देता है।

(४) हमारा मुख Test Tube नहीं है और नाहीं इसे दवाखाना बना लेना चाहिये। परन्तु किसी भी अच्छे मंजन से प्रातः उठने पर और रात्रि को सोने से पहिले दान्त साफ कर लेने चाहिये प्रत्येकभोजन के पश्चात भी दांतों की तथा मुंह की सफाई लाभ दायक है।

(५) यदि दांतों की बनावट प्रथक-प्रथक हो। अर्थात दो दांतों में खाली जगह हो तो Tooth picks से उन्हें साफ रखना चाहिये। इस कामके लिये Dental Floss silk बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। छीदे दांतों में अन्न के टुकड़ों का फसे रहना स्वाभाविक है। यदि इन्हें साफ न किया जाये तो अन्न सड़ जाता है। और नाना प्रकार की बीमारियों को फैलाने में सहायक बनता है।

(६) खाना खाने के पश्चात कुल्ली करना अत्यन्त आवश्यक है। इस अभ्यास को सदैव कायम रखना चाहिये। इस से मुंह के अन्दर दुर्गन्ध तथा लेस नहीं रहती।

(७) पान खाने की लत दान्तों के लिये हानिकारक सिद्ध हुई है। इससे दान्तों पर मैल जमजाता है और मसूढ़े पीछे हट जाते हैं। जिससे दांतों की जड़े नंगी होकर हिलने लगती है। सब से बड़ी हानि यह है कि पान के व्यसनी अपने थूक का बहुत ही दुरुपयोग करते हैं भोजन पचाने के लिये थूक (saliva) एक आवश्यक वस्तु है। हर घड़ी मुंह चलाने से थूक आवश्यकता से अधिक व्यय होता है। और पाचन शक्ति मन्द पड़ जाती है।

अतः यदि इन बातों पर ध्यान रखेंगे तो बहुत सी बीमारियों से बचे रहेंगे। क्योंकि ७० फी सदी रोग मुंह द्वारा शरीर पर आक्रमण करते हैं। इसी लिये शरीर रूपी दुर्ग के मुख्य-द्वार की रक्षा करना हमारा धर्म है।

मैं यहां कुछ दन्त मंजनों का विवरण दे रही हूं जो चिकित्सा दृष्टि से लाभदायक हैं वैसे तो आज कल भारत के बाज़ारों में हज़ारों प्रकार के दंतमंजन आपको मिल जाऐंगे परन्तु उनमें आपको क्या लाभ ये दन्तमंजन लाभ की अपेक्षा हानिही करते है।

१—प्रेसी पिटेटिड चॉक	८५ हिस्सा
पाउडर्ड एलम	५ ,, ,,
मैंथल या थाईमोल	१० ,, ,,

सब औषधियों को खरल करके रख लीजिए प्रति दिन ब्रश से करना चाहिए।

२—पाऊडर्ड चारकोल	४ हि०
एलम	१ ,,
सादा नमक (सेंधा)	१ ,,
थाइमोल	१ ,,

सब वस्तुओं को पीसकर रख लीजिए प्रतिदिन करना चाहिए

३—एसिड कार्बोलिक	२ ग्रेन
थाइमोल	१ ,,
आइल गौलथेरिया	५ बू०
सोडा बाईकार्ब	१ ड्राम
कैलसियम कार्बोनेट	१ औंस

सब को मिला लेना चाहिए यह अच्छा मंजन है।
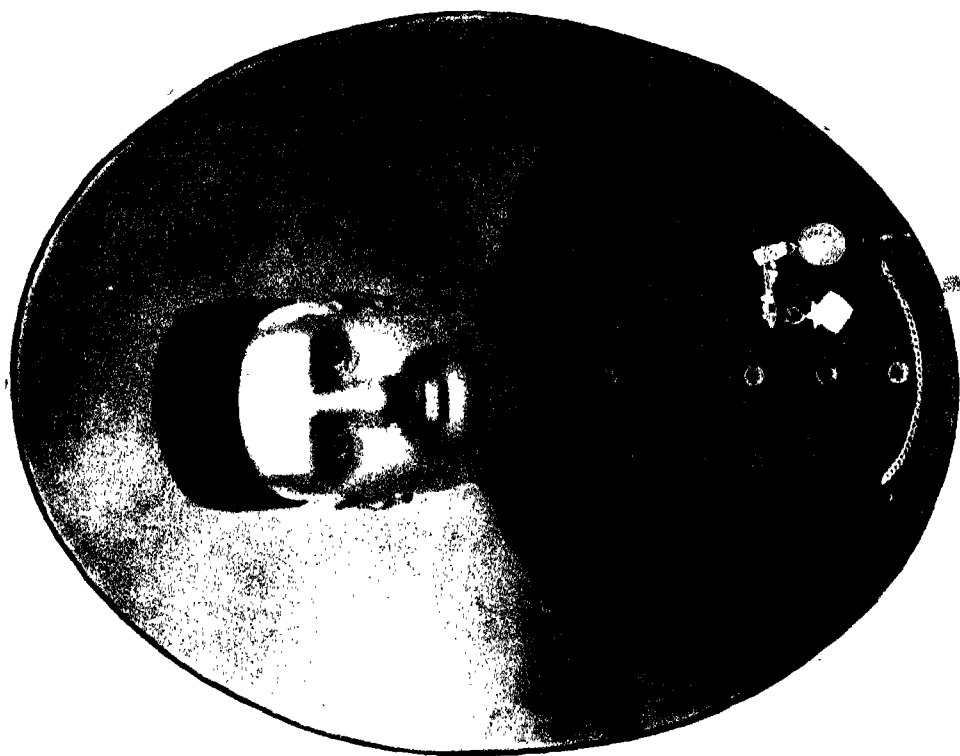
आयुर्वेदाचार्य पं० देवकीनन्दन जी वैद्यराज.
रसकेसरी देहली

श्री पं० ठाकुर दत्त जी वैद्य भूषण
सम्पादक "देशोपकारक" लाहौर
आप वैद्यक तथा एलोपेथिक के विद्वान तथा
प्रसिद्ध लेखक हैं

नवजात शिशु का पालन

[लेखक—कविविनोद वैद्यभूषण पं० ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य संपादक "देशोपकारक" लाहौर]

रतवर्ष में लाखों बालक एक वर्ष की आयु तक पहुँचने से पहिले ही कालग्रस्त हो जाते हैं। माता पिता की असावधानी लाखों बालकों को सदा के लिये निर्बल और रोगी बना देती है। अतः बालकों के पालन पोषण के सम्बन्ध में पर्याप्त ज्ञान होना आवश्यक है।

नवजात शिशु के पालन के विषय में सब से पहले यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि माता का दूध ही उसके लिये सर्वोत्तम आहार है। इसका प्रमाण यह है कि उसमें शक्कर, घृत और पनीर उचित मात्रा में वर्तमान रहते हैं और वह माता के स्तनों से उस समय तक निकलता रहता है जब तक कि बालक दूसरी प्रकार का आहार पचाने के योग्य नहीं होता। इस लिये माता का दूध ही बालक को पिलाओ। यदि माता स्वस्थ है और साधारण स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का पालन करती है तो पर्याप्त दूध उसके स्तनों से निकलेगा परन्तु यदि आहार की कमी से दूध पर्याप्तमात्रा में न हो तो उसे उत्तम दूध बढ़ाने वाले पदार्थ यथा—शाली चावल, साठी के चावल, गोधूम, रामतोरी, नारियल, कसेरू सिंघाड़ा, शतावर, विदारीकन्द, जीरा इत्यादि खिलाना चाहिये।

दुग्ध परीक्षा

यह बात स्मरण रक्खो कि शिशु के स्वास्थ्य के लिये माता का स्वस्थ होना आवश्यक है। उसे कोई ऐसा कार्य्य न करना चाहिये जिससे उसका स्वास्थ्य बिगड़े। आहार उसका बहुत सादा और शीघ्र पचने योग्य होना चाहिये क्योंकि भारी आहार के सेवन और अयोग्य विहार करने से उसका शरीर दोषयुक्त हो जायगा और इस प्रकार दुग्ध भी दोषयुक्त हो कर शिशु के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालेगा। अतः कभी २ माता के दूध का निरीक्षण करते रहना चाहिये। दूध को पानी में डालने से यदि वह ऊपर को तैरने लगे और उसका स्वाद कसैला हो या पानी में उसके पीले २ दाने अथवा लकीरें हो जावें और स्वाद खट्टा हो अथवा डूब जाये और चिकना हो तो समझ लो कि दूषित है। ऐसी अवस्था में उसे शुद्ध करना चाहिए।

दूषित दुग्ध की चिकित्सा

दूषित दूध को स्वच्छ करने के लिये माता मूँग का यूष पिये और भारंगी, देवदारु, बच, अतीस को पीस कर सेवन करे, अथवा पाठा, मूर्वा, मोथा,

चिरायता, सौंठ, इन्द्रयव, शारिवा, कुटकी इन का क्वाथ पीने से दूध शुद्ध हो जाता है। अथवा परवल, नीम, पीतशाल, देवदार, पाठा, मूर्वा, गिलोय, कुटकी, सोंठ, इनका काढ़ा करके पीने से भी दुग्ध शुद्ध हो जाता है। शुद्ध होने पर जो दूध पानी में डाला जायेगा तो उसमें मिल जायगा, अन्य रंग का न होगा, तार न छूटेगा, श्वेत, शीतल और पीलापन लिये होगा।

धाय

यदि माता को कोई भयंकर रोग हो अथवा वह राजयक्ष्मा, कण्ठमाला आदि रोगों से ग्रसित हो तो उसे कभी बालक को दूध न पिलाना चाहिये। ऐसी अवस्था में उचित है कि शिशु को दूध पिलाने के लिये धाय रक्खी जाये। धाय के रखने में बड़ी देख भाल की आवश्यकता है। भाव प्रकाश में लिखा है कि बालक के दुग्ध पिलाने के वास्ते जो धाय रक्खी जाय तो नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना उचित है:—अपनी जाति की, मध्य आयु वाली, अच्छे स्वभाव वाली और सदैव प्रसन्न रहनेवाली हो, दुग्ध स्वच्छ हो, बालक उसका जीता हो, बहुत हित करने वाली हो, आज्ञानुसार चलने वाली हो, थोड़ा मिलने पर भी शान्त रहने वाली हो, अच्छी कुल की नेक माता पिता की सन्तान धोखा और दगा न करने वाली हो और बालक को अपने बालक के समान रखने वाली हो।

आगे लिखते हैं:—जो स्त्री शोक से व्याकुल, क्षुधा से दुखी, थकी सी, रोगिणी, लम्बे और टेढ़े स्तनों वाली, अजीर्ण में भोजन करने वाली, छोटे कामों में लगी रहने वाली, दुःखी और चंचल हो ऐसी धाय का दुग्ध पीनेसे बालक रोगी होजाताहै।

महामुनि आत्रेयजी ने धाय के जो लक्षण लिखे हैं उनमें उपरोक्त बातों के अतिरिक्त नीचे लिखी बातों का भी वर्णन है। कोई भी अंग हीन न हो, रूपवती हो, कोई भी बुरी आदत न हो, अच्छे देश में उत्पन्न हुई हो, जिसके मस्तिष्क में कोई दोष न हो आप स्वच्छ रहने वाली हो और मलिनता से घृणा करती हो, जिसके ओष्ठ छोटे हों, जिसके कुच बहुत ऊँचे, अधिक लम्बे, अथवा अधिक मोटे अथवा बहुत ही छोटे न हों, जिसके स्तनों की चोंची अच्छी और अधिक हो और सुगमता से शिशु के मुख में आ जावे और दुग्ध पिया जावे।

इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य रक्षा के सम्बन्ध में जो बातें माता के लिये लिखी गई हैं वह धाय के लिये भी ध्यान देने योग्य हैं।

अन्य दुग्ध

यदि कोई मनुष्य धाय रखने की सामर्थ्य न रखता हो और माताका राजयक्ष्मा इत्यादि के कारण दूध पिलाना भी उचित न हो तो इसका उपाय इस के सिवाय और कुछ नहीं है कि बाज़ारी दूध या कृत्रिम आहारों पर उसको पाला जावे। अतः हम नीचे इस विषय में कुछ लिखते हैं:—

बच्चों का आहार दूध ही है। जब स्त्री का दूध प्राप्त न हो तो गाय, बकरी, आदि का देना चाहिए। सब जीव धारियों के दूध में वही परमाणु होते हैं जो स्त्री के दूध में हैं। और यही होना चाहिए क्योंकि आशय एक है। दूध में प्रत्येक शरीर के पालन कारी परमाणुओं का होना आवश्यक है। हड्डियां, मांस, चर्म, बाल बनने के लिये पृथक २ परमाणु

चाहियें। स्त्री के दूध और दूसरे दूध में केवल उन परमाणुओं की न्यूनाधिकता का अन्तर है।

गाय का दूध इस मतलब के वास्ते सम्पूर्ण संसार में अधिक व्यवहृत होता है। इसी वास्ते इसे गो माता कहा जाता है। इससे उतर कर हमारे यहां बकरी या अंगरेज़ गधी का दूध सेवन कराते हैं।

डाक्टर जार्ज ब्लैक के कथनानुसार गाय के दूध से बकरी का दूध और बकरी के दूध से गधी का दूध अधिक हितकर है। गधी का दूध स्त्री के दूध से बहुत मिलता है परन्तु इसका प्राप्त करना बहुत कठिन है। हमारे ऋषियों मुनियों ने गधी के दूध को बालकों के लिये हितकर तो बताया है परन्तु यह भी लिख दिया है कि यह बुद्धि को मन्द करने वाला है बकरी के दूध की गन्ध अच्छी नहीं होती इस लिये गाय का दूध ही सर्वोत्तम है।

हमारे यहां यदि लाचारी की हालत में अन्य दूध देना पड़ता है तो गाय का दूध दिया जाता है। इस दूध को पीने वाला बालक प्रायः उदर रोगों में ग्रस्त रहता है। इस विकार को चतुर वैद्यों ने पानी मिला कर दूर कर दिया है। पानी मिलाने से इसमें शक्कर की मात्रा बहुत कम हो जाती है, इस वास्ते मीठा थोड़ा मिलाया जाता है जिससे स्त्री के दूध जितना मीठा रहे। अधिक मीठा डालना हानिकारक है। दूध में पानी मिलाने के विषय में डाक्टरों की लगभग एक ही सम्मति है और वह यह है कि :—

"बालक उत्पन्न होने के पश्चात् १० दिन तक तिहाई भाग दूध और दो तिहाई उबलता हुआ पानी और थोड़ा सा मीठा मिलाकर बालक को दे सकते हैं। इस के पश्चात् ४, ५ मास तक दूध के साथ उतना ही उबलता हुआ पानी (हर मास पानी थोड़ा करते जावें) और थोड़ा सा मीठा मिला कर देना चाहिए। और पांचवें छटे महीने से केवल दूध देना चाहिए।

इस आयु में बालक अनीर पचाने के योग्य हो जाता है। १० दिन से लेकर ५ मास तक दूध में मिलाने वाले पानी की मात्रा को आयु के अनुसार न्यूनाधिक कर लेना चाहिये। यथा एक मास तक अर्द्धांश से कुछ अधिक पानी और तीसरे महीने अर्द्धांश से कुछ कम रखना चाहिये।"

कृत्रिम आहार

विलायत में दूध के अतिरिक्त कई एक दूध से बनी हुई खूराकें भी बनी जाती हैं। नैसल्ज़ मिल्क मैलिन्ज़ फूड, न्यूफ़ फूड ग्लेक्सो आदि बहुतसी हैं और हमारे देश में लाखों रुपये का व्यय होता है। संभव है किसी अवस्था में अच्छी भी हों परन्तु प्रत्येक अवस्था में दूध के स्थान में इनका सेवन बहुत बुरा है। वास्तव में यह सब बालक को खराब करने वाली हैं। इनके बनाने की विधि बहुत आसान है। कार्बोनेट आफ़ सोडा २ माशा, पानी एक छटांक में मिला रक्खें फिर ताज़ा दूध पाव भर, चीनी आध सेर को अग्नि पर चढ़ा कर इसमें उस पानी को डालते रहें। यह एक बुरादा सा बन जायेगा। आगे उसी की कई प्रकार की चीज़ें बनाकर डब्बों में बन्द करके दूध का भी दादा इसे बना देते हैं।

बाहिर का दूध पिलाने की रीति

अब जब कि बाहर का दूध देने का वर्णन कर दिया है तो इस दूध को पिलाने की विधि भी लिखनी चाहिये। कई मातायें कटोरी या चम्मच से बालक को दूध पिलाती हैं। यह दोनों विधियां ठीक नहीं हैं

प्रकृति ने बालक के लिये दूध चूसना ही नियत किया है। इस में विशेष गुण हैं। धीरे २ चूसने से आमाशय में दूध धीरे२ जाता है। इस प्रकार से बहुत सा लुआब (मुख लार) उत्पन्न होता है, जो दूध से मिलकर आमाशय में जाकर उसके पचने में सहायता देता है। अस्तु जब हमने बाहर का दूध भी दिया है तो भी ऐसा उपाय करना चाहिये कि दूध चूस कर बालक भीतर ले जाय।

इसके लिये पुराना सरल उपाय तो बत्ती के द्वारा पिलाने का था परन्तु विलायत वाले कला कौशल में बड़े निपुण हैं। वहां धन भी बहुत है और वहां कई स्त्रियां अपने बालकों को स्वयम् दूध नहीं पिलातीं, निदान उन्होंने उसके लिये भी विधि निकाल दी।

एक बिल्लौर की बोतल होती है जिसके मुख पर एक रबड़ की चूची लगी होती है। इस रबड़ की थैली में दूध के जाने के लिये एक महीन सुई के बराबर छिद्र होता है। यथोचित दूध जैसा कि पहले वर्णन हुआ इस बोतल में डाला जाता है और बालक के मुख में वह चूची दे दी जाती है। वह उस को इस प्रकार चूसता है जैसे कि स्तन और उसी प्रकार थोड़ा२ दूध उसके मुख में जाता है। अस्तु धीरे २ दूध भीतर जाने और मुख लार के मिश्रित होने का उद्देश्य सिद्ध हो जाता है।

इसके विषय में कुछ बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये जो नीचे लिखी जाती हैं:—

(१) बोतल कांच की होनी चाहिये जो कि हर समय स्वच्छ की जा सके और कष्ट भी न हो। हर समय जो मात्रा दी जाय उसका अनुमान हो सके और देखा जा सके कि दूध धीरे२ पिया जा रहा है दूध पी चुकने के बाद ही उसे बालक के मुख से प्रथक कर देना चाहिए।

(२) बोतल के आगे जो चूची होती है वह अधिक से अधिक ।॥ इञ्च बोतल के सिर से आगे होनी चाहिये क्योंकि अधिक लम्बी तालू को चुभेगी। इस चूची को बोतल के सिर के साथ धागे से बांध रखना चाहिए और ॥ इञ्च आगे रखना चाहिए लम्बी होने से बालक अपने मसूड़ों में दबा लेता है और दूध आना बन्द हो जाता है।

(३) बाज़ार में जो चूचियां मिलती हैं उनमें एक छिद्र नीचे होता है परन्तु मातृ स्तन में छोटे २ छिद्र बहुत से होते हैं। अतः यदि सुई की नोक के सामने दो चार छिद्र कर लिए जायें तो उत्तम हैं। यदि छिद्र बड़ा होने के कारण दूध बहुत जाने लगे तो चूची के भीतर छोटा सा स्पंज का टुकड़ा रख देना चाहिए।

(४) यह चूचियां बड़े से बड़े मूल्य की अच्छी लेनी चाहिए। कतिपय निकृष्ट प्रकार की भी घुलकर हानि पहुंचाती हैं। और कई प्रकार की बाज़ारों में बिकती हैं।

(५) प्रत्येक बार दूध पिलाने के पश्चात् यदि कुछ शेष रह जाये तो उसे फिर के वास्ते नहीं रखना चाहिए वरन् फेंक देना चाहिए। या किसी पशु को पिला देना चाहिए।

(६) प्रतिवार दूध पिलाने के पश्चात् चूची को खोलकर चूची और बोतल दोनों को खूब साफ करना चाहिये। आवश्यकता हो तो गर्म पानी से करें। चूचियां दो रक्खी जा सकती हैं। एक तो धोकर सूखने रखदें, दूसरी को बोतल में लगादें, फिर उस को धोकर पहिली को लगादें। इस प्रकार हर बार करते रहें।

गर्भ-काल

(श्री चतुरसेन जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य)

तने दिन में स्त्री रजस्वला होती है, उससे दसगुने समय तक उसको गर्भ धारण करना होता है, अर्थात् साधारणतया २८ वें दिन स्त्री रजस्वला होती है और २८×१०=२८० दिन तक वह गर्भ धारण किए रहती है, परन्तु यह मालूम करना कठिन हो जाता है कि किस दिन गर्भ स्थिर हुआ। ऐसी अवस्था में रजस्वला होने के बाद प्रथम पुरुष-सहवास होने के दिन से ही अनेक बार हिसाब लगाया जाने पर २७२ और २८३ के बीच में किसी न किसी दिन में प्रसव हुआ सिद्ध हुआ है। अतः २८० दिन का गर्भ-काल मानना अनुचित न होगा। प्रायः यह भी देखा गया है कि स्त्री-पुरुष की जितनी आयु कम होती है, उतने ही कम दिनों में बच्चा हो जाता है और आयु बढ़ जाने पर गर्भ-काल भी बढ़ जाता है। आमतौर पर ९ मास समाप्त होने पर १० वें मास बालक जन्म लेता है। गर्भ-स्थिति होने के साढ़े चार मास बाद जरायु कमर की हड्डियों से ऊँचा उठ जाता है और बच्चे की गति-प्रगति गर्भिणी स्वयं अनुभव करने लगती है, अर्थात् पेट में बच्चा हिलने-डुलने लगता है। गर्भ-स्थिति का ठीक निश्चय न होने पर इस हिलने-डुलने के समय से हिसाब लगाया जा सकता है। यथा—

गर्भ-स्थिति	बालक का हलन	प्रसव
१ जनवरी	२० मई	८ ऑक्टोबर
१५ ,,	३ जून	२० ,,
३१ ,,	१९ ,,	७ नवम्बर
१ फरवरी	२० ,,	८ ,,
१५ ,,	४ जुलाई	२२ ,,
२८ ,,	१७ ,,	५ दिसम्बर
१ मार्च	१८ ,,	६ ,,
१५ ,,	१ अगस्त	२० ,,
३१ ,,	१७ ,	५ जनवरी
१ एप्रिल	१८ ,,	६ ,,
१५ ,,	१ सितम्बर	२० ,,
३० ,,	१६ ,,	५ फरवरी
१ मई	१७ ,,	६ ,,
१५ ,,	१ ऑक्टोबर	९ ,,
३१ ,,	१७ ,,	७ मार्च
१ जून	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ नवम्बर	२२ ,,
३० ,,	१६ ,,	६ एप्रिल
१ जुलाई	१७ ,,	७ ,,
१५ ,,	१ सितम्बर	२१ ,,
३१ ,,	१७	७ मई
१ सितम्बर	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ फरवरी	२२ मार्च
३० ,,	१७ ,,	७ जुलाई
१ ऑक्टोबर	१८ फरवरी	२२ ,,
१५ ,,	३ मार्च	२२ ,,
३१ ,,	१९ ,,	७ अगस्त
१ नवम्बर	२० ,,	८ ,,
१५ ,,	२ एप्रिल	२२ ,,
३० ,,	१८ ,,	६ सितम्बर

१ दिसम्बर	१९ ,,	७ ,,
१५ ,,	३ मई	२० ,,
२१ ,,	१४ ,,	७ आक्टोबर

इस नक़शे की सहायता से आप स्वयं शेष तारीखों का भी हिसाब लगा सकती हैं।

प्रसव

बालक का माता के जरायु से बाहर निकल कर आना प्रसव (Delivery) कहलाता है। जिस स्त्री को प्रसव हो, वह प्रसूता (जच्चा) कहलाती है। प्रसूताको प्रसवमें थोड़ा बहुत दर्द होता है। जो स्त्रियाँ हृष्ट-पुष्ट होती हैं जिनका स्वास्थ्य अच्छा होता है, चक्की पीसना, चरखा कातना, भोजन बनाना इत्यादि घर के प्रायः सभी काम अपने ही हाथ से करती हैं अथवा अन्य कोई शारीरिक व्यायाम करती रहती हैं। जिनकी कमर व पेडू की हड्डियाँ अच्छी बनी होती हैं और जहाँ जरायु का मुख रहता है, वहाँ की हड्डियाँ तंग न होकर चौड़ी होती हैं, जो शान्त-स्वभाव, मेहनती होती हैं तथा ठीक उमर में जिनको प्रसव होता है, उनको प्रसव पीड़ा बहुत कम होती है। इसके विपरीत अमीर घरानों की आलसी व नाजुक स्त्रियाँ जो घरके काम-काज करने चूल्हा-चक्की को हाथ लगाने में भी अपनी हतक समझती हैं, या तंग कपड़े पहनती हैं, किसी प्रकार का शारीरिक व्यायाम नहीं करतीं, जो कम उमर अर्थात १६ वर्ष से नीचे बच्चा जनती हैं या बहुत बड़ी उमर में पहला बच्चा जनती हैं यथा२०-२२ वर्ष से ऊपर, जिनकी कमर की हड्डियों का घेरा तंग होता है, आजकल की झूठी सभ्यता में रहनेवाली स्त्रियाँ जो खाना-पहनना, रहन सहन सभी में प्रकृति के विरुद्ध व्यवहार करती हैं, जो प्रसव से यों ही डरा करती हैं, जो चंचल होती हैं, उनको यह पीड़ा अधिक होती है।

प्रसव की तैयारी

सूतिकागार—जिस कमरे अथवा कोठरी में प्रसूता को रक्खा जाता है, वह 'सूतिकागार' कहलाता है। प्रसव की पीड़ा आरम्भ होने से लेकर कम से कम १५ दिवस तक और सम्भव हो, तो ४० दिन तक प्रसूता को यहीं रहना होता है। सूतिकागार जिस कमरे को बनावें, उसमें निम्नलिखित बातों का पूरा ध्यान रक्खें—

१—हवा के आने जाने का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए। जहाँ प्रसूता की चारपाई हो उस जगह सीधी हवा नहीं आनी चाहिए लेकिन कमरेमें हर समय ताजा हवा के आने और गन्दी हवा के निकास का पूरा प्रबन्ध होना चाहिए।

२—किसी प्रकार की दुर्गन्ध कमरे या उसके पास न हो। यदि पैदा हो तो तुरन्त दूर कर दी जाय।

३—यदि जाड़े का मौसम हो तो कमरे में इस प्रकारसे आँच रक्खी जाय कि उसका धुआँ तो चिमनी द्वारा बाहर निकलता रहे और उसकी गर्मी से कमरे की वायु गर्म होती रहे। कोयलों के जलाने से जो गैस निकलती है, यदि वह कमरे के किवाड़ बन्द करने पर अन्दर ही रहेगी, तो बच्चे का दम घुट जायगा और माता को भी बेहोश कर देगी।

४—प्रकाश का भी समुचित प्रबन्ध रहे।

५—कमरे की छत जहाँ तक हो सके, ऊँची और कमरा कम-से-कम इतना बड़ा हो कि जिसमें ४-५ चारपाइयाँ बिछाकर भी चलने फिरने की जगह रहे।

६—कमरे का ढाल अच्छा हो और मोरी अवश्य हो।

७—कमरे में न तो तुरन्तकी की हुई सफ़ेदी हो, न काला धुआँ और जाला लगा हुआ हो। अच्छा हो, यदि ४-५ मास पूर्व ही सफ़ेदी करवा कर नीला-थोथा डालकर हलका रंग करवा दिया जाय।

८—सूतिकागार में एक जच्चा का पलङ्ग और एक चारपाई। एक-दो कुर्सी तथा जच्चा के पीने का पानी व पहनने के कपड़ों के अतिरिक्त और कोई वस्तु काठ-कबाड़, असबाब आदि नहीं होना चाहिए यदि हो सके, तो दीवारों पर राम-जन्म, कृष्ण-जन्म बुद्ध-जन्म तथा महापुरुषों के चित्र अथवा जङ्गल, झरने, बाग़ों आदि के सुन्दर दृश्य लगा दें। उत्तम वाक्य भी लिखे हों तो हानि नहीं जानवरों की तस्वीरें या भयानक चित्र कोई न हों चित्रों की संख्या भी कमरे के अनुसार अधिक न हो।

सूतिकागार में कौन-कौन रहें ?

चतुर दाई के अतिरिक्त एक चतुर, अनुभवी, प्रसन्न-मुख स्त्री सदा प्रसूता के पास रहे, तो अच्छा है। दो-चार बच्चों की माँ हो, तो उत्तम है। यह स्त्री प्रसूता की माता या प्रसूता से अधिक प्रेम रखनेवाली निकट सम्बन्धिनी नहीं होनी चाहिये, क्योंकि अधिक प्रेम, अधिक चिन्ता और आवश्यकता से अधिक घबराहट पैदा कर देता है। लेकिन बिल्कुल ही हृदय-शून्य, कठोर-हृदया स्त्री न होनी चाहिए। स्त्री को चाहिए कि प्रसूता को प्रसन्न रखने का प्रयत्न करे, उसे अच्छी-अच्छी बातें सुनावे, उस पर नाराज़ न हो, उसके सामने भयानक घटनाओं का या किसी कष्टमय घातक प्रसवका वर्णन कदापि न करे प्रसूता की माताका उस कमरेमें तो नहीं, परन्तु उस घरमें रहना आवश्यक है इससे प्रसूता को तसल्ली रहती है।

सूतिकागार के अन्दर अन्य स्त्री-पुरुषों को नहीं जाना चाहिए। बाहर से ही बातचीत कर लेनी चाहिए। इधर हिन्दुओं में जो छुआछूत का नियम इस संबन्ध में है, वह उचित सीमा में बिलकुल ठीक है। सूतिकागार को रोज साफ़ कर देना चाहिए।

दाई कैसी हो ?

धात्री का अपनी विद्या में चतुर होने के अतिरिक्त हँसमुख, चतुर, मजबूत और स्वच्छ होना आवश्यक है। दाई का लालची होना बुरा है। यदि कोई दाई ऐसी हो, तो प्रथम तो उसे बुलाना ही नहीं चाहिए और यदि बुला ली गई हो, तो फिर उसकी मजदूरी देने में संकोच न करना चाहिए। दाई न तो बहुत बूढ़ी हो और न बिलकुल छोटी उमर की हो। यदि विवाहिता और दो-तीन बच्चों की माँ हो, तो अच्छा है। दाई को पहले से ठीक कर रखना चाहिए और समय से पहले ही बुला लेना चाहिए। नवाँ मास आरम्भ होने के बाद चौथे-पाँचवें दिन दाई को दिखा देना चाहिए। दाई को अपना काम शुरू करने के पूर्व कपड़े बदल लेने चाहिएँ। उसे उचित है कि स्वच्छ कपड़े पहन ले और हाथ-पाँव गरम जल से धो ले, बालों को ढककर बाँध ले।

प्रसव की पूर्व सूचना

प्रसव होने के कोई १५ दिन पूर्व ही प्रसव की सूचना मिल जाती है। जरायु जो बढ़ता बढ़ता इन दिनों नाभि के ऊपर तक पहुँच जाता, लगभग १५ दिन पूर्व कुछ नीचे को खिसक जाता है। और नाभि के थोड़ा नीचे तक भी पहुँच जाता है। कलेजे छाती पर जो बोझ और दबाव-सा मालूम हुआ करता है, वह हलका पड़ जाता है। गर्भिणी खुलकर साँस लेने लगती है। पेट कुछ पटक जाता है और हर प्रकार गर्भिणी को आराम मालूम होता है। सुस्ती बिलकुल नहीं रहती। यहाँ तक कि गर्भिणी का जी घर का काम-काज करने को चाहता है।

परन्तु सावधान ! इस समय मामूल से अधिक कोई काम न करना चाहिए।

दूसरे

स्त्री की भग कुछ भरी हुई-सी मालूम होने लगती है और कुछ श्लेष्म-सा निकलने लगता है, कभी श्वेतप्रदर-जैसा स्राव होने लगता है और कपड़ा लेने की आवश्यकता होती है, यह अच्छा चिह्न है। समझना चाहिये कि प्रसव में अधिक पीड़ा न होगी।

तीसरे

कुछ स्वभाव में परिवर्तन मालूम होता है। या तो तबियत में कुछ फ़िक्र अधिक मालूम होती है या कुछ संयम व सावधानी अधिक बढ़ जाती है।

इन उपर्युक्त लक्षणों से समझ लेना चाहिये कि अब प्रसव १०-१५ दिन में होनेवाला है और प्रसव की समस्त तैयारियाँ पूरी कर लेनी चाहिए।

वस्तुएँ जो प्रसव के समय हाज़िर रखनी चाहिएँ—

(१) आध सेर स्वच्छ बढ़िया रुई और धुले हुए स्वच्छ वस्त्र के कई टुकड़े, जो सफ़ेद हों रक्त को पोंछने-सुखाने और प्रसूता को शुद्ध करने के लिये तथा प्रसूति के नीचे बिछाने के लिये।

(२) ३-४ नरम तौलिए। (उपर्युक्त रुई, कपड़े और तौलिए कारबोलिक लोशन में भिगोकर सुखा लिए गए हों। एक हिस्सा कारबोलिक एसिड में चालीस हिस्सा पानी मिलाने से कारबोलिक लोशन बन जाता है।)

(३) मोटे कपड़े की १॥ गज़ लम्बी और १४इं० चौड़ी दो-तीन पट्टियाँ जो प्रसव के बाद माता के पेट से लपेट दी जाँय। जिसकी चौड़ाई में छातियों से नीचे पेड़ू तक और लंबाई में दो फेरे कमर के गिर्द आ जाँय। जरूरत पड़ने पर पलँग की चादर लंबाई में दो पर्त करके काम में लाई जा सकती है।

(४) महीन फलालेन की ५ इंच चौड़ी और २ फ़ीट लम्बी दो पट्टियाँ बच्चे के पेट से लपेटने के लिये होनी चाहियें।

(५) एक नरम फ़लालैन का टुकड़ा जिसमें बच्चा लपेट लिया जाय। (यह भी कारबोलिक लोशन में भिगोकर सुखाया हुआ हो।)

(६) नाल काटने को एक तेज़ क़ैंची (कारबोलिक लोशन में धुली हुई।)

(७) एक ब्रश और कारबोलिक साबुन दाई के हाथ धोने के लिये।

(८) चार औंस लाइसोल दाई के हाथ धोने के लिये (एक सेर पानी में एक चम्मच लाइसोल डालना।)

(९) दो औंस बोरिक एसिड का पाउडर, नाल काटकर बुरकी देने के लिये।

(१०) कुछ छोटे-छोटे कपड़े के टुकड़े कारबोलिक लोशन में उबले हुए। प्रत्येक टुकड़ा ३ इंच लम्बा और इतना ही चौड़ा हो और उसके बीच में नाल का टुकड़ा सुगमता से घुस सकने योग्य छेद होना चाहिए।

(११) चार-छ औंस जल में घुले हुए बोरिक एसिड की एक बोतल। बच्चे की आँख और माता के स्तन आदि धोने के लिये।

(१२) आधे या एक औंस की आर्जिरल लोशन की बोतल जिसमें १०% आर्जिरल हो, बालक के नेत्रों को स्वच्छ करने के लिये।

(१३) कुछ औंस वैसलीन और मीठा तेल बच्चे के शरीर को स्वच्छ करने के लिये।

(१४) कुछ सफ्टीपिन माता और बालक के पेट की पट्टी में काम आने के लिये।

(१५) कुछ स्वच्छ कपड़े बच्चे के पोतड़ों के लिये।

(१६) दो टुकड़े सुतली या टेप ६ या ८ इंच लंबे। साधारण १०--१२ धागे बटकर यह बनाया जा सकता है।

(१७) एक उगालदान।

(१८) पलंग की ३ धुली हुई चादरें, कम्बल आदि।

(१९) शहद व गर्म पानी आवश्यकता के लिये।

(२०) थोड़ी-सी ब्राण्डी और एक सोने की शलाका बच्चे को चटाने के लिये।

यह तमाम सामग्री एक मेज़ या आलमारी में सुन्दरता से सजा कर रखनी चाहिये। इसके सिवा थोड़ी उम्दा कस्तूरी, चन्द्रोदय और एक एमोनिया स्मैलिंग साल्ट भी रख लेना चाहिये। वस्त्र और सामग्री जो बच्चे और माता के लिये एकत्रित किये जाँय, उनके विषय में यह पूर्ण सावधानी रखी जाय कि वे धूल से सर्वथा सुरक्षित रहें, और अच्छी तरह स्वच्छ हों। प्रायः बालक प्रसव के दो सप्ताह बाद ही मर जाते हैं और प्रसूता को भी भयानक रोग आ घेरते हैं। इसका मुख्य कारण प्रसव के समय की अस्वच्छता है।

बहुधा गन्दे चीथड़ों का उपयोग रक्त सोखने के लिये किया जाता है। यह बड़ी भयानक बात है।

साफ़ बर्तनों में कई बाल्टी पानी उबला और स्वच्छ वस्त्रों से ढका हुआ तैयार रहना चाहिये।

प्रसव

प्रसव के मुख्य लक्षण दो हैं—प्रथम योनि से रक्त-द्रव-स्राव, दूसरा प्रसव वेदना। सच्ची वेदनायें ठहर-ठहर कर उठती हैं। प्रथम १५ से २० मिनट के अन्तर से और फिर ज्यों-ज्यों प्रसव-काल निकट आता है, शीघ्र आने लगती हैं। प्रसव निकट है या नहीं, इसको परीक्षा स्पर्शन द्वारा करनी चाहिये।

प्रथम स्पर्शन

गर्भाशय के मुन्ड पर छूकर देखो। यहां भ्रूण का चूतड़ रहता है। यह स्थान सिर की अपेक्षा कोमल प्रतीत होगा।

द्वितीय स्पर्शन

भ्रूण के चूतड़ को माता की पीठ की ओर दबाओ।

तृतीय स्पर्शन

गर्भाशय के निचले भाग में अंगूठे और उंगलियों से भ्रूण का सिर पकड़ने की चेष्टा करो।

चतुर्थ स्पर्शन

गर्भिणी के मुख की ओर पीठ करके दोनों हाथों से गर्भाशय के निचले भाग के पास रखकर वस्ति-गुहा की ओर ले जाने का यत्न करो।

प्रसूति-गृह में तमाशाई स्त्रियों की भीड़ नहीं रहनी चाहिये। एक दाई और दो और स्त्रियाँ उसकी सहायता के लिये काफ़ी हैं।

स्त्री को गर्म जल से स्नान कराओ। पेड़ू और योनि को साबुन और गर्म पानी से अच्छी तरह धो दो। प्रसव काल में जल्दी जल्दी मूत्र उतरता है। यदि ८ घंटे से प्रसविणी को दस्त नहीं हुआ है, तो उसे एनीमा दे दो, ताकि कोठा साफ़ हो जाय।

पहली पीड़ा में प्रसविणी इच्छानुसार बैठ या लेट सकती है, परन्तु पीड़ा के अधिक बढ़ जाने पर पलङ्ग पर टांगें ऊपर करके लेट जाना चाहिये। इस समय उसका खड़ा रहना या बैठना हानि कारक है।

दाई को अपनी बाँह और हाथ को अच्छी तरह लाइसोल के पानी से साफ कर लेना चाहिये। उसकी बाँहें कोहनी तक खुली रहनी चाहिए। उङ्गलियों के नाखून कटे होने चाहिए। और उनके भीतर का मैल साफ कर देना चाहिए। उसे स्वच्छ वस्त्र पहनना चाहिए।

जनने में सहायता के विचार से प्रसूति को कोई औषधि न पिलाओ। अकारण इस काम के लिये औषध मत दो। उसके पेट को रस्सी या पलङ्ग की चादर से मत बांधो। दाई को उसकी योनि में उंगलियाँ भी न डालनी चाहिए। ऐसा करने से स्त्री को छूत का जहरीला असर हो जाने का भय है, जिससे प्रसूत ज्वर आने लगेगा।

जब पानी की थैली फूटती है, तब बालक का सिर योनि के मुंह से निकलता हुआ दिखाई देगा। यदि कुछ गड़बड़ नहीं है, तो बालक का मुँह नीचे माता की पीठ की ओर होगा और प्रथम बार खोपड़ी दीखेगी। यदि सिर जल्दी से निकलेगा, तो योनि बुरी तरह चिर जाने का भय है। इस लिए ज्यों ही सिर दीख पड़े, उस पर उंगलियां लगाओ, और प्रत्येक पीड़ा में मजबूती से नीचे को दबाओ। इस प्रकार से बालक का सिर छाती की ओर झुकता है। इस कारण वह योनि के छेद द्वारा सुगमता से निकल आता है। इस प्रकार से सिर का निकलना कुछ मिनटों तक रुक जाता है। पीड़ा के उठने में जो समय का अन्तर होता है, उसमें स्नायु स्वयं बढ़ते तथा संकुचित होते हैं। जब यह खुलना प्रारम्भ होता है, तब सिर को बाहर निकालने देना आवश्यक है। इस विधि से अंग फटने का भय कम होगा।

सिर निकलने के पीछे थोड़ा ठहरकर शरीर बाहर आता है। ज्योंही सिर निकले, उँगली बालक की गर्दन पर लगा कर देखो कि नाल तो गले में नहीं लिपटी है। यदि नाल लिपटी है, तो बच्चे को जल्द निकालो और यदि नाल गले में लिपटी नहीं है तो एक स्वच्छ कपड़े अथवा सोखने वाली रुई से बालक के नेत्रों को स्वच्छ करो और पोंछो। और उसका मुँह खोलकर मुंह को भी स्वच्छ करो।

जब बालक उत्पन्न हो गया, तब उसे फलालैन में लपेट दो। उसके मुँह को रक्त में लोट-पोट न होने दो आर्जिराल लोशन की बूंद उसकी आँखों में डालो। यह न हो, तो बोरिक एसिड की बूँद नेत्रों में डालो। जन्म के समय बालकों के नेत्रों को न धोने से ही हजारों बालक अन्धे हो जाते हैं।

बालक के प्रसव होने पर जब तक दाई बच्चे का प्रबन्ध करे, तब तक दाई की सहायक स्त्री को माता के पेट पर हाथ धरके गर्भाशय को थामे रहना चाहिये। पेट पर से टटोलने से गर्भाशय एक कड़ा ढेला-सा प्रतीत होता है, उसे धीरे से दबाना चाहिए। खबरदार रहो—एक क्षण-भर भी हाथ ढीला न रहने पावे, इसी प्रकार दबाने से गर्भाशय सिकुड़ेगा और रक्त बंद होगा।

ज्यों ही नाल में धड़कन बन्द होजाय, तो उसे बाँधकर काट दो। जो सुतली या फीते इस काम के लिये तैयार कर रक्खे हैं उन्हें काम में लो। सावधान होकर खूब कसकर १॥ इंच छोड़कर नाल पर धागा बाँध दो। यह धागा और कैंची फिर एक बार कारबोलिक लोशन में उबाल लो। यदि इन चीजों में जरा भी दोष रह गया, तो बच्चे को भयानक रोग लग जाने का भय है।

नाल काटकर उस पर जरा-सा बोरिक एसिड बुरक दो इसके बाद वह टुकड़ा कपड़े का रक्खो, जो

छेद करके प्रथम ही रख छोड़ा है उसके छेद से नाल को निकाल लो, फिर कपड़ा नाल पर लपेट दो, फिर एक पट्टी बालक के चारों ओर बाँध दो कि वह नियत स्थान पर रहे और उसे दाहिनी करवट किसी नरम और सूखी जगह पर लिटा दो।

अब प्रसविणी की तरफ ध्यान दो। यदि उसका ठीक उपचार हो गया है, तो शीघ्र ही आँवल गिरेगी। बच्चा पैदा होने पर दर्द थोड़ी देर को बन्द होजाता है, और फिरसे दर्द होकर आँवल गिरती है। प्रायः प्रसव के २० मिनट बाद आँवल गिरती है। नाल के छोर को खींचो मत। न इस बात से भय करो कि नाल माता के पेट में चली जायगी। सिर्फ गर्भाशय को दृढ़ता से दबाए रहो, पर अधिक बल न लगाओ। इससे प्रवाह बंद हो जायगा, और आँवल गिर जायगी। पर यदि आँवल न गिरे, तो बच्चेदानी को इस भाँति दबाओ, मानो आँवल को बच्चेदानी से निचोड़ कर निकालते हैं। ३-४ बार दर्द में आँवल गिर जायगी।

इसके बाद भी गर्भाशय को १०-१५ मिनट दबाए रखना चाहिए, जिससे बच्चेदानी अच्छी रीति से सिकुड़ जाय। इसके बाद जो पट्टी तैयार रक्खी है, सावधानी से पेट पर बाँध देनी चाहिए और उसे पिन से अटका देना चाहिए। पट्टी खूब कस देनी चाहिए। इसके बाद कारबोलिक लोशन से जच्चा की जाँघ और आस पास का स्थान अच्छी तरह धो देना चाहिए। बच्चेदानी में भी डूश देना चाहिए कि साफ हो जाय। नीचे से गीला कपड़ा निकाल लें, पर यथा सम्भव उसे हिलावे नहीं तौलिए की एक गद्दी बना कर योनि-मुख के ऊपर रख दो और इसे आगे पीछे पिन के द्वारा लँगोट की भाँति पेट की पट्टी से अटका दो। इसके बाद कमरे से सब हट जाएँ। माता को विश्राम करने दो एक घण्टे बाद देखो कि क्या बच्चेदानी सिकुड़ गई है? सिकुड़ी हुई बच्चेदानी कड़ी गेंद के समान मालूम होगी। उस समय नाड़ी देख लो, यदि वह १०० से अधिक मालूम हो, तो रक्त-स्राव का भय है। ऐसी दशा में इसके लिये सावधान रहो! और यदि नींद रात को न आवे तथा गर्भाशय में दर्द हो, तो योग्य चिकित्सक से सलाह लेलो।

बच्चे को शहद-घृत और ब्राह्मी का रस एक एक बूंद मिलाकर सोने की शलाका से चटा दो। इससे उसका स्वर और बुद्धि तीव्र हो जायगी।

प्रसव के ६-७ घण्टे बाद प्रसूति को मूत्र होना चाहिये। यदि मूत्र न निकले, तो गर्म पानी में तौलिया भिगोकर और निचोड़ कर पेड़ू और योनि पर रक्खा जाय। प्रसव के २४ घन्टे उपरांत तक यदि प्रसूति को दस्त न हो, तो उसे जुलाब की दवा दे दी जानी चाहिये।

प्रसूता को आहार

प्रसव होने के बाद प्रसूता को दूध, बार्लि पान (घी गुड़ का पेय) तथा अन्य सुपाच्य और पौष्टिक आहार खा सकती है। फल और फलों का रस भी उसे दिया जा सकता है। हाँ, ठंडा पानी और ठण्डा भोजन उसे न देना चाहिए। प्रसव के एक मास तक वह सौभाग्य शुंठी का सेवन करे, यह सबसे उत्तम बात है। गुड़, सोंठ, मखाने, पंजीरी, घृत का हलुआ यह देना उत्तम है। ६ दिन बाद खीर, खिचड़ी, फुलका आदि साधारण भोजन दे सकते हैं।

"आरोग्य शास्त्र से"

गर्भिणी के रोग तथा चिकित्सा

कविराज पं० कृष्णप्रसाद जी B. A. आयुर्वेदाचार्य

स्त्रीषु प्रीतिर्विशेषेण स्त्रीष्वपत्यं प्रतिष्ठितम्।
धर्मार्थौ स्त्रीषु लक्ष्मीश्च स्त्रीषु लोकाः प्रतिष्ठिताः॥
मूलं हि त्यपत्यानाँ स्मृतं नार्यो परं नृणाम्।
तसां दुःखोपशमनं कर्तव्यं सर्वदा नरैः॥

उक्त सरलार्थ बोधक ऋषिवाक्यानुसार स्त्रियों के दुःखों का प्रतिकार करना हमारा परम धर्म है। सुशिक्षा के अभाव के कारण स्त्रियाँ स्वयं अपने दुःखों के निराकरण में असमर्थ होती हैं; यथा हम जो अपने को सुशिक्षित कहलवाते हैं उन अबलाओं के विकारों की ओर उपेक्षा करते हैं। जिसका अनिष्ट परिणाम यह होता है कि वे अकाल में ही काल कवलित होती हैं, सुसँतति निर्माण का क्रम बिगड़ जाता है, एवँ राष्ट्र का घोर अकल्याण होता है। हमारे संसार सुख की साधनभूत, एवं उत्तमोत्तम नर रत्नों की उत्पादक देविस्वरूप महिलाओं का इस तरह बिगाड़ तथा संहार होना हम जैसे राष्ट्र हितेच्छु प्रगतिशील पुरुषों के लिये लांछनास्पद है।

हमें चाहिये कि स्त्री सम्बन्धी रोग विज्ञान का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर, कष्ट निवारणार्थ उनकी यथा योग्य सहायता करें। उनका शरीर पुरुषों की अपेक्षा कोमल होने से, साधारण से साधारण विकार भी उन्हें विशेष कष्टप्रद हो जाते हैं। उसमें भी यदि वह दो जान से (गर्भिणी) हो तो फिर कहना ही क्या है! गुह्याङ्ग सम्बन्धी ऐसे कई विकार उन्हें हो जाते हैं, जिन्हें प्रगट करने में वे अत्यन्त सकुचाती हैं। भीतर ही भीतर कष्टों को सहन करते हुये, अन्त में क्षय ग्रस्त होकर शीघ्र ही इस संसार से कूच कर जाती हैं। अस्तु—

यहाँ पर उनकी गर्भावस्था के कतिपय विकारों के ही विषय में कुछ विस्तार पूर्वक लिखने का विचार है। आशा है किसी न किसी अंश में इस लेख का प्रयोजन सिद्ध होकर, लेखक का श्रम सार्थक होगा।

गर्भावस्था में स्त्री को निम्न लिखित रोग प्रायः हो जाया करते हैं—अतिवाँति या वमन, मलबद्धता छाती में जलन, उदरशूल, अतिसार, योषापस्मार, अग्निमांद्य, अम्लपित्त, हृदय की धड़कन, कामला, कास, ज्वर, निद्रानाश, प्रदर, मस्तकशूल, मूत्रावरोध, मूर्छा, अर्श, रक्तस्राव, शोथ, श्वास, दन्तवेदना' इन्द्रियदौर्बल्य, हाथ पावों में ऐंठन, और गर्भपात।

अब हम सिलसिलेवार प्रत्येक रोग के विषय में संक्षिप्त निदान एवं चिकित्सा लिखते हैं—

(१) वमन होना—जी मचलाना या कै होना गर्भसूचक चिन्ह है, गर्भावस्था के प्रथमारम्भ में यह विकार होना कुछ विशेष बुरा नहीं माना जाता है। इस विकार के होने से समझा जाता है कि प्रसूति सुखपूर्वक होगी, किसी प्रकार के कष्ट का सामना नहीं करना पड़ेगा। किन्तु कभी कभी यह विकार असहनीय हो जाता है, और यदि इसका शीघ्र ही प्रतिकार न किया जाय तो गर्भिणी की प्रकृति क्षीणातिक्षीण होकर गर्भपात होजाना सम्भव है।

इस विकार के कारणों में से मुख्य कारण मलबद्धता, गर्भ की हलचल तथा बदपरहेजी है।

उपाय—(१) उत्तम श्वेत चन्दन का बुरादा ३ मासा, शुष्क आंवले का चूर्ण ३ मासा और शहद ६ मासा एकत्र मिला चटावे। (२) नारियल की जटा जलाकर उसकी काली राख को शहद के साथ बार २ चटावे। (३) छाल सहित इलायची की भस्म ४ रती और आंवला चूर्ण ४ रती शहद के साथ चटावे। (४) यदि विकार विशेष प्रमाण में हो तो कपर्दिका भस्म और शंख भस्म दो २ रती और इलायची की भस्म ४ रती शहद में मिला, प्रातः सायं चाटे।

विशेष सूचना—प्रातःकाल में भोजन के पूर्व थोड़ा इधर उधर ताजी हवा में घूमना विशेष हितकर है। इस विकार पर जहां तक हो सके सौम्य उपचार ही करना चाहिये, विशेष तीव्र उपचार अनिष्ट कारक है। यह विकार बगैर किसी उपाय के स्वयं ही चौथे या पांचवें मास में बन्द हो जाता है। देखा गया है कि यह विकार रोज प्रातःकाल में दुपहर तक ही होता है, दुपहर के बाद आप ही बन्द हो जाता है। किन्तु यदि २४ घण्टे बराबर उबकाई आती हो, बिलकुल चैन न पड़ती हो तब तो इसकी ओर विशेष लक्ष्य पूर्वक प्रतिकार अवश्य करना चाहिये। यदि वमन का जोर ज्यादा तथा कै में पित्त भी गिरता हो तो समझना चाहिये कि पाचन शक्ति क्षीण हो गई है। ऐसा होने पर (१) सनाय का क्वाथ थोड़ा २ दिन में कई बार पिलावे, प्रत्येक बार ६० बूंद से ज्यादा नहीं देना चाहिये। (२) सोड़ा १० ग्रेन और बिस्मिथ (यह पाश्चात्य औषधि अच्छी गुणकारी है) १५ ग्रेन एकत्र मिला जल के साथ सेवन करे इसी प्रकार दिन में ३ बार इस मिश्रण का सेवन करे। यदि वमन में खून भी गिरता हो तो—(१) मुलहटी चूर्ण २ मासा और उत्तम श्वेतचन्दन का बुरादा २ मासा, एकत्र ५ तोला गाय के दूध में मिला सेवन करे, अथवा (२) मूंग की राख ६ तोला को १ सेर जल में मिला, अष्टमांश क्वाथ सिद्ध कर उसमें शहद ४ मासा और शक्कर ४ मासा मिला दिन में ३ या ४ बार पिलावे। अथवा (३) प्रवाल भस्म और मौक्तिक भस्म १॥ से २ रती त० आंवले के मुरब्बे के साथ या नीबू के अवलेह के साथ खिलावे (४) अथवा बेर की गुठली का मगज, पीपल और मोर के पंख की भस्म समभाग एकत्र कर इनका चूर्ण २ से ३ मासा तक शहद और शक्कर में मिला, दिन में ४ बार चटावें।

स्त्री की प्रकृति के अनुकूल जो उपचार उसे मालूम हो उसे ही करना चाहिये। पथ्य में—पुराने चावलों का भात, पुराने गेहूं की रोटी, मूंग की दाल, गाय का दूध पका कर ठंडा किया हुआ जल, आंवले की चटनी, मेथी और बथुआ की भाजी, शक्कर आदि सौम्य पदार्थ देना चाहिये।

(२) मलावरोधः—गर्भावस्था में यह विकार बहुतायत से देखा जाता है। गर्भ के दबाव के कारण तथा कुछ अंश में रक्तान्तर्गत फेर फार से अन्तड़ियाँ दुर्बल होजाने में कब्जी विशेषतः हो जाया करती है। किंतु स्त्रियां इस विकार की ओर विशेष ध्यान नहीं देती हैं, जिसका अनिष्ट परिणाम गर्भस्थ-बालक पर होता है। तथा गर्भिणी को भी भयंकर कष्ट सहना पड़ता है।

जब गर्भिणी को मालूम हो कि दस्त साफ नहीं होता है या कोठे में रुकता है तो तुरंत अपने आहार विहार में सावधानी रखनी चाहिये। अञ्जीर, मुनक्का आदि परिपक्व फलों का सेवन करें। खुली हवा का सेवन करें। यदि इस प्रकार के आहार विहार के

सुधार से भी कुछ लाभ न होता हो तो निम्नोक्त विशेष औषधोपचार करना चाहिये। ध्यान रहे तीव्र रेचकादि का कदापि सेवन न करे, नहीं तो गर्भपात होने का भय है। गर्भावस्था की बद्ध कोष्ठता पर उत्तम सर्वश्रेष्ठ उपाय शुद्ध रेंडी के तैल का सेवन है। इस तैल की दुर्गंध या उग्रता के कारण इसके सेवन में अरुचि होती है, इसलिये उबाले हुये गर्म दूध के साथ या काफ़ी के साथ, या नीबू के रस के साथ इसका पान कर के ऊपर से तुरंत ही किंचित जायपत्री खा लेने से, उसके दुर्गुण नष्ट हो जाते हैं। अथवा—(२) सल्फर सबलिमेटम् या सब्लाइम्ड सल्फर (Sublimed Sulphur) अथवा ब्रिटिश औषधि-क्रियाकल्पानुसार निर्मित गंधक का अर्क एक ड्राम (एक चाय का छोटा चम्मच भर) से २ ड्राम तक लेकर थोड़ा दूध या जल मिला कर पीने से उत्तम सौम्य दस्त होकर कोठा साफ़ हो जाता है। अथवा—(३) काली दाख या मुनक्का को जल में उबाल कर पिलाने से भी उत्तम लाभ होता है। अथवा—(२) असगंध ६ मासा और मिश्री १ तो० दोनों को जवकूट कर, १ पाव दूध और उतने ही जल के मिश्रण में मिला पकावें, दूध मात्र शेष रहने पर गर्भिणी को रात्रि के समय ३-४ दिन तक पिलावें, फिर २-३ दिन बंद रक्खे, फिर लगातार ३ ४ दिन दिन तक पिलावें इसी क्रम से इसका सेवन बराबर ९ मास तक कराते रहने से रोग बीज नष्ट होकर गर्भस्थ बालक पुष्ट होता है। आगे किसी प्रकार का विकार नहीं होने पाता। यह सर्वोत्तम उपाय है।

नोट—उक्त मलावरोध के ही विकार के कारण, यदि उचित उपाय यथायोग्य समय पर योजित न किया जाय, तो आगे चल कर आँतों में मल का संचय होते-होते वह शुष्क होकर पत्थर जैसा कड़ा हो जाता है। फिर अंत्रान्तर्गत कफादिमलोत्पादक त्वचा को विशेष कष्ट या बाधा होती है। मल का संचय धीरे २ अधिकाधिक बढ़ता ही जाता है। पश्चात् कभी २ पतले दस्त शुरू होते हैं, जिसे बंद करने के लिये स्त्रियाँ अनेक प्रकार के चूर्णों का उपयोग करती हैं, या अफ़ीम खाती हैं। फलतः उसके मस्तक में पीड़ा शुरू होती है, पेट में अफारा और वेदना होती है, अन्न हज़म नहीं होता। प्रसूति काल और बढ़ जाता है, शीघ्र योग्य समय में बालक पैदा नहीं होता, या प्रसव काल के समय में गर्भिणी को मर्मान्तिक कष्ट होते हैं, शक्ति अत्यन्त क्षीण हो जाती है।

उक्त दशा में उसे—काली दाख ६ मासा (बीज निकाली हुई) और सनाय ३ मासा इन दोनों का विधियुक्त अष्टमांश काढ़ा तैयार कर उसमें थोड़ा रेंडी का तेल अथवा केवल घृत मिला पिलाने से विशेष लाभ होता है।

(३) **अतिसारः**—यह विकार प्रायः प्रत्येक गर्भिणी को नहीं होता। खान पान की विषमता से, या उक्त मल संचय के कारण, कभी २ विशेषतः देखने में आता है। कोई २ इस विकार को प्रसूति काल की सामीप्यता का निदर्शक समझते हैं, और कहा जाता है कि गर्भाशय से गर्भपरावर्तन होने के कारण यह लक्षणात्मक विकार उत्पन्न होता है, जो कि फिर स्वयमेव ही बंद हो जाता है। किंतु देखा गया है कि किसी २ गर्भवती को यह विकार आदि से अन्त तक सताया करता है। जिसके परिणाम में वह अत्यन्त ही अशक्त, शिथिल हो जाती है, अग्नि-मन्द हो जाती है, मल में बहुत दुर्गंध आती है, और

अन्त में इसी विकार के कारण गर्भपात भी होजाया करता है।

उपायः—(अ) आम्रफल के अन्दर की गुठली का मगज भून कर खिलावे, अथवा—(आ) कच्चा बेल का गूदा २ मासा, जायफल १ मासा और मेढ़ाशृंगी १ मासा, तीनों को एकत्र जल में पीस छान कर पिलावे दिन में २ बार (इ) सुगंध बाला, अरलू, लालचन्दन, खरैटी, धनियाँ, गिलोय, नागरमोथा, खस, जवासा, पित्तपापड़ा, और अतीस इनका विधिवत अष्टमाँस क्वाथ बनाकर पीने से गर्भिणी के अनेक प्रकार की व्यथा अतीसार, रुधिरस्राव आदि नष्ट होती हैं।

संग्रहणी—गर्भिणी को अतिसार या ज्वरातिसार होकर संग्रहणी का विकार भी हो जाया करता है। इस पर (अ) आम और जामुन की छाल का क्वाथ बनाकर उसमें खीलों के सत्तु मिलाकर सेवन करे तो तत्काल ही ग्रहणीरोग शांत हो जाता है, कहा है—

"आम्र जम्बूत्वचः क्वाथैर्लेहयाज्ञ सक्तुकम्।
अनेन लीढमात्रेण गर्भिणीं ग्रहणीं जयेत॥"

(आ) मजीठ, मुलैठी और लोध इनका चूर्ण लगभग ३ मासे तक शक्कर की चाशनी में मिला दिन में २,३ बार चटाये, इससे ज्वरातिसार, रक्तातिसार, और संग्रहणी का नाश होगा।

नोटः—गर्भावस्था में अतिसार या संग्रहणी होगई हो तो सौम्य एवं हलके पदार्थों का ही सेवन करना चाहिये। पुराने चावल, अरहर या मसूर की पतली दाल, बकरी या गाय का दूध, घी, दही, मक्खन और छाछ, चौलाई की भाजी, तथा सेंधानमक इनके सिवाय अन्य कोई पदार्थ नहीं खाना चाहिये। हाँ, प्रकृति अनुसार वैद्य के कहने पर साबूदाना आदि अन्य पदार्थों को भी लेसकते हैं।

इस विकार के आरम्भ में जहाँ तक हो सके दस्तों को रोकने वाली किसी भी औषधि का सेवन नहीं करना ही लाभदायक है। प्रत्युत सौम्य रेचक जैसे अरंडी का तेल आदि देकर कोठा साफ करा लेना अत्यंत हितकारक है। कोई २ अरंडी के तेल में १० या १५ बूंद अफीमका अर्क या टिंचर ओपियम मिला कर पान कराते हैं। हमारे मत से सर्वोत्तम उपाय यह है कि काली दाख ६ माशा और सोंठ ३ मासा दोनों का अष्टमांश क्वाथ बनाकर उसमें थोड़ा दूध मिला कर पिलाया जावे। ऐसा करने पर कोठा शुद्ध होकर बार बार दस्तों का आना आपही आप बन्द हो जाता है। मादक पदार्थों का सेवन कदापि नहीं कराना चाहिये और भी एक श्रेष्ठ उपाय यह है कि इस विकार की प्रारम्भिक अवस्था में रेवाचीनी और मैगनेशिया (यह एक क्षार है जो केमिस्ट की दुकानों पर बहुत सस्ता मिलता है) का चूर्ण एकत्र कर मात्रा १० ग्रेन से ६० ग्रेन तक, तथा इसी में १ से २ रत्ती तक प्रवाल भस्म मिला शहद के साथ चटाये अथवा पहले उक्त मग्नेशिया मिश्रित चूर्ण फंका कर ऊपर से शहद के साथ या मिश्री मिले हुये दूध के साथ प्रवाल भस्म सेवन करायें।

ध्यान रहे अतीसार या संग्रहणी की अवस्था में गर्भिणी की बड़ी हिफाजत रखनी चाहिये। उसके शरीर में शीत नहीं लगने देवे, गरम या ऊनी वस्त्र हमेशा पहनाये रखना आवश्यक है। पेट के चारों तरफ फलालेन या किसी ऊनी वस्त्र की पट्टी बाँध देना चाहिये।

(४) छाती में जलन—कई स्त्रियों को गर्भावस्था में छाती के नीचे अन्दर से जलन सी उठती है जो कि ऊपर कंठ तक आती है। फिर डकारें आती हैं, तथा

कंठ के पास कड़वाहट (कटुत्व) उत्पन्न होकर मुख फीका या कड़वा हो जाता है। बाद में कुछ देर अच्छा मालूम देता है, भोजन के पश्चात् पुनः उक्त क्रियाएं अन्दर होती रहती हैं। यह विकार 'अम्लपित्त' के कारण भी होता है देखो आगे नं० ८।

निदान—जड़, गुरु, पक्वान्न, विशेषतः जिनमें घी या चरबी का अंश अधिक है ऐसे पदार्थों के भक्षण से पेट में 'एसिड' रूपी मल का एक गोला सा पैदा हो जाता है, जो उक्त विकार को उत्पन्न करता रहता है।

उपचार—यह विकार विशेषतःपित्त विकृति से होता है, अतएव इस पर पित्तशामक उपचार हितावह है। (अ) सूतशेखर रसकी उचित मात्रा मिश्री मिले हुएगौ दूध के साथ सेवन करावे (आ) अथवा कामधेनु रस की मात्रा जीरा और मिश्री के साथ देवे। अथवा (इ) सुवर्णमाक्षिक भस्म १ रत्ती और प्रवाल भस्म २ रत्ती एकत्र कर शहद के साथ चटावे। (ई) अथवा—छोटी हरड़ ६ मासा, काली दाख ६ मा० आँवला सूखा ६ मा० और सनाय ६ मासा इन सब के चूर्ण को महीन पीस कर २ से ३ मासा तक की मात्रा में जल के साथ सेवन करावे। (उ) अथवा—सूखा आँवला, सोंचर नमक (पादेलोण) और असगंध प्रत्येक का महीन चूर्ण दो २ रत्ती एकत्र कर शहद के साथ, भोजन के पश्चात् चटावें, दिन में २ या ३ बार। अथवा (ए) चूने के स्वच्छ जल (Lime water) लगभग २ तोला में, मिश्री ३ मासा मिला, भोजन के बाद, दिन में एक बार पिलावे। अथवा—(ऐ) सोड़ा १५ ग्रेन और बिस्मिथ १५ ग्रेन एकत्र कर लेवे, दिन में ३ बार, यदि इनसे भी लाभ न हो तो १ पाव जल में अरोमेटिक स्पिरिट ऑफ एमोनिया मिला दिन में कई बार थोड़ा २ दें।

नोट—निदानोक्त खान पान का सर्वथा त्याग करना चाहिये, सरलता से न पचने वाले एवं पित्त को दूषित करने वाले पदार्थों से दूर रहे।

(५) छाती में धड़कन—यह विकार यदि गर्भावस्था के समय में ही उपस्थित हुआ हो, अर्थात् गर्भावस्था के पूर्व इसकी उत्पत्ति न हो तो विशेष भय का कारण नहीं है। गर्भावस्था की हालत में प्रायः सर्व शरीर भर में एक प्रकार की हलचल सी मच जाती है उसके कारण से, अथवा धीरे धीरे वृद्धि को प्राप्त होने वाले गर्भ के भार से हृदय के कार्य में कुछ प्रतिबंध आजाने के कारण इस विकार की उत्पत्ति हो जाती है।

नाजुक, कोमल प्रकृति की स्त्रियों को यह विकार गर्भावस्था के समय से अकस्मात प्रायः रात्रि के समय उत्पन्न हो जाता है। निद्रा की हालत में अकस्मात भयभीत होकर वह उठ बैठती है, हृदय जोर २ से धड़कने लग जाता है, नींद का आना दुश्वार हो जाता है। मन में किसी भी प्रकार की शंका या भय के आते ही हृदय धड़कने लगता है, और कभी २ सारा शरीर कंपायमान होता है।

उपचार—किसी विशेष उपचार के न करते हुये भी यह विकार धीरे २ शांत हो जाता है। यदि उपचार की विशेष आवश्यकता ही हो तो—(अ) प्रवाल अथवा शंख भस्म २ रत्ती तक की मात्रा में शहद के साथ चटावे। अथवा (आ) केवल जल को औटाकर, चतुर्थांश शेष रहने पर, रात्रि में सोते समय पिलावे। अथवा (इ) 'सालव्होलाटाईल'❀

❀सालव्होलाटाईल (Sal volatile) की कृति ऊपर लिख दी गई है, इस अर्क की रुचि और सुगंध कुछ कटु (कड़वी) होती है। उदरशूल, योषापस्मार, मूर्च्छा,अजीर्ण, अम्लपित्त, तथा अशक्ति पर यह विशेष उपयोगी है। —लेखक

(इसीको ऐरोमैटिक स्पिरिट ऑफ अमोनिया भी कहते हैं। यह (कार्बोनेट अमोनिया ४औंस, स्ट्रांग सोल्युशन आफ़ अमोनिया ८ औंस, जायफल का तेल ४॥ ड्राम नीबू तैल ६॥ ड्राम, रेक्टिफाईड स्प्रिट ६ पिंट और जल ३ पिंट का मिश्रण कर इसका अर्क निकाला जाता है) ३० मिनिम से १ ड्राम की मात्रा में अथवा एक चाय के चमचे भर लेकर थोड़े जल में मिलाकर पीवे। चार २ घंटे के अन्तर से इसे पिलाने से शीघ्र लाभ होता है।

नोटः—स्त्री को ऐसी अवस्था में भी मदकारी पदार्थ कदापि देना उचित नहीं। उसके मन को शांति पहुँचे ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये। शक्ति यदि विशेष क्षीण होगई हो तो कांतलोह मिश्रित पौष्टिक औषध का सेवन कराना हित कारक है। भोजन प्रकृति के अनुकूल और हलका होना चाहिये।

(६) शूल—गर्भावस्था में कभी २ उदर शूल कुक्षिशूल की पीड़ा बड़ी विकट हो जाती है, जिसके कारण गर्भपात भी होजाता है गर्भ के भार से,आभ्यन्तरिक सिराओं के फूल उठने से यह वेदना उत्पन्न हो जाती है। यह वेदना प्रायः दिन के तीसरे या चौथे प्रहर में होता है, वह इतनी तीव्रता के साथ होती है कि गर्भिणी के शरीर में आग सी बल उठती है। मास २ की शूल चिकित्सा निबंध के अन्त में देखिये।

उपचार—(अ) पोदीना का स्वरस ६ मासा, अदरख का रस ६ मा० एकत्र कर उसमें सेंधा नमक १ मा० मिलाकर पिलावे; अथवा (आ) पोदीना, अद्रक,प्याज, लहसन, और तुलसी प्रत्येक का स्वरस ३ मासा एकत्र मिला दिन में २-३ बार पिलावे। (ए) सोंफ और अजवायन के अर्क में (या इनको पीसकर जल मिला कर निचोड़े हुये रस में) थोड़ा सेंधा नमक और बड़वानलरस❀ १ रत्ती मिलाकर पिलावे अथवा-(ई) शंखवटी २ रत्ती का सेवन घी और काली मिर्च के चूर्ण के साथ करावे। अथवा, (उ) केवल अजवायन १ से २ मासा तक उष्णोदक (नीमगरम) में पीसकर पिलावे। अथवा—(क) कुशा जिसे दाभ भी कहते हैं, कांस, रेंडी और गोखुरू की जड़ सम भाग इनके कल्क से सिद्ध किये हुये दूध में मिश्री मिला पिलावे। कहा है—

> कुश काशोरुबूकाणां मूलैर्गोक्षुरकस्यच।
> शृतं दुग्धं सितायुक्तं गर्भिण्याः शूल हृत्परम॥
> —भा० प्र०

अथवा—(ग) गोखरू, मुलैठी, कटहली और खील इनको सम भाग लेकर जलके साथ पीस कर, उसमें १ पाव गोदुग्ध मिलो पकावे, दुग्ध मात्र शेष रहने पर शक्कर और शहद मिला गर्भिणी को पिलाने से भी शूल दूर हो जाता है। कहा है—

> श्वदंष्ट्रा मधुकं क्षुद्राम्लातैः सिद्धं पयः पिबेत्।
> शर्करा मधु संयुक्तं गर्भिणी वेदनापहम्॥
> —भा० प्र०

(७) अग्निमांद्यः—

गर्भिणी की जाठराग्नि कभी २ बहुत मन्द हो जाया करती है; अन्न हजम नहीं होता, भूख नहीं लगती, डकारें आया करती हैं।

उपचार—(अ) सोंठ और गुड़ प्रत्येक दो २

❀ बड़वानल रस इस पाठानुसार हो—

शुल्वं तालक गन्धकौ जलनिधेः फेनाग्नि गर्भाशयम्। कान्तायो लवणानि हैमपत्रयो नीलांजनं तुत्थकम्॥
भागो द्वादशको रसस्यतु दिनं वज्राम्बुघृष्टं शनैः। सिद्धोऽयं बड़वानलो गजपुटे रोगान शेषाञ्जयेत्॥
—रस चंडांशु०

मासा एकत्र मिला सेवन करावे। **अथवा**—(आ) अदरख का रस २ से ३ मासा तक, समभाग शहद मिला, दिन में दो बार चटावे। **अथवा**—(इ) अजवायन, सोंठ, पीपल, और जीरा इनका समभाग चूर्ण लगभग २ से ३ मासा तक लेकर शहद मिला सेवन करावे।

(८) अम्लपित्त—गर्भिणी के छाती तथा कंठ में दाह याजलन सी मालूम देती है। डकार लेने पर अन्दर की कटुता मुख में आ जाती है! और कभी २ वमन होकर खाया हुआ पदार्थ एकदम बाहर निकल जाता है। डकारें बार २ आती रहती हैं। मुख में लार की प्रचुरता होती है, बार २ थूकती रहती हैं। पेट में क्षार या एसिड के संचय होजाने से यह विकार हो जाता है।

उपचार—(अ) धनिया के १२ दाने, और विषांबिल (अमसुल, कोकम के फल जिसे संस्कृत में वृक्षाम्ल—फल कहते हैं) १ मासा लेकर ८ तोला जल में रात्रि के समय भिगो देवे, सबेरे मल छानकर १ तोला मिश्री का चूर्ण मिला ८ मात्रा करे, प्रति दो घंटे से एक २ मात्रा पिलावे। **अथवा** (आ) सूत-शेखर की मात्रा १ रत्ती तक गोदुग्ध ४ तोला और मिश्री १ तोला मिश्रण कर सेवन करे। यह एक मात्रा हुई, इसी प्रकार दो मात्रायें बना प्रातः सायं पिलावे। **अथवा** (इ) जीरा चूर्ण १ मासा और मिश्री चूर्ण १ मासा एकत्र कर, भोजन के पश्चात् शीतल जल से सेवन करावे। **अथवा**—(ई) शुष्क आवलों का चूर्ण ३ मासा और मिश्री ३ मासा एकत्र कर उत्तम गाय के घृत में मिला (घृत चूर्ण का दुगुना लेवे) रोज सबेरे और दुपहर को सेवन करे। **अथवा**—(उ) उत्तम गेरू आधा तोला लेकर खाने के पान के रस में खरल कर चना जैसी गोलियाँ बना लेवे, रोज प्रातः सायं एक २ गोली, गोदुग्ध आध पाव और मिश्री १ तोला के मिश्रण के अनु-पान से सेवन करावे।

नोट—गर्भिणी को पथ्य में पुराना मोटाचावल, मूंग की दाल, घृत, शक्कर, गेंहू की रोटी, पकाया हुआ जल, गाय का दूध, तथा आंवलों की चटनी, सेंधा निमक खाने को देना चाहिये।

——०——

(९) ज्वर—गर्भिणी का कभी २ ज्वर भी सताया करता है। यह प्रायः खान पान के अतिरेक से या मलावरोध से होता है।

उपचार—(अ) मुलेठी, लालचन्दन, खस सारिबा और कमल के पते इनका विधियुक्त क्वाथ अष्टमांस बना उसमें शक्कर और शहद मिलाकर दोनों समय सेवन करें।

मधुकं चन्दनो शीर सारिवा पद्मपत्रकैः।
शर्करा मधु संयुक्तैः कषाया गर्भिणी ज्वरे॥

अथवा—(आ) लाल चन्दन, सारिवा, लोध और दाख इनका विधियुक्त अष्टमांस क्वाथ बना यथा मिश्री मिलाकर पिलाने से गर्भिणी का ज्वर शाँत हो जाता है। यदि उसे शीत पूर्वक विषम ज्वर आता हो तो सोंठ का चूर्ण २ मासा बकरी के ४ तोला दूध में मिला पिलाना हितकारक है,

चन्दनं सारिवा लोध्रं मृद्वीका शर्करान्वितम्।
क्वाथं कृत्वा प्रदद्याच्च गर्भिणी ज्वर शान्तये॥
पीतं विश्वमजा क्षीरैर्नाशये द्विषमज्वरम्॥
—भा० प्र०

अथवा—(इ) कायफल और गिलोय एक एक तोला लेकर ४० तोला जल में पकावे, अष्टमांश शेष क्वाथ रहने पर उसमें थोड़ा शहद और मिश्री ४ मासा

मिला सेवन करें। अथवा—(ई) गेंडीमूल, मंजीठ, लाल चन्दन, गिलोय देवदारू औरपद्मारव (पद्म-काष्ठ) ये ६ द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे, फिर ३ तोला चूर्ण का ४० तोला जल में अष्टमांश काढ़ा बना थोड़ी मिश्री मिला, प्रातः सायं सेवन करावे।

नोट—पथ्य में—पुराने तथा मोटे चावलों का भात, पुराने गेहूँ की रोटी, अरहर या मूंग की दाल, खेकसा (कर्कोटकी या ककोड़ा) की या घिया तोरई की या चौलाई की भाजी, तरकारी और अमसुल (कोकम फल) की चटनी देवे।

(१०) **निद्रा नाश**—विशेषतः अशक्त गर्भिणी को यह विकार बहुत सताता है। कहा जाता है कि गर्भस्थ बालक की पुष्टि में उसकी शक्ति का व्यय होने से वह दिनों दिन क्षीण होती जाती है, फलतः मस्तिष्क की कमजोरी से उसे रात्रि बड़ी बेचैनी से कटती है, नींद न दिन को आवे न रात को। अन्त में ज्वर आना शुरू हो जाता है, क्षुधा लगती नहीं, यदि यही दशा कुछ दिन और रही और योग्य उपचार न किया गया तो फिर गर्भपात प्रायः हो जाया करता है अथवा जच्चा को, प्रसूति समय या प्रसूति के बाद काल से ही लड़ना पड़ता है।

उपचार—जिन कारणों से निद्रा न आती हो उनको दूर करने का प्रथम प्रयत्न करना चाहिये। यदि स्वयमेव यह विकार शांत न होता हो, निद्रा बिल्कुल ही न आती हो तो ये उपाय करे—(अ) जायफल का महीन चूर्ण घृत के साथ खरल कर मस्तक और कनपटी पर मालिश करे, और शयन करने के पूर्व थोड़ा शीतल जल पान करे। अथवा—(आ) भंग के क्वाथ में घृत को सिद्ध कर उसके हाथ और पावों के तलुवों में खूब मर्दन करे। अथवा (इ) समुद्रफल को बकरी के दूध में पीस कर नेत्रों के अतराफ़ कपाल पर और पावों के तलुवों में मर्दन करे। अथवा (ई) ब्रोमाईड आफ़ पोटासियम् (Potass i-Bromidum) के २० से ३० ग्रेन जल में मिला पिलावे, गाढ़ निद्रा लगेगी।

नोटः—ध्यान रहे उक्त पाश्चात्य औषधि ब्रोमाईड पोटाशियम, की योजना बड़ी सावधानी से करनी चाहिये, उसकी मात्रा अधिक न होने पावे, नहीं तो मस्तक में एक प्रकार की बेचैनी सी पैदा हो जाती है। स्त्री का खान पान बहुत हलका होना चाहिये। रात्रि में शीघ्र ही शयन करना चाहिये, नाटक सिनेमा आदि से परहेज़ रक्खे, मन को उद्वेजित करने वाली कथा क़िस्सा कहानी से दूर रहे। शयन करने के पूर्व मन एक दम शांत एवं उल्लासयुक्त होना चाहिये।

(११) **मस्तक शूलः**—आमाशय एवं पक्वाशय के विकारों की उपेक्षा करने से यह विकार गर्भिणी को बड़ा कष्ट दायक होता है। सिर में तीव्र पीड़ा प्रारंभ होती है, नेत्र लाल हो जाते हैं, चक्कर सा आता है, जिह्वा जड़, तथा क्षारयुक्त होजाती है। यदि इस विकार का शीघ्र ही यथोचित प्रति बंध न किया जावे तो फिर शीघ्र ही यह विकार अपस्मार (योषापस्मार या हिस्टीरिया) में परिणत हो जाने की सभावना रहती है। मस्तक में ज्यादा ख़ून के दौरान से भी यह विकार प्रायः होता है। इस पर निम्नोक्त उपचार लाभदायक है—

उपचार—प्रथम रुग्णा को हलका सौम्य रेचक देना चाहिये। पेट और आँतों के साफ़ हो जाने पर यह विकार प्रायः स्वमेव ही भाग जाता है—

(अ) सनाय, छोटी हर्र, गुलाब की कलियाँ, शुष्क आँवला और अमलतास का गूदा प्रत्येक आधा २ तोला लेकर, जवकूट कर, ४० तोला जल

में, चतुर्थांश क्वाथ तैयार करें। इसे प्रातः समय दो २ घण्टे के अन्तर से, दो बार में पिला देवे। इस उपाय से कोष्ठ शुद्धि हो जाने पर भी यदि मस्तक की पीड़ा शांत न हो तो फिर आगे के उपाय करे—(अ) सुवर्ण माक्षिक १ या २ रत्ती आंवले के मुरब्बे के साथ प्रातः सायं खिलावे। अथवा (इ) सूतशेखर की मात्रा गौ दुग्ध के साथ, या आद्रक के रस के साथ मिश्री मिला चटावे। अथवा—(ई) प्रवाल भस्म १ या २ रत्ती आँवले के मुरब्बे के साथ या अनार के रस के साथ देवे। अथवा—(उ) छुहारे का चूर्ण १ तो० मिश्री १ तो० और मक्खन १ तो० एकत्र कर प्रातः समय सेवन करावे। अथवा—(ऊ) क्विनाईन और लोह भस्म का उचित मिश्रण सेवन करावे। और निम्नोक्त लेपों में से कोई भी लेप मस्तक पर लगाये (अ) सोंठ, जायफल, छालिया सुपारी, और बादाम का चूर्ण दूध के साथ पीस कर गाढ़ा लेप लगा ऊपर से वस्त्र की पट्टी से या रुमाल से मजबूती से कस देवे। ३।४ घंटे के बाद इस पट्टी को खोलना चाहिये। अथवा (अ) अफीम को जल में घोल कर लेप करे। अथवा—(द) काली मिर्च और कपूर को समभाग लेकर जल में घोल कर गाढ़ा २ लेप करे। अथवा—(ई) बादाम और कपूर को दूध में पीस कर मस्तक और नेत्रों पर लगावे। अथवा—(उ) रीठा को गाय के दूध में पीस कर हाथों के और पगों के तलुवों में तथा मस्तक पर भी धीरे २ मर्दन करे।

नोट—ध्यान रहे रुग्णा की जीभ की परीक्षा बार बार करते रहना चाहिये। उक्त रेचनीय औषध देने पर भी यदि जीभ साफ न हो तो पुनः वही या कोई दूसरा सौम्य रेचन देवे। पथ्य में—पुराना चावल, गाय का दूध, पुराने गेंहू की रोटी, मूंग की दाल, घी, शक्कर, मीठातक्र, एवं अन्यान्य मधुर और शीघ्र पाकी पदार्थों को देना चाहिये।

(१२) अपस्मारः--जो स्त्रियां नाजुनी, कम उमर की होती हैं उन्हें प्रायः प्रथम गर्भावस्था में यह विकार हो जाया करता है, इस विकार के प्रारंभ में मस्तक शूल हुआ करता है, अथवा नहीं भी होता है। अपस्मार या मृगी के सब लक्षण इसमें होते हैं। कभी २ इस से गर्भपात भी हो जाता है। विशेष लक्षण यह होता है—इस विकार की दशा में वह कुछ देर के लिये बेहोश हो जाती है, अपनी छाती को पीटती है, बीच २ में रोने लगती है, साधारण अपस्मार जैसा मुख में से फेन नहीं निकलता, आँखों से पानी या आँसू बहता रहता है, पेशाब बार २ और अधिक प्रमाण में होता है।

उपचार—(अ) आधी रत्ती अफीम दूध के साथ खिलावे, (आ) जैसे ही इस विकार का वेग आवे तैसे ही किंचित क्लोरोफार्म सुंघा देवे। (इ) यदि कोठा साफ न हो तो—सनाय, छोटी हर्र, और गुलाब की कली प्रत्येक दो मासे लेकर महीन चूर्ण करे तथा उष्णोदक के साथ सेवन करावे। इस प्रकार २-३ दिन के देने से कोष्ठ शुद्धि होकर विकार दूर हो जाता है।

नोट—उक्त विकार के कारण, या स्वतंत्र रूप से गर्भ का भार पगों के सिराओं पर विशेष पड़ने से गर्भिणी के पावों में ऐंठन सी आती है। जैसे हैजा के रोगी के पिंडलियों में ऐंठन और पीड़ा होती है, और रोगी छटपटाता है, उसी प्रकार गर्भिणी छटपटाती है, पैरों को इधर उधर फेंकती है।

पैरों की पिंडलियों के समान ही उसके हाथों की या बाहू की मांस पेशियों में, पेट तथा अंतड़ियों में ऐंठन होकर वह अत्यन्त वेदना का अनुभव करती हैं। ऐसी अवस्था में—(अ) कपूर मिश्रित तेल की अथवा तारपीन के तेल मे अफीम का अर्क मिला-करमालिश करे। पैरों को उष्ण जल में डुबो रक्खे। और अफीम के अर्क के १० से २० बूँद तक कपूर मिश्रितजल में मिला, उसे तीन २घण्टे के अन्तर से पिलावे साथहीसाथ सोंठचूर्ण और मृग शृङ्ग को जल में घिस तथा उसे गरमकर मर्दन करे, इस उपाय को कईबार करते रहनेसे ऐंठन, शोथ वगैरा दूर होजाती है। जहाँ २ वेदना होती हो तहां २ गर्म जल से भरी हुई शीशी से या गर्म की हुई ईंट से खूब सेकना चाहिए। उक्त अपस्मार पर यह प्रयोग विशेष लाभ दायक है - काली मिर्च का महीन चूर्ण लगभग दो माशा तक तुलसी या अद्रक के रस के साथ प्रातः सायं सेवन करावे।

ध्यान रहे—रुग्णा को किसी प्रकार त्रास, भय, धमकाना, ताड़ना आदि नहीं देना चाहिए। शान्त उपदेशों से उसकी बुद्धि स्थिर रखना चाहिए, लाल चावल, मूंग, गेहूँ, पुराना घी, दूध, ब्राह्मी के पत्ते परवल, पुराना पेठा, बथुवा, अनार बादाना, सहिंजना, दाख, आँवला, फालसा, हरड़ इत्यादि हलके पदार्थ पथ्य में देना चाहिए। शीतलजल से स्नान हितकर है। चिन्ता, शोक, क्रोध, रात्रिजागरण, अति परिश्रम, मद्यमांस, तीक्ष्ण द्रव्य, उष्ण द्रव्य तथा गुरु द्रव्यों का त्याग करे।

प्रदर—गर्भावस्था में कई स्त्रियों को यह कष्टदायक विकार हो जाया करता है। इस विकार का अस्तित्व किसी २ को गर्भावस्था के पहिले से ही रहता है, और किसी २ को गर्भावस्था के प्रारम्भ के मासों में होता है। यदि इसका प्रतिबन्ध शीघ्र ही न किया जाय तो आगे यह रोग और बढ़कर गर्भस्थ बालक को हानि पहुँचाता है।

नाजिनीं या कमजोर स्त्रियों को या जिनको अति प्रसंग के कारण शीघ्रता से बार २ कई गर्भों का भार सहन करना पड़ा है ऐसी स्त्रियों का गर्भावस्था के समय यह रोग बहुत सताया करता है यदि स्राव बहुतही थोड़े प्रमाण में होता हो तो विशेष हानि नहीं किन्तु अधिक प्रमाण में स्राव होता हो और उसके योग्य प्रतिकार न किया जाय तो बहुत ही हानि होने की सम्भावना है। यह स्राव दाहकारक होनेसे योनि-मार्गकी त्वचा जहाँ छिलसी जातीहै, तहाँ शोथ आदि विकार होते हैं। यह स्राव विशेषतः श्वेत होता है। योनिमार्ग में खुजली का भी बड़ा कष्ट होता है।

उपचारः—(अ) मिश्री मिले हुये गाय के दूध में शुद्ध शिलाजीत २ रत्ती और थोड़ा सा हजर उलयहूद उसमें घिसकर प्रातः सायं, २ या ४ दिन तक पिलावे। अथवा (आ) गोखरू चूर्ण ७ मासा तक घी और शक्कर के साथ खिलावे। अथवा (इ) दारूहल्दी, चिरायता, नागरमोथा, रसांजन, बेल, और रूसा का विधियुक्त काढ़ा बनाकर सेवन करावे। अथवा (ई) चौलाई की जड़ और रसांजन को चावल के धोवन में पीस कर शहद मिला सेवन करावे। अथवा (उ) धाय के फूल और सुपारी के फूल का काढ़ा बना सेवन कराने से ३ दिन में लाभ होता है। अथवा (ऊ) शमी या सफेद कीकर वृक्ष की गांठ का चूर्ण कर, १ से २ मासा तक, ६ मासा तिल तैल में मिला सेवन करे, प्रातः सायं, ७ दिन में लाभ होता है। अथवा (ए) अरूसा गोखरू और पीपल का विधियुक्त क्वाथ बना नित्य सेवन करे, ७ दिन में अवश्य लाभ होता है, योनिशूल भी इससे

दूर होता है। योनि में यदि विशेष कष्ट दायक शूल होता हो तो साथ ही साथ नीम के फल और हिंगोट (इंगुदी) के फलों का गूदा सम भाग लेकर नीम के पत्तों के रस में खरल कर लम्बाकार गोली सी बना योनि मार्ग में धारण करना चाहिये।

नोट—ध्यान रहे यह प्रदर सम्बन्धी विकार बड़ा विकट होता है, इसमें उपचार करते समय प्रकृति देश काल आदि का बहुत विचार करना चाहिये। रुग्णा की स्वच्छता पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। योनि मार्ग की सफाई के लिये यदि स्राव विशेष जोर का न हो तो उष्ण जल में थोड़ी सी फिटकड़ी घोलकर अथवा कॉडिज फ्लुइड थोड़ा सा मिला कर योन्यन्तर्गत प्रदेश को पिचकारी द्वारा धोना हितकारी है। दिन में केवल एक बार धोना काफी है किन्तु यदि स्राव अत्यधिक होता हो तो उक्त मिश्रण से दो बार, दिन को एक बार और रात्रो में एक बार धोना चाहिये। अथवा ३ बार भी धोने में हरज नहीं। रुग्णा को विशेष हलचल नहीं करनी चाहिये, चुपचाप पड़े रहना चाहिये। पड़े रहते समय या सोते समय विशेष मोटे वस्त्रों का भार शरीर पर न लेवे, हलके वस्त्र पहने या ओढ़े। योनि में पिचकारी धीरे २ हलके हाथों से चलानी चाहिये। पिचकारी का प्रयोग जोर से कदापि नहीं करना चाहिये, अन्यथा भयंकर परिणाम होना संभव है।

पथ्य में हलका एवं पौष्टिक पदार्थ देवे, मादक द्रव्य कदापि नहीं देवे। विशेषतः जूने चावल, अरहर की दाल, गेहूं या ज्वार की रोटी, आंवले की चटनी और भैंस की छाछ का सेवन करावे। रात्रि में विशेष जागरण न करें। और यदि मलबद्धता हो तो सौम्य रेचक जैसा गुलकन्द और दूध या सनाय मिश्रित काली दाख का काढ़ा आदि का सेवन करें।

योनि मार्ग में वेदना यदि अत्यधिक हो वहाँ पर दाह विशेष हो, अंगार सी जलती हो, तो जल ३१ तोला में सुहागा का चूर्ण २ मासा मिला, उससे योनिमार्ग का प्रक्षालन करे। अथवा—गाय के घी में संगजराहत, कपूर और मृगश्रृङ्ग को पीस कर लगावे। और सोते समय पोटैशियम ब्रोमाईड ५ ग्रेन से ३० ग्रेन तक की मात्रा सेवन करे। अथवा सुवर्ण माक्षिक २ या ३ रत्ती, सोंठ का चूर्ण ६ रत्ती में मिला शहद के साथ चटाने से दाह शमन होकर सुख पूर्वक निद्रा आजाती है।

(४) रक्त स्राव और रजस्रावः—गर्भावस्था में अति उष्ण या मिर्च मसाले दार कटु पदार्थों के सेवन से, योनिमार्ग से रक्त स्राव होने लग जाता है। फलतः गर्भ की वृद्धि रुक जाती है। या गर्भाशय में गर्भ स्थिर नहीं रहता। इस पर शीघ्र ही माकूल उपचार करना चाहिये।

उपचार—(अ) कमल के पत्त, नागकेशर, मिश्री और घी प्रत्येक आध २ तोला, शहद ३ मासा एकत्र मिश्रण कर सेवन करें। अथवा (आ) फूल प्रियंगु, कमलकन्द और कच्चे गूलर एक २ तोला लेकर जव कूट कर १ सेर दूध में पकावे। अच्छी तरह पक जाने पर, तथा चतुर्थांश दूध शेष रहने पर छान कर बलाबल देखकर उचित मात्रा में सेवन करावे। अथवा (इ) नागर मोथा, धनिया, खेतवाला (बालक) लाजवंती, गिलोय, बायबिडंग, पित्तपापड़ा और धमासा, प्रत्येक ६ मासा लेकर, १ सेर जल के साथ अष्टमांश काढ़ा बना प्रातः सायं सेवन करावे। अथवा (ई) विदारीकंध और असगंध समभाग जव कूट कर गाय के दूध में पका सेवन करावे। अथवा (उ) मसूर, अरहर, उड़द, और मोटे चावलों को एकत्र मिला, जलाकर भस्म करें। इस भस्म को

४ मासा तक ठंडे जल से सेवन कराये। अथवा (ऊ) राल के चूर्ण में सम भाग शक्कर मिला ४ मासा तक ठंडे जल से सेवन करे। अथवा (ए) चना की काली राख बना, उसमें तमालपत्र और लोध्र सम भाग मिला। महीन चूर्ण कर, तथा शक्कर मिला कर नित्य ६ मासा तक सेवन करे। अथवा (ऐ) गेरू और शंखजीरा का समभाग चूर्ण एकत्र मिला, मात्रा ६ मासा तक शीत जल से सेवन करे। अथवा (ओ) गाय के १ पाव दूध में चिकनी काली सुपारी का महीन चूर्ण १ पाव मिला, मन्दाग्नि पर औंटावे। फिर उसी में शक्कर या मिश्री आध सेर मिला और औंटावे जब मावा जैसा होजाय तब उसमें छोटी इलायची का चूर्ण और धाय के फूलों का चूर्ण तीन२ तोला, और ढाक के गोंद का चूर्ण १० तो० मिला, चार २ तोले के लड्डू बना अमृत बान में काँच की बरणी में रक्खे, प्रात: सायं रुग्णा की शक्त्यनुसार इसका सेवन करावे। अथवा (औ) सिंघाड़ा, कचूर और कमलकन्द का चूर्ण समभाग लेकर, १ तोला की मात्रा में गाय के दूध के साथ सेवन करावे, अथवा (क) चंवेली पत्र रस १० तोला, गाय का दूध १ पाव और मिश्री २ तोला एकत्र मिला ७ दिन तक पिलावे।

उक्त उपचार के साथ ही साथ योनिमार्ग में—(अ) गधे की लीद को सुखाकर तथा महीन कर वस्त्र में बाँध छोटी सी पोटली बनाकर धारण करे। अथवा (आ) बकरे की सूखी मेंगनी को पीस वस्त्र में पोटली बना धारण करे। अथवा—(इ) केवल शीतलजल में भिगोकर वस्त्र की घड़ी बना गुह्यस्थान पर धारण करे।

पथ्य में—शीघ्र पाकी हलका पदार्थ देवे। सिंघाड़ा और कचोर (कचूर) के आटेकी लपसी बनाकर खिलाते रहना चाहिए; तथा शतधौत घृत (जल में सौ बार धोया हुवा घी) की मालिश नीचे के अङ्गों में विशेषत: करे।

रज:स्राव:—गर्भावस्था में गर्भिणी को कभी कभी रज का स्राव भी हुआ करता है। इसका भी शीघ्र ही प्रतिबन्ध करना चाहिए, नहीं तो गर्भस्राव या गर्भपात का भय होता है।

उपचार—(अ) मुलतानी पीली मट्टी १ तोला लेकर जल ६ तो० में रात्रि के समय भिगो देवे। सवेरे मलछान कर उसमें ३ माशे जीरे का चूर्ण मिला कर पिलावे। अथवा—(आ) चावलों के धोवन के साथ आमलों के बीजों का चूर्ण ३ मासा तक सेवन करावे। अथवा—(इ) छोटी दूधी (जिस के गोल २ छोटे २ पत्ते होते हैं, जमीन पर फैलती है और तोड़ने पर दूध निकलता है) लाकर छाया में सुखा उसका चूर्ण ४ मासा तक शीतल जल से सेवन करे।

(१५) मूत्राशय के विकार—गर्भावस्था में मूत्राशय सम्बन्धी प्राय: निम्न ३ विकार—( ) आग या दाह (२) मूत्रातिशय और (३) मूत्रावरोध होते हैं।

(१) आग या दाह—यह विकार गर्भावस्था के प्रारम्भिक मासों में गर्भ संसर्ग के कारण तथा अन्तिममासों में वृद्धिगत गर्भका दबाव मूत्राशय पर पड़ने के कारण उत्पन्न होजाता है। यदि इसका यथा समय प्रतिकार न किया गया तो फिर गर्भिणी को निद्रा दुर्लभ हो जाती है, स्वास्थ्य क्षीण होता जाता है।

उपचार—(अ) पानी में अलसी को पकाकर (१ सेर जल में अलसी २ तो०) और छानकर यही

पानी उसे बार २ पिलाना चाहिये। इससे आग शांत होती है। रात्रि में सोते समय संगजराहत (शंखजीरा) १ या २ मासा चूर्ण, मिश्री मिले हुये १ पाव गोदुग्ध में मिला पिलावे। बीच २ में कोठा साफ करने के लिये सौम्य रेचक देते रहना आवश्यक है।

(२) मूत्रातिशय—यह विकार भी मूत्राशय पर गर्भ के दबाव के कारण होजाता है। जरासी खांसी उठने पर या शरीर की थोड़ी सी भी हलचल से मूत की बूंदें सरने लग जाती हैं।

उपचार—गर्भिणी के पेट के आसपास पट्टा बाँधना चाहिये, तथा उसको चुपचाप शांति से पड़े रहना चाहिये। अति मूत्रस्राव के कारण यदि बाह्य भाग की त्वचा छिल सी गई हो तो उस पर संग-जराहत और दूध की मलाई एकत्र कर लगावे।

(३) मूत्रावरोधः—गर्भिणी का गर्भाशय यदि किसी कारण वश स्थानभ्रष्ट होकर, कुछ पीछे की ओर चला जाय, या अन्य किसी कारण वश मूत्राशय पर दबाव पड़े तो मूत्र का अवरोध होकर, मूत्राशय में आग सी होने लगती है, उसे अत्यन्त वेदना होती है मूत्र की रुकावट से मूत्राशय धीरे २ फूलने लगता है। मूत्राशय और पेट के फूलने के पहले ही इस विकार का प्रतिकार करना आव-श्यक है। इसकी उपेक्षा कदापि नहीं करनी चाहिये।

उपचारः—(अ) दारु हल्दी २ तो० जब कूट कर ४० तोला जल में अष्टमांश काढ़ा बना उसमें थोड़ा शहद मिला पिलावें। अथवा—(आ) ककड़ी के बीज २ तोला लेकर महीन चूर्ण कर, २ तोला चावल के धोवन में मिला पिलावे, इसमें १ तोला शक्कर भी मिला लेना चाहिये। अथवा—(इ) तिल की खली को जलाकर उसकी राख ३ मासे शहद ६ मासे और गाय का दूध १० तोला एकत्र मिला मिलावे। अथवा—(ई) गोखरू २ तो० को आध सेर जल में अष्टमांश क्वाथ कर उसमें थोड़ी शक्कर और शहद मिला सेवन करावे।

बाह्योपचारः—सोंग २ तोला लेकर वस्त्र में पोटली बाँध ठण्डे जल में डुबो कर नाभी पर कुछ देर रक्खे, मूत्र साफ़ खुल जायगा। अथवा (आ) रेंडी का तेल थोड़ा लेकर उसमें जवाखार चूर्ण मिला नाभी के नीचे मालिश करे, फिर स्वच्छ वस्त्रको उष्ण जल में भिगो तथा निचोड़ उस स्थान पर सेंक करे, मूत्र साफ़ खुल कर हो जायेगा। अथवा (इ) मूत्र मार्ग में बार २ स्वच्छ जल की पिचकारी 'डुश' देवे।

शास्त्रोक्त यह प्रयोग बहुत उत्तम है—

शालीक्षु कुश काशैः स्याच्छरेण तृणपञ्चकम्।
एषां मूलं तृष्णा दाह पित्तासृङ्मूत्र संग्रहम्॥

अर्थात्—शाली धानों की जड़, ईख की जड़ कुश या डाभ की जड़, कांस की जड़, और सर-कन्डे की जड़ इन पांच जड़ों के कल्क से सिद्ध किये दूध को पिलाने से गर्भिणी का मूत्रावरोध, तृष्णा, दाह, रक्तपित्त आदि विकारों सहित दूर हो जाता है।

नोट—पथ्य में जूने चांवल, दूध, दही, तक्र जूने गेहूँ की चपाती, जुवार की रोटी, मूंग या अरहर की पतली दाल, चौलाई, परवल घोल आदि की भाजी, अमरूल या आंवले की चटनी सेवन करावे।

अर्श (बवासीर):—गर्भावस्था में कभी २ गर्भ के भार से आंतों की नीचे की सिराओं के फूल उठने से या अतड़ियों की सिराओं पर अनावश्यक दबाव के कारण वे सिरायें प्रथम गोलाकार सी हो जाती हैं, उसी समय यदि कोई उपाय योजना न की गई तो विशेष वृद्धि को प्राप्त हुए गर्भ का भार उन

(सिराओं) पर पड़कर, इस विकार की उत्पत्ति हो जाया करती है। यह विकार प्रायः गर्भ के छठे मास से प्रारम्भ होता है, और नित्य प्रति बढ़ते ही जाता है। प्रसूति हो जाने के बाद यह स्वयं शमन हो जाता है। जिन स्त्रियों को कई सन्तति हो चुकी हो उन्हें ही प्रायः यह विकार बहुत सताया करता है।

कभी यह विकार गर्भावस्था के प्रारम्भ में ही हो जाया करता है। और जैसे २ गर्भ बढ़ता जाता है तैसे २ वह स्वयं शान्त हो जाता है। कभी २ आंत्र के निम्न प्रदेश में मलावरोध के कारण, मल के अत्यधिक कड़े हो जाने से इसकी उत्पत्ति हो जाती है।

इस विकार के हो जाने पर आंत्र में नीचे की ओर अङ्ग या दाह वेदना होती है, तथा चलने समय गर्भिणी को बहुत कष्ट होता है। अंकुर या मस्से बाहर की ओर निकल आते है। तहाँ पर भी आग और वेदना होती है।

उपचार:—शीघ्र ही उपचार करना हित प्रद है। यदि मलावरोध इसका कारण होतो प्रथम उसे दूर करने के लिये रेंडी का तेल पिलाना चाहिये। रेंडी के तेल में सौंफ का अर्क मिला लेना अच्छा है। अथवा मुनक्का के ११ या १२ दाने लेकर बीज वगैरा साफ़ कर, दूध में उबाल कर, गरम २ दूध पी लेवे। अथवा रात्रि के समय कुछ दिन तक नित्य त्रिफला चूर्ण २ से ४ मासे तक गर्म जल से सेवन करे।

विशेष उपचार:—(अ) मक्खन १ तोला में नागकेसर २ मासा और मिश्री ६ माशा मिलाकर सेवन करे। अथवा (आ) अपामार्ग के बीजों का चूर्ण ६ मासा तक चावलों का धोवन ४ तोला में मिलाकर सेवन करावे। यदि अर्शांकुरों में से बहुत रक्तस्राव होता हो तो—

(इ) सौंफ, जीरा, धनिया, गाजवान, और गुलाब की कलियाँ प्रत्येक दो २ मासा लेकर, जव-कूट कर १ सेर जल में अष्टमांश काढ़ा कर, उसमें गाय का घी २ तोला मिला सेवन करावे। यदि विशेष आवश्यकता हो तो प्रातः सायं दो बार इसे देवे। अथवा—(ई) लालचन्दन, नागकेशर, मुलैठी और खस के समभाग चूर्ण में से ४ मासा चूर्ण लेकर तथा तंडुलोदक (चावल धोवन) ४ तोला में मिला सेवन करावे। अथवा—(उ) कमलकेशर ३ मासा, शहद ३ मासा, मक्खन ६ माषे, शक्कर ३ मासा और नाग-केशर ३ मासा इन्हें एकत्र महीन कर गोली बना सेवन करावे। गोलियाँ एक २ मासा की बना प्रातः सायं सेवन करे।

अंकुर या मस्सों का उपचार:—(अ) वट या बरगद के पके हुये पत्तों को जला, काली राख होने पर उसे तिली के तैल में खरल कर लेप करें। और असगंध, निर्गुंडी थूहर का पत्ता और कटेरी की जड़ इनकी धूनी देवे, अर्थात् इन्हें जलाने से जो धुँआ उठे वह मस्सों पर अच्छी तरह लगे ऐसी योजना करें।

नोट—मस्सों में वेदना विशेष हो तो उष्णोदक का सेंक देवे, या माजूफल और अफ़ीम को एकत्र मिला लेप करे, यह लेप दोनों टाइम करना चाहिये। यदि मस्से विशेष जोरदार हों, उनका गोलासा बाहर निकल आया हो तो उनकी जड़ों में बाजू से, जोंक लगवाना चाहिये। जोंक लगाने के बाद वहाँ पर अलसी या गेहूँ के आटे की गरम २ पुल्टिस बाँधना चाहिये।

खान पान ऐसा रखना चाहिये जिससे पेट में मल का संचय न होने पावे। ऊपर मूत्राशय के विकार में जो पथ्य कह आये हैं, तैसा ही पथ्य सेवन करे,

घी, मक्खन और शक्कर इस विकार में दे सकते हैं।

(१७) मूर्च्छा:—गर्भावस्था में लगभग ५वें ६ठवें मास में जब कि गर्भ की हलचल पेट में शुरू होती है, तब यह विकार प्रायः सताया करता है। नाजुक नाजनी प्रकृति की स्त्रियों को इस विकार से विशेष कष्ट होता है। उन्हें बार बार मूर्च्छा भी आया करती है किसी २ को इससे त्रास नहीं होता है। मूर्च्छा के टिकने का कुछ नियत समय नहीं। कभी २ वह एकक्षण में ही आकर निकल जाती है और कभी २ आध घंटे से अधिक काल तक भी बनी रहती है। मानसिक विशेषश्रम या उद्वेग के कारण यह प्रायः उत्पन्न होती है।

उपचार:—शरीर में कसा हुआ वस्त्र कंचुकी वगैरा ढीला कर देना चाहिये, सीधा लेटा देवे, मुख पर शीतल जल के छींटे देवे, हवा करे, कांद्रा या प्याजा काट कर सुंघावे, या किसी अन्य क्षार को सुंघावे, ऊद का धुंवा भी नाक में छोड़ना ठीक है।

विशेषोपचार—(अ) धमासा २ तो० को जल ४० तोला में मिला अष्टमांश क्वाथ सिद्ध कर उत्तम ताजा घृत मिलापिलावे अथवा - (आ) रक्तचंदन नागकेशर और खस का समभाग महीन चूर्ण कर नित्य २ से ६ मासा तक की मात्रा में शीतल जल ४ तोला में मिला सेवन करावे। अथवा—(इ) एक कच्चे नारियल का जल निकाल उसमें ६ मासा सत्तू और उतनी ही मिश्री मिला पिलावे। अथवा—(ई) ऍरोमैटिकस्पिरिट(Aromatic Spirit of Amonia) अमोनिया को जल में मिला एक चम्मच पिलावें। अथवा—(उ) सूतशेखर और प्रवाल की मात्रा मिश्री मिले हुये दूध के साथ देवे। अथवा—(ऊ) लोहांश जिनमें है ऐसी अन्यान्य पौष्टिक औषधियों का सेवन करावे।

नोट—उद्वेग कारक ऐसी कोई बात चीत उसके सामने नहींकरनी चाहिये, बहुत लोगों का समुदाय जहाँ एकत्र हो ऐसे स्थानों में वह कदापि न जावे। शरीर में तंग वस्त्रों का परिधान इष्ट नहीं है। भोजन बिलकुल सादा, मसाला, मद्यादि से रहित होना चाहिये। यदि कोठा साफ न हो तो रेंडी के तेल जैसा सौम्य रेचक देवे।

(१८) शोथ—गर्भावस्था में जैसे २ की वृद्धि होती जाती है तैसे २ निम्न प्रदेशों में विशेषतः हाथ पांवों में, रक्तप्रवाह ठीक २ नहीं होने पाता। फलतः वहाँ की सिरायें फूल उठती हैं जिसे शोथ या सूजन कहते हैं। जिस स्त्री को कई सन्तति हो चुकी हों, उनको ही प्रायः यह विकार हुआ करता है। गर्भभार के कारण पगों में, टखनों में, तथा घुटनों में भी सूजन चढ़ जाती है। यह शोथ प्रायः रात्रि में चढ़ता है और दिन में उतर जाता है। प्रसूति के बाद गर्भभार के दूर होजाने से यह विकार स्वयमेव शान्त हो जाता है। तथापि विशेष कष्ट से बचने के लिये निम्नोक्त उपचार करे—

(अ) श्वेत पुनर्नवा की जड़ दो तोला, जव कूट कर, ४० तोला जल में अष्टमांश क्वाथ सिद्ध करे, और उसमें जूना गुड़ ६ मासा और उत्तम ताजा घी ६ मासा मिला पिलावे। अथवा—(आ) बड़ी कटेरी की जड़, छोटी कटेरी की जड़ और गिलोय प्रत्येक एक २ तो० लेकर, आध सेर जल में पका अष्टमांश काढ़ा बना सेवन करावे. यदि कफ की विशेषता दीखे तो इस में अरूसा की जड़ भी मिला लेना अच्छा होता है।

नोट—कभी २ विशेषतः रक्त विकृति के कारण यह शोथ कमर से लेकर ऊपर को मुख तक चढ़ दौड़ता है, जिसके परिणाम में प्रायः दौरे का विकार

उत्पन्न हो जाया करता है। उपाय योजना इस प्रकार करे—

(अ) मुलैठी २ तोले का अष्टमांश क्वाथ तैयार कर, उसमें शहद ३ मासा, और मिश्री ३ मासा मिला सेवन करावे। अथवा—(आ) त्रिफला ३तो० का अष्टमांश क्वाथ बना, उसमें भैंस का ताजा घी ४ मासा मिला सेवन करावे। अथवा—(इ) अद्रक का रस ३ मासा और मिश्री चूर्ण ६ मासा एकत्र मिला चटावे। यदि शोथ विशेष कड़ा न हो या रक्त-वाहिनियाँ कड़ी होकर उनका गोलासा न बना हो तो उस दशा में जाड़े वस्त्र के पट्टे से कस देना ही लाभ प्रद है। यह पट्टा हाथ या पाँव में नीचे से ऊपर की ओर कसते हुये लाना चाहिये। किन्तु शोथ कड़ी हो गई हो तो फिर कसने से कुछ विशेष लाभ नहीं होता उस हालत में—(अ) गूगल को जल में पका कर गरम २ लेप करें; या मृगशृंग और सोंठ को जल में पीस कर और गरम कर लेप करें; या धतूर के रस में अफीम घोल कर लेप करें। या छुहारे की बीज, सोंठ, मोटातेलिया, चित्रकमूल और मृगशृंग सम-भाग ले चूर्णकर गोमूत्र में मिला, गर्म कर लेप करें। कोई भी लेप करने के बाद ऊपर से सेकना चाहिये।

ध्यान रहे शोथयुक्त स्थान पर कोई या किसी प्रकार की चोट न लगने पावे; कारण जोर के चोट लगजाने से फूली हुई रक्तवाहिनी फूट कर उनमें से रक्त का प्रवाह जारी हो जाता है। यदि यह रक्त प्रवाह तत्काल शमन न किया जाय तो प्राणों पर आफत आ जाती है।

पथ्य में गेंहूँ की रोटी, जूने चावल, मोटा छाँछ, जूना घृत। परवल, बड़ानोनिया या कुलफा का साग आंवले की चटनी और पकाया हुआ उष्णोदक देना हितकर है।

शोथ पर निम्न लिखित चंदनादिलेप बहुत उत्कृष्ट है—लाल चन्दन, मुलेठी, खस नागकेसर, तिल, मेढ़ासिंगी, मजीठ, आक की जड़ की छाल और पुनर्नवा इन ९ द्रव्यों का समान भाग लेकर पानी में पीसकर लेप करें। कहा है—

> चन्दनं मधुकोशीरं नागपुष्पं तिलास्तथा।
> अजशृङ्गी च मंजिष्ठा रवि मूलं पुनर्नवा॥
> श्रेष्ठ: शोफहरो लेपो गर्भिणीनां विशेषतः।
> —यो० र०

आध्मान—कभी कभी गर्भावस्था में उदर में अफारा हो जाता है पेट फूल जाता है, ऐसी अवस्था में बच और लहसुन के कल्क से दूध पका कर तथा उसमें हींग और काला नमक मिलाकर पीने से लाभ होता है कहा है—

> पक्वं वचा रसोनाभ्यां हिंगु सौवर्चलान्वितम्।
> आनाहेतु पिबेद्दुग्धं गर्भिणीसुखिनी भवेत्॥

(१९)दंतवेदनाः—गर्भावस्था में शरीरान्तर्गत अन्यान्य स्रोतसों, विशेषतः सिराओं में जिस प्रकार जिस कारण अस्वस्थता उत्पन्न होती है, तैसे ही दांतों के अन्दर की, एवं हड्डियों की सिराओं में भी एक प्रकार की अस्वस्थता उत्पन्न होकर दांतों में वेदना का अनुभव होता है। दांतों के अन्दर की सड़ान के कारण भी यह वेदना होती है। गर्भिणी के उदर में एसिड या तीक्ष्णाम्लता की अधिकता से भी इस विकार के होने की संभावना है। इसी से गर्भावस्था में दांतों के सड़ने की तथा उनके गिरने का भय बना रहता है।

उपचारः—मकरी या बीही (जामफल) के पत्तों को या बबूल के पत्तों को १ सेर जल में खूब पकाकर कर, उस जल से खूब कुल्ले करना चाहिये। अथवा क्विनाइन १ ग्रेन के ३ भाग कर, प्रत्येक भाग में लोहासव के १० बूंद मिला सेवन करें।

नोटः—कई लोगों का ख्याल है कि गर्भावस्था में दंत विकार पर उपचार नहीं करना चाहिये। किन्तु यह उन का भ्रम है। अवश्य उपचार करना चाहिये। यदि स्त्री सशक्त हो, और दाँत बहुत हो सड़ गया हो, असह्य वेदना हो तो उस दांत को उखाड़ बाहर करना चाहिये। यदि वह कमजोर हो तो उक्त सौम्य उपचार करने में हानि नहीं, प्रत्युत् लाभ ही होता है। एक दो प्रयोग और भी लिख देते हैं—

सुपारी की राख और रूमीमस्तंगी का समभाग चूर्ण एकत्र कर दांतों में मलने से पीड़ा शांत होती है। साथ ही साथ दांतों को खूब रगड़ कर धोते रहना चाहिये। काली मिर्च को जल में पीस कर तथा गर्म कर, उसकी ३-४ बूंद कान में टपकाने से भी दंत जनित तीव्र पीड़ा शांत होती है। यदि दांतों में सड़ान आगई हो, कीड़े पड़ गये हों तो, नाग केशर, सोंठ, मिर्च और पीपल का समभाग महीन चूर्ण कर मर्दन करने से लाभ होता है।

[२०] **कामला**—कभी २ यह रोग भी गर्भावस्था में हो जाता है। आंखें नख, त्वचा आदि सर्वाङ्ग पीला हो जाता है। यह पीलापन कभी कम कभी ज्यादा नजर आता है, अग्निमन्द हो जाती है। प्रायः यकृत् की विकृति से यह रोग हो जाया करता है।

उपचार—(अ) कटुकी का चूर्ण २ या ३ मासा तथा दुगुनी शकर एकत्र मिला फंकावे और और ऊपर से ताजा जल पिलावे। दिन में दो बार अथवा (आ) गिलोय २ तो० का २० तोला जल में अष्टमांश क्वाथ बना कर, शहद मिला, दोनों शाम पिलावे। अथवा (इ) श्वेत दूर्वा की जड़ ४ तोला का २० तोला जल में अष्टमांश क्वाथ तैयार कर, उस में मिश्री ६ मासा मिला प्रातः सायं सेवन करावे।

(ई) अथवा—एक छोटी सी प्याज लेकर, बारीक टुकड़े करे तथा उस में जूना गुड़ ६ मासा और हल्दी का चूर्ण २ मा० मिला प्रातः समय नित्य सेवन करे।

नोटः—उक्त किसी भी प्रयोग के साथ ही साथ दारु हल्दी, फिटकड़ी और शुष्क आमला समभाग जल में घिस कर, दिन में दो तीन बार आंखों में अंजन करे, अन्दर लगाते रहे। और रोज प्रातः समय गन्ना (इख) चूसना चाहिये, गन्ना लाल वर्ण का होना चाहिये। पथ्य में जूने गेंहू की रोटी, जूने चाँवल, अरहर, मसूर या मूंग की दाल, चौलाई की भाजी, भैंस का मीठा छाछ, मक्खन और घृत, गाय का दूध, तथा आँवले की चटनी देवें।

(२१) **कास और श्वासः**—गर्भावस्था में किसी २ स्त्री को स्वभावतः खाँसी आनी शुरू हो जाती है। यदि इसको ओर दुर्लक्ष्य किया गया तो यह अत्यधिक बढ़कर गर्भपात का कारण हो जाती है। अतएव इस पर शीघ्र ही उपचार करना आवश्यक है—

उपचार—(अ) खैर की छाल १ तोला, मुलेठी १ तोला कायफल ६ माशा, और अडूसाका रस २ तोला एकत्र कूट पीस कर चटनी सी बनाकर बार २ चटावे; खैर छाल के अभाव में कत्था ६ मासे मिलावे अथवा-(आ) बांसकेपत्तों का रस १ तो० में सुहागा भूना हुआ ३ रत्ती और शहद २ मासा मिला बार २ चटावे। अथवा-(इ) काली मिर्च, बहेड़ा और लौंग समभाग के महीन चूर्ण में, चूर्ण के समभाग उत्तम श्वेत कत्था का चूर्ण मिला, सब को बबूल की अंतर छाल के काढ़े में घोट कर तीन २ रत्ती की गोलियां बना लेवें, तथा एक २ गोली मुख में धारण करे। अथवा-(ई) बहेड़ा का चूर्ण २ मासा, मिश्री १ मा०

और शहद १ माशा एकत्र मिलाकर बार २ चटावे। अथवा-(३) शास्त्रोक्त सितोपलादिचूर्ण ३ माशा में उत्तम घृत २ माशा और शहद १ मासा मिला चटावे। खांसी के साथ ही ज्वर, कामला आदि विकार हों तो इस सितोपलादि मिश्रण में सुवर्णमालती बसंत १ से २ रत्ती मिला कर देने से उत्तम लाभ होता है।

श्वास:—कमजोर स्त्रियों को प्रायः यह विकार गर्भावस्था में हो जाता है। गर्भिणी के दूसरे या तीसरे मास से कभी २ इसका प्रारम्भ होता है, फिर जैसे २ गर्भ वृद्धि होकर उसका दबाव ऊपर के मध्यपटल पर पड़ता है तैसे २ श्वास का जोर और बढ़ता है। इसके मारे लेटा नहीं जाता और न नींद ही आने पाती है, दुःस्वप्न पड़ा करते हैं। प्रसूति काल में कभी २ यह विकार आप ही शमन होजाता है। तथापि इसका सौम्य उपचार अवश्य करना चाहिए।

उपचार—(अ) मुनक्का या दाख, हरड़, नागर मोथा काकड़ा सिंगी और धमासा का समभाग चूर्ण कर विषम भाग में घृत और शहद में मिला कर चटावे। अथवा—(आ) अद्रक के स्वरस में थोड़ा शहद मिला कर औटावै, गाढ़ा सा हो जाने पर उसमें भूना हुआ सुहागा ४ रत्ती और लौंग चूर्ण १ मासा मिला बार २ चटावै। अथवा कटेली की जड़, जीरा और सूखा आंवला समभाग महीन चूर्ण कर ३ माशा चूर्ण की मात्रा में शहद मिलाकर चटावे। पथ्य जो ऊपर के विकारों में कह आये हैं वैसा ही होना चाहिए। दही, छांछ, और भैंस का दूध नहीं देना चाहिए। बकरी का दूध देना लाभ प्रद है, नहीं तो गाय का देवें।

गर्भपात—यह गर्भावस्था के सब विकारों का अंतिम घोर परिणाम है। इसके विषय में बहुत कुछ लिखा जा सकता है। हमारा विचार यहाँ पर गर्भिणी के साधारण विकारों के ही विषय में लिखने का था, जिसे हमने यथाशक्ति पूरा किया है।

अब यहाँ पर गर्भिणी के विकारों पर कुछ प्रसिद्ध उत्तमोत्तम शास्त्रोक्त प्रयोगों को लिख कर लेखनी को विश्राम देंगे—

(१) गर्भिणी के ज्वर, खांसी, श्वास आदि पर। शिलाजीत, अभ्रकभस्म, रससिंदूर, मूंगाभस्म, लोहभस्म स्वर्ण माक्षिक भस्म और हरताल सब समभाग लेकर एकत्र खरल कर भांगरा, अर्जुन, संभालु, बांसा, कमल और कुड़े के रस की भावनायें देकर मटर जैसी गोलियाँ बनावें। यथोचित अनुपान के साथ सेवन कराने से गर्भिणी का घोर ज्वर, श्वास खांसी, सिरपीड़ा, रक्तातिसार, संग्रहणी, वमन, अग्निमांद्य, आलस्य और दुर्बलता आदि रोग नष्ट होते हैं। इसे इन्दुशेखर रस कहते हैं।

(२) ज्वरपर—लालचंदन, सारिवा, लोध और मुनक्का के क्वाथ में शक्कर मिला पिलाने से गर्भिणी का ज्वर नष्ट होता है। यह चन्दनादि क्वाथ ज्वर पर बहुत ही मुफीद है।

(३) गर्भ चिन्तामणी रसः—जायफल, सुहागा भुना हुआ, सोंठ, मिर्च, पीपल और शुद्ध सिंगरफ समभाग लेकर महीन चूर्ण कर, दो २ प्रहर तक जम्भीरी नीबू और अदरक के रस में घोट कर दो २ रत्ती की गोलियां बना लेवे।

उष्ण जल के साथ सेवन करने से गर्भिणी के समस्त विकार दूर हो जाते हैं।

(४) वृहद् गर्भ चिन्तामणि रसः— शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक की कज्जली कर उसमें स्वर्णभस्म, लोहभस्म, चांदी भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, हरताल

भस्म, बंग भस्म और अभ्रक भस्म सब समभाग लेकर मिलावे और ब्राह्मी, अडूसा, भंगरा पित्तपापड़ा और दशमूल के रस या क्वाथ की पृथक २ सात २ भावनायें देकर आधी रत्ती या १ रत्ती की गोलियां बना लेवे। इसके सेवन से गर्भिणी के ज्वर, दाह, प्रदर, आदि विकार शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

(५) गर्भपाल रसः—शुद्ध हिंगुल, नागभस्म बंगभस्म, दाल चीनी, तेजपात इलायची, सोंठ, मिर्च पीपल, धनिया, कालाजीरा, चव्य, मुनक्का और देवदारु प्रत्येक एक २ तोला लेकर, महीन चूर्ण एकत्र घोटकर उसमें लोहभस्म आधा तोला मिला कोयल (विष्णुकांता) के रस में ७ दिन तक खरल कर एक २ रत्ती की गोली बना लेवे। इसका सेवन गर्भिणी को प्रथम मास से लेकर ९ मास तक कराने से सर्व विकार दूर हो जाते हैं।

(६) गर्भ विनोद रसः— सोंठ, मिर्च, पीपल एक २ तोला, शुद्ध हिंगुल ४ तोला, जायफल ३ तोला, लौंग ३ तोला, सुवर्ण माक्षिक भस्म २॥ तो० लेकर महीन चूर्ण कर, सबको एकत्र जल के साथ खरल कर चने जैसी गोलियाँ (मूंग या उड़द जैसी बनाना ठीक होगा) बना सेवन कराने से गर्भिणी के विकार शीघ्र दूर होते हैं।

(७) पृश्निपर्णी बलावासा निर्यू हो रक्तपित्त जित्।
गर्भिण्याः कामला शोधः श्वासकास ज्वरापहः॥

यो० र०

अथात—पिठवन, खिरेंटी और रूसा का स्वरस अथवा क्वाथ पिलाने से गर्भिणी के रक्तपित्र, कामला शोध, श्वास खांसी और ज्वर दूर भागता है।

(८) बात जन्य रोगों परः—

विल्वाग्निमन्थ पक्वं वा पाटल्या नागरेण वा।
सिद्धमम्बु पिबेच्छीतं गर्भिणी बात रोगनुत्॥

यो० र०

अर्थात्—बेल छाल, और अरणी का क्वाथ, अथवा पाढल और सोंठ का क्वाथ पिलाने से गर्भिणी के बातज विकार नष्ट होते हैं।

(९) गर्भस्तंभन प्रयोग—

समभागं सितायुक्तं शालि तण्डुल चूर्णकम्।
उदुम्बर शिफा क्वाथे पीतं गर्भं सुरक्षति॥

अर्थात्—गूलर की जड़ की छाल के क्वाथ के साथ समभाग चावल और मिश्री के चूर्ण को मिला नित्य एक बार पिलाने से गर्भ सुरक्षित रहता है। छाल २ तोला दोनों का क्वाथ ४० तो० जल में अष्टमांश तैयार करे, उसमें व का चूर्ण २ तोला मिलावे। पिलाने की मात्रा १ तोला।

(१०) शूलोपचारः—

गर्भिणी को यदि प्रथम मास में शूल हो तो

लाल चन्दन, सौंफ, मिश्री, और मोगरा समभाग, चावल के धोवन में पीस, तथा दूध मिला उचित मात्रा में पिलावे। अथवा तिल, पदमाख कमल नाभ और साठी चावल समभाग लेकर दूध में पीस। मिश्री और शहद मिला पिलावे। गर्भिणी को क्षीरयुक्त आहार देवे।

यदि द्वितीय मास में शूल हो तो—

नीलोफर, सिंघाड़ा, और कसेरू को चावलों के जल में पीस कर पिलावे। गर्भ शूल दूर होकर वह स्थिरता को प्राप्त होता है।

तृतीय मास में शूल हो तो—

क्षीर काकोली, और काकोली और आँवलेको उष्ण जल में पीस कर पिलावे तथा इस के पच जाने पर

खीर खिलावे। अथवा नीलोफर, कूट, कमल नाल और मिश्री को जलमें पीसकर दूधमें मिलाकर पिलाने से शूल शांत होता है, तथा गर्भ शांत रहता है। क्षीर काकोली और काकोली के अभाव में असगंध और सतावरी लेवे।

चतुर्थ मास में पीड़ा हो तो—

नीलोफल, कमलनाल, कंटेरी, और गोखरू को दूध में पीसकर, यथोचित मात्रा में पिलावे।

अथवा—गोखरू, कंटेरी, नेत्रबाला, और नीलोफर को दूध में पीस कर पिलावे।

पाँचवें मास में शूल हो तो—

नीलोफर, और खस को दूध में पकाकर तथा उस में घृत और शहद मिला पिलावे। शहद इतना मिलावे जिस में दूध मीठा हो जावे।

अथवा—नीलोफर और काकोली को शीतल जल से पीस, दूध में मिला पिलावे। इस में थोड़ी मिश्री भी मिला लेनो चाहिये।

छठवें मास शूल उत्पन्न हो तो—

बिजोरा नीबू के बीज, फूल प्रियंगु लाल चन्दन, और नीलोफर को दूध में पीसकर पिलावे।

अथवा—चिरौंजी, मुनक्का, और खीलों के सत्तू शीतल जलमें पीस कर पिलावे।

सातवें मास में शूल हो तो—

शतावरी, और कमलनाल को दूध में पीस, तथा मिश्री मिलाकर पिलावे।

अथवा—कैथ की जड़ की छाल और सुपारी के जड़ की छाल को शीतल जल से पीस, तथा दूध और मिश्री मिला पिलाने से गर्भ विक जाता है।

यदि आठवें मास में शूल हो तो—

चावलों के पानी में धनिया पीस कर पिलावे।

अथवा—शीतल जल के साथ पलाश या ढाक के पत्त पीसकर पिलाने से भी घोर गर्भ पीड़ा शांत होती है।

नवम मास में असह्य वेदना हो तो—

एरण्ड मूल और काकोली को शीतल जल में पीस कर पिलावे।

अथवा—ढाक के बीज, काकोली और कटसरैया को चाँवलों के धोवन के साथ पीस कर पिलावे।

यदि दशम मास में गर्भ शूल हो तो—

नीलोफर, मुलैठी, मूंग और मिश्री को जल के साथ पीस, दूध मिला पिलावे।

यदि ११ वें मास में शूल हो तो—

मुलैठी, पद्मक, कमलनाल, और नीलोफर को शीतल जलके साथ पीस दूधमें मिलाकर पिलावे। इस में भी मिश्री मिला लेवे।

नोट:—साधारणतः नवम मास के पूर्ण होने पर गर्भिणी भार से मुक्त हो जाती है, किन्तु कोई २ स्त्री १२ मास तक गर्भ को धारण किये हुये रहती है। यदि १२ मास से भी अधिक महीने हो जाँय तो फिर विशेष विकार की सम्भावना है। कहा है—

नवमे दशमे मासि नारी गर्भं प्रसूयते।
एकादशे द्वादशे वा ततोऽन्यत्रविकारतः॥

इति सर्वे सन्तु निरामयाः

आर्तव-व्याधियों की चिकित्सा

(ले०—श्री० डा० युद्धवीरसिंह जी H. M. B.)

विलम्ब रजस्त्रव—पलसाटीला ३×या ३०—जब पेट और कमर में दर्द, माथे में पीड़ा, सदा शीतलगना, जी मिचलाना, हिस्टीरिया के लक्षण—कभी रोना, कभी हँसना—धड़कन, रक्त की कमी सुस्ती, भूख बन्द मालूम हो, इन लक्षणों के साथ २ यदि श्वेतप्रदर भी हो तब "सीपिया ६" दें।

एकोनाइट ३×एक बार मासिक धर्म होकर, आर्द्र स्थान में अधिक फिरने, भीगने या सर्दी लग जाने से एक दम बन्द होगया हो, तब यह दवा जल्दी फायदा करती है। ब्रायोनिया ६—१२—जब मासिक धर्म के बदले नाक या मुँह से खून जाता हो, छाती में सुई चुभने जैसा दर्द हो, कब्ज हो, सूखा मल निकलता हो, सूखी खांसी हो पिंडलियों और पट्ठों में दर्द हो।

सिमिसीफ्युगा ६—३०, जब डिम्बकोष या स्नायु शक्ति की कमी से मासिक न होता हो, नींद न आवे, सिर दुखे, बाएं अंग में और छाती की बाईं ओर या नीचे दर्द हो। खून की कमी से हो, तो "फेरम ६" या "चायना ६" हाथ पाँव में सूजन और कमजोरी बहुत ज्यादा हो तो 'आर्सेनिक ३०" साथ ही फेफड़े की खराबी हो, तो फासफोरस ६—३० श्वेतप्रदर तथा योनी में खुजली भी साथ हो, तो सल्फर ३० एक या दो बार मासिक होकर बन्द होगया हो, कम होता हो या दब गया हो तब "सिनेशिया" श्वेतप्रदर साथ हो तब कोनियम ३०, गला भी फूलता हो तो "आयोडियम ३०" मोटा शरीर कमजोरी अधिक हो, पुराना अजीर्ण हो, हाथ पाँव ठंडे रहा करें, प्रातःकाल के समय अधिक तकलीफ हो, दूधिया प्रदर तथा कंठमाला हो तो "केलकेरिया कार्ब ६—३०" दिन में तीन-चार बार देना चाहिये।

अधिक आयु होजाने पर भी मासिक धर्म ना हुआ हो और यौवन के शेष चिन्ह अच्छी तरह से प्रगट होगए हों तो विवाह होजाने पर ये रोग स्वयं ही मिट जाता हैं।

एलोपैथिक—मतानुमार यदि रोग खून की कमी से हुआ हो और रोगिणी पीली पड़ गई हो तो शक्ति प्रद दवाई दी जाती हैं। सल्फेट आफ आयरन (Feri Sulphas) अर्थात् हीराकसीस २ र० आधि छटांक जल में मिलाकर दिन में तीन बार देना चाहिये।

दस्त आता रहे इस लिए दस्तावर औषधियाँ दें मैगनेशियम-सल्फेट १ औं० जल में घोलकर पी जाने से ३—४ दस्त होजाएँगे।

निम्नलिखित गोली कब्ज के लिए अच्छी है।

पोडाफाईली रेजिन १ ग्रे०

एक्सट्रेक्ट हायोसाइमी २ ग्रे०

कालासिंथ २ ग्रे०

इनको मिलाकर १ गोली बना लें, रात को सोने समय १—२ गोली खाने से सुबह कोठा साफ हो जायगा।

गरम पानी में बैठना, गर्म जल से पेड़ू पर सेंक करना या पेड़ू पर राई की पुल्टिस की सेंक देने से अवश्य लाभ होता है।

रजोरोध—(Amenorhoea)

भय. शोक या मानसिक संताप के कारण रजोरोध हुआ हो तो "एकोनाइट" या "इग्नेशिया" दें। शीत या रक्त की कमी से रजोरोध हुआ हो तो केलकेरिया कार्ब ६" दें।

ख़ून की कमी के साथ दस्त भी हों तो "फेरम ६" और स्राव के बन्द होने से रोगिणी पेट के दर्द से छटपटाती हो तो "जैलसीमियम ६" दें।

नासिका से रक्त गिरे सिर घूमे, खांसी, बलराम तथा छाती में सुई चुभने से जैसा दर्द हो, पेट के सभी भागों में दर्द हो तो "ब्रायोनिया" ६ दें।

रोग पुराना हो डिम्बकोषों में दर्द हो, प्रदर हो, तो 'कोनियम ६" दें। रोग नया हो सिर भारी रहा करे या चक्कर आया करें, सुस्ती हो सख्त कब्ज हो, पेशाब रुकता हो, तो "ओपियम ६-३०" दें पलसाटीला और सिपोया पूर्व लक्षणों के साथ बहुत कम आती है।

उत्तजक पदार्थ खाना बन्द कर देना चाहिए शुद्ध स्वच्छ खुली वायु का सेवन, गर्म जल से स्नान, हलका पुष्टी कारक भोजन, आमोद-प्रमोद में रहना, वायु परिवर्तन, आदि बातें लाभदायक हैं।

अजीर्ण रहता हो तो उपरोक्त गोलियां सेवन करें।

नीमकी छाल ४ माशा जल डेढ़पाव गुड़ २तो०, इस का क्वाथ २ छटाँक शेष रह जाए उतार कर छान लें, कुछ निवाया पियें इस से बन्द हुआ मासिक धर्म फिर होने लगता है।

दवा प्रारम्भ करने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि गर्भ तो नहीं है या रक्त की कमी या अन्य किसी रोग के कारण तो नहीं है।

रक्त की कमी से हो तो रक्त की कमी के लक्षण वाली दवा खाएं। यदि अन्य किसी रोग के कारण हो तो उस रोग की चिकित्सा करें।

अभिनय ऋतु—

अनिरज, स्वल्परज, रजोरोध आदि में जो दवा काम में लाई जाती है वे ही इस में भी लक्षणों के अनुसार काम में लाई जाती है।

पलसाटीला ३० तथा चायना ३०, इन दोनों दवाओं की दो या एक मात्रा प्रतिदिन सेवन करने से कम ठीक हो जाता है।

एलेट्रिसफेरीनोजा का टिंचर भी लाभदायक है।

अनुकल्परज (Vicarious menstruation) रजोरोध, रजोलोप, या अल्परज-स्राव के कारण नाक फेफड़ा गुदा या मुंह से रक्त निकलना है "ब्रायोनिया ६" "हैमामैलिस" इसकी अच्छी दवा है।

उज्वल लाल वर्ण का रक्त निकले तो "इपिकाक ६ यदि खांसने में ख़ून निकले, क्षीणता मुँह पीला क्षय रोग के से लक्षण प्रकट हों तो सिलिसिओ ३ × लाभदायक है।

नाक या कान से रक्त निकले, स्तन में दर्द हो तथा शरीर गर्म हो हरारत रहे तो "पल्साटिला ६"

कान में साँय सांय की आवाज अधिक कमजोरी धड़कन सर में चक्कर, थूक में रक्त मुख तथा ओष्ठ पीला हो तो "फेरम ६" देना चाहिये।

अल्परज—

शीतल वायु न सह सके, कै, सर दर्द, शारीरिक तथा मानसिक ग्लानी, शरीर पीला पड़ने लगे तो "सीपिया ३०" दें।

साइक्लैमेन ६—आधे सिर में दर्द आँखों की पलकें भारी यथा शोथयुक्त, मसूड़े पीले, भूख बन्द, शीत लगना, धड़कन रहे, तब देना चाहिये।

केलकेरियाफास ६-३० "खाँसी या गला बैठना, दुबलापन ज्वरांश, कमजोरी में।

"मर्क्यूरियस ६ "यकृत की खराबी साथ में नेत्र पीले हों, दिल बैठा जा रहा हो तब देना।

पलसाटीला ६-३०—मासिक धर्म से पहले या बाद कमर में दर्द रहना, पीला शरीर होना, पतला पीला पानी जैसा स्राव होना, जी उदास रहना, रोने को मन चाहना, शीत लगना आदि हालतों में लाभ होता है।

अतिरज—इस रोग में होम्योपैथिक चिकित्स अत्यन्त उपयोगी पड़ती है। लक्षणों को मिलाकर औषधि का निश्चय करना चाहिये।

आर्सेनिक ३+चोट लग जाने, गिरपड़ने या धक्के के कारण मासिक धर्म प्रारम्भ होगया हो।

आर्निका ६-३०—मासिक धर्म के बाद ख़ून अथवा प्रदर मिला रजस्राव हो, अत्यन्त कमजोरी, गर्भाशय में पुरानी शोथ, अतिरजस्राव।

केलकेरियाकार्ब ६-३०—समय से पहले अधिक मात्रा में रजस्राव शरीर में भारीपन या मोटाई, योनी में खुजली और प्रदर हो।

तब यह दवा मासिकधर्मों के बीच में ही देनी चाहिए।

चायना ६-३०—पतला और कभी २ गाढ़ा काला ख़ून अधिक दिन तक निकले, सिर के मध्य का भाग तपे, कानों में साँय साँय हो रक्त अधिक निकले कमजोरी तथा बेहोशी भी हो, तब बीच के समत में प्रयोग करें।

कोकससेटाइवा ३-१+—काला काला लसदार, मलकतर जैसा छिछड़ेदार ख़ून अधिक मात्रा में सदानिकलना, कभी पतला बदबूदार रजस्राव होना, जरा हिलने डुलने तथा खड़े होने से रक्त निकल पड़ना, दर्द के साथ मासिकधर्म होना, जरायु के मुख पर चेंटी रेंगने जैसी सुरसुराहट, सारा शरीर ठंडा किन्तु अन्दर गर्मी लगे, मासिकधर्म जबन हो रहा हो तब "चायना" और रोग के समय कोकस देने से लाभ होता है। प्लाटीना के साथ भी इसको दे सकते हैं। पुराने रोगों में यह दवा अधिक लाभ देती है।

फ़ेरम ६-३०—मास में एक बार अधिक परिमाण में रजस्राव पतला कभी गाढ़ा काला होने में तथा ख़ून निकलने में। दुबली पतली पीली बीमार स्त्रियों को यह दवा लाभ करती है जब रक्त की क्षीणता हो तब मासिक धर्म के अतिरिक्त दवा देना।

हेमोमेलीस ३-६-३०—डिम्बग्रन्थि की खराबी से अधिक काल तक ख़ून के निकलने में यह दवा विराम तथा रोग, दोनों समयों में दी जासकती है।

प्लाटीना—६-३०—गाढ़ा काला तारकोला जैसा अधिक रजस्राव, पुट्ठे और योनी में दर्द, ऐसा जान पड़े मानो आते योनी की राह से निकल जाएगीं, कमर तथा जांघों में दबाव, डिम्बग्रन्थियों में उत्तेजना के कारण पुरुष सहवास की अधिक इच्छा, गर्भाशय में प्रदाह हो, ऐसे समय में।

फ़ासफ़ारस ३०—विराम अवस्था में क्षय रोग पीड़ित रुग्ण स्त्रियों को मानसिक तथा काम उत्तेजना अधिक हो। पलसाटीला ३०—रजोनिवृत्ति के समय गर्भावस्था तथा प्रसव के बाद पीठ और पेडू में दर्द हो जी उदास रहे, अपने आप रोना आवे। ४०—५० वर्ष की आयु में जब गाढ़ा काला या पीला पतला पतला ख़ून निकले तब देना चाहिए।

कैमोमिला १२—ऋतु के पहले प्रसव जैसा दर्द हो फिर दानेदार रक्त निकले तथा रह रह कर दर्द हो।

सेबाइना ६—३०—गुर्दे में खराबी हो कम देख पड़े डिम्बकोष में दर्द हो रक्त एक रफतार से न निकले ठहर ठहर के निकले, पेडू में दबाव जान पड़े लाल रंग का खून निकले यह खास कर उन स्त्रियों के लिए है जिनको बार बार गर्भपात हुआ हो या जिनकी आयु ४०-४५ वर्ष है। इपिकाक ६—नाभी में दर्द का होना और उसका गर्भाशय तक फैलजाना बराबर जी मिचलाना, सिर घूमना तथा दर्द होना, चेहरा उतरा हुआ सा ठंडा रहना, खूब लाल रंग का रक्त निकलना।

सिकेली ३ × दुर्बल स्त्रियों के रक्त स्राव में "सल्फर २०" शरीर में खुजली हो, रोग पुराना हो। ऐकोनाइट ३ × ज्वर रहने पर। बेलाडोना ३ × सिर में दर्द अधिक होने पर। जब रक्त अधिक बह रहा हो तो १०-१० मिनट के बाद दवा दी जाए। आमतौर पर २-३ घण्टे के अन्तर से दवा देना चाहिए। रोगिणी को आराम से लेटे रहना उचित है, शीतल जल से स्नान करना, बर्फ पेडू पर रखना तथा योनि को खूब गर्म या खूब शीतल जल से धोना चाहिए, मैथुन तथा उत्तेजक वस्तु मना है।

योनि में कपड़ा साफ स्वच्छ धुला हुआ लेना चाहिए स्पञ्ज या कपड़े पर ग्लासरीन अच्छो तरह लगा लेना चाहिए कपड़ा ५-६ घण्टे बाद बदल देना चाहिए।

बाधकवेदना (Dysmenorrhoea)

सिमिसीफ्यूगा ६—ऋतु से पहले सिर दर्द, पेट में मासिक धर्म के समय प्रसव जैसी पीड़ा, पेडू, पुट्ठे; पीठ, और पाकस्थली के ऊपर बहुत दर्द हो, रक्त कम या अधिक निकले तब यह देनी चाहिए।

कालोफाइलम ६-३० × बाधकवेदना होने पर भी मासिक रक्त ठीक २ निकले, रक्त में कमी न हो, इसका प्रभाव गर्भाशय तथा गर्भाशय ग्रीवा दोनों पर पड़ता है।

पलसाटीला ६-३० × कतरने जैसा दर्द हो बदहज़मी रहे सर्दी लगे, मासिक के समय अतिसार हो, रोने की इच्छा हो उस समय "सिमीफ्यूगा" "तथा पलसाटीला" दोनों साथ २ १-१ घंटे बाद देने से बहुत सी रोगिणियों को लाभ होता है।

बेलाडौना ६—३० जब गर्भाशय तथा डिम्बकोष में रक्त जम जाए या दर्द के साथ ऐसा मालूम पड़े कि आँतें योनि के रास्ते बाहर निकल पड़ेगी।

जेलसीमीयम ३ × मरोड़ जैसा दर्द हो, गर्दन तक दर्द मालूम पड़े थोड़ा २ ज्वर मालूम पड़े, दर्द न रहने पर नींद आती है। कैमोमिला १२—बार २ मूत्र आए, प्रसव जैसा दर्द हो रक्त काला निकले।

कबेक्यूलस ६—जब बेहोशी मालूम हो श्वेत प्रदर हो पेट में मरोड़ हो, छाती में दबाव तथा सांस लेने पर कष्ट हो, जी मिचलावे, रक्त काला निकले।

मैग्नेशियाफास ६ + चूर्ण—गर्म पानी के साथ दो जब गर्भाशय में ऐंठन का—सा दर्द रह रह कर उठे।

गर्भाशय में जल संचय

(ले०—डा० युद्धवीरसिंहजी H. M. B.)

प्रदाह आघातादि सूखने पर कभी २ जरायु का मुख बन्द हो जाता है। और किसी-किसी की जरायु का मुख तो जन्म से ही बन्द होते हैं। मुख बन्द होने पर जरायु क्रमशः बढ़ती है, और उस पर ऊपर की झिल्ली से जल या रक्त मिश्रित जल-छन छनकर इकट्ठा होजाता है इस रोग के सम्बन्ध में देवियों से हमारी केवल यही प्रार्थना है कि कभी-कभी दक्ष चिकित्सक भी इसकी जाँच में गलती कर जाते हैं और रोग को गर्भ समझ लेते हैं इसमें केवल चिकित्सकों का ही दोष नहीं क्योंकि कुछ तो चिकित्सकों की लापरवाही होती है और कुछ देवियों की अनावश्यक लज्जा, जिसके कारण से उस स्थान विशेष

की चिकित्सा या परीक्षानहीं करने देती इस लिए कभी कभी इन भयंकर रोगों का निदान केवल मामूली दाइयों के कहने पर ही करना पड़ता है क्योंकि स्त्रियाँ लज्जावश परीक्षाकराना अस्वीकार कर देती हैं।

इन रोगों के सम्बन्ध में जहाँ तक दक्षऔर सदाचारी चिकित्सक चुनने का प्रयत्न करना चाहिए, वहाँ स्वयं भी थोड़ी लज्जा और अनावश्यक झिझक को छोड़ कर काम करना चाहिए देवियों को जान लेना चाहिए कि अपने शरीर के जिन भागों को वे छिपाती हैं चिकित्सक उनकी प्रत्येक रग रग और नस नस से भली भाँति परिचित हैं। इस लिये ऐसे रोग होने पर तुरन्त परीक्षा कराकर सुयोग्य चिकित्सक से इलाज शुरू करा देना चाहिए।

केलकेरिया कार्ब ६—और कोर्बोवेज ३० इस रोग की उत्तम दवाएँ हैं। "गुप्तसन्देश"

❀ गर्भपात और उसकी रक्षा ❀

चार मास पर्यन्त गर्भ रुधिर के रूप में स्राव होता है और इसके उपरान्त साङ्ग गर्भपात होता है। जब गर्भपात होने वाला होता है तब आमाशय और पक्वाशय में खलबली उत्पन्न होती है पसली और पीठ में पीड़ा, अफारा, दाह, मूत्रावरोध, रक्तप्रवाह और बेचैनी होती है। पूर्ण समय पर प्रसव होने में उतना कष्ट नहीं होता जितना गर्भपात होने मे होता है। किसी किसी का तो इस भीषण यंत्रणा से प्राणान्त तक हो जाता है। यहाँ कुछ अनुभूत प्रयोग गर्भ की रक्षा के लिये पाठकों के समक्षरक्खे जाते हैं जिनके उपयोग से उन्हें यश प्राप्त करने की दृढ़ आशा है।

(१) अशोक की छाल, कमलगट्टा की गिरी, खस, छोटी इलायची का दाना और लोध पठानी एक एक तोला। सब को अधकुट कर के ४ मात्रा बना ले। एक मात्रा आध सेर गोदुग्ध में डालकर पकावे। आधा दूध जल जाने पर नीचे उतार एक छटाँक मिश्री का चूर्ण मिला वस्त्र से छान ले। शीतल होने पर थोड़ा थोड़ा तीन बार में पन्द्रह मिनट के अन्तर से पिलावे तो गिरता हुआ गर्भ थम जाता है और पेडू की पीड़ा, रक्तस्राव आदि उपद्रव निस्सन्देह दूर हो जाते हैं। यदि यही औषधि पानी में पकाकर पान कराई जावे तो गर्भपात होजाता है।

(२) काला तिल, भूसी रहित यव और मिश्री पाँच पाँच तोले। तीनों का कपड़छान चूर्ण बना ले। मात्रा ६ माशे, अनुपम मधु के साथ पाँच पाँच मिनट के अन्तर से तीन चार बार के चटाने से होता हुआ गर्भपात रुक जाता है।

(३) सोने का वर्क ४ ताव। अनविधे मोती, जहरमोहरा खताई, दरियाई नारियल, मुँगा भस्म, और मोती सीप भस्म, छे छे माशे। गङ्गाजल के साथ छओं औषधियों को एक घड़ी घोंट कर चना के बराबर गोली बना ले। मात्रा १ गोली, गाय के धारोष्ण दूध के साथ सेवन कराने से अकाल में होने वाला गर्भपात नहीं होता और दूसरे मास से प्रति दिन प्रातः काल आठवें महीने तक इन गोलियों का निरन्तर सेवन कराने से गर्भ की पुष्टि और रक्षा होती है।

मोती और जहरमोहरा दोनों अलग २ एक घड़ी अर्क गुलाब में घोंट कर शुद्ध करके डालना चाहिये।

(४) छिलका रहित पलाश की मोटी लकड़ी लेकर चन्दन की भाँति चिकने पत्थर पर पानी के साथ घिसे। लगभग २-२॥ माशे के उतर आने पर एक तोला मिश्री और आधपाव गोदुग्ध में घोलकर दो तीन बार आधे घण्टे के अन्तर से पिलावे तो गर्भपात रुक जाता है। इसी प्रकार प्रथम मास से आठवें महीने तक प्रति दिन प्रातः काल सेवन कराते रहने से बालक गर्भ में पुष्ट होता है और अकाल में कदापि गर्भपात नहीं होता। शतशोनुभूत है। समय पर सुख पूर्वक प्रसव होता है। गरमऋतु में एक माशा छोटी इलायची का दाना और दो माशे कमलगट्टा की गिरी मिलाकर पेया तैयार कराना अधिक लाभ कारी होता है। —महावीरप्रसाद वैद्य

शिशु पोषण

लेफ्टिनेन्ट डा० ऐस. सी. आनन्द M.B.B.S, I. M. S सम्पादक "मेडिकलकापरेड" देहली

एक अंग्रेज़ी कवि ने कहा है बच्चा ही मनुष्य का पिता है, यथार्थ में हमारा गौरव हमारी आनेवाली सन्तान पर ही निर्भर है मनुष्य कितने ही घोर विपत्ति में हो उसका हृदय छोटे बच्चों की पवित्र लावण्यमय मुसकराहट को देख कर अवश्य खिल उठेगा। अमेरीका, इंगलैन्ड, जापान आदि उन्नति शील देशों में शिशुपालन के वास्ते हर नगर में clines खुले हैं और नाना प्रकार की सुविधाऐं राज्य तथा नगर के श्रेष्ठ धन सम्पन्न विद्यमानों की ओर से जनता को प्राप्त हैं जिनमें विनालिहाज़ ऊंच नीच छूत अछूत ग़रीब अमीर के सब बच्चों को राष्ट्र की सम्पदा समझ कर नवीन से नवीन उन्नत से उन्नत तरीकों का प्रयोग बड़ी सावधानी से किया जाता है कि किस प्रकार हम अपनी सन्तान को मज़बूत बनावें कि वह अपने पैरों खड़े होकर दुनियां की कशमकश को झेल सकें।

"जीवन सुधा" के प्यारो आओ, हम देखें क्या कारण है कि जब अन्य देशों में यदि ५० प्रतिशत बच्चे १ वर्ष की आयु के होने तक काल ग्रसित होते हैं तब हमारे भारतवर्ष में १०० पीछे का औसत है शोक है कि ऐसी सुजलां सुफलां भारत भूमि में जो सदैव आदि काल में वीर प्रसवी हो अब उसके लाल यों अकाल काल ग्रसित हों खैर पछताने से क्या होता है कवि का बचन है "जो बन आवे सहज में ताहि में चित्त देय"। भाइयों! चूंकि इस समय हम को आयुर्वेद के अनुसार बिचार करना है इस वास्ते अन्य कारणों को हम यहां नज़रअन्दाज़ करेंगे और उनके समझने का भार प्यारे जीवन सुधा के योग्य विद्वान ग्राहकों पर छोड़ कर आयुर्वेद सम्मत प्राचीन अरवाचीन आदि पर ही समय समय विचार करेंगे और पाठक वृन्द से आशा है कि यह इस लेख में अपनी परिस्थिति के अनुसार जनता को लाभ पहुंचाने का प्रयत्न करेंगे।

आपको यह सुन कर हर्ष होगा कि मामूली मामूली छोटी२ बातों पर समय अनुसार विचार रखने से हम इस प्रकार देश के सब से बड़े नुकसान को सहज ही में रोक सकते हैं, और उन माता पिताओं को जिन्होंने बड़ी बड़ी आशाओं के बाद पुत्र अथवा पुत्री का मुंह देखा है और जो उनकी गोदी का जागता खिलौना और घर का दीपक हैं. भाइयों प्रथम तो हम को प्रसूतागार में ही इस बात की रोक थाम करने की ज़रूरत है आधुनिक शल्य सम्बंधी पवित्रता का उपयोग होना चाहिए।

दूसरे बच्चों को ऐसी अवस्था में जब तक कि उनके अस्थाई दांत न निकल आवें उनको अन्न (रोटी के टुकड़े) कच्चे फल आदि२ से दूर रक्खा जाए साथ ही हम को असली छूत छात का ख्याल रखना ज़रूरी है हमारे पूर्वजों में सफाई का ख्याल ज्यादा था और यही सेहत की कुंजी है अब हम झूठी (दिखावटी) छूत छात को तो करते हैं परन्तु असली उद्देश को भूल गए हैं सो हमें इस बुढ़िया पुराण को तिलाञ्जलि देकर सेहत को कायम रखने वाली सफाई (छूत छात) पर ग़ौर करना चाहिए मसलन ऐसे जीवों से दूर रहना जो रोग वाहक हैं

उनमें मक्खी मुख्य है और काटने वाले विषयले जन्तुओं से भी बच्चों को बचाना लाज़मी है हमको मनुष्य के इन प्राण घातक शत्रुओं से बचाने के वास्ते ऐसे२ उपाय करने होंगे जिनसे उनको अपने वंश की वृद्धि के वास्ते उपयुक्त स्थान ही प्राप्त ना हो सके कूड़ा, गन्दे पानी का जमाव उनके पोषक स्थान हैं।

नवजात शिशु यदि तन्दुरुस्त हुवा है तो उसका भार ३ सेर ४ सेर तक होगा पहले छः महीने बच्चा औसत आधपाव हर हफ्ते वज़न में बढ़ता है दांत छटे या सातवें महीने में निकलने आरम्भ होते हैं एक वर्ष का होने तक छः छः दांत निकल आने चाहिए डेढ़ वर्ष का होने पर १२बारह दो साल में १६दांत और ढाई साल की आयु होने तक बीसों दूध के दांत निकल आते हैं बच्चे की छटे वर्ष की आयु तक स्थाई दांत निकलने शुरु हो जाते हैं दसवें महीने बच्चा अपने पांव पर खड़ा होने लगता है और बारवें महीने थोड़ा थोड़ा चलने भी लगता है पैदा हुए बच्चे के सिर में दो मुलायम जगह होती हैं एक आगे जिसको प्राय तालु कहते हैं और दूसरी पश्चात् भाग में होती है पीछे वाली जगह में तीसरे महीने अस्थि बन जाती है और आगे वाली अठारवें महीने तक यदि यह दोनों जगह दो वर्ष तक की आयु तक हड्डी में परिणत न हो जावें तो समझना चाहिए कि इस बच्चे को कोई रोग है मसलन (सूखिया Richet आदि) या उसका पोषण उचित रीति से नहीं हुवा बच्चा दिन में कई दफा रोता चिल्लाता है बच्चे का न रोना अक्सर यह बतता है कि बच्चा रोगी है स्वस्थ बालक के रोने में एक प्रकार का उसको व्यायाम होता है बच्चे का रोना अक्सर स्वभाविक ही होता है अतः अय माता पिता इसको भूक का कारण समझ कर उसको दूध न पिलाना चाहिए न उसको गोद में उठा कर खिलाना चाहिए यह दोनों बातें हानिकारक हैं बच्चे की देख भाल करना जरूरी है।

चेचक या माता से हज़ारों बच्चे हर साल मरते हैं इसलिए तीसरे महीने लगने से पहले टीका लगवा लेना चाहिए चेचक के दिनों में तो दो सप्ताह के बालक को लगवा लेना लाज़मी है इससे बच्चे की मृत्यु और कुरूप होनेका भय जाता रहता है प्रथम दो तीन हफ्तों में बालक ज्यादा सोता रहता है बच्चे की सोने की गद्दी आरामदेह (मुलायम) होनी चाहिए बेंत का बुना हुवा हिंडोला और उसके ऊपर मच्छर मक्खियों से रक्षा के लिए मसहरी होनी चाहिए मक्खियों के आंख पर बैठने से आंखें दुखनी आ जाती है, और मक्खी के ही कारण बच्चों को दस्त भी लग जाते हैं मच्छर ज्वर आदि के कारण बनते हैं खटमल से भी ज्वर खाज आदि रोग बच्चों को हो जाते हैं सोते समय बच्चे का मुंह नहीं ढकना चाहिए बच्चे को भी ताज़ी हवा की ज़रूरत है खिड़कियां खुली रहनी चाहिए जिसमें शुद्ध वायु का प्रवेश हो सके परन्तु हवा के सीधे झोंके से बचाना चाहिए या खुले में या साए में धूप की तेज़ी से बचा कर सुलाना चाहिए हां सर्दी में काफी वस्त्र होने आवश्यक हैं बच्चों को साफ रखना जरूरी है अक्सर न्हिलाते रहना चाहिए जो माताएं बच्चोंकी हिफाज़त करना जानती हैं वह अमूमन बच्चों को रोज ही न्हिलाती हैं खास कर पेशाब और टट्टी की जगह तो फौरन ही साफ करना आवश्यक है शिशुओं को ज़मीन पर बैठाना और लिटाना नहीं चाहिए

बच्चे ज़मीन पर हाथ मल कर उन्हीं हाथोंको मुंह में दे लेते हैं या खराब चीज़ कोई पड़ी गिरी चूंस लेते हैं इससे पेचिश कृमि इत्यादि हो जाने का भय है ज़मीन पर चटाई या दरी बिछा कर बच्चे को खिलाना चाहिए

रबड़ का बिटकना वगैरा बच्चों को नहीं देना चाहिए इससे गले बढ़ते हैं दांत निकलने के दिनों में चमचा वगैरा बच्चे के हाथ में देदें और यह बच्चे को देने से पहले उबाल लेने चाहिए बच्चेको लंगोटी का कपड़ा साफ होना चाहिए अक्सर जो कपड़े काम में लाए जाते हैं उनमें से बदबू आती है और इससे फोड़े फुन्सी होने का भय है पेशाब की जगह खोल कर साफ करना ज़रूरी है बच्चे के कपड़े ऐसे होने चाहिऐं कि घुटने या पैरों तक ढक जावें इससे सर्दी का बचाव होता है बाकी देश काल के अनुसार बच्चोंके कपड़ोंकी व्यवस्था करनी चाहिए।

बच्चे की खुराक

बच्चे को पुष्टि और बढ़ोत्तरी के लिए खूब खुराक की ज़रूरत है मां को खूब ताकत देने वाली सुपच खुराक खानी चाहिए ताकि वह बच्चे के लिये काफी मात्रा में दूध मुहय्या कर सके शिशु को प्रथम दो तीन महीने हर तीसरे घंटे दूध पिलाना चाहिये तीसरे या चौथे महीने से समय में थोड़ा२ समय बढ़ाते जाना चाहिए चौबीस घंटे में पांच या छः दफह से ज्यादा नहीं देना चाहिए बंधे समय पर देना चाहिए।

सुबह ६ बजे से रात्रि के १० बजे तक दूध पिलाना चाहिए रात्रि के १० बजे से सुबह ६ बजे तक नहीं पिलाना चाहिए बीच में बच्चा रोवे तो यदि ज़रूरत हो तो उबला हुवा जल दे सकते हैं दिन में भी बच्चे को अक्सर जल देना चाहिये जिन बच्चों को जल नहीं दिया जाता है उनका प्रायः मुंह आ जाता है मां को अपने स्तन के चिटकने गर्म पानी से साफ करने चाहिए यह दूध पिलाने से और बाद में नहीं भूलने चाहिए छः या आठ महीने के बच्चे को सिवाय मां के दूध के और कुछ नहीं देना चाहिए क्योंकि बच्चे का आमाशय अभी चावल, दाल, इत्यादि हज़म करने की शक्ति नहीं रखता आठवें महीने बाद मां के दूध में कमी हो जाने के कारण बच्चों को थोड़ा दलिया खिचड़ी जौ आदि से बनाई हुई राबड़ी शनैः२ देनी चाहिए और जैसे२ बच्चे की जीर्ण शक्ति में वृद्धि होती जाए उसको दाल, चावल गेहूं की राबड़ी आदि देते जाएं राबड़ी बनाने का तरीका इस प्रकार तैयार करें। आटे को तवे पर डाल कर चमचे से हिलाओ जब तक वह भुनकर भूरा पड़ जावे उस में फिर थोड़ा सा जल डाल कर आध घंटे औटाओ बाद में बकरी या गाय का गरम दूध उसमें डाल कर तैयार कर लो छोटे बच्चे को कच्ची तरकारी ककड़ी केला नहीं देना चाहिए जब तक कि उसके दांत न निकलें और चबाने के काबिल न हों मांको चबा कर अपना उगला हुवा बच्चे को नहीं देना चाहिए इससे हाज़मे की और अन्य बहुतसी कड़ी बीमारियां होने की सम्भावना है पके फलों का रस निकाल कर देना बच्चों को बहुत ही लाभदायक है इससे बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है कब्ज़ पेचिश आदि से बचा रहता है मीठे सन्तरे का रस तो बच्चे को बहुत ही हितकर है और यदि सम्भव हो तो रोज देना चाहिए मां को अपने खुद के खान पान रहन सहन का प्रसूता अवस्था और बच्चे के पालने के दिनों में

जबकि बच्चे का माता के दूध पर जीवन निर्भर हो तो अधिक ध्यान देना चाहिए यदि ऐसा न किया जाएगा तो बालक के स्वास्थ्य पर उसका हानिकारक प्रभाव होगा। अगर मां बीमार हो या किसी वजह से दूध न उतरता हो तो धाय का दूध देना चाहिए यह जरूरी है कि धाय यह परताल करके रक्खी जाये कि उसको तपेदिक आतसक कोढ़ वगैरा छूत की कोई बीमारी तो नहीं है जो बच्चे को लग जावे ऐसी अवस्था में जब बच्चे को ऊपरी दूध देना ही पड़े माता की मृत्यु हो जाने या उसके दूध न उतरे या वह बीमार हो तो बच्चे की देख भाल का भार कहीं ज्यादा दूसरे लोगों पर बढ़ जाता है ऐसी अवस्था में आधा दूध आधा पानी या चूने का पानी ज़रासी शक्कर डाल कर बालकको देना चाहिए दूध में पानी का औसत बालक की आयु और स्वास्थ्य के अनुसार हो अब ताज़ा गाय के दूध एक छटांक में एक रत्ती सोडा सिटरास या ज़रासा नीबू डालकर हर चार घंटे बाद देना चाहिये एक हफते के बच्चे को डेढ औंस या एक छटांक दूध हर तीसरे घंटे देना चाहिए छः महीने के बच्चे को छःऔंस दूध एक हफते में दे सकते हैं और यह दर चार घंटे के बाद घड़ी देख कर देना अच्छा है दूध में काम आने वाले बर्तन बोतल बिटकन तुतई आदि को खास कर दूध पिलाने से पहले उबाल लेना ज़रूरी है बहुतसी बीमारियों से बच्चा बचा रहता है यदि इस प्रकार की देखभाल होती रहे साथ में बच्चे को पानी और सन्तरे का रस भी देते रहना चाहिये दूध में एक उबाल आना आवश्यक है।

कब्ज़

Constiption

स्वस्थ अवस्था में बच्चे को एक से चार दस्त रोजाना होते हैं दूसरे तीसरे महीने बाद से अनुमन दो दस्त रोज़ाना होते हैं अगर एक भी दस्त रोजाना न आये तो कब्ज़ का इलाज लाज़मी है और जल्दी ही व्यवस्था करनी चाहिए ताकि कोई सख्त बीमारी न हो जावे

व्यवस्था

A. बच्चे के खाने में चिकनी वस्तु का हिस्सा ज्यादा कर देना चाहिए।

B. उबाला हुवा पानी खूब सारा मिलाना चाहिए।

C. सन्तरे और फलों का रस देना चाहिए।

D. साबुन की दो इंच लम्बी छोटी उंगली जैसी पेन्सिल बनाकर वेसलीन या घी लगा कर थोड़ी देर गुदा में रखना चाहिए इससे प्राय टट्टी हो जाती है

E. शहद दूध या पानी में डालकर देना चाहिए

F. अरंडी का तेल आयु के मुताबिक एक या दो चमचे एक वर्ष के बच्चे को देने चाहिए

अतिसार (दस्त)

Dearrpaea

अगर बच्चा बड़ीर दस्त जावे और साथ में फुटके भी निकलें तो इलाज लाज़मी है ऐसी अवस्था में एक दिन के लिए दूध बन्द करने से और उसके बदले उबला हुवा गरम पानी खूब पिलाने से या चांवल का मांड देने से इस प्रकार के दस्त अच्छे हो जाते हैं वरना किसी अच्छे डाक्टर या वैद्य से मशवरा करना चाहिए।

नम्र निवेदन है कि जीवन सुधा के पाठक अपने ग़रीब पड़ोसी या बेपढ़े भाइयों को लाभ पहुंचानेका ख्याल न भूलेंगे। समयनुसार अगले अंकों में।

गर्भाशय और डिम्बग्रन्थियों को प्रथक कर देने से स्वास्थ्य पर हानि लाभ ।

Hysterotomy and ovariotomy

श्रीमति डा० कुन्तलकुमारी देवी F. L. M. P & L. S. (B. & O.) प्रधान सम्पादिका "महिला रोग विज्ञान"

साधारणतया यह लोगों की धारणा है कि स्त्री का स्त्रीत्व गर्भाशय पर ही निर्भर है । अधिकांश वैद्यों का भी यही विचार होने के कारण, स्त्री की चिकित्सा करते समय जरायु को ही मुख्य समझ कर औषधियों का प्रयोग करते हैं ।

नारी शरीर रचना में स्त्री का स्त्रीत्व के लिए डिम्बकोष ही मुख्य वस्तु है । अतः उनकी अपूर्णता, गठन निवृत्ति कार्य अनियम ही अधिकांश स्त्री रोगों का कारण है, ऋतु का संबन्ध प्रधानतः डिम्बकोषों के साथ है, गर्भाशय एक ऐसी थैली है जिसके भीतरी भाग की श्लैष्मिक कला से प्रति मास ऋतु का रक्त स्राव होता है । और गर्भावस्था में उसके अन्दर सन्तान रहती है ।

इसके अतिरिक्त उसका और कोई कार्य नहीं रसौली आदि रोगों में गर्भाशय और नलों (uterus and Fallopian tubes) को आपरेशन द्वारा यदि शरीर से प्रथक कर दिये जायें तो कोई हानि नहीं । केवल बाह्य लक्षण दृष्टि गोचर नहीं हो तो, जैसे मासिक धर्म सन्तान का न होना । डिम्बकोष (Ovary) के शरीर में रहने से स्त्री के यौवन संबन्धी कुल बातें बनी रहती हैं । शक्ल सूरत में कोई अन्तर नहीं होता ।

डिम्बकोषों (Ovary) को आपरेशन द्वारा बिलकुल प्रथक कर देने से अकाल वृद्धता (Premature senility) हो जाती है, इस रोग के कारण नेत्र ज्योति नष्ट हो जाती है, बाल सफेद, चेहरे पर झुर्रियां पड़ जाती हैं । दांत कमजोर होकर हिलने लगते हैं, हड्डियों में दर्द तथा दिल में धड़कन होने लगती है । (Calcium defficiency obesty) कभी दौरों की शिकायत जैसे—Hysteria, Neurasthenia आदि हो जाते हैं कभी कभी स्त्री अधिक कमजोर दुर्बल हो जाती है । कभीर स्त्री के शरीर पर चर्बी अधिक चढ़ जाती है और दमा, तपेदिक भी हो जाता है

गर्भाशय का आपरेशन किन किन रोगों में होता है । (Hyslereelong) (१) सब प्रकार की रसौलियां का जो कि गर्भाशय तथा डिम्बग्रंथियों में हो जाती है । जैसे—कैंसर (Cancer Fibroma) रक्त गुल्म (Sarcoma, bipoma, uterine tubeculosis) (जरायुगत तपेदिक) गर्भाशय की स्थान च्युति

जरायुगत रसौलियों में, यौवनवास्था में, रक्त गुल्म (Fibromyoma) जरायुजक्षय (uterine Tuberculosis) जरायुगतरक्तार्श (Polipus uteri) अर्बुद (Sarcoma) प्रधान है । गर्भावस्था में—कौरियन एपिथिलियोमा (chorion epithelioma foesal cancer) प्रधान है । रजोनिवृत्त अवस्था में (cancer) सर्व प्रधान रसौली है । अनेक समय

पर इन रोगों के लक्षण एक प्रकार के ही होते हैं। इसलिए यथोपयुक्त आभ्यन्तरीय परीक्षण न करके इन रोगोंका केवल हाल सुनकर अथवा नब्ज़ देखकर निर्णय करना घोर मूर्खता है। तीसरे दर्जे की दिक् और कैंसर की अति वृद्धि को छोड़ कर और सभी रोगों में गर्भाशय का पृथकीकरण (Hysterotomy) इनकी एक मात्र चिकित्सा है। क्षय रोग की लाक्षणिक चिकित्सा अथवा विशेष शास्त्रीय चिकित्सा की जा सकती है। रोग की व्यापकता के ऊपर ही चिकित्सा का फलाफल निर्भर है। कैंसर गर्भाशय में अधिक फैल जाए तब गर्भाशय के आस पास के अंगों में भी व्याप्त समझना चाहिये जैसे मूत्राशय और मलाशयादियों में। इस अवस्था में आपरेशन करना भी व्यर्थ होता है इसलिये आजकल "रेडियम" (Radium) द्वारा इसकी चिकित्सा की जाती है। भारत में रांची तथा देहरादून में रेडियम द्वारा चिकित्सा का प्रबंध है।

यह चिकित्सा महंगी अधिक होने के कारण ग़रीब लोग इस चिकित्सा से वंचित हो से रहते हैं। भारत सरकार ने ग़रीबों के लिए मुफ्त चिकित्सा का प्रबन्ध किया है। इसमें भी सब रोगी निरोग नहीं हो सकते बहुत कम रोगियों को सफलता मिलती है। रेडियम चिकित्सा पर अब भी अनुसंधान हो रहे हैं।

आयुर्वेद शास्त्र में कैंसर की किस प्रकार चिकित्सा की जाती है कोई आयुर्वेद का विद्वान "जीवन सुधा" में लिखने की कृपा करें। जिससे जन साधारण को लाभ हो।

गर्भाशय तथा डिम्बकोषों को प्रथक कर देने के लिए जो आपरेशन होते हैं उनकी दो विधियां हैं।

१—भग के अन्दर से (vagnial Hysterotomy)
२—पेट के आपरेशन द्वारा (abdominal Hysterotomy)

इन दोनों को बड़ा आपरेशन माना जाता है। इन आपरेशनों में खूब सफ़ाई तथा सावधानता की आवश्यकता होती है। रोगिणी को क्लोरोफार्म देने की ज़रूरत पड़ती है, इन आपरेशनों में मृत्यु संख्या नहीं के बराबर होती है हज़ारों में कभी एक दो केस खराब हो जावें, नहीं तो नहीं, आजकल की उन्नत वैज्ञानिक प्रणाली के आपरेशनों में जान का भय नहीं है।

अगर इन रोगों में डिम्बग्रंथियां भी ग्रसित हों तो उन्हें भी प्रथक कर देना चाहिए, जहां तक हो सके दोनों ग्रन्थियों में से एक का कुछ भाग रख लेना बहुत अच्छा है। नहीं तो अकाल वार्धक्य व्याधि अवश्य हो जाएगी।

गर्भाशय को छोड़ कर केवल डिम्बकोषों (Ovary) का निकालना—(Ovaristomy or oophorectomy) Ovarian dieeares—Ovarian jumours, ovarian cyst and dermoids, chronic incurable ovaritis & sulphing oopheritis

डिम्बकोष का जलन्धर रोग—रसौलियां पुरातन प्रदाह, शोथ, अस्थिविकृति आदि आपरेशनों में भी जहां तक हो सके डिम्बकोष (Ovary) का कुछ भाग छोड़ देना चाहिए यदि अच्छा हो तो।

(OvarianCyst) यह डिम्बग्रंथियों में जल संचय का कारण होता है। पहले एक ग्रंथिमें जल संचय होना आरम्भ होता है फिर सारे उदर में अपना अधिकार जमा कर उग्र रूप धारण करता है।

प्रथमावस्था में—मासिक धर्म थोड़ी मात्रा में होता है अंत में बन्द हो जाता है उदर वृद्धि के कारण रोगिणी गर्भ की आशंका कर बैठती है, पेट के अंदर जल की तरंगां जैसी लहरें उठती हैं। रोगिणी इन लहरों को बच्चे के कुलमुलाने की आशंका करती हैं। कभीर ऐसी अवस्था में चिकित्सक गण गर्भ समझ कर कोई चिकित्सा नहीं करते तथा गर्भ के दश मास व्यतीत हो जाने पर भी गर्भ ही समझे रहते हैं डिम्बकोष में जल संचय तथा गर्भावस्था में बड़ा भारी अन्तर है, पानी की थैली पेट के बीच में पेडू के ऊपर से न बढ़कर प्रायः एक तरफ पाई जाती है, और उसके अन्दर शिशु के दिल की आवाज़ तथा हरकतें नहीं पाई जाती हैं। थैली को दबाने पर हाथ में जलकी तरंगे लगती हैं। इसे Fluctuation कहते हैं। बड़ा Cigst हो जाने पर पैरों पर शोथ हो जाता है। रोगिणी सूखर कर कांटा बन जाती है सारा शरीर विशेष कर उदर पर नीलीरनसें निकल आती हैं, चेहरा पीला पड़ जाता है कभीर तो हृदय की बहुत खराब हालत हो जाती है कि आपरेशन करने से पहले पेट फोड़ कर (Tapping) जल निकालना पड़ता है, तब कहीं मरीज़ा को आराम मिलता है तब प्राण रक्षा भी हो सकती है।

यह रोग १-२ दिन में नहीं होता इसके बढ़ने के लिये कई वर्ष चाहिऐं इसके साथर संतान भी होती रहती हैं यह रोग भी धीरेर बढ़ता रहता है।

मेरे यह भी देखने में आया कि प्रसव के पश्वात भी पेट की ऊंचाई तथा गोलाई को देख कर कोई कोई दाइयां दूसरा बच्चा है जान कर प्रसव कराने की व्यर्थ कोशिश करती है कभीर इस प्रकार की अवस्था में सिस्ट (cyst) का फट कर प्रसूता का प्राणान्त भी करदे, यह आश्चर्य नहीं।

इसलिये दाईयों को भली प्रकार नारी रोगों का ज्ञान होना (प्राथमिक शिक्षा) आवश्यक है।

डिम्बकोष का कार्य

डिम्बकोष की कार्य प्रणाली दो प्रकार की है।

१—डिम्बोत्पत्ति (ovulation)

२—तरल रसोत्पत्ति Production of an Interval secretion)

यह एक प्रकार का तरल रस होता है, जो कि रक्त में मिल करके अन्य ग्रंथियों के पोषण रस द्वारा पुष्ट हो कर नारी जीवन की मुख्य वस्तु नारीत्व कायम रखती है।

शरीर के अन्दर दो प्रकार की ग्रंथियां पाई जाती हैं।

१—रसवाही ग्रंथियां जो रसवाहिनी नालियों द्वारा युक्त रहती हैं। जैसे-यकृत जिसके साथ पित्त प्रणालि का सम्बंध है, वृक्क (गुर्दा) इसके साथ मूत्र प्रणाली का सम्बंध है।

प्रणाली विहीन ग्रन्थियां—जिन ग्रंथियों के साथ प्रणाली नहीं होती है, इन ग्रंथियों का रस स्वयम् ही रक्त में मिल जाता है ऐसी ग्रंथियों में डिम्बकोष (Ovary) शुक्रकोष (Testicles) इसके साथ वीर्यवाहिनी प्रणालियें लगी हुई हैं परन्तु Int sut के लिये कोई प्रणाली नहीं पिटुटरी (Pitutory) आड्रिनाल (adrenals) पिनियल (Pineal) ग्रंथियों को ही मुख्य माना जाता है।

नारी तथा पुरुष का भेद रज, वीर्य, सम्बंधि, यौवन, स्वास्थ्य, आदि सब बातें इन्हीं के ऊपर निर्भर हैं। इनके संगठन की विकृति, रसाधिक्य या

रसन्यूनता द्वारा ही है मानव शरीरका समुदाय सुख, दुख, सन्तानोत्पत्ति आदि स्थिरीकृत होता है।

इसके विषय में आजकल विज्ञान क्षेत्र में बड़ा भारी अनुसंधान तथा अध्ययनात्मक चर्चा हो रही है। मैं निश्चय से नहीं कह सकती कि आयुर्वेद शास्त्र में इस विषय पर कुछ है या नहीं। आयुर्वेद का भैषज्य विज्ञान बहु अनुभव सिद्ध परीक्षित प्रयोगों से पूर्ण होने पर भी रोग निदान अपूर्ण होने पर चिकित्सा काल में असुविधा पड़ती है।

ग्रंथिविज्ञान।

आजकल महिलारोग चिकित्सकों को बड़े ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिए क्योंकि उससे ही अधिकांश महिला रोग तत्व तथा चिकित्सा का निर्णय हो सकता है। उस शास्त्र के अनुसार यह बात बहु परीक्षाओं के बाद सिद्ध हो चुकी है कि महिलाओं का स्वास्थ्य, सौंदर्य, यौवन, सुशीलता, रज, सन्तानोत्पत्ति के लिए डिम्बग्रंथियों का होना अत्यावश्यक है।

महिलाओं को सन्तान प्रसवकी प्रारम्भिक शिक्षा मिलनी चाहिए ताकि समय पर इन रोगोंको पहचान सकें उपयुक्त चिकित्सा के लिए उचित सम्मति दे सकें। आजकल प्रत्येक सभ्य देशों में अधिक से अधिक स्त्री चिकित्सिका होते हुए भी पुरुष चिकित्सक ही स्त्री रोगों की चिकित्सा करते हैं। इसका कारण यह नहीं कि उन देशों में पर्दे का विचार भारत से कम है। वास्तव में पुरुष चिकित्सकों ने महिला चिकित्सकाओं की अपेक्षा अधिक सफलता प्राप्त की है।

पुरुष बड़े से बड़े आपरेशन में बेधड़क हाथ डाल देते हैं। वहां के बड़े बड़े (Gynoecologist & obstetric) ग्रंथकारों के नाम देश के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखे जाने योग्य हैं।

उन लोगों की अद्भुत साधना देखने से भारत के आधुनिक चिकित्सक मंडली की दुर्व्यवस्था पर खेद होता है। पिछले कई वर्षों में भारत के बड़े बड़े शहरों में कई निपुण महिला चिकित्सक उत्पन्न हुई हैं। तथापि भारत जैसे विशाल देश में उनकी संख्या नहीं के बराबर है।

वैद्य भाईयों से मेरा अनुरोध है कि वह भी चिकित्सा के इस विशेष मार्ग में भी ध्यान दें।

Osteomalacia and Calcium defficiency
स्त्री शरीर में चूने का अभाव और उससे उत्पन्न व्याधियां।

[श्रीमती डा० कुन्तलकुमारी देवीजी प्रधान सम्पादिका "महिलारोग विज्ञान"]

इतिहास—

अर्थात्—अस्थियों की मृदुता तथा विकृतावस्था दक्षिण भारत से उत्तरीय भारत में अधिक पाई जाती है। दाक्षिणात्य प्रदेश का मद्रास, उड़ीसा, आदि प्रान्तों में तो इसका नामोनिशान भी नहीं है। बंगाल, आसाम, बिहार बम्बे, सी. पी. आदि में भी बहुत ही कम संख्या में इस रोग से ग्रसिताओं की संख्या पाई जाती है उत्तरीय भारत जैसे यू. पी, पंजाब, राजपूताना, आदि देशों में रोग ग्रसिताओं की संख्या अत्यधिक है। समुद्र तटवर्ती स्थानों के अधिवासिओं से पहाड़ी प्रदेश और जहां शीत तथा ग्रीष्म दो ही अनुपात में अधिक ऋतु होती हैं तथा मांसाहारी जातियों की अपेक्षा निरामिष जातियों के अंदर अधिक पाया जाता है। हमारे अनुभव में भारतीय जैन सम्प्रदाय जो कि खान पान में अधिक परहेज करता है उनके घराने की स्त्रियां इस रोग से अधिक ग्रसित होती हैं। इसका कारण केवल निरामिष भोजन नहीं है परन्तु भोज्य पदार्थों का अभाव ही है। मद्रास, महाराष्ट्र, गुजरात, आदि प्रान्त के अधिवासी भी अधिकतर निरामिष भोजी होने से उनके अन्दर यह रोग बहुत कम पाया जाता है क्योंकि उनकी खाद्य वस्तुओं का चुनाव ठीक रहता है। शरीर स्वस्थ, सबल, कर्मठ रखने के लिए, खाद्य पदार्थ में निम्नलिखित वस्तुओं का परिमाण ठीक२ रखना चाहिए।

१—श्वेतसार (Proticds)
२—शरकरा (Carbohysates)
३—चर्ब्बी (Fat)
४—जल (Water)
५—धातुजनिज वस्तुऐं (minerals)
६—खाद्यौज (Vitamines)

इन वस्तुओं का परिमाण ठीक न रहने से शरीर का स्वस्थ रहना असम्भव है। कोई वस्तु अधिक तथा कोई वस्तु कम रहने से भी हमारा स्वास्थ्य भली प्रकार नहीं रह सकता है। इन वस्तुओं का उचित समावेश ही हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। इन वस्तुओं का उचित समावेश केवल दूध इत्यादि अंडे में पाया जाता है। इसलिए नवजात शिशु केवल दूध ही पर बच सकता है, पक्षी शावक के शरीर मात्र डिम्ब से उत्पन्न होता है। परन्तु एक पूर्णवयस्क स्वस्थ पुरुष सिर्फ दूध पीकर नहीं रह सकता है, क्योंकि शारीरिक समुदाय के अभाव को पूर्ण करने के लिए जितने सेर दूध की आवश्यकता है प्रतिदिन उतना दूध पीने से अरुचि हो जाना स्वाभाविक ही है। रोगियों तथा बच्चों के लिए दूध अमृत है।

बच्चा अपने शरीर की वृद्धि के लिए माता के शरीर पर निर्भर रहता है इस लिए मातृ जाति का

शरीर संगठन समुचित रूप से हमें करना होगा इस के लिए प्रचुर परिमाण में सुखाद्य तथा समीचीन खाद्य की आवश्यकता है। इस विचित्र मानव शरीर को दार्शनिक, वैज्ञानिक, कवि और महामनीषि गण मिट्टी का पुतला बताते हैं किसी हद तक यह बात बिलकुल सत्य है। रक्त, मांस, विष्ठा यह मानव शरीर पृथ्विस्थ धातु समुदायों की समष्टि है। इस शरीर में, स्वर्ण, रजत, आदि से लेकर लोहा, चूना पर्यन्त धातु समुदाय अपने अपने परिमाण में पाये जाते हैं। लोहा रक्त के अन्दर न हो तो हम एक क्षण भी बच नहीं सकते, लोहा तथा चूना ही रक्त को ताज़ा तथा जीवनी शक्ति से हरा भरा बनाए रहता है। चूने का काम ही सारे शरीर में व्याप्त है। चूने के अभाव से जैसे कोई इमारत खड़ी नहीं हो सकती है वैसे ही अस्थियों से बना नरकंकाल भी खड़ा नहीं रह सकता है। रक्त, मस्तिष्क, मांस, मेदा आदि शरीर की कोई भी वस्तु और हृदय, यकृत, पकाशयादि कोई यंत्र अपना काम बिना चूने के भली प्रकार नहीं कर सकते हैं। चूना प्राणिमात्र को गर्भ के अन्दर मातृ शरीर से, बाद में मातृ दुग्ध से प्रचुर परिमाण में मिलता है और यह चूना माता खाद्य वस्तुओं से प्राप्त करती है।

इस से अच्छी प्रकार मालूम होता है कि मातृ शरीर ही देह रूपी इमारत बनाने के लिए प्रथम और मुख्य उपादान है। माता ही प्रकृत प्रजापति रूपिणी सृष्टिकर्त्री देवी है। वह अपने शरीर का दान करके पृथ्विस्थ जीवों की सृष्टि और पालन करती है ऐसी मातृ जाति के शरीर पोषण के लिए हमारा उत्तरदायित्व कुछ कम नहीं है। परन्तु हम इस उत्तरदायित्व को किस प्रकार निभाते हैं इसका पता देश गत नारियों के स्वास्थ्य से ही सब को अच्छी तरह से पता चलता होगा।

भारत में नारियों को "धार्मिक जीवन" बनाने का प्रयत्न बहुत है। परन्तु उन्हें प्राकृत मानव शरीर बनाने वाली माता के रूप में संगठित करने का प्रयास बहुत कम है। पुरुषानुक्रम इस अत्याचार के फल से ही भारत की नारियां इतनी अधिक कमज़ोर हो गई हैं तथा हर रोग का शिकार बन जाती हैं।

इन देवियों से उत्पन्न संतानोंकी जो दशा है वह किसी से छिपी नहीं है।

चूना शरीर के निर्माण के लिए अत्यन्त आवश्यक है, इसमें कोई शक नहीं और पुरुष शरीर से स्त्री देह में इसका प्रयोजन अत्यधिक है। कारण—

१—मासिक धर्म में रक्त के साथ बाहर निकलता है।

२—गर्भावस्था में शिशु शरीर निर्माण के लिए।

३—प्रसवकालीन रक्त स्राव में।

४—सन्तान को दूध पिलाने के समय।

५—स्त्रियों को श्वेत प्रदर में।

इन अवस्था में चूना शरीर से बाहर निकलता है यदि खाद्य पदार्थों से चूने की पूर्ति न हो तो क्या हाल हो? चूने का स्त्री शरीर के अन्दर नियमित रूप से इस्तेमाल करना डिम्बकोषों (Ovary) का ही काम है। डिम्बकोष स्त्री जाति का प्राकृतिक अंग विशेष है। ऋतु और स्त्रीत्व सभी गुण इसके गठन प्रणाली के ऊपर ही निर्भर हैं। यदि डिम्बकोष कमज़ोर या विकृत हों तो शरीर गत चूने का परिमाण में भी तारतम्य प्रतीत होता है।

डिम्बकोष के दो कार्य हैं—

१—डिम्ब उत्पन्न करना

२—और एक (Internal Secretion) प्रवाही रस पैदा करना।

यह रस ही शरीर गत चूने का नियामक है, इस रस के ही कमीवेशी से चूने का अभाव (Calcium defficiency diseases) और अस्थि विकृति (Osteomalacia) इत्यादि अस्थि गत रोगों की उत्पत्ति होती है।

डिम्बकोष (Ovary) कमज़ोर तथा रोग ग्रस्त हो तो इससे उत्पन्न हुए रस में व्याघात होता है।

यह दो प्रकार से होता है—

१—डिम्बकोष का शोथ, डिम्बकोष का प्रदाह, (Ovaritis acute or chronic)

२—डिम्बकोष का सूख जाना, (Fibrosity of the ovaries) पुरातन प्रदाह, पुरानी सूजन के बाद होता है।

३—(Developemental defects) प्राकृतिक रचना में अन्तर आना।

किसी वंश में तो यह रोग वंशानुवंश होता है कमज़ोर तथा चूने के अभाव से पीड़ित माता की लड़कियां भी प्राकृतिक चूने की कमी से भोगती हैं हैं। बुरा भोजन, हमेशा पर्दे का बना रहना, अंधकार युक्त स्थान में निवास करना, अश्लील उपन्यास कथा आदियों का सुनना, अल्पवयस में रजोत्पत्ति विवाह, और पुरुष प्रसंग, सन्तानोत्पत्ति, अस्वाभाविक हस्तमैथुन, उपदंश, सूज़ाक, रसौली, आदि रोगों में डिम्बकोष विकृत तथा रोगाक्रान्त हो सकता है, रोग पुराना पड़ जाने से रसोत्पत्ति में भी न्यूनाधिक्य होकर इन रोगों का उत्पन्न होना असम्भव नहीं है।

डिम्बकोष की रसोत्पत्ति की कमी से वन्ध्यत्व हिस्टीरिया, अपस्मार, स्थूलता, मूर्छा, (Sterility Hysteria, Newrasthenia, Ovarian Obesity, Fainting fits) इत्यादि रोग हो जाते हैं।

रसाधिक्य के कारण अस्थियों में मृदुता होकर "अस्थि विकृति" रोग हो जाता है।

ओस्टोमलेशिया (Osteomalacia) का
लक्षण तथा निदान—

यह रोग यौवनावस्था के आरम्भमें और अधिकतर गर्भावस्था में ही होता है। कभी २ बच्चों को दूध पिलाते समय भी हो जाता है। इसमें धीरे धीरे अस्थियां टेढ़ी हो जातीं हैं वस्ति प्रदेश (कुल्हों की हड्डी) की अस्थियां सब से अधिक और बहुत पहले ही इस रोग से आक्रान्त होने के कारण (Pubis) का गठन विकृत होकर प्रसव के समय बच्चा बाहर नहीं निकल सकता। उससे-

(क) गर्भाशय का फट जाना

(ख) बच्चा मर कर अन्दर सड़ जाना या सूख जाना इन कारणों से प्रसूता का देहान्त हो जाना।

(ग) नहीं तो नाभि के पास से चीर कर बच्चे को निकालना पड़ता है।

यह काम बड़े २ अस्पतालों में ही हो सकता है घर पर असम्भव है।

क्रमशः मरीज़ा लंगड़ी तथा टेढ़ी होती जाती है दिन रात अस्थियों में थोड़ा २ दर्द होता रहता है, अन्त में अपाहज बन कर खाट से उठ बैठ नहीं सकती, कई सालों के बाद दुःखमय जीवन भोगती हुई अकाल में मर जाती हैं। कभी २ आरोग्यता प्रकृति स्वयं कर देती है। जो अस्थियां विकृत टेढ़ी हो चुकी हैं वह तो उस ही प्रकार रहेंगी सीधी नहीं हो सकतीं। परन्तु रोग की गति रुक जाने से अन्य

अस्थियां टेढ़ी होने से बच जाती है। पसली तथा सीने की अस्थियां टेढ़ी होकर हृदय और फुफ्फुसादि के ऊपर अथवा कमर की हड्डियां टेढ़ी होकर मेरुदन्ड के स्नायुसूत्र पर (Spinal cord) दबाव पड़ने से रोगिणी का बचना असम्भव है।

बच्चों की उत्पत्ति सर्वथा बन्द करना भी आराम का कारण है। क्योंकि बच्चा माता के शरीर का चूना प्राप्त कर बढ़ता है। औषधियों द्वारा इलाज करना असम्भव है। निम्नलिखित दवाइयां लाभदायक हो सकती है—

Calcium preparations चूना घटित औषधियां Ovarian and adrenalin grand preparations pineal gland preparations, Cespora Leiteal preparations (ग्रन्थी जात औषधियां)

दोनों डिम्बकोषों को पृथक कर देने से अकाल वार्ध्यक्य हो सकता है। लेकिन जान की खातिर दोनों पहलूओं पर सोच समझ कर कार्य करना चाहिए। और डिम्बकोष पृथक करने के बाद (Ovarian grand preparahins) खिलाने से भी फायदा होता है।

Calcium defficiency diseases के अंदर केवल Osteomalacia ही नहीं हैं ऋतु विकार, ऋतु कष्ट, ऋतु का अधिक आना, ऋतु का न होना, इत्यादि का प्रधान कारण चूने (Calcium) की कमी है। आजकल यह साबित होगया है कि दिक (Tuberculesis) पुराना ज्वर, का प्रधान कारण शरीर में चूने का अभाव है दिन पर दिन भारतवर्ष में दिक की बिमारी, दांतों की खराबी, शरीर का सूख कर कांटा होना जिसको मसान का रोग कहते हैं। यहां स्त्री और बच्चों में बढ़ता जा रहा है। शायद भद्र गृहस्थ में ऐसी बहुत कम स्त्रियां मिलेंगी जिन्हें श्वेत प्रदर, या किसी प्रकार का ऋतु विकार न सताता हो। इसका मुख्य कारण शरीर गत चूने का अभाव है तथा खास पदार्थों का अभाव, धर्म ढोंगियों का धार्मिक विचार से नाना उपयोगी पदार्थों की कमी तथा सामाजिक कुसंस्कार का फल है।

भारतीय धर्म ग्रंथों की यदि सच्चे दिल से अच्छी तरह आलोचना की जाये तो नारियों को पर्दे की ओट में रख कर इनका इतना बुरा हाल बनाने की आज्ञा कहीं भी नहीं पाई जाएगी।

यौवन प्राप्ति से पूर्व पुरुष सहवास तथा ऋतु उत्पत्ति के साथ२ माता कहलाने की उत्कट लालसा डिम्बग्रंथियों की शक्ति नाश, नहीं तो कार्य व्यतिक्रम का होना स्वाभाविक ही है। इसका बुरा परिणाम शीघ्र ही सामने आता है मेरा दिल्ली रह कर चिकित्सा जगत की अनभिज्ञता से मैं निःसंदेह रूप से कह सकती हूं कि दिल्ली जैसे बड़े शहर में पूर्ण भोगविलासता में पली हुई बड़े२ घराने की स्त्रियों में जिनमें जैनियों तथा वैश्यों की संख्या अधिक है, यह अस्थि विकृति (कूल्हे की अस्थि का टेढ़ा होना) का रोग दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

भारीर लहंगा पैरों की अंगुलियों में मोटे मोटे बिछुवे तथा पैरों में चांदी के भारीर ज़ेवर तिस पर हिलपर पहन कर बचपन से लंगड़ा कर चलना यह एक बड़ी बुरी आदत है, दिन पर दिन अस्पतालों में पेट चाक करके बच्चा पैदा कराने की (Caesarean sectin) संख्या बढ़ती जारही है, हर समय कोई काम न करके बैठे रहना, हर साल बच्चों की मां

बनना, और झूठे धर्म के ढोंग में फंस कर अमुक सब्जी न खाना, अमुक खाना, फलाने दिन बासी खावे, फलाने दिन अन्न न खावे, महीने में पचीसों दिन व्रत करना और सोचें आपकी स्त्रियों का स्वास्थ्य किस प्रकार ठीक रह सकता है।

एक समय इंगलैंड आदि शीत प्रधान देशों में यह रोग बहुत होता था लेकिन आजकल बहुत कम होगया है। स्त्रियों का स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन प्रबन्ध ही रोग कमी के कारण हैं। आजकल भी Switzerland के चिरतुषारावृत पर्वतों के रहने वाले सूर्य रश्मि विहीन प्रदेशों मे स्त्री पुरुषों को defficiency diseases, बहुत सताते हैं। और सूर्य भगवान की जीवनप्रद किरणें जहां पड़ती हैं वहां स्वयं ही भयंकर व्याधियों का नामोनिशान नहीं रहता है। भारतवर्ष एक ग्रीष्म प्रधान देश है उस में घृत, दुग्ध, दही, भिन्न२ प्रकार के फल फूल तथा हरित शाकों की कमी नहीं है, तब क्यों इस स्वर्णभूमि की रमणियां आजकल ऐसे रोगों से तंग रहती हैं, इसका प्रधान कारण है पर्दाप्रथा, बाल्यविवाह तथा युवती विधवाओं का बल पूर्वक ब्रह्मचर्य व्रत धारण कराना।

खाद्य वस्तुओं में चूना। चूने युक्त भोजन में

दुग्ध सर्व प्रधान तथा विशुद्ध खाद्य पदार्थ है, दूध के चूने को Calcium lactate कहते हैं।

इस चूने के द्वारा भिन्न२ प्रकार की निर्मित औषधियां भी मिलती हैं। उनमें चूना पूर्ण मात्रा में प्राप्त होता है। पान खाने का चूना मोती तथा वंशलोचन इन तीन पदार्थों में प्राकृतिक चूना है। फल तथा दाल आदियों में चूने का भाग बहुत कम है चावल तथा गेहूं में कुछ ज्यादह है। दालों में सब से अधिक मसूर की दाल में चूना है। मक्खन आदियों में चूना प्राय नहीं है।

ऊपर के विवरण से भली प्रकार पता चल जाता है कि निरामिष तथा फल भोजन के साथ दूध की कितनी आवश्यकता है। निरामिष भोजियों को दूध प्रचुर परिमाण में सेवन करना चाहिये नहीं तो शरीर के अन्दर चूने का भाग कम हो जाएगा।

आमिष भोजियों को डिम्ब (अंडा) विशेषतः मत्स्य जाति के चूने से फायदा उठाना ठीक है। मछली के चूने का अंश दह स्त्रियों के चूनाभावजनित रोगों में बड़ा लाभदायक है मछली का तेल विशेषतः राजयक्ष्मा में अधिक व्यवहृत होता है। इसमें चूना तथा वसा दोनों का अंश उचित परिमाण में रहता है इसमें खून बनाने वाली वस्तु भी रहती है, मोती और सीप तो प्राकृतिक चूना है इसलिए मोतीयों की भस्म औषधियों में अधिक काम आती है मोतियों का खमीरा दिल को ताकत देता है, सीप और दूध का चूना alopathic औषधियों में अधिक व्यवहृत होता है (जैसे Calcium phosppate, lactate) बच्चों का लाल शर्बत केवल चूने का ही शर्बत है अधिकांश बाल रोग चूने के अभाव से उत्पन्न होते हैं बच्चों को शक्ति देने वाली औषधियों में प्रधानतः चूने से बनी औषधियां दें।

यदि माताएं खाद्य पदार्थ में जिनमें चूना अधिक मात्रा में मौजूद है सेवन करें विशेषतया दूध का ध्यान रखें तो उनके सुकुमार बच्चों का स्वास्थ्य स्वयं ही ठीक हो जाए उनको फिर तन्दुरुस्त बनाने के लिए दवाइयों के पिलाने की भरमार न करनी पड़ेगी।

गर्भावस्था में दूध सेवन कितना आवश्यक है

यह कहने की आवश्यकता नहीं।

गर्भावस्था में चूने की कमी का लक्षण प्रकाश होने से तत्काल चिकित्सा कराना उचित है। आजकल चूने के अभाव से उत्पन्न व्याधियों के लिए

१—Calcium का चूर्ण Calcium powders

२—Paralroid with Calcium compound.

३—Collossal calciums

३—Injections of Calcium with ostelm vitamins

इत्यादि सफल चिकित्सा हो रही है। ऐसी रोगिणीयों का प्रसव घर पर न कराकर उपयुक्त अस्पताल में करवाना सर्वथा युक्ति युक्त हैं ताकि समय रहते ठीक इन्तजाम होकर प्राण बच सकें। यदि चिकित्सक परामर्श दे तो अल्पमास में गर्भपात भी कभी२ रोगिणी के प्राण रक्षार्थ करना पड़ जाता है। ऐसे रोगों में प्रसव न हो सके, या तो कष्टप्रसव हो अथवा प्रसवान्त भयानक रक्त स्राव होना, एक प्रकार से निश्चित ही सा है। जादू टोने तथा छोटे मोटे उपचारोंको न करके शीघ्रतया शस्त्र चिकित्सा की शरण लेनी चाहिए। अस्थि यदि टेढ़ी हों तो सिवाय ओपरेशन के अन्य और कोई उपाय लाभदायक नहीं होता।

यद्यपि खाद्य वस्तुओं में चूना प्रचुर परिमाण में हो और शरीर उसे ग्रहण न कर सके तो सारे प्रयत्न विफल हैं। चूना खाद्य वस्तुओं के रस द्वारा पहले रक्त में जाता है, रक्त उसे ग्रहण करके, शरीरोपयोगी बनाने का मुख्य काम स्त्री के शरीर में स्थित डिम्बकोषों पर निर्भर है इस लिये डिम्ब कोष रोगाक्रान्त तो नहीं इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए।

बाल्यावस्था में जब कि शरीर में लिङ्गबोधात्मक प्रक्रिया और उत्तेजना नहीं होती है तभी से लड़कियों के स्वास्थ्य की तरफ खान, पान, खेल, कूद, व्यायाम आदि के विषय में सावधान होना चाहिए।

प्रथम यौवनारम्भ में जब कि मासिक धर्म आना आरम्भ होता है यदि किसी बालिका को स्रावाधिक्य कष्ट रज, श्वेत प्रदरादि पीड़ा हों तो उस की चिकित्सा में अवहेलना कदापि न करना। और जहां तक बने लड़कियों को खुले स्थान में जहां प्रकाश तथा वायु खूब आती हो खेलने या कामकरने दिया जाये, पर्दा प्रथा कितना घातक है इस लिए सर्व साधारण सोच सकते हैं।

बिना ताजी हवा और प्रकाश के छोटे २ फूल भी खिल नहीं सकते, एक पत्ता भी हरा नहीं रह सकता है हमारी सुकुमार फूलों से भी सुन्दर लड़कियां उन्हें जबरन पर्दे के कठोर शासन में, बन्द कमरों में शिशु काल से ही कैद रख कर हमें उनके स्वास्थ्य की झूठी आशा करना, पागलपन के सिवाय और क्या है ?

बाल्य विवाह का फल पुरुष सहवास और बाल मातृत्व के कारण डिम्बकोषों की अस्वाभाविक उत्तेजना जनित उनका कार्य व्यतिक्रम और युवती नारी का शरीरेच्छा विरुद्ध अथवा समय साधना जिसका भी शेष फल डिम्बकोषो की उत्तेजना और उससे हस्त मैथुनादि अस्वाभाविक गुप्त उपायों से इन्द्रिय तृप्ति, तज्जनित रक्त तथा श्वेतप्रदर, मूर्च्छा, हिस्टीरिया, अपस्मारादि रोगों के कारण डिम्बकोषों की रस विकृति और चूने के अभाव से उत्पन्न व्याधियां।

इनके प्रारम्भिक प्रतिकार हमारे हाथ में हैं, रोग वृद्धि के बाद उपाय सोचना मूर्खता है।

किसी लड़की के यौवन प्रारम्भ में ही इस रोग का पता लग जाए, जैसे कि लड़की का लंगड़ी होकर चलना, घुटने के जोड़ में फर्क आना, सारे शरीर की अस्थियों में वेदना होती हो, उस के रोग को छिपा कर उसकी शादी कर देना माता पिता तथा अभिभावक गण का महापाप है।

इस प्रकार की लड़कियों की कभी शादी न होनी चाहिए यदि हो तो सन्तानोत्पत्ति का पूर्ण निरोधात्मक प्रबन्ध करने के बाद। इसका एक मात्र प्रधान मार्ग डिम्बकोषों का और नलीयों का ऑपरेशन कर के (Spaying operation) जरायुप्रान्त से अलग कर देना जिससे कि उसके अन्दर से डिम्ब (स्त्री बीज) आकर शुक्र कीट के साथ न मिलने पाए। डिम्बकोष का पृथक करने का ज़िक्र पहले ही कर चुकी हूँ।

मेरे मत में अपाहज लड़कियों का विवाह नहीं होना चाहिए, उनके लिए अच्छे से अच्छे शिक्षाकेन्द्रों का प्रबन्ध करना अच्छा है। और यह मुख्य बात है कि जैसे हमारे समाज में अपाहजों की उत्पत्ति कम हो ऐसा उपाय करना—अपाहजों की सृष्टि करके समाज को भाराक्रान्त करना, देश और जाति के कल्याण के लिए बाधक हैं।

हमें स्वस्थ सबल पुरुष और नारीरत्नों की ज़रूरत है, न कि अपाहिज लूले लंगड़े अकर्मण्य रोग-ग्रस्त जीवों की!

देश और जाति के निर्माण के लिए इस ओर हमारा क्या कर्तव्य है यह हमारे पाठक, पाठिकाएँ खुद सोचेंगे क्या?

गर्भ न रहने के कारण

गर्भ न रहने के अनेक कारण हो सकते हैं—

१. स्त्री वंध्या हो या पुरुष नपुंसक हो।

२. जननेंद्रिय के रोग।

३. मासिक धर्म की विकृति।

४. अतिरिक्त विषयासक्ति।

वंध्या और नपुंसकपने का दोष दो प्रकार का होता है। एक स्वाभाविक जिसमें स्त्री-पुरुषों की जननेंद्रिय या तो होती ही नहीं और यदि होती भी है तो अति स्वल्प। इनकी कोई चिकित्सा नहीं, परंतु ये रोग भ्रम, घृणा, भय आदि कारणों तथा साधारण कारणों से भी हो जाते हैं। यदि किसी उत्तम वैद्य से चिकित्सा कराई जाय, तो लाभ हो सकता है।

जननेंद्रिय के रोगों को खूब ध्यान से दूर करना चाहिए। और उनकी चिकित्सा करानी चाहिए। प्रदर, सूज़ाक, आतशक और योनि-रोग एवं प्रमेह ही संतान के बाधक हैं। उपर्युक्त रोग की चिकित्सा के बाद 'अशोकारिष्ट'-नामक औषधि जो प्रत्येक अच्छे वैद्य के यहां मिल सकती है, स्त्री-रोगों को तथा गर्भाशय शुद्धि के लिये तथा चंद्रप्रभा वटी पुरुषों के लिये अति उत्तम वस्तु है।

मासिक धर्म की विकृति के लिये यह दवा अति उत्तम है।

गुलाब के फूल ५ माशा, अजवाइन ५ माशा, दारचीनी ३ माशा, बायबिडंग ५ माशा, गुड़ पुराना दो तोला। रजोदर्शन के प्रारंभ होते ही ५ छटाक पानी में पकाकर २ छटाक शेष रहने पर छानकर दोनों समय पानी तथा ऋतुकाल के नियमों का पालन करना चाहिए। मासिक धर्म में चाहे भी जैसी विकृति, जैसे दर्द, रक्त कम आना, काला, पीला, दुर्गंधित रक्त आना आदि-आदि दो-तीन मास तक ऋतुकाल में ३ दिन लेने से कतई दूर हो जायगा।

उलट कंबल नाम की एक वनस्पति भी मासिक धर्म के विकारों में अति उत्तम है, उसका लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट बंगाल केमिकल वर्क्स ने बनाया है, जो सर्वत्र बिकता है। उसे भी सेवन किया जासकता है।

गर्भ रहने के उपाय

यदि कोई खास शिकायत न हो, तो एक मास स्त्री-पुरुष ब्रह्मचर्य से रहें पुष्टिकर और हलका आहार करें।

ऋतुकाल में उक्त काढ़ा मासिक शुद्धि का स्त्री पाँचवे स्नान करके ७ दाने शिवलिंगी के बीज निगल जाय। दांतों को न लगने दे। दूसरे दिन ९, तीसरे दिन ११, चौथे दिन १३, इसी प्रकार बाद में १-१ दाना बढ़ाकर निगल जाय। तथा रात्रि को १ माशा नागकेशर उसी मास में या २-३ मास के अंदर।

"आरोग्य शास्त्र"

पृष्ठ १८१ से २६४ तक और २९७ से ३१२ तक, गयादत्त प्रेस, क्लॉथ मार्केट देहली में छपे।

प्रसूत ज्वर (Puerperal Fever)

(लेखक—श्री० प्रोफेसर बालकरामजी शुक्ल, शास्त्री आयुर्वेदाचार्य)

परिचय—यह ज्वर स्त्रियों के बच्चा पैदा होने के बाद होता है। इसका विष गर्भाशय, और आभ्यन्तरिक, वा, वाह्य भग आदि से होकर रुधिर में मिल जाता है। जिससे प्रसूत ज्वर होता है।

प्रधान कारण

इस ज्वर के संक्रामक होने से इसके विष में एक प्रकार के कीटाणु पाये जाते हैं। इनका आकार विन्दु के तुल्य होता है। और ये परस्पर ऐसे मिले रहते हैं। मानों बालों का गुच्छा होवे। और इनकी वृद्धि बहुत शीघ्र होती है। और ये कीटाणु रक्त में बढ़कर अपनी रक्षा करने के लिये रोगीके शरीर में एक प्रकार विष पैदा कर देते हैं। और शरीर की पोषक-शक्तियों का नाश कर देते हैं और रक्तवाहिनी नलियों में जा करके रक्त की गति में बाधा पहुंचाते हैं।

सहायक कारण

सन्तान पैदा होने के बाद गर्भाशय में झिल्ली (आंवल) का टुकड़ा, वा, रक्त का लोथड़ा रहकर सड़ जाता है। अथवा, प्रसव के बाद भग से निकलने वाला प्रसव जल रहकर सड़ जाता है। इससे दुर्गन्धि भी आने लगती है। और गर्भाशय से बच्चा के बाहर निकलने के बाद अपने आपही गर्भाशय बड़ी तेजी से सिकुड़ने लगता है। इससे नाड़ियों का मुख बन्द हो जाता है और ४-५ दिन में गर्भाशय अपनी पहली हालत में आ जाता है। जिस समय गर्भाशय सिकुड़ने लगता है। उस समय बहुत से दूषित पदार्थ प्रसूता के रुधिर में घुस जाते हैं। वे रक्त को दूषित करके प्रसूत ज्वर का कारण होते हैं। अथवा गर्भाशय की दीवार में बच्चा पैदा होते समय दवाव पड़ना, और शस्त्र आदि से आघात लगना, इस चोट से विष रुधिर में प्रवेश करता है। अथवा, गर्भाशय में बच्चा पैदा होने के पहले यदि घाव आदि होता है। अथवा सन्तान उत्पन्न होते समय दाई आदि की मूर्खता से भग बच्चे के शिर के दवाव से तन कर फट जाती है। तब विष प्रविष्ट हो जाता है। इस रोग का विष, फटे हुवे, अथवा, छिले हुवे मार्ग से रुधिर में बहुत जल्दी घुस जाता है। ये जीवाणु अधिकतर डाक्टरों के शस्त्र आदि से भी गर्भाशय में पहुंचते हैं। और प्रसव के बाद, शीतल वायु, परिश्रम आदि करने से भी प्रसूत ज्वर देखा जाता है। चिन्ता, शोक, क्रोध, भय, त्रास आदि से भी यह ज्वर हो जाता है ऊपर में कहे हुए कारणों के सिवाय, संक्रामक ज्वरों का विष लगना, जैसे लाल बुखारScarlet fever मसूरिका, आंत्रिक ज्वर Typhoidfever विसर्पज्वर Erysipales कृत्रिमकला (डिफथीरिया) औदर्यकला प्रदाह (पेरिटोनाइटिस) आदि संक्रामक रोगों का विष यदि लग जावे, तो बहुत जल्दी यह ज्वर पैदा हो जाता है। इस रोग का विष दूसरी प्रसूता को भी

लग जाता है। अर्थात, रोगिणी प्रसूता का विष, निरोगिणी प्रसूता को भी लग जाता है। और पूयमेह (सूजाक) के पीव से भी यह रोग पैदा होता है। संक्रामक रोग से मरे हुए शव की जांच करने के बाद यदि डाक्टर प्रसूता को देखने जावे। तो उसके भी यह ज्वर हो जाता है। और स्वास्थ्य के नियमों के विपरीत आहार-बिहार करने से भी यह ज्वर होता है सूतिकागार के चारों तरफ बदबू आना, और छोटे घर में बहुत सी स्त्रियों की भीड़ जमा हो जाने से वायु दूषित होकर के ज्वर का कारण हो जाती है। सूतिकागार के पास, पाखाना, पेशाब का स्थान, नाली, चहबच्चा, पनाला भी वायु को दूषित कर रोग के हेतु बन जाते हैं। और मिट्टी का तेल जलाने से जो धुआँ निकलता है। वह भी रोग का हेतु है।

काल

सन्तान उत्पन्न होने के बाद चार पांच दिन के अन्दर ही प्रसूत ज्वर हो जाता है। और रोगिणी की प्रसूता के विष से उत्पन्न होने पर तीसरे दिन ही ज्वर हो जाता है। और झिल्ली को हाथ से निकालने पर, यंत्रों के व्यवहार से, वा, प्रसव में देरी होने से जो ज्वर होता है। वह दूसरे दिन ही होता है। किसी २ के तो प्रसव के पहले ही ज्वर आ जाता है। किसी २ को एक सप्ताह के बाद ज्वर आता है। और, जरायु (खेड़ी) वा, रक्त के लोथड़े प्रसव के कुछ दिन बाद निकलते हैं। तब ज्वर देर में आता है।

लक्षण

इसका विष रुधिर में पहुंच कर अपना प्रभाव दिखलाता है। एक साथ जाड़ा, लग करके ज्वर चढ़ता है। किन्तु कभी कभी ज्वर चढ़ने के बाद जाड़ा लगता है। कभी जाड़ा पहले लगकर फिर ज्वर चढ़ता है। और शारीरिक ताप १०२ से लेकर १०८ तक देखा जाता है। और नाड़ी १०० से लेकर के १२०, या, १४०, या, १५०, या, १६० गति प्रति मिनट चलती है। श्वास जल्दी जल्दी चलती है। और मधुर गन्ध आती है। आरम्भ में जीभ मैली, और तर रहती है। किन्तु अन्त में काली पड़ जाती है। उदर में आध्मान हो जाता है। दबाने से सिर दर्द करता है। सीहा भी बढ़ जाती है। यहांतक कि छूने से भी पीड़ा करती है। मुख मलीन, आँख अन्दर को बैठ जाती है। कभी २ रोगिणी बकने भी लगती है। किसी किसी को अन्तिम अवस्था तक ज्ञान रहता है। कोई कोई बेहोश हो जाती है। वमन, विरेचन, काले रंग का होता है गर्भाशय के ऊपर दबाने से बहुत दर्द होता है। इस रोग के पहिचानने का यह मुख्य लक्षण है। और ज्वर के आरम्भ और विसर्ग काल में स्वेद अधिक निकलता है। और बच्चा जनने के बाद एक प्रकार का रक्त मिश्रित जल पांच सात दिन तक गर्भाशय से निकलता रहता है। इस रोग में कम परिमाण से निकलता है। अथवा, बिल्कुल बन्द हो जाता है। वा, बदबूदार निकलता है। स्तनों में दूध भी कम हो जाता है। स्वेद अधिक निकलने से फुंसिया भी हो जाती है। अन्तिम दशा में नाड़ी की गति सूक्ष्म धागे की भांति धीरे २ चलने लगती है। उदर में आनाह हो जाता है। श्वास की गति विपरीत हो जाती है। प्रसूता एक ही सप्ताह

में ऐसी दशा में मृत्यु लोक से प्रस्थान कर देती है। किसी किसी में सब लक्षण साथ २ नहीं होते हैं। किसी किसी में सप्तक ज्वर (सेप्टी सीमियां) प्रभृति भी देखे जाते हैं।

सप्तक ज्वर (सेप्टी सीमियां) के लक्षण

इसमें और प्रसूत ज्वरमें बहुत थोड़ा फर्क होता है। दोनों के हेतु तुल्य ही है। सेप्टी सीमियां में भी प्रसूत ज्वर वाला विष देखा जाता है। परन्तु इसका विष भयानक होता है। और यह औदर्य-कला प्रदाह (पेरिटोनाइटिस) के पहले पैदा होकर के प्रसूता को अन्तिम क्रिया कर देता है। गर्भाशय में बहुत वेदना होती है। और गर्भाशय के मुख पर और आन्तरिक भाग नाली में घाव हो जाता है। पहले ही शीत लगकर ज्वर चढ़ता है। फिर ज्वर की गर्मी बहुत बढ़ जाती है। अतिसार, भी हो जाता है। उदर फूल कर ढोल सा मालूम होता है। तिल्ली भी बढ़ जाती है। ऐसी दशा होने पर प्रसूता तीन चार दिन में इस संसार से चल बसती है।

वास्क्युलर सेप्टी सीमियां

यह बच्चा पैदा होने के दो, तीन दिन के बाद होता है। कभी कभी कई दिनके बाद भी होता है। इसमें रुके हुये सड़े हुये रुधिरके थक्के का विष रक्त में मिल जाता है। इसमें शीत देकर के बुखार चढ़ता है, ज्वर की गर्मी बहुत बढ़ जाती है। नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है, विषम ज्वर के लक्षण हो जाते हैं ज्वर चढ़ जाता है। फिर उतर जाता है। स्वेद अधिक निकलता है। गर्भाशय के अन्दर सूजन होती है। इस व्याधि में शोथ से ज्वर का कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु विष से शोथ का सम्बन्ध है। ज्वर के तीव्र होने पर जाड़ा मालूम होता है इससे प्रसूता अच्छी हो जाती है। अथवा, पूय ज्वर (पाई-मियां) में इसकी हालत बदल जाती है।

अगर रोग का भावी फल अच्छा होने वाला होता है। तो शोथ अच्छा हो जाता है।

पूयज्वर (पाइमियां)

ज्वर के चिरकाल तक रहने पर विष सम्पूर्ण शरीर में फैलकर शोथ पैदा कर देता है। और यह शोथ सन्धिस्थान की झिल्लियों में, फेफड़ा, प्रभृति आन्तरिक अङ्गों में भी होजाता है। परिफुफ्फुसीया कला (प्लूरा) में भी कभी २ शोथ होजाता है। और हृदयाच्छादनी कला में भी सूजन होजाती है। इसके बाद किसी २ स्थान पर पूय भी पड़ जाता है।

औदर्य कला प्रदाह (पेरिटोनाइटिस)

इस ज्वर में उदरच्छदकला में भी सूजन हो जाती है। इसमें शीत लगकर ज्वर चढ़ता है। पेट में पीड़ा होती है। किन्तु गर्भाशय में अत्यन्त पीड़ा पहले पैदा होकर सब उदर में फैल जाती है। उदर की बड़ी २ नाड़ियों के कार्य बन्द होजाने पर अंतड़ियों में वायु भर जाती है। इसलिये पेट भी फूल जाता है। नाड़ियाँ भी उभरी मालूम होती हैं। अन्तिम काल में उदर बहुत फूल जाता है। और अधिक तर प्रसूता दोनों घुटनों को ऊपर उठाये हुए सीधी चारपाई पर पड़ी रहती है। नाड़ी की गति धीमी और बारीक होती है। किन्तु कुछ देर में बहुत कमजोर होजाती है। इस ज्वर में

नाड़ी की गति पर ध्यान रक्खें। व्याधिकी सामान्य दशा में प्रसूता को कब्जी रहती है। किन्तु असाध्य दशा में पहले से ही बदबूदार पतले दस्त आने लगते हैं। श्वास में बदबू आती है। त्वचा-कारङ्ग पीला, और भूरा सा होजाता है। वेदना सदा नहीं रहती है। सूजन के बाद मवाद पड़ जानेपर वेदना बिल्कुल नहीं होती है। यहां तककि उदर को अंगुलि से दबावें, तो भी वेदना मालूम नहीं होती। किन्तु दस्त के रुकने पर पेट फूल जाता है। और सब लक्षण प्रसूत ज्वर के तुल्य हैं। मामूली हालत में वेदना एक जगह पर होती है। और वह दबाने से जान पड़ती है। पेट कम फूलता है। असाध्य दशा होने पर हाथ, पांव सीधे नहीं रहते हैं। नाड़ी की गति नहीं मालूम होती। प्रसूता बेहोश हो जाती है। इसका फल अच्छा नहीं होता।

सेप्टिक इन्टॉक्सिकेशन

कारण गर्भ गिरने के बाद जब जेर (अपरा) गर्भाशय में रह कर सड़ने लगती है। तब यह ज्वर होता है। इसमें जीवाणु नहीं होते हैं।

लक्षण—शीत लग कर बुखार आता है। ज्वर की गर्मी १०२ से १०४, या १०६ तक हो जाती है। शिर, पेट में पीड़ा, वमन, और कभी प्रसूता बकने भी लगती है। कभी २ सेप्टीसोमियां के भी लक्षण दिखाई देते हैं।

इरिसिपेलिस (विसर्पज्वर)

विसर्प ज्वर से प्रसूत ज्वर होजाता है। और प्रसूत ज्वर में विसर्प ज्वर का विष रहता है। इस से मालूम होता है। कि दोनों रोगों का प्रायः एक ही कारण है यह ज्वर बच्चा पैदा होने के बाद दूसरे या चौथे दिन प्रकट होता है। जब यह रोग भीतरी अँशों की दीवालों में शुरू होता है। तब इसके साथ २ पेडू के अन्दर की झिल्ली रोगाक्रान्त हो जाती है। इस दशा में पेट की सूजन के लक्षण खराब होते हैं। और इरिसिपेलिस के साधारण लक्षण न मालूम होने पर और भयानक दशा हो जाती है। और प्रासृतिक सप्तकज्वर (प्योरपर-सेप्टी सीमिया) का सन्देह होजाता है। इसका तात्पर्य यह है। जब यह ज्वर विसर्प ज्वर (इरि-सिपेलस) के विष से पैदा होता है। और उसके लक्षण बहुत कम मिलते हैं। ऐसी दशा में १०० में बीस प्रसूताओं के जीने का सहारा होता है। यह ऊर्ध्वगतविसर्पज्वरकी अपेक्षा बड़ा भयानक है। इस ज्वर में, बहन्मसूरिका (स्माल पाक्स) लघु मसूरिका (मीजल्स) रक्त ज्वर, आन्त्रिक ज्वर प्रभृति भयानक संक्रामक व्याधियां पैदा हो जाती हैं।

पेल्विक सेल्यूलाइटिस्

इसमें पेडू, और पेडू की झिल्ली में सूजन होजाती है। इसके और पेल्विक पेरिटोनाइटिस् के कारण, लक्षण, प्रायः एक ही होते हैं। इस रोग का कारण संक्रामक विष ही है। ये रोग प्रसूता के सिवाय साधारण स्त्रियों को भी होते हैं। परन्तु उस समय यह संक्रामविष कारण नहीं होता है।

पेल्विकपेरिटोनाइटिस्

यह रोग प्रसव की अपेक्षा अन्य काल में बहुत होता है। और गर्भावस्था में सेल्यूलाइटिस् होता

है। और प्रसूता को ये दोनों रोग साथ २ सताते हैं सन्तान उत्पन्न होने के बाद सात दिन में नाड़ियों में विष घुस कर एक बड़ा उभार उत्पन्न कर देता है।

इसका आकार चपटा होता है। यह सृजन गर्भाशय को एक तरफ हटाकर उसको निकम्मा कर देती है। इस रोग वाली स्त्रियों का गर्भाशय बहुत कम काम करता है। सूजन ऊपर से जाँघ तक और पेड़ की नाड़ी से कई इंच ऊपर तक आजाती है। पेट पर हाथ फेरने से पता लगजाता है। जब बहुत बढ़ जाता है। तब आँख से देखा जाता है। और शुरु में, जाड़ा, और, ज्वर, साथ २ आते हैं। ज्वरकी गर्मी १०२ से १०४ डिग्री तक होजाती है। पेटके निच ले हिस्से में किसी एक ओर दर्द होता है। इससे झिल्ली में सूजन होना सिद्ध होता है। कुछ समय में दर्द बन्द होजाती है। किन्तु दवाने से दर्द जान पड़ता है। उदर-च्छदा झिल्ली में सूजन होने पर उलटी होने लगती है। उदर में आध्मान, मुखमलीन रहता है। मूत्राशय, और अंतड़ियों तक सूजनके पहुँचजाने पर, मूत्र, पुरीश, त्यागते समय दर्द होती है। और प्रसूताको पाँव फैलाने में कष्ट मालूम होता है। इसलिये वह पैरोंको सदा सिकोड़े रहती है। ऐसी दशा में गर्भाशयके बड़े बन्धनों में सूजन होजाती है। और कमर जांघ में पीड़ा होनेपर रक्तवाहिनी नालियों में दवाव समझना चाहिये। सुबह शाम ज्वर कम होजाता है। वा उतर जाता है। ज्वर के चढ़ने उतरने पर स्वेद अधिक आता है। मृदु ज्वर, दो, तीन, दिन में अच्छा हो जाता है। कठिन ज्वर सात दिनसे भी कभी २ ज्यादा रहता है। और सृजनमें मवाद पड़जाने पर जाड़ा लगकर ज्वर चढ़ता है। मवाद के न पड़ने पर दर्द कम होता है। सूजन के अच्छे होने के लिये कम से कम ४२ से ४८ दिनतक लगते हैं। फिर शोथ के अच्छे होजाने पर धीरे २ गर्भाशय अपना कार्य करने लगता है। इस रोग में पेड़ का आवरण अत्यन्त कठिन हो जाता है। इस दशा में गर्भाशय वहाँ पर बहुत कठिनाई से रहता है।

स्तन शोथ

अज्ञानता से बच्चा पैदा होने के बाद स्तनों में सूजन हो जावे। औरज्वर की गर्मी १००डिग्री से अधिक होजावे तो समझना चाहिये, कि प्रसूता केशरीर में विष का प्रवेश होचुका है। और स्तनों का दूध कम हो जावे, तोभी समझे. कि विष का प्रवेश होने से ही शोथ हुआ है। इसके सिवाय, फेफड़ों में, हृदयमें भी सूजन कभी २ होजाती है। और यकृत शोथ, वृक्क (गुर्दे) का शोथ प्रभृति भी देखा जाता है।

अनागत बाधा प्रतिसेध

प्रसूता के समीप किसी रोगिणी स्त्री को न आनेदें। दाई खानदान की स्त्रियाँ जोकि झूठी झिल्ली (डिफ्थीरिया) रक्तज्वर, पेट कीझिल्लीकी सूजन (पेरिटोनाइटिस) विसर्पज्वर, (इरिसिये-लिस्) आदि सक्रामक रोगों से पीडित होवे उनको जच्चा के पास न आने देवे। धनकुन और नाइन सदा कपड़े बदल बदल कर जच्चा के पास आवें। यदि घर में कोई स्त्री प्रसूतज्वर से पीडित

होवे तो प्रसूता को दूसरे स्थान में रक्खे । दाई आदि अपने हाथ छूतनाशक अर्क (कांडोज लोशन) सेखूब धोकर के जच्चा को छूना चाहिए ।

छूत वाली व्याधियों की यदि वैद्य चिकित्सा करता होवे तो शुद्ध होकर, वस्त्र बदल कर प्रसूता को देखना चाहिये । और प्रसूत ज्वर की यदि वैद्य दवा करता होवे तो इरीसिपेलिस् आदि छूत वाली रोगियों के समीप न जावे । अगर जानेकी जरूरत ही आपड़े, तो छूत नाशक द्रव से हाथ, पांव, धोकर वस्त्र बदल कर जावे । और ऐसा प्रबन्ध करे । कि प्रसव की कठिनाइओं से जच्चा की शक्ति अधिक क्षीण न होने पावे । और प्रसव वेदना से स्त्री विह्वल न होने पावे । प्रसव की यंत्रणाओं को साफ सुथरे यंत्रों की सहायता से दूर करे। यदि असावधनी से अनुचित समय पर यंत्रों का व्यवहार किया जावेगा, तो भग में दराज होकर जीवाणुओं के लिये रास्ता तैयार हो जायगा ऐसी दशा में जच्चा के देह में विष उत्पन्न हो जाता है । ऐसी हालत हो जावे तो कुशल शस्त्र चिकित्सक से दराज को सिलादेवे । इससे, विष, और, कीटाणुओं का पथ बन्द हो जावेगा । बच्चा पैदा हो जाने के बाद गर्भाशय भली भांति सिकुड़ जावे। ऐसा प्रबन्ध करे इस लिये बच्चा पैदा होते ही अपना एक हाथ गर्भाशय के ऊपर रखकर उसको धीरे धीरे नीचेकी ओर उतारे ऐसा करनेसे गर्भाशयके सिकुड़नेमें मदद मिलती है । यदि उचित रीति से गर्भाशय संकुचित न होता हो तो चन्द्रोदय नामक रस वा, कस्तूरी, देवे । इससे गर्भाशय की शिथिलता, वा, रुकावट दूर होती है । जच्चाकरवट बदलती रहे । ४८ घंटा होजाने पर जच्चा को उठाकर पेशाब करावें, इस से गर्भाशय में रुका हुवा रक्त का लोथड़ा, झिल्ली का टुकड़ा गिर पड़ता है ।

प्रसूतागार

चरक संहिता में वर्णन किया हुआ सूतिकागार बनावे । वहाँ पर ऐसा वर्णन है । कि चतुर इञ्जीनियर जहां पर कंकरोली पथरीली भूमि न होवे । और गंदे नाले, या पतनाले न गिरते हों, तालाब, छोटे २ गड्ढे न हो वें। खुली शुद्ध वायु आती होवे, उस स्थान में सूतिकागार बनावे । गृह का दरवाजा पूर्व, वा, उत्तर की तरफ होवे इसमें बेल, तेंदू, हिंगोट, भिलावा, बरना आदि में जिन वृक्षों की लकड़ी मिले । उससे गृह तैय्यार करावे। और, स्नान स्थान, पाखाना, पेशाब का स्थान, पानी रखने का स्थान, रसोई घर, शीत ऋतु, वा, गर्मी-ऋतु के अनुकूल बन वावे । और रहने का स्थान, और ओढ़ने, बिछाने के साफ सुथरे वस्त्र होना चाहिये । और आवश्यक सामग्री, यथा, घी, तेल, मधु, सेंधा नमक, सेंचर नमक, काला नमक, वायविडंग, कूठ, देवदारु, सोंठ, पीपल, पिपरामूल गजपीपल, इलायची, कलिहारी, उलुवातृण, भोज-पत्र, कुलथी, मैरैया, सुरा, आसव, पत्थर, मोसल, ओखली, वलीबैल, सुवर्ण, चांदी, की तीक्ष्ण गोल सुइयां तीक्ष्ण नामक लोहेके औजार, बेल की लकड़ी की बनी हुई चार पाइयां, आग जलाने के लिये तेंदू, हिंगोट की लकड़ी, परिवार की शुद्ध स्वच्छ वृद्ध स्त्रियां, जनन कार्यमें जो कुशल होवें, चिन्ता, विषाद से रहित, स्वभाव से ही सन्तान पर स्नेह करने वाली होनी चाहिये और क्लेशको सहन करने वाली

होवे। और भी उपयुक्त उपकरण जो होवे। वह प्रसूतागार में होने पर प्रसूत ज्वर पैदा होने की सम्भावना नहीं रहती है। प्रसूतागार में प्रसूत की सेवा जहां तक हो सके। उसका पति स्वयं करे। धनकुन और, नाइन के ऊपर प्रसूता की सेवा छोड़ देने से हानि के सिवाय कुछ भी लाभ नहीं होता है। वास्तव में आज कल प्रसूत ज्वर फैलने का मुख्य कारण से मूर्ख दाइयां ही हैं। क्योंकि ये एक दिन मेंकई प्रसूताओंके पास मैले कुचैले कपड़े पहनकर के जाती हैं। संभव है उनमें किसी के प्रसूत ज्वर होवे। तो, उन कपड़ों के द्वारा निरोग प्रसूता भी रोगिणी हो जाती है। अगर इनसे काम ही लेना होवे, तब जब प्रसूता को देखने आवे। तो इनके कपड़े बदला कर छूत नाशक द्रव्योंसे हाथ पाव धो करके जच्चा के पास जाने देवे। ऐसा प्रति दिन करें तब किसी तरह रक्षा हो सकती है। जच्चा के रक्त से भीगे हुये वस्त्र को शीघ्रही बदल देवै, शुद्ध, साफ कपड़े पहनावै। आज कल ऐसी चाल है। कि प्रसव के समय में पहनने के लिये पुराने फटे हुवे कपड़े स्त्रियां रख छोड़ती हैं। ऐसा नहीं करना चाहिये।

चिकित्सा

इस ज्वर में चिकित्सा करने के पहले इस बात का ध्यान रखे। कि प्रसूत ज्वर के कीड़े प्रसूता के शरीरमें न घुसने पावें। इस लिये प्रसूतज्वर वाली स्त्री का योनि को दिन में तीन बार धोवे। अगर योनि से बदबू दार मवाद निकलता होवे। तो भी पारदद्रव (मर्करी लोशन १ भाग पारा १००० भाग जल) लेकरडूश में भर कर पहले गर्भाशय, योनि को धोवै। इसके बाद एक गज (पारद द्रव में भिगो कर शुष्क किया हुआ वस्त्र) के टुकड़े पर आइयोडो फार्म छिड़क कर योनि में रखे।

योनि धोने का काम दाईको बड़ी होशियारी से करना चाहिये। इसमें थोड़ी सी भूल हो जाने पर कीड़े गर्भाशय में पहुंच जाते हैं। यदि यह कार्य मुलायमत से नहीं किया जाता है तो गर्भाशय की सूजी हुई झिल्ली हिलकर उसमें क्षत होनेकी सम्भावना है। यदि गर्भाशय के अन्दर जेर का टुकड़ा रह गया हो, सड़ा गर्भ निकाला गया हो, गर्भाशय में हाथ डाल कर प्रसव कार्य कराया गया हो, दुर्गन्धित पूय निकलता हो, प्रसव के बाद दो तीन दिन तक बहकर रुधिर स्राव रुक गया हो,तो योनि को बराबर तीन बार पारद द्रव से धोना चाहिये। इससे कीड़े नहीं प्रविष्ट होते हैं। और प्रविष्ट हुए भी मर जाते हैं। यह कार्य ज्वर पैदा होते हुये ही करना चाहिये। क्यों कि एक सप्ताह के बाद धोने से कुछ लाभ नहीं होताहै। यदि गर्भाशय के अन्दर जेर का टुकड़ा रहने के कारण बार २ अधिक मात्रा में रक्त निकलता होवे। तो जांच करने के लिये दाई को बार २ अंगुलि नहीं डालने देवै, पेट को दबाना भी निषेध है। सूजे हुये स्थान को आराम देवे।

उदर्या कला प्रदाह (पेरिटो नाइटिस्)

इसमें महा नारायण तेल गरम करके मालिश करे,फिर सेंके। अथवा गुदामें तारपीनका तेल लगा सेंक करे। पेट के अफरे को दूर करने के लिये पिचकारी लगावे। और उदर्याकला प्रदाह में पीने के लिये नीचे लिखा प्रयोग व्यवहार में लावे।

स्पिरिट् आफ्टरपेन टाइन्	१ औंस
दो मुर्गी के अण्डों की जरदी	यथायोग्य

बबूल के गोंद का लुआब	२ औंस
नींबू का शरबत	१ औंस
टिंकचर वेलाडोना	२ ड्राम
सोल्यूशन् आफ मारफाइन-	
(अफीम सत का द्रव)	१ ड्राम
एसेंस आफ पिपरमेन्ट	४ ड्राम
क्लोरोफार्म वाटर	५ औंस

विधि—इनको एक में मिलाकर शीशी में रख लेवें। इसमें से चार ड्राम की मात्रा से तीन २ घंटा का अन्तर देकर के पिलावे। यदि कब्जी होवे तो कैलोमल तीनग्रेन, कैलोसिन्थ (इन्द्रायणसत्व) के साथ रात्रि को सोते समय देवे। अगर वमन होता हो, अफीमसत्व द्रव (मारयूफियासोलशन) त्वचा हाइयोडर्मिकसिरिञ्ज (त्वचोऽधःक्षेपणविधि) के द्वारा पहुँचावे। पेट की झिल्ली के सूजन में अफीम ¼ ग्रेन, विलाडोना का सत ¼ ग्रेन मिलाकर गोली बनावें, तीन २ घंटे का अन्तर देकर गोली देवें। अङ्गमें स्वच्छ वस्त्र या लिटंका टुकड़ा रक्खे। किन्तु जब वह भीग जावे तो तुरन्त बदल दे। यदि कमजोरी होवे तो संजीवनी सुरा (भैषज्य रत्नाली प्रोक्त) पिलावे।

पेल्विक सेल्यूलाइटिस्

इसमें कुनैनमिक्चर, पूरी मात्रा से पिलावे। और पीडा बन्द करने के लिये अफीम का प्रयोग करे किन्तु इससे भूख घट जाती है। और कमजोरी बढ़ने का डर रहता है। जितनी सूजन झिल्ली में होगी उतनी अधिक पीड़ा होगी जब तक ज्वर और पीड़ा रहे। तब तक पेट में गिलसरीन वेलाडोना, या ओपियम, पहले लगाकर गरम २ अलसी की पुल्टिस बांधें इससे पीड़ा दूर होजाती है। रोगिणीको चलने, फिरने, काम करने न देवें पूर्ण विश्राम करावें और पेट में दबाने से भी पीड़ा न होवे। शोथ भली भांति सूख जावे तब प्रसूता को चारपाई से उठने न देवें। रोगिणी को ४० दिन तक आराम करना चाहये। शीत से बचे, शोथ में टिञ्चर आयोडीन लगावेंइस व्याधि में केवल गरम पानी की पिचकारी दिन में दो बार लगानी चाहिये। पाचक, बलवर्द्धक दवाइयों का प्रयोग करे।

सेप्टीसीमिया (सप्तक ज्वर) पाइमियां (पूय ज्वर) इन व्याधियोंमें योनि प्रक्षालन आदि पूर्व रीति से करें। इससे ये सब अच्छे होजाते हैं और विसर्पज्वर (इरिसिपेलस्) का उपचार प्रसूत ज्वर के साथ ही हो जाता है। प्रसूत ज्वर की प्रधान दवा आज कल डाक्टरी में कुनैन ही है। इसका कारण यह है कि कुनैन में ज्वर नाशक और छूत नाशक शक्ति विद्यमान है। इसलिये प्रसूता की अवस्था देखकर १० ग्रेन की मात्रा से कुनैन दिनमें तीनबार खिलावें। यदि रोगिणी दुर्बल होवे। तो मात्रा कम कर देवें। इससे पूरा लाभ होता है।

किन्तु कुनैन के विपरीत मेरा मत है। क्योंकि कुनैन का पश्चात् प्रभाव (रिएक्शन) प्रसूता के लिये बड़ा हानिकारक है। इसलिये कुनैन के स्थान में, मृत्युञ्जय का प्रयोग करे। और दशमूलारिष्ट खिंचा हुआ १ तोला की मात्रा में पिलावे। और मालिश करने के लिये लाक्षादि तैल देवें। और दुर्बलता अधिक होने पर वसन्त मालती १ रत्तीकी मात्रा से, शर्बत बनपशा के साथ, सुबह शाम चटावें। विशेष दुर्बलता में संजीवनी सुरा पिलावै। इससे छूत का प्रभाव नष्ट होता है। और ज्वर, दुर्बलता दूर होती है। और पथ्य, दूध, मूंग की दाल का यूप, जौ की दलिया, धान के खीलों का मॉंड, परवल का शाक, आदि लघु पथ्य होना चाहिये। गुरु, दुष्पचय, उष्ण, तीक्ष्ण, आदि वर्जित रक्खे।

——:०:——

सम्पादक (Editor) जीवन सुधा

कविराज शशिकान्त मिश्र भिषगाचार्य आयुर्वेदभास्कर

Murari Art Press, Delhi.
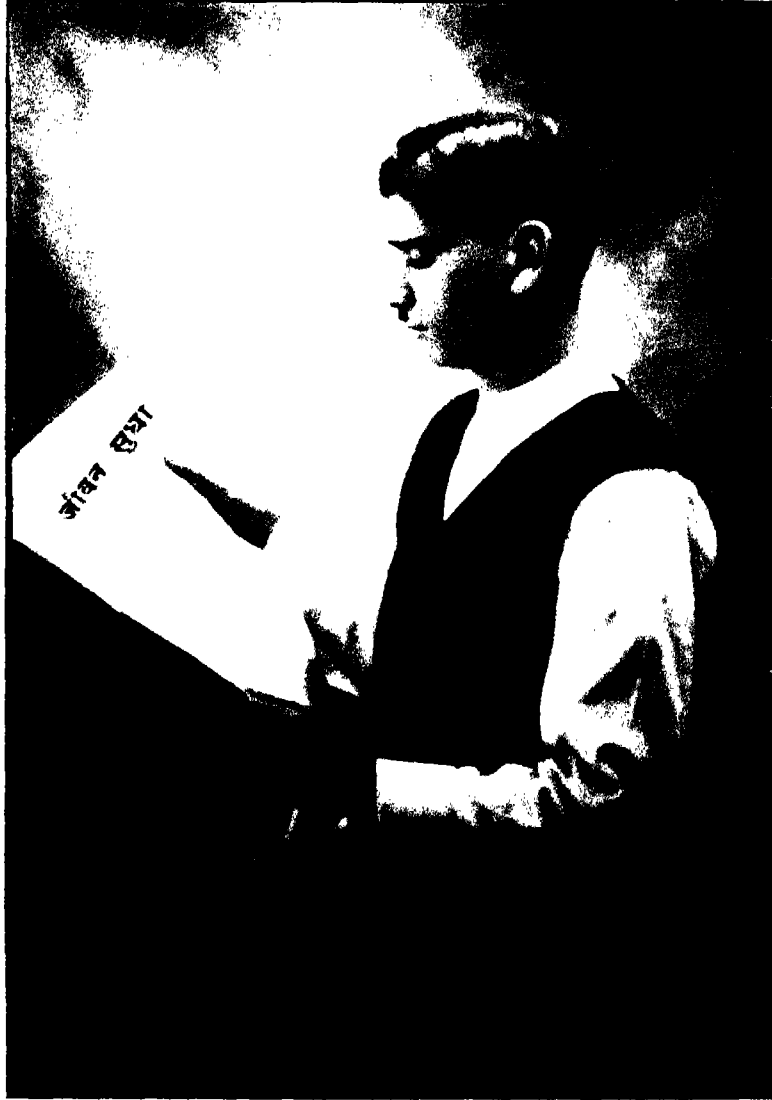
पित्ताश्मरी (Gall stones)

(ले० श्रीयुत कविराज एस० एम० भारद्वाज)

यह रोग पुरुषों कीअपेक्षा स्त्रियोंमें विशेष रूपसे पाया जाता है खासकर धन सम्पन्न घरानों में। क्योंकि धनवती स्त्रियाँ शारीरिक व्यायाम नहीं करतीं और न उनका भोजन इस तरह का होता है कि पाचनशक्ति शीघ्र पचाले। स्निग्ध तथा मैदा निशास्ते का सेवन अधिक मात्रा में करती हैं यदि स्निग्ध भोजन के साथ २ शारीरिक परिश्रम भी कुछ किया जाय तो यह रोग हो वे ही नहीं।

जब पाचनशक्ति नष्ट हो जाती है तब यकृत् अपना कार्य भली प्रकार नहीं कर सकता।

जो लोग मद्य पीते हैं या जिनको भोजन के समय पीने का अभ्यास है, जो मनुष्य २४ घण्टों में सिर्फ एकबार भोजन करते हैं उनको भी होजाती है क्योंकि पित्त बनकर जितना तैयार हुआ है उतना खर्च नहीं होता पित्ताशय भरा रहता है। वहाँ पित्त जमा रहने पर पथरी के रूप में बन जाता है।

नीरोग अवस्था में कोलस्ट्रीन पित्त के साथ मिला रहता है जब किसी कारणसे कोलस्ट्रोन पित्त से पृथक् हो जाय तब जमकर पहलूदार आकार धारण करता है।

पथरी आकार में गोल अंडे या बत्ती के समान या पहलूदार कँगनी के छोटे २ दाने से लेकर अंडे के बराबर हो सकती है।

ताजा निकालने पर यह पथरी मुलायम, जल से भरी चिकनी तथा सूख जाने पर हलकी और जल पर तैर सकती है कभी अन्य कारणों से पित्त जमकर पत्थर के समान कठिन हो जाता है।

यह रोग ४० से ५० वर्ष की आयु के मध्य में प्राप्त होता है १५ वर्ष से पूर्व प्राय: नहीं होता। क्यों कि इस मध्य की आयु में हाइड्रोकार्बन की आवश्यकता कम होती है यदि आवश्यकता से अधिक शरीर में जाए तो शरीर के भिन्न भिन्न स्थानों में वसा के रूप में तथा यकृत् में कोलस्ट्रोन के समान जम जाता है। कीटों के आक्रमण से भी पित्ताश्मरी बनती है यह कीट रक्त द्वारा पहुँचते हैं। कभी २ पित्ताश्मरी बिना लक्षण पैदा किए हो सकती है।

इसका सबसे बड़ा लक्षण यकृत् प्रदेश में दर्द का होना है। जब हिपाटिकडक्टस में पथरी के जर्रे जमने शुरू होते हैं। तो उस स्थान पर थोड़ा दर्द सा होने लगता है कुछ तापमान भी बढ़ जाता है, जी मिचलता है दर्द के साथ साथ वमन होती है।

जब पथरी पित्तनाली के प्रारम्भिक भाग में आकर आगे को चलती है तब दर्द बेचैन करनेवाला होता है वमन तथा आकुञ्चन होता है। यह दर्द ऐसा होता है कि कोई चीरता हो यह दर्द ऊपर दाहिने कन्धे के ऊपर को जाता हुआ प्रतीत होता है कामला भी हो जाता है, कामला इस रोग को प्रकट कर देता है।

हमने ऊपर बताया है कि जब पथरी पित्ताशय में से निकलकर पित्तप्रणाली (सिसटिकडटक) में जाती हैं तब किसी प्रकारका व्यायाम करने या भोजन करने के २-३ घण्टे पश्चात् एपिगैस्ट्रिक और राइट हाइपोकांड्रिएकरीजिन में कठिन दर्द प्रारम्भ हो जाता है यदि उस स्थान को दबाएँ तब दर्द में वृद्धि होगी। करवट बदलने पर आराम सा अनुभव होता है इसी कारण रोगी बार बार करवटें बदलता और चिल्लाता रहता है, रोगी का जी मिचलाता रहता है वमनभी होती है, आध्मान होता है, आँतों में वायु भर जाती है रोगी को कुछ कपकपी तथा शरीर शीतल सा अनुभव करता है नाड़ी मन्द २ चलती हैं।

दर्द की अधिकता तथा बार बार करवटें लेने से रोगी अशक्त हो जाता है शरीर ठण्डा पड़ जाता तथा ठंडे पसीने आने प्रारम्भ हो जाते हैं अन्त में रोगी मूर्छित होकर मर जाता है।

यदि अश्मरी पित्तप्रणाली से पित्ताशय में वापिस लौट जाए तो दर्द शान्त हो जाएगा और रोगी अपने आपको स्वस्थ अनुभव करेगा।

यदि अश्मरी कायनडकट के मुख पर पहुँचे तो दर्द फिर दुबारा प्रारम्भ होगा और डिओडिनम में पहुँचने पर दर्द बिलकुल शान्त हो जाता है।

यदि अश्मरी सिसटकडकट में बड़ी होने से रुकजाए तो पित्ताशय पित्त से भर जायेगा और कामनडकट बन्द रहे तो कामला हो जाता है।

यदि उसमें रुकावट दीर्घकालिक हो तो कामला बढ़ता जाएगा यहाँ तक कि सारा शरीर पीला हो जायगा रोगी को दिखाई भी पीला ही देगा। रोगी से पूर्व वृत जान लेना जरूरी है। दर्द एपीगैस्ट्रिक या हाइपोकाड्रियक स्थान से प्रारम्भ होकर छाती तथा कन्धों तक फैलता है इस प्रकार दर्द का ऊपर को बढ़ना अन्य किसी दर्द में नहीं होती ?

लक्षणों के साथ २ यदि कामला हो तो निश्चय से पित्ताश्मरी समझना चाहिए।

जब अश्मरी पित्तप्रणाली में होकर अन्त्र में आजाए तो टट्टी के साथ बाहर निकल जाएँगी यदि अश्मरी नुकीली है तो अन्त्र के कट जाने का भय रहेगा।

जिस स्थान पर पथरी अटकी होगी वहाँ पर हाथ से यदि स्पर्श किया जाये तो रोगी को विशेष दर्द अनुभव होगा। बहुत बार ऐसा होता है अन्य रोगों के लक्षण उत्पन्न होने सेठीक तौर से पित्ताश्मरी का ज्ञान करना कठिन हो जाता है इसका निरूपण हम ऊपर कर चुके हैं।

यहाँ एक रोगी का वर्णन करते हैं।

टेलीफोन की घंटीटन्—न—न—न्—न् कर बोल उठी लगभग रात्री के ११ बजे का समय होगा, मुझे अच्छी तरह अभी नींद भी न आई थी।

एक दम घंटी की लगातार आवाज सुन कर फोन का चोगा उठाया और पूछा क्या बात है ?

वैद्य जो घर पर हैं ?

आप अपना मतलब तो कहिए।

…………सेठ जी के घर से तबयित बहुत खराब है।

रोग क्या है साफ २ बतायें।

सेठानी जी की पसलियों में दर्द अधिक हो रहा है। साथ में कै भी है, आप फौरन आइऐ।

अच्छा कार जल्द भेजो में तैयर होताहूं।

दवाइयांको ठीककर तैयार होगया इतनेमें कार

आगई बैठ कर कोठी को रवाना हुआ।

जाकर देखा पलंग पर गद्दों के ऊपर सेठानी पड़ी छटपटा रही है। दर्द की तीव्रता के कारण बोलना तक दुशवार था,

आयु ३५ वर्ष शरीर स्थूल, और गौरवर्ण।

सेठजी इनको दर्द का दौरा कब से उठरहा है। क़रीबन २ घंटेसे पहले मामूली-सा दर्द हो रहा था पर अब आध घण्टेसे बराबर बढ़ता ही जा रहा है तभी मैंने आपको याद किया।

पहले कभी ऐसे दौरे उठे हैं क्या ?

हाँ पहले भी २—४ बार हो चुके हैं।

सेठानीजीकी अच्छी तरह परीक्षा कर सेठजी से कहना ही चाहता था इतनेमें सेठानीजीने कहा—

वैद्यजी ! दर्दकी लहरें दाहिनी तरफ जिगरसे उठकर ऊपर कंधे तक जाती है—जब लहर उठती है मैं उस समयकी तकलीफका वर्णन नहीं कर सकती।

सेठजी ! इनको पित्ताशय शूल है जब पित्ताशममें पथरी बन जाती है तब इस दर्दके दौरे उठा करते हैं।

औषधि का निश्चय कर औषधि देदी गई ३। ४ मात्रा के प्रयोग से दर्द शान्त हो गया जिन दवाओं का प्रयोग किया था नीचे देता हूँ।

वमन शान्त करने के लिए नीम्बू क्षार ३ र० दशमूलारिष्ट ६ मा० अहिफेनासव २ बू० मिला कर देना ३ मा० में लाभ होगा।

वमन की अधिकता में बर्फ चुसाना चाहिए, क्लोरोफार्मर, ईथर के साथ मिला कर सुघाने से वमन रुक जाती हैं।

एट्रोपिया तथा मार्फिया का इन्जेकशन भी करते हैं।

रोगिणी को टट्टी साफ नहीं आती थी इस कारण पेट साफ करना उचित समझ कर बस्ति की गई, बस्ति से पेट में से कई सुद्दे निकले।

दर्द के स्थान पर बोतल में गर्म जल भरकर सेंक करें, या उस स्थान पर यह लेप करें।

एक्सट्रैकट पौपी

एक्सट्रैकट बेलाडोना

को मिला कर लेप करना चाहिये, बहुत से अलसी की गर्म गर्म पुलटिस बंधाते हैं।

पीने के लिये यह दवा दीजिये।

सल्यूशन आफ़ हैड्रोक्लोरिक आफ मार्फीया	२ ड्रा०
क्लोरिक ईथर	३ ड्रा०
स्प्रिट आफ ईथर	२॥ ड्रा०
टिं० बेलाडौना	२ ड्रा०
कम्पोंड टिं० आफ़ कार्डीमम	३ ड्रा०
डिस्टिल वाटर	६ औं०

इस मिश्रण मेंसे १ औं० की मात्रा देनी चाहिये १—१ घन्टे बाद जब तक शूल नष्ट न हो।

जब दर्द अधिक तीव्र हो रहा हो तो फोइड ऐक्सट्रक्ट आफ एसपिली नियम स्टार्क १० बून्द जल के साथ देने से दर्द शान्त हो जाता है इसको ३ बार देना चाहिये। इसके प्रयोगसे दर्द शान्त हो जाएगा या दर्द में कमी अवश्य हो जाएगी तथा पथरी भी निलल जाती है।

कभी २ वमन के कराने की जरूरत प्रतीत हो तो थोड़ा सा "बाई कार्बोनेट आफ सोड़ा" गर्म जल में मिला कर पिलाए।

वेग से बचने के लिये नमकीन औषधियों

से विरेचन देने चाहिये, जैसे-मगनेशिया यदि नमकीन विरेचनोंसे नई पथरी भी नहीं बनती और नीचे के प्रयोग से भी नई पथरी नहीं बनती।

सल्फ्यूरिक ईथर	॥ ड्राम
टरपनटाइन	॥ ड्राम
म्यूसलिज आफट्रैगाकन्थ	२ ,,
डिस्टिल वाटर	६ ,,

इस मिश्रण को एक बार दे इस प्रकार की दो मात्रा सप्ताह में दो बार देनी चाहिऐं।

यदि पथरी बड़ी हो, स्वयम तथा औषधि के उपचार से न निकल सकती हो तो आपरेशन से निकाल देना चाहिए।

मुझे किसी वैद्यक की पत्रिका से यह दवा ज्ञात हुई थी तथा लाभदायक है यहां दे रहा हूँ।

थोलियोन (Thailion) इसको इकला ही देसकते हैं। निम्न औषधि कई बार की परीक्षित है लाभ देती है इस दवा को कुछ दिन तक बराबर सेवन करते रहना चाहिये इससे प्राय रोग नष्ट ही हो जाता है।

लीथयो पापरज़िन (LitheoPeprozine) वह एक पेटेन्ट औषधि है कैमिस्टों के यहां मिल सकती है।

इसकी १ ग्रे०, जल १ औं० में मिलाकर दिन में ३ वार देनी चाहिए।

सूतिका कीटावेशसे व्यथित प्रसूतास्त्री

ले०—कविराज शिवशरण जी भिषगाचार्य धन्वतंरि

शीलादेवी (आयु ३६ वर्ष) मुकाम एक ग्राम में २३ दिसम्बर १६३२ को बच्चा पैदा हुआ प्रसव का कार्य उक्त ग्राम की ६५ वर्षीय एक वृद्धा अनपढ़ दाई ने कराया। जैसे तेसे प्रसव का सर्व कार्य समाप्त हुआ। न तो दाई ने शुद्धता के नियमों का पालन ही किया और न हो उसे इन सर्व बातों का ज्ञान ही था। प्रसूता मैले कुचैले वस्त्र, साधारण सी टूटी हुई चारपाई मकान की निचली मंजिल की एक अंधेरी कोठड़ी इन सब बातों का एक विशेष प्रमाण थी। भला जब लोगों को ही इन सब बातों का ज्ञान नहीं है तो वे कैसे सफाई के नियमों का पालन करें। आये दिन जो नवजात बालक वा प्रसूता स्त्रियां मरती हैं उनके लिए हमही जुम्मेवार हैं। ग्रामों वा कसबों में चले जाइये आप को भूलकर भी कोई हिन्दू स्त्री दाईका काम करती न मिलेगी। स्त्रियों से यदि पूछा जावे तो वे इस कार्य को घृणित समझती हैं यही कारण है कि अपने आप को पवित्र वा उच्च मानने वाली जातियों को भी प्रसव कार्य के लिये "रहमते, फज्जी जैना, हुसैनी" को ही बुलाना पड़ता है। हा। ऐसे पवित्र वा आवश्यक कार्य को यवन वा नीच गन्दी श्रेणी को सौंप दिया गया। कैसा पाप वा अन्धेर है इसी अज्ञानता के 'दुष्परिणाम' तुम्हें नित्यप्रति सुनने को मिलते हैं। इस दीन 'शीला' के साथ भी

वहीं हुआ जो कि होना चाहिये था।

प्रसव मार्ग के पूर्णतया शुद्ध न हो सकने के कारण अथवा यूँ कहो कि सफाई के नियमों का उल्लङ्घन करने के कारण 'ज्वर' शुरू हो गया। परन्तु इस ज्वर के लिये किसी प्रकार का परामर्श लेना अनावश्यक समझा गया। झाड़ झपटे में चार दिन व्यतीत किये। जब बीमार की दशा तनिक और खराब हुई तो फिर उसी ग्राम के अल्लड़ साधु से दवाई ली। उन्होंने यह न समझ कर कि यह प्रसूता स्त्री है और ज्वर का कारण गर्भाशय का कोई दोष है जो कि भीतर ही रुका हुआ है, यूँ ही अंटसंट दवाइयाँ देनी शुरू कर दीं और रोग बढ़ता गया। शोचनीय लक्षण पैदा होने लगे। प्रसव से छटवें दिन मुझे बुलाया गया। इस समय निम्न चिन्ह वा लक्षण थे:—

ज्वर १०३° फा० बेहोशी अत्यन्त, शिर पीड़ा अफारा, रङ्ग पीला, चेहरा अति दीन वा दुर्बल, श्वास शीघ्रतापूर्वक, प्यास की अधिकता, हाथ-पांव में तशन्नुज, इन्हीं लक्षणों ने घर वालों को बाध्य किया कि किसी योग्य चिकित्सक से सलाह ली जावे। तशन्नुज का दौरा प्रत्येक ५-६ मिनट में होता था। रात्रिको दो तीन बेर मलमूत्र अनिच्छा से निकल गया जो कि अति दुर्गन्धयुक्त था गर्भाशय दबाने पर सख्त था और विटप संधि से अभी कोई पांच इंच ऊपर होगा। सूतिकास्राव के सम्बन्धमें वहां पर उपस्थित एक स्त्री से पूछा गया उसने बतलाया आंवल पूरी निकल चुकी थी इसके अतिरिक्त विशेष पता नहीं। चूँकि प्रसूता बेहोशी की दशा में थी अतः उससे पता लेना कठिन था खांसी जुखाम नहीं था। ज्वर कई दिनों से उतरा नहीं था।

यह कीटावेश था जो कि गर्भाशय में किसी प्रकार के दोष के कारण पैदा हो गया था निम्न लिखित योग की व्यवस्था की गई—

१—कफ चिन्तामणी २ रत्ती तुलसी व अद्रक स्वरस के साथ दिन में तीन बार

२—दशमूल क्वाथ रात्रि को।

३—प्यास के लिये मुनक्का वा तुलसी का पानी उबला हुआ।

४—गर्भाशय को पोटोसियमपरमैंगिनेट के हलके ऊष्ण धावन से धुलाया गया। विटपदेश पर ढाक पुष्प के क्वाथ की टकोर करवाई गई।

रात्रि-भर चिकित्सा करने पर शिरपीड़ा तनिक हुई आधघण्टा निद्रा भी आगई। चार पाँच अति दुर्गन्धयुक्त खुले २ दस्त आगये। अगले दिन पुनः यही चिकित्सा कीगई। अब उसकी बेहोशी घटनी शुरू हुई। पर ज्वर में कमी न हुई। सायङ्काल को तापमान १०५° फा० था। बीमार विटपदेश पर पीड़ा की शिकायत करता था। अब पेट में अफारा बढ़ना शुरू हुआ। मुझ से पुनः सलाह ली गई। मैंने प्रथम नुसखे के साथ २ अरगट का प्रयोग आवश्यक समझा अतः चालीस चालीस बूँद की तीन खुराक एक २ औंस पानी में मिलाकर रात्रि को तीन २ घण्टे बाद दी और प्यास के लिये दशमूल क्वाथ थोड़ा २ करके दिया। प्रातः होते ही अफारा शान्त हो गया। ज्वर १०२° पर आगया। शिर-पीड़ा के कारण तशन्नुज जो कि प्रत्येक ५ मिनट पर होता था अब देर २ के बाद होने लगा। बीमार अपने आप को स्वस्थ अनुभव करने लगी। अरगट वा दशमूल के प्रयोग से सूतिकास्राव पुनः शुरू हो गया। और गर्भाशय के अन्दर से सड़े हुये माँस के टुकड़े निकलने लगे। तीन दिन में गर्भाशय की सर्व दुर्गन्धि दूर हो गई अब ज्वर सर्वथा शान्त है।

——:o:——

प्रसवोत्तर रक्तस्राव (*Post Partuny Hoemarrage*)

(ले०—प्रो० धर्मानन्द जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य गुरुकुल काँगड़ी ।)

यों तो प्रसूता को प्रसवके बाद भिन्न २ कारणों से अनेक पीड़ायें उपस्थित होजाती हैं परन्तु उनमें प्रसूता के लिये रक्तस्राव अधिक हानिकर होता है। क्योंकि दशमास तक अपने आहार-रस से गर्भ का पालन करने पर उसके शरीर में अपनी स्थिति को ठीक रखने के लिये बहुत कम अँश में रक्तादि धातुओं की प्राप्तिहोती है जो प्रसव कालीन दु:सह कष्ट को सहन करने के लिये ही पर्याप्त नहीं होती इसमें यदि गर्भावस्था में यदि रोगादि हो गया या कुछ स्वास्थ्य में गड़बड़ी रहे तो उस समय और भी कठिनता आजाती है इस लिये शास्त्र में गर्भिणी को बहुत सावधानी रखने के लिये पूर्णमिवतैलिपात्रमंक्षोभयताऽन्तर्वत्नी भवयुत्पचर्या" उपदेश दिया गया है ताकि उसे प्रसव कालीन तथा प्रसवोत्तर कष्ट न सताने पाये परन्तु सामयिक स्थिति इस बात में प्रतिवाद होती है। प्रकृत रक्त स्राव के विषयमें कुछ लिखने से पूर्व यह बता देना ठीक होगा कि गर्भाशय के भीतर रक्त नालियों का एक जाल है जिसकी शाखायें खेड़ी में फैली रहती हैं। इस जाल की रचना प्रकृति द्वारा इस प्रकार की गई है कि गर्भाशय के खुलने और फैलने पर इस जाल की नालियाँ भी खुलती और फैलती हैं। बालक के जन्म लेते ही गर्भाशय रक्त नालियों का मुख खुल जाता है, परन्तु जब गर्भाशय खूब जोर से संकुचित होने लगता है तो ये नालियां दब कर बन्द होजाती हैं और रक्त श्राव नहीं होता है। परन्तु प्रसवानन्तर गर्भाशय न सिकुड़े या अधूरा ही सिकुड़ कर रह जाय तो उक्तनालियां बन्द नहीं होने पातीं और रक्त स्राव आरम्भ होजाता है। कभी कभी ऐसा भी होता है कि गर्भाशय पहिले सिकुड़ कर फिर ढीला पड़ जाता है और कभी २ इतना ढीला होजाता है कि फिर संकुचित ही नहीं होता और रक्तस्राव होने लगती है। परन्तु प्राय: बालक जन्म के बाद ही गर्भाशय एक बार बड़े जोर से संकुचित होता है जिसे प्रसवोत्तर वेदना कहते हैं। रक्त नालियाँ दब जाती हैं और उनके मुख पर रक्त जमजाने से स्राव भी बन्द होजाता है। प्रसवोत्तर रक्त स्राव उस रक्तस्राव को समझना चाहिये जो प्रसव की तृतियावस्था में हो तथा उसकके पश्चात् ६ घण्टे के अन्दर २ हो इसके उपरान्त प्रसूतकाल में भी कभी कभी रक्तस्राव होजाता है कभी योनि तथा गर्भाशय के घाव के कारण भी प्रसवोत्तर रक्तस्राव हो जाता है परन्तु इसका मुख्य कारण गर्भाशय का किसी कारण से भली प्रकार न सिकुड़ सकना ही होता है। ये कारण निम्नलिखित रूप से होते हैं।

१—विलम्बित या कष्ट अवरुद्ध प्रसव—कठिन प्रसव में प्रसूता तथा गर्भाशय दोनों को अधिक परिश्रम करना पड़ता है। बालक के शीघ्र न निकलने से स्त्री को बार २ कूँथना और गर्भाशय को पूर्ण चेष्टा से संकुचित होकर भ्रूण को को निकालने की चेष्टा करनी पड़ती है। इस प्रकार दोनोंकी शक्ति नष्ट होजाती है और प्रसवान्त गर्भाशय में सिकुड़ने की शक्ति नहीं रहती रक्त नालियों का मुख रह जाना और उनसे रक्त की धारा बहने लगती है।

२—भ्रूणकोष वृद्धि तथायमलगर्भ, बहुत बार गर्भ की थैली में अधिक जल भर जाने से उसकी संकोचन शक्ति नष्ट होजाती है अथवा गर्भाशय में एक साथ ही एक से अधिक बालकों के होने पर गर्भाशय फूल जाता है जिससे प्रसवानन्तर उस में संकोचन शक्ति नष्ट होजाती है।

३—मूढगर्भ—गर्भ शंकुयन्त्र द्वारा कभी २ बालक के शीघ्र गर्भाशयसे बाहर आने से गर्भाशय एकाएक रिक्त होजाता है और खेड़ी उसके भीतर रुक जाती है इससे रक्त स्राव होने लगता है।

४—अनेक बार प्रसव होना कई बार गर्भ धारण तथा सन्तान प्रसव करने से गर्भा य की माँस पेशियां अच्छी तरह नहीं सिकुड़ सकतीं अतः यह स्राव होने लगता है।

५—गर्भाशय में कुछ बचा रहना—यदि खेड़ी (कमल) गर्भाशय प्राचीर से सटी हुई रह जाय तो यह होने लगता है। खेड़ी कुछ अँश गर्भाशय प्राचीर से संयुक्त और कुछ विभिन्न होजाय तो स्राव की ओर भी अधिक आशङ्का रहती है। और दशा एक बार होने पश्चात् सभी गर्भों में हुआ करती है। और कभी कभी—खेड़ी के रुक जाने पर इसे निकालने के लिये मूर्ख दाइयाँ नाल को पकड़कर खींचती हैं खींचने पर गर्भाशय पर झटका लगता है और वह सिकुड़ने लगता है परन्तु उसके पेंदेपर कोई दबावन पड़नेपर वह ज्यों का त्यों फैला हुआ हो रह जाता है। इससे गर्भाशय का अनियमित या आंशिक सँकोच होता है ऐसी दशा में उसका जो भाग शिथिल पड जाता है उससे स्राव होने लगता है।

५—प्रसूताकी निर्वलता से गर्भाशय के संकोच भी न्यूनता होती है अतः स्राव होता है।

६—स्वतः गर्भाशय की निर्वलता।

७—अधिक क्लोरोफार्म सुंघाना।

८—संकुचित बाणी।

६—प्रसव के पूर्व रक्त स्राव।

१०-प्रसव को तृतीयावस्था में योग्य उपचार न होना।

११-गर्भाशयमें अर्वुदका होना। इसके कारण माने जाते हैं।

लक्षण गर्भके बाद अधिक रक्तस्राव होने लगता है। कभी २ यह गर्भाशय में एकत्रित होता रहता है और उसे दबाने से एक साथ निकलने लगता है। अधिक रक्त स्राव से घातक परिणाम उपस्थित हो जातेहैं जिससे प्रसूता अत्यन्त निर्वल हो जाती है। आंखोंके सामने अंधेरा आजाता है कानों में अनेक प्रकार के शब्द सुनाई देते हैं। रोगिणी अपने को शय्या से गिरती हुई अनुभव करती है। उसकी

नाड़ी की गति मन्द हो जाती और कभी २ मूर्छा बेचैनी भी होने लगतीहै। शरीर शीतल और कम्प-युक्त हो जाताहै। यदि श्वास क्रिया नियमित नाड़ी गति स्वस्थ शरीर में शक्ति और त्वचा में गर्मी विद्यमान हो तो रोगिणी के जीवन में आशाकी जा सकती है। परन्तु स्राव गति रोध और बल दायक उपचार करने पर ही लाभ होता है।

चिकित्सा—पूर्वोक्त अवस्था उत्पन्न होने पर शीघ्र ही चिकित्सोपचार करना चाहिये।

गर्भाशय को अंगुष्ट और अंगुलियों में पकड़ कर मलना चाहिये जब तक वह कठोर नहो जाय। यदि कमल खेडी अन्दर रहा हुआ हो तो उसे निकालदेना चाहिये। यदि गर्भाशयको पूर्वकी रीति से तीन वार दबाने से कमल न निकले तो सूतिका को क्लोरो फार्म सुंघा कर गर्भाशय के अन्दर हांथ डाल इसे पृथक कर देना चाहिये, परन्तु इस क्रिया के समय गर्भाशय को दूसरे हांथ से पकड़े रखना चाहिये। खेड़ी गिर जाने पर शीघ्र ही एक ड्राम Liquid Extract of Argot (लिकिड आफ एक्स ट्रेक्ट अर्गट) में थोड़ा जल मिलाकर पिला देनेसे सबही झिल्लियां और रक्तके लोथड़े तो निकल हो जाते हैं साथही रक्तकी नाड़ियों का मुख सिकुड़ कर बन्द हो जाता है।

यदि उक्त औषधि सेवन में कुछ कठिनाई हो या उससे वमन होने का भय हो तो उसी औषधि की सत Ergotin अर्गीटीन पिटईट्रीन १०बूंद मात्रा में लेकर भुजा या किसी अन्य स्थानमें त्वचा की पिचकारीदेना चाहिये। अथवा योनिमें पञ्चक्षीर वृक्षों केकषाय में ठंडा करके थोड़ी फिटकरी डालकर उसमें साफ रुई का फाया भिगाकर रखदें। कभीर साधारण पेडू पर बरफ रखने से भी स्राव बन्द हो जाता है। उपर्युक्त उपायों से स्राव बन्द होने पर निम्नोपचार करने चाहिये।

एक हांथ की अंगुलियां अथवा मुट्ठीको योनिके अग्रकोण में रखे और दूसरे हांथ से गर्भाशय को बाहर से उन पर दबावें जिससे अन्दरका अवशिष्ट पदार्थ सब निष्फल जाय।

अथवा उपर्युक्त स्थानमें गर्भाशय तथा योनिको खूब गाजसे भर दें और ऊपर से वही बांध दें तो रक्त स्त्राव बन्द हो जाता है।

अथवा स्राव बन्द करने के लिये महा धमनी (Aorta) को मुट्ठी से दबाना चाहिये।

विधि—नाभि से कुछ नीचे महाधमनी की बाईं ओर दो शाखायें करती है इनमें से गर्भाशय को भी धमनियां जाती है इस लिये यदि नाभि से नीचे मुट्ठी रखकर अपना साराभार भुजा पर डालें तो महाधमनी दब जाती है जिससे रक्त गर्भाशय की तरफ नहीं जा सकता है। जिन स्त्रियों की उदर की दीवार पतली होतीहै उन स्त्रियोंमें यह चिकित्सा बड़ी सुगमता से कीजा सकती है परन्तु मेदा वृद्धि वाली स्त्रियोंमें कठिनता केसाथ दाबावपड़ सकताहै।

यदि प्रसूता के गर्भाशय आदि स्थान में कोई क्षत होने के कारण रक्त स्राव होता हो तो उसे सी देना चाहिये। इन उपायों द्वारा स्राव बन्द होने पर सर्वांग शैत्य (Collapse) तथा दुर्बलता दूर करने की चिकित्सा करनी चाहिये। इसके लिये रोगिणीके हाथ पैरों को गरम बोतल का सेक, ब्राह्मी मकरध्वज कस्तूरी देना चाहिए और पूर्ण विश्राम देना चाहिये।

चिकित्सा

लीकर एमोनिया एसीटेटसी ड्रा० १॥	एसी १-१
स्प्रिट इथर नैट्रोसाई बिन्दु ३०	मात्रा ३-१ बार
सीरप औटनशाई डि.१	ये ३-४ खूराक
जल औंस १	रोज है।

इसमें २ ड्राम मैगनेशिया साई ट्रेट पीयें जिससे १-२ दस्त आकर शुद्ध हो जावे और स्तनों का तनाव कम हो जावे या पेट शुद्ध करनेके लिये छोटी हड़ सौंफ और खांड को फंकी गरम जल या दुग्ध के साथ दें।

हल, पञ्जीरी और घी वगैरा न दें।

उसके स्थान में	उन्नाव	दानें ६
खरबूज़े के बीज		तोला ३

दोनोंको पावभर अर्क मकोहमें पीसकर छानलें २ तोला मिश्री मिलकर आगपर आहिस्ता आहिस्ता पकावें कुछ गाढ़ा होने पर हलका गरम पीलें।

ज्वर दूर करनेके लिए निम्नाङ्कित औषधि दें—

खरबूज़े के बीज कूटकर	माशे ६
उन्नाव	दाने ५
सौंफ	माशे ६
गाज़ुवां	माशे ६
खूबकलां (खाकसी)	माशे ५

इन सब औषधों को अर्कमकोह तोला ६ अर्क सौंफ तोला ६ में डालकर मृदु अग्नि पर पाक करें छान कर शर्बत बजूरी मातदिल ४ तोला मिलाकर पिला दें या दशमूलका काढ़ा पिलावें या अर्क दशमूल शर्बत बजूरी डालकर पिलावें।

तनाव और शोथको दूर करने के लिए—

(१) दुग्ध निकालनेवाले यन्त्र (Breast Pump) से दुग्ध निकाले।

(२) पोस्त का काढ़ा बनाकर उससे स्तनों को खूब सेकें पश्चात् *बिलाडोनासरीन* (Belladona Glycerine) लगाकर ऊपर नीचे रुई रखकर स्तनों को ज़रा ऊंचा करके बाँध दें।

या

एलवा	तोला १
गूगल	माशे ६
गेहूँ का मैदा	तोला १

इन सबको पोस्त के काढ़े में मिलाकर गरम करके लेप करें।

या

सम्भालू के पत्ते	तोला ६
नीम के पत्ते	,, ,,
आकाशबेल	,, ,,
पोस्त खशखश	,, २
खत्मी के बीज	,, १
बाबूना के फूल	तोला १

सब को पानीमें खूब उबालें छानकर स्तनों पर गरम २ धार डालें।

या

सिरस की छाल, मुलहठी, तगर, चन्दन लाल एलवा, बालछड़, हल्दी, आम्बा हल्दी, कूठ, नेत्रवाला और कपूर सब बराबर पानी में खूब बारीक पीसकर थोड़ा घृत मिलाकर गरम गरम लेप करदें

यदि इतना यत्न करते हुए भी शोथ न जावे तो अलसी की पुलटिससे पकाकर शस्त्र चिकित्सा करें।

नोट—यह स्मरण रहे कि जब तक स्तन रोगों से मुक्त न हो जावें बच्चे को रोगग्रसित स्तन से दुग्धपान न करावें।

——:०:——

सौरि-गृह और हमारी दाइयाँ

जच्चा और बच्चा की करुण दुर्दशा

गर्भावस्थामें आवश्यक नियम।
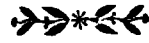
(डा० सोहनलाल जी M. P. B. S. देहली)

गर्भवती स्त्री को एक स्वच्छ कमरे में रखना चाहिये जिसमें शुद्ध वायु और सूर्य का प्रकाश पूर्णतया पहुँच सके। स्त्रीको शीघ्र पचनेवाला और पौष्टिक भोजन देना उचित है। दूध और ताजे फल भी अवश्य देने चाहियें। गर्भवती को कब्ज़ होना ठीक नहीं। यदि कब्ज़ भोजन के परिवर्तन से ठीक न हो सके तो औषधि द्वारा दूर करना उचित है। गर्भवती स्त्री को सदैव प्रसन्न-चित्त रखने का उपाय करना चाहिये। शोक, संताप, या किसी अन्य प्रकार की चिन्ता चित्त में न होने देना चाहिये, वाटिकाओं तथा खुले मैदानों में शीतल मन्द और सुगन्धित वायु का सेवन करना उनके लिये परम उपयोगी है।

गर्भ के अन्तिम दिनों में मूत्र परीक्षा अवश्य करा लेनी चाहिये जिसमें* इकलैम्पशिया (Eclampsia) नाम के रोगको जो गर्भावस्था के समय सन्तान के जन्म लेने से पहले अथवा पीछे स्त्रियों को कभी होजाता है, दूर करने का उपाय किया जाय। प्रसव काल में किसी योग्य और सुशिक्षित (Trained nurse) दाई को बुलाना आवश्यक है। अशिक्षिता दाई को बुलाना उचित नहीं।

सैप्टी सीमिया (Septicaemia) का रोग स्त्रियों के बच्चा उत्पन्न होने के अनन्तर हो जाता है जिसका एक मात्र कारण अशिक्षित दाइयाँ हैं। पैदा होनेके पश्चात बच्चेको टिटेनस (Tetanus) रोगी भी इन अशिक्षित दाइयों के कारण हो जाता है। क्योंकि अनाड़ो दाइयां अपने मैले कुचेले हाथों से बिना पानी में औटाई हुई कैंची और तागे से नाल को काटती और बाँधती हैं। चतुर और सुशिक्षिता दाई (Trained nurse) सबसे पहले अपने नखों को काट कर गरम जल और साबुन से हाथ धोती हैं किसी लाइसोल या अन्य प्रकार के लोशन से अपने हाथ डिसइन्फेक्ट (Disinfect) करती हैं। इस प्रयोग से वे कीटाणु जो हाथों में लगे होते हैं मर जाते हैं। कैंची और डोरे को नाल काटने से पहले उबालने का उद्देश्य इन्हीं कीटाणुओं के नाश करने का है।

उबलता हुआ जल इन कीटाणुओंको जोकैंची और डोरे में लगे रहते हैं नष्ट कर देता है। इस प्रयोग को काम में लाने से बच्चों को टिटेनस (Tetanus) रोग नहीं हो सकता है भारत में

*इकलैम्पशिया(Eclampsia) एक प्रकार की पीड़ा होती है जो स्त्रियों को गर्भवस्था के अन्तिम दिनों में अथवा सन्तानोत्पत्ति के समय या उस के अनन्तर हो जाती है इस रोग में मृगी के समान दौरे आते हैं यह दौरे इतने भयंकर रूपधारण कर लेते हैं। कि रोगी को सम्भलना कठिन हो जाता है दौरे के समय और कुछ पश्चात तक भी उसको मूर्च्छा रहती है। बहुत सी स्त्रियां इस रोग में मर जाती हैं और देशों के अतिरिक्त भारतवर्ष में यह रोग विशेषता से पाया जाता है इसी रोग के भय से गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में मूत्र परीक्षा करवा लेनी आवश्यक है। मूत्र परीक्षा से इस रोग की दशा पहले से ही ज्ञात होसकती हैं और रोग रोका जा सकता है।

प्राय: लोगों का ऐसा विचार है कि जच्चा (प्रसूता) का कमरा ऐसा हो जिसमें हवा आने जाने न पावे, किवाड़ खिड़कियां तथा रोशनदान सब बन्द कर दिए जाएं, परन्तु ऐसा विचार करना बड़ी मूर्खता है। प्रसूतिकागृह भी उसी प्रकार खुला हुआ और हवा दार होना चाहिये।

जैसे कि मकान के अन्दर हवादार कमरे क्यों कि जच्चा और नवजात शिशु को स्वच्छ और शीतल वायु की उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि और मनुष्यों को।

१—सैप्टीसीमिया (ज़हरबाद) जिसको भारत में प्रसूत कहते हैं स्त्रियों को प्रसव के पश्चात् अनजान दाइयों की मूर्खता के कारण हो जाता है। इस रोग में बच्चा उत्पन्न होने के पश्चात जच्चा के रुधिर में घाव की राह विषैले कीटाणु भीतर पहुंच जाते हैं इसी रोग में बहुत सी स्त्रियां काल का ग्रास बनजाती हैं।

२—टिटेनस-जिसका वर्णन उपर किया जा चुका है यह एक प्रकार का रोग है। यह रोग बच्चा उत्पन्न करने के पश्चात मूर्खा दाइयों की अज्ञानता से हो जाता है। इस रोग में दौरे के समय जबड़ा भिच जाता है। येदौरे एक के पीछे एक होते रहते हैं। बहुत से बालक इसी रोग में मर जाते हैं, चिकित्सा होने पर भी कठिनता से बचते हैं।

३—किसी स्वस्थ्य मनुष्य को कीटाणुओं के द्वारा रोग का लगजाना इन्फैक्शन (Enfecsion) कहलाता है।

(क) रोग के कीटाणु (जो रोगीयों के मल-मूत्र बरतनों, कपड़ों, बर्तनों और भिन्न २ चीज़ों में लगे रहते हैं) को नष्ट करने की क्रीया का नाम डिसइन्फैक्शन(Disinfection) आग, धूप, ताज़ा हवा और अन्य प्रकार की दवाइयों द्वारा होता है।

प्रसव-काल

(ले०-कविवर वैद्यभूषण श्री० बा० श्यामबिहारीलालजी 'श्याम')

शरीर बार २ कांपे मतली या वमन बार२ हो, यानि से जल युक्त श्लेष्म निकले तथा कटिसे दर्द शुरू होकर पेट की ओर जाये, यह लक्षण प्रसव होने के समय होते हैं। पूरे दिन होने पर बहुतेरे वैद्य दर्द होते ही बिना परीक्षा के शीघ्र प्रसव कारी औषधि दे देते हैं जिससे यदि शूल झूठा हुआ तो लाभ के बजाय हानि हो जाया करती है इस नीचे लिखे अनुसार सच्चे झूठे दर्द की परीक्षा कर दवा देनी, चाहिये।

बालक होने का सच्चा दर्द

(१) पीठ, कमर में दर्द कभी २ जांघों में भी दर्द उठे।

(२) हर समय नियमित रूप से पाँच २ मिनट के पश्चात् शूल उठकर बन्द होजाया करे।

(३) शूल की तेजी हर समय बढ़ती जावे।

(४) जब शूल उठे तब गर्भाशय का मुख खुलता जावे और उसमें से मल निकले।

उपरोक्त लक्षण तो प्रसव होने वाले सच्चे दर्द के हैं, झूठे दर्द के लक्षणों को नीचे देखिये:—

प्रसव समय का झूठा दर्द

(१) केवल उदर में ही शूल होता रहे।

(२) दर्द का कोई नियमित समय न हो अनियमित रूपसे कभी १० मिनटमें कभी १५ मि० में कभी ५ मिनट में कभी ३० मिनट में कभी बराबर शूल हो।

(३) दर्द कभी तो शीघ्र शीघ्र और तेज तथा कभी मन्द मन्द विषम वेग से हो।

(४) गर्भाशय न तो मल छोड़े और न उसका मुख ही खुलता हो यह लक्षण झूठे दर्द के हुए अब नीचे कुछ आवश्यक बातें बतलाकर शीघ्र प्रसव कारी चिकित्सा का वर्णन कर लेख को समाप्त करूँगा।

कुछ आवश्यक हिदायतें

१ बालक होते समय गर्भिणी को पेशाब पाखाना न रोकना चाहिये क्यों कि मलमूत्र हो जाने से प्रसव कष्ट कम हो जाता है।

२ दर्द होते ही दाई को फौरन बुला लेना चाहिये।

३ जब दर्द बढ़ने लगे और योनिसे मैला पानी आने लगे तो गर्भिणी को लिटा देना चाहिये।

४ दर्द के समय गर्भिणी को अधिक हिलना डुलना नहीं चाहिये अधिक छटपटाने और हिलने डुलने से दर्द बिल्कुल बन्द हो जाता है। और बच्चा अन्दर ही अटक जाता है।

५ यदि बच्चा अन्दर अटक जावे और देर तक रुका रहे तो गर्म दूध पिलावें, तथा प्रसवकारी औषधि सेवन करावें।

नोट—बालक होते समय दाई को योनि और गुदा के बीच हाथ लगा लेना चाहिये नहीं तो बालक के दोनों कन्धों के निकलते समय कभी २ गुह्य स्थान फटकर गुदा और योनि द्वार एक हो सकते हैं।

बच्चा किस प्रकार बाहर आता है

गर्भाशय में ज्यों २ संकोचन होने की लहरें शीघ्रता और तेज़ी से उठती है त्यों त्यों बालक वाला थैली आगे बढ़ती जाती है और गर्भाशय के मुख को चौड़ा करती हुई उसकी झिल्ली फट जाती है, झिल्ली फटनेसे पहले रक्त स्राव होता है फिर मैला निकलने लगता है तथा मैला निकलनेके पश्चात् बालक का सिर आता है फिर, कन्धे, पेट, चूतड़, पैर निकलकर समस्त बालक बाहर आजाता है बालक होजाने पर गर्भाशय की लम्बाई पूर्व से आधी रह जाती और ५-६ सप्ताह में सिकुड़ कर ३ इञ्च लम्बा और १ छटाँक भारी रह जाता है जो कि कुमारी अवस्था में २ इञ्च लम्बा तथा आधी छटाँक भारी होता है।

शीघ्र प्रसव

(ले०—वैद्यभूषण श्यामलाल सुहृद एच० एल० एम० एस०)

प्राय: देखा जाता है कि प्रसव समय स्त्रियों को बड़ा कष्ट होता है, किसी किसी को तो इतना कष्ट होता है कि वह दर्द के कारण बड़ी भारी छटपटा जाती है, और फिर भी प्रसव नहीं होता। विचारने की बात है कि प्रसवका कष्ट कोई रोग नहीं है, स्वाभाविक प्रसव की क्रिया है। इस स्वाभाविक क्रिया का कष्ट इतना होता है कि कभी कभी बेचारी स्त्रियों को असहनीय हो जाता है, इसीलिये पाठक व पाठिकाओं के लाभार्थ प्रसव कष्ट के कुछ शमनोपाय लिखे जाते हैं। प्रसव होने के समय की जब जानकारी हो तब गर्भिणी को चाहिये कि जिस प्रकार रहना चाहे उस प्रकार आराम से रहे, पेशाब पाखाने को बिल्कुल न रोके। पेशाब पाखाना हो जाने से प्रसव कष्ट कम होजाता है। जब दर्द बढ़ने लगे और योनि से मैला निकलने लगे तब दाई को बुलवाले और आराम से गर्भिणी लेटे। ध्यान रहे कि दर्द के कारण अधिक छटपटाने हिलने व डुलने से दर्द बिल्कुल बन्द हो जाता और बच्चा अन्दर अटक जाता है। जब बालक होने लगे तो गर्भिणी बाँई करवट से लेटे, और अपने दोनों हाथों को ऊपर की ओर फैलाले, दोनों घुटनों को छाती की ओर कुछ सिकोड़ ले, और घुटने व जाँघों में इतना फैलाव रखे कि तकिया आजावे, इस यत्न से बालक आसानी से बाहर आजाता है। बालक होते समय दाई को योनि और गुदा के बीच हाथ लगाये रखना, नहीं तो बालक के दोनों कन्धे निकलते समय कभी २ गुह्य देश फट कर गुदा और योनि द्वार एक हो सकते हैं।

कभी २ ऐसा देखा गया है कि गर्भवती स्त्री का प्रसव काल होने पर भी बालक उत्पन्न नहीं होता, किसी किसी के बालक होने में २-२ दिन तक लग जाते हैं और उसमें कष्ट के कारण बड़ी व्याकुलता रहती है कहते हैं कि ऐसे समय में निम्न लिखित उपचार अच्छा फल दिखलातेहैं।

१—गूगल की धूनी योनिमें देनेसे शीघ्र प्रसव होता है।

मिर्च काली और रीठा के छिलके दोनों को समान भाग महीन पीसछान कर ६ माशे की फंकी करावे ऊपर से गरम जल पिला दे तो उसी समय बच्चा होगा, यदि एक घंटे के अन्दर न हो तो दूसरी मात्रा देनी चाहिये।

२—संभालू के पत्ते १ तोला जलके साथ पीस कर पिलाने से शीघ्र प्रसव होता है।

३—अरंड की जड़, पीपल, बच, वायविडंग, इनको कूट पीसकर जल में घोल गरम करके टूंडी से नीचे पेडू पर लेप करने से प्रसव होजाता है।

४—बच को जल में पीस कर अंडी का तेल मिलाले और गुनगुना करके नाभी तथा नीचे की ओर भी लेप करे, बच्चा आसानी से पैदा हो जायगा।

५—सेंहुड़ का दूध गर्भिणी के मस्तक पर

स्त्रियोंके सौन्दर्य साधनके उपाय ।

(ले०—श्रीयुत कविराज रामलाल गुप्त, वैद्यवाचस्पति, हिन्दीप्रभाकर, स्नातक आयुर्वेदिक कालिज लाहौर)

सौन्दर्य क्या वस्तु है ? इसका ठीक २ उत्तर अभी तक कोई नहीं दे सका और न ही दिया जा सकता है । हिन्दी, उर्दू, अंगरेजी व संस्कृतादि सभी भाषाओं के कवियों और लेखकों ने सौन्दर्य की महिमा गाई है । प्रकृति सौन्दर्य-मय है, चराचर जगत सौन्दर्य का उपासक है, यहां तक कि स्वयं परब्रह्म परमात्मा भी "सुन्दर" है । बड़े २ योगी, तपस्वी, ऋषि, महर्षि इसी "सत्यं शिवं सुन्दरम्" के नाम से उस परम पिता का स्मरण करते हैं । वस्तुतः यदि जगदीश्वर का कोई स्वरूप है तो यही "सत्यं शिवं सुन्दरम्" है । इतना सब कुछ होते हुये भी सुन्दर शब्द की व्याख्या अबतक न हो सकी । इतने ग्रन्थ बन चुके हैं, नित्य नई रचनाएँ हो रही हैं और तबतक होती ही रहेंगी

लेप करने से प्रसव की पीड़ा नहीं होती और प्रसव होजाता है ।

७—अपामार्ग की जड़ पानी में पीस कर नाभी पर खूब गाढ़ा २ लेप करे । और उसीको डोरे में बाँध कर कमर में बाँध दे तो बच्चा बिना कष्ट के पैदा होता है ।

८—रूसा की जड़ को पानी के साथ पीसकर चटनीसी बना कर गरम कर कमर और पेडू पर लेप करने से बच्चा सुख से पैदा होता है ।

९—सर्प की केंचुली की राख का अंजन शहद के साथ गर्भिणी लगावें तो तत्काल बच्चा पैदा हो ।

१०—नीबू की जड़, मुलहटी १-१ तोले इनका क्वाथ करके ३ माशे मिर्च स्याह और १ तोला घी मिला कर मिलाकर पिलावे, थोड़ी ही देरी में बच्चा हो जायगा ।

११—सर्प की केंचुली की धुनी या मकबाको धूनी गर्भिणी की योनि में देने से तत्काल प्रसव होवे ।

१२—धतूरे की जड़ कमर में बांधने से प्रसव हो ।

१३—असगंध की जड़ छील कर गर्भिणी की योनि में भीतर को लगा दे तो एक पहर लगी रहने से प्रसव हो जाता है ।

१४—प्रसव के समय यदि गर्भ आड़ा पड़ गया हो तो बच ६ माशे केशर १ माशे बकरी के दूध में खरल कर बत्ती बना कर योनि में धरे तो बच्चा ठीक होकर उत्पन्न हो ।

१५—कलिहारी की जड़ को पीस कर हाथ पैरों के तलुओं पर लगाने से मूढ़ गर्भ तक गिर पड़ता है ।

१६—गाजर के बीजों की धूनी गर्भिणी की योनि में देने से मरा हुआ बच्चा भी बाहर आजाता है ।

जबतक चराचर सृष्टि ही नहीं अपितु प्रकृति और परमात्मा का नाम रहेगा।

अब तनिक संसार के विद्वानों की भी सुनिये वे किसे सौन्दर्य कहते हैं। एक कवि कहते हैं कि सौन्दर्य गुण है जिसके वशीभूत होकर देहधारी जीव स्वत: खिंचे चले आते हैं। दूसरा कहता है "सौन्दर्य वह गुण है जिसके कारण कोई वस्तु बारम्बार और भली भाँति देखी जाने पर अधिकाधिक चित्ताकर्षक होती जाती है। तीसरा कहता है "आकर्षण सौन्दर्य का प्रधान गुण है और वह जिसमें जितना अधिक है वह वस्तु उतनी ही अधिक सुन्दर है। संस्कृत के एक महा कवि कहते हैं—

'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेवरूपं रमणीयतायाः'

अर्थात जो वस्तु प्रतिक्षण नूतन ही नूतन प्रतीत होती हो वही सुन्दर है। इस प्रकार जितने मुँह उतनी ही बातें हैं। वस्तुत: सौन्दर्य का कोई एक निश्चित लक्षण नहीं बनाया जा सकता इसकी परिभाषा प्रत्येक व्यक्ति स्वयं बनाता है। सौन्दर्य हृदयकी वस्तु है, जिसका हृदय जिस वस्तु या जीव धारी को देखकर मुग्ध हो जाय वही उसके लिये सुन्दर है। जिसे देखकर हृत्कलिका हठात् खिल जाती है, जिसके सामने आते ही समस्त चिन्ताएँ कुछ काल के लिये लुप्त हो जाती हैं, जिसके अवलोकन मात्र से ही मनमयूर नाचने लगता है, हृदय आनन्दसागर में हिलोरें लेने लगता है वही सुन्दर है।

संसार में सबको प्रकृति में कुछ न कुछ भेद अवश्य होता है। जिस प्रकार इस अनन्त सृष्टि में सबकी आकृति में कुछ न कुछ भेद रहता है उसी प्रकार प्रकृति में अन्तर रहता है। 'मुण्डे मुण्डे भिन्नाः प्रकृतयः' एक प्रसिद्ध उक्ति है। कवि कहते हैं—

यद्यपि सन्ति बहुनिसरांसि,

स्वादु सुशीतल सुरभि पयांसि।

चातक पोतस्तदपि चितानि,

त्यक्त्वा याचति जलद जलानि।

ऐसा क्यों? क्यों चातक सुरसरिता तक के जल की अवहेलना करके जलद जल के लिये ही तड़पता है?

संसार में माधुर्य की कमी नहीं। एक से एक अधिक मधुर द्रव्य विद्यमान है। दूध, दही, माखन मलाई, नाना प्रकार की मिठाइयाँ और अनन्त स्वादिष्ट फल विद्यमान हैं। परन्तु क्या प्राणिमात्र को आकृष्ट कर लेने वाला यही मिठास है या इस में कोई और माधुर्य छिपा पड़ा है? अवश्य वह माधुर्य है। जिस वस्तु में यह वास्तविक माधुर्य जितना अधिक है उसका आदर भी उतना ही अधिक है। गुड़ मिश्री से अधिक मिठास रखता है परन्तु उसमें वास्तविक मिठास अर्थात् सौन्दर्य मिश्री से कम है और यही कारण है कि सितोपला (मिश्री) के स्वच्छ स्फटिकों का स्थान ऊँचा है।

किसी को दूध पसन्द है किसी को दही, किसी को अंगूर भाता है तो किसीको सेव। ऐसा क्यों? कौन किससे कम है? इसका निर्णय वही करेगा जो इनकी ओर आकृष्ट होता है, जो इनके प्राप्त करने की लालसा रखता है। वह कौन है? वह है हृदय, बस उसी से पूछिये इनकी विशेषता और उसी से पूछिये सौन्दर्य का लक्षण। हमें तो उसने यही बताया है—

'तस्य तदेव हि मधुरं यस्य मनोयत् संलग्नम्' कवि भी यही कहते हैं। विरोध नहीं है, क्षणे क्षणे यन्नवता मुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः' का अर्थ भी यही है। यह लक्षण भी प्रत्येक की अपनी रुचि पर ही निर्भर है। जो वस्तु आपको प्रतिक्षण नूतन ही नूतन दृष्टिगोचर होती है, जिसका ढाँचा क्षण क्षणमें बदलता रहता है, पलक मारते ही जो कुछ का कुछ बन जाता है, जिसकी प्रतिकृति कोई बना नहीं सकता, जो बारहों महीने और चौबीसों घण्टे साथ रहते भी नित्य नया ही भासित होता है अर्थात् जो कभी पुराना नहीं पड़ता, जिससे कभी जी नहीं उकताता वही सच्चा सौन्दर्य है और इसी के प्राप्त करने की इच्छा प्रत्येक मनुष्य के हृदय में हुआ करती है।

इस छोटे से लेख में हमको यह बताना है कि कौनसे ऐसे उपाय हैं जिनसे उनका सौन्दर्य स्थायी बन सके। भारतवर्ष में जहां स्त्रियां प्रेम करने के लिये स्वतन्त्र नहीं हैं, जहां एक बार निर्धारित पति के अतिरिक्त पुरुषसे दो बात करनेका भी अधिकार स्त्रीको नहीं है। जहां यदि पति उसके प्रेमको ठुकरा दे तो उसे रोने का अधिकार भी नहीं है वहां इस बात की अधिक आवश्यकता है कि स्त्रियां अपनी एक मात्र सम्पत्ति—अपने सौन्दर्य— को सुरक्षित रखें और उत्तरोत्तर वृद्धि के उपायों को अपनाती रहें।

अब देखना यहहै कि वे कौनसे उपाय हैं जिनसे सौन्दर्य स्थिर रह सके। यदि उन समस्त उपायों का वर्णन किया जाय जो सौन्दर्य के लिये आवश्यक हैं तब तो एक स्वतन्त्र और बृहत्काय ग्रन्थ ही तैयार हो जाय। अतः केवल बाह्य श्रृङ्गार पर ही इस लेख में प्रकाश डाला जायगा। स्वास्थ्य का सौन्दर्य के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है और बिना स्वास्थ्य के सब चेष्टाएं आडम्बर मात्र हैं तथापि स्वास्थ्य पर यहां कुछ नहीं लिखा जायगा क्योंकि इसमें लेख बहुत बढ़ जायगा।

कुछ लोग कहा करते हैं कि जिसको परमात्मा ने सौन्दर्य दिया है उसके लिये बाह्योपकरणों की, श्रृङ्गार सामग्री की क्या आवश्यकता है। उनके "लिये तोकिमिवहि मधुराणां नाकृति मंण्डनानाम्" सभी कुछ सौन्दर्य वर्धक है। यह सत्य है परन्तु एक तो आज कल ऐसा सौन्दर्य दीखता ही बहुत कमहै दूसरे अब जन समाजकी रुचि ऐसीहो चुकी है कि वह निरन्तर सौन्दर्य वृद्धिके उपायोंकी खोज में रहते हैं।

हमारे प्राचीन महाकवियों ने स्त्रियों के लिये १६ श्रृङ्गार बताये हैं। अधिकांश भारतीय इसबात को जानते हैं परन्तु यह बहुत कम जानते हैं कि वे षोडश श्रृंगार है क्या ?

१ अङ्ग, शुचि २ मज्जन, ३ बसन, ४ माँग, ५ महा-वर, ६ केश, ७ तिलक भाल, ८ तिल चिबुक में, ९ भूषण, १० मेंहदी वेश।
११ मिस्सी, १२ कजल, १३ अरगजा, १४ बीड़ा, १५ और सुगन्ध, १६ पुष्प कलीयुत होयकर, तब नव सप्त निबन्ध ॥

अर्थात १ अङ्गशुद्धि उबटन तेल आदि से, २ स्नान करना, ३ स्वच्छ वस्त्र धारण करना, ४ मांग भरना, ५ महावर लगाना ६ बालसंवारना ७ मस्तक पर तिलक लगाना ८ ठोड़ीपर बिन्दी लगाना ९ आभूषण धारणकरना १० मेंहदीलगाना ११ मिस्सीलगाना १२ काजल लगाना १३ अरगजा

कस्तूरी, चन्दन, कर्पूरादि द्रव्योंका स्तनादि परलेप, १४ पानखाना १५ सुगन्धित द्रव्य इत्र फुलेल आदि १६ पुष्पमाला धारण करना। इनमें कुछ बातें साधारण है जिन्हें प्रत्येक स्त्री जानती है। अतः आवश्यक बातोंका ही संक्षिप्त वर्णन किया जायगा।

अङ्ग शुद्धि और स्नान—अङ्ग शुद्धि एक विस्तृत शब्द है तैल, उबटन, फेस पाउडर, क्रीम आदि इसीके अन्तर्गत हैं। स्नान करने से पूर्व यदि सम्भव हो तो नित्य अन्यथा प्रति सप्ताह सारे शरीर पर कड़वे तेल की मालिश करनी चाहिये। उत्तम विधि से प्रस्तुत चन्दनादि तेल प्रभृति सुगन्धित तैल भी उत्तम है परन्तु ह्वाइट आइल पर बने हुए बाजारी तैलों का कोई लाभ नहीं। मस्तिष्क और तलवों पर विशेष रूप से मलना चाहिये। तदनन्तर उबटन मलकर स्नान करे। उबटन से शरीर का मल दूर हो जाता है और कञ्चन सी काया निखर आती है। इसके कुछ सुगम योग नीचे दिये जाते हैं।

(१) चिरौंजी २ तोला
मसूर की दाल १ तोला

दोनों मिलाकर गौ के कच्चे दूध से घोटकर शरीर पर लेप करें।

(२) बेसन में तनिक तेल और पानी मिला कर मलें।

(३) यदि एक ही बार बनाकर रखना चाहें तो-

बादाम की गिरी	ऽ।
गुलाब के फूल	ऽ—
चिरौंजी	ऽ—
मञ्जिष्ठा	१ तो०
मसूर की दाल	ऽ—
हल्दी	३ तो०
सफेद चन्दन	२ "
लाल चन्दन	" "
सरसों	" "
केशर	६ माशा
कपूर	१ तोला

विधि—बादाम की गिरियां साफ कर के एक साफ (कांच या चीनी के ढक्कनदार) बर्तन में डाल दें। ऊपर से इतना गुलाब जल डालें जो गिरियोंसे दो अंगुल ऊपर तक रहे। फूल जाने पर गिरिया छील कर कूंडा या खरल में डाल कर घोंटे साथही चिरौंजी और मसूर डाल दें। घोंटते समय वही अर्क गुलाब थोड़ा २ डालते जायँ। जब भली भांति घुट जाय तब केशर और कपूर डालें और पुनः घोटते २ सूखा चूर्ण बनालें। शेष चीजों का पृथक् कपड़ छन चूर्ण करके इसीमें मिलाकर रखलें। आवश्यकता के समय थोड़ा सा पानी मिलाकर शरीर पर मलें। यदि सारे शरीर पर न मलना चाहें तो केवल मुंह पर मलें। इससे मुंह के दाग, झाइयाँ, मुहाँसे, कील आदि सब प्रकार के विकार दूर हो जायँगे।

उबटन लगा कर उसके सूखने तक प्रतीक्षा करनी चाहिये। जो अधिकलाभ उठाना चाहे उनको चाहिये कि कमसे कम एक अंगुल मोटा लेप करें और आधे घन्टे तक या बिकुल सूख जाने तक प्रतीक्षा करें। इसके बाद धोकर तौलिये या खुरदरे खद्दरसे रगड़२ कर स्नान करलें। यदि स्नो Snow लगाने की आदत हो स्नानोत्तर ही लगालें। यदि सन्तरे या अंगूरों का रस लगाया जायतो अधिक

उत्तम है।

स्नान प्रति दिन और जहाँ तक हो सके ठन्डे पानी से करना चाहिये। यदि शीतल जल प्रकृति विरुद्ध हो तो गुनगुने पानी से कर सकते हैं। सिर पर गरम पानी कभी नहीं डालना चाहिये।

यह तो हुई साधारण क्रिया अब यदि आवश्यकता हो तो क्रीम (Cream) का व्यवहार भी किया जा सकता है। यह भी बाजार से लेने की अपेक्षा घर बना लेना ही अच्छा है। इससे चीज भी अच्छी मिलेगी और खर्च भी कम होगा।

फूलों का दूध—	बादाम गिरी	२ औंस
	विंडसर सोप	२ ड्राम
	मोम	,,
	स्पिरिट रैक्टी फाइड	३ औंस
	आयल बर्गमट	१ ड्राम
	लैवेन्डर	१५ बूंद
	इत्र गुलाब	५ बूंद
	अर्क गुलाब	१२ औंस

पूर्व वत् बादाम पीस कर अर्क गुलाब में मिलालें। मोम और सोपको आग पर पिघलाकर एक स्वच्छ चीनी की प्लेट या कांसीकी थाली में डालकर इसी में पिसे हुये बादाम डालकर खूब फेटें। जबमिलकर खोया सा होजाये तब बारीक कपड़े से छानलें। रैक्टीफाइड स्पिरिट में अन्य सुगन्धित द्रव्य मिलाने के बाद यह छना हुआ द्रव्य डालकर रखलें। इसके प्रयोग से भी मुखके समस्त दूषण दूर होजाते हैं।

(५)	घृत	६ तोला
	मोम	२ तोला
	कपूर	६ माशे
	केशर	३ माशे
	इत्र गुलाब	४ बूंद

घृत में पानी डालकर रगड़ें और कुछ देरबाद उस पानी को निकालदें और नया पानी डालकर धोयें। इस प्रकार २१ बार धोलें एतदर्थ पात्र कांसी या चीनी का होना चाहिये। अब इसको गरम करें और साथ ही मोम डालदें। दोनों पिघल जायेगे और घृतमें अवशिष्ट जल जल जायगा। अब एक चीनी कीप्लेट में डालकर कर्द से फेटें। एक सफेद खरलमें कपूर और केशर पीसें पिसजानेपर घी और मोम मिलकर घोटते २ एक काय करके इत्र मिलाकर एक चौड़े मुंह की शीशी में भरलें यह क्रीम बाजारी क्रीमों से बहुत अधिक लाभदायक है।

(६) यदि हाथ पैर फटते हों तो यही योग या केवल घी और मोम उपर्युक्त रीति से मिलाकर रखलें। कभी २ हाथ पैरों पर मलते रहने से उन्हें फटने से बचाता है। बिवाइयां फट रही हों तो इसके भरने से बहुत शीघ्र ठीक होजाती हैं।

कभी २ अधिक सर्दी याखुश्की के कारण होठ फटने लगते हैं और इनपर पपड़ी सी जम जाती है। इस पपड़ी को नोचना नहीं चाहिये, इससेहोठ मोटे और भद्दे होजाते हैं। इन पर निम्न योग लगायें—

(७)	राल	१ तोला
	घी	१ तोला
	मोम	३ तोला
	यूकलिप्टिसआयल	१ तोला

उपर्युक्त विधि से घी धोकर गरम करके मोम और राल मिलालें। मिलजाने पर यूकलिपटिस आयल डालदें और शीशी में भरकर रखलें। यह होठों के लिये अत्युत्तम है, हाथ पैरों पर भी लगा सकते हैं।

पाउडर—पाउडर लगाना स्वास्थ्य और सौन्दर्य दोनों के लिये हानिकारक है। बाज़ारी पाउडर कौड़ियों की कीमत के होते हैं। और बड़े दामोंमें बिकते हैं। इनमें सिवाय जिंक ऑक्साइड, निशास्ता या बोरिक एसिड आदि साधारण सी चीजोंके सिवाय और कुछ नहीं होता। रङ्ग देने के लिये कोचनील मिला दिया जाता है। ये बिलकुल निरर्थक है। यदि इतने पर भी आप प्रयोग करना ही चाहें तो—

(८)	अरारोट	१२ औंस
	बोरिक एसिड	६ औंस

मिलाकर रखलें। कोचनील, रोज़ पिंक या पुटैशियम परमेगनेट से रंग दे सकते हैं। लगाने के लिये खूब धुनी हुई रुई का "फूआ" रखलें

सर्वोत्तम उपाय—रात को सोते समय दूध की घनी मलाई लेकर मुंह पर खूब अच्छी तरह मलें और धुला हुआ तौलिया लपेटकर सोजाये। प्रातःकाल गुनगुने पानीसे धोदें। अथवा प्रातःकाल ही दही की ताज़ी मलाई लेकर मलें और १० मिनट बाद धोदें। मुंह की रङ्गत निखारने के लिये यह सबसे उत्तम उपाय है।

माल्टा, सन्तरा, अंगूर या कागज़ी नींबू का रस मलकर ५-७ मिनट बाद धोदेना भी बहुत लाभदायक है।

बाल संवारना—समस्त भारतमें बाल संवारना और मांग भरने की प्रथा किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान है। इंगलिश लेडियों की भाँति बाल कटाने की चाल अभी तक भारत में नहीं है और परमात्मा न कभी हो। भारतीय मस्तिष्क के लिये तो काली नागिन की भांति लटकती हुई वेणी (चोटी) ही स्वर्गीय आकर्षण है। प्रत्येक भारत रमणी की यह हार्दिक इच्छा होनी चाहिये कि उसके केश, घन, कुञ्चित, दीर्घ और स्निग्ध-कृष्ण हों।

सप्ताह में दो बार बालों को अवश्य धोना चाहिये। धोने के लिये सुहागा, मुलतानीमिट्टी, वेसन दही, आमला या साबुन का प्रयोग किया जाता है। इनमें सुहागा और आमले काप्रयोग उत्तम है। दही भी अच्छी है परन्तु इस से धोने के पश्चात् मल मल कर बालों की चिकनाई अच्छी तरह छुड़ा देनी चाहिये। आमले के प्रयोग से बाल काले और दृढ़ हो जाते हैं अतः इससे धोना ही श्रेष्ठ है। थोड़े से आंवले कूटकर सोते समय पानी में भिगोकर रखदें और प्रातःकाल खूब मलकर स्नान लें। इस पानी से सिर धोकर स्वच्छ जल से धोएँ। जब तक बाल भली भाँति सूख न जाँय तब तक तैल नहीं डालना चाहिये। तैल लगाकर कुछ देर तक कंघा करनी चाहिये। कंघी करना ही बालों का व्यायाम है। कंघी को गरम पानी से धोकर साफ कर लेना आवश्यक है।

बालोंको संवारने या गूंथनेकी भी कई विधियाँ प्रचलित हैं। स्वास्थ्य के विचार से चोटीके दो भाग करके गूंथना उत्तम है। बीचों-बीच मांग काढ़ना

सौन्दर्यवर्धक है तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उत्तम है।

सुगंधित तैल

आजकल बाजार में अनेक प्रकार के सुगन्धित तैल मिलते हैं। आंवले के नाम पर जो तैल बाजारों में मिलता है उस में आंवले का अंश तनिक भी नहीं होता। एक विशेष प्रकार की सैन्ट जिसे आंवले की सैन्ट के नाम से ही व्यापारी बेचते हैं डालकर हरा रङ्ग मिला लिया जाता है। तेल भी प्रायः ह्वाइट आयल ही होता है यदि किसी ने कुछ कृपा की तो कुछ भाग साधारण तिल तैल डाल दिया। यहां हम २-४ प्रयोग लिखे देते हैं। जो सुगमता से घर बनाये जा सकें। सुगन्धित और साथ ही लाभकारी भी हो।

(९) आंवले का तैल

आंवले सूखे	२० तोला
सफ़ेद चन्दन	४ तोला
बालछड़	,,
मजीठ	,,
रतनजोत	,,
छैल छबीला	,,
कपूर कचरी	,,
तिलतैल	३ सेर

सफ़ेदचन्दन को रेती से रेत कर या अर्कगुलाब में घिसकर तेल में मिलादें और साथ ही अन्य सब द्रव्य कूटकर डालदें। पात्र मिट्टी का होना चाहिए। पात्र कुछ खाली रहना चाहिए अब मुँह पर मोटा कपड़ा बाँध कर गर्मियों में १० दिन और सर्दी हों तो १६ दिन धूप में रखें और रोज बन्द का बन्द ही हिला दि नम्बर छानकर बोतलों में भरलें। यदि आवश्यकता समझें तो आंवले की सैन्ट डाल दें।

(१०) केशकुन्तल तैल

भाँगरा	१० तोला
आम की गुठली	५ तोला
पानड़ी	३ ,,
बहेड़े की गिरी	३ ,,
ताजे आंवलों का रस	एक सेर
खस	५ तोला
रतनजोत	५ ,,
तिल तैल	चार सेर

एक कलईदार ऊंचे बर्तन में (जिनमें १२ सेर जल आ सकता हो) तेल गरम करें जब खूब गरम हो जाय तो उतार लें। अब धीरे धीरे आंवलें के रस के छींटें दें। इससे तैल उफनेगा जब शान्त होजाय तो थोड़ासा रस छिड़कना इस प्रकार सारा रस सुखादें। ठण्डा होने पर तैल का छान कर मिट्टी के बर्तन में भर दें और शेष द्रव्य भी कूटकर मिलादें। शेष विधि पूर्वोक्त है। यह तैल बालों को मजबूत और लम्बा करने के लिये उपयुक्त से भी अच्छा है।

(११) शिरो रञ्जन तैल

तिल का तेल	एक सेर
रतनजोत	डेढ़ तोला
हीको नरगिस	सवा तोला

तेल को धूप में रखदें और रतनजोत डालदें। दो दिन बाद छानकर बोतल में भरदें और सैण्ट मिलादें। इसी को बाजारी लोग मौलसिरी का तेल कहकर बेचते हैं। हीको कम्पनी का नाम है। इस कम्पनी के सैन्ट बहुत प्रसिद्ध हैं और प्रायः बड़े शहरों में सर्वत्र मिल जाते हैं। दैनिक प्रयोग के लिये यह भी अच्छा है।

सधारणत: बेला, सन्तरा, मौलसरी, खस केवड़ा, आदि के तेल भी जो जौनपुर, कन्नौज, आदि से आते हैं, अच्छे होते हैं।

गुप्त स्थानों की सौन्दर्य रक्षार्थ बाल उड़ाने का पाउडर या साबुन बरता जाता है। इन सब में बेरियम सल्फाइड होता है जो कि एक उग्र औषधि है। इस लिये इसे अकेली प्रयुक्त नहीं करते। पाउडर बनाना हो तो—

(१२)	बेरियम सलफाईड	१ भाग
	निशास्ता	२ भाग

मिलाकर रखलें। आवश्यकता के समय पानी में घोलकर बालों पर लेप करदें। सूखजाने पर कपड़े से झाड़ दे, जगह बिलकुल साफ हो जायेगी। बाद को गरम जल व साबुन से धोकर क्रीम या तेल लगा दें।

(१३) बाल उड़ाने का तेल—

यह वस्तुतः तेल नहीं होता, यह व्यापारी तेल कहकर ही बेचते हैं चार औंस खौलते हुए पानीको एक बोतलमें डालकर उसमें एक औंस बेरियमसल फाइड डालदें। थोड़ी देर खूब हिलायें ताकि भली भाँति मिलजाये। बाद को रखदे और जब सारी औषधि नीचे बैठ जाय, स्वच्छ पानी ऊपर आ जाय निथार कर दूसरी शीशीमें रखलें, दवा बिलकुल न आने पाये। आवश्यक्ता के समय रुई के फाहे या ब्रुश से बालों पर लगादें। दो मिनट में बाल झड़ जाये गे। इसका असर जल्दी ही चला जाता है। अतः मजबूत कार्क लगाकर रक्खें।

वाणी का सौन्दर्य—सुरीले कण्ठ पर निर्भर है जिनको गायन का शौक हो परन्तु गला ठीकर काम न देता हो उन्हें निम्नलिखित चूर्ण का उपयोग करना चाहिये।

(१४) कण्ठ को किला चूर्ण—

हरड़ का छिलका
ब्रह्मी
बच
पान की जड़
पीपल
मिरच
धनिये के बीज

सब द्रव्य समान भाग लेकर चूर्ण बनालें और चूर्ण से आधीकूजा मिश्री पीसकर मिलादें। आवश्यकताके समय दो आने भर चूर्ण एक पानमें रखकर चूमें।

(१५) पान का सूखा मसला—

जिन लोगों को पान खाने की आदत हो उनके

लिये यह बहुत अच्छी चीज है। एकबार बना कर रख लेने से कथा चूना, सुपारी का कष्ट मिट जाता है। यात्रामें बहुत सुभीता रहता है। बनारस आदि शहरों में इसकी डिबियाएँ बिकती हैं। योग नीचे दिया जाता है।

चूना	१ तोला
कत्था	२॥ "
जावित्री	३ माशा
लौंग	३ "
छोटी इलायची के बीज	६ "
पीपरमेन्ट	१ "
सुपारी	२॥ तोला

सुपारियां सख्त होती है अतः उन्हें पृथक् कूट कर छानलें। शेष ५ चीजें इकट्ठी पीसकर इसमें मिलदें। पीपरमेन्ट पृथक् पीसे हां, पीसते समय थोड़ासा चूर्ण डाललें ताकि पीसने में असानी रहे। आवश्यकताके समय थोड़ासा पानमें रखलें। बस, और किसी मसाले को आवश्यकता नहीं।

आखोंकी खूबसूरती—इसके लिये अञ्जन का प्रयोग करना चाहिये। निकम्मे सुरमे आखोंको बजाय लाभके हानि ही अधिक पहुँचाते हैं। अतः घर पर ही बनालेना अच्छा है।

(१६) नयनामृताञ्जन—

काला सुरमा	५ तो०
सफेद मिर्च	१ मा०
कपूर	३ "
समुद्र फेन	"
बोरिक एसिड	"
छोटी इलायचीके बीज	६ "
यशद भस्म	१ तो०
शीतल चीनी	६ मा०

दो छटांक त्रिफला लेकर एक सेर पानीमें रात को भिगोदें और सबेरे मल कर छान लें। सुरमे को आगमें तपा २ कर सातबार इससे बुझाये पश्चात् ३ दिनतक अर्कगुलाब में भिगोकर रखदें। बाद को यह सुरमा और शेष सब चीजें खरल में डालकर घोटें। घोटने मे विशेष ध्यान रखना चाहिये क्योंकि तनिक भी मोटा रहगया तो आंखों को कष्ट देगा अतः जितना घोटसकें उतनाही अच्छा है। यदि ३ माशे अनविंध मोती भी इसी में घोट दिये जायँ तो यह योग विशेष लाभ कारी हो जाता है। बाद को साफ शीशी में रखना चाहिए, धूलसे बचायें। लगानेके लिये हाथीदांतकी सलाई अच्छी होतीहै। यह चार आनेमें बाजार से मिलजाती है।

स्तन दृढ़ी करण—लापरवाही के कारण बहुतसीस्त्रियोंकी छातियाँ समयसे पूर्वहीढलक जाती हैं। जिससे वे पति देव की दृष्टिसे कुछ उतर जाती हैं अतः इसकी रक्षार्थभी प्रयत्नशील रहना चाहिये

(१७) आध पाव इन्द्र जौ प्रातःकाल थोड़ेसे पानीमें भिगोदें और रातको पीसलें से यह माखन

की तरह हो जायगा। इसे स्तनों पर लेप कर और ऊपर से साफ़ कपड़ा बांध दें। प्रतःकाल गुन गुने जलसे धोदें। २१ दिन ऐसा करने से स्तन अपनी असली हालत पर आ जाते हैं।

(१८) अथवा एक सेर अनार का छिलका चार सेर जल में डालकर औटाएं। जब सेर भर जल शेषरह जाय तब उतार कर छानलें। अबपाव भर तेलमें इस जल को डालकर पकायें। सारा पानी जल जाय और केवल तेल रह जाय उतार कर ठंडा होने दें। बादको छानकर बोतल में भरलें प्रति दिन स्तनों पर इस तेलकी मालिश करने से कुछ दिनों में उनमें दृढ़ता आ जाती है।

दान्तोंकी सुन्दरता—बनाये रखनेके लिये नित्य दातुन का व्यवहार करना चाहिये। यदि दातुन का सुभीता न हो तो निम्न लिखित मञ्जन का प्रयोग करें।

दालचीनीछोटी इलायची मोलसरी
छोटी इलायची
मौलसिरी की छाल
फिटकरी
नैपाली धनिया (कबाबा)
सेंधा नमक
काली मिर्च
कत्था सफेद
रूमी मस्तगी
कपूर

सब द्रव्य समान भाग लेकर कपड़छान चूर्ण करले इसमें चूर्णसे आधाभाग फ्रेञ्च चाक (यह एक पाउडर सा होता है और तीन चार आने पौन्ड मिलता है। शहर के किसी अंग्रेजी दवा फरोश से ले सकतेहैं मिलालें। यदि फेञ्चचाक न भीडाला जाए तो कोई हानि नहीं।अंगुली, ब्रुशया दातुनसे मले। ब्रुश का प्रयोग जहां तक सम्भव हो नहीं करना चाहिये। यदि करना ही पड़े तो एक ब्रुश एक महिनेसे अधिक नबरतें और खोलते हुये पानी में जरा सा नमक डाल कर दो मिनट तक डुबा रहें, पश्चात् धोकर प्रयुक्त करें।

यदि मिस्सी बनानी हो तो इसमें हीरा कसीस दो तोला और माजूफल दो तोला पीसकर मिलादें।

विलायती मञ्जन या पेस्ट दांतो को साफ़ तो करते हैं परन्तु उनसे दाँतों की जड़े मजबूत नहीं होती।

डा० बसन्त लाल जी B. A. आयुर्वेदाचार्य
टी० बी० स्पेशिलिस्ट, फीरोजपुर

Murari Art Press, Delhi.

योनिकंडू

(ले०—डाक्टर बसन्तलाल जी B. A. आयुर्वेदाचार्य)

यौनि शब्द का अर्थ बाह्य भाग का है और इस में भगौष्ठ, चिङ्क और कृष्ण लोमों का ऊपरी भाग भी सम्मिलित है। आंगल भाषा में इसको वलवा (Valva) कहते हैं और जो नालि योनि छिद्र से गर्भाशय के मुख तक जाती है उसको वैजाईनल केनाल (Vuginalcanal) कहते हैं। योनि कंडू बहुत सताने वाला रोग है।

इसके अनेक कारण होते हैं:—

१—योनि का शोथ।
२—मूत्राशय की खुजली की छूत।
३—बाहर से अनेक प्रकार की छूत पहुँचने।
४—रक्त के दूषित होजाने।
५—योनि में दानों के पड़ जाने।
६—योनि की गन्दगी और उपदंश के विकार।
७—ऋतुधर्म के बिगाड़।
८—योनि के भीतर और कोई योनि मुख के शोथ।
९—योनि के मुख में छोटे २ कीड़ों के उत्पन्न होजाने,
१०-भीतर मैल तथा पसीने के जम जाने।
११ योनि को भीतर से स्वच्छ न रखने।
१२-गर्भ के दिनों में।
१३-श्वेत तथा रक्तप्रदर।
१४-कृष्ण लोमों में जुएँ पड़ जाने से।
१५-अर्श तथा मधुमेह।
१६-पेट में कीड़े या चुरने पड़ जाने से तथा कब्ज़ी से,
१७-नलों के शोथ से।

कभी कभी यह रोग स्त्रियों को यौवन अवस्था में स्वतः ही होजाया करता है और कई बार इसका कोई कारण भी नहीं प्रतीत हुआ करता।

लक्षण:—

इसमें खाज बहुत अधिक होती है कभी २ तो रोगिणी खुजा खुजा कर वहाँ की त्वचा भी उधेड़ लेती है। रात्रि के समय बिस्तर में खाज अधिक होती है।

१—पहले खाज कम होती है परन्तु ज्यों ज्यों खुजलाया जाता है। खुजाने की इच्छा और जलन अधिक होती है।

२—योनि का रास्ता कुछ सकड़ा पड़ जाता है।

३—खाज की जलन सहन नहीं होती।

४—खुजाने से शान्ति तो नहीं पड़ती प्रत्युत अधिक खुजाने की इच्छा होती है, जो यहां तक बढ़ जाती है कि इस भाग को ही उखाड़ कर फैंक दिया जावे।

५—रोग के बढ़ने पर बदबू बहुत आती है।

६—छोटे छोटे ददोड़े भी पड़ जाते हैं।

नोट:—कभी कभी इस रोग के कारण पुरुष प्रसंग इच्छा बहुत बढ़ जाया करती है।

चिकित्सा:—

उपरोक्त कारणों में से यदि कोई हो तो उसकी चिकित्सा करें। योनि को कारबालिक या सल्फर सोप (साबुन) से खूब साफ करें तथा वहां के बालों को भी साफ करें। और निम्न लिखित औषधियां प्रयोग करें।

१—योनि को नीम के पत्तों सहित उबाले हुये सहते हुये उष्ण जल से ख़ूब धोयें।

२—आंवलासार गंधक को बारीक पीस कर थोड़े मक्खन या वेसलीन में मिलाकर वहां पर ख़ूब मालिश करें।

३—रसौत अथवा मुर्दासंग या सुहागे को कपूर के पानी में मिलाकर और स्वच्छ कपड़े को गद्दी को इसमें भीगोकर योनि मुख में रक्खें।

आन्तरीय उपचारः—

शुद्ध गंधक दो रत्ती से ४ रत्ती तक प्रति दिन दुग्ध से खिलावें, पेट को रेचन द्वारा शुद्ध करें।

डाक्टरी चिकित्साः—

बाह्य उपचार:—

१—सुहागे का लोशन (१ ड्राम १ औंस जल में)
Borax Lotion (1 to 8)

ग्लीसरीन वैलेडोना

२—(१ ड्राम एक्सट्रेक्ट बेलोडोना, १ औंस ग्लेसिरिन

३—कारबालिक एसिडलोशन (१ और ६०) अर्थात् कारबालिक एसिड १ भाग जल स्वच्छ ६० भाग।

उपरोक्त औषधियों में लिंट का टुकड़ा भिगोकर, योनि को ख़ूब स्वच्छ करके योनि मुख में रक्खें।

१—यदि योनि में शोथ हो तो, लैड लोशन का प्रयोग करें।

२—पोटेसिय परमैंगनेट ग्रेन ४ उष्ण जल औंस १ का भी प्रयोग अत्युत्तम है।

उपरोक्त लोशनों से योनि को ख़ूब धोवें तथा लिंट का टुकड़ा इसमें भिगा कर योनिद्वार में रक्खें।

मरहम (Ointment)

गोआ पाउडर Goa Powder (Araroba)		ग्रेन १५
कारबालिकएसिड (Acid Carbolic)		मि० १०
गंधक (सल्फर) (Sulphur Sub)		ग्रेन ४०
टिंक्चर आयोडीन Tr. (Iodine)		मि० २०
कपूर (केम्फर) Camphor		ग्रेन ५
क्रोयोजोट	Kreosote	मि० १०
वेसलीन	Vaseline white	औंस १०

उपरोक्त मल्हम के दिन में १ या २ बार लगाते रहने से दो अथवा तीन दिन में ही लाभ हो जाता है। इसकेलगाने से पूर्व उपरोक्त कहे हुए लोशनों में से एक से अवश्य धोना चाहिये।

आन्तरीय उपचारः—

(१)—यदि कब्ज हो तो मेग सल्फ (Mag Sulph) कीजुलाब देवें।

(२)-पोटेसियम ब्रोमाइड ग्रेन १५
जल औं० १

इस प्रकार की मात्रा दिन में दो अथवा तीन बार देवें।

Rs.	Pot. Bromide	Gr. xv
	aqua	3 I

Sig

One such dose two or three times a day

अनुभूत प्रयोग

ऋतुशोधक—

कलौंजी १० तोला गन्ने का सिरका ५ तोला में २४ घन्टे भिगा दिजिये फिर छाया में सुखालें बर्तन मिट्टी का लेना चाहिये किसी धातु का न लें। आध सेर बूरे की चासनी में ऊपर की वस्तुएं कूट छान कर चासनी में मिलाकर बर्फी बना लें।

मात्रा—१ तोला गर्मजल या उष्ण दूध के साथ रात्रो में। साथ में यह क्वाथ दें।

तिल काले १ तोला हरड़ १ तोला खरबूजे के बीज १ तोला गाजर के बीज १ तोला गुड़ पुराना २तोला जल ꠰।। सेर। जब पक कर आधा रह जाये मल छान कर पिलायें-- ४० दिन तक दवा करनी चाहिए। यह दोनों अनभूत हैं—अपथ्य-- मिरच, खटाई, गरिष्ट भोजन, तथा शीतल पदार्थ।

गर्भाशय तथा डिम्बशोथ—

गंदा विरोज़ा १० तोला नख २।। तोला।

नख को पीसकर विरोजे में मिला दो फिर रोगिणी को दो ईंटों पर बैठाकर इस दवा की धूनी लेनी चाहिए। स्त्री चारों तरफ से कपड़ा ओढले-- धूनी लेने के बाद गर्भाशय से गंदा पानी झरना शुरू हो जाता है सात दिन करने से गर्भाशय तथा डिम्बशोथ और पीड़ा नष्ट हो जाती है।

इसके बाद इस वर्ती का प्रयोग करना चाहिए। हल्दी को कपड़छन कर घृत में मिलाकर साफ कपड़े पर फैलाकर एक बत्ती बनालो - इस बत्ती को गर्भाशय में रखना चाहिये इसके प्रयोग से गर्भाशय का शोथ-पीड़ा, कुटिलता ऋतु कष्टादि नष्ट होता है।

नलों के शोथ—

सोंठ ३ तोला काली ज़ीरी ३ तोला कूट कपड़ छन कर अंड के बीज १० तोला में उपरोक्त दवा गेर कर कूटना चाहिए। लुगदी सी बन जायेगी। २।। तोला को १० तोला में घोलकर गर्म कर पेडू पर लेप करना चाहिए। थोड़ा सेकना आवश्यक है।

इससे नलों का दर्द शान्त हो जाता है।

गर्भ पात—

हिरौंज़ी १' तोला (जो पंसारियों के यहां लाल रङ्ग की मिलती है।) को पतला पीस कर १ छ० जल में घोलकर छान लीजिये फिर इसको ꠰= दूध में ढाई तोला मिश्री डालकर इतनी मात्रा दिन में तीन बार दें, इससे शीघ्र रक्त जाना बन्द हो जाएगा। इस समय गर्भिणी का सिर नीचा तथा पांव ऊंचे रखने चाहिएं, तथा मुल्तानी मट्टी का गाढ़ा लेप पेडू करें।

प्रसव कष्ट—

कृष्णासर्प की कांचली का धूंवां गर्भाशय में ले।

से शीघ्र बिना कष्ट के प्रसव होता है। यह ध्यान रहे यह धुंवा नेत्रों को न लगने पावे सिर बाहर निकाल कर चारों तरफ कपड़े से ढक देना चाहिये।

नोट—यह प्रयोग हमारे अनुभूत तथा वंशानुगत हैं।

आयुर्वेदाचार्य पं० देवकी नन्दजी शर्मा
देहली—

श्वेतप्रदरारिस—

कज्जली १ तोला नागभस्म १ तोला वंगभस्म १ तोला रसोंत ३ तोला लोध ६ तोला।

सब को कपड़ छन कर अशोक, वांसा, भिन्डो इनकी १-१ भावना देकर रख लें सवेरे ३ से ६ रत्ती तक देना चाहिये, इसके प्रयोग से दोनों प्रदर श्वेत, रक्त अवश्य नष्ट हो जाते हैं अनुभूत है।

हिस्टीरिया—

जिंक वैलेरियन ८ ग्रे० फेराई वैलेरियन ८ ग्रे० कुनीन वेलेरियन ८ ग्रे० ऐक्सट्रेक्ट एलेज़ ४ ग्रे०।

इसकी ८ गोली बना लो दिनमें दो वार दशमूलारिष्ट या निम्न लिखित क्वाथ के साथ देना चाहिए।

जटा मांसी, खुरासानी अजवायन, पिप्पलामूल के क्वाथ के साथ देने से हिस्टीरिया नष्ट हो जायेगा- इसके प्रयोग से आते हुए दौरे भी रुक जाते हैं।

उपदंश—

लाइकर हाइड्रोजार्म परक्लोराइड	३० बूंद
पोटास आयो डाइड	२ रत्ती
स्प्रिट एमोनियाँ अरोमेटिक	१० बूँद
जल	१ औंस

दिन में तीन वार देना चाहिये।

आयुर्वेदीय ये दवायें लाभ देती हैं।

रस कपूर, संखिया, सिंगरफ़, हरताल १-१ तोला नीम्बू रस में घोट कर इनका सत्व उड़ालें—तिहाई रत्ती प्रति दिन मुनक्का में रखकर निगल जाया करें— ऊपर से कोई रक्त शोधन आसव या अर्क पीएँ— यदि दवा अधिक दिन सेवन करनी है तो चौथाई रत्ती ऊपर की दवा सेवन करना रक्त शोधक में पोटास आयोडाइड ५ ग्रेन, १० ग्रेन तक मिला कर सेवन करने से शीघ्र लाभ होगा।

पथ्य से रहे नियम पूर्वक यह दवा खाता रहे तो शरीर निर्विष हो जायेगा।

मृदु रेचक वटी—

पोडाफ़ाइलो रेज़िन	१ ड्राम
एक्सट्रेक्ट हायोसाइमी	२ ड्राम
काली सिंथ	२ ड्रा

सब को मिलाकर ५ । ५ ग्रे० की गोली बना लेनी चाहिए, रात को सोते समय १ गोली लेने से पेट साफ हो जाएगा।

अतिरज—

टिं० फैरीयर क्लोराइड	१० बूँद
ऐसिड सल्फ्यूरिक डाइल्यूट	१५ बूँद
टिं० ओपियाई	५ बूँद
हैज़ेलीन	५ बूँद
एक्स्ट्रक्ट अर्गट लिक्युइड	१५ बूँद
विशुद्ध जल	१ औंस

दिन में ३-४ वार देना चाहिए इसकी। १ मात्रा अधिक रक्त को रोक देगी।

मासिकधर्म कष्ट से आने में यह लाभ देती है—

पोटाशियम ब्रोमाइड	१५ ग्रेन
टिं० कैनेबिस इन्डिका	५ बूँद

म्युसीलेज	१ ड्राम
मेग सल्फ	१ ड्राम
एका क्लोरोफार्म	१ औंस

दिन में ३-४ बार देना चाहिए । इससे मासिक-धर्म के समय होने वाला दर्द कमर, पेडू, आदि का नष्ट होता है मासिक धर्म खुलकर होने लगते हैं ।

दर्द की अधिकता में 'ऐस्प्रिन' या 'फिनासिटीन, भी ३ । ५ ग्रे० दे सकते हैं दर्द शान्त होजाता है ।

जिस को मासिक धर्म कष्ट से या कम आता है उन को चाहिऐ वे १५ दिन पहले से 'अशोकारिष्ट' दशमूलारिष्ट मिलाकर सेवन करें ।

नीम की छाल ५ माशे को दरदरा करके दो तोले गुड़ के साथ डेढ़ पाव जल में औटावे जब आध पाव रह जाय छानकर पिलादें, इससे बन्द हुआ मासिक धर्म खुलकर होने लगता है ।

ऊपर के प्रयोग ३-४ मैंने गुप्त संदेश में से लिये थे प्रयोग करने पर अच्छे साबित हुये हैं ।

योषापस्मार—

टिं० असाफिटेडा	२ ड्रा०
टिं० केस्टोरीआई	२ "
ऐमोनियेटिड टिं आफ विलेरियन	२ "
कैम्फर वाटर	७ औं

इसमें से आधे औं० की १ मात्रा देते रहना चाहिये १-१ घण्टे बाद

आम बात—

वाइनम कोलचिसाई	२० बू०
सोडा सेलीसलास	६ र०
मग्नेशिया	४।। मा०
सोडा वाईकार्व	८ र०
एक्वामेन्थापिपरेटा	२।। मा०

यह एक मात्रा की दवा है, इस प्रकारको ४ मात्रा ३-३ घन्टे बाद गठिया के रोगी को देनी चाहिये ।

गठिया में जब शोथ आधिक हो जोड़ सूज गये हों दर्द के मारे रोगी बेसुध हो तब यह दवा अद्भुत कार्य करती है ।

उबटन—

स्त्रियोंको उबटनका प्रयोग अवश्य करना चाहिये-दोनों हल्दी, लालचंदन, बावची, चिरौंजी,बेसन, मसूर की दाल छिलका रहित, पीली सरसों सब वस्तुओं को बराबर लेकर पतला पीसलें, इसमें से थोड़ा लेकर बकरी के दूध में सान कर मुख पर या सारे शरीर पर मलना चाहिये बकरी का दूध न मिले तो कोईसा दूध ले लीजिए या जल । इससे सौंदर्यता की वृद्धि होती है ।

तारामंडूर—

चित्रक, हरीतकी, आँवला, बहेड़ा सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, १ । १ तोला इनका वारीक चूर्ण करलें । सबके बराबर मंडूर भस्म या लोह भस्म, मंडूर भस्म से दुगना गो मूत्र मिलाकर मंद २ अग्नि द्वारा पाक करें गोमूत्र से दुगना गुड़ लेना चाहिए, जब पाक तैयार हो जाय। आधे मा० की गोली बनावें १ से ३ गो० बलानुसार शीतल जल में देना चाहिये ।

मासिक धर्म से पहले पेडू में दर्द होने लगता है याऋतु के दिनों में होता है यह दर्द स्त्री को बेचैन कर देता है इन गोलियों से शीघ्र शान्त हो जाता है ऋतु ठीक होने लगता है यदि १ गोली से लाभ न हो तो दूसरीतीसरी दो, गुल्म, अर्श, परिणाम शूल, नष्ट होते हैं । और गर्भाधान होता है ।

इन्द्रायण की जड़के लेपसे स्तन की पीड़ा नष्ट होती है।

धतूरे के पत्ते और हल्दी दोनों के लेप से स्तन-शूल शान्त होता है।

गुड़हल के फूल ⌐/- गाजर के बीज २ तो० गुड़ ⌐/- कूट कर रखलें मासिक धर्म से ७ दिन पूर्व प्रातः सायम् दूध से सेवन करने से मासिक धर्म खुलकर होता है।

डा० शान्तिदेवी

अशोकारिष्ट

अड़ूसे की जड़, आम की गुठली, आँवला, कमलगट्टा, चन्दनलाल, जीरा, स्याह ज़ीरा, दारुहल्दी नागरमोथा, बहेड़ों के फल का छिलका, सोंठ और हर्रा-गुठली रहित दो दो तोले, धवई का फूल ३२ तोले, अशोक वृक्ष की ताजी छाल दो सेर आध पाव। तीन साल का पुराना गुड़ ४॥ सेर। गुड़ न मिलने पर मिश्री से भी काम चल सकता है। प्रथम दो दो तोले वाली बारहों औषधियों को लोहे के खरल में कूट कर महीन चूर्ण करले। फिर धवई का फूल अधकुट करके रखले। अशोक की छाल को यवकुट करके १८ सेर पानी में पकावे। जब ६ सेर पानी रह जाय तब नीचे उतार वस्त्र से छान ले। घृत से पोषित मिट्टी के पात्र में क्वाथ में गुड़ घोलकर उसमें काढ़ा, चूर्ण और धवई का फूल डाल अच्छी तरह घोलकर कशोरे से मुख ढांक कपड़ौटी करके एक मास पर्यन्त छायादार स्थान में रख छोड़ें। फिर खोल-कर लकड़ी से अच्छी तरह मथकर मोटे वस्त्र से छानले। दो तोले निर्मली के बीज को सिल पर महीन पीस अरिष्ट में घोलकर तीन दिन रक्खा रहने दें। चौथे दिन ऊपर का थिराया हुआ स्वच्छ अरिष्ट नियार छानकर बोतलों में भर रक्खे। मात्रा ६ माशे से २ तोले पर्यन्त, अनुपान दो तीन तोले शीतल जल में मिलाकर दोनों समय कुछ दिन पान करने से स्त्रियों का ऋतुदोष रक्त और श्वेत प्रदर, सोमरोग, निर्बलता, अरुचि, मन्दाग्नि, रक्तपित्त रक्तार्श इत्यादि रोग दूर होते हैं।

फल घृत।

अजमोदा, आंवला, कमल का फूल, कूट, कुटकी, कुमुद का फूल, दारुहल्दी, दुधिया, प्रियंगु का फूल, बरियारे की जड़, बहेड़ा, मजीठ, मुनक्का, मिश्री, मुलहठी, लालचन्दन, सतावर, सफेद चन्दन, ह[illegible]को और हल्दी दो दो तोले। असगन्ध ८ तोले। गाय का घी २ सेर। गोदुग्ध और शतावर का काढ़ा (४ सेर शतावर को ३२ सेर पानी में पकावे आठ सेर जल रह जाने पर नीचे उतार मलकर छान ले।) आठ आठ सेर। प्रथम दो तोले वाली इक्कीस औष-धियों को महीन कूट कर दूध के साथ सिल पर उबटन की भांति पीसकर कल्क बना ले। कड़ाही में कल्क, काढ़ा, घृत और दूध साथ ही डाल कर उपलों की मन्द आंच से पकावे और सिद्ध हो जाने पर नीचे उतारकर वस्त्रसे छानले। मात्रा ६ माशे से २ तो० पर्यन्त बलाबल के अनुसार गाय के गुन-गुने दूधमें मिलाकर दोनों समय रोग निर्मूल होने तक दो अथवा तीन मास सेवन करने से वन्ध्यात्व दोष नष्ट होती है। इसके प्रभाव से काकवन्ध्या और मृत-वत्सा रोग का विनाश होता हैं। सुन्दर, बलवान और दीर्घजीवी सन्तान पैदा होती है। स्त्रियों के वन्ध्यात्व को दूर करने के लिये यह फल घृत अद्वितीय महौ-षधि है।

कुमारकल्पद्रुम घृत

अगर, असगन्ध, आंवला, कचूर, कमरख की जड़ की छाल, कमल का फूल, काकोली, (स्याहमूसली) कूठ असली, केशर मोगरा, कौंड़ेनी, (शंखपुष्पी) खम्भारी की छाल, गुडूचीताजी, जीवक, (सालम मिश्री लम्बो) तेजपात, दारु हल्दी, दारचीनी, देवदारु, नागकेशर, नागर मोथा, नील की जड़, नीली दूब, प्रियगु का फूल, बच सफेद, बड़ी इलायची का दाना, बहेड़ाके फल का छिलका, मजीठ, महामेदा, (सकाकुल मिश्री)माल कंगुनी मुलहटी मेदा (सालम मिश्री पंजेदार) रेणुका, ऋषभक (बहमन सफेद) लौंग वनउर्दी, वनमूंग, श्वेत चन्दन, श्वेत दूर्वा, श्वेतकटियारे की जड़, सरफोंका, सारिवा, हरीतकी और क्षीर काकोली (श्वेत मुसली) एक एक तोला । दशमूल एक सेर । गाय का घृत, बकरी का दूध और शतावर का स्वरस (दो सेर शतावर अधकुट करके [illegible] पानी में ४ पहर भिगो रक्खे, फिर शतावर को सिल पर पीस पानी में हाथ से खूब मलकर वस्त्र से छान ले) दो दो सेर । प्रथम दशमूल को अधकुट करके १६ सेर पानी में पकावे । जब चार सेर पानी रह जाय तब नीचे उतार वस्त्र से छान ले । अगर से क्षीर काकोली तक बयालीसों औषधियों को महीन कूट कर दूध के साथ सिल पर पीस कल्क तैयार करे । तांबे की कलई दार कड़ाही में साथ ही कल्क, घृत, दूध और स्वरस डाल चूल्हे पर चढ़ा कर उपलों की धीमी आंच से पकावे और सिद्ध हो जाने पर नीचे उतार वस्त्र से छान ले। फिर इस घृत में अभ्रक शतपुटी, शुद्ध गन्धक आंवलासार, और शुद्ध पारा एक एक तोला । एक वर्ष, की पुरानी असली मधु चालिस तोले । पहले गन्धक-पारे को एक घड़ी खरल में घोट कर कज्जली करके पुनः अभ्रक, कज्जली और मधु को घृत में मिला एक जीव करके कांच के पात्र में भर रक्खे । मात्रा एक से दो तोले तक, अनुपान बकरी के दूध के साथ दोनों समय सेवन करना चाहिये ।

बन्ध्या स्त्री भी पुत्रवती होती है । काकबन्ध्या और मृतवत्सा दोष निस्सन्देह दूर होती है । नष्ट हुआ आर्तव पुनः प्रकट होकर सुन्दर रूपवान, बलवान और दीर्घजीवी सन्तान उत्पन्न होती है । सब--प्रकार का ऋतुविकार और बीसों तरह का योनिरोग दूर होता है । परीक्षा में अपूर्व गुणकारी पाया गया है ।

नागकेशर असली और मिश्री दस २ तोले। दोनों को महीन कपड़छान चूर्ण बनालें । मात्रा ६ माशे अनुपान गोदुग्ध के साथ दोनों समय तीन चार मास निरन्तर सेवन करने से अथवा ऋतुकाल के एक सप्ताह पूर्व से आरम्भ करके ऋतुनाश के दिन तक सेवन करके छोड़ दिया करे तो [illegible] महीने में सम्पूर्ण [illegible] विकार, कमर, पेडू और [illegible] की पीड़ा नष्ट होजाती है, ऋतुविकार नष्ट होकर गर्भाधान होता है ,

इन्द्रायण की जड़, निसोत, नौसादर, मुसब्बर सकमूनिया, सनाय और सुरन्जान मीठा एक एक तोला । सबका कपड़छन चूर्ण करके घीकुवार के रस में एक घड़ी घोटकर झरबेरी के बराबर गोली बना घाम में सुखाकर रखले । मात्रा एक गोली, अनुपान दो तोले उत्तम अर्क गुलाब के साथ मासिक धर्म होने के एक सप्ताह पहले से स्नान पर्यन्त दोनों समय सेवन करके छोड़ दे । इससे ऋतुदोष नष्ट होकर गर्भ धारण होता है ।

लेखक—महावीरप्रसाद मालवीय वैद्य।

चित्र-परिचय

१ मुख सौंदर्य—

मुख पृष्ठ पर तीन रंग का चित्र है। यह रणजीत-फिल्म कम्पनी बम्बई की सर्व श्रेष्ठ कुशल अभिनेत्री मिस गौहर का है आपने अपने ऐक्टिङ्ग में एक मादकता तथा मधुरता पैदा कर रक्खी है। सहसा सब का मन आपको तरफ आकर्षित हो जाता है।

आपका शरीर पहले कुछ स्थूल था आपने व्यायाम के ही कारण इतनी आयुमें सुडौल सुन्दर बना लिया है, यदि महिलाऐं व्यायाम किया करें तो हम विश्वास दिलाते हैं कि जिनकी अकाल में सुन्दरता नष्ट हो जाती है वह न हो, व्यायाम एक ऐसी क्रिया है जिसके करते रहने पर वृद्धावस्था में भी सुन्दरता, शारीरिक सौष्ठवता लावण्यता और यौवन क़ायम रह सकता है।

२ सफल माता—

विवाह का वास्तविक फल उत्तम सन्ततिका होना है यदि ऐसा न होता तो बड़े २ सेठ हजारों रुपया सन्तान प्राप्ति के लिए व्यय न करते। किन्तु निर्बल और रोगी सन्तान पैदा करने से यही अच्छा है कि सन्तान पैदा न हो।

इस चित्र में पुत्रोत्पत्ति से जननी की सफलता तथा बच्चे को आरोग्यता उसको प्रसन्नता आदि भाव माता तथा बच्चे दोनों में प्रदर्शित कियेगये हैं।

३ हमारी दाइयाँ—

आज उन्नतिके युग में भी सुशिक्षिता दाइयों के अभाव के कारण हज़ारों बच्चे पृथिवी पर गिरते ही अपनी जीवन लीला समाप्त कर देते हैं।

चित्र में एक बूढ़ी चमारी जिसके हाथ कांप रहे हैं, तरकारी काटने की दराती से नाल काट रही है। हाथ कांप जाने से नाल अधिक कटगई, खून की धारा बह निकली और बेचारा मासूम बच्चा सदाके लिये शान्त हो गया। ज़च्चा बेचारी अलग तड़फ रही है। उसकी सुध लेने वाला कोई नहीं है। चमारी को छुये कौन, फटी चटाई भूमि की शैया, सिरहाने दहकती हुई अंगीठीका दृश्य पाठिकायें हृदयंगम करलें।

इस लिये चाहिये, सुशिक्षित दाइयों से जो सफाई और शुद्धता का ध्यान रखने वाली हो उनसे प्रसव कार्य करना चाहिऐं।

४ ज़च्चा और बच्चा की करुण दुर्दशा—

प्रसव का समय स्त्री के जीवन में सबसे कठिन परीक्षा का समय होता है। बजाय इसके कि उन्हें मुलायम शय्या सोने के लिये दी जावे और घर की सफ़ाई की ओर विशेष ध्यान दिया जावे। उन्हें ज़मीन की कठिन शय्या पर फटी चटाई पर सुलाया जाता है। क्यों कि इस समय प्रसूताको अपवित्र माना जाता है। इस लिये न ओढ़ने को वस्त्र और न बिछानेको बिस्तर। सिरहाने अजवायन की धूनी दहकादी जाती है। मिट्टी के बर्तन में खाने तथा पैख़ाने की आज्ञा दी जाती है। चित्रकार ने इन बातों को अंकित किया है।

पाठक पाठिकाएं इस चित्र की सच्चाई का अनुभव स्वयम् कर सकती हैं।

यह है वास्तव में स्त्री जाति के प्रति घोर अन्याय इस समय एक ही वस्त्र दिया जाता है व भी बच्चे के पेशाब के कारण भीग जाता है। सर्दी के दिनों में बेचारी प्रसुता कांपती रही है, शीत लग जाने के कारण असाध्य रोगों के चंगुल में फंस जाती है।

सिद्ध-सालब-पाक रसायन

रजिस्टर्ड

यह रसायन वीर्य-सम्बन्धी सब दोषों को दूर करके उसे शुद्ध पुष्ट एवं संतानोत्पत्ति के योग्य अमोघ बना देती है। धातु रोग-संयोग से आक्रान्त होकर जिन मनुष्यों के रस, मांस शुक्रादि सम्पूर्ण धातु क्षीण हो गये हों तथा वीर्य के पतला होने से स्वप्नदोष, शीघ्र पतन, इन्द्रिय की शिथिलता पुरुषत्वहानि, अधिक शुक्रपात तथा ध्वजभंगादि रोगों के कारण से इन्द्रियजन्य [illegible] रहित और जो स्त्री पुरुष वंश लोप की आशंका से समय व्यतीत कर रहे हैं, उन्हें इस रसायन का सेवन करना संसार सुख एवं संतानोत्पत्ति के लिये अतीव गुणकारी होगा। यह दैवी औषध वृद्ध पुरुष को भी युवा तुल्य शक्तिमान् बना देती है। दिमाग को बड़ी ताकत देती है इस कारण उन लोगों के लिये जिन्हें दिमागी काम करना होता है जजों, बैरिस्टरों, वकीलों, मास्टरों, [illegible], विद्यार्थियों, क्लर्कों, पत्र सम्पादकों, व्याख्यानदाताओं आदि को बड़ी गुणकारी वस्तु है। हर तरह की निर्बलता को दूर करने वाली एक उत्तम स्वादिष्ट अनुपम औषध है।

मूल्य प्रति सेर [illegible] रु० [illegible] डिब्बा [illegible] रु०

सुपारी पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह दिव्यौषध ४० बहुमूल्य दवाओं से तैयार होती है। योनि रोगों के दूर करने में इसके समान दूसरी औषध नहीं है। सहस्रों स्त्रियां जो योनि रोगों की वजह से लाचार हो गई थीं जिन्हें गर्भ रहने की आशा ही न रही थी [illegible] और [illegible] होती थीं जिन्हें अपनी जिन्दगी भार मालूम होती थी जो सन्तान के लिये रात दिन कुढ़ती और तरसती थीं आज वही सौभाग्यवती देवियां हमारे सिद्ध सुपारी पाक रसायन के गुण गान कर रही हैं। जिसके सेवन से श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, मासिक धर्म की अनियमितता, बार २ गर्भ का गिरना, बालक हो २ कर मर जाना तथा एक बार बालक होकर फिर न होना, [illegible] की बीमारी (हिस्टीरिया), मानसिक निर्बलता, दुर्बलता सिर कमर नलों का दर्द, सिर का घूमना, चेहरे का पीलापन आदि अनेक रोगों की यन्त्रणा से छूट कर स्वस्थ और पुष्ट होकर कई २ बालकों की मातायें बन गई हैं। इसके सिवाय जापे की बीमारी, बुढ़ापे की कमजोरी में बड़ा मुफीद है।

मूल्य प्रति सेर [illegible] रु० [illegible] डिब्बा [illegible] रु०

वृहत आयुर्वेदिक औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार देहली।

Title Printed at Murari Art Press Delhi.

JIVANSUDHA. अगस्त-सितम्बर

जीवन-सुधा

(मलेरिया विशेषाङ्क)
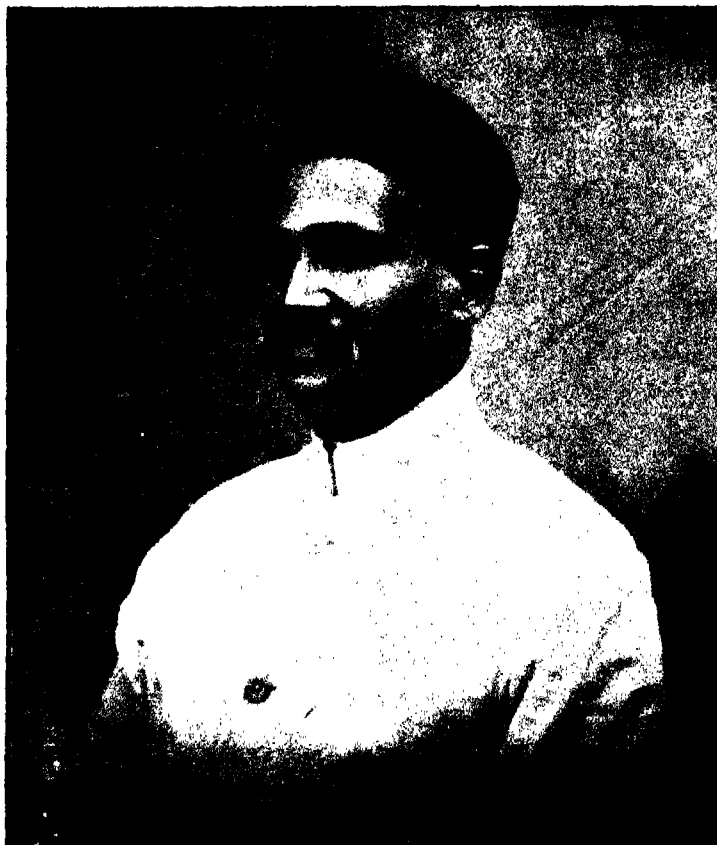
राजवैद्य श्री पं० महावीरप्रसादजी रसायन शास्त्री

अध्यक्ष—जीवनसुधा और वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक:—

पं० भगदेव शर्मा आयुर्वेदाचार्य

भू० पू० प्रोफेसर ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालिज हरिद्वार।

वार्षिक मूल्य १)

नमूना प्रति अङ्क।)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास को पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) रुपया, ६ मास का २), एक अङ्क का ।), पुस्तकालयों, धर्मार्थ औषधालयों व छात्रों को २) वार्षिक में भेजी जायगी। सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ़ भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक, होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रंथों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहिएं

(८) रुपया चैक वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहिएं।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिए।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिये जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

प्रबन्धकर्त्ता

बृहत् आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार, जौहरी बाजार, देहली।

॥ ॐ ॥

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष —

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ४ | आश्विन वीरनिर्वाण सं० २४५९, वि० सं० १९९१, अक्टूबर सन् १९३४ | अङ्क १२

आवश्यक सूचना

नया वर्ष और नई बातें!

इस अङ्क के साथ 'जीवन-सुधा' का चौथा वर्ष समाप्त होता है। अपने इस जीवन-काल में 'सुधा' ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये जो कुछ किया है वह पाठकों पर भलीभाँति विदित है। सुधा ने अपने इस बाल्यकाल में साहित्य-विज्ञान-कला-कौशल की सामान्यत: और आयुर्वेदिक शास्त्र की विशेषत: अनुपम सेवाएँ की हैं, जिसकी बड़े बड़े वैद्यों, डाक्टरों तथा चिकित्सकों ने प्रशंसा की है।

तीसरे वर्ष में सुधा ने जो अनुपम तथा आकर्षक विशेषाङ्क "महिला रोग विज्ञान" के नाम से निकाला था उसने चिकित्सा जगत् में विशेष ख्याति प्राप्त की है, इस विशेषांक की उपयोगिता तथा उत्तमता को चिकित्सकों ने ही नहीं वरन् बड़े २ नेताओं, पत्रकारों तथा राजनीतिज्ञों ने भी स्वीकार किया है, इसकी इस उपयोगिता पर ही मुग्ध होकर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने 'सुधा' को 'स्वर्ण-पदक' प्रदान किया है जिस पर सुधा गौरव कर सकती है, इसी तरह अन्य विशेषांकों पर भी "सुधा" को प्रशंसा प्राप्त हुई है।

इन सब बातों से यह भली प्रकार विदित होता

है, कि जनता "सुधा" को किस दृष्टिसे देखती है। हमें हर्ष है कि सुधा की सेवाओं को सन्मान की दृष्टि से देखा जारहा है, और यह सन्मान हमें अपने कर्तव्य की पूर्ति के लिये सदैव उत्साहित करता रहता है जिससे कि हम निरन्तर सुधा को अधिक से अधिक उपयोगी बनाने में तत्पर रहते हैं, यद्यपि हम सुधा को हर प्रकार से उपयोगी एवम् सुन्दर और आकर्षक बनाने में प्रयत्नशील रहें तो भी हम पत्र की वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट नहीं हैं, हमारी हार्दिक इच्छा है कि पत्र को हर प्रकार से उपयोगी तथा उत्तम बना दिया जाय, हर बालक बालिका, स्त्री पुरुष इसे चाव से पढ़ें इसे एक हितैषी मित्र समझें इस अभिप्राय को लेकर हमने यह विचार किया है कि पाँचवें वर्ष के आरम्भ से इसकी सम्पादनप्रणाली में कुछ परिवर्तन कर दिया जाय यह परिवर्तन क्या हो! इस पर पूर्ण विचार के पश्चात हम इस निश्चय पर पहुँचे हैं कि पत्र की सम्पादन नीति में ऐसा परिवर्तन कर दिया जाय जिससे यह चिकित्सकों और रोगियों के लिये ही नहीं वरन् सर्व साधरण के लिये हर प्रकार से उपयोगी होजाय, इसमें न केवल स्वास्थ्य और चिकित्सा सम्बधी ठोस मैटर ही दिया जाये बरन साहित्यविज्ञान कला-कौशल कविता-काव्य-इत्यादि मनोरंजक विषयों पर भी उत्तम सामग्री दी जाय। इस विचार को कार्य्य रूप में लाने के लिये हम अच्छे अच्छे लेखकों का सहयोग प्राप्त करने के लिये उद्योग कर रहे हैं, आशा है कि पाठक गण पत्र की नवीन सम्पादन प्रणालीसे अवश्य प्रसन्न होंगे और वह एक ही पत्र से स्वास्थ सम्बन्धी हर प्रकार का ज्ञान प्राप्त करनेके अतिरिक्त मनोरञ्जन और विनोद की हर प्रकार की सामग्री कविताएं, गल्प-कथायें,नाटक,प्रहसन इत्यादि का भी आनन्द उठा सकेंगे।

इस नवीन कार्य्य प्रणाली को कार्य्य रूप में लाने के लिये किन्चित समय लगेगा, इसके लिये हमें विशेष प्रयत्न भी करना होगा, इसलिये हमने यह निश्चित किया है कि सुधा अपनी नई शकल में नये वर्ष के प्रारम्भ से पाठकों की सेवा में उपस्थित हो, इसलिये अब सुधा के पाचवें वर्ष का प्रथम अंक अगस्त मास में न निकल कर जनवरी १९३५ में निकलेगा, हम उद्योग करेंगे कि नया अंक जनवरी के प्रथम सप्ताह में ही पाठकों का मिल जाय, हम यह जानते हैं कि सुधा के प्रति पाठकों का जो प्रेम है उससे वह इस तीन मास की गैर-हाजरी को सहन न कर सकेंगे और बहुत से प्रेमी अधीर हो उठेंगे परन्तु हमें आशा है कि हम अपने प्रेमी पाठकों के विनोदार्थ जो भावी कार्य्यक्रम तैयार कर रहे हैं उसे दृष्टि में रखते हुये पाठक गण इसके लिये हमें क्षमा करेंगे और इसका कुछ और अर्थ न लगायेंगे एक और विशेष बात जिसका वर्णन यहाँ कर देना आवश्यक है, यह है कि इस चार साल के समय में सुधा को जो लोकप्रियता प्राप्त हुई है और ग्राहकों की संख्या में जो वृद्धि हुई है वह उत्साहजनक है। इस उत्साहजनक स्थितिको दृष्टिमें रखते हुये हमने यह विचार किया हैकि अब सुधा के मूल्य में किन्चित कमी करदी जाय ताकि पाठकगण भी इस स्थिति का कुछ लाभ उठा सकें और सुधा दिन प्रति-दिन लोकप्रियता हासिल करती रहे, इस उद्देश्य के लिये हमने आगामी वर्षसे इसका वार्षिक मूल्य ३) से २) कर दिया है, इस कमी के साथ सुधा के पृष्टों में कोई कमी नहीं की जायगी। यदि पाठकों ने इसका उत्साह जनक उत्तर दिया तो हम इसी मूल्य में इसके पृष्ठ बढ़ाने का भी उद्योग करेंगे हमारी अभिलाषा है कि हम सुधा को उन्नति-शिखरपर पहुँचादें और इसके लिये हम हर प्रकार से उद्योग करने को तयार है, अब हम जनवरी के प्रथम सप्ताह में नये वर्ष का नया अंक लेकर उपस्थित होंगे, हम यह देखने की बाट करेंगे कि पाठक गण हमारे इन विचारों को किस दृष्टि से देखते हैं।

—संचालक।

मलेरिया (विषमज्वर) और उसकी चिकित्सा

[ले०—कविराज डा० वेदव्यासदत्त शर्मा शास्त्री एम० बी० (Cal.) एम० डी० (वाशिंग०) आयुर्वेदाचार्य, वैद्यवाचस्पति, आयुर्वेदमणि, भू० पू० चीफ मेडीकल औफिसर श्री प्रिन्स यशवन्तराव हौस्पीटल इन्दौर, कई निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामण्डल (वैद्य सम्मेलनों) से स्वर्ण वा रौप्य पदक वा प्रशंसा पत्र प्राप्त, कई विद्यालयों के परीक्षक, धन्वन्तरि कल्पतरु-भवन जालन्धर सिटी।]

पर्याय—विषमज्वर, मलेरिया, मौसमी बुखार, इन्टरमिटेन्ट फीवर, मार्शफीवर, तपेनौबती, तपेलर्जा, सियाताप, जूड़ा बुखार आदि।

परिचय—सब प्रकार के पुराने ज्वरों में मलेरिया (Malaria) ज्वर प्रधान है। इसको आयुर्वेद में "विषमज्वर" या "विषमशीतज्वर" कहते हैं। इसे डाक्टरी में "इन्टरमिटेन्ट फीवर" (Intermittent fever) और मार्शफीवर (Marsh fever) अथवा एग्यु (Ague) कहते हैं। यूनानी में इसको 'तपेनौबती" कहते हैं। उर्दू जबान में इसे "तपेलर्जा" कहते हैं। साधारण बोली में इसे लोग "जूड़ीज्वर" या जाड़े का बुखार कहते हैं। मारवाड़ी इसे "सियाताप" कहते हैं। मलेरिया (Malaria) शब्द का अर्थ खराब हवा है। यह एक सांक्रामक रोग है जो मच्छरों के काटने से होता है। इसमें शीत से ज्वर चढ़कर कुछ देर रहता है और फिर प्रायः पसीना आकर उतर जाता है। प्लीहावृद्धि और रक्तन्यूनता बहुधा होजाती है। आजकल बड़ी परीक्षा के पीछे यह सिद्ध हुआ है कि मलेरिया (Malaria) रोगाणु पहले एक प्रकार के शरीर में प्रवेश पाता है और फिर मच्छर के काटने से मनुष्य के शरीर में रोग का विष पैदा करता है। अस्तु जिन कारणों से मच्छर होते हैं वही कारण मलेरिया की वृद्धि का कारण होता है। जिस स्थान में मलेरिया होता है वहाँ 'ऐनोफेली" (Anopheles) नाम का मच्छर होना आवश्यक है। यह मच्छर मलेरिया वाले रोगी को काट कर उसके रक्त को चूस लेता है और आरोग्य मनुष्य को काटकर उस रोग के विष को उसके शरीर में प्रवेश करे तो रोग फैलता है। जिस रोगाणु को मच्छर एक से दूसरे मनुष्य के शरीर में पहुँचाता है उसका नाम 'प्लाजमोडियम" (Plasmodium) है। डाक्टर लिवरेन ने भिन्न २ प्रकार के प्लैजमोडियम मलेरिया वाले रोगियों के रक्त से अलग किये हैं और उनमें से अधिकांश ऐसे पाये गये हैं जो बेरङ्ग, स्वच्छ, गोल, विभिन्नाकार के होते हैं। इन में सबसे बड़े रोगाणु का व्यास रुधिर के रक्ताणु के बराबर होता है। इनमें चलन शक्ति होती है यह रक्ताणु से लगे हुए अथवा अलग होते हैं

और हमेशा इनमें (Pigment) अर्थात् रंग की चीज होती हैं और गोलाकार रोगाणुओं में एक पुच्छ के समान चीज बढ़ी हुई होती है और एक प्रकार के रोगाणु अर्ध चन्द्राकार, स्वच्छ, बेरंग रक्ताणु से मिले हुए वा अलग होते हैं और उनमें पिगमैन्ट (Pigment) की चीज होती है।

तीसरी प्रकार के रोगाणु गोल रक्ताणु के बीच में होते हैं तथा उनमें दानेदार पदार्थ पाया जाता है। अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा मलेरिया (Malaria) ग्रस्तरोगी के रक्त की परीक्षा करने से नीचे लिखा परिवर्तन देखने में आता है। पहिले रुधिर के रक्ताणु में बहुत छोटा सा दाग दिखाई देता है। यह दाग रुधिर के सब रक्ताणुओं में नहीं पाया जाता। यहाँ तक कि अनेक रक्त कणों में से केवल दो एक में देखा जा सकता है। यह दाग क्या वस्तु है? यह वही मलेरिया का रोगाणु है जो मनुष्य के शरीर में प्रवेश पाकर रुधिर के रक्त कण पर आक्रमण करता है। कभी कभी ऐसा होता है कि रक्ताणु में दो तीन दाग नजर आते हैं। क्रमशः रक्ताणु का आकार बढ़ जाता है यहाँ तक कि स्वाभाविक की अपेक्षा दूना हो जाता है। कभी २ यह दाग अर्द्ध चन्द्राकार (Crescentic) तथा अन्य रूप धारण करता है। यह सब रोगाणु रक्त कणों को खाते हैं। यही कारण है कि मलेरिया ग्रस्त मनुष्य के शरीर में रुधिर की हीनावस्था तथा सार्वाङ्गिक मलीनता देखी जाती है।

कारण—इसका कारण विशेष प्रकार के जीवाणु हैं जिनको विषमज्वर के जीवाणु या प्लैज्मोडियम (Plasmodium) कहते हैं। यह तीन प्रकार के होते हैं। (१) चातुर्थिक ज्वर के जीवाणु, (२) तृतीयकज्वर के जीवाणु और (३) तृतीयक विपर्यय ज्वर के जीवाणु। ये जीवाणु एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक मच्छरों द्वारा फैलते हैं, जो एनोफिलीज (Anopheles) मच्छर की उपजातियों में से होते हैं।

ये मच्छर गन्दी नालियों, कूड़ा-कर्कट के ढेरों, आर्द्र स्थानों, जलाशयों और अन्धेरे व सीलन (सील) युक्त गन्दे मकानों में रहते हैं। दिनभर ये छिपे पड़े रहते हैं और रात्रि को काटते हैं। इनकी उत्पत्ति वृक्षों की पत्तियों वगैरह: के सड़ने से होती है। पोखरों या डबोकरों में जल रह जाता है, पीछे उसमें पत्तियां और घास फूँस पड़ कर सड़ते हैं उससे विषयुक्त जीवाणु उत्पन्न होते हैं और विषयुक्त जीवाणुओं का विष हवा और पानी में मिलकर "मलेरिया ज्वर" पैदा करता है। मलेरिया इन ज्वरों का प्राकृत कारण है और सरदी लगना, अधिक परिश्रम, खराब जल पीना, दूषित या भारी भोजन करना आदि निमित्त कारण हैं। यों तो यह ज्वर सब अवस्थाओं में आता है, पर युवावस्था में विशेषकर आता है। जिस वर्ष गरमी अधिक पड़ती हैं, उस वर्ष वर्षाकाल के बाद मलेरिया बहुत फैलता है। यों तो आजकल मलेरिया सम्पूर्ण भारतवर्ष में रहता है, पर बङ्गाल और आसाम इसके मुख्य निवास स्थान हैं।

मानव शरीर में प्रविष्ट होकर ये जीवाणु रक्ताणुओं में चले जाते हैं। वहां नियत समय तक रक्ताणुओं में रहकर उन्हीं को अपना भोजन

बनाकर वृद्धि को प्राप्त होते हैं। यह नियत समय चातुर्थिकज्वर के जीवाणु के लिये ७२ घन्टे हैं और तृतीयक तथा तृतीयक विपर्ययके जीवाणुओंके लिये ४८ घण्टे हैं। चातुर्थिक ज्वर के जीवाणु ७२ घण्टे में एक से छै-दस (६-१०) बन जाते हैं, और तृतीयक का जीवाणु ४८ घण्टे में १५-२० और तृतीयक विपर्यय के जीवाणु ६-२० बन जाते हैं। ठीक नियत समय के पश्चात् जब ये वृद्धि प्राप्त कर चुकते हैं तो रक्ताणुओं को फाड़ कर बाहर निकल आते हैं। और पुनः अपने चक्र के लिये नये रक्ताणुओं में प्रविष्ट होजाते हैं। इस प्रकार प्रत्येकबार अधिकाधिक पहले से दस बीस गुने रक्ताणु नष्ट होते हैं। जिस समय ये रक्ताणुओं को फाड़ कर बाहर निकलते हैं तो शीत लगता है और ज्वर चढ़ता है, क्योंकि उसी समय रक्ताणुओं के फटने से जीवाणुओं का विष रक्त में मिलता है। मनुष्य शरीर में विषम ज्वर के जीवाणुओं में नर और मादा का भेद नहीं होता अर्थात १ ही जीवाणु स्वयं १ से १० या २० बनजाता है। जब कई बार इस प्रकार मनुष्य शरीर में चक्कर काटता है तो इससे विशेष जीवाणु नर और मादा के रूप में पृथक् होजाते हैं। और रक्त में भ्रमण करते रहते हैं। परन्तु रक्ताणुओं में प्रविष्ट नहीं होते। मच्छर जब पुरुष को काटता है तो यही जीवाणु मच्छर में जाकर पूर्वोक्त विधि से वृद्धि प्राप्त करता है। इस प्रकार विषम ज्वर के जीवाणु के दो जीवन चक्र हैं। एक मनुष्य शरीर में (नर और मादा के भेद से रहित) और दूसरा मच्छर के शरीर में (नर और मादा के रूप में) विषम ज्वर भारतवर्ष में बहुत होता है। और सारा साल रहता है, परन्तु वर्षा, शरद और बसन्त में अधिक तर होता है। स्त्री पुरुष, बाल वृद्ध व युवा सभी को समान होता है।

मलेरिया ज्वर की पाश्चात्य चिकित्सा के मत से सम्प्राप्तिः—

कारण से स्पष्ट है कि जीवाणु रक्त कणों को भक्षण कर वृद्धि को प्राप्त होते हैं, पहली बार से दूसरी दफा दस बीस गुना अधिक रक्त कण नष्ट होते हैं। तीसरी बार पहले की अपेक्षा १०० २०० या ५००-६०० गुना और चौथीमर्तबा १००० से ९००० गुना तक अधिक होजाते हैं, अर्थात बहुत जल्दी से रक्त नष्ट होजाता है, इसलिये रक्त की न्यूनता और शारीरिक दुर्बलता दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। प्लीहा का कार्य्य है कि वह विनष्ट रक्तकणों को खाजाये क्योंकि विषम ज्वरों में रक्त कण बहुत नष्ट होते हैं। इसलिये प्लीहा (तिल्ली Spleen) का कार्य बढ़ जाने से प्लीहा (Spleen) बढ़ जाती है। रक्त कणों के साथ ही साथ जीवाणु भी प्लीहा में चले जाते हैं जो उसके सैलों को क्षुब्ध करते हैं। यदि अधिक देर तक यही अवस्था रहे तो प्लीहा में सौत्रिक जन्तु बन जाते हैं जिससे प्लीहा कठोर होजाती है और स्थायी रूप से बढ़ जाती है। यकृत् (Liver) के रक्त मय अङ्ग होने के कारण उसमें जीवाणु अधिक रहते हैं। जिससे वह बढ़ जाता है और क्षुब्ध होनेपर इसमेंभी सौत्रिकतन्तुवृद्धि (Cirrhosis of Liver) होजाती है। रक्त कणों के नाश के कारण रक्त रञ्जक अधिक मुक्त होते हैं, रक्त रञ्जकों से पित्त रञ्जक बनता है, वह भी अधिक मात्रा में तैयार होता है, और यकृत् उस सारे को

पित्त बनाने में प्रयुक्त नहीं कर सकता, अतः पित्त-रञ्जक रक्त में मिलकर कामलावत् वर्ण कर देता है। जो रक्तरञ्जक प्रयोग में नहीं आते उन से कृष्ण रञ्जक आदि बनकर मूत्र में आते हैं। और मूत्र को कृष्ण लोहित कर देते हैं, या कपोलों पर आँखों के नीचे बैठ जाते हैं। अधिक रक्ताणु नाश से अधिक प्रोटीन (Protein) मुक्त होती है और उससे अधिक यूरिया (Uria) बनता है इस कारण मूत्र का रंग गाढ़ा होजाता है। विषम ज्वर में श्वेताणु कम होजाते हैं परन्तु बृहल्लीसीकाणुओं का नियात बढ़ जाता है।

आयुर्वेदमतानुसार विषम ज्वर की सम्प्राप्ति

जैसे कहा भी है कि:—

दोषोऽल्पोऽहित संभूतो ज्वरोत्सृष्टस्यवा पुनः।
धातुमन्यतमं प्राप्य करोति विषमज्वरम्।

(सु० उ० अ० ३६ श्लो० २८)

भा०—विषम ज्वर दो तरह से आता है (१) ज्वर आकर अच्छे होजाने पर (पूरी तरह से दोष के न दूर होने पर) अहित आहार विहार होने से फिर वह दोष विषमज्वर पैदा करता है। (२) या शुरू से ही कमज़ोर दोष होता है तो शुरू से ही विषमज्वर होने लगता है कि जो ज्वर कभी जाड़ा (सरदी) देकर आवे, कभी गरमी, कभी ज़ोर से आवे कभी धीरे से और जिसके आने का कोई ठीक वक्त न हो उसे विषम ज्वर कहते हैं। विषम ज्वर में रस आदि कोई धातु जरूर दूषित होता है।

कोई २ आचार्य आयुर्वेद में भी विषम ज्वर को भूताभिषङ्गजत्व अर्थात् भूतों से उत्पन्न होना मानते हैं जैसे कहा भी है कि:—

केचिद्भूताभिषङ्गोत्थं ब्रुवते विषम ज्वरम्।

(सु० उ० अ० ३६ श्लो० २८)

भा०—कोई आचार्य विषम ज्वर में भूतों का भी सम्बन्ध मानते हैं इसका अर्थ ऐसा भी अब लगाया जाता है भूत=सूक्ष्म प्राणी=कीड़े (Germs) अर्थात विषम ज्वर उत्पन्न करनेवाले कीड़े विषम ज्वर के रोगी के शरीर में मच्छरों से (काटे जाने पर) घुस जाते हैं। पश्चात् वे मच्छर फिर किसी नीरोग्य मनुष्य को काटते हैं तो मच्छर के शरीर से उन मनुष्यों के शरीर में घुस कर खून भर में फैलकर सब रक्त को बिगाड़ देते हैं, और फिर बाद को विषम ज्वर बार २ होने लगता है और जल्दी छूटता नहीं।

लक्षण—जीवाणुओं तथा विष के अनुसार विषम ज्वर के तीन भेद हैं।

(१) चातुर्थिक ज्वर (कारटन फीवर=Quartan fever) इसे वैद्यक में चातुर्थिक ज्वर और बोलचाल में चौथैया कहते हैं। यह ७२ घण्टे बाद चढ़ता है इसका जीवाणु मनुष्य शरीर में अपना जीवन चक्र ७ घण्टे में पूरा करता है। अतः ज्वर की बारी तीन २ दिन बाद आती है।

इस ज्वर की तीन अवस्थायें हुआ करती हैं।

(१) प्रथम शीत अवस्था (२) दूसरी गर्मी की अवस्था, (३) तीसरी पसीनों की अवस्था।

प्रथमावस्था के लक्षण—ज्वर चढ़ने से कुछ काल पहले रोगी को शिर पीड़ा, अङ्गमर्द, उत्क्लेश आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। पश्चात् रोगी को जाड़ा लगकर ज्वर चढ़ता है। रोगी शीत के मारे

थर थर काँपने लगता है यहां तक कि उसकी शय्या भी हिलने लगती है। दान्त से दान्त बजने लगते हैं, कई कई कम्बल व रजाई डालने से भी रोगी का शीत कम नहीं होता। बाहर से रोगी का शरीर ठण्डा सा प्रतीत होता है किन्तु भीतर का तापमान (यदि गुदा में देखा जाय तो) १०४ से १०५ फारनहीट तक मालूम होगा, नाड़ी की गति तीव्र, परिणाममें न्यून और वेग अधिक होता है। यह अवस्था ५ मिनट से २ या ३ घण्टे तक रहती है। किसी को ५ मिनट तक ही जाड़ा लगता है, किसी को १० १५ मिनट से ३० मिनट तक और किसी को दो या तीन घंटे तक। ३ घंटे से अधिक देर तक जाड़ा किसी को नहीं लगता।

द्वितीयावस्था के लक्षण—दूसरी अवस्था के आरम्भ होते ही जाड़ा लगना बन्द हो जाता है और उष्णता (गर्मी) का जोर होने लगता है। इसमें प्यास बढ़ जाती है। रोगी को शुरू २ में तो जाड़े के पश्चात् गरमी बड़ी प्यारी लगती है, परन्तु कुछ समय बाद ही वह उष्णता से बेचैन होजाता है, दाह से विकल होजाता है, मुख लाल सुर्ख हो जाता है, त्वचा उष्ण, शुष्क और रक्ताभ होती है, नाड़ी की गति तीव्र, परिणाम और वेग अधिक होता है, तथा ज्वर अति तीव्र १०३ से १०५ फारनहीट तक होजाता है। कभी २ विशेष करके बच्चों में १०६ फारनहीट तक पहुँच जाता है। यह अवस्था ३ से ४ घण्टे तक रहती है।

तृतीयावस्था के लक्षण—अब पसीना आने लगता है। यह तीसरी और अन्तिम अवस्था है। पहले ललाट, शिर और ग्रीवा तथा चेहरेपर पसीना आता है और फिर सम्पूर्ण शरीर से पानी की तरह पसीना बहने लगता है। इस अवस्था में बाहरी हवा लगना बहुत बुरा है। इसके पश्चात् रोगी को शान्ति प्रतीत होती है और ज्वर शीघ्रता से स्वस्थ रेखा या इससे भी नीचे उतर जाता है और रोगी उठ बैठता है। बहुत से बलवान रोगी तो अपना काम तक करने लग जाते हैं परन्तु यह पहली हालत में ही होता है। जब ज्वर पुराना होजाता है, रोगी निर्बल हो जाता है, तब वह रोगी उठकर काम करने लायक नहीं रहता। इस समय रोगी को बहुत सा मूत्र आजाता है, जिसका रंग बहुत गाढ़ा होता है। कभी कभी शौच भी आजाता है। ज्वर के बाद रोगी को कमजोरी अनुभव होती है, और प्रायः उसे निद्रा आजाती है। जब उसकी निद्रा खुलती है तो वह अपने आपको स्वस्थावस्था में अनुभव करता है।

चातुर्थिक ज्वर के भेद

प्रथम भेद—(१) जब इस चातुर्थिक ज्वर का एक वेग चल रहा हो तो ज्वर प्रत्येक चौथे दिन आता है, अर्थात् दो दिन मध्य के खाली रहते हैं और पहले तथा चौथे दिन ज्वर हुआ करता है।

द्वितीय भेद—(२) जब इसके दो वेग साथ २ चल रहे हों तो पहले दिन और दूसरे दिन ज्वर चढ़ेगा और उतर जायेगा। किन्तु तीसरा दिन खाली रहेगा फिर यथा क्रम दो दिन ज्वर चढ़ेगा अर्थात् मध्य के दो दिन ज्वर होगा और पहले तथा चौथे दिन नहीं आयेगा। इस प्रकार के ज्वर को आचार्य्यों ने आयुर्वेदिक ग्रन्थों में चातु-

र्थिक विपर्य्यय के नाम से प्रतिपादन किया है जैसे कहा भी है कि:—

विषम ज्वर एवान्यश्चातुर्थिक विपर्ययः ।
समध्ये ज्वरयत्यहनी आदावन्ते च मुञ्चति ॥

(च० चि० स्था० अ० ३ श्लो० ६९)

जब इस ज्वर के तीन २ वेग साथ २ चलेंगे तो प्रतिदिन ज्वर चढ़कर उतर जायेगा अर्थात् विसर्गी ज्वर का सा रूप बन जायेगा।

इस रोग की घटती-बढ़ती की पहचान

यदि ये ज्वर अपने आने के समय को बदलने लगे, अपने समय को छोड़कर दूसरे समय आने लगे, तब रोग की कमी समझनी चाहिये। अगर ज्वर अपने समय से पहले चढ़ने लगे, तो रोग की बढ़ती समझनी चाहिये। जब औषधि से फायदा होने लगता है तब यह पहले समय बदलता है और पीछे एक दम बन्द होजाता है।

तृतीयक ज्वर (टरशियन फीवर Tertian fever)

यह ज्वर तीसरे दिन ४८ घण्टे के अन्तर से आता है। यूनानी में इसे "हुम्मा गिवखालस" कहते हैं और वैद्यक में तृतीयक ज्वर कहते हैं। बोलचाल की भाषामें इसे तिजारी और तेय्या भी कहते हैं। इसका जीवाणु मनुष्य शरीर में अपना जीवन चक्र ४८ घण्टे में पूरा करता है। अतः इसका वेग प्रति तीसरे दिन होता है। इस ज्वर में उष्णता अधिक रहती है। इसका जोर ४ घण्टे तक रहता है, पाश्चात्य चिकित्सा के मतानुसार यह २३ घण्टों तक चढ़ा रहता है।

लक्षण—इसके भी वही लक्षण हैं जो चातुर्थिक के, भेद केवल इतना ही है कि वह दो दिन छोड़ कर आता है और यह एक दिन छोड़ कर। इसकी तीनों अवस्थायों में १०-१२ घण्टे का समय लगता है। किन्तु ताप अति तीव्र नहीं होता। इसका दौरा प्रायः मध्यान्ह काल के समय, शीत काल में होता है। जिनकी प्लीहा बढ़ जाती है उनको भी यह ज्वर दोपहर के समय जाड़े के मौसम में सताता है। यह ज्वर भी रूप बदलता रहता है। अगर नित्य आने लगजाये, तो रोग की वृद्धि समझनी चाहिये और अगर चौथे दिन आने लगजाय, तो रोग की घटती समझनी चाहिये। कभी २ इसकी बारी एक दिन में दो बार अपने लगती है। एक बार सवेरे ज्वर चढ़ता है, दूसरी बार शाम को चढ़ता है। दूसरे दिन ज्वर बिल्कुल नहीं आता। फिर तीसरे दिन उसी तरह दिन में दो बार चढ़ता है। इस हालत में इसको डुपलो केटेड टरशिअन फीवर (Duplicated Tertion fever) कहते हैं।

भेद १—जब इस ज्वर का वेग चल रहा हो तो ज्वर एक दिन आता है और एक दिन नहीं आता। २—जब इसके दो वेग साथ २ चल रहे हों तो नित्य प्रति ज्वर चढ़कर उतर जाता है, अर्थात् विसर्गी ज्वर का रूप धारण कर लेता है।

तृतीयक विपर्यय

इसका जीवाणु भी मनुष्य शरीर में अपना जीवन चक्र ४८ घण्टे में पूरा करता है। अतः प्रति तीसरे दिन ज्वर आता है और लगातार २६ घण्टे तक चढ़ा रहता है। अर्थात एक दिन १२ घण्टे नह होता और उसी दिन १२ घण्टे तथा दूसरे दिन पूरे २४ घण्टे चढ़ा रहता है।

लक्षण—इसकी भी उपर्युक्त प्रकार से ३ अवस्थायें हैं। इसमें शीतावस्था स्पष्ट नहीं होती यहां तक कि कभी २ शीत लगता भी नहीं। उष्णावस्था बहुत लम्बी होती है २४–२६ घण्टे तक चली जाती है। प्रस्वेदावस्था स्पष्ट होती है। प्रस्वेद कम आता है। इसमें शिर: शूल, कटिशूल, वमन उत्क्लेश आदि २ लक्षण होते हैं, कभी २ कामला (पीलिया) भी हो जाता है। यह उपर्युक्त दोनों ज्वरोंकी अपेक्षा अधिक दुःखदायी होता है।

भेद—१—जब इसका एक वेग साधारण रूप से चल रहा हो तो एक दिन प्रातःकाल से सायंकाल तक ज्वर नहीं होगा फिर उस रात और दूसरे सारे दिन व रात चढ़ा रहेगा। २—जब इस के वेग साथ २ चल रहे हों तो ज्वर अविसर्गी या सन्तत सा बन जाता है अर्थात् सदा स्वास्थ रेखा से ऊपर रहता है।

३—जब इस ज्वर का केवल एक ही वेग हो और वह मृदु हो अर्थात् ज्वरावस्था १६ से २० घण्टे हो तो यह तृतीयक ज्वर सा प्रतीत होता है। ४ घातक ज्वर कभी २ तृतीयक विपर्यय में रक्त क्षय अधिक होता है और उसमें कई तरह के परिवर्तन होते हैं। जीवाणु समूह रूप से रक्तमें भ्रमण करते हुए किसी अङ्ग विशेष की रक्त केशिका अथवा धमनिका में आकर ठहर जाते हैं जिससे रास्ता बन्द हो जाता है। इससे घोर उपद्रव उत्पन्न होते हैं और मृत्यु की सम्भावना रहती है। जिस अङ्ग की रक्त वाहिनियों में रुकावट होगी उसी के अनुसार लक्षण उत्पन्न होंगे। जैसे कि—

वातिकावस्था—जब मस्तिष्क की किसी रक्त वाहिनी में सञ्चार बन्द हो जावेगा तो प्रलाप, उत्क्षेपण, पक्षाघात, तथा मूर्छादि लक्षण उत्पन्न हो जायेंगे।

अतिसारावस्था—अंत्र की दीवार में उपर्युक्त अवस्था होजाने से अतिसार प्रवाहिका, वमन आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं जिनसे ऐसा मालूम होता है कि रोगी को विसूचिका हो रहा हो।

फुफ्फुस प्रदाहावस्था—फुफ्फुस व फुफ्फुसावरणों में जीवाणु एकत्रित होकर फुफ्फुस प्रदाह या फुफ्फुसावरण प्रदाह (Pleurisy) उत्पन्न कर देते हैं। इसी प्रकार हृदय में हृदयावसाद, वृक्कों में रक्तमेह आदि २ लक्षण पैदा हो जाते हैं।

नित्यशीतज्वर—(क्वाटिडियन् फीवर—Quotidian fever) कोटिडियन ज्वर प्रतिदिन आता है। इसे अन्येद्युः ज्वर कहते हैं इसे आयुर्वेद में इस प्रकार वर्णन किया है। जैसे कहा भी है—

अन्येद्युष्कस्त्वहोरात्र एक कालं प्रवर्तते (सु० उ० अ० ३९ श्लो० ३०) यह ज्वर प्रायः बहुत दिनों तक आया करता है। यह बहुधा सवेरे मालूम होता है। श्रावण, भाद्रपद, और कार मास इसके आने के समय हैं। यह नित्य प्रति आता है, किन्तु कभी २ तीसरे और चौथे दिन भी आने लगता है रोज २ आने से तीसरे चौथे दिन आना शीघ्र आराम होने की निशानी है। पर एक दिन में दो बार चढ़ना, अर्थात् वैद्यक का सतत ज्वर हो जाना खराबी की निशानी है। जो ज्वर रात दिन में दो बार आता है, उसे वैद्यक में सतत ज्वर और अंग्रेजी में डबल कोटिडियन फीवर (Double Quotidian fever) कहते हैं, जब यह रेमिटेण्ट फीवर (Remittent fever) अर्थात हर समय चढ़े रहने वाले ज्वर का रूप धारण कर

लेता है, यानी "सन्तत ज्वर" हो जाता है तब और भी खराबी की अलामत है।

इस ज्वर की प्रथमावस्था में—पहले पीठ पर ठण्ड लगती है और कुछ देर बाद सारे शरीर में ठण्ड लगने लगती है। कभी २ एक दम से शीत चढ़ आता है, रोगी कांपने लगता है, दान्त कड़कड़ाते हैं, उस समय जीभ तर, साफ, ठण्डी और फीकी रहती है भूख नाश हो जाती है, प्यास लगती है, जी मिचलाता है, सिर में दर्द, तशन्नुज या वाँइटे आने लगते हैं, मूत्र बार बार होता है। रक्त की गति मन्दी होने से नाड़ीकी गति भी मन्दी रहती है। रोऐं खड़े हो जाते हैं कान, होठ और गालों तथा उंगलियों के पोरुओं में रक्त भली प्रकार नहीं पहुँचता, इससे ये नीले से लगते हैं। रक्त शरीर के भीतर इकट्ठा हो जाता है, यदि सिर में रक्त इकट्ठा हो जाय तो बोझा सा जान पड़ता है, तन्द्रा और मूर्च्छा होने लगती है। यदि रक्त आमाशय में इकट्ठा हो जाता है तो जी मिचलाने लगता और उलटी हो जाती है। आँतों में रक्त इकट्ठा होने से दस्त लग जाते हैं, पर अधिकतर अजीर्ण रहता है। जाड़ा लगने से शरीर का ताप नहीं हो जाता। कई मर्तबा देखने में आया है कि इस अवस्था में टेम्परेचर १०५ या १०६ फा० डिग्री तक रहता है। शरीर में रक्त इकट्ठा हो जाने से चार और पाँच घण्टे तक जाड़ा लगता है। ज्यों २ यह ज्वर पुराना होता जाता है, जाड़ा लगने का समय घटता चला जाता है। कितनी ही बार ज्वर आ लेने पर, पाँच सात मिनट जाड़ा लगने परही गरमी आजाती है।

दूसरी अवस्था में जाड़ा धीरे २ कम होता जाता है और गर्मी बढ़ती जाती है। गरमी बढ़ने से रक्त की चाल. तेज हो जाती हैं और नाड़ी भी शीघ्र गामिनी हो जाती हैं, चेहरा तमतमा आता है, कनपटी की नसें फड़कने लगती हैं सिर में दर्द बढ़ जाता है रोगी प्रलाप या बकवाद करने लगता है। चमड़ा रूखा, लाल और गरम हो जाता है। प्यास काफी लगती है। रोगी क्षण २ में जल माँगता है। गिलास को होंठों से अलग करना नहीं चाहता। इस समय ओंकारियाँ खाली आती हैं, वमन भी हुआ करती है, घबराहट बढ़ जाती है। सरदी की हालत में मूत्र हलका और ज्यादा होता है किन्तु इस समय लाल, भारी और कम होने लगता है।

तीसरी अवस्था में पहले ललाट औरचेहरे पर प्रस्वेद आने लगते हैं और फिर सम्पूर्ण शरीर में पसीने आते हैं। प्रस्वेद ज्यों २ आते हैं ज्वर भी त्यों त्यों कम होजाता है। ज्वर बड़ी शीघ्रता से उतरने लगता है। बहुधा १५ मिनट में २ दर्जे ज्वर घट जाता है। जब रोगी आराम होने वाला होता है, तब किसी को जाड़ा लगता है, पर गरमी नहीं लगती अथवा प्रस्वेद नहीं आता—बिना प्रस्वेद आये ही ज्वर उतर जाता है।

रोग की खराबी के लक्षण

यदि इन ज्वरों का सम्बन्ध रस, रक्त, मांस, मेद आदि धातुओं से हो जाय, अर्थात् ज्वर का प्रवेश धातुओं में हो जाये तो खराबी समझनी चाहिए। ऐसा ज्वर धातु से अलग करने से हो जाता है। जब तक यह प्रबन्ध नहीं किया जाता, गरम सर्द अनेक तरह की उत्तमोत्तम

औषधियों से कोई लाभ नहीं होता। ऐसी जीर्णावस्था में रोगी को रक्त न्यूनता, दुर्बलता, प्लीहा-वृद्धि, कपोलादि स्थानों पर काले काले धब्बे, अनियमित ज्वर आदि लक्षण उत्पन्न होजाते हैं। चिकित्सा अधूरी रहे तो ज्वर के वेग नियमित काल को छोड़ कर देर से या पहले ही आने लगते हैं।

विषमज्वर के उपद्रव

(१) विशेष तीव्रज्वर का होना, (२) प्रलाप करना, (३) आन्त्रिक ज्वर, (४) स्नायुशूल, (५) रक्तातिसार वा आमातिसार, (६) फालिज, (७) फुफ्फुस प्रदाह (Pneumonia), (८) प्लीहासौत्रिक वृद्धि (Cirrhosis of splean), (९) यकृत सौत्रिक वृद्धि (Cirrhosis of Liver), (१०) वृक्क शोथ (Nephritis), (११) मधुमेह (Diabetes), (१२) सिर की झिल्ली की शोथ (Meningitis), (१३) मूर्च्छा, (१४) उदरामय, (१५) ब्रोंकाईटिस (Bronchitis) इत्यादि।

विषमज्वर (मलेरिया) की मीमांसा

लक्षणों से विषमज्वर सरल रीति से पहचाना जा सकता है। बारी से आने वाले सम्पूर्ण ज्वर विषमज्वर ही होते हैं। उपद्रवावस्था में वा विसर्गी, या जीर्णज्वरों में पहचानना जरा कठिन होता है। ऐसे समय में रोगी के रक्त की परीक्षा कर लेनी चाहिए जिससे जीवाणुओं का निश्चय होजाये। यह बात स्मरण रहे कि कुनीन वा तुलसी की पत्ती, काली मिर्च, नीम की जड़ वा गिलोय क्वाथ जैसी औषधियों के प्रभाव से जीवाणु रक्त में नहीं रहने पाते। इसलिये कुनीन वा उक्त क्वाथ वाली औषधियों के देने के पश्चात् विषमज्वर की मीमांसा के लिये रक्त-परीक्षा करना व्यर्थ ही है।

हमारे यहां सन्तत ज्वर को विषम ज्वरों में माना है, किन्तु असल में उसके लक्षण विषमज्वर से मिलते नहीं। इसलिये हमारे यहां भी कितने ही जैसे कि सुश्रुताचार्यादि सन्तत ज्वर को विषमज्वर नहीं मानते। डाक्टर लोग इसको रेमीटेन्ट फीवर (Remittent fever) कहते हैं। यूनानी वाले इसे दायमीताप कहते हैं। यह ज्वर बराबर लगातार चढ़ा रहता है। सात, दश या बारह दिन में उतरता है। जब यह आता है तब जरा सर्दी लगती है, जी मिचलाता है, किसी किसी को पित्त की वमन होती है। इसमें टेम्प्रेचर १०४ फा० से १०६ फा० तक होता है। यह ज्वर ६ घं० तक जोर करके हल्का होजाता है। पीछे पसीने आने के पश्चात् पुनः चढ़ने लगता है। यह ज्वर बिना १२ दिन पीछा नहीं छोड़ता। इसमें मस्तिष्क और दिल में सूजन आजाती है, तब बेहोशी होने लगती है। इस ज्वर में सन्निपात का बड़ा डर रहता है। चिकित्सा में गड़बड़ होने से किसी २ को सन्निपात हो भी जाता है। इससे सिद्ध हुआ कि सन्तत ज्वर विषमज्वर नहीं है। यदि हम "विषमज्वर" शब्द का ही केवल अर्थ करें तो उससे भी सन्तत ज्वर का भिन्न होना पाया जाता है क्योंकि विषम अर्थात् बराबर नहीं। जो चढ़ा उतरा करे ऐसा ज्वर वह विषमज्वर, इस प्रकार उसका वास्तविक अर्थ है। हमारे आयुर्वेदिक ग्रन्थकारों ने इस विषम ज्वर के जो भेद किये हैं

उनका भी विचार करने से जान पड़ता है कि जो ज्वर आकर कुछ काल में उतर जाय और फिर आवे, एक समान न रहे, वह विषम ज्वर कहाता है। इससे मालूम हुआ कि प्रचलित भाषा में जिसे बारी का ज्वर अथवा जूड़ी मलेरिया ज्वर कहा जाता है वही विषमज्वर कहाता है। विषमज्वर स्वल्प समय तक ज्वर का वेग रह कर जाता है और पीछे अपने समय में आता है। ऐसी रीति से ज्वर का आना, उतर जाना और फिर आना ये लक्षण किस रीति से बनते हैं, ज्वर उतर जाने पर उसका दोष फिर कहां रहता है और वही ठीक समय में ही फिर ज्वर के वेग को कैसे उत्पन्न करता है, तृतीयक दूसरे दिन और चातुर्थिक चोथे ही दिन क्यों आता है, इस विषय के प्रश्न आर्य, यूनानी और यूरोपीय वैद्यों को बड़े गूढ़ होगये हैं। इस विषय में आर्यवैद्यक में तीन मत देखने में आते हैं।

(क) पहला मत चरकाचार्य का ऐसा है कि रस में रहा दोष सन्तत ज्वर को, रक्त और मांस में रहा हुआ दोष सतत ज्वर को, मेद में रहा हुआ दोष अन्येद्युष्क ज्वर को, अस्थि में रहा हुआ दोष तृतीयकज्वर को, तथा मज्जा में रहा हुआ दोष चातुर्थिक ज्वर को उत्पन्न करता है। इस मत में सततादि ज्वरों का सम्प्राप्ति किस रीति से होती है उसे बताते हुए अष्टाङ्गसंग्रह में वाग्भट्ट कहते हैं कि—

सूक्ष्मसूक्ष्म तरास्येषु दूरदूर तरेषु च।
दोषोरक्तादिमार्गेषु शनैरल्पं चिरेण च॥
यातिदेहं न चाशेषं भूयिष्ठं प्रतिपद्यते।
क्रमाद्यत्तेन विच्छिन्न सन्तापो लक्ष्यतेज्वर॥

अर्थात् रक्तादि उत्तरोत्तर धातुओं के स्रोत—मार्ग छोटे २ मुख वाले और दूर २ हैं इससे मांस मेदादि उत्तरोत्तर धातुओं में रहा हुआ दोष प्रतिलोम क्रम से धीरे २ होकर अधिक समय में इसमें प्राप्त हो जाता है, उससे सततादि ज्वर उत्तरोत्तर अधिक अधिक समय में आता है और मध्यकाल में रोगी विज्वर अवस्था में रहता है। यह तो आर्य वैद्यक का सिद्धान्त है, कि दोष जब रस (रक्त) धातु में आता है तब ज्वर उत्पन्न कर सकता है, उसके अतिरिक्त शरीर में रहा हो तो भी ज्वर नहीं कर सकता। संतत ज्वर में दोष रस में रहता है इससे सन्तत ज्वर निरंतर रहता है। संतत ज्वर में दोष रक्त माँस में रहा करता है। उसका स्रोत रस से कुछ दूर और सूक्ष्म मुख वाला होने से सतत ज्वर में दोष को रस में आते कुछ विलम्ब लगता है, इससे सतत ज्वर चौबीस घण्टे में दो बार आकर उतर जाता है और मध्यकाल में रोगी विज्वरावस्था में रहता है। मैदे का स्रोत माँस से भी सूक्ष्म मुखवाला और दूर है इससे मैदे में रहा हुआ दोष सतत की अपेक्षा अधिक समय में रस में प्राप्त होता है, इससे अन्येद्युष्क ज्वर जो कि मैदे में रहने वाले दोष से आता है, चौबीस घण्ट में सिर्फ एक बार आकर उतर जाता है। इस प्रमाण से अस्थि और मज्जाका स्रोत उत्तरोत्तर दूर और सूक्ष्म होने के कारण उसमें रहा हुआ दोष अधिक समय में रस में प्रविष्ट होकर तृतीयक तथा चतुर्थक ज्वर को उत्पन्न करता है। ज्वर का वेग करने के पीछे

वह दोष किस अवस्था में रहता है इसके विषय में चरकाचार्य कहते हैं कि दोष जब जोर करता है तब जोर करने के बाद क्षीण बल वाला हो जाता है और आप ही आप माँस मेदे आदि धातुओं के स्रोत में आकर रहता है। पश्चात् फिर जब वृद्धि को प्राप्त होता है तब आप ही आप बल समय में ज्वर के वेग को उत्पन्न करता है। इस विषय में सुश्रुत कहता है कि जब ज्वर का वेग बना रहा है तब वह गया जैसा मालूम होता है। परन्तु दोष उस समय में धातुओं में लीन होकर छिपा रहता है। इससे सूक्ष्मपन के कारण मालूम नहीं होता। परन्तु विषम ज्वर (बिलकुल मिटने के पूर्व) कभी भी शरीर को नहीं छोड़ता, क्योंकि ज्वर न हो उस समय भी ग्लानि, फीकापन और कृशता में ज्वर के लक्षण तो विद्यमान होते हैं। इस विषय में सुश्रुताचार्य एक उदाहरण देते हैं-कि जैसे समुद्र में पूर (ज्वर भाटा) के समय समुद्र का जल किनारे तक आजाता है। और पूर (ज्वर) उतर जाने पर जब घटने लगता है तो वही जल समुद्र में ही जाकर समा जाता है, वैसे ही जब दोष के वेग का उदय होता है। तब ज्वर आता है और जब वेग शान्त होता है तो ज्वर शरीर में समा जाता है।

(ख) विषमज्वर के सम्बन्ध में सुश्रुताचार्य का दूसरा ऐसा मत है कि—आमाशय, छाती, कंठ, सिर और जोड़ ये पांच कफ के स्थान हैं, इनमें पहले चार स्थानों में रहने वाले दोष से विषमज्वर उत्पन्न होता है। इस मत में ऐसा मानने में आया है कि दोष जब आमाशय में आता तो इसके साथ मिलकर ज्वर को उत्पन्न करता है। इससे आमाशय में रहा हुआ दोष अपने प्रकोप काल की अपेक्षा २४ घं० में दोबार ज्वर करता है इससे सतत ज्वर कहाता है। छाती में रहा हुआ दोष २४ घं० में (छाती से आमाशय में आकर) अन्येद्युष्क ज्वर को पैदा करता है। कंठ में रहने वाला दोष ४८ घं० में आमाशय में आकर तृतीयक ज्वर उत्पन्न करता है। मस्तक में रहने वाला दोष ७२ घं० में आकर चतुर्थक ज्वर को पैदा करता है। दोष को एक से दूसरे स्थान में जाते सामान्यतः एक दिन रात (२४ घं०) लगते हैं।

(ग) विषमज्वर के सम्बन्ध में तीसरा मत यह है कि—विषमज्वर भूता भिषंग से उत्पन्न होता है, क्योंकि विषम ज्वर में विशेष कर आगन्तुक कारणों का भी सम्बन्ध होता है। यहां भूत शब्द से जैसे टीकाकारों ने अर्थ माना है वैसे देवादि मानना अथवा पाश्चात्यों के हाल में ढूंढ निकालने वाले सूक्ष्म कीटाणुओं को मानना के विचार जैसा है। इस विषय में इस निबन्ध में विस्तार न करके संक्षेप में इतना बता देना बस है कि दोनों ही मत अपने २ भावार्थ के अनुसार ठीक मालूम होते हैं।

उपशयानुपशय—भी रोग मीमांसा में सहायक हैं। कुनीन वा उक्त पूर्व वर्णितकाथ देकर देखें यदि ज्वर उतर जाय तो विषम ज्वर है अन्यथा नहीं।

मलेरिया (विषम ज्वर) की चिकित्साविधि

इन शीत ज्वरों की दो प्रकार से चिकित्सा की जाती है:—(१) जिस दिन ज्वर की बारी होती

है, अर्थात् ज्वर की अवस्था में (२) जिस दिन ज्वर नहीं चढ़ता अर्थात् जिस दिन रोगी ज्वर से खाली रहता है।

(१) ज्वर होने की अवस्था में—यदि भोजनोपरान्त ज्वर होजाय और जी मिचलाने लगे, तो किसी वमन कारक औषधि को पिलाकर वमन करा देनी चाहिये। पीछे शीतके समय गरम कपड़े उढ़ा देने चाहियें, शीतनाशक लेप करना चाहिये, गरमागरम चाय पिलानी चाहिये, गरम जल बोतल में या रबर की थैली में भर कर उस पर कपड़ा लपेट कर सेक करना चाहिये, और बफारा देना चाहिये।

जब शीत लगना बन्द होजाय, तब प्यास का और दाह का इलाज करना चाहिये। प्यासनाशक योग:—

(१) बड़की जटा, आंवला, धान की खील, कूट और कमलगट्टे की गिरी—इनको समभागलेकर चूर्ण करलो। पीछे छानकर मधु में गोली बनालो। इन गोलियों को मुखमें रखने से प्यास शान्त होती है।

(२)—बिजौरा, कैथ, अनार, लोध, बेर, इनको समभाग लेकर और जलमें पीसकर, मस्तक पर लेप करने से दाह और शोष सहित प्यास आराम होती है।

(३)—जीभ, तालू और कण्ठ सूखते हों और प्यास बहुत ही हो, तो बिजौरा नीबू के रस को घी और सेन्धे नमक के साथ पीसकर, मस्तक पर लगाने से तत्काल शान्ति होगी।

(४)—नागर मोत्था, पित्तपापड़ा, सुगन्धवाला, धनिया, खस और सफेद चन्दन इनको समभाग लेकर हाँडी में औटाओ, जब आधा जल रहजाय उतारलो। पीछे छानकर शीतल करलो इस "षड़ङ्ग पानीय" के पीने से प्यास, दाह, ज्वर, शान्त होजाते हैं। इसमें कुछ आंवले भी डालदो तो और भी उत्तम है।

प्रस्वेद निकालने या दस्त कराने की चेष्टा करनी चाहिये। इस अवस्था में अरण्डी का तैल पिलाना या काले दाने की एक दो मात्रा हितकर है।

पसीना आने लगे, तब किसी प्रकार के इलाज की जरूरत नहीं। इस समय रोगी को हवा से बचाना चाहिये। बाहरी हवा के पसीनों में लगने से रोगी के प्राणान्त की सम्भावना है।

प्रस्वेद (पसीना) लाने की विधि

गरम २ चाय पिलाने या गरम २ (निवाया) जल पिलाने से पसीना आने लगता है। बफारा देने से भी पसीना आता है। ऐन्टी फेबरिन (Anti febrin) की दोएक खुराक देने से वा लोवान अथवा आक की जड़की छाल का चूर्ण गुड़में मिलाकर दो दो रत्ती की पुड़िया देने से भी पसीना आकर ज्वर उतर जाता है। परन्तु ऐसे उपाय, हमारी समझ में मलेरिया ज्वरों में जो जाड़ा लगकर चढ़ते हैं करने चाहियें। जो ज्वर स्वभाव से अपनी अवधि तक बने रहते हैं, उनको जबरदस्ती इस प्रकार उतारना ठीक नहीं है। प्रथम तो वे इन औषधियों का असर दूर होते ही पुनः उसी प्रकार चढ़ने लग जाते हैं। दूसरे और भी खतरों की सम्भावना रहती है। किन्तु जाड़े के ज्वरों में जो आप ही अपने समय पर उतरते हैं स्वयं से

पहले उतारने में हानि नहीं। इस प्रकार ज्वर उतारने में रोगी को सुख होता है।

कब्ज़ होने पर दस्त कराने का उपाय—

इस अवस्था में अरण्डी का तैल (Castor oil) दो तीन तोले पिलानेसे दस्त साफ़ होजाता है। अरण्डी का तेल यों ही या पाव डेढ़पाव भर गरम दूध में या त्रिफले के क्वाथ में मिलाकर पिलाना चाहिये। अथवा ६ या ९ माशे काला दाना (हब्बुलनील) घी में भून कर ४ या ६ माशे सोंठ का सफूफ या चूर्ण मिलाकर, रोगी को सेवन कराने से ४ या ५ दस्त साफ़ आ जाते हैं। इस जुलाब से शीघ्र दस्त आजाते हैं। इसकी मात्रा कम ज्यादा वैद्य स्वयं सोचकर कर सकते हैं। सोंठ भी सोच समझ कर वैद्य को डालनी चाहिये।

प्यास रोकने के उपाय—ज्वर की अवस्था में प्यास रोकने के उपाय अंग्रेज़ी पद्धति से इस प्रकार से हैं—सोडावाटर और दुग्ध मिलाकर पिलाना, और बर्फ के छोटे २ टुकड़े मुख में रखाते हैं। हकीम लोग मुखमें अकरकरा या आलू बुखारा रखाते हैं।

प्रतिबन्धक चिकित्सा—मच्छरों को दूर करने के सब उपाय करने चाहियें। कूड़ा कर्कट न रहने दें। पल्वल, पोखर, डबोखर (जलाशय) आदि को खाली कराकर मिट्टी से भरवा दें। साफ और प्रकाशयुक्त मकानों में रहें। वर्षादि विषमज्वर के दिनों में मच्छरदानी लगायें अथवा मच्छरों को थोड़ा व सर्वथा घर से निकालने के लिए सर जेम्स राबर्ट्स की निम्नलिखित विधि को काम में लाने के लिये कहते हैं।

सूर्यास्त के समय दरवाजों और खिड़कियों को खोल दो और अँधेरा होने तक लैम्पों को न जलाओ इस प्रकार मच्छर स्वयं ही कमरों को छोड़कर आँगन में चले जावेंगे। यदि चाँदना हो तो उन्हें घर से बाहर निकालने में विशेष आकर्षक है, लैम्पों को जलाने से पहले जाली के दरवाजे व चिकों को नीचे गिरा दो। यदि इस प्रकार निरन्तर तीन-चार रातों तक किया जावे तो मच्छर बहुत कम हो जाते हैं, किन्तु यदि वह आँगन में उत्पन्न न हों तो।

शमन चिकित्सा

(२) ज्वर उतर जाने की अवस्था में—इन ज्वरों में अधिकतर औषधियाँ ज्वर उतर जाने की अवस्था में ज्वर की वारी रोकने को देते हैं। डाक्टरी में वारी रोकने की सबसे अच्छी औषधि कुनैन (Quinine) या सिनकोनाफेब्रीफ्यूज (Cinconafebrifuge) है। विषमज्वर के जीवाणु कुनीन से मर जाते हैं, अतः कुनीन इसके लिये अत्यन्त लाभदायक है। रोगियों को कुनीन कितनी रीतियों से दी जाती है इन्हें बताने से पहले मैं कुनीन और सिनकोना के विषय का कुछ इतिहास बताऊँगा।

कुनीन सिनकोना का आल्कलाइड है, इससे पहले सिनकोना के विषय का वर्णन करना चाहिये। सिनकोना को—पेरुवियनबार्क(Paruvianmask) कहते हैं। यह पेड़ सबसे पहले पीरू (अमेरिका का एक देश) से स्पेनियर्ड लोग सन् १६३२ में योरुप में लाये। सन १६३५ तक उसकी छाल का गुण किसी ने अनुभव करके देखा नहीं

था। "सिनकोना" नाम पीरूके वायसराय की स्त्री सिनकोन (hincon) के नाम पर पड़ा है। इससे पूर्व की शताब्दी में इस छाल को—जेस्युइट्सबार्क (Jesuits Bark) भी कहते थे। सब से पहले सन् १६५७ ई० में डाक्टर बोग ने इस छाल का उपयोग भारतवर्ष के कलकत्ते शहर में ज्वर रोग पर किया था। सन १६७७ और १८०३ बीच के वर्षों में डा० जेम्सलिण्ड (James Lind) विलियम हण्टर और जान्सक्लार्क (Johan clark) ने ज्वर में सिनकोना को देकर सफलता प्राप्त की थी। १८०४ में डाक्टर जेम्स जोन्सन (James Johnson) ने ज्वर में सिनकोना दिये जाने के विरुद्ध मत दिया था। उन्होंने कहा इससे वमन हो जाती और बड़े बड़े डज देने पड़ते हैं। सिनकोना के बदले इन्होंने पारा—(mercury)से मुंह का मरुती से फीका पड़ना, थूक आना तथा रक्तस्राव (Venesection) दूर करने की बहस की।

सन १८२० में कुनीन की शोध सिनकोना से आलकलोइड के रूप में हुई। तो भी १८४२के अन्त तक भारत में मलेरिया के ज्वर में यह नहीं दिया गया। मलेरिया के ज्वर में पारे की दवा से रक्तस्राव और थूक (Blleeding Salivation) बन्द करने के बदले कुनीन के उपयोग करने का श्रेय डाक्टर एडवर्ड हेवर (Edward Hare) को दिया जा सकता है। मलेरिया ज्वर में कुनीन अकसीर (Specific) होने से मैं मलेरिये के उपचार की एक दो बात लिखूंगा।

क्विनाईन देने की भिन्न २ रीतियाँ

(१) मुख द्वारा (Oral) (२) गुदा द्वारा (Rectal) (३) त्वचा द्वारा (Cutaneovs) (४) हाइपो डरमिक (Hypodeamic) और (५) रक्त नली के द्वारा (In Travenecus).

क्विनाइन, शरीर में जल्द फैलती (absorption) बहुत कड़वी होने से पी नहीं जा सकती और बहुत वमन (कय) कराती है। इन तीन बातों की अनुकूलता प्रतिकूलता के अनुसार उपरोक्त रीतियों में से किसी भी रीति का सहारा लेना पड़ता है। जो रोगी कुनीन को मुंह के द्वारा नहीं खा सकता उसके लिये गम्भीर केसों में हाल की दूसरी रीतियों का आश्रय लेना पड़ता है।

मुख द्वारा (oral)—क्विनायन मिक्श्चर (mixture) बनाकर देना सर्वोत्तम रीति है। सल्फ्युरिक अथवा हाइड्रोब्रोमिक ऐसिड डायल्यूट इन दोनों में एक डायल्यूट ऐसिड के साथ दी जाती है। कड़वे स्वाद के कारण बहुत से रोगियों के आमाशय में हलचल मचाकर उल्टी कर देती है, और यदि चढ़े ज्वर में उल्टी (कय) हो तो फिर अधिक हानिकारक हो जाती है। मिक्श्चर से नीचे ताजी गोलियां और चूर्ण (Powder) है। इसमें भी मिक्श्चर के जैसी कठिनाई तो है और मिक्श्चर की अपेक्षा मुंह के रक्त मिलता less absorbent है। गोलियों और चूर्ण के बाद तीसरे नम्बर में टेब्लेट्स, केचेसट, केप्सुलस आदि हैं। क्विनाइन देने में ये भी सुभीते की रीतियां हैं तो अच्छी; किन्तु इन रीतियों से देने से उसका असर कम होजाता है। और किसी किसी केसमें तो उसके गुणका कुछ भी विश्वास नहीं होता।

कुनीन के कुछ योग

१—कुनीन सल्फेट—यह समभाग मृदु गन्धका-

म्ल (डाइल्यूट सलफ्यूरिक एसिड) में घुल सकती है। प्रायः मिक्श्चर के रूपमें बरती जाती है।

२—कुनीन बाई सल्फ यह प्रायः गुटिका रूप में प्रयुक्त होती है।

३—कुनीन क्लोराइड—इसे समभाग मृदु लवणाम्ल (डाइल्यूट हाइड्रो क्लोरिक एसिड में घोलना चाहिये। कभी २ मिक्श्चर रूपमें भी बरतते हैं।

४—यूकुनीन - बच्चों के लिये प्रयुक्त होती है क्योंकि यह कड़वी नहीं होती। अम्लों में लीन होजाती है और हल करने से इसका विलयन कड़वा होजाता है। अतः सोडा बाइ कार्ब या मिल्क शूगर मिलाकर चूर्ण रूपमें देनी चाहिये।

दुर्भाग्यवश कुनीन बहुत खुश्की व गर्मी पैदा करती है। अर्थात् कानों शांय शांय, में सिर में चक्कर और मनको अवसादित कर देती है। जब तक शांय शांय आदि न हों तब तक इससे अधिक लाभ नहीं होता। बहुतोंको यह सात्म्य नहीं बैठती अतः इसके स्थान पर अन्य औषधियाँ देनी पड़ती हैं प्रायः मल्ल व पारदादि योगों से कार्य्य सिद्धि होजाती है। आज कल बाजार में प्लेज्माकीन "इसानोफील" आदि चीजें, जिनमें कुनीन अत्यल्प मात्रा में हैं अथवा है ही नहीं, मिलती हैं, उन्हे कुनीन के स्थान पर बरता जाता है।

किनाइन कब देनी चाहिये—कुनीन ठीक समय पर देने से अच्छा लाभ करती है, टेम्प्रेचर घटने बढ़ने का समय नहीं देखते रहना चाहिये। ज्वर हलका होने या उतरने की राह देखते रहकर बहुत समय तक क्विनाइन न देकर जो ढील की जाती है वह हानिकर है। साधारण इन्टर रैमिटेन्ट ज्वर में अथवा ज्वर के आने (पेरोक्साइम) के मध्य कुनीन देने के पहले ज्वर की भीषणता—ताप (Vrigo) और अधिक गर्मी-उष्णता (Hot Stage) की अवधि बढ़ने तक और उस समय तक जब कि पसीना आने लगे कुनीन देने की राह देखते रहना अधिक अच्छा है। ज्वर का आक्रमण एक बार शुरू होने पर कुनीन से नहीं रुकता। और ज्वर के प्रारम्भ (Early-stage) में कुनीन देने से रोगी के सिर की पीड़ा और साधारणतः सब व्याकुलता बढ़ती है। त्वचा-गीली करने और गर्मी कम करने के लिये अथवा जब पसीना निकलना प्रारम्भ हो तो दश २ ग्रेन की मात्रा से कुनीन के सोल्युशन में देना चाहिये और ४-६ घण्टेके पश्चात् पांच २ ग्रेन दिन में दो बार रोज देना चाहिये और एक सप्ताह तक इसी नियमसे बराबर देते रहना चाहिये। किनाइन देने के पहले यह जरूर देखना चाहिये कि मलेरिया ज्वर वाले रोगी की आँते मल से साफ हैं अथवा नहीं। पेट साफ होने के पीछे ही कुनीन देने का प्रबन्ध करना चाहिये।

मात्रा—कुनीन की मात्रा (Dose) के विषय में बहुत से मत है। बहुतसे एक डोज में ४० ग्रेन देते हैं, दूसरे सिर्फ ३ ग्रेन ही देते है। मेरे अपने अनुभव से साधारण केसों में ३० ग्रेन का डोज बहुत ज्यादा है और ३ ग्रेन का डोज आवश्यक्ता से कम है। जब तुम बड़े डोज में कुनीन देने लगो तो सिनकोनिज्म (किनाइन के भीतरका विषाक्त पदार्थ) के हानिकारक असर की बात तुम्हें भूलनी न चाहिये। उससे भयंकरता से छाती की निर्बलता (Cordiac Depression)

पाचन क्रिया का बिगाड़ और कभी मूर्च्छा (Syncope) होकर मृत्यु भी होजाती है। अस्पतालों तथा खानगी दवाखानों में पांच २ ग्रेन कुनीन सल्फेट अथवा कुनीन बाइहाइड्रो क्लोरिक ऐसिड सोल्युशन मिलाकर मिक्श्चर बना साधारण रीति से देते हैं और वह डोज अधिक विश्वास के योग्य, भयरहित और साधारण मलेरिया के केसों में लाभकारी है।

रक्त में मिलना-(Absorption) अन्न नलिका में से कुनीन शीघ्र ही रक्त में मिलती है; क्योंकि पेट में जाने के १५ मिनट पीछे ही वह मूत्र के साथ बाहर आती दिखाई देती है। रक्त में कुनीन का सब से अधिक असर खाने के बाद ३ से ६ घण्टे में देखने में आता है। कुनीन का रोग असर होने का विशेष आधार उसके रक्ताभिसरण करने (रक्त को इधर उधर चलानेके प्रमाण पर है। शरीर के टिश्यू (Tissue) कुनीन को ग्रहण (Assimilate) करते हैं, किन्तु उन पर इसका थोड़ा आधार है। मन्दज्वर के रोगोके पेटमें कुनीन जाने से ६ से ९ घण्टे में उसका सब से अधिक असर होता है और ज्वर के रोगी में वह असर ५ से १२ घण्टे में जान पड़ता है।

क्विनीन देने की अवधि-मलेरिया ज्वरका आक्रमण कुछ दिनों में जरूर कम होता है, तो भी इससे यह विश्वास कर लेना भूल है कि उसका ज्वर हमेशा के लिये मिट गया। यदि क्विनीन एक दम बन्द कर दी जाय तो ८ या १० दिनों में फिर वही ज्वर आक्रमण करके उससे भी अधिक खराब रूपमें अँतर वा तिजारी आदि ज्वरआने लगता है। इसलिये एक से दो हफ्ते तक १५ से २० ग्रेन कुनीन प्रतिदिन चालू रखनी चाहिये, और इसके बाद एक मास तक रोज ५ से १० ग्रेन क्विनाइन खिलानी चाहिये। यदि ज्वर पुनः आनेलगे तो फिर भी इसी क्रम से कुनीन देते रहना चाहिये। फिर जब २ मलेरिया ज्वर का शीत प्रदेश, ऊँच शिखिरवाले प्रदेश में जाय तब २ उसे कुनीन खानी चाहिये। क्योंकि शीत (Chill) बार २ मलेरिया का आक्रमण करती है।

गुदा द्वार (Rectal)-जब किसी प्रकार से भी मुखद्वारा कुनीन न दी जासके तभी इस मार्ग से कुनीन देनी चाहिये। फिर भी मुख्य करके बच्चों को कोको वटर के १५ से २० ग्रेन के साथ क्विनीन बाइ हाइड्रो क्लोरस ३ से ५ ग्रेन देनी चाहिये। बहुत दिनों के ज्वर के रोगी को भी कभी २ ६० से ७० कोको वटर के साथ १० से १५ ग्रेन क्विनाइन सफरा द्वारा प्रवेश की जाती है। यह उपाय अधिक समय तक जारी रखा जाय तो सफरे में गर्मी (Irritation) पैदा होती है, आजकल मेजरलेन (Major Lane) ने इसके विषय में सूचित किया है कि इस रीति से कुनीन प्रवेश करने में कोई भय नहीं है और फिर हाइपोडरमिक सिरिंज से कुनीन को रक्त में मिलते जितनी देर लगती है उसकी अपेक्षा सफरा द्वारा प्रवेश करने से वह शीघ्र रक्त में मिल जाती है।

त्वचाद्वारा Cutaneous--कुनीन बाइ हाइड्रोक्लोरस त्वचामें मल कर (Inunction) दी जासकती है। हाइड्रोक्लोराइड अथवा बाइ सल्फेट ऑफ क्विनाइन गर्म ग्लिसराइन में पिघल

जाती है। उसका प्रमाण १ भाग कुनीन ३ भाग ग्लिसराइन। इस मिकश्चर को बग़ल (Haxilla) के गढ़ों (कांखों) चमड़े में सन्ध्या सुबह मलना चाहिये रक्त के भीतर के जल से ग्लिसराइन की मैत्री है और उसी से वह ग्लीसराइन, क्विनाइन को साथ लेकर त्वचा (Intergument) में प्रविष्ट होकर शीघ्र फैल जाती है।

हाइपोडरमिक (Hypodermic)—**चमड़े के द्वारा पिचकारी**—यह रीति आवश्यक है जहाँ रोगी की दशा भयानक हो और शीघ्र तथा जोरदार असर की जरूरत हो वहाँ यह रीति उपयोगी है। इन्जेक्शन के लिये मसल्स जैसे अथवा (Glutealedtoid And scapula) अधिक पसन्द किया जाता है। गत २७ वर्षों में ३२००० से भी अधिक रोगियों के शरीर में क्विनीन बाइहाइड्रो क्लोरस का इंजेक्शन किया गया है। एक मात्रा में ७॥ ग्रेन—१५ बूँद जल में अच्छी तरह उबालना चाहिए। बहुत से रोगियों के मुख्य में यह इंजेक्शन गले (Gluteal) में कुल्ले के द्वारा दिया गया था। सिर्फ २-३ केसों में 'एबसेस" हुआ था। इसके अतिरिक्त दूसरे केसों में किसी पर भी कोई बुरा असर नहीं हुआ। मेरे इन केसों में ११ से अधिक इन्जेक्शन करने का प्रसंग ही नहीं आया। यदि आवश्यकता होती थी तो उसके बाद मैं मुख के द्वारा क्विनाइन अथवा आयुर्वेदिक औषधिएं देता था। अपनी कांच की सिरिंज और प्लेटीनोइरीडम की बारीक सुई धोने के लिये मैं गर्मजल या स्पिरिट मैथेलिड उपयोग करता था। ६-७ वर्ष तक ऐसा खयाल होता रहा कि कुनीन का इन्जेक्शन देने से धनुर्वात होने का भय है। यह बात आप सब लोग जानते हैं। क्विनाइन इन्जेक्शन के उपाय के विषय में जो डाक्टर नहीं हैं वे भी कहते हैं कि टिटनस टिश्यु (Tetenus Tissue) और जब कुनीन का तेज सोल्यूशन आरोग्य मनुष्य में अक्रिय रहता है, टिश्यु के अन्दर जाता है तब बहुत कुछ दाहक असर (Caustic effect) होकर आरोग्य जीते हुए (Spores) के लिये सख्त विनाशक दोष (Infection) पैदा करने के योग्य भूमि (Midus) उत्पन्न करता है। भारतीय मेडीकल सर्विस के कर्नल सेम्पल (Col.Semple) लेफ्टन कर्नल हेनरी, स्मिथ, मेजरलेन, केपटन स्कोट और दूसरों के बीच इण्डियन मेडीकल गजट में भारी वाद विवाद और टीका टिप्पणी हुई थी। नवम्बर सन १९१५ में केपटन स्कोट के इण्डियन मेडीकल गजट में सूचित की हुई बातों में से एक वाक्य इस तरह है—(In a nut shell the whole point is this, what proportion of quinine injection develop Tetanus ?) संक्षेप में बहस का मुख्य स्थान यह है कि कुनीन का कितना इन्जेक्शन धनुर्वात को पैदा करता है।

मैंने और मेरे आधीन डाक्टरों ने सैकड़ों रोगियों को क्विनीन इंजेक्शन किया। मेरे अनुभव के अनुसार उनमें धनुर्वात के कोई भी लक्षण नहीं दीख पड़े। सौभाग्य से दुष्ट सेप्टिक (Septic) अथवा (Aseptic) क्रिया का भी कोई केस नहीं हुआ। मद्रास जनरल अस्पताल तथा मेटरनिटी अस्पताल (यहां हर हफ्ते इंजे-

क्शन होता है) से मुझे खबर मिली है कि धनुर्वात का एक भी केस वहाँ पर नहीं हुआ। क्विनीन इञ्जेक्शन का बारम्बार उपयोग करने वाले सिविलसर्जन तथा बड़े अनुभवशील डाक्टरों से मेरे इस विषय के प्रश्न पर कई बार विवाद हुए हैं। धनुर्वात होने के प्रमाण देने वाला मुझे एक भी डाक्टर नहीं मिला। जब से मैं भारत में नौकर हुआ तब से हाइमोडरमिक इंजेक्शन देने बाद धनुर्वात होने का सिर्फ एक ही दुःखद केस मैंने सुना है।

इंट्रा वीनस—(Intra Venous) धमनी (नाड़ी) के द्वारा औषधि इंजेक्ट करना मलेरिया के नाशकारी हमले के समय यदि जंतुओं पर अति शीघ्र असर करना होता है तो इसका उपयोग किया जाता है। इसके लिये नीचे लिखा सोल्युशन काम में आता है। किनाइन हाइड्रोक्लोरस १५ ग्रेन, सोडियम क्लोराइड सवा ५ ग्रेन, डिस्टील्ड वाटर २॥ ड्राम। सोल्युशन गर्म कर छानो और गरम गरम काम में लाओ। इसकी क्रिया सेलाइन इंजेक्शन जैसी है, किन्तु इस प्रकार के उपचार विषय का अनुभव मुझे नहीं है।

कुनीन से हानि

कुनीन बारी के ज्वरों में परमोत्तम औषधि है। तिल्ली के बढ़ जाने की दशा में भी इससे बड़ा उपकार होता है, यह ताकतभी लाती है, किन्तु अधिक कुनीन सेवन करने से सिर में दर्द होने लगता है, सिर घूमने लगता है, चक्कर आया करते हैं, आँखों के आगे पतंगे से उड़ते हैं, कानों में सनसनाहट होती है, ओकारियाँ आती हैं, जी घबराता है। यदि कुनीन देते देते ऐसे नज़र आवें तो कुनीन का देना बन्द कर देना चाहिये।

कुनीन मिक्स्चर सल्फेट ऑफ कुनीन ४ ग्रेन, डायल्यूट सल्फ्यूरिक एसिड १ बून्द, सीरप आफ आरेंज १ ड्राम, अक्युवा (वाष्पजल) १ औन्स इन सबको मिलाकर रोगी को पिलाना चाहिये। यह एक खुराक है। इसी प्रकार और खुराकें भी बना सकते हैं इस प्रकार तीन २ घंटे के अन्तर से ज्वर न होने की हालत में इस मिक्स्चर के देने से ज्वर में लाभ होता है, ज्वर की बारी रुक जाती है। कमज़ोर या बच्चों को मात्रा कम देनी चाहिये। कुनीन गन्धक के तेजाब के साथ मिल कर अच्छा लाभ करती है। किन्तु यह तेजाब डायल्यूट १० बून्द से ज्यादा न देना चाहिये। और भी बहुत से अंग्रेज़ी नुस्खे हैं किन्तु विस्तार भय से यहाँ नहीं दे सका।

मलेरिया ज्वर नाशक योग

(१) पित्त पापड़ा, करञ्ज के पत्ते, हज़ार दाना बूटी, मोचकने के पत्ते, गिलोय, कुड़े की छाल, चीगार की जड़, काली मिर्च, सनाय, नीम की निबौली, तुलसी के पत्ते, चिरायता, हरड़, पीपल, शुद्ध सिंगरफ़, इन १५ औषधियों को सम भाग ले कर पीस लो। बाद तीन दिन तक निम्बू के रस में खरल करो। घुट जाने पर जब गोलियाँ बनाने योग्य हो जाय माशे माशे की गोलियें बनालें। ज्वर आने से पहले दो २ घंटे पर एक २ गोली सेवन करायें। एक दिन में ३ गोली से अधिक सेवन न करायें। इन गोलियों से सब प्रकार के मौसमी ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

(२) सोडा और सफैदा कासगरी को एकत्र पीसकर चार २ रत्ती की मात्रा से बताशे में रख कर ज्वर चढ़ने से पहले दो दो घण्टे में ३ बार एक दिन में खिलाओ। इससे इकतरा, तिजारी, चौथैया आदि सब तरह के बारी से आने वाले ज्वर नाश हो जाते हैं।

(३) लोह भस्म १ माशा, अभ्रकभस्म १ मा० शुद्ध वत्सनाभ (मीठातेलिया) १ मा०, पीपल २ माशा, करंजुए की मींगी २ मा०, इन सबको एकत्र नीबू के रस में खरल करके, एक २ रत्ती की गोलियाँ बना लें। ज्वर चढ़ने के ६ घण्टे पहले, हर दो दो घण्टे में, एक २ गोली गरम जल के साथ खिलाओ। इनसे सब प्रकार के विषम ज्वर इकतरा, तिजारी और चौथैया नाश हो जाते हैं।

(४) तबाशीर ४ माशे, छोटी इलायची के दाने ४ मा०, शीतलचीनी ४ माशे, गिलोय सत्व ४ मा०, पीपल ४ मा०, अभ्रक भस्म ४ मा०, फिटकड़ी ८ मा० गोदन्ती हरिताल ६ माशे, इन सब को अर्क गुलाब वा नीम के रस में खरल करो और तीन तीन रत्ती की वटिका बना लो। ज्वर के चढ़ने से पहले, हर दो २ घण्टे में एक २ गोली मधु में मिला कर खिलाओ। इनसे विषम ज्वर (मलेरिया) विशेष कर पित्त प्रधान विषम ज्वर शीघ्र ही नाश होजाता है।

(५) कुनीन १ तो०, तबाशीर १ तो०, छोटी इलायची १ तो०, प्रवाल भस्म १ तो०, टाटरिक एसिड (नीबू का सत) १ तो०, इनको खरल करें ऊपर से अर्क गुलाब वा पञ्चभद्र अर्क में घोट कर दो दो रत्ती की गोलियें बना लें। ज्वर चढ़ने के तीन घण्टे पहले एक २ घण्टे में एक एक गोली अर्क गाजुवाँ या जल के साथ सेवन करायें। यदि गोली देते देते ज्वर चढ़ आये तो गोली देना बन्द कर दें। दूसरी बारी के दिन ज्वर न होनेकी हालत में पुनः इसी प्रकार से गोली दें।

(६) **पञ्चभद्र अर्क** गुरिच, पित्त पापड़ा, मोथा, चिरायता और सोंठ इनका अर्क विधी से निकाल कर रखलें, इसे पञ्चभद्र अर्क कहते हैं इसे वात-पित्त ज्वर में देनेसे बड़ा लाभ होता है। प्यास लगने पर भी इसे दे सकते हैं।

(७) **ज्वरनाशक अर्क**—नीमकी छाल, चिरायता, पटोलपत्र, हरड, नागर मोथा, करंज के पत्ते, लाल चन्दन और कुटकी—इन आठ दवाइयों को बराबर २ लेकर अठ गुने जल में रात के समय भिगो दें, सबेरे भवके से अर्क निकाल लें ज्वर चढ़ने से पहले दो दो तोला अर्क, तीन तीन घण्टे के बाद तीन दफा रोगी को पिलाओ। चढ़े हुए ज्वर में देने से ज्वर का वेग तत्काल कम हो जाता है। यदि ज्वर का वेग अत्यन्त तीव्र हो और दिमाग की तरफ़ ज्वर की उष्णता ज्यादा बढ़ गई हो, तो लोबान को बारीक पीस कर दो दो रत्ती की मात्रा से २। ३ बार जल के साथ खिलाओ। इससे चढ़ा हुआ ज्वर उतर जाता है। ज्वर की गर्मी तत्काल कम हो जाती है। ९९ या ९८॥ डिग्री ज्वर होने पर लोबान की मात्रा बिलकुल नहीं देनी चाहिये।

निम्नलिखित शास्त्रीय औषधियें भी दे सकते हैं

नारायण, ज्वराङ्कुश, स्वच्छन्दभैरव, श्री मृत्युञ्जयरस, सर्वज्वरांकुशवटि, घोड़ा चोलीरस, ज्वर मुरारी रस, संजीवनी वटि, सर्व ज्वर हर लोह, चण्डेश्वररस, चन्द्रशेखररस, वैद्यनाथवटि, नव ज्वरेभसिंह, त्रिपुरभैरव रस, शीतारिरस, ज्वरकेशरी,

का काम करती हैं। ये सदा खून में इधर से उधर दौड़ी २ फिरा करती हैं। और ज्योंही कोई बाहरी आक्रमणकारी गर्द, गुबार, या बीमारीका बीज कीड़ा (Germ) रक्त में पहुँचता है,त्योंही उसे पकड़ कर खा डालती हैं। अगर खून में बिकारी जन्तु (Germ) अधिक संख्या में पहुँच गये हैं तो इर्द गिर्द के हजारों श्वेताणु इकट्ठे होकर आक्रमण-कारियों पर टूट पड़ते हैं। अगर ये चौकीदार रूपी श्वेताणु जीत गए तो उन आक्रमणकारी जन्तुओं को चटकर अपनी २ जगह चले जाते हैं। अन्यथा वहीं लड़कर मरजाते हैं। और समयपाकर रूप में शरीर से बाहर निकलते हैं। इन श्वेताणुओं के नष्ट हो जाने पर बाहरी जन्तु रक्ताणुओं पर आक्रमण कर शरीर का सत्यानाश करने लग जाते हैं।

मलेरिया के रोगी के रक्त की जाँच करने से पता लगा है कि मलेरिया के रोगाणु रक्ताणुओं में प्रविष्ठ कर उन्हें खाने लगते हैं। और अन्त में ये रोगाणु रक्ताणुओं को नष्ट कर स्वयं उनकी जगह पर अधिकार जमा कर शरीर के खून में ही अपना घर बना बढ़ते रहते हैं। व रक्ताणुओं को खा पोकर रक्त भर में फैल कर रक्ताणुओं का सर्व-नाश कर डालते हैं। जब खून में इन रोगाणुओं की पूरी बाढ़ होजाती है. और वे फूटने लगते हैं यानी रक्त भर में सर्वत्र फैल जाते हैं, तब इनका विष शरीर भर में फैल जाता है। विषके फैलते ही मनुष्य को जाड़ा लगता है व शरीर का ताप मान बढ़ कर ज्वर कहलाने लगता है। यानी शरीर की गर्मी बढ़ती है, जिसे हम ज्वर के नाम से पुकारते हैं। मतलब यह है कि आजकल यह बात प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा दिखादी जा सकती है कि "मलेरिया ज्वर" का कारण मलेरिया विष है। यानी मलेरिया एक तरह का सूक्ष्म जन्तु है. जिसको अंग्रेजी में पैरेसाइट कहते हैं। और वह मच्छरोंके काटने पर मच्छर की लार द्वारा मनुष्य-शरीर में प्रवेश पाता है। यह पहले कहा जा चुका है कि मलेरिया एक खास जाति के मच्छर के काटने से होता है जिसे एनोफिलस कहते हैं। इन मच्छरों में भी नर और मादी होते हैं लेकिन मलेरिया का विष सिर्फ मादीसे उत्पन्न होता है। मच्छरोंकी अनेक जातियाँ होती हैं। परन्तु सब मच्छरों में मलेरिया का विष नहीं होता, न सबके काटने से मलेरिया हो सकता है। अगर सभी मच्छरों के काटने से मलेरिया ज्वर होजाता तब इन दुष्ट मच्छरों से बचना असम्भव हो जाता। कारण कोई ऐसा घर नहीं है जिसमें मच्छरों की भन भनाहट सुनने में न आवे।

उपर्युक्त मत पश्चिमीय ऐलोपैथी विद्वानों का है। परन्तु मेरी समझ से हमारा आयुर्वेदीय संसार इस रोग से अपरिचित नहीं है। हमारे देश के लिये यह रोग भी नया नहीं है। मलेरिया ज्वर के प्रायः सभी लक्षण हमारे आयुर्वेदीय विषम ज्वर से मिलते जुलते हैं। आज कल जमाना ऐलोपैथी का है, कीटाणुवाद से सारा संसार ओतप्रोत हो रहा। ऐसी अवस्था में कुछ कहनाही बेकार है। अस्तु आयुर्वेदीय सुश्रुत में कहा गया है कि 'भूवाष्प परिहारार्थ शीतंच विहायसी'' अर्थात् वर्षा ऋतु में भूवाष्प से बचने के लिये ऊंचे पर सोना चाहिये। यह भूवाष्प मलेरिया का ही विष है। चरक में महर्षि आत्रेय कहते हैं ''भूवाष्पा-न्मेघ निष्यन्दात्पाकादम्ला जलस्यच'' इत्यादि अर्थात्

भूमि की भाप, मेघ का बरसना, जल का अम्ल विपाक होने से वर्षा ऋतु में अग्नि बल क्षीण होने पर पवनादि कुपित होजाते हैं। भू वाष्प एक प्रकार का भयंकर विष है, जिस देश या स्थान के वायु में यह मिलता है, वहाँ पर उस मिले हुए वायु से अनेक प्रकार के रोग पैदा होते हैं अर्थात सुश्रुतकार ने लिखा है कि "विषौषधि पुष्प गन्धेन वायु नोपर्नानेना क्रम्यते योदेशस्तत्र दोष प्रकृत्य विशेषण कास श्वास वमथु प्रतिश्याय शिरोरुग ज्वरैः रूप तप्यन्ते" अर्थात विष, विषैली औषधि संक्रामक रोग पीडित मनुष्यों की गन्धसे युक्त वायु से जो देश व्याप्त हो, वहाँ दोष और प्रकृतिके विरुद्ध होने से वहाँ वास करने वाले मनुष्य, कास, श्वास, वमन, प्रति श्याय, शिर दर्द आदि रोगों से पीड़ित होते हैं। वर्षा ऋतु में प्रायः तीनों दोष थोड़े बहुत अवश्य बिगड़े रहते हैं। उस समय जब विषैला वायु मानव शरीर मे प्रवेश कर जाता है, तब प्रायः अधिक पुरुषों को विषम ज्वर (मलेरिया) आने लगता है।

सिवाय इसके जब किसी एक ही रोग से एक ही समय में बहुत से मनुष्य पीड़ित हो जाते हैं, तब फैलने वाले रोगों के कारण-बिगड़े हुए, जल, वायु, देश और काल पर ध्यान देने पर यह बात भली भाँति ज्ञात होजाती है कि, वायु और जल के दूषित होने से देश और काल भी दूषित होजाते हैं। सभी भूमि से उत्पन्न भू वाष्प और भूमि में बढ़े हुए विषैले वायु तथा जल में मिले विष परमाणुओं से मनुष्य पीड़ित हो जाते हैं। अर्थात मनुष्यों का रक्षित (स्वास्थ्य) रहना दुःसाध्य हो जाता है। ऋतु परिवर्तन, धूप, सर्दी का अधिक लगना, उपवास, क्षीणता, कोष्ठ बद्धता, थोड़े स्थान में अधिक मनुष्यों का वास करना, आहार विहार आदि शारीरिक दोषों के दूषित होने से भी विषम ज्वर (मलेरिया) हो जाता है। अन्य देशों की अपेक्षा यह ज्वर भारतवर्ष में अधिक होता है। जिस साल गर्मी अधिक पड़ती है, उस साल वर्षा काल के बाद मलेरिया ज्वर प्रायः अधिक फैलता है। यों तो आजकल यह ज्वर सारे भारतवर्ष में सारे साल होता ही रहता है परन्तु बंगाल और आसाम इसके मुख्य निवासस्थान हैं। वर्षा, शरद, और कभी२ बसन्त ऋतुमें भी इसका प्रसार विशेष रूपेण होता है। यह सबको स्त्री, पुरुष, तथा युवा शिशु और वृद्धों को एक समान होता है।

मलेरिया ज्वर के लक्षण—

इस ज्वर में साधारणतः ये सामान्य लक्षण पाये जाते हैं। ज्वर चढ़ने से पूर्व अङ्गड़ाइयाँ आती हैं, हाथ पाँव टूटने लगते हैं, रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हाथ पांव के तलवे और आंख में एक प्रकार की गर्मी महसूस होती है। ज्वर शीत लग कर (जाड़ा देकर) चढ़ता है। यानी रोगी शीत के मारे थर थर काँपने लगता है—कभी कभी शीत के स्थान में गर्मी भी मालूम होती है। अजीर्ण, कोष्ठबद्धता, सारे शरीर में दर्द, प्यास, वमन और ज्वर की अधिक वृद्धि में रोगी बेहोश तक हो जाता है। जिन रोगियों को शीत लग कर ज्वर चढ़ता है, उनको ज्वर से पहले खूब जाड़ा लगता है, जाड़ा ५ मिनट से लेकर २ घंटे तक रह जाता है। जाड़ा बन्द होते ही जोरों से ज्वर चढ़ आता है। ज्वर की अवस्था में प्यास अधिक लगती है, किसी किसी रोगी को पानी पीते ही उलटी भी

शुरू हो जाती है, रोगी पानी पीता जाता है, साथ ही पानी वमन द्वारा बाहर आ जाता है। कभी कभी वमन के साथ पित्त भी गिरता जाता है। मुंह का स्वाद बिगड़ जाता है। अरुचि हो जाती है। सिर और शरीर में भयानक दर्द भी शुरू हो जाता है।

मलेरिया ज्वर को आयुर्वेद में "विषम शीत ज्वर" कहते हैं। एलोपैथिक मतानुसार इन्टरमिटेण्ट फीवर (Intermittent Fever), मार्श फीवर (Marsh Fever) अथवा एग्यू (Ague) कहते हैं। यूनानी मतानुसार इस ज्वर को "तपेनौवती" कहते हैं। साधारण उर्दू पढ़े लिखे लोग इसे 'तपेलर्जा' कहते हैं। साधारण लोग जड़ैया, जूड़ी या जाड़े का बुखार कहते हैं।

मलेरिया ज्वर के भेद—

यह ज्वर एलोपैथिक मतानुसार दो प्रकार का होता है।

(१) सविराम ज्वर इन्टरमिटेन्ट फीवर (Intermittent Fever) और (२) स्वल्पविराम (अविराम) ज्वर-रेमिटेन्ट फीवर (Remitent Fever)।

इन्टरमिटेन्ट फीवर (Intermittent Fever)—इस ज्वर का असल मतलब बारी (पारी) का ज्वर है। यह ज्वर कुछ घंटे तक रह कर दूर होजाता है, उस समय रोगी अच्छा होजाता है, फिर ज्वर अपने समय पर आता है। इस प्रकार के ज्वर को यूनानी में 'हुम्मा खिलती' भी कहते हैं। इसमें पहले सर्दी लग कर ज्वर चढ़ता है।

इन्टरमिटेण्ट फीवर के ३ भेद——

(१) कोटिडियन फीवर (Quotidian Fever)—अन्येद्युः ज्वर, नित्य शीत ज्वर या एकाहिक ज्वर। इस ज्वर में २४ घंटे तक विश्राम मिलता है यानी प्रति २४ घंटे बाद आता है।

(२) टरशियन फीवर (Tertion Fever) इसे तृतीयक ज्वर या तिजारी कहते हैं। यह ४८ घण्टे विश्राम के बाद चढ़ता है।

(३) कारटन फीवर (Quarton Fever) इसे चातुर्थिक ज्वर या चौथिया कहा जाता है। यह ७२ घण्टे विश्राम के बाद आता है।

नोट—यह बात याद रखनी चाहिये कि २४ घण्टे बाद चढ़ने वाले ज्वर में मलेरिया विष बहुत होता है। ४८ घण्टे बाद चढ़ने वाले ज्वर में उससे कुछ कम और ७२ घण्टे बाद चढ़ने वाले ज्वर में इससे भी कम मलेरिया विष होता है। नित्य शीत ज्वर बहुधा अधिक हुआ करता है। परन्तु तृतीयक ज्वर इससे कम और चतुर्थिक ज्वर इससे भी कम रोगियों को होता है।

इण्टरमिटेण्ट फीवर की ३ अवस्थायें—

(१) शीतावस्था, (२) उष्णावस्था, (३) स्वेदावस्था।

(१) शीतावस्था (शीत की अवस्था)—जब रोगी को शीत लगता है तब रोगी का सारा शरीर शीत के मारे थरथर काँपने लगता है, दाँत से दाँत बजने लगता है। रोगी मारे जाड़े के हाथ पाँव सिकोड़ कर गठरी सा बन जाता है। रोगी कपड़े पर कपड़ा ओढ़ता जाता है तब भी जाड़ा कम नहीं होता है। यह अवस्था १० मिनट से ३ घण्टे

तक रहती है। सर्दी का प्रभाव जब हृदय पर होता है तब रक्त प्रवाह धीरे धीरे होने लगता है। जिससे हृदय की गति सुस्त होजाने के कारण नाड़ी सुस्त और कमजोर हो जाती है। साँस कष्ट के साथ लिया जाता है। रक्त प्रवाह धीरे धीरे होने के कारण चेहरा पीला हो जाता है, ओष्ठ, कपाल तथा उँगलियाँ नीले रङ्ग की हो जाती हैं। कभी कभी प्यास, वमन सिर दर्द आदि लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। शीत से शरीर की गर्मी कम नहीं होती है।

(२) उष्णावस्था, गर्मी की हालत, इस अवस्था में जाड़ा लगना बन्द हो जाता है, रोगी को गर्मी मालूम होने लगती है। रोगी का सब शरीर धीरे २ गर्म होता जाता है। यह अवस्था प्रारम्भ होते ही रोगी सुख का अनुभव करने लगता है, परन्तु कुछ देर बाद ही जैसे २ गर्मी अत्यधिक बढ़ती जाती है, वैसे ही वैसे रोगी गर्मी से बेचैन होने लगता है। रोगी दाह से विकल हो जाता है। मस्तिष्क विक्षिप्त हो जाता है रोगी कभी २ प्रलाप तक करने लग जाता है। जिल्द की रंगत मामूली दशा पर आ जाती है, चेहरा सुर्ख हो जाता है। हृदय की गति तीव्र हो जाती है, नाड़ी की गति तेज हो जाती है। शरीर गर्म खुश्क तथा लाल हो हो जाता है। प्यास अधिक लगती है, सिर दर्द करने लगता है। जीभ खुश्क तथा एक प्रकार के श्वेत पदार्थ से लिप्त हो जाती है। मुख सूखा व स्वादहीन हो जाता है। आँखें लाल व चमकदार हो जाती हैं। रोगी उष्ण व गम्भीर श्वास लेने लगता है। श्वास क्रिया शीतावस्था से अच्छी तरह होती है। जी मिचलाना व वमन प्रारम्भ हो जाती है। शारीरिक गर्मी टेम्परेचर-Temperetu-re १०६, १०७ तक कभी २ इस से भी अधिक हो जाती है। रोगी बड़ा बेचैन हो जाता है। कपड़ा बुरा मालूम होने लगता है। पेशाब गर्म व लाल होता है। यह अवस्था १५ मिनट से १ घण्टे तक रहती है। जब बुखार जोर का होता है, तब यह अवस्था बहुत देर तक रहती है। पसीना जल्दी आता ही नहीं। यह अवस्था २४ घण्टे से अधिक काल तक कभी नहीं रहती।

(३) स्वेदावस्था-पसीने की अवस्था। इस अवस्था के प्रारम्भ होते ही, पसीना आने लगता है। सबसे पहले ललाट, पेशानी, और चेहरे पर पसीना आता है। इसके बाद थोड़े ही समय में सारे शरीर में पसीना आने लगता है इस अवस्था में बाहरी हवा का लगना अत्यन्त बुरा है। पसीना इतना अधिक निकलता है कि रोगी का बिस्तर ओढ़ना आदि पसीने से तर हो जाते हैं। धीरे २ पसीना आता जाता है और रोगी के शरीर की गर्मी घटती जाती है। त्वचा नरम व असली हालत में आ जाती है। ज्वर उतर जाता है। मूत्र अब लाल नहीं होता सिर दर्द, उलटी, प्यास आदि उपद्रव नष्ट हो जाते हैं। रोगी अपनी स्वाभाविक अवस्था में आ जाता है। रोगी सुख की नींद सो भी जाता है। रोगी सो कर उठने के बाद अपने को स्वस्थ अनुभव करता है। यह ज्वर बहुधा पसीना आकर उतरता है, पर किसी किसी रोगी का ज्वर बिना स्वेद आये भी उतर जाता है।

नोट—मैंने ऊपर जिन जिन अवस्थाओं का वर्णन किया है, उन सबका एक के बाद या एक ही बार होना आवश्यक नहीं है। प्रायः सभी अवस्थायें

सभी रोगियों पर दृष्टिगोचर नहीं होती हैं। किसी में कम किसी में अधिक। पृथक २ रोगियों में पृथक २ अवस्थायें पायी जाती हैं।

(१) कोटिडियन फीवर (Quotidion Fever) विषम नित्य शीत ज्वर -यह ज्वर प्रतिदिन २४ घण्टे में १ बार आता है और अपने समय पर उतर जाता है। यह ज्वर कुछ समय तक बराबर चलता रहता है व प्रायः सबेरे आया करता है। श्रावण, भाद्रपद और आश्विन इसके आनेके समय हैं। ज्वर चढ़ने के पहले सारे शरीर में हड़कल, तथा दर्द का अनुभव होता है। पहले रोगी के पीठ पर ठण्ड लगती है; जरा देर बाद सारे शरीर में जाड़ा लगने लगता है; रोगी मारे शीत के काँपने लगता है—इस समय जीभ तर और साफ फीकी रहती है। भूखका नाश हो जाता है। प्यास लगती है, जी मिचलाता है, मुख लाल होजाता है, पेशाब बार २ मालूम होता है। जब सर्दी का प्रभाव हृदय (Heart) पर होता है तब रक्त प्रवाह धीरे २ होने के कारण, शरीर के आन्तरिक भागों में रक्त इकट्ठा हो जाता है। खून का दौरा कम होने से ही प्यास अधिक लगती है। अगर सिर में रक्त का जमाव अधिक होगा तो सिरमें बोझ सा मालूम होगा तन्द्रा, मूर्च्छा, बेहोशी आदि शिरजन्य उपद्रव शुरू हो जाता है। जब आमाशय में रुधिराधिक्य होता है तब उबकाइयाँ और उलटी आने लगती हैं। यानी जिस स्थान का रक्त जमेगा उस के ही लक्षण दृष्टि-गोचर होंगे। जाड़ा कम होते ही शरीर की गर्मी बढ़ने लगती है गर्मी बढ़ते ही खून की चाल स्वाभाविक अवस्था में आ जाती है। शारीरिक गर्मी १०५-१०६ तक पहुंच जाती है। सिर दर्द आदि उपद्रव बढ़ जाता है। इसी तरह इन्टरमिटेन्टफीवर के प्रायः ३ अवस्थाओंका प्रकोप हो कर ज्वर अन्त में उतर जाता है।

(२) टर शियन फीवर (Tartion Fever) तृतीयक ज्वर, यह ज्वर ४८ घन्टे के अन्तर से यानी तीसरे दिन आता है। अर्थात मध्य में एक दिन छोड़ कर चढ़ता है। इसका दौरा प्रायः दोपहर के समय शीतकाल में होता है। यह ज्वर उन लोगों को अधिक होता है, जिनकी तिल्ली बढ़ी हुई होती है। यह ज्वर अपना रूप भी कभी कभी बदल दिया करता है। इसकी बारी दिन में दो बार भी हो जाती है। एक बार सवेरे ज्वर चढ़ता है, फिर दूसरी बार शाम को चढ़ता है। दूसरे दिन विश्राम लेता है, पुनः तीसरे दिन उसी तरह दिन में दो बार चढ़ता है। ज्वर की इस अवस्था को "डुपलीकेटेडटरशियन फीवर (Duplicated tartion Fever) कहते हैं। इसके भी और सब लक्षण और ज्वरों की तरह ज्वर चढ़ने से पहले शीतावस्था, उष्णावस्था, और स्वेदावस्था आदि का प्रकोप होता है।

तृतीयक विपर्यय—

यह भी एक प्रकार का ज्वर है। यह भी प्रायः तीसरे दिन आया करता है। ज्वर लगातार ३६ घन्टे तक चढ़ा रहता है। इसके भी और रूप लक्षण कमोबेश अवस्था में और ज्वरों की तरह होते हैं। उष्णावस्था देर तक बनी रहती है। पसीना बहुत कम आता है।

(३) चातुर्थिक ज्वर—(Qurton Fever) कारटन फीवर, चतुर्थेऽह्नि चतुर्थकः यह ज्वर चौथे

दिन चढ़ता है बीचमें २दिन विश्राम लेता है। २दिन बीच में न आकर चौथे दिन आता है। यह ज्वर प्रायः दिन के तीसरे पहर चढ़ा करता है। कभी २ इसकी भी दो बारी हो जाती हैं। तीसरे दिन ज्वर न आकर, चौथे पाँचवें दिन, दिन भर में दो बार चढ़ बैठता है। इस दशा में इसे "डबल कारटन फीवर (Double Quarton Fever) कहते हैं इस ज्वर में शीतावस्था देरतक रहती है। उष्णावस्था थोड़ी ही देर तक रहती है। ४-५ घन्टे तक इसका प्रकोप अधिक रूप में रहता है। यह ज्वर बड़ा खराब है। कभी २ वर्षों रोगी का साथ नहीं छोड़ना चाहता है। इसके सिवाय और रूप लक्षण और ज्वरों जैसे होते हैं।

रेमिटेन्ट फीवर (Remittent Fever) इस ज्वर के दो भेद हैं।

(१) डबल कोटिडियन फीवर (Doubl Quotidian Fever) सतत ज्वर जो दिन रात में दो बार चढ़ता है।

(२) रेमीटेन्टफीवर (Remittent Fever) सन्ततज्वर यह ज्वर बराबर चढ़ा ही रहता है।

सतत ज्वर—

यह ज्वर दिन रात में दो बार चढ़ता है, यानी २४ घन्टे में दो बार चढ़ता है, और दोनों ही बार उतर आता है। यह ज्वर जब चढ़ता है तब जरा जरासी सरदी लगती है। इस ज्वरमें बारी से आने वाले ज्वरों की अपेक्षा मलेरिया विष अधिक होता है। नित्य प्रति आने वाला नित्य शीत ज्वर यानी "कोटिडियन फीवर" ही बिगड़ कर सतत ज्वर का रूप धारण कर लेता है। यह ज्वर कभी भी पूरा नहीं उतरता है। थोड़ा थोड़ा हर समय बना ही रहता है। और रूप लक्षण प्रायः कमोवेश, नित्य शीत ज्वर के होते हैं। ज्वर ३४ घन्टे तक चढ़ा रहता है। फिर पसीना देकर उतर जाता है।

सन्तत ज्वर—Remittent Fever

इस ज्वर का प्रारम्भ साधारणतः इन्टरमिटेन्ट फीवर की तरह होता है। यह ज्वर कभी उतरता नहीं। ज्वर न्यूनाधिक रूपेण सदा बना ही रहता है। सात, दस, बारह या १४ दिन में उतरता है। कभी २ तीन चार सप्ताह से भी अधिक समय लेता है। यह ज्वर जब चढ़ता है तब पहले जरा सी सरसरी सी लगती है। रोएं खड़े होजाते हैं। जी मिचलाता है, किसी २ रोगीको वमन भी होता है, वमन में पित्त गिरा करता है। यह ज्वर ६ घण्टे जोर करके फिर कम होजाता है। पीछे जरा सा पसीना आनेके बाद फिर चढ़ने लगता है। सिर और कमर में दर्द होता है। जीभ सफेद और लाल मैली रहती है। कभी २ रोगी को दस्त होने लगने हैं। ज्वर की अवस्था में शरीर की उष्णता (टेम्परेचर) अधिक बढ़ जाने पर रोगी प्रलाप करने लगता है। बेचैनी और अनिद्रा का प्राबल्य होता है। मस्तिष्क और दिल में सूजन आ जाने पर रोगी बेहोश होने लगता है। कभी २ हाथ पाँव ऐंठने और शरीर अकड़ने लगता है। प्यास अधिक नहीं लगती। टेम्परेचर १०५-१०६ तक रहता है। प्रातः काल में ज्वर कुछ हलका होकर फिर बढ़ने लगता है। दोपहर के बाद ज्वर बढ़ी हुए अवस्था में रहता है। इस ज्वर में सन्निपात होने का बड़ा डर रहता है, और बहुधा हो भी जाता है। पेट की दशा बदलती रहती है। चमड़े

का रंग पीला होजाता है। रोगी निश्चेष्ट हो पड़ा रहता है। यह ज्वर त्रिदोषज होजाता है। जब रोगी को दस्त अधिक आने लगते हैं, तब इसका लक्षण टाइफायड ज्वर से मिलने लगता है, यानी टाइफायड ज्वर का भ्रम होजाता है। ऐसी अवस्था में खूब सोच विचार कर काम करना चाहिये।

नोट हमारे यहाँ आयुर्वेदीय मतानुसार सन्तत ज्वर को विषम ज्वर में माना गया है – परन्तु इस ज्वर के लक्षण विषम ज्वर से नहीं मिलते। विषम ज्वर तो उसे कहते हैं जो चढ़कर उतर जाता है। और फिर चढ़ जाता है। किन्तु यह ज्वर तो सदा बना ही यानी चढा ही रहता है। इस पर आयुर्वेदीय विद्वानों को प्रकाश डालना चाहिये। मलेरिया विषका विकट परिणाम (ज्वर के सिवा) सीहा भी है। मलेरिया विष से ग्रसित होने पर, और औषधि, पथ्य, संयम आदि उचित रूप से रोगी के न पालन करने के कारण पेट के बायीं ओर सीहा यानी तिल्ली बढ़ जाती है। इस रोग में सदा मन्द २ ज्वर बना रहता है; रोगीको किसी न किसी समय शीत देकर ज्वर आ जाता है। इसके प्रभाव से पाण्डु रोग भी होजाता है कारण कि मलेरिया ज्वर के कीटाणु रक्त के लाल कणों को खा जाते हैं; जिनका मनुष्य शरीर में रहना नितान्त आवश्यक है। कारण कि इन्हीं रक्त के रक्त रक्ताणुओं से खून का रंग लाल रहता है। मलेरिया विष से जब ये रक्ताणु शरीर में कम होजाते हैं, तब रक्त पतला पड़ जाने के कारण शरीर का रंग पीला, फीका और उजला दीख पड़ता है। *सिवाय इसके मलेरिया विष से और भी* कई प्रकार के रोग पैदा होते हैं। यथा—रक्त स्वल्पता, न्यूरे लीजिया, फालिज। रक्त आँव, और यकृत विकार, नाड़ी प्रदाह आदि।

मलेरिया से बचने का उपाय—

जब यह सर्व प्रकारेण सिद्ध हो गया है कि मलेरिया ज्वर (जूड़ी-बुखार) के कीटाणु (Malaria Germs) मच्छरों द्वारा हम लोगों के शरीर में प्रवेश करते हैं। अतः यह बहुत आवश्यक है कि, मच्छरों से अपनी रक्षा की जाय। इसलिये मच्छरों का नाश करना अत्यन्त आवश्यक है। अतः अंग्रेजी के इस कहावत के मुताबिक "Preventation is better than cure" अर्थात् दवा करने की अपेक्षा रोग का रोकना अत्यन्त आवश्यक व अच्छा है। हम मलेरिया से बचने के लिये थोड़े से उपाय अपने पाठकों के उपकारार्थ नीचे लिखते हैं। आशा है कि पाठक वर्ग अगर इन उपायों का अवलम्बन करेंगे तो, जिन स्थानों में मलेरिया का प्रकोप बहुधा अधिक हुआ करता है; वह स्थान भी इन परीक्षित उपायों से अवश्य निश्चय मलेरिया शून्य होसकता है। आशा एवं विश्वास है कि इस लेख के पाठक वर्ग इन उपायों को अपने काम में लाकर "मलेरिया ज्वर से' अपने दुष्प्राप्य मानव जीवन की रक्षा कर, हमारे परिश्रम को सार्थक करने की कृपा करेंगे—

(१) मच्छरों से अपनी रक्षा करने के लिये, अपने निवास स्थान से, मच्छरों को भगाना बहुत जरूरी है। अपना निवास स्थान ऊंचे जगह पर बनाना चाहिये। भर सक दुमंजिले पर सोना चाहिये। निवास स्थान ऐसी जगहों से दूर होना चाहिये—जहाँ, तालाब, गढ़ा, घास, फूस, झाड़ी

या धान के खेत और दल २ हों। सोने का स्थान साफ सुथरा और काफी हवादार होना चाहिये। अगर आपके सोने के कमरे मे अधिक मच्छर लगते हों, तो उसमे कई दिनों तक, सोने के दो एक घण्टे पहले, रात के समय या प्रतिदिन सुबह-शाम, घर के दरवाजों और खिड़कियों को बन्दकर के गूगल, लोहबान, नीम की पत्ती व हवन सामग्री, गाय के गोबर की चिपरियाँ जलाकर खूब धूआ किया जाय। गंधक का धुआ इस काम के लिये विशेष लाभदायक होता है। यह परोक्षित है। धुआ देने से पहले या उसी समय हवा कर (पंखे आदि से) मच्छरों को भगा देना चाहिये। कारण कि मच्छर प्राय: चारपाई, चौकी, के नीचे आलमारियों के कोने तथा अन्य अन्धकारके स्थानों में छिपे रहते हैं। इसलिये धूना आदि जलाते समय इनको अवश्य भगा देना चाहिये ताके मच्छर मर जायं या भाग जायं। सोने के कमरे में अधिक सामान आदि न रखकर, साफ सुथरा रखना चाहिये!

(२) मसहरियों के अन्दर सोने से भी मच्छड़ों से रक्षा हो सकती है। लेकिन सभी लोग मशहरी नहीं लगा सकते, इसलिये कपड़े से बदन ओढ़ कर सोना चाहिये। कपूर, मेन्थल आदि की गन्ध से भी मच्छर भागते हैं, इससे इनका व्यवहार करना चाहिये। यूकेलिपटस लेमन आयल, मरहम एमोनिया, लाइमचूस और कड़वा तेल (सरसों का तेल) आदि के लगाने से मच्छर नहीं काटते। इसलिये इनमें से कोई तेल हाथ, पाँव, खुले बदन व कपाल में मलकर सोना चाहिए। गरीबों के लिय मच्छरों के देश से बचने के लिये सरसों का तेल ही विशेष उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसलिये सरसों का तेल मालिश कर सोने से मच्छर नहीं काट सकते।

(३) मलेरिया ज्वर के प्रसारक मच्छर नाली, गढ़े, घास पात आदि पूर्व वर्णित स्थानों में ही अण्डे देते हैं; अत: इनकी बाढ़ रोकने के लिये घर तथा गाँव के आस पास के गढ़ों को पाट देना चाहिये, जिनमें बरसा का गन्दा जल भरा रहता हो। कूड़ा करकट, गन्दी वस्तु व टूटे फूटे वर्त्तनों को घर से दूर फेंकना चाहिये। घर के पास के गढ़े व मोरियों के पानी के बहाव का समुचित प्रबन्ध करते रहना चाहिये। मकान की मोरियां को स्वच्छ अवस्था में रखने के लिये प्रति दिन धुलवाते रहना चाहिए, ताकि पानी आदि गन्दी वस्तुएँ जमकर दुर्गन्ध न पैदा कर सकें। सोने के कमरे के कोनों में फटे पुराने कपड़े, टूटे फूटे वर्त्तन अण्ट-सण्ट चीजें न रखनी चाहिये। कारण कि दिन भर मच्छर इनमें ही लुके रहते हैं। यदि मकान के आस पास के गढ़ों का गन्दा पानी निकाल न सकें, या उसका पाटना सम्भव न हो, तो उसके सेवार घास, पात आदि कूड़ा करकट, गन्दे पदार्थों को साफ कर उसमें दो एक बोतल किरासन तेल इस हिसाब (प्रकार) से छिड़कना चाहिये कि तेल का पतली तह सब जगह पानी पर (पानी के ऊपर) हो जाय, जिससे मलेरिया के मच्छरों के अण्डे बच्चे मर जायँ।

जिन तालाबों का जल नहाने, धोने, तथा पीने के काम में आता हो, उनके आस पास के उत्पन्न वाले पौधों की घनी छाया में भी मलेरिया के

मच्छर अन्डे दिया करते हैं। इन स्थानों को भी साफ़ करते रहना चाहिये।

(४) ऐसा उपाय करना चाहिये कि मलेरिया का विष शरीर में प्रवेश करने पर भी मलेरिया ज्वर के लक्षण प्रकट न होने पावें; और भीतर ही भीतर मलेरिया के कीटाणु नष्ट होजायं। मलेरिया के विष को नष्ट करने के लिये मलेरिया के प्रकोप काल में (जहाँ मलेरिया के कीटाणुओं को नष्ट करने का पूरा प्रबन्ध न हो सके) प्रति दिन ४रत्ती या सप्ताह में २८ रत्ती कुनीन अवस्थानुसार अवश्य सेवन करना चाहिये। कारण कि मलेरिया के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिये कुनीन एक अमोघ औषधि है। यह एक कार के पौधे के छाल से तैयार किया जाता है—जिसे सिनकोना कहते हैं। कुनोन इसी पौधे का सत है। मलेरिया ज्वर के रोगी को कुनीन अवश्य खिलाना चाहिये। जहाँ या जिसे यह न मिल सके उसे प्रति दिन (मलेरिया के प्रकोप काल में) हाथ मुँह धोने के पश्चात, तुलसी की पत्ती, गोल मिर्च और गूमा की पत्ती मिश्रित कर अवश्य खाना चाहिये। पथ्य से रहना चाहिये. कोष्ठबद्धता न होने पावे, ऐसा हमेशा ख्याल रखना चाहिए कोई विरेचक औषधि खाकर पेट साफ़ करते रहना चाहिये।

मतलब यह कि मलेरिया ज्वर पैदा होनेवाले कारणों को दूर करना ही मलेरिया से बचने का प्रधान उपाय है।

मलेरिया ज्वर की चिकित्सा विधि--

मलेरिया ज्वर (शीत ज्वर) की चिकित्सा दो तरह से करना चाहियेः—

१ ज्वर होने पर (ज्वर चढ़े रहने की अवस्था में)
२ जिस दिन ज्वर की बारी हो (जिस दिन रोगी ज्वर से खाली हो) ज्वर न चढ़ा हो।

ज्वर चढ़े रहने की अवस्था में शीत नाशक उपाय

अगर भोजनोपरान्त ज्वर आजाय या जी मिचलाता हो, या ज्वर आने के पूर्व लक्षण दृष्टि-गोचर हों तो किसी वमन लाने वाली दवा से वमन करा देनी चाहिये। जाड़ा लगने पर काफ़ी तौर से गर्म कपड़ा ओढ़ा देना चाहिये और हवा न हो ऐसे स्थान में रोगी को बैठा कर (अगर रोगी उचित अवस्था में हो) काली अगर का धूप दो, या कायस्थादि धूप दो या कायस्थादि लेप और कायस्थादि तेल लगाओ। गरम २ चाय पिलाओ इस उपाय सेजाड़ा कम हो जाता है।

प्यास नाशक उपाय—

बड़ की जटा, महुआ, धान की खील, कूठ मीठा, कमलगट्टे को गिरी इनको समान भाग लेकर चूर्ण बना मधु में मिला कर गोली बनाओ। इन गोलियों को मुख में रखने से प्यास शान्त होती है।

महुए की जगह आमला डालना ठीक है। प्यास नाश करने के लिये यह नुसखा उत्तम अनुभूत प्रयोग है। या "षडङ्ग पानीय" शास्त्रा-नुसार बना कर पिलाने से प्यास, दाह और ज्वर शान्त होजाता है।

वमन नाशक उपाय—

पीपल की जड़ पर लगे सूखे छाल को जला कर राख कर लो और इसी समय इस राख को

पानी में भिगो दो। उसी पानी को छान कर थोड़ा थोड़ा रोगी को पिलाओ।

या बरफ़ का टुकड़ा और आलूबुखारा रोगी के मुंह में रख कर चुसाओ।

या निम्न लिखित मिश्रण बना कर रोगी को पिलाओ इससे वमन और प्यास निश्चय दूर होंगी।

सोडा बाइ कार्ब (Soda bi carb)
एसिड टारटरिक (Acid tartaric)
शर्बत ऑरेंज (Syrup orange) या निबू यानी—

शीसे के ग्लास में पानी व शर्बत घोलकर तैयार करने के बाद उपरोक्त दोनों औषधियों का मिश्रण मिलाकर झाग उठते ही रोगी को प्रति १-२ घंटे पर पिलाओ।

या शास्त्रोक्त एलादि चूर्ण शहद और खाँड के साथ चटाओ। इससे भी असाध्य वमन नाश हो जाता है। ऊपर के प्राय: सभी प्रयोग परीक्षित हैं।

नोट—दाह, हिचकी, अरुचि, श्वास और सिरदर्द आदि ज्वरजनित उपद्रवों को कम करने के लिये यानी उपद्रवों के शमनार्थ शास्त्रोक्त विधि से चिकित्सा करनी चाहिये।

ज्वर की गर्मी को कम करने के लिये साधारणत: निम्नलिखित उपचार करना आवश्यक है।

(१) औषधि उपचार—औषधि का प्रयोग कर पसीना निकालने या कोष्टबद्धता रहने पर दस्त कराने की चेष्टा करनी चाहिये।

(२) शीतोपचार—मस्तिष्क (शिर) पर ठण्डी औषधियों का लेप—जैसे गुल रोगन, मकोय का रस, सिरका, ऊख या गुलाब का अर्क मिश्रित पट्टी रखना।

या सिरपर आइस बैग (बर्फ की थैली) या इउडीकोलन माथे पर रखना, या सर्द जल से वस्ति प्रयोग या सर्द गर्म जल से एसपोंजिंग करना। इन सब बाहरी उपायों से बिना किसी कष्ट के ज्वर तत्काल कम हो जाता है।

औषधि उपचार—पसीना निकालने के लिये गरम गरम चाय या निवाया जल मिश्री चूर्ण मिलाकर पिलाने से पसीना आने लगता है। पसीना आने की अवस्था में रोगी को हवा से बचाना चाहिये। अफारा देने से भी पसीना आने लगता है। एन्टी फेबरिन, एन्टी पायरिन, फिनासटीन और एस्परीन आदि डाक्टरी एलोपैथिक औषधियों के प्रयोग से भी पसीना आकर ज्वर कम हो जाता है। परन्तु इनका बुरा प्रभाव हृदय पर पड़ता है कारण कि ये औषधियाँ हृदय अवसादक हैं। इनके प्रयोग से हृदय (Heart) कमजोर हो जाता है। कभी २ इनके प्रयोग से हार्टफेल होने की नौबत पहुंच जाती है। इसलिये इन औषधियों को बहुत आवश्यकता पड़ने पर यानी जब रोगी की शारीरिक गर्मी १०५-१०६ तक पहुँच जाय तब सावधानी के साथ रोगी के बलानुसार सिर्फ १-२ मात्रा सेवन करना चाहिए। कारण कि ये औषधियाँ तत्काल पसीना लाकर रोगी के ताप और शारीरिक कष्ट को कुछ काल के लिये कम कर देती हैं।

निम्नलिखित देशी औषधियां भी ज्वर को तत्काल कम करने की क्षमता रखती हैं। इन औषधियों के प्रयोग से किसी प्रकार की हानि की

सम्भावना नहीं है। अगर ज्वर की गरमी दिमाग के तरफ़ बढ़ गई हो, ज्वर का ताप बढ़ता जारहा हो और ज्वर का वेग अत्यन्त तीव्र हो तो—

(१) असली लोबान के सूक्ष्म चूर्ण को २ रत्ती की मात्रा से रोगी को जल के साथ खिलाओ। इसके प्रयोग से ज्वर की गर्मी तत्काल कम होनी प्रारम्भ हो जाती है। आध २ घंटे पर १-२ मात्रा देने से चढ़ा हुआ ज्वर उतर जाता है; रोगीको चैन आ जाता है।

(२) आध पाव सौंफ लेकर, घी के साथ कढ़ाई में भूजने के पश्चात् दूनी चीनी मिलाकर एक साफ़ कपड़े में बांध कर, ऊपर से मिट्टी का लेप लगाकर सुखाने के पश्चात; भाड़ का बहुत गरम बालू में दाब दो। दो घन्टे बाद निकाल कर ठंडा होने के बाद पोटली खोल कर दवा को बारीक पीस लो। इसमें से तोले २ भर दवा घण्टे में ३-४ बार गरम जल से देने से ज्वर अवश्य कम हो जाता है।

(३) आक की छाल को सुखा कर कूट पीस कर चूर्ण बनाने के बाद, दो २ रत्ती चूर्ण गुड़ के साथ खिलाने से ज्वर कम हो जाता है।

(४) वंश लोचन, छोटी लाची की दाना, सौंफ, तुरंजबीन इनको सूक्ष्म चूर्ण बना पानी के साथ पीस कर गोली बना लो। ३-४ गोली (घंटे में) ताजा पानी के साथ देने से ज्वर शीघ्र कम हो जाता है।

नोट—उपरोक्त औषधियों को देने से यानी प्रयोग से जब ज्वर कम हो जाय यानी शारीरिक गर्मी (Temperature) १०० या ९९ तक रह जाय, तब इनका देना बन्द कर देना चाहिये। जहाँ तक हो, ज्वर के प्रारम्भ में किसी प्रकार की औषधियों का प्रयोग नहीं करना चाहिये। यह उपाय सिर्फ जाड़ा लग कर चढ़ने वाले ज्वरों में करना चाहिये। जो ज्वर स्वभाव से अपनी अवधि तक बने रहते हैं। जैसे सतत, संतत और टाइफायड या मोती ज्वर आदि—इनको ज्वर दस्ती इस प्रकार के प्रयोग से (औषधि उपचार से) उतारना ठीक नहीं है। कारण कि, प्रथम इन औषधियों का प्रभाव मिटते ही, ज्वर फिर पूरे वेग से चढ़ जाता है। दूसरे और भी कई प्रकार के खतरों की सम्भावना रहती है। जाड़े के ज्वरों (intermittent Fever) में जो अपहीं समय पर उतरते हैं; इनको समय से पहले (इन औषधियों के प्रयोग से) उतारने में कोई हर्ज नहीं है। इस तरह पर उतरा हुआ ज्वर, फिर अपने समय पर ही चढ़ता है। इसलिये इस ज्वर के उतर जाने के पश्चात शीघ्र ही ज्वर रोकने वाली औषधियों का प्रयोग कर ज्वर रोक देना चाहिये। इस उपाय से मैंने हजारों रोगियों को प्रायः एक ही पारी में आरोग्य लाभ कराया है। यह याद रखनी चाहिये कि ज्वर को कम करने वाली औषधियों से ज्वर रुक नहीं सकता है।

(५) जब ज्वर कमी पर न हो व रोगी के पेट में मल जमा हो तो आप इस प्रयोग को काम में लावें। लीकर एमोनिया एसिटेटिस १ ड्राम नाइट्रिक इथर २० बूंद पोटास ऑफ साइट्रेस १५ ग्रेन मैग सल्फ (एपसम साल्ट) ४ ड्राम कैम्फर वाटर १ औंस यह एक मात्रा है। इनका मिश्रण तीन घन्टे पर देते रहना चाहिये, जब तक १ दो दस्त

और स्वेद आकर ज्वर कम न हो जाय।

(६) लोहासव १ तोला, अर्क सौंफ १ तो० शुद्ध नौसादर १ रत्ती मात्रा २ तो०। इनका मिश्रण चढ़े हुए ज्वर में देने से ज्वर तत्काल कम हो जाता है।

(७ तुखम् कासनी १। तोला, तुख्म कुलफा ७ माशा, पानी १ पाव। जलमें दोनों औषधियों को भिगोकर कुछ देर तक रख देना चाहिये। फिर मल छान कर, १॥-२ छंटाक की १ वजन में तीन २ घंटे बाद देना चाहिये।

नोट—जब स्वेद आकर ज्वर कम हो जाय, तब इन औषधियों का देना बन्द कर देना चाहिये। इस अवस्था में इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि, रोगी को हवा न लग सके। अगर रोगी के पेट में मल जमा हो गया हो तो, हलका विरेचन देकर पेट साफ कर देना चाहिये।

कोष्ठवद्धता की अवस्था में।

इस अवस्था में रेंड़ी का तैल, कैस्टर आयल (Castor oil) दो तीन तोला तक पिलाकर दस्त आसानी से कराया जा सकता है अथवा अवस्थानुसार काला दाना घी में भून कर थोड़ा सौंठ का चूर्ण मिला कर गर्म जल के साथ फंका देने से भी ३-४ दस्त आकर पेट साफ हो जाता है। पंच सकार चूर्ण से भी काम लिया जा सकता है। निशोथ (तुरबुद सुफैद) का चूर्ण शहद में मिला कर चटाने से पेट साफ होकर विषम ज्वर (शीत ज्वर) निश्चय नाश हो जाता है। निशोथ के विषय में, वैद्य जीवन के कर्त्ता लोलिम्बराज महाशय अपनी स्त्री से कहते हैं।

यो भजे त्समधु श्यामाँ, हे हेम कलश स्तनि
विषमेषु व्यथास्तस्य न भवन्ति कदाचन

अर्थात—हे सोने के घड़ों के समान स्तनों वाली जो शहद के साथ निशोथ या पीपल के चूर्ण को चाटता है (अथवा जो कामी पुरुष शराब और सोलह वर्ष की स्त्री का सेवन करता है) उसे विषम ज्वर की तकलीफ नहीं होती। ज्वर की अवस्था में "ज्वर मुरारी या ज्वर केशरी" योग्य अनुपान के साथ (रोगी के दोषानुसार) प्रयोग करने से पेट साफ होकर ज्वर रुक जाता है।

नोट—विरेचक औषधि कमजोर रोगी को न देना चाहिये। रोगी के बल दोष, काल और अवस्था आदि का अनुमान कर, विरेचक औषधियों का प्रयोग करना चाहिये।

जब पेट साफ हो जाय और ज्वर उतर जाय तब ज्वर रोकने वाली औषधियों का प्रयोग करना चाहिये। डाक्टरी में मलेरिया ज्वर रोकने की सब से अच्छी दवा कुनैन या, सिनकोना फैब्री फ्यूज है। परीक्षा कर देखा गया है कि मलेरिया ज्वर के कीटाणु जो रक्त में रहते हैं; वे कुनेन से मर जाते हैं। इस कारण मलेरिया ज्वर को आराम करने में कुनैन का व्यवहार अधिक किया जाता है। अगर मलेरिया ज्वर का रोगी, ज्वर उतर जाने के बाद, और ज्वर चढ़ने से पहले; उपयुक्त मात्रा में नियमित रूप से कुनैन का व्यवहार करे तो, इसमें सन्देह नहीं कि मलेरिया ज्वर निश्चय दूर हो जाय। इस लिये, मलेरिया ज्वर को आराम करने के लिये, मलेरिया ज्वर के रोगी को, कुनैन अवश्य प्रयोग करना चाहिये।

कुनैन के व्यवहार की विधि ।

पेट साफ होजाने के बाद, शारीरिक गर्मी (टेम्परेचर) ९८'९८॥' डिग्री होने पर, सलफेट, आफ कुनैन २ या ३ रत्ती की मात्रा से, तीन २ घन्टे में, दूसरी बारी आने तक देना चाहिये। १५'२० ग्रेन कुनैन ज्वर चढ़ने के समय से पहले पेट में पहुँच जाने से अच्छा असर होता है। मतलब कि ज्वर चढ़ने के समय से पहले ३-४ मात्रा कुनैन या कुनैन मिकश्चर प्रति तीन घन्टे पर रोगी को खिलाना चाहिये। अगर कुनैन या कुनैन मिश्रित औषधि खिलाने २ रोगी को ज्वर आजाय तो कुनैन देना बन्द कर देना चाहिये। अगर ज्वर पुराना होजाय तो कुनैन अधिक मात्रा में अधिक दिनों तक खिलाना चाहिये। ज्वर जैसे २ घटता जाय, तैसे २ कुनैन की मात्रा कम करते जाना चाहिये। कुनैन के अभाव में सिनकोना या, सिनकोना मिश्रित औषधियों से काम लिया जा सकता है। सिनकोना भी कुनैन ही के समान गुणदायक है। निम्न लिखित डाक्टरी और आयुर्वेदीय अनुभूत औषधियों के प्रयोग से मलेरिया ज्वर निश्चय दूर होजाता है।

(१) सलफेट औफ कुनैन ३ रत्ती
सत्व इमली (टार टारिफक एसिड १० „
मिश्री १ औंस

थोड़े पानी में मिश्री घोलकर सत्व इमली और कुनैन घोल दो --यह १ मात्रा दवा है। ऐसी ३-४ मात्रा ज्वर चढ़ने से पहले मिला देने से ज्वर निश्चय नाश हो जाता है।

(२) सलफेट औफ कुनैन Sulphet quinine ४०ग्रेन
एसिड सलफ्यूरिक डिल Acid sulphuric dill ३ ड्राम
टिंचर नैक्स वौमिका Tincture nuxvomica ३० बूंद
स्प्रिट क्लोरो फार्म Sprit chlorofarm २० बूँद
एकवा कैम्फर Aqua camqhor १॥ औंस
टिंचर कार्डम को Tincture cardom co १० बूंद

कुनैन को सल फ्यूरिक एसिड में मिलाने के पश्चात बाकी औषधियों को मिला दो। मात्रा १ से २ ड्राम, अवस्थानसार बुखार चढने से पहले प्रति ५ घन्टे पर १ मात्रा दवा १ औंस पानी में मिलाकर पिला दो।

(३) शुद्ध फिटकरी १२ ड्राम, एसिड आरसेनिक सूखो १२ ग्रेन, पाउडर कैपसिकम ३६ ग्रेन सब को मिला कर गोंदका पानी देकर १५४ गोली बनाओ। प्रति ४ घन्टे पर (बुखार चढने से पहले ३-४ मात्रा सर्द पानी के साथ खिलाओ !

(४) सलफेट औफ कुनैन, ५० ग्रेन, सोडा वाई कार्ब ४० ग्रेन, शुद्ध फिटकरी ५० ग्रेन, चूर्ण चिरायता १ तो०, चूर्ण करंज १ तो०, सब को मिला कर गोंद का पानी दो। बड़े मटर बराबर गोली बनाओ। बुखार चढने से पहले प्रति ३ घंटे पर दो गोली ताजा पानी के साथ खिलाओ।

(५) सलफेट औफ कुनैन १६ ग्रेन, सलफ्यूरिक एसिड डिल ४० बूंद. सीरप औरेंज ४ ड्राम पानी मिलाकर (कुनैन को एसिड में जलाने के पश्चात) ४ औंस दवा तैयार करो। प्रति ३ घंटे एक मात्रा देने से ज्वर की बारी रुक जाती है।

(६) सलफेट औफ कुनैन Sulphet of quinine ४८ ग्रेन

सलफ्यूरिक एसिड डिल Sulphuric Acid dil ५ ड्राम

सलफेट औफ आयरन Sulphet of Iron ३२ ग्रेन

स्प्रिट रैकटी फाइड Sprit Racti Fied ४ड्राम

मैग सल्फ Mag Sulph ५ औंस

लिकर आरसेनिक Liqre Arcenic ३२ बून्द

टिंचर कार्डम को Tincture Cardom Co. २ ड्राम

डिस्टल्ड वाटर Dist illed water २३ औंस

सलफेट औफ आयरन को खूब खरल में घोट कर कपड़े में छान बोतल में रक्खो, कुनैन को एसिड में गलाकर मिलादो. मैग सल्फ को घोट छान कर बोतल में डाल दो। फिर बाकी तीनों दवा स्प्रिट, लिकर आरसेनिक और टिंचर कार्डम को० मिलाकर पानी भर दो। मात्रा २॥ तो० नवयुवक को, १। तो० कम उम्र वाले को, ½ तो० बच्चेको अवस्थानुसार। दिनमें ३-४ बार पिलाओ इससे नित्य शीत ज्वर, तिजारी, चौथिया, प्लीहा, या यकृत संयुक्त ज्वर इत्यादि निश्चय दूर होजाते हैं। मलेरिया से सताये प्लीहा या तिल्ली के मरीज इससे विशेष लाभ उठा सकते हैं।

(७) सलफेट औफ कुनैन १ ड्राम, पाडोफिलीन ५ ग्रेन, सुगर मिल्क १४ ग्रेन, एकस्ट्रैक्ट बेलडोना १० ग्रेन, एक्स्ट्रैक्ट एलोज ६० ग्रेन सबको मिला कर चाक पाउडर के संयोग से ६० गोली बनाइये। दिन रात में ३ बार, एक एक गोली ताजे पानी के साथ। इसके प्रयोग से मलेरिया ज्वर यकृत विकार, प्लीहा आदि मलेरिया जन्य रोग नाश होते हैं।

नोट—नीचे लिखे ३ अवस्थाओं में मलेरिया ज्वर के रोगी को कुनैन नहीं देना चाहिये। १ पाकस्थली के उत्तेजना के कारण उलटी, हिचकी अथवा आँतों की उत्तेजना से उदरामय या अतिसार होने पर, २—सिर दर्द, कान दर्द, कान की भनभनाहट होने पर, ३—कष्टदायक सिरदर्द की अवस्था में। इन सब उपद्रवों के रहते कुनैन सेवन करने से इन सब विकारों में और वृद्धि होती है। इन सब उपद्रवों के शमनार्थ इसी लेख के वमन नाशक नुसखों में से शर्बत औरेंज, सोडा बाई कार्ब और सत्व इमली वाला प्रयोग रोगी को पिलाना चाहिए। इससे कुनैन से होने वाले उपरोक्त विकारों में लाभ पहुँचता है हाइड्रोसैनिक एसिड डिल १०-१५ बूंद आधे छटाँक जल में मिलाकर पिलाने से भी उपरोक्त सभी प्रकार के उपद्रव शान्त हो जाते हैं।

(८) गिलोय, चिरायता, शाहतरा, कंट करंज, मोथा, कुटकी और अफसनतीन सम मात्रामें लेकर १० छं० पानी में औटा कर क्वाथ तैयार कीजिये। आध पाव जल बाकी रहने पर छानकर शुद्ध शीशीमें रखिये। फिर इस दवा में से १ औंस लेकर उसमें लिकर एमोनियाएसि टेटिस १ ड्राम मिलाकर प्रति ३ घण्टे बाद, रोगी को पिलाइये—इससे चढ़ा हुआ ज्वर निश्चय छूट जाता है।

(९)		
	टिंचर एकोनाइट	२० बूंद
	Anit एन्टी पायरिन	२० ग्रेन
	सिरप औरेन्ज	४ ड्राम
	डिस्टिल्ड वाटर	४ औंस

सब को मिलाकर प्रति ३ घंटे पर १ औंस नव जवान रोगी को पिलाइये इस मिश्रण से चढ़ा

हुआ सतत, संतत ज्वर उतर जाता है। ज्वर उतरने के पश्चात किसी रोकनेवाली औषधि का प्रयोग कर ज्वर रोक दें। इस प्रयोग से भय नक मलेरिया अन्य सिरदर्द नाश हो जाता हैं। अगर इस औषधि के प्रयोग काल में रोगी कमजोरी मालूम करे तो आप प्रतिदिन प्रातःकाल १ हलकी मात्रा साधारण मकरध्वज की वेलपत्र रस और शहद या उचित अनुपान के साथ देते रहें।

(१०) सनाय की पत्ती, गिलोय, शहतरा, ततर परवल, नीमत्वक, छिलका पीली हरड़, धनिया व कुटकी प्रत्येक को ४ माशा लेकर सब को अध कुट कर आधा सेर जल में काढ़ा बनाओ, जब १० तो० पानी रह जाय तब छानकर ३ हिस्सा कीजिये। १ हिस्सा उसी समय पिलाये, बाकी २ हिस्सा प्रति २ घंटे पर थोड़ा गरम कर पिलाते रहिये। काढ़े को पिलाने से सतत, संतत, और सब तरह का, विषम ज्वर निश्चय छूट जाता है। अगर रोगी को प्यास मामूल से अधिक हो तो, लाल चन्दन ४माशा काढ़ा में मिलाइये, खांसी हो तो कटेरी का जड़ ४माशा मिलाइये, और दस्त अधिक होता हो तो सनाय की पत्ती निकाल दें।

इस काथ के सेवन काल में तीव्र ज्वर की अवस्था में, "हिंगुलेश्वर" रस प्रति दिन २-३ मात्रा सेवन करते रहना चाहिये।

पटोल पत्र, देवदार, इन्द्र जौ, छिलका त्रिफला, मोथा, मुनक्का-मुलहटी, गिलोय और बाँस की पत्ती इनको सम भाग लेकर इनका काढ़ा बनाओ, और शीतल होने पर शहद मिला कर पिलाओ। इस काढ़े पिलाने से सब तरह का नया ज्वर विषम ज्वर और मलेरिया ज्वर निश्चय नाश हो जाता है यह प्रयोग मेरा कई बार का परीक्षित है।

त्रायमान, सारिवा, जवासा और कुटकी इनका काढ़ा सन्तत ज्वर में वातादि दोषों के निवृति के लिये विशेष लाभदायक है।

जय मंगल रस-भूने हुए जीरे के चूर्ण व मधु के साथ प्रयोग करने से, कभी २ आश्चर्य्यजनक लाभ होता है। इस रस से सब तरह का ज्वर निश्चय छूट जाता है। इस प्रयोग से मैंने कई बार सन्तत ज्वर (Remitent Fever) के कितनेक रोगियों को आराम किया हैं।

नोट—यह ज्वर बड़ा खतरनाक होता है। इसमें धैर्य्य धर कर रोगी की चिकित्सा करनी चाहिये। कारण कि आपके जरा सी असावधानी से सन्निपात हो सकता है। ज्वरको जबर्दस्ती उतारने की चेष्टा न करनी चाहिये। कारण कि यह ज्वर योग्य चिकित्सा होने से स्वयं अपने आप अपने समयपर उतर जाता है। आप चिकित्सा करके सिर्फ किसी प्रकार का उपद्रव न पैदा होने दें। इसमें जब तक ज्वर न उतर जाय, तबतक लंघन कराना चाहिये सिर्फ पतला साबू दाना या मूंग का यूष आवश्यकता महसूस होने पर दे सकते हैं—दवा और पथ्य खूब सोच समझ कर देना चाहिये।

मुनक्का के बीज गोल मिर्च और निमक के साथ पका कर रोगी को खिलाना चाहिये, मुनक्के के साथ सत्व गिलोय भी दे सकते हैं। रोगी को अनार अंगूर दे सकते हैं।

तीव्र ज्वर का उपचार—

जब मलेरिया ज्वर के रोगियों को ज्वर बहुत अधिक हो जाय, यानी ज्वर १०४-१०५ या १०६

डिग्री तक होजाय। ऐसा मलेरिया ज्वर में होता है तब आप शीघ्र पूर्व वर्णित शीतोपचार कर ज्वर को अवश्य कम करने की चेष्टा करें—कारण कि इस अवस्था के पहुँचने से रोगियों की हालत बिगड़ने लगती है। कुछ अमीर मजबूत व गर्म मिजाज रोगी १०३ डिग्री ज्वर होजाने पर ही बेचैन होने लगते हैं।

अगर रोगी को तीव्र ज्वर (१०५-१०६ तक) हो जाय व कुछ उपचार न कर रोगी को इसी अवस्था में कुछ घंटे तक छोड़ दिया जाय, तब इस तीव्र ज्वर के प्रकोपसे खूनकी गर्मी दिमागकी तरफ बढ़ कर सरसाम या डिलेरियम का रूप धारण करता है। रोगी का अंग प्रत्यंग मारे गर्मीके जलने लगता है, रोगी के हृदय, मस्तिष्क और फुफ्फुस पर इस ज्वर का बड़ा बुरा असर होता है जिससे रोगी मर तक जाते हैं। इसलिये जब ज्वर १०३ डिग्री से ऊपर होजाय तब शीघ्र ज्वर कम करने के लिये शीतोपचार प्रारम्भ कर देना चाहिये। रोगी के सिर पर अगर बाल हों तो कटवा देना चाहिये व रोगी के सिर पर रबड़ की थैली (Ise bag) रखना चाहिये यदि थैला समय पर उपलब्ध न हो सके तो, किसी साफ कपड़े में बर्फ के टुकड़ों को बाँध कर रोगीके सर पर रखना चाहिये। अगर यह भी न मिल सके तो "इउडी-कोलन" बराबर भाग पानी मिलाकर कपड़े को पट्टी तर कर सिर पर रखना चाहिये। पट्टी थोड़े २ समय पर बराबर बदलते रहना चाहिये ताकि सूखने न पावे। सिर का ईख, तेल गुल, या तिल, और हरीमकोय का स्वरस एक में मिलाकर इसमें कपड़े की पट्टी भिगोकर रोगी के सिर पर रखना चाहिये। गर्म पानी में खद्दर या तौलिया भिगोकर रोगी के प्रत्येक अंग को पोंछना चाहिये यह क्रिया आध घण्टे तक करते रहने से ज्वर तुरन्त कम हो जाता है परन्तु यह क्रिया कमर से नीचे व कमर से ऊपर दो बार में समाप्त करनी चाहिये एक ही बार सम्पूर्ण शरीर नहीं पोंछना (धोना) चाहिये। यानी पारा पारी पर लगातार हो। कभी २ शीतल जल की एनिमा देने से भी ज्वर का बढ़ना रुक कर ज्वर धीरे २ कम होने लगता है। जल चिकित्सा के मतानुसार कटि स्नान व ठण्डे चादर के प्रयोग से भी ज्वर कम होकर उतर जाता है। जब उपरोक्त शीतोपचार के प्रयोगसे ज्वर कम होकर १०१ डिग्री तक आ जाय, तब आप शीतोपचार की प्रायः सभी क्रियाओं को बन्द कर दें। इस क्रिया का प्रयोग करते समय खूब सावधानी रखें, रोगी को हवा न लगे सिर्फ धोने वाली क्रिया के समय बदन धोने के पश्चात सूखे कपड़े से शरीर पोंछकर रोगी को कपड़ा उढ़ा दें।

कुनैन से हानि—

किनीन मलेरिया ज्वर की परमोत्तम दवा है, कारण कि इसके सेवन से मलेरिया ज्वर के कीड़े नष्ट हो जाते हैं। कुनैन के प्रभाव से बढ़ी हुई तिल्ली (Encargement of spltti) अपनी असली अवस्था में आ जाती है। कुनैन ताकत भी लाती है। जिन औरतों का मासिक धर्म साफ तौर से न होता हो, उनको कुनैन देने से मासिक धर्म खुल कर होने लगता है। चढ़े हुए ज्वर की तेज़ी में किनीन का प्रयोग बिलकुल व्यर्थ होता है। अल्प मात्रा में कुनैन देने से बल बढ़ता

है, परन्तु कुनैन के अधिक सेवन से कानों से सुनने की शक्ति कम हो जाती है। माथा भारी रहता है, सिर में भयानक दर्द होने लगता है, सिर भरा हुआ मालूम होता है, सिर में चक्कर आने लगता है, आँखों के सामने पतंगे से उड़ने लगते हैं कान में झाँ, झां, व सन सनाहट की आवाज होने लगती है। रोगी की श्रवण शक्ति कम हो जाती है, रोगी बहिरा हो जाता है। ओकारियाँ आतीहैं जी घबराता है। कुनैन की गर्मी से रोगी बेचैन हो जाता है। दृष्टि मंद हो जाती है। कुनैन के प्रयोग से कितने लोगों का हृदय कमजोर हो जाता है। आँख से सूझता तक नहीं है। बदन में लाल लाल चकत्ते, यानी पित्ती निकल आती है। यह बड़ा गर्म पदार्थ है, इसके प्रयोग में वीर्य्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। वीर्य्य पानी से पतला हो जाता है, जिससे शीघ्र पतन का रोग आ घेरता है" अगर कुनैन के प्रयोग से ये सब उपसर्ग उपस्थित हो जांय, तब कुनैन का प्रयोग शीघ्र बन्द कर देना चाहिये। इसके सेवन काल में गाय का शुद्ध दूध विशेष लाभदायक होता है।

कुनैन की कहानी।

यह उस समय की कहानी है, जब हिन्दोस्तान के हिन्दुओं का सौभाग्य सूर्य्य सदा के लिये अस्त हो चुका था, हिन्दुओं की भाग्य लक्ष्मी मुगल बादशाह शाहजहाँ के पैरों पर लोट रही थी। यहीं से सुदूर पश्चिम में दक्षिण अमेरिका के पीरू प्रान्त में हमारे शासकों का मगल मय राज्य स्थापित हो चुका था। यूरपियन राज्य की ओर से वहाँ का प्रबन्ध करने के लिये काउन्ट सिनकोन गवर्नर पद पर नियुक्त था। इसका अधीनस्थ कर्मचारी डानलुई कई जगहों का हाकिम था। जब यह अपने हलके की यात्रा कर रहा था, तब इसे मलेरिया ज्वर चढ़ आया, कारण कि पीरू जङ्गल प्रधान मलेरिया स्थान है। बेचारा डानलुई कई दिनों तक मेडिकलएड न मिलने के कारण ज्वर से पीड़ित रहा। उस समय आज सा दवा का सुचारु प्रबन्ध नहीं था। ग्रामीण जनता अपने हाकिम को मलेरिया से पीड़ित देख कर, एक जंगली पेड़ की छाल औटा कर, इसी पेड़ के छाल की लाल रंग की चूर्ण के साथ डानलुई साहब को पिलाया। कारण कि यहांके बसनेवाले भी जब इस प्रकारके ज्वरसे पीड़ित होते थे, तब इसी पेड़के छाल का प्रयोग करते थे। औषधि सेवनका परिणाम यह हुआ कि डानलुई साहब अति शीघ्र इस औषधि के प्रयोग से चंगे होगये। और गांव वालों की सलाह से वह औषधि कई दिनों तक सेवन करते रहे। जब इस औषधि के प्रयोग से डानलुइ निरोग होगये तब आपने उन पेड़ों को पहचान लिया, व बहुत सी छाल इस पेड़ की अपने साथ अपने सदर स्थान पर लाये, व बराबर इसे ज्वर के रोगियों पर इसे प्रयोग कर आश्चर्यजनक फल पाते रहे हैं। कुछ दिन बाद इस देश के गवर्नर काऊण्ट सिनकोन की धर्मपत्नी मलेरिया ज्वर से पीड़ित हुई, बहुत औषधोपचार करने पर भी सफलता नहीं मिली। जब डानलुई को अपने गवर्नर की पत्नी की अस्वस्थ्यता का पता लगा तब उसने इस पेड़ की छाल के चूर्ण से कुछ दिन तक बराबर प्रयोग करने के पश्चात् उनको निरोग कर पाया। गवर्नर काऊण्ट सिनकोन इस औषधि

सम्पादकीय

प्रिय पाठकगण !

इससे पूर्व कि मैं मलेरिया रोग पर अपने कुछ विचार प्रकट करूँ । अपने उन विद्वान् लेखक महोदयों के प्रति जिनमें कि कविराज डाक्टर वेदव्यासदत्त जी जालन्धर, पं० विश्वनाथ जी शास्त्री प्रिन्सिपल ललित हरि-कालेज (पीलीभीत), पं० दयाशङ्कर जी शर्मा (नोखा) शाहबाद, कविराज रामदास जी वशिष्ठ पीलीभीत, पं० चन्द्रशेखर जी पांडेय चन्द्रमणि इत्यादि के सहयोग एवं सहायता के लिये अति धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने कि मेरी प्रार्थना पर अपने अपने अमूल्य समय को हमारे इस पत्र के लिये दिया है । और मैं आशा करता हूँ कि वे सदैव इसी प्रकार जीवन सुधा को सुधा पान करा कर जीवनदान देते रहेंगे । —सम्पादक ।

मलेरिया (Malaria)

यह बहुत दूर तक बवा के रूप में फैलने वाला एक घातक रोग है, जो कि लगभग संसार के समस्त प्रदेशों में होता है । यह स्त्री-पुरुष इत्यादि सबको प्रायः समान रूप से होता है, परन्तु काले रङ्ग के आदमियों की निसबत गोरे मनुष्यों में अधिक देखा जाता है । प्रायः हरसाल औसतन १० लाख मृत्यु संख्या तक इस रोग से हो जाती है और कहीं कहीं पर तो कोई पानी देनेवाला भी नहीं मिलता या यों कहना चाहिये कि घर ही जगह जगह सफ़ाखाना बन जाते हैं इसलिये ऐसे सांघातिक रोग के विषय में ज्ञान प्राप्त करना और कराना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है । अतएव हम, मलेरिया क्या चीज़ है और वह किस तरह से फैलता है, और उससे किस तरह बचना चाहिये यही बताने की कोशिश करेंगे ।

के इस गुण पर आश्चर्यित हो, जब गवर्नर पद से युक्त हो यूरोप को लौटा तब अपने साथ इस पेड़ की बहुत सी छाल यूरोप को लेगया और वहाँ जाकर इस औषधि का प्रचार किया व डाक्टरों को दिखाया । डाक्टरों ने बहुत दिन के परिश्रम के बाद इस पेड़ की छाल से कुनेन तैयार किया, जो आज कल मलेरिया ज्वर की प्रधान औषधि कही व मानी जाती है । पहले पहले गवर्नर सिनकोन इस औषधि को यूरोप लेगया इसलिये इस पेड़ का नाम "सिनकोना" पड़ा । कुनेन इसी पेड़ (सिनकोना) की छाल का सत्व है । आजकल हमारे देश के सिक्कम व नीलगिरि पहाड़ पर सिनकोना के पेड़ लगाकर भारत सरकार कुनेन का व्यवसाय करती है । यही कुनेन की कहानी है ।

मलेरिया का इतिहास

पहले हकीमों ने इसका नाम मल (गन्दी) इरिया अर्थात् हवा यानी गन्दी हवा या जहरीली हवा रक्खा था, यूनानी हकीम बुकरात जो कि ईसामसीह के जन्म से ४६० वर्ष पहले हुए थे, इसी तरह हकीम कलसूस और हकीम जालीनूस ने भी मलेरियाई ज्वरों का वर्णन किया है। परन्तु इटली के किसान अक्सर जब वे दलदल वगैरह या कुओं या खाई खोदने जाते हैं तो इस ज्वर से पीड़ित हो जाते हैं। पहले इन मलेरिया कीड़ों का पता फ्रांस के डाक्टर लेवरन (Laveru) ने लगाया था और फिर उसने मेजर रास को यह काम सौंप दिया। फिर १८९५ ई० में मेजर रास ने इस बात को सिद्ध किया कि मलेरिया कीटाणुओं के जीवन चक्र को पूरा करने के लिये मनुष्य और मलेरिआई मच्छर दोनों आवश्यकीय हैं। परन्तु मनुष्य इस कीट का माध्यम है अर्थात् मनुष्य इसकी सन्तान को आश्रय देता है, मनुष्य में यह रक्ताणुओं में रहता है। मच्छर में यह आमाशयिक दीवार और लाला ग्रन्थियों में रहता है। जब कि वायुमण्डल गरम और आर्द्र हो तो इस मलेरिया के फैलने की विशेष सम्भावना बनी रहती है, गर्मी के दिनों में जितनी गर्मी की ज्यादती हो यदि उतनी वर्षा न हो तो बरसात पीछे जमीन की भाप के विशेष उठने से यह बहुत जोर से फैलता है। इसी कारण को चरक महर्षि ने स्पष्ट किया है कि "भूबाष्पान्मेघनिष्यन्दात् पाकादम्लाज्जलस्य च वर्षास्वग्निबलक्षीणे कुप्यन्ति पवनादयः" अर्थात् मेघ (बादल) के बरसने के बाद जमीन की भाप के उठने से और अनेक वनस्पतियों के सड़ने से, जल के अम्लपाक होने से मनुष्य की जठराग्नि कमजोर हो जाती है जिसके बाद वात पित्तादि दोष कुपित होकर पित्त को संचय करते हुए भावी मलेरिया ज्वर के विप्रकृष्ट कारण बनते हैं। क्योंकि मलेरिया हवा से भारी, दिन की अपेक्षा सवेरे और शाम को उष्णता के कम होनेसे अधिक बोझल हो जाता है इस कारण से यह नीचे स्थानों में ज्यादा रहता है, अतएव इन दिनों में नीचे के मकानों में रहनेवाले लोगों को इसका असर ज्यादातर होता है। और वहां २ मच्छर विशेष पाये जाते हैं। अस्तु जिन कारणोंसे मच्छर पैदा होते हैं वही कारण मलेरिया की वृद्धि का भी जानना चाहिये।

मच्छर—यद्यपि मच्छरोंकी अनेक जातियां होती हैं, परन्तु एनोफिलाज् जाति का मच्छर ही मलेरिया कीट का उत्पादक होता है। यह मच्छर एक विशेष प्रकार का होता है। इसके परों पर भूरे रंग के दाग होते हैं, जब यह कहीं बैठता है तो ऐसा मालूम पड़ता है कि मानों सिर के बल खड़ा है। इन मच्छरोंके जीवन की चार अवस्थायें होती हैं:—

(१) भ्रूणावस्था (२) शैशवावस्था (३) बाल्यावस्था (४) युवावस्था इन में से पहली तीन अवस्थायें तो पानी में बीतती हैं और चौथी अवस्था में जब कि इसके पंख निकल आते है तब ही यह उड़कर मनुष्य को काटता है। ये मच्छर अपने अन्डे प्रायः धान के खेतों, वर्षा के पानी भरे हुए छोटे २ जलाशयों, दरियाओं, गढ़ों में या किश्ती के नीचे वाले पानी में अर्थात् ठहरे हुए पानी

में अपने अन्डे पैदा करते हैं। इसी तरह से ये प्रकाश या या धूप से बहुत डरते हैं, इसीलिये दिन के समय में अन्धेरी कोठरी, या अलमारियों में अथवा घने वृक्षों की छाया में जहां कि तेज हवा न चल रही हो रहना पसन्द करते हैं। परन्तु रात शुरू होते ही ये दिन भर के भूखे खून चूसनेवाले अपने २ घरों से बाहर निकल कर मनुष्यों और पशुओं पर हमला करते हैं। प्रायः मच्छरी (मादा) ही ज्यादातर काटती है, उस समय यदि इसके मुख में मलेरिया के पराश्रित कीटाणु हों तो यह एक ही चक्कर में अनेक मनुष्यों के रक्त को विषाक्त कर देती है और इस तरह मलेरिया फैलाने में सहायता करती है। और क्योंकि मच्छर रात को काटते हैं इसलिये मलेरिया का प्रकोप प्रायः शाम को या रात को होता है।

मच्छर में मलेरिया कीटाणु का जीवन—

यद्यपि और भी कई प्रकार के मच्छर मनुष्य को काटते हैं और वे मनुष्य के रक्त को चूसते हैं परन्तु वे उसे हजम कर जाते हैं लेकिन एनोफिलीज जाति का मच्छर जब किसी मलेरिया रोगी के शरीर में काट कर खून चूसता है, तब उस खून के साथ ही रक्तकण जिनमें मलेरिया कीट परवरिश पाकर पुष्ट हुए होते हैं। मच्छर के पेट में जाकर ये रक्तकण फट कर आजाद होजाते हैं और अर्द्ध चन्द्राकृति को धारण करते हैं, वहाँ पर ये नर-मादा दो किस्म के होते हैं इनमें नर कीटाणु के ४ या ५ शाखें सी निकलती हैं इसकी ये शाखायें मादा से लिपटकर उसे गर्भवती बनाती हैं इस अवस्था में इस मादाको जाईगोटीस कहते हैं, फिर ये मादा कीटाणु मच्छर के पेट की दीवार से बाहर निकलकर उसके बाहरी सतह पर लग जाती है, फिर वहाँ बढ़ने लगती है इसके बाद इसके सैकड़ों टुकड़े होकर फट जाते हैं और ये टुकड़े मच्छर के दौराने खून द्वारा उसकी ला लारसवाही ग्रन्थियों में पहुँचकर डंक की नोक में जा पहुँचते हैं। फिर ये मच्छर जब किसी स्वस्थ मनुष्य को काटता है तो उसके रक्त में ये मलेरिया कीट प्रविष्ट होकर तीव्र ज्वर को उत्पन्न करते हैं ये कीटाणु मच्छर के शरीर में रहकर अपने पूर्ण विकास के लिये १०-१२ दिन का समय लेते हैं।

मलेरिया कीटाणु की मनुष्य शरीरमें उत्पत्ति और वृद्धि—

जब ये उपरोक्त मच्छर किसी स्वस्थ मनुष्य के शरीर में काटकर खून को चूसता है तो इसके मुंह से ये कीटाणु भी उसी समय निकलकर रक्त के लाल कणों में प्रविष्ट हो जाते हैं। और उसके एक अंश में रहकर धीरे २ रक्ताणु के पदार्थों से पुष्टि पाने लगता है। और फिर रक्त रंजककण को काले २ दानों में तबदील कर देता है। इस अवस्था में मलेरिया ग्रस्त रोगी के रक्त की परीक्षा करने पर इन सुर्ख दानों पर दो तीन काले २ दाग से नजर आते हैं और फिर यह स्याही बढ़ कर सम्पूर्ण रक्तकण को घेर लेती है इस अवस्था में रक्तकण का आकार बढ़ जाता है कभी २ पहले की अपेक्षा दूना होजाता है, और वे कीटाणु पहले तो एक दूसरे से मिले रहते हैं परन्तु कुछ समय के बाद रक्ताणु का गिलाफ फट कर ये मलेरिया कीटाणु लाल दानों के बाहर आजाते हैं, और वे

रक्त प्रवाह में स्वतन्त्रतापूर्वक घूमते हुये दूसरे रक्ताणु को ढूंढते हैं और उसमें प्रविष्ट होकर ये बड़े २ होजाते हैं और पूर्ण युवा होकर खून के सर्व दानों को स्याही में तबदील कर देते हैं फिर वह रक्त कण फटकर ये कीटाणु बाहर आकर दूसरे रक्त कणों पर हमला करते हैं। इस तरह से रक्त में रक्त कणों की कमी के कारण मलेरिया ग्रस्त मनुष्य के शरीर में सार्वाङ्गिक रक्ताल्पता विशेषतया देखी जाती है।

प्राय: देखा जाता है कि जब मलेरिया कीटाँड युवा होकर रक्तकण (सर्व दानों) में से फटते हैं उस समय बुखार का दौरा होता है। इस तरह से ये कीटान्ड सैकड़ों और हजारों की संख्या में उत्पन्न होकर ज्वर, स्नायुशूल रक्ताल्पता (एनिमिया) तिल्ली बढ़ जाना, आंव खून के दस्त, रक्तस्राव, फालिज आदि मलेरियाके उपद्रवों को उत्पन्न करते हैं।

मलेरिया का लक्षण और उसकी भिन्न अवस्थाओं का वर्णन—

ऊपर जो मलेरिया कीट मनुष्य रक्त में प्रविष्ट करते हैं वे तीन प्रकार के होते है। (१) प्लाज मोडियम मलेरिया Plasmodium Malaria (२) प्लाज़्मोडियम वाईवक्स Plasmodium Vivax (गोलीक्रिमि मलेरिया) (३) लेवेरीना मलेरिया Laverina Malaria साधारणत: इन सब को ही मलेरिया कीट कहते हैं। इन्हीं से मिलते जुलते कीट कुत्ते, मैंढक, चिमगादड़, चिड़िया के खून में भी पाये जाते हैं। उपरोक्त मलेरिया कीट एक दूसरे से भिन्न प्रकार के होते हैं। यह बात सिद्ध हो चुकी है कि एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर के रक्त में जिस प्रकार के मलेरिया कीट का विष क्षताविष्ट किया जावेगा उस मनुष्य को उसी किस्म का ज्वर पैदा होगा। और उसी जाति के मलेरिया कीट भी उस रक्त में अणुवीक्षण यंत्र से प्राप्त होंगे।

इन्टरमीटेन्ट फीवर अर्थात् जाड़े का बुखार—

संक्षेप से इस प्रकार के ज्वर के तीन भेद होते हैं। (१) अन्येद्युष्क (रोजाना का बुखार) या कोटीडियन् फीवर (Quotidian Fever) कहते हैं आयुर्वेदिक ग्रन्थों में लिखा है कि अन्येद्युष्कस्त्व होरात्र मेक काल प्रवर्तते, यह २४ घण्टे में एक बार आता है। (२) तृतीयक या टरशियन फीवर (Tertian Fever) तिजारी कहते हैं यह ४८ घण्टे पीछे हुआ करता है (३) चतुर्थक ज्वर (Quarton Feven) कार्टन फीवर कहते हैं, परन्तु यह बात ध्यान में रहे कि ज्यादातर अन्येद्युष्क ज्वर ही हुवा करता है, तृतीयक इससे भी कम और चतुर्थक दोनों से कम हुवा करता है।

(१) अन्येद्युष्क ज्वर—जहां पर वर्षा दक्षिण और पश्चिमीय वायु से मिलकर होती है वहाँ इस ज्वर का आधिक्य प्राय: जून से अक्टूबर तक रहता है और जहां उत्तर पूर्व की वायु चलती है वहां यह ज्वर अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर में भी होजाता है। और तृतीयक ज्वर दोपहर के लगभग और चातुर्थिक ज्वर दोपहर के बाद चढ़ा करता है। ये दो ज्वर प्राय: उन्हीं लोगों को हुआ करते हैं जिनको कि पहले आचुके हैं और कभी २ इन का विष कारण के न होनेपर बेकार शरीर में पड़ा रहता है और फिर वह समय आने पर कारण से

ज्वर को उत्पन्न कर देता है ।

उपरोक्त मलेरियाई ज्वरों के लक्षण तीन भागों में बाँटे जासकते हैं ।

(१) शीतावस्था (२) उष्णावस्था (३) स्वेदावस्था ।

(१) शीतावस्था—प्रायः सर्दी पीठ की तरफ से लगनी आरम्भ होती है और फिर धीरे २ तमाम शरीर में फैल जाती है, और कभी एकदम ही जाड़ा बहुत जोर से लगने लगता है, जाड़े के अधिक लगने से, शरीर का कांपना, दांतों का बजना, जिह्वा भीगी सी और फीकी. भूख में कमी, प्यास अधिक, आमाशय पर दर्द, जी मिचलाना, वमन, सिर में दर्द, हाथ पैरों में दर्द और ऐंठन ये लक्षण प्रकट होते हैं । शरीर में मलेरिया जहर के असर के कारण हृदय की गति सुस्त और रक्त परिभ्रमण भी धीरे २ होने लगता है, और कभी २ वाज़े भीतरी अंगों में रक्त इकट्ठा होजाता है । जैसे कि जब दिमाग के अन्दर खून इकट्ठा हो जाता है, तब बीमार को गफलत सी आजाती है उसे सिर में बोझ मालूम देता है, सांस जल्दी २ और तकलीफ से लिया जाता है। आमाशय से रक्ताधिक्य के कारण उबकाइयाँ और उल्टी होती हैं, इसी तरह जब आंतों में रक्त संचय हो जाता है तो रोगी को अतीसार शुरू हो जाते है, त्वचा कुछ नीली और रोयें खड़े होजाते हैं और मूत्र थोड़ी देर में स्वच्छ वर्ण का, मात्रा में अधिक तथा हल्का आता है, जाड़े के लगने से शारीरिक ताप कम नहीं होता, परंतु आरोग्यता की अपेक्षा ज्यादह होजाता है, परन्तु कभी २ शीतावस्था के अन्त में १०५ या १०६ डिग्री तक भी शारीरिक गर्मी हो जाती है ।

यह शीतावस्था यदि रुधिर का जमाव हो तो कुछ मिनटों से लेकर ४ या ५ घण्टे तक रहती है परन्तु साधारण हालतों में यह अवस्था २-३ घण्टे तक रहती है जब कि कई बारियाँ आचुकती हैं तब इस शीतावस्था का समय बहुत कम होजाता है ।

उष्णावस्था—इस अवस्था में पहले चेहरे और आंखों में गर्मी मालूम पड़ती है. फिर मुंह से गर्म भाफ निकलती है. और छाती हाथ पैरों में गर्मी मालूम होने लगती है । यह दशा एक साथ या धीरे २ शुरू होती है. प्रथम गर्मी बढ़ने से कुछ आराम सा मालूम होता है, परन्तु जैसे २ गर्मी अधिक बढ़ती है वैसे २ त्वचा अपनी मूल अवस्था पर आ जाती है चेहरा सुर्ख हृदय की गति तीव्र हो जाती है धमनीस्पन्दन शीघ्र और कनपटी पर साफ मालूम होता है और सिर में दर्द व चक्कर आने लगता है उस समय कपड़े पहिनने बुरे मालूम होते हैं ।

आँखें सुर्ख और चमकदार, जिल्द खुश्क, गर्म व सुर्ख होती है, किसी २ जगह में लाल २ धब्बे दिखाई देते हैं वमन हो जाती है जिह्वा खुश्क और प्यास ज्यादह लगती है शीतावस्था की अपेक्षा श्वासक्रिया सरलता पूर्वक होती है. परन्तु बेचैनी ज्यादह, मूत्र लाल और मात्रा में कम आता है इसका गुरुत्व अधिक हो जाता है शारीरिक ताप १०४ से १०६ तक होजाता है इस अवस्थामें प्लीहा बढ़ जाती है यह उष्णावस्था अन्येद्युष्क ज्वर में तृतीयक ज्वर की अपेक्षा लम्बी होती है, यह अवस्था एक घण्टे से लेकर कई घण्टे तक रह सकती है ।

स्वेदावस्था—पसीना पहले माथे और चेहरे

पर आता है फिर सारे शरीर से पसीना इतना अधिक निकलता है कि कपड़ा और बिछौने सब भीग जाते हैं जितनी देर तक पसीना आता रहता है उतनी देर तक शारीरिक गर्मी घटती रहती है और १० मिनट में ही उष्णता दो दर्जे कम होकर अपनी मूल दशा पर आने लगती है, त्वचा मुलायम अपनी पूर्वावस्था पर आजाती है सिर का दर्द दूर, जिह्वातर, धमनीस्पन्दन ठीक २ अपनी स्वाभाविक दशा पर आजाता है प्यास कम और भूख मालूम होती है, मूत्र सुर्ख रंग का कम परिमाण में आता है और उसमें यूरिकएसिड और क्लोराइड नमक निकलने के कारण गुरुत्व बढ़ जाता है। किसी को इस समय मूत्र ज्यादह भी आने लगता है या दस्त लग जाते हैं यदि पसीना कम मात्रा में हो तो शरीर में कुछ सूजन भी हो जाती है इस अवस्था में नींद भी आ जाती है बढ़ी हुई तिल्ली कम होजाती है या अदृश्य होजाती है पहले दो दर्जे की अपेक्षा इस दर्जे का समय बहुत कम होता है इन तीनों अवस्थाओं को मिला कर ज्वर की एक बारी मानी जाती है और इसमें लगभग दो घण्टे से लेकर १२ घन्टे तक का समय लग जाता है।

किसी २ रोगी में ये उपरोक्त तीनों ही अवस्थायें प्रकट नहीं भी होतीं किसी में सिर्फ उष्णावस्था और स्वेदावस्था ही अच्छी तरह प्रकट होती है या केवल शीतावस्था आकर ही बारी खतम हो जाती है। परन्तु शीतावस्था आकर जब ज्वर उतरता है तब आरोग्य होने का लक्षण समझना चाहिये।

तृतीयक ज्वर या टरशियन (Tertion Fever) कहते हैं। इसमें ज्वर का वेग एक दिन के पीछे होता है और इसका समय प्राय: ४८ घन्टे होता है। यह ज्वर अक्सर दोपहर को जाड़े के दिनों में जैसे जनवरी, फरवरी में आया करता है। और जिनको पहले मलेरिया ज्वर आ चुका है, तिल्ली जिनकी बढ़ी हुई हो अक्सर उनको इसका प्रकोप होता है। यह ज्वर यदि अन्येद्युष्क अर्थात प्रति दिन आने वाले ज्वर में तबदील हो जावे तो बीमारी की ज्यादती और यदि चौथइया (चतुर्थक) क्वार्टन फीवर (Quarton Fever) में बदल जावे तो रोगी की आरोग्यता का सूचक है।

चतुर्थक ज्वर या क्वार्टन फीवर (Quartan Fever)—इस ज्वर की वारी दो दिन बीच देकर हुआ करती है और ७२ घन्टे का विश्राम रहता है। यह भी अक्सर तीसरे पहर प्रकट होता है। कभी कभी ऐसा होता है कि हर चौथे दिन इसकी दो वारियाँ होती हैं। जैसे सोमवार को दो वारियाँ एक ही दिन आकर मंगल, बुध खाली जावें। फिर बृहस्पति के दिन दो दफे ज्वर की वारी चढ़े और कभी कभी बीच के दो दिन में ज्वर आने लगता है और पहला और चौथा दिन खाली जाता है इसे आयुर्वेद शास्त्र में चतुर्थक विपर्ययक कहते हैं।

विशेष सूचना—यह ध्यान रखने योग्य बात है कि यदि हर एक ज्वर नियमित समय से पीछे आवे तो आरोग्यता की सम्भावना समझनी चाहिये और नियमित समय से यदि पहिले ही ज्वर आ जावे तो बीमारी की वृद्धि का अनुमान करना चाहिये।

मस्तिष्क सम्बन्धी मलेरिया—इस प्रकार के ज्वर में रोगी को प्रलाप और बेहोशी हो जाती है, दशा ज्यादह खराब हो जाती है। इसका कारण यह है कि प्लाज़मोडियम कीटाणु मस्तिष्क की रक्त वाहिनियों में आकर बड़ी संख्या में इकट्ठ होजाते हैं, जिससे कि मस्तिष्क के भिन्न २ केन्द्रों को पर्याप्त मात्रा में रक्त नहीं पहुँच पाता। इस प्रकार के मलेरिया में शीतावस्था के पश्चात् ज्वर नहीं होता अर्थात् उष्णता नहीं बढ़ती अतएव शरीर ठंडा पड़ा रहता है और फिर अन्त में हृदयत्रासन्नता के कारण मृत्यु हो जाती है।

पुराना मलेरिया और मलेरियल कैकहेक्सिया
(Chronic Malaria-Malarial cachexia)

जो मनुष्य मलेरिया ज्वर से बहुत दिन पीड़ित रहते हैं और उनको मलेरियाई स्थानों में ज्यादह दिनों तक रहना पड़े उनकी हालत विचित्र सी हो जाती है।

(१) शरीर में खून की कमी होने से सब शरीर की त्वचा का रङ्ग पीला हो जाता है।

(२) अक्सर ऊर्ध्व भाग या अधोभाग से रक्त-स्राव जारी हो जाता है, और त्वचा के ऊपर खून इकट्ठा होकर सुर्ख रङ्ग के धब्बे से पैदा होजाते हैं।

(३) अनियमित प्रकारसे ज्वर होता रहता है।

(४) प्रायः तिल्ली बढ़ जाती है और किसी २ में यकृत् भी बढ़ जाता है।

कभी २ जब रैमीटेन्ट फीवर (Remittent Fever) सांघातिक रूप धारण कर लेता है, तब बड़े २ होशियार चिकित्सकों को भी इसको टाइ-फाइड फीवर (Typhoid fever) से पृथक्करण मुश्किल होजाता है क्योंकि इन दोनों के सब लक्षण प्रायः मिलते जुलते होते हैं। इसलिये हम कुछ इनका आपस में भेद पाठकों की जान कारी के लिये लिखते हैं।

(१) **मलेरिया ज्वर**—पहिले ही दिन बड़ा ज़ोर से चढ़ता है और फिर अनियमित समय चढ़ कर कम या ज्यादह होता रहता है, इसके विपरीत **टाइफ़ाइड फीवर** पहिले ही दिन एक दम ज़ोर से न चढ़कर नियमित समय हररोज शामको कम होजाता है।

(२) **सिरमें दर्द**—यह मलेरिया में प्रारम्भ में बहुत कम और ज्वर उतरने पर आराम होजाता है, इसी तरह जीभ कुछ मैली और दाँतों में मैल नहीं होता, और बेहोशी प्रायः मलेरिया में नहीं होती।

इसके विपरीत **टाइफाइड ज्वर** में सिर दर्द प्रारम्भ से ही वर्तमान रहता है जिह्वा खुश्क-भूरे रंग की दाँतोंपर मैल रहता है। इसी तरह बेहोशी प्रायः तीसरे सप्ताह में लगातार देखी जाती है।

(३) मलेरिया में छाती व और अंगोंमें दाने नहीं निकलते और टाइफाइड में गुलाबी रंग के दाने निकलते हैं।

(४) मलेरिया में किनाइन के देने से ज्वर शीघ्र दूर होता है, इसलिये कुनैन देने से जो ज्वर न उतरे वह मलेरिया नहीं है, इसके विपरीत टाइफा-इड में कुनैन का कोई असर नहीं होता।

(५) मलेरिया के खतम होने की कोई खास अवधि नहीं है परन्तु टाइफाइड चार हफ्ते के आसपास में उतर जाता है।

(६) अणुवीक्षणयन्त्र से देखने पर मलेरिया में प्लाज मौडियम (Plas modium) कीटाणु रक्त में पाये जाते हैं। टाइफायड में नहीं।

चिकित्सा—मलेरिया की चिकित्सा करने में विशेषतया तीन बातों पर ध्यान रखना चाहिये (१) दूषित रक्त में से मलेरिया कीटाणुओं को नष्ट करना (२) रुधिर को स्वाभाविक अवस्था पर लाना (३) मलेरिया ज्वर की बारी को रोकना। मलेरिया ज्वर के लिये अन्य औषधियों के अतिरिक्त किनीन भी एक परमावश्यक अव्यर्थ महौषध है। आज कल इसका उपयोगिता को प्रत्येक डाक्टर, हकीम, वैद्य सभी अनुभव कर रहे हैं यदि यह ठीक समय, नियमानुसार, उचित मात्रा में दी जाये तो यह रोगाणुओं को रक्त में नष्ट कर इस प्रलय कारी रोग को समूल नष्ट कर देती है। यह जहाँ तक हो सके शीघ्र ही देना आरम्भ करनी चाहिये।

कुनीन का प्रयोग

कई प्रकार से किया जाता है जैसे गोली के रूप में, चूर्ण की शकल में, कैपशूल (Capsule) में रख कर और मिक्सचर के रूपमें, मलद्वारा (गुदा) से पिचकारी द्वारा, तथा इन्जैक्शन द्वारा इन २ रीतियों से कुनैन का प्रयोग किया जाता है। परन्तु कभी २ ऐसा होता है कि किनीन गोली के रूपमें देने से पेट में हल नहीं होती और वह ज्यों की त्यों पाखाने में निकल जाता है, इसलिये या तो गोली को नरम बना कर या मुंह से तोड़ कर निगल जाना चाहिये, परन्तु इसका ठीक २ प्रयोग तो मिक्शचर के रूप में होता है, और मुंह का स्वाद ठीक करने के लिये नींबू का शर्बत या भुने हुवे चने चबा लेने चाहियें। बहुत से लोगों का ऐसा ख्याल है कि किनीन का मुख द्वारा प्रयोग बिना विरेचन कराये नहीं करना चाहिये, परन्तु यह बात सर्वसम्मत नहीं है यदि रोगी को कोष्टबद्धता हो तो जिव्हा मैली त्वचा खुश्क हो तो ऐसी अवस्था में कैलोमिल (Calomel) २ रत्ती, वाईकार्बोनेट औफ सोडियम (Bicarbonate of sodium) १ माशे मिला कर गरम जल से लेवें।

मिक्शचर का नुसखा—सल्फेट औफ किनीन २½ रत्ती, सल्फ्यूरिक एसिड ५ बून्द, मैगनेशिया सल्फास ६ माशे, पुटैसियम ब्रोमाइड ३ रत्ती (इसमें कानों में झनझनाहट नहीं होती) साधारण शर्बत १ ड्राम, टिंचर कार्डमम् ३ बून्द यह इतनी एक खूराक बड़े आदमी की है ऐसी मात्रा दिनमें ४ बार तीन तीन घन्टे पीछे देनी चाहिये। परन्तु यदि शरीर अधिक गर्म हो और सिर में दर्द ज्यादा होने लगे तो सिर पर बरफ रक्खें और बरफ ही चुसायें। क्योंकि गर्मी के वक्त बरफ बड़ा फायदा करता है, ज्यों २ इसके टुकड़े बीमार चूसता है इससे शान्ति मिलती है। यह उपरोक्त नुसखा ज्वर छूटने के बाद भी एक सप्ताह तक दिनमें दोबार और उसके पश्चात् दो सप्ताह तक एक बार पिलाते रहना चाहिये ऐसा करने से मलेरिया कीटाणु समूल नष्ट होकर रोगी शीघ्र ही अच्छा हो जाता है।

ज्वर छूटने पर उपरोक्त मिक्शचर में पाचक व पौष्टिक द्रव्य और डालने चाहियें जैसे कि टिंचर फेराई पर क्लोर (लोह) ५ बूँद, टिंचर नक्स वौमिका २ बूँद, लाइ कर आर्सनिक दो बूँद, फैरीएट किवनीन साइट्रास १ रत्ती ऐसी दो

मात्रा दिन में दो वक्त खाना खाने के बाद या पहले दूध पिलाकर फिर सुबह-शाम को देवें। परन्तु कभी कभी ऐसा होता है कि खाना खाते ही जाड़े की फुरैरी आकर बुखार चढ़ आता है, तो ऐसी हालत में रोगी बलवान व जवान हो तो उसे २॥ तोले सैंधा नमक आधा सेर गर्म जल में मिला कर पिलावें जिससे पेट की सफाई हो जावे। इसमें चक्रदत्त का प्रमाण है—सद्यो भुक्तस्य वा जाते ज्वरे सन्तर्पणोत्थिते। वमनं वमनार्हस्य शस्त मित्याह वाग्भटः॥ वमन के साथ ही साथ प्यास, दाह, बेचैनी, कलेजे का भारीपन वगैरा सब शीघ्र ही दूर हो जाता है। विशेष शीत के समय गर्म कपड़ा ओढ़ा कर गर्म जल से भरी बोतलों से सेक करे और तुलसी के पत्ते या झोजरु (शरपुङ्खा) अथवा करँजुवे की पत्ती उबाल कर पिलावे और गर्म २ चाय पीने को देवे। गर्मी की हालत में भी रोगी को ठन्डा पानी पीने को न दें गर्म जल देवें जिससे कि पसीना खूब खुल कर आने लगे। **सिर में दर्द के लिये** सफेद चन्दन, कपूर, काहू के बीज इनको ठंडे पानी में पीसकर लेप करें और आलू बुखारा मुँह में रखकर चूसें।

यदि ज्वर और कब्ज दोनों होवें तो यह मिक्सचर देना चाहिये—

लाइकर एमोनिया एसीटेटिस	२ ड्राम
स्प्रिट ईथरिस नाइट्रोसाई	२० बिन्दु
पोटासियम एसिटास	१० ग्रेन
पोटासियम नाइट्रास	५ ग्रेन
मैगनेशिया सल्फास	१ ड्राम
एक्वा कैम्फर (कपूर जल)	१ औंस

इन सबको मिलाकर ऐसी एक एक मात्रा तीन तीन घन्टे पीछे देवे। और यदि कब्ज न हो तो मैगसल्फ निकाल कर देना चाहिये। इससे पसीना आकर बुखार उतर जाता है, ऐसी अवस्था में हवा के झोकों से बचावें गुनगुना जल पिलाएं। अथवा—गुडूच्यादि क्वाथ (गिलोय, नीम की छाल, पद्माख, लालचन्दन, धनियाँ) अथवा पञ्चभद्रकषाय (गिलोय, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, चिरायता, सोंठ) यह काढ़ा वातपित्त ज्वर में देना चाहिये और मलेरिया ज्वर में विशेषतया वातपित्त का ही प्रकोप होता है।

यूनानी नुसखा—पहले ७ माशे खूबकलां फांककर कमूस के बीज ३ माशे सौंफ ३ माशे मुनक्का ९ दाने, अर्क बादियान और अर्क मकोय ६-६ तोले में पीस छान कर ४ तोले गुलकन्द मिलाकर दोबारा फिर छानकर कुछ गरम करके सुबह-श्याम पीवें। अथवा ७ माशे खूबकलाँ फाँकर नाड़ बूटी १ तोले सात काली मिर्च लेकर १० तोले जल में पीसकर पी लें। यदि वमन, प्यास, दाह, जी मिचलाना, पित्ताधिक्य हो तो यह नुसखा देवें—

नीलोफर ७ माशे	इन सब चीजों को रात
कासनी की जड़ ७मा०	को डेढ़ पाव पानी में
कासनी के बीज ६ मा०	या अर्कगुलाब में भिगो
अरिफ्क ६ माशे	दें व सवेरे मलकर
आलू बुखारे ५ दाने	छानकर साफ जल में
इमली २ तोले	२ तोले शर्बत बनफशा
	मिलाकर पीवें।

ज्वर रोकने के लिये—क्विनीन हाइड्रो क्लोराइड की ५-५ ग्रेन की टिकियाँ बुखार उतरने के बाद

तुरन्त देदी जायँ और ऊपर से अर्क नीलोफर अर्क कासनी ५-५ तोले शर्बत नींबू २ तोले मिला कर पिलावें दूसरी खुराक बुखार चढ़ने से चार घंटे पहले देवें। और ज्वर की अवस्था में नींद न आवे सिर में दर्द और बेचैनी ज्यादह होवे तो अफीम पानी में घिसकर कनपटी पर लगावें और रोगन काहू, रोगन खशखाश, रोगन कदू इनको सिर पर मलें और पीने के लिये—

पुटैसियम ब्रोमाइड ३० ग्रेन
क्लोरिलहाइड्रेट १० ग्रेन
सीरप औरनशाई १ ड्राम

जल १ औंस यह एक खुराक है इसको रातको पिलावें ज्वर के बाद कमजोरी को दूर करने के लिये फरीएट अमोनियम साइट्रास ५ ग्रेन टिंचर-सनरियन कम्पौन्ड ३० बिन्दु स्प्रिटक्लोरोफ़ाम १० बिन्दु जल १ औंस ऐसी १-१ मात्रा सुबह शाम देना चाहिये। यदि गर्भवतियों को क्विनीन देनी हो तो इस तरह देवें - क्विनीन हाइड्रो ब्रोमाइड ५ ग्रेन, पुटैशियम ब्रोमाइड १० ग्रेन, सीरप औरनशाई १ ड्राम जल १ औंस ऐसी १ मात्रा ज्वर से ४ घंटे पहले या सुबह देवें। और यदि मिक्सचर न पिया जा सके तो निम्नलिखित गोलियाँ दे सकते हैं—क्विनीन हाइड्रो क्लोराइड ४॥ ग्रेन एक्सट्रैक्टह्यायोसाइमस ½ ग्रेन इसकी दिन में १ गोली बनाकर दिया करें या अतीस ५ रत्ती करंज २ रत्ती, नाँहबूटी का सत ३ रत्ती इसकी चार गोलियाँ बनाकर चिरायते के काढ़े से देवें।

जब क्विनीन देने से ज्वर दूर न हो तो यह नुसखा देवे परन्तु गर्भवती स्त्रियों को यह नुसखा कदापि नहीं देवें।

कत्था सफेद ४ तोले, ढाक के बीज माशा ४, करंजुवे की गिरी माशा ६, गुलेसुर्ख माशा ६, शुद्ध संखिया जो कि २० तोले कागजी नींबू के अर्क में घोट लिया गया हो ४ रत्ती लेकर फिर सबको मिला कर चने २ बराबर गोलियाँ बनावें (इसका नियम यह है कि एक रत्ती शुद्ध संखिया की ९६ गोलियाँ बनानी चाहियें) रोज १ गोली दूध के साथ दिया करें।

———

जावित्री पाक

काम-शक्ति व मैथुनेच्छा को इतना प्रबल करता है कि वर्णन से बाहर है वीर्य की वृद्धि करता है हाजमा शक्ति को बढ़ाता है. भूख खूब लगाता है बादी और बलगम की बीमारियों में बड़ा लाभदायक है, कमर का दर्द गठिया, बार बार पेशाब आने की बीमारी को दूर करता है, चेहरे के रंग को निखारता और मुख सुगन्धित करता है। मूल्य प्रति सेर ४) रु०।

डाक-व्यय पृथक।

गाजर पाक

शरीर को मोटा ताजा और बलवान बनाता है वीर्य को बढ़ाता और गाढ़ा करता है दिल-दिमाग को ताकत देता है कमर का दर्द और कमजोरी को दूर करता है।

मूल्य प्रति सेर ४) रु०। डाक व्यय पृथक।

मदन मोदक

काम-शक्ति को बहुत बढ़ाता है भोग के समय घोड़े के समान ताकत देता है। वीर्य की पुष्टि तथा वृद्धि और स्तम्भन करता है। इसको सेवन करनेवाला बहुत स्त्रियों को प्रसन्न कर सकता है पुष्टिकर योगों में इसके समान दूसरा नहीं है। यह शास्त्रीय प्रसिद्ध आश्चर्यजनक योग है। स्वादिष्ट इतना है कि खाने से मन नहीं भरता। मूल्य प्रति सेर ८) रु०।

डाक-व्यय पृथक।

रति वल्लभ पूगी पाक

इसके सेवन से वृद्ध पुरुष भी तरुण के समान सामर्थ्यवान तथा बलवान हो जाता है। शरीर सुगठित व फुर्तीला बन जाता है। नेत्र ज्योतिष्मान मुख कांतिवान हो जाता है। शरीर पर गुलझट नहीं रहती तथा कुन्दन सा दमकने लगता है। आयु की वृद्धि करता है।

मूल्य प्रति सेर ८) रु०। डाक-व्यय पृथक।

वृहत्-कूष्माण्ड-पाक

दिल, जिगर, फेफड़े तथा मेदेको ताकत देता है दिमाग को पुष्ट करता है शरीर की कमजोरी और दुबलेपन को दूर करता है पुरानी खाँसी यक्ष्मा अम्लपित्त जीर्णज्वर में लाभदायक है शरीर को लाल बनाता है मू० प्रति सेर ४) रु०।

डाक-व्यय पृथक।

कामाग्नि-सन्दीपन-मोदक

काम शक्ति व भोगेच्छा की वृद्धि करने वाला इसके समान दूसरा योग नहीं है पाँच स्त्रियों से तृप्ति तथा थकन नहीं होती, शरीर की सम्पूर्ण शक्तियों को प्रबल करता है हाथी का सा बल, घोड़े की सी चंचलता, मोर का सा शब्द,

गिद्ध की सी दृष्टि हो जाती है, पूरी उमर तक सुख भोगता और निरोग रहता है इसके गुण अपार हैं। मूल्य प्रति तोला ।) डाक-व्यय पृथक।

अश्वगन्धा-पाक

इसको ४० दिन सेवन करने से बूढ़ा भी जवान के तुल्य पराक्रमी और नामर्द मर्द हो जाता है शरीर लाल और मज़बूत बन जाता है वीर्य गाढ़ा हाजमा तेज हो जाता है गठिया, फालिज लकवे में लाभदायक है स्त्रियों का श्वेत प्रदर, कमर का दर्द स्तनों का ढीलापन तथा बुढ़ापे की कमज़ोरी जाती रहती है खाने में स्वादु है। मूल्य प्रति सेर ४) रु०। डाक-व्यय पृथक।

निशास्ता-पाक

पुरुषों में सुस्ती नामर्दी थकावट आदि में बहुत लाभदायक है। सर कमर का दर्द दिमाग का खालीपन शरीर का दुबलापन निर्बलता जंघा की टटरी का दर्द जचगी की कमज़ोरी दूध की कमी में फायदेमन्द है।

मूल्य प्रति सेर ४) रु० । डाक-व्यय पृथक।

घृतकुमारी-पाक

काम-शक्ति को बढ़ाता है, कोष्ठ बद्धता तथा सिर के दर्द में लाभ-दायक है, गठिया में बहुत मुफीद है हाज़मा शक्ति को तेज़ करता है, भूख की वृद्धि करता है, बलग़मी और बादी की बीमारियों में बहुत गुण करता है, स्त्रियों के मासिक-धर्म सम्बन्धी रोगों को दूर करता है। कमर का दर्द, निर्बलतामें लाभ देता है, बहुत स्वादिष्ट है। मूल्य प्रति सेर ४) रु०। डाक-व्यय पृथक।

बादाम-पाक

इसके सेवन करने से शरीर मोटा ताजा सुन्दर और पुष्ट हो जाता है, सिर दर्द, पुरानी खाँसी. दिल और दिमाग की कमज़ोरी दूर करता है, नेत्रों की ज्योति और मुख की कान्ति को बढ़ाता है वीर्य की वृद्धि और पुष्टि करता है इसके गुण अपार हैं खाने में बहुत ही स्वादु है। मूल्य प्रति सेर ६) रु०। डाक-व्यय पृथक।

पिस्ता-पाक

शरीर को पुष्ट और मोटा करता है, बुद्धि व स्मृति को बढ़ाता है दिल दिमाग और कमर को बड़ी ताकत देता है। पुरुषत्व शक्ति की अत्यन्त वृद्धि करता है, मुख कमल के समान प्रफुल्लित व सुन्दर कान्तिवान् बनाता है।

मूल्य प्रति सेर ६) रु०। डाक-व्यय पृथक।

जगत् प्रसिद्ध

(गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया से रजिस्टर्ड)

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार

जौहरी बाज़ार देहली

की

पवित्र आयुर्वैदिक, यूनानी व पेटेण्ट औषधियों

के

थोक और खरीज भाव का संक्षिप्त सूचीपत्र

अध्यक्ष—

रसायनशास्त्री राजवैद्य शीतलप्रसाद एण्ड संज़

जौहरी बाज़ार, चांदनी चौक देहली।

प्यारे मित्रों, हमने बहुत वर्षों के लगातार परिश्रम के बाद, आपके लिये बड़े २ आर्ष ग्रन्थों से अपने प्राचीन ऋषियों की अनुभूत, प्रत्यक्ष फलदायक औषधियां तैयार की हैं, जिनको कि हमारे देशवासी अनेक वर्षों से भूले हुए थे। हमारे औषधालय की दवाइयों की बड़े २ राजा, महाराजा, रईस, जमींदार, वकील, डाक्टरों तक ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। आपसे साग्रह सविनय निवेदन है कि इस सूचीपत्र को आप स्वयं पढ़ें और अपने मित्रों को दिखला कर अपनी इस प्राचीन आयुर्वैदिक चिकित्सा की तरफ़ उनकी रुचि बढ़ाते हुये हमारे इस परिश्रम को सफल करें।

प्रस्तावना

"धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्"

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्षादि व सांसारिक सुखों का आधार यह नीरोग शरीर ही है। आजकल हमारे स्वास्थ्य की दिन प्रति दिन अधोगति क्या हो रही है, इसका मूल कारण क्या है, इसकी तरफ अभी तक किसी ने सूक्ष्म दृष्टि से विचार नहीं किया यदि हम पक्षपात शून्य होकर इस प्रश्न पर विचार करें तो हमें और कारणों के साथ २ यह भी मानना पड़ेगा कि आजकल हमारे देश में प्रकृति विरुद्ध विदेशी औषधियों का अत्यधिक प्रचार हो रहा है। क्यों कि जो औषधियाँ वहाँ पर बनती हैं उनमें वहाँ के देश काल जलवायु का ध्यान रखते हुवे तैयार की जाती हैं, और जो वनस्पतियाँ यहाँ हमारे देश से विदेश को जाती हैं, वे वहाँ पहुँचने से पहले ही सूखी और निर्वीर्य हो जाती हैं। आप विचारें कि वे हमारे लिये किस प्रकार उपयोगी हो सकती हैं, इसी सिद्धान्त को लक्ष्य करके प्राचीन आचार्यों का यह कथन बिलकुल सत्य है कि— "यस्यदेशस्य यो जन्तुस्तज्जंतस्यौषधंहितम्" अर्थात् जो प्राणी जिस देश में उत्पन्न हुआ है, उसी देश की उत्पन्न हुई और बनी हुई औषधियाँ वहीं के देश वासियों के लिये अनुकूल होती हैं, क्यों कि उन मनुष्यों का शरीर भी वहीं के जल-वायु से चिरकाल से पोषित होता है, इसलिये पाठक विचारें कि शीत प्रधान पाश्चात्य देश में उत्पन्न हुई और बनी हुई औषधियाँ उष्ण प्रधान भारत देश वासियों के लिये किस प्रकार हित कर हो सकती हैं, इस कमी को पूरा करने के लिये आज यद्यपि अनेक फार्मेसियाँ व रसायन शालायें स्थान २ पर खुली हुई हैं, और साथ ही अनेक धर्मार्थ औषधालयों द्वारा देश में निर्धन जनता की सहायता भी की जा रही है, और यहाँ तक कि आयुर्वेद रूपी महोदधि के बसन्त मालती, च्यवन-प्राश, मकरध्वज इत्यादि श्रेष्ठ रत्नों के गुणों से मुग्ध होकर पाश्चात्य चिकित्सक गण भी उन्हें बड़े गौरव से प्रयोग करने लगे, परन्तु इतना सब कुछ होते हुवे भी अभी इस बात की बड़ी ही आवश्यकता है, कि औषधियाँ शास्त्रोक्त विधि से तैयार की हुई ठीक भाव पर मिलें, क्योंकि कुछ फार्मेसियों ने तो अपने यहाँ औषधियों के भाव इतने अधिक बढ़ाये हुवे हैं कि उतने मूल्य पर औषधि खरीदने से वैद्यों व औषधि व्यवसायियों के लिये लाभ उठाना अति कठिन है, और साथ ही इससे भोली जनता की आर्थिक हानि भी होती है, और इसी प्रकार कुछ महानुभावों के सस्ते पन ने तो इतना आश्चर्य दिखाया है कि उन भावों पर औषधिका ठीक २ शास्त्रानुकूल सर्वाङ्ग पूर्ण होकर

बनना भी हमारी समझ से बाहर है। इन ही सब कारणों को ध्यान में रखते हुये ही हमनें यहाँ इस देहली शहर में **बृहत आयुर्वेदीय औषध भण्डार** की योजना की हुई है, और जिसमें कि हर समय कूपीपक्व रसायनें, रस, भस्में, चूर्ण, अवलेह, गुटिका, घृत, तैल, अरिष्ट, आसव, क्षार, गुग्गुलु आदि अनेक शास्त्रोक्त सिद्ध प्रयोग, और हमारे २२ पुश्त से परम्परा गत प्राप्त हुवे खानदानी सिद्ध सहस्रशोऽनुभूत प्रयोग, जिनका पूरा पूरा विवरण हम आगे लिखेंगे, हर समय मौजूद रहते हैं।

हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि जिन ठीक भावों पर थोक भाव से रस भस्मादि मूल्यवान् औषधियाँ हम दे सकते हैं, उतनी आपको अन्यत्र मिलनी मुश्किल हैं, क्यों कि हमारा यह औषधालय एक ऐसे स्थान पर है जो कि तमाम भारत का केन्द्रीय स्थान है, इस लिये भारत के प्रत्येक स्थान-स्थान से सम्पूर्ण खनिज द्रव्य और हर प्रकार की काष्ठौषधियाँ यहाँ विक्री के लिये बड़ी तादाद में आती हैं और हम उनको थोक भाव से लेते हैं, जिससे कि वे हमें काफी सस्ती पड़ती हैं। और भस्म रस आसवादि द्रव्य जो कि पुराने हो कर अधिक गुण दायक होते हैं, इसमें शार्ङ्गधर का प्रमाण है कि:— **'पुराणाः स्युर्गुणैर्युक्ताः आसवाः धातवोरसाः'** इसलिये हम इन द्रव्यों को एक बार ही अधिक से अधिक मात्रा में बना कर तैयार कर लेते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि हम बहुत ही कम मुनाफा लेकर वैद्यों व धर्मार्थ औषधालयों को उसी भाव में औषधियाँ देते हैं जिसमें कि वे स्वयं भी तैयार नहीं कर सकते। इसका फल यह होता है कि हमारे यहाँ की औषधियाँ बहुत ही शीघ्र हाथों हाथ बिक जाती हैं, जिससे कि वैद्य बन्धुओं को औषधि बनाने के कठिन परिश्रम से मुक्ति मिल जाती है, और हमें थोड़े नफे में अधिक लाभ का होना इस नियम के अनुसार ज्यादा विक्री होने से अधिक आमदनी होती है, इस प्रकार इस औषधालय ने थोड़े समय में ही जो आशातीत उन्नति की है, यह सब इसके व्यवहार में सच्चेपन व सफाई का होना ही कारण है, अतएव जो महानुभाव चिकित्सा-कार्य से समय न मिलने के कारण अथवा औषधि निर्माण की पर्याप्त सामग्री के न होने से औषधि तैयार नहीं कर सकते, (क्यों कि इससे एक बड़ा नुकसान तो यह होता है कि जब तक रोगी के रोगानुकूल औषध बन कर तैय्यार होगी तब तक या तो रोग बढ़ कर रोगी को खतम कर देगा या रोगी आतुर होकर किसी दूसरे वैद्य के पास चला जायगा), इसी लिये हम ऐसे वैद्य बन्धुओं से साग्रह सविनय निवेदन करते हैं कि वे हमारे औषधालय से अपने यहाँ का स्थायी सम्बन्ध करलें जिससे कि वे समय पड़ने पर रोगी को सद्यफलदायक औषधि देकर यश के भागी बन सकें। क्योंकि हमारा यह उद्देश्य है कि आयुर्वैदिक औषधियों को शास्त्रोक्त विधि से तैयार करके भारत के प्रत्येक प्रान्त में चिकित्सकों के पास पहुँचावें, जिससे कि देश का लाखों रुपया विदेशी कम्पनियों की पाकेट से बचकर देश की निर्धन जनता के निर्वाह के लिये पहुँच सके। हमने उपरोक्त अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये विपुल

द्रव्य व्यय करके एक **वृहत् रसायन शाला** खोली हुई है जिसमें कि बड़े बड़े योग्य आयुर्वेदाचार्यों की अध्यक्षता में सम्पूर्णरस क्रियायें की जाती हैं। हमारा दूसरा यह भी उद्देश्य है कि आयुर्वेद की सच्ची सेवा करते हुवे उसके उत्थान के लिये पठन पाठनादि व लेखादि द्वारा आयुर्वैदिक व पाश्चात्य मतानुसार गम्भीर रोगों का निदान व उनकी चिकित्सा का वर्णन करना। हमारे यहाँ से इस कार्यकी पूर्ति के लिये

जीवन-सुधा

नामकी मासिक पत्रिका निकली है, जिसमें कि बड़े बड़े योग्य वैद्यों व डाक्टरों के गम्भीर गवेषणा पूर्ण लेखों के अतिरिक्त नवीन २ जड़ी बूटियाँ व शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गों के सुन्दर सुन्दर चित्र भी विद्यमान रहते हैं, और जिसके द्वारा बाहर के रोगियों को अपने रोग का निर्णय कराने में बड़ी सुविधा रहती है, और उनके लिखे रोग के लक्षणों को प्रश्नोत्तर के रूप में छापकर बड़े बड़े योग्य वैद्यों के निश्चयानुसार उनको चिकित्सा की व्यवस्था कर दी जाती है, इसके अतिरिक्त विशेष बात यह है कि वर्षभर में दो विशेषाङ्क भी सुन्दर सुन्दर चित्रादि से सुसज्जित हुए पाठकों की सेवा में भेंट किये जाते हैं। इस पत्रिका को इतना उपयोगी बनाते हुवे भी हमने इसका मूल्य केवल ३) तीन रुपया वार्षिक ही रक्खा है वास्तव में यह पत्रिका अपने ढङ्ग की एक निराली ही है, यह वैद्यों के अतिरिक्त प्रत्येक गृहस्थों के भी बड़े ही काम की है, इसके द्वारा मनुष्य अनेक रोगों की चिकित्सा घर बैठे ही कर सकते हैं। इस लिये हम आपसे साग्रह सविनय निवेदन करते हैं कि आपको आवश्यकता पड़ने पर जिस किसी औषधि की आवश्यकता हो, या किसी रोग की सम्मति लेनी हो अथवा कोई अनुभूत प्रयोग पूछना हो तो आप हमें निःसंकोच होकर तत्काल लिखें, आपकी हर प्रकार से सहायता की जायगी। आप लोगों की सेवा के लिये ही हमारी रस शाला आदि का जीवन है।

वैद्यजी का परिचय

पाठक गण! चिकित्सा कराने से पहिले रोगी के लिये यह जानलेना अत्यावश्यक है कि चिकित्सक कितना कार्यकुशल और अनुभवी है और उसकी कितनी योग्यता है, वैद्यक व्यवसाय उनका नूतन है या प्राचीन, क्योंकि रोगी के जीवन मरण का उत्तरदायित्व केवल वैद्य के ऊपर ही निर्भर होता है, इस विषय में हमारा आपसे यही निवेदन है कि बृहत आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के संचालक महोदय खानदानी वैद्य हैं, यह चिकित्सा कार्य आपके वंशमें नवीन नहीं है प्रत्युत २२ पुश्त से चला आरहा है, इसी लिये आपको शास्त्रीय-सिद्ध-प्रयोगों के अतिरिक्त अपने वंश परम्परागत अनुभूत प्रयोगों का भी विशेष ज्ञान है। आपके पिता श्री पूज्य **राजवैद्य शीतलप्रसाद** जी **रसायन शास्त्री देहली** एक बड़े यशस्वी वैद्य हो गये हैं, देहली की सर्व साधारण जनता आप के नाम से भली प्रकार परिचित है, विशेष क्या कहना रोग विज्ञान के लिये रोगी का कठिन अवस्था के समय एकत्रित

हुवे स्थानीय वैद्य और डाक्टर महोदय भी आपकी तात्कालि की गम्भीर गवेषणा पूर्ण रोग विवेचना पर मुग्ध थे, आपकी प्रत्युत्पन्नमति सराहनीय थी, इन ही श्री वैद्य जी के निरीक्षण में रह कर इन के सुयोग्य-पुत्र **वैद्यराज पं० महावीर प्रसाद** जी ने आयुर्वेद शास्त्र का अध्ययन व चिकित्सा क्रम प्राच्य प्रतीच्य मतानुसार सीख कर अपनी असाधारण कार्य कुशलताका परिचय दिया है, हमारे इस प्रकार के लेख से पाठक गण यह न समझे कि हम इसमें कुछ बढ़ाकर लिख रहे हैं, हमने जो कुछ लिखा है वह अक्षरशः सत्य है। हमारी इस औषधालय की सेवा से देहली की तमाम जनता अच्छी प्रकार परिचित है।

धर्मार्थ औषधालय

और विशेष बात यह है कि आपने अपने निवास स्थान पहाड़ी धीरज पर एक धर्मार्थ औषधालय भी खोला हुवा है जिसमें कि असहाय निर्धन जनता को औषध मुफ़ दी जाती है, और यहाँ तक कि आवश्यक्ता पड़ने पर उनके घर पर जाकर भी मुफ़ देखा जाता है।

विद्यालय विभाग

हम पहले ही निवेदन कर चुके हैं कि हमारा यह उद्देश्य है कि पठन पाठनादि लेखादि द्वारा आयुर्वेद का प्रचार करना, इस कार्य के लिये जीवन सुधा मासिक पत्रिका के अतिरिक्त हमने अपने यहाँ एक आयुर्वैदिक विद्यालय की भी योजना की हुई है, जिसमें कि विद्यार्थियों को आयुर्वेद की उच्च कोटि की शिक्षा देकर उनको प्रामाणिक परीक्षायें उत्तीर्ण कराई जाती हैं, और साथ ही उनको क्रिया कुशल बना कर इस योग्य बना दिया जाता है कि जिससे वे अपनी जीविका स्वतन्त्रता पूर्वक अच्छे प्रकार निर्वाह करते हुवे यशोपार्जन कर सकें।

भवदीय-मैनेजर—

भगवद्देव शर्मा, आयुर्वेदाचार्यः।

औषधि मंगाने के नियम

(१) अब से पहिले के छपे हुवे सूचीपत्रों का भाव रद्द किया जाता है, इसी लिये पहले भावोंपर औषधि मंगानेका आग्रह नहीं करना चाहिये।

(२) ग्राहकों को चाहिये कि आर्डर देते समय अपना पूरा २ पता साफ़ हिन्दी, उर्दू, अँग्रेजी में स्टेशन व रेलवे लाइन सहित लिखें। यदि आपके पत्र भेजने के बाद ८ या ७ दिन तक माल या उत्तर न पहुँचे तो समझ लीजिये कि आपका पत्र पढ़ा नहीं गया या वह पहुंचा ही नहीं इसी लिये दुबारा पत्र डालना चाहिये।

(३) जिन औषधियों का जो थोक भाव लिखा है वह पहले ही कमीशन काट कर लिख दिया गया है, इस लिये थोक भाव में कमीशन के लिये पत्र व्यवहार न करें, परन्तु हमारी फ़ार्मेसी के थोक भाव के ग्राहक वेही समझे जायेंगे जिनका पहिला आर्डर कमसे कम २०) रु० का होगा, और फिर हम उनको अपने यहाँ के थोक भाव का ग्राहक रजिस्टर नम्बर देंगे जिससे कि वे भविष्य में ५) पाँच रुपये का माल भी थोक भाव से मंगा सकेंगे।

(४) थोक भाव में जिन औषधियों की जो तोल लिखी है उससे कम में वे नहीं भेजी जा सकेंगी।

(५) पोष्ट ऑफिस से अधिक से अधिक ५ सेर तक का पार्सल रवाना हो सकता है, जिसका महसूल करीब २।।) ढाई रुपये तक होता है और रजिस्ट्री मनिआर्डर फीस इससे पृथक् लगती है इस लिये द्रवपदार्थ अरिष्ट आसव तैलादि रेलवेद्वारा ही मंगाने चाहियें। क्योंकि इसमें महसूल भी कम लगेगा और बोतलों में भर कर लकड़ी के बक्स में बन्द कर अच्छी तरह भेजे जासकते हैं, और रास्ते में टूटने फूटने का डर भी नहीं रहता।

(६) पत्र लिखते समय यह साफ़ २ लिखना चाहिये कि माल रेलवे या पोष्ट ऑफ़िस किसके द्वारा भेजा जावे, रेलवे द्वारा माल मंगाने वालों को अथवा ज्यादह वजन की पोष्ट पार्सल मंगाने वालों को चाहिये कि ऑर्डर के साथ २ औषधि का पूरा या आधा मूल्य अवश्य भेजदें, बिना एडवान्स आये हम माल (पेशगी) नहीं भेज सकेंगे।

(७) वैद्यों व धर्मार्थ औषधालयों तथा औषधि विक्रेताओं के लिये खास रियायत की जाती है उनका कम से कम ४०) चालीस रुपये का एक साथ आर्डर आने पर उनको थोक भाव में भी १२।।) साढ़े बारह रुपये सैकड़ा कमीशन दिया जायगा, और उन की सेवा में साल भर तक हमारे यहाँ का जीवन सुधामासिक पत्र भी विशेषाङ्कों सहित मुफ्त भेजा जायगा।

(८) हमारे यहाँ उधार का लेन देन नहीं है, इस लिये नक़द दाम देकर या वी० पी० द्वारा माल मंगाना चाहिये, मार्ग व्यय हर हालत में ग्राहकों को ही देना होगा।

(९) रोगी का हाल लिख कर औषधि मंगाने वाले ग्राहकों को चाहिये कि रोग का प्राचीन इतिहास सब सिलसिले वार लिख कर वर्तमान लक्षणों को भी लिखें और साथ ही यह भी लिखें कि औषधि कितने मूल्य की भेजी जावे।

(१०) यदि किसी बिल में अथवा पार्सल की वी० पी० में भूल से दाम अधिक लग गये हों तो भी पार्सल छुड़ा लेना चाहिये। फिर बिल का नं० तारीख़ आदि लिखकर ठीक करा लें यदि असावधानता से मूल्य अधिक लग गया होगा तो शेष मूल्य भेज दिया जायगा या आपकी पसन्द की हुई कोई दूसरी चीज़ भेज दी जायगी।

(११) हमारे यहाँ से पैकिंग बहुत होशियारी से अनुभवी मनुष्यों द्वारा कराया जाता है। इतने पर भी यदि रास्ते में कुछ टूट-फूट होजावे तो कार्यालय उसका जिम्मेवार न होगा।

(१२) माल पहुँचने पर यदि रुपये का इन्तजाम न होता उसे आप डाकखाने (डिपाजिट) रखकर ७ सात दिन के अन्दर ही छुड़ा लें।

(१३) सूचीपत्र में लिखित औषधियों के अतिरिक्त आपको जिस औषधि की आवश्यकता हो उसका आर्डर आने पर वह तुरन्त आपकी आज्ञानुसार बनाकर भेज दी जायेगी, औषधालय उसकी लागतके अलावा १०) रु० सैकड़ा अधिक चार्ज कर लेगा, ऐसी औषधि के बनवाने के लिये कम से कम आधा मूल्य पेशगी देना होगा। लेकिन ऐसी औषधि ५) रु० से कम मूल्य की नहीं बनाई जायेगी।

शास्त्रीय अनुभूत औषधियां

ज्वराधिकार

मृत्युञ्जय रस—यह सब प्रकार के ज्वरों की खास दवा है। इसको मधु के साथ १ रत्ती चटानी चाहिये। मूल्य ।।) तोला।

महाज्वरांकुश—इसके सेवन से वातज, पित्तज, आदि अनेक प्रकार के ज्वर, विशेषतया मलेरिया फीवर शीघ्र ही शान्त होता है। मूल्य १ तोला का १) रु०, अनुपान अदरक का रस मधु मात्रा १ रत्ती से २ रत्ती तक।

श्री जयमङ्गल रस—इसमें सोना, चाँदी आदि बहुमूल्य भस्में पड़ती हैं। यह पुराने बुखार खून की कमी, अत्यन्त कमजोरी, विशेषकर तपैदिक के बुखार में शीघ्र फायदा करता है। मूल्य १३।।) तोला।

हिंगुलेश्वर—यह जाड़े बुखार की खास दवा है, मूल्य ।=) तोला।

तरुणज्वरारि—यह नये ज्वर में विरेचन लाकर कोष्ठबद्धता को दूर करके ज्वर शान्त करता है। मात्रा १ रत्ती मिश्री के शर्बत के साथ, मूल्य ।।) तोला।

विषमज्वरान्तक लौह—(पुट पक) इसमें सोना, मोती, लोह, अभ्रक इत्यादि बहु मूल्यवान् और पौष्टिक द्रव्य पड़ते हैं। यह खासकर पुराने बुखार, बारी का बुखार, म्यादी बुखार, खून की कमी, तिल्ली और जिगर के बढ़ने पर अत्यन्त लाभदायक है। भूख को बढ़ाता है, अत्यन्त पौष्टिक है। मूल्य ६।।) तोला। मात्रा १ रत्ती से ४ रत्ती तक अनुपान—पीपल चूर्ण, हींग, सैंधानमक।

अमृतारिष्ट—पुराने बुखार, मलेरिया, जिगर, तिल्ली और पाण्डु रोग में भी अत्यन्त लाभदायक है। मूल्य २।।) सेर।

स्वर्णमालती बसन्त—यह पुराने बुखार, तपैदिक (यक्ष्मा) हृदय की दुर्बलता, हर समय मन्दा-मन्दा रहनेवाले ज्वरों की एक मशहूर और राम बाण दवा है। अत्यन्त बलकारक है। मू० १४) तोला।

बृ० सर्व ज्वरहर लौह—(स्वर्णघटित) मूल्य १५) तोला।

सर्व ज्वरहर लौह—यह सब प्रकार के ज्वरों की एक खास दवा है। मूल्य १) तोला।

कस्तूरी भैरव—८) रुपये तोला।

बृ० कस्तूरी भैरव—यह सन्निपात में दिल की कमजोरी, हाथ पैरों के ठण्डे होने पर बड़ी लाभदायक चीज है। मू० १२) तोला।

शारदीय महालक्ष्मी विलास—इस के सेवन से अनेक प्रकारके ज्वर, बीसों प्रकार के प्रमेह अर्श भगन्दरादि अनेक रोग शीघ्र ही नष्ट होते हैं, और अत्यन्त बाजीकरण है। मू० ६) तोला।

बसन्त तिलक — इसमें कस्तूरी, सोना, मोती आदि द्रव्य पड़ते हैं। हृदय की दुर्बलता, ठण्डे पसीनों का आना, जीर्ण ज्वर विशेष कर तपैदिक के ज्वर और उसकी कमजोरी को दूर कर शक्ति को उत्पन्न करता है। मूल्य २४) प्रति तोला।

विषमज्वरान्तक लोह—(सोने मोती वाला) मूल्य १०) तोला।

किरातादि तैल—यह ज्वर से उत्पन्न शरीर की रूक्षता और दुर्बलता तथा दाह इत्यादि को नष्ट करता है। मूल्य १६ औंस की शीशी ३) तीन रुपया।

मकरध्वज—(स्वर्णघटित) कीमत ४) प्रति तोले।

षड्गुणबलिजारितमकरध्वज—
८) प्रति तोला।

सिद्ध मकरध्वज—मूल्य २४) तोले—यह अमृत तुल्य रसायन बहुरोग नाशक है जगत प्रसिद्ध महौषधि है। छोटे-बड़े गरीब-अमीर मूर्ख और पण्डित सबही तरह के लोगों ने इस अनुपम रत्न की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। यह वही दवा है जिसके बल से वैद्य लोग मृत्यु के मुख से भी रोगी को निकाल लेते हैं। आज तक इसके मुकाबले की कोई औषधि किसी पाश्चात्य वैज्ञानिक ने ईजाद नहीं की। यह दुर्बलता, धातु-क्षीणता, हृदय की धड़कन, अग्नि-मान्द्य, जीर्णज्वर, सन्निपात, मोती झारा, इत्यादि कठिन से कठिन रोगों की एक मात्र सर्व-श्रेष्ठ महौषधि है। इसे तन्दुरुस्त और बीमार दोनों ही समान-भाव से सेवन कर सकते हैं। यह अनुपान विशेष से सब रोगों की रामबाण दवा है। मात्रा—३ चावलसे १ रत्ती तक। बच्चों को आधे चावल से २ चावल तक देनी चाहिये।

लाक्षादि तैल—१ औंस (२॥ तोले) की की० ।)

महालाक्षादि तैल — एक औंस (२॥ तोले) —कीमत ।≈)

बृ० चन्दनादि तैल— एक औंस ।≈)
जब कि अधिक दिन ज्वर आने से शरीर में रूक्षता और हाथ पैरों में जलन होती है, तथा शरीरमें विशेष कमजोरी होने पर और विशेषतया यक्ष्मा के ज्वर में इस की मालिश से अमृत तुल्य गुण होता है।

बृ० सुदर्शन चूर्ण—(भा० प्र०) वात-पित्तादि अनेक प्रकार के ज्वर, मलेरिया, जीर्णज्वर अग्निमान्द्य इत्यादि की एक अकसीर—प्रसिद्ध दवा है। कीमत १) एक रुपया का ८ तोला।

ज्वरातीसार

सिद्ध प्राणेश्वर रस—(र० रा० सु०) मूल्य १॥) प्रति तोला

कनक सुन्दर—(भै० र०) ॥) तोला

आनन्द भैरव—(शा० ध०) ॥) तोला

ये उपरोक्त रस ज्वर के साथ अतीसार, या पेचिश होने पर अथवा खून के आने पर अत्यन्त लाभदायक होते हैं। मात्रा रत्ती २ गरम जल से

अतीसार-संग्रहणी

कर्पूर रस–(र० रा० सु०) मूल्य १ तोला

यह हैजे की बीमारी, और सब प्रकार के दस्तों की खास दवा है।

महाराज नृपति वल्लभ–यह पुराने अतीसार और संग्रहणी में शीघ्र फायदा करता है। जठराग्नि को दीप्त करता है। मूल्य १॥) तो०

कुटजावलेह–(शा० ध०) मूल्य ।॥) ८ तोला

कुटजारिष्ट–यह रक्तातिसार (खूनी दस्तों) रक्तपित्त, खूनी बवासीर पैत्तिक अतीसार की अचूक दवा है। मूल्य १६ औंस का १।) रु०

महागन्धक–(भै० र०) यह बच्चों के पेट के हर प्रकार के रोगों की खास दवा है। मूल्य १) तोला

कणाद्य लोह–यह अत्यन्त दीपन-पाचन है, और सब प्रकार के अतिसार संग्रहणी में विशेष फायदेमन्द है।

पञ्चामृत पर्पटी—१) तोला, रस पर्पटी १) तोला, ताम्रपर्पटी २) तोला, लोह पर्पटी १) तोला स्वर्ण पर्पटी ८) तोला, विजय पर्पटी २४) तोला, विजय पर्पटी नं० २ मूल्य १०) तोला

पर्पटी सेवन विधि पर्पटी सेवनके लिये मनुष्य को चाहिये कि १ रत्ती से प्रारम्भ करके बारह दिन तक १-१ रत्ती बढ़ावे, फिर १३ वें दिन से रोज एक २ रत्ती घटाकर सेवन करे पर्पटी सेवन करते हुऐ दूधया छाछ ही सेवन करना चाहिये, अन्न नमक जल, को बिलकुल बन्द कर दें तो सब से अच्छा है। नहींतो हल्की गिजा और फलों का रस ले सकते हैं। यह सब रोगी की अवस्था विशेष तथा वैद्य की कल्पना पर निर्भर होता है। इस पर्पटी प्रयोगसे—संग्रहणी, जलोदर, शोथ (सूजन) आन्त्रिक दुर्बलता और अजीर्ण इत्यादि रोग शीघ्र ही नष्ट होते हैं।

पिप्पल्याद्यासव–मूल्य १६ औंस की शीशी १।)

बृ० लाई चूर्ण–मूल्य १) तोला

लोकनाथ रस—कीमत १) तोला

यह अतीसार की सर्व श्रेष्ठ औषधि है। मात्रा २ रत्ती शहद अथवा दही में मिलाकर सेवन करावें।

ग्रहणी गजेन्द्रवटिका—मूल्य १॥) तोला

हँस पोटली—मूल्य १) तोला

बृ० ग्रहणी मिहिर तैल—मूल्य ।॥) का ८ तोले

लवंगादि चूर्ण—।) तोला

चित्रक गुटिका—॥) तोला

कपित्थाष्टक—≈) प्रति तोला।

दाड़िमाष्टक—≈) तोला।

अर्श (बवासीर)

कांकायन गुटिका—यह छै हों प्रकार की बवासीर के लिये अक्सीर दवा है मू० ≈) तो०

बृ० शूरण मोदक (च० द०) जिनको बहुत पुराना कब्ज रहता हो, मन्दाग्नि, बवासीर, सांस, खाँसी, तथा वातगुल्म हो ऐसे मनुष्यों को यह औषधि अमृत के समान गुणकारी है, इसके सेवन के साथ सब प्रकार के-गुरु (भारी) स्निग्ध (चिकने) भोजन सेवन कर सकते हैं मूल्य ।॥) ८ तोला

अभयारिष्ट—१६ औंस १ पौंड १।)

दन्त्यरिष्ट—१६ औंस १ पौंड १।)

इससे बवासीर के साथ २ रहनेवाला पुराना कब्ज भी शीघ्र ही दूर होता है।

प्राणदा गुटिका—मूल्य ≈)॥ तोला

वृ० कासीसादि तैल—मूल्य ४ तोला ।≈)

पिप्पल्यादि तैल—इसको (एनिमा) वस्ति द्वारा करने से या इसको पखाने के बाद लगाने से मस्से मुलायम पड़ कर स्वयं ही बिना कष्ट के नष्ट होजाते हैं। और साथ ही चीस चवक वगैरा भी नहीं रहती यह बवासीर के लिये एक सर्वोत्तम प्रसिद्ध तैल है। मूल्य ८ तोले का ।॥)

अग्निमुख लोह—खूनी और बादी दोनों तरह की बवासीर के लिये सर्व श्रेष्ठ औषधि है इससे बवासीर जड़ से नष्ट होजाती है मू० २)तो०

बाहुशाल गुड़—मूल्य २० तोला २)

अजीर्ण मन्दाग्नि-बदहज़मी-अरुचि

लवणभास्कर—यह मन्दाग्नि-अरुचि-वायगोला आदि की एक बड़ी मशहूर दवा है कीमत १० तोला ।।)

श्री रामबाण रस—(भै० र०) यह रस वास्तव में संग्रहणी रूपी कुम्भकर्ण, आम वात (गठिया) रूपी खरदूषण, मन्दाग्नि रूपी रावण को समूल नष्ट करने के लिये साक्षात् रामबाण के समान है। वास्तव में यह रस उपरोक्त रोगों में बहुत शीघ्र फायदा करता है। मूल्य ।॥) तोला।

अग्नितुन्डी वटी—मूल्य ।≈) तोला।

वज्रक्षार—≈) तोला

शङ्खद्राव—१ शीशी १)

श्वेत पर्पटी—(स्वकृत) यह दर्द गुर्दा, बदहज्मी, अम्ल-पित्त, सूज़ाक अम्लपित्त की अक्सीर दवा है। मूल्य ।≈) तोला।

महाशङ्ख वटी—(भा० प्र०) ।।) तोला।

गन्धक वटी—१ तोला ।।)

संजीवनी वटी—यह विसूचिका (हैजा) गुल्म हैजा, शूल इत्यादि की प्रसिद्ध दवा है—अमृत के समान गुणकारी है। मूल्य एक तोला ।) चार आने।

अग्निकुमार रस—।≈) तोला।

हिंग्वष्टक—इसको भोजन के पहले ग्रासों में घृत से मिलाकर खाने से उदर में इकट्ठी हुई वायु दूर होकर जठराग्नि दीप्त होता है। मू० ≠)।। तोला।

क्रिमिरोग

क्रिमि मुद्गर रस—इसे नागरमोथे के काढ़े के साथ १-२ रत्ती सेवन करें। मू० ।≠) तोला

क्रिमि कालानल—यह रस, क्रिमि रोग (पेट में कीड़े पड़ने) से उत्पन्न हुई सूजन, गुल्म, खून की कमी, जी मिचलाना इत्यादि को शीघ्र दूर करता है। मूल्य १) तोला।

विडङ्ग लौह—यह कीड़ों को और साथ ही बवासीर, अरुचि, मन्दाग्नि, श्वास-कास वगैरह को नष्ट कर के शरीर में नवीन रक्त को पैदा करता है। मूल्य १।।) तोला।

विडङ्गारिष्ट—(ग० नि०) मूल्य १।।) १ बोतल।

पाण्डु—कामला—यकृत (जिगर) प्लीहा (तिल्ली)

नवायस लौह—यह पाण्डु, जिगर, तिल्ली की मशहूर दवा है। इसको मधु तथा घृत और छाछ से १ रत्ती से ४ रत्ती तक चटाना चाहिये मूल्य १।।) तोला।

लोहासव—१६ औंस शीशी १।)

पुनर्नवादि मँडूर—१) तोला

धात्र्यरिष्ट—इसके सेवन से हृदय की धड़कन, पाण्डु-खाँसी, आदि शीघ्र ही नष्ट होते हैं।

कुमार्यासव—१६ औंस शीशी १।)

अमृतारिष्ट—१६ औंस शीशी १।)

पञ्चामृत लौह मंडूर—१ तोला १)

प्लीहारि रस—१ तोल १)

रक्त पित्त (नकसीर) राजयक्ष्मा (तपेदिक) खांसी

उशीरासवः—यह रक्तपित्त पाण्डु, कुष्ठ, प्रमेह अर्शः सूजन की एक श्रेष्ठ दवा है। कीमत १।।) बोतल

वासा कूष्माण्ड खण्ड—जबकि ज्यादह गर्मी से नाँक-मुंह से खून आता हो, या पेशाव के रास्ते खून आवे, तपैदिक, खांसी, या उसमें खून मिला कर आवे ऐसी हालत में इसके सेवन से जादू कासा असर होता है। कीमत ५ तोले ।।)

कूष्माण्ड खण्ड—मूल्य ५ तोले ।~)

द्राक्षासव—१६ औंस शीशी १।) द्राक्षारिष्ट १६-औंस १।) अंगूरासव १६ औंस शी: ३) यह अंगूरों से बना हुवा एक स्वादिष्ट और पौष्टिक अर्क़ है यह फेफड़े की हर एक

१—नोट—सब प्रकार के आसव-अरिष्ट प्राय: भोजन के बाद ही पीने चाहिये। प्रत्येक औषधि की विशेष सेवन विधि पत्र द्वारा मालूम करें।

बीमारी के लिये बड़ी प्रसिद्ध अकसीर दवा है। शरीर के अन्दर नवीन रक्त उत्पन्न करके उसे सुन्दर और बलवान बनाने में अपूर्व है, और कोष्ठबद्धता को दूर करती है।

वृ० वासावलेह—१० तोले १॥) मालतीबसन्त १२) तोला, चद्रामृतरस मूल्य ॥।) तो० यह सूखी और तर दोनों प्रकार की खांसी के लिये एक मशहूर दवा है।

बसन्त तिलक—(भै० र०) मूल्य २२) तो० इस रसमें सोना-मोती-कस्तूरी इत्यादि बहुमूल्य पदार्थ पड़ते हैं, यह क्षय की खांसी, हृद्रोग, ज्वर, आदिको शीघ्र नष्ट करता है, अत्यन्त पौष्टिक और वृष्य है। क्षयमें विशेष लाभकारी है। मात्रा १ रत्ती से २ रत्ती तक

च्यवन प्राश—यह खांसी-सांस का एक प्रसिद्ध दवा है, छोटे, बड़े, धनी, निर्धनी सभी तरह के मनुष्य इसके गुणों से अच्छी प्रकार परिचित हैं। यह तपैदिक से उत्पन्न हुई फेफड़ों की कमजोरी को दूर करके शरीर को मोटा ताज़ा हृष्ट पुष्ट बना देती है। यह दिमाग़ी काम करने वालों को अमृत के समान गुण करती है, बालक-वृद्ध युवा सभी इसे हर मौसिम में हर मिजाज़ वाले मनुष्य सेवन कर सकते हैं। मूल्य ४) सेर।

राजमृगांक रस—मूल्य १०) तोला यह राजयक्ष्मा, धातुशोष, हृद्रोग (दिल की कमजोरी) की बड़ी लाभदायक महौषधि है।

चन्दनादि तैल—मूल्य ॥।) ५ तोले

सितोपलादि—४ तो० ॥)

कफ केतु रस—।) तोला

श्वास-(दमा) हिचकी

श्वास कुठार रस—(र० सा० सं०) मूल्य ॥) तोला

श्वास चिन्ता मणिः—मूल्य १२) तोला। इसमें सोना मोती इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य पड़ते हैं-यह श्वास (दमे) के लिये राम बाण दवा है। इसकी २रत्ती मात्रा १ मासे बहेड़े केचूर्ण और मधु से देवें।

कनकासवः—(भै०र०) यह सीने के ऊपर जमे हुए बलग़म को पतला करके बाहर निकालता है। और सांस-खांसी, उरः क्षत (छाती में जख्म) रक्तपित्त, जीर्ण-ज्वर में विशेष लाभ करता है। मूल्य १॥) बोतल

भार्गी गुड़ (भै० र०)—मूल्य ८ तोले ॥।) च्यवनप्राशावलेह ४) सेर।

अपस्मार (मृगी) उन्माद [पागलपन] मूर्छा

दशमूलारिष्ट—१६ औंस शीशी २)

अश्वगन्धारिष्ट—१६ औंस शीशी १॥) यह

स्त्रियों के हिस्टीरिया के दौरे की अकसीर दवा है, इसके अलावा मृगी-उन्माद, बेहोशी इत्यादि मानसिक रोगों को दूर कर शरीर को हृष्ट पुष्ट बना देती है। और वात व्याधियाँ शीघ्र ही नष्ट होती हैं। मात्रा-२-२ तोले भोजन बाद।

चतुर्मुख रस—यह हर प्रकार के दौरे की अनुभव सिद्ध शर्तिया दवा है, यह सोना कस्तूरी इत्यादि बहुमूल्य द्रव्यों से बनती है-इसकी चौथाई ¼ रत्ती त्रिफला तथा मधु में मिला कर चटाना चाहिये। इसके सेवन से अपस्मार, उन्माद, हस्त कम्प, शिरकम्प इत्यादि शीघ्र दूर होते हैं। मूल्य २०) तोला।

वातव्याधियाँ-फ़ालिज-लक़वा वगैरा

त्रयोदशांग गुग्गुल—मूल्य ८ तो० ॥।) इसके सेवन से गठिया, लकवा आदि वायु के रोग शीघ्र जड़ से नष्ट होजाते हैं।

(भै० र०)

चिन्ता मणि चतुर्मुख—(भै० र०) मूल्य १०) तोला इसमें स्वर्ण भस्म पड़ती है यह रस दिल और दिमाग़ की कमज़ोरी को दूर कर शरीर को हृष्ट पुष्ट बनाता है। मात्रा १ रत्ती त्रिफला तथा मधु से।

वात गजांकुश—इसके सेवन से कठिन से कठिन पक्षाघात आदि वात रोग शीघ्र नष्ट होते हैं। मात्रा २ रत्ती पीपल का चूर्ण और मजीठ के काढ़े से। मूल्य २) तोला।

लक्ष्मी विलास रस—यह ऊपर कहे हुए चतुर्मुख रस के समान ही गुण करने वाला है, यह विशेष कर बलवर्धक और वृष्य तथा स्तम्भक है। मूल्य १०) तोला

बृ० वात चिन्तामणि—यह हर तरह के दर्द, किसी अंग का सूख जाना या कमज़ोर होजाना, हाथ पैर का जकड़ना, कमज़ोरी के कारण दिल का धड़कना, फ़ालिज वगैरा यहाँ तक कि हिस्टीरिया और मृगी के दौरों के लिये यह अत्यन्त लाभदायक अचूक रामबाण दवा है। इसमें सोना, चाँदी, मोती आदि बहुमूल्य द्रव्य पड़ते हैं। इसके सेवन से वृद्ध मनुष्य भी फिर जवान होकर कामदेव के समान सुन्दर और पराक्रमी होजाता है। इसकी २रत्ती मात्रा अनुपान रोगानुसार सेवन करें। मूल्य १५)तो०

नारायण तैल—कीमत ८ तोले ॥।)

मध्यम नारायण तैल—कीमत ८ तोले १) इस में दशमूल और अष्टवर्ग की दुर्लभ औषधियाँ तथा कस्तूरी वगैरा मूल्यवान् सुगन्धित द्रव्य पड़ते हैं। जिससे कि यह वायु विकारों के नष्ट करने में एक प्रसिद्ध रामबाण दवा है इसके नाम और गुणोंसे साधारण से साधारण मनुष्य भी अच्छी प्रकार परिचित हैं। सारे शरीर में या हाथ पैर में कहीं भी दर्द या सूजन या सुन्नता हो अथवा लक़वा या फ़ालिज किसी अंग में

मार गया हो तो यह तेल मालिश करने से, पिलाने से सब रोगों को दूर करके हड्डी तक के दर्द को निकालने में अक्सीर साबित हो चुका है। और यह हमारे यहां खास तौर से तैयार किया जाता है।

कुब्जप्रसारिणी तैल—मूल्य ८ तोले ।।।)

श्रीगोपाल तैल -(कस्तूरी रहित) ८ तोले १।।)

हिमसागर तैल—मूल्य ८ तोले का १)

विष्णु तैल—मूल्य ८ तोले ।।।)

विषगर्भ तैल—(योग चिन्तामणिः) मूल्य ।।) ५ तोले

वातरक्त, कुष्ठ, विसर्प

कैशोरगुग्गुलुः—इसके सेवन से खून की तमाम खराबियाँ, और कोढ़, वातरक्त शीघ्र ही शान्त होते हैं। ४ तोले ।=)

खदिरारिष्ट—यह सब प्रकार के कुष्ठ, आतशक, सूजाक, वातरक्त, रक्तसम्बन्धी सब विकारों की एक अक्सीर दवा है। मूल्य १६ औंस १।।)

माणिक्य रस—(भै० र०) इससे श्वित्र, गलित कुष्ठ, नासूर, उपदंश, तथा नासिका और मुख रोग शीघ्र ही दूर होते हैं। मात्रा १ रत्ती शहद या घृत से। मूल्य ३) तोला

दशाँगलेप—=) तोला

बृहन्मरिचाद्य तैल—८ तोले ।।=)

अमृताद्यगुग्गुलुः १ तोला ।)

पंचतिक्त घृत—१० तोले १)

कुष्ठराक्षस तैल—१० तोले १।।)

आमवात (गठिया)

महायोगराज गुग्गुलु (सप्तधातु मिश्रित)—मूल्य १।) तोला भर

योगराजगुग्गुलुः—मूल्य ४ तोले ।=)

यह औषधि ८० प्रकार के वायु विकारों की एक ही रामबाण दवा है साधारण से साधारण मनुष्य भी इसके प्रशंसनीय गुणों से परिचित हैं। यह तिल्ली, गुल्म, उदर, बवासीर और सूजन के लिये भी बड़ी अक्सीर महौषधि है।

सिंहनादगूगल (कज्जलीवाला)—यह पथरी, मूत्रकृच्छ्र, कास, श्वास, आँतों का उतर आना अर्श (बवासीर) इत्यादि रोगों की सिद्ध रसायन है मात्रा २ रत्ती से ४ रत्ती तक, अनुपान गरमजल या शुण्ठीके काढ़ेसे।

वातगजेन्द्रसिंह—यह रस, गठिया रूपी हाथी के मारने में शेर के समान है। यह रस वायु नाशक होने के अलावा बड़ा ही पौष्टिक है। इसकी २ रत्ती की मात्रा दूध से सेवन करें। मूल्य १) तोला।

शिवागुग्गुलुः—मात्रा ६ रत्ती से ६ मासे तक। मूल्य ४ तोला ।=)

विषगर्भ तैल—यह तैल शरीर के हर प्रकार के

दर्द व सूजन को शीघ्र ही दूर करता है, और साथ ही लिंगेन्द्रिय की शिथिलता व कमज़ोरी आदि के लिये भी अक्सीर दवा है। इसको मसलकर धूप में बैठ जायें फिर गर्म जल से स्नान करें। मूल्य ८ तोला ।।।)

बृ० सैन्धवादि तैल—मूल्य ८ तोला ।।।)

शूल-अम्लपित्त

यवानिकादि चूर्ण—मूल्य ≈) तोला। अविपत्तिकर चूर्ण मूल्य ≈) तोला।

महा शंखवटी—।।।) तोला।

सामुद्राद्यचूर्ण—इसके सेवन से, वात पित्त, कफ का उत्पन्न हुआ शूल, नाभि शूल, यकृच्छूलादि सब प्रकार के शूल शीघ्र आराम होते हैं। मूल्य ।।) तोला

धात्रीलौह—मूल्य १।।) तोला यह शूल, अम्लपित्त के लिये एक अक्सीर दवा है।

शंखद्राव—यह, हैजा, तिल्ली, जिगर, अम्लपित्त अरुचि, मन्दाग्नि की एक बढ़िया दवा है, शीघ्र ही अपना असर दिखाती है। शीशी एक १)

नारिकेल लवण—इससे परिणाम शूल और सब प्रकार का शूल शीघ्र शान्त होते हैं। मात्रा १ माशे से २ माशे तक पीपलके चूर्ण १ रत्ती में मिलाकर देवें मूल्य ।≈) तोला

तारामन्डूर गुड़—मात्रा ३-६ रत्ती तक मूल्य ।।।) तोला

श्री विद्याधराभ्र—मूल्य २) तोला मात्रा २-४रत्ती गो दुग्ध अथवा ठंडा जल

उदावर्त, गुल्म (वायगोला) आनाह (अफ़ारा)

नाराचरस—कीमत १) तोला। बृ० इच्छा भेदी रस—मूल्य ।।।) तोला। वज्रक्षार—मूल्य ८ तोला १।।) इसके सेवन से वायगोला—शूल, अजीर्ण, सूजन, उदररोग, बढ़ी हुई तिल्ली ये रोग जल्दी आराम होते हैं। मात्रा १ माशे से २ माशे तक।

विन्दुघृत—यह गुल्म, अफारा, कोष्ठवद्धता में एक अक्सीर दवा है इसके सेवन से पेट के क्रिमी भी शीघ्र मर जाते हैं। इसकी जितनी विन्दुएं घृत में मिलाकर पी जावें उतने ही दस्त आते हैं। मूल्य ।।) तोला

दन्ती हरीतकी—इसके सेवन से, तिल्ली, सूजन गुल्म, बवासीर, हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणी इत्यादि रोग जड़ मूल से नष्ट होजाते हैं। मात्रा १-२ तोले तक

गुल्मकालानल—मात्रा २ रत्ती हरड़ के क्वाथ से। मूल्य ।।।) तोला

प्राणवल्लभ रस—यह वात पित्त, कफ, रक्तगुल्म प्रमेह, कुष्ठ, वातरक्त वगैरा को शीघ्र ही दूर करता है। इसकी मात्रा ½ रत्तीको दूध या उष्ण जल से लेवें। मूल्य ।।) तोला

हृद्रोग (दिल की बीमारियाँ)

अर्जुन घृत—(क्रौं० २०) मूल्य ८ तोले १)

त्रिनेत्र रस—इसके सेवन से हृदय के सब प्रकार के रोग शीघ्र ही आराम होते हैं। मूल्य ४) तोला।

चिन्तामणि रस—इसमें सोना, चाँदी की भस्में पड़ती हैं। यह फेफड़े की सब तरह की बीमारी, प्रमेह—भयंकर खाँसी और साँस को दूर करता हैं। मात्रा १ रत्ती गेहूँ के काढ़े से मूल्य १२) तोला।

शंकर वटी—अनुपान गरम जल से २ रत्ती लेवें मूल्य १) तोला।

पार्थाद्यरिष्ट—इसके सेवन से हृद्रोग से उत्पन्न मानसिक कमजोरी शीघ्र हो नष्ट होती है। मूल्य १६ औंस शीशी १।)।

मूत्रकृच्छ्र

(पेशाब का मुश्किल से चीस चबक मार कर आना)

मूत्राघात

(पेशाब का बन्द हो जाना)

अश्मरी (पथरी) उष्णवात (सूज़ाक)

तारकेश्वर रस—यह रस मूत्राशय (मसाना) की कमजोरी को दूर करके, पेशाब को खुलासा और साफ़ लाता है, बड़ा पौष्टिक है मूल्य ३) तोला।

चन्द्रप्रभा वटी—यह प्रमेह (जरियान) की बड़ी खास दवा है, इसके सेवन से स्वप्न दोष, सूजाक (पूयमेह) शीघ्र आराम होता है। मूल्य १) तोला।

कुशावलेह—यह सूजाक की अकसीर दवा है। मूल्य ८ तोले ।॥)

चन्दनासव—सूजाक और पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र की खास दवा है। मूल्य १॥) पौण्ड १

एलादि चूर्ण—मात्रा ८ रत्ती। चावलों के पानी के साथ। मूल्य ॥) तोला।

वृहद्गोक्षुराद्यवलेह—मात्रा २ माशे से ४ माशे तक।

चन्द्रकला रस—३) तोला।

त्रिविक्रम रस—मात्रा ½ आधी रत्ती बिजौरे की जड़ के चूर्ण या स्वरस से देवें। मात्रा २) तोला।

प्रमेह, मधुमेह (डायबिटीज़) बहुमूत्र, धातु—दौर्बल्यता

न्यग्रोधादि चूर्ण—यह एक बहुत उत्तम सर्व प्रमेह नाशक चूर्ण है। इसके थोड़े दिन के सेवन से ही २० प्रकार के प्रमेह जड़ से नष्ट हो जाते हैं। मात्रा १ मासे से ३ माशे तक, त्रिफले के काढ़े से। मूल्य ॥) तोला।

देवदार्व्यरिष्ट—मूल्य १६ औंस १।)

चन्दनासव— " १६ " १।)

लोध्रासव— " १६ " १।)

ये आसव प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रमेह, मधुमेह और प्रदर रोग इनको ही शीघ्र शान्त

करके शरीर में शक्ति उत्पन्न करते हैं। भूख को बढ़ाते हैं।

बसन्त कुसुमाकर—यह रस सोना, चाँदी, मोती, लोह इत्यादि बहु मूल्य द्रव्यों के योग से तैयार किया जाता है, यह पुराने से पुराने प्रमेह, मधुमेह को दूर कर कुछ ही दिन में शरीर में शक्ति उत्पन्न करता है, तपेदिक की खास दवा है। मूल्य २४) तोला।

चन्द्रप्रभा—मूल्य ।।।) तोला।

स्वर्ण बँग—मूल्य ४) तोला।

सोमनाथ रस भै० र०—इसके सेवन से पेशाब में शक्कर व चर्बी का आना शीघ्र बन्द हो जाता है। और स्त्रियों के चारों प्रकार के प्रदरों की तथा सोमरोग की एक बड़ी चमत्कारिक दवा है। बहु मूत्र को शीघ्र ही नष्ट करती है। मूल्य ३) तोला।

शिलाजत्वादि वटी—मूल्य २०) तोला। ये गोलियाँ दर्द गुर्दा, पथरी, सूजाक, पेशाब में धातु का मिल कर आना, इन सब शिकायतों को दूर करने में जादू का सा असर दिखाती हैं।

चन्दनादि चूर्ण—१ तोला ।।≈)।

बृहद् वङ्गेश्वर रस—२०) तोला।

स्थौल्यता [शरीर का मोटापन]

अमृताद्य गुग्गुलु—मूल्य ।।) तोला।

नवक गुग्गुलु—इसके सेवन से मेद: रोग (चर्बी का बढ़ना) कफ के रोग, आम वात (गठिया) ये शीघ्र ही शान्त होते हैं।

लोह रसायन—मूल्य २) तोला।

उदर रोग-जिगर-तिल्ली

नारायण चूर्ण—इससे विरेचन होकर सब प्रकार के उदररोग शीघ्र शान्त होते हैं। मूल्य ≈) तोला।

जलोदरारि रस—मूल्य १।।) तोला।

रोहितकारिष्ट—इसके सेवन से उदर के सम्पूर्ण रोग तिल्ली, जिगर, बवासीर, कुष्ठ, कामला यह सब रोग शीघ्र ही शान्त होते हैं। मूल्य १६ औंस १।)

यकृदरि लोह—यह (यकृत्) जिगर के रोगों की एक श्रेष्ठ दवा है। जिगर के बढ़ने से पैदा हुई कामला (आँखों का पीलापन) ज्वर को भी शान्त करता है। मूल्य १) तोला।

शङ्खद्राव—१) शीशी ड्राम १

अर्कलवण—मूल्य ।।।) तोला।

कुमार्यासव—(शा० ध०) मूल्य १६ औंस की शीशी का १।)

लोहासव—(शा० ध०) मूल्य १६ औंस की शी० का १)

लोकनाथ रस—(भै० र०) मू० २।।) तोला।

अभया लवण—८ तोले का १)

बिन्दु घृत—१) तोला

इच्छा भेदी रस—॥) तोला

नाराच रस—।॥) तोला

विद्याधर रस—(मात्रा ½ रत्ती मधु के साथ) मूल्य २) तोला

महामृत्युञ्जय लोह—इसके सेवन से तिल्ली-जिगर-गुल्म-यकृत् क्षय (जिगर का छोटा होजाना) पाण्डु-कामला इत्यादि रोग जड़ से नष्ट होजाते हैं।

शोथ (सूजन)

पुनर्नवादि गुग्गुलु—(मात्रा:-१ माशा जल के साथ) मूल्य ।) तोला

त्रिनेत्राख्यो रस—मूल्य ३) तोला (मा: ½ रत्ती से १ रत्ती अपा माग के रस के साथ)

शोथ कालानल रस—(मात्रा १ रत्ती ताल मखाने के रस के साथ) मूल्य १॥) तोला

पञ्चामृत रस—मूल्य १) तोला (मात्रा ½ रत्ती से १ रत्ती तक अदरख के अर्क के साथ) इस रस के सेवन से शरीर के एक भाग में या सम्पूर्ण शरीरमें उत्पन्न हुई सूजन शीघ्र शान्त होजाती है, और सांस, खाँसी आदि इसके उपद्रव भी शीघ्र दूर हो जाते हैं।

पुनर्नवाद्यारिष्ट—मूल्य ४० तोले का (एक पौंड) का १।) रुपया

शुष्क मूलादि तैल—५ तोला का मूल्य ॥) आने

दुग्धवटी—मूल्य ।॥) तोला दुग्ध के साथ मात्रा १ रत्ती

तक्रवटी—(मात्रा २ रत्ती छाछ के साथ) इसमें नमक और पानी बन्द करके भूख प्यास में भी तक्र (छाछ) ही पिलावे मूल्य १) तोला

अन्त्रवृद्धि, गलगण्ड 'कण्ठमाल' विद्रधि, श्लीपद

शशि शेखर रस—मात्रा २ रत्ती मूल्य २) तोला

वातारि रस—मात्रा ४ रत्ती-अनुपान तिल तैल अदरख का रस। मूल्य १) तोला

छुच्छुन्दरी तैल—इस तेल की मालिश से कण्ठ-माला बहुत शीघ्र अच्छी हो जाती है। मूल्य ।॥) ५ तोले

सिन्दूरादि तैल—यह भी अत्यन्त लाभ दायक तैल है पहिले के समान शीघ्र ही कण्ठमाला को दूर करता है। मूल्य ।॥) ५ तोला

काञ्चनार गुग्गुलु—८ तोले ।॥)

विडँगारिष्ट—१६ औंस शीशी १।)

नित्यानन्द रस—मूल्य २) तोला

श्लीपद गज केसरी—मात्रा रत्ती १ गरम जल से। मूल्य ।॥) तोला

व्रण, शोथ-भगन्दर-नाडीव्रण [नासूर]

त्रिफला गूगल—मूल्य ≈) तोला

सप्तांगगूगल—मूल्य ≈) तोला

जात्यादिघृत व, तैल—यह घृत सब तरह के जख्मों की पीपको साफ करके शीघ्रही भर देता है। मूल्य ।≈) तोला

विपरीत मल्ल तैल—यह चाकू तलवार-छुरा आदि से कटे हुए स्थान, उपदंश, नासूर, कोढ़, खुजली इत्यादि पर बहुत लाभदायक है।

बृहद् व्रण राक्षस तैल—मूल्य ।) तोला। इसे जख्म में भरने से चाहे वह कैसा ही जहरीला जख्म क्यों न हो शीघ्र ही नष्ट होता है।

जात्यादिवर्ति—यह नासूर में अन्दर लगाने से पीप को बहुत जल्दी साफ करती है।

सप्तविंशति को गुग्गुलुः—यह विशेष कर भगन्दर, खाँसी, सांस, हृदय, पँसवाड़े, कुक्षि, मसाने इत्यादि में उत्पन्न हुए शूलों को शीघ्र दूर करता है। मात्रा ४ रत्ती मधु से।

उपदंश—आतशक

वरादि गुग्गुलुः—इसके सेवन से रक्त की खराबी, दूषित व्रण (जख्म) और आतशकके व्रण सूखकर शरीर में शुद्ध रक्त का संचार होता है। मात्रा ४ रत्ती से २ माशे तक मूल्य ॥) तोला

सारिवाद्यरिष्ट—यह उपदंश, वातरक्त, कुष्ठ, सूजाक, इत्यादि रोगों के लिये एक ही अक्सीर दवा है। मूल्य १६ औंस १)

फिरंग गजकेसरी—(योग रत्नाकर) मूल्य १॥) तोला

रस कपूर (र० सो० सं)—मूल्य १ तोला ॥)

शीतपित्त, उदर्द, कोठ

हरिद्रा खण्ड—इसके सेवन से पित्ती का उछलना कण्डू (खाज) दाद इत्यादि खून के विकार शीघ्र ही शान्त होते हैं।

आर्द्रक खण्ड—मात्रा ६ माशे मूल्य ।) तोला

श्लेष्मपित्तान्तक रस—मूल्य ॥) तोला मात्रा २ रत्ती,

मसूरिका (माता छोटी)

ऊषणादि चूर्ण—मात्रा १ माशे मूल्य ।) तोला।

सर्वतोभद्र रस—मूल्य १५) तोला

इन्दुकलावटी—मूल्य १५) तोला

एलाद्यरिष्ट—मूल्य १६ औंस १॥)

क्षुद्ररोग

मूषिकादि तैल—यह बच्चों की कांच के निकलने में अक्सर गुदा में लगाया जाता है।

कुंकुमाद्य तैल—इस तैल को मुंह पर लगाने से झाई, मुंहासे इत्यादि बहुत शीघ्र दूर हो

कर चमड़ी मुलायम चेहरा खूबसूरत और सोने के समान रंग वाला सुन्दर बन जाता है। मूल्य ८ तोला १)

भृंगराज तैल—इसके लगाने से बालों का गिरना, शिर का दर्द, गंजापन इत्यादि दूर होकर उनकी जड़ें मजबूत होती हैं, और वे चिकने घूँघर वाले होजाते हैं। मूल्य ८ तोला ॥)

चन्दनादि तैल—इसको नाक में टपका कर नस्य लेने से, बालों का सफेद होना, जल्दी गिरना दूर होकर बाल भौंरे के समान शीघ्र ही काले रंग के निकलते हैं। मू० ८ तोला ॥)

मुंह-आंख, नाक, कान, नेत्र के रोग

बृ० खदिर वटिका—इनको मुख में रखके चूसने से कण्ठ, होठ, जीभ, दाँत, तालु इन के रोग शीघ्र ही दूर होते हैं, मुख सुगन्धि युक्त और दाँत दृढ़ होकर मुह के छाले घाव वगैरा सब शीघ्र शान्त होजाते हैं। मू० १ डिब्बा ≡)॥

क्षारतैल—(भै० र०) इस तेल के कान में डालने से, कान का बहना, दर्द, कीड़ों का पड़ जाना, घुन २ आवाज का होना, बहरापन, बहुत जल्द दूर होजाता है। मूल्य १ शीशी ॥)

दार्व्यादि तैल—(भै० र०) मूल्य १ शीशी ॥)

स्वर्जिकादि तैल—मूल्य १ शीशी ।)

चित्रक हरीतकी—इसके सेवन से पुराने से पुराना जुकाम, पीनस, खांसी, सांस, मन्दाग्नि गुल्म, उदावर्त, बवासीर इत्यादि शीघ्र नष्ट होते हैं।

चन्द्रोदयादिवर्ती—इसको घिसकर आंख में लगाने से, रतौंदा (रात्रि में न दीखना) आंखमें ढलका (नेत्र स्राव) इत्यादि शीघ्र ही दूर होता है।

महात्रिफलाद्यं घृतम्—जिनकी हर साल आंखें दुःखनी आती हों, दृष्टि दुर्बल हो, आंखों में खाज और ललाई रहती हो उनके लिये यह घृत अमृत के समान गुणकारी है। मूल्य ८ तोला १)

नयनामृताञ्जन—यह बहुत उत्तम सुर्मा है, और आँखों के सब रोगों के लिये रामबाण दवा है मूल्य १ तोला १)

षड्बिन्दु तैल—इस तैल को प्रतिदिन २-२ बिन्दु नाक में डालने से बहुत दिन का पुराना सिर का दर्द जल्दी दूर होता है। मूल्य ८ तोला ॥)

महालक्ष्मी विलास—इसकी २ रत्ती मात्रा जल से लेने पर पुराने से पुराना सिर का दर्द बहुत जल्द दूर होता है। मूल्य १ तोला ५)

अपामार्ग तन्डुलीय नस्य—(चरक) इसको सूँघने से आधा शीशी, सूर्यावर्त, जुकाम

पीनस, इत्यादि शीघ्र आराम होते हैं।

मूल्य १ तोला ।=)

स्त्रियों के खास २ रोगों की कुछ औषधियाँ

पुष्यानुग चूर्ण—इसे १ माशे से २ माशे तक शहद में मिला कर चाटें फिर ऊपर से चावलोंका भिगोया हुवा पानी पिलावें इससे चारों प्रकार के प्रदर शीघ्र ही दूर होते हैं।

मूल्य =) तोला।

प्रदरान्तक लौह—यह प्रदर (सफ़ेदी) की खास मशहूर दवा है, इससे कमर का दर्द हड़फूटन, खून की कमी और प्रदर से उत्पन्न वायु के रोग भी शीघ्र दूर हो जाते हैं मूल्य १।।) तोला।

शिलाजतु वटिका—मात्रा ६ रत्ती से १।। माशे तक अनार के रस से। मूल्य ।।।) तोला।

अशोकारिष्ट—यह प्रदर की एक मात्र अव्यर्थ प्रसिद्ध महौषध है इसको प्रतिदिन १।-१। तोला भोजन बाद पीना चाहिये इससे सब प्रकार का प्रदर अवश्य शीघ्र ही नष्ट होता है। मूल्य १६ औंस १।)

पत्राँगासव—मूल्य १६ औंस १।)

फलकल्याण घृत—जिस स्त्री के गर्भ न ठहरता हो, अथवा ठहर कर गिर जाता हो, या लड़कियाँ ही लड़कियाँ उत्पन्न होती हों, उनके लिये यह घृत अमृत तुल्य रसायन है। इसके सेवन से हृष्ट, पुष्ट, और दीर्घ जीवी सन्तान पैदा होती है। मूल्य २) रु० २० तोले।

रजः प्रवर्तिनीवटी—इससे मासिक धर्म की रुकावट, नलों में दर्द इत्यादि शीघ्र ही दूर होकर मासिक धर्म खुलासा होजाता है।

मूल्य ।-) तोला।

गर्भ चिन्तामणि रस—यह रस गर्भिणी स्त्री के ज्वर, प्रदर, दाह, और प्रसूत रोग की सर्वोत्तम औषध है। मूल्य ६) तोला।

सौभाग्य शुण्ठी मोदक—मूल्य ८ तोला ।।।) मात्रा ६ माशे से २ तोला तक गर्म दूध से।

सूतिकारि रस—मात्रा १ रत्ती अदरक के अर्क से। मूल्य १।।) तोला।

सूतिकाहर रस—मात्रा १ रत्ती। मूल्य २) तोला

जीरकाद्यरिष्ट—मात्रा २ तोला भोजन बाद।

मूल्य १६ औंस १।)

बालरोगाधिकारः

बालचातुर्भद्रिका—यह बच्चों के साँस खाँसी, ज्वर-अतीसार इत्यादि को रोकता है। मात्रा ४ रत्ती से ८ रत्ती मधु या माता के दूध से। मूल्य =) तोला।

शृङ्ग्यादि चूर्ण—यह भी ऊपर लिखे फायदे करता है। मूल्य =) तोला।

दन्तोद्भेदगदान्तक—मात्रा २ रत्ती । मूल्य ॥) तोला ।

कुमार कल्याण रस—मात्रा ½ रत्ती माता के दूध से। यह रस बच्चों के ज्वर, श्वास, वमन, इत्यादि कष्टसाध्य रोगों को दूर करके बच्चों को हृष्ट, पुष्ट, सुन्दर बनाने में अद्भुत गुण करती है। इसमें सोना-मोती इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य पड़ते हैं। मूल्य २०) तोला ।

महागन्धक—मात्रा १ रत्ती से ६ रत्ती तक । मूल्य १) तोला, यह बच्चों के हरे-पीले दस्त, ज्वर, दूध गेरना वगैरा के लिये बड़ी लाभदायक औषधि है ।

अरविन्दासव—यह अत्यन्तस्वादिष्ट, मीठा, बच्चों को मोटा, ताजा, बनाने वाला एक अर्क है। मू० १६ औंस की शीशी १।)

विषरोगाधिकारः

दशाँङ्गोऽगद—एक चूर्ण है १ माषे जल के साथ लेने से सब प्रकार के कीट विष (बिच्छू आदिके जहर) दूर होते हैं। मूल्य ।≈) तो० ।

शिरीषारिष्टम्—मात्रा १। तोला से २॥ तोले तक मूल्य १६ औंस १।)

रसायन-वाजीकरण

(कुव्वते बाह को बढ़ाने वाली दवाइयाँ)

लक्ष्मी विलास—इसके सेवन से-अट्ठारह प्रकार के कुष्ठ, बीस प्रकार के प्रमेह, वात, पित्त, कफ के अनेक प्रकार के रोग दूर होकर शरीर में अपूर्व शक्ति उत्पन्न होकर वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान्य पराक्रमी होकर अनेक स्त्रियों से सम्भोग कर सकता है। यह अपने ढंग की एक ही दिव्यगुण युक्त अमृत तुल्य रसायन है। अत्यन्त स्तम्भन शक्ति को उत्पन्न करती है। मूल्य २) रु० तोला मात्रा ३ रत्ती पान के अर्क से ।

वसन्तकुसमाकर रस—इसमें कस्तूरी, मोती, सोना, चाँदी इत्यादि बहुमूल्य पौष्टिक द्रव्य पड़ते हैं यह मधुमेह (डायबिटीज) और उससे उत्पन्न हुई कमजोरी, धातु क्षीणता दिल व दिमाग की दुर्बलता को दूर करने के लिये एक बड़ी ला जवाब दवा है। मूल्य २४) तोला ।

मकरध्वज—५) तोला ।

षड्गुण बलि जारित मकरध्वज—८) तोला इस चमत्कारिक, अमृत तुल्य रसायन, महौषधि के गुण बालक-वृद्ध-युवा सभी मनुष्य अच्छी प्रकार जानते हैं। यह वही दवा है कि जिसके बल से वैद्य लोग मृत्यु के मुख से भी रोगी को निकाल लेते हैं आज तक इस के समान गुण कारी दवा किसी वैज्ञानिक ने ईजाद नहीं की। यही आयुर्वेद की महत्ता है ।

नारसिंह चूर्ण—यह एक बड़ी ही पौष्टिक, वीर्य विकारों के लिये अक्सीर दवा है। मूल्य ।) तोला

कामदेव घृत—मूल्य ८ तोला १॥)

कामाग्नि संदीपन मोदक—मूल्य १ पाव २)

मदनान्दमोदक—मूल्य १ पाव २)

श्री गोपाल तैल—यह तैल अत्यन्त वायु नाशक है इसकी दो या ३ बूंद लिंगेन्द्रिय पर मालिश करने से इन्द्रिय का तिरछापन व टेढ़ापन शीघ्र दूर होकर ध्वजभंग (नामर्दी) व सुस्तीपन दूर होती है।

मन्मथाभ्र रस—मूल्य ३।) तोला।

बृहत् चन्द्रोदय मकरध्वज—इसको २ रत्ती पान में रख कर खाना चाहिये। मूल्य ६) तोला

पूर्ण चन्द्र रस—३) तोला।

चन्दनादि तैल—यह तैल—रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, दाह, दौर्गन्ध्य, कुष्ठ, कण्डू इत्यादि को बहुत जल्द दूर करके शरीर में नवीन शक्ति का संचार करता है। मूल्य १॥) पाव भर।

दशमूलारिष्ट—१६ औंस शीशी २)

शुक्र वल्लभ रस—इसमें सोना, चाँदी की भस्में पड़ती हैं, अत्यन्त वीर्य स्तम्भक, व उत्तेजक है। मूल्य १०) तोला मात्रा २-८ र० तक दूधसे

कामिनी विद्रावण रस—मूल्य १) तोला मात्रा १-३ रत्ती दूध से।

नोट—हर प्रकार के स्वादिष्ट व पौष्टिक पाकों के लिये हमारी पाक मंजरी नाम की पुस्तक मुफ़्त मँगा कर देखिये।

कुछ यूनानी अनभूत सिद्ध औषधियां।

इत्रिफल जवानी—नज़ले की शिकायत में अक्सीर है, मस्तिष्क को शुद्ध करती है, सर, पेट के दर्द के लिये मुफ़ीद है, आंखों की रोशनी को बढ़ाती है मूल्य)॥ तोला मात्रा ६ मासे १ तोला तक।

त्रिफल कश्नीजी—दिमाग़ी बीमारी, पुराने दर्द सर, मेदे की तपख़ीर और उस के दर्द को दूर करता है। कब्ज़ के लिये अक्सीर है, बवासीर में विशेष लाभदायक हैं, नज़ले की कुल बीमारियों में अक्सीर है। मात्रा ६ मासे से १ तोले तक)॥ प्रति तोला

वर्षाशा—कम्पन वाय, किसी बात को भूल जाना (स्मृति नाश), कुलंज का दर्द, मालीखोलिया, जुकाम, नज़ले में अक्सीर है, मात्रा ६ रत्ती सुबह या रात को सोते समय अर्क गाजुवाँ से। फ़ी तोला ≈)

तिर्याक् नज़ला—सब तरह की खांसी और नज़ले में मुफ़ीद है। फ़ी तोला)॥

जवारिश जालीनूस (ज़ाफ़रानी)—मेदे की बीमारियों के लिये यूनानी हकीमों की एक मानी हुई बड़ी मशहूर दवा है, सब अवयवों को शक्ति देती है, पेट के दर्द को दूर करती है, भोजन को हज़म करती

है, मुख की दुर्गन्ध को दूर करती है, रिहार (वायु) को खारिज करती है, जनून (पागलपन) दर्द सर, बलरामी खाँसी, बादी बवासीर, गठिया, सीप, पेशाब की ज्यादती, गुर्दे और मसाने की पथरी में मुफीद है, बालों को स्याह रखती है। मैथुन शक्ति को प्रबल करती है, भूख खूब लगाती है, कब्ज को रफ़ा करती है मात्रा ६-६ माशे सुबह शाम फी तोला ≈)

जबारिश कमूनी (कबीर)—मेदे और आंतों और दिल को क़ूवत देती है, कब्ज़ कुशा, है, पेट के दर्द और कुलंज (आंत के दर्द) को दूर करती है। खट्टी, डकारों, और हिचकी को दूर करती है ।)॥ तोला

जबारिश मस्तगी—मेदे की सर्दी और उस की कमजोरी को दूर करती है, धड़कन, व कफ़ अतीसार, बहु मूत्रता, मुख से पानी बहने में बहुत गुणदायक है, जिगर को क़ूवत देती है। फ़ी तोला)॥ खुराक ६ माशे।

जवाहर मोहरा—यह यूनानी अदवियात में एक मानी हुई अजीब व गरीब दवा है इसका सेवन दिल व दिमाग को क़ूवत देता है, स्वाभाविक शारीरिक उष्णता की रक्षा करता है। मूर्छा व दिल की धड़कन को दूर करता है, यह सोना, मोती, जवाहिरात का मुरक्कब है, सख्त बीमारियों की कमजोरी को दूर करता है, मात्रा दो चावल इसे खमीरा गावज़ुबाँ में खावें। ४) रु० माशे

हब्बे जदवार—दिल व दिमाग को ताक़त देती है, मणि के पतलेपन को दूर करती है, काम शक्तिवर्धक खाँसी और नज़ले को नष्ट करती है। मात्रा १-२ गोली तक सुबह या रात के समय। प्रति तोला १)

हब्बे रसौत—बवासीर के खून व दस्तों को रोकती है, प्रति तोला ।)

खमीरे गाज़ुबाँ अम्बरी—दिल व दिमाग, आंखों की रोशनी को कुव्वत, और स्मृति शक्ति को बढ़ाता है, दिमागी काम करने वालों को अच्छी चीज़ है, ≈) तोला

खमीरे गाज़ुबाँ अम्बरी (जवाहरवाला)—यह ऊपर के खमीरे से ज्यादा गुणकारी है, प्रति तोला ।) और सोने के वर्क वाला ॥) तोला

खमीरा मुरवारीद—दिल व दिमाग को ताक़त देता है, खफ़क़ान व दिल की धड़कन, में बड़ा मुफीद है। रक्तातीस्राव की कमजोरी को दूर करता है, मोतीझरा, और चेचक, में बड़ी कामयाब चीज़ है, दानों को बाहर निकाल कर, दिल की गर्मी व घबराहट को दूर करती है। फी तोला ॥)

दवाउल मिस्क (वारिद जवाहर वाली)—धड़कन, व दिमागी परेशानी को दूर कर के जीवन शक्ति और दिल व दिमाग को

कूवत देती है, दिल की कमजोरी व गर्मी को दूर कर के दिल को फ़रवा करती है। मूल्य ।।।) तोला

खमीरा आबरेशम हकीम अर्शादवाला—सब तरह की (वायु) सौदावी बीमारियों को फायदा करता है, दिल, दिमाग, और जिगर को ताक़त पहुँचाने में अजीब व गरीब है। खाने में बहुत ही स्वादिष्ट है, दिलकी धड़कनको जल्द दूर करता है। ।।।) फी तोला मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक।

अर्क़ अम्बर—दिल व दिमाग़ और आज़ा रईसा को ताकत देने में बेमिसाल है। हर प्रकार की मूर्च्छा, बवासीर या हैज़ (मासिक धर्म) खून के ज्यादह निकलने से जो दुर्बलता होती है, उनके लिये यह अमृत तुल्य है। यह अपना असर तुरन्त ही करती है। फी बोतल २।।) रु०

अर्क़ गाज़रअम्बरी—चेहरे को सुर्ख करता है। नवीनरक्त को उत्पन्न करके, दिल व दिमाग़ को कुव्वत देता है। फी बोतल २)

माजून जालीनूस लूलुई (मोतीवाली)—कुव्वतेबाह और ख्वाहिश को बढ़ाती है, ग़लतकारी और अधिक मैथुन से, गुर्दे, मसाने, इत्यादि में कमज़ोरी आकर, दौराने खून में जो दुर्बलता आ जाती है उसको असली हालत में ले आती है, लिंगेन्द्रिय में, सख्ती और ताक़त पैदा करती है, जोश को देर तक क़ायम रखती है, मर्द की अजमत क़ायम रखती है, चेहरे का रंग निखारती है, खून खूब पैदा करती है, गई हुई शक्ति को फिर वापिस लाती है। १) फी तोले खुराक ६ माशे।

नोट—अर्कों की खास संक्षिप्त सूची आगे आखीर में देखिये।

माजून हाफ़िज़ उलजनीन (अम्बरी) उल्वियाँ—जिन स्त्रियों का हमल बार २ गिर जाता है या बच्चा पैदा होने के बाद परछाँवे या कमेड़े की बीमारी से मर जाता हो, हमल के दिनों में इसको इस्तैमाल करना चाहिये। इससे हमल नहीं गिरेगा, और बच्चा सम्पूर्ण तन्दुरुस्त पैदा होगा। और गर्भ वाली स्त्री की शक्ति पूर्णतया कायम रहेगी। अक्सर तजुर्बे में आया है कि इसके इस्तैमाल से लड़के पैदा हुए हैं। इसको तीसरे महीने से ही खिलाना शुरू कर देना चाहिये। मात्रा ५ माशे अर्क़ गुलाब के साथ सुबह के वक्त खावें। मूल्य ।।) तोला।

मुफ़र्रह याक़ूती—सब तरह की कमज़ोरियों को दूर करती है, दिल व दिमाग़को कुव्वत पहुँचा कर भूख खूब बढ़ाती है, दस्तों और गर्भाशय (रहम) की बीमारी में बड़ी मुफ़ीद है। ।।) तोला खुराक ३ माशे।

शास्त्रीय औषधियों के थोक भाव की संक्षिप्त सूची

कूपी पक्क रसायनें

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
मकरध्वज (षड्गुण बलि जारित स्वर्ण घटित विषोपविष संस्कारित पारद वाला)	र० रा० सु०	१तो० ६०)
मकरध्वज (त्रिगुणबलि जारित स्वर्ण घटित)	,,	१तो० २४)
मकरध्वज (हिंगुलोत्थ पारदद्वारा निर्मित स्वर्ण घटित षड्गुणबलिजारित)	र० सा०	१ तो० ८)
मकरध्वज (स्वर्ण सिन्दूर द्विगुण बलि जारित)	,,	१ तो० ६)
रस सिन्दूर (द्विगुण बलि जारित)	रसायन सार	१ तो० २)
रस सिन्दूर (सम भाग बलिजारित)	रसेन्द्र	१तो० १॥)
मल्ल सिंदूर	सि० भै०	१ तो० ४)
ताल सिन्दूर	र० सा०	१ तो० ४)
शिला सिन्दूर	,,	१ तो० ३)
ताम्र सिन्दूर	,,	१ तो० ३)
नाग सिन्दूर	,,	१ तो० ३)

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
स्वर्ण वंग	योग र०	१ तो० ३)
रस कपूर	र० सा० सं०	१ तो० १)

पर्पटी

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
स्वर्ण पर्पटी	र० सा०	१तो० १०)
विजय पर्पटी	र० रा० सु०	१तो० १२)
विजय पर्पटी नं० १	,,	६मा० १२)
पञ्चामृत पर्पटी	भै० र०	१तो० १॥)
रस पर्पटी	र० रा० सु०	१ तो० १)
लौह पर्पटी	,,	१ तो० १)
बोल पर्पटी	र०सा०सं०	१ तो०॥)
ताम्र पर्पटी	रा०रा० सु०	१तो०१॥)
श्वेत पर्पटी	र० रा० सु०	१तो० =)
जौहर संख्या	उपदंश हर, तथा बलकारक	१तो० २)
जौहर ताल	रक्त शोधक कुष्ठ, उपदंश नाशक।	१तो० २)
हम्मीर रस	उपदंश (आतशक)की खास दवा	१तो०२॥)
रस माणिक्य	कुष्ठनाशक	१तो० १)

भस्में

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
स्वर्ण भस्म	शा०ध०सं०	१तो० ४८)
रौप्य (चांदी) भस्म	र०सा०सं०	१तो० ४)
रौप्य भस्म नं २	,,	१ तो० ३)
ताम्र भस्म नं१ (कज्जली द्वार जारित)	र० रा० सु०	१ तो० २)
ताम्र भस्म नं० २ (गंधक जारित)	,,	१ तो० १
मुक्ताभस्मनं१(कज्जलीद्वारा)	रसे०	१ तो० ४१)
मुक्ता भस्म नं २ श्वेत	,,	१तो० ४०)
मुक्ता शुक्ति भस्म	रसत०	२तो० १॥)
लौह भस्म नं० १ (हिंगुल जारित)	र० रा० सु०	२तो० २॥)
लौह भस्म नं० २ (वनौषधि द्वारा)	,,	२तो० १॥)
वंग भस्म (हरिताल द्वारा जारित निरुत्थ)	,,	२ तो० ३)
वंग भस्म श्वेत	रसे० सं०	२तो० १॥)
नाग (सीसा) भस्म नं १ (मैनसिल से मारी हुई निरुत्थ)	भाव०शार्ङ्ग०	२ तो० ३)
नाग भस्म नं० २	र० सु०	२ तोले १॥)
यशद भस्म	,,	२ तो० १॥)
त्रिधातु (त्रिवंग भस्म)	र० सा०	२ तो० २॥)
मंडूर भस्म	र० सा० सं०	२ तो० १।)
स्वर्ण माक्षिक भस्म	,,	२ तो० २॥)
रौप्य माक्षिक	,,	२ तो० २)
श्वेत अभ्रक भस्म (यह प्रायः सांस, खाँसी के लिये यूनीनी चिकित्सा में काम आती है)	र० रा० सु० ,,	२ तो० १॥)
वज्राभ्रक भस्म	,,	२ तो० ७॥)
कृष्णाभ्रक (सहस्र पुटित)	,,	१ ,, १०)
कृष्णाभ्रक नं० १		,, १०)
,, नं० २		,, ३)
शंख भस्म	र० सा० सं०	,, ॥=)
कपर्दिका भस्म (कौड़ी)	,,	,, ॥=)
प्रवाल भस्म (चन्द्र पुटी नं० १)	,,	,, १॥।)
प्रवाल भस्म नं० २	,,	,, १॥)
गोदन्ती हरिताल ,,	,,	,, ॥।=)
गोदन्ती भस्म नं० १	,,	,, १॥)
स्फटिका भस्म	रस तरङ्गिणी	,, ।–)
पित्तल भस्म	,,	,, १॥)
कांस्य भस्म	,,	,, १॥)
शृंग भस्म (अर्क दुग्ध से बनी हुई)	,,	,, १।)
तबकी हरिताल भस्म	र० रा० सु०	१ तो० ४॥)
संखिया भस्म	रस तरङ्गिणी	,, ३)
लाज वर्द (राजा वर्त)	र० रा० सु०	,, ५)

यूनानी भस्में

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
अकीक भस्म	गुर्दा-पुराना ज्वर- हृदय की धड़कन गुर्दा (बृक्क) रोग	१ तो० १)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
संगेयहूद भस्म नं० १	पथरी शुक्र रोग-मूत्र कृच्छ्र नाशक	१ तो० १)
संगेयशब भस्म	हृदय रोग उन्माद हृदय की धड़कन धनु स्तम्भ प्रसूता का मद ज्वर, हाथ पैर ऐंठना, हिस्टीरिया।	१ तो० ॥)
संगजराहत भस्म	कास, रक्त, वमन, श्वेतप्रदर, मूत्र कृच्छ्र इनको नष्ट करता है, शीतल है।	१ तो० ।)
हजरुलयहूद भस्म नं० २	शीतल, दाह नाशक, शुक्र रोग, पथरी, इनको नष्ट करती है।	५ तो० १॥)
फ़ीरोज़ा भस्म	शीतल — हृदय को बलदायक, रक्तस्तम्भक, रक्त प्रदर, नक्सीर, ज्वर, इनको नष्ट करता है।	२ तो० १)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
ज़मरुद भस्म	दिमाग़ी कमज़ोरी, पैत्तिक रोग, पट्ठों की कमज़ोरी, बुद्धि की मन्दता,	२ तो० १)

शोधित द्रव्य

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
शुद्ध रूमी शिंगरफ़ (हिंगुल)	शार्ङ्ग० रसे० भाव०	२०तोले ४)
शु० आमलासार गन्धक	,,	२० तो० २)
हिंगुलोत्थ पारद	,,	२० ,, ६॥)
संस्कारित पारद	रस०रा०रसा०	२ ,, ३०)
शु० पारद	,,	२तो० १॥।=)
शु० जयपाल	,,	१०तो० ३॥)
शु० वर्क़ी हरिताल	,,	१० ,, ३)
शु० विष	,,	१०तो० १।)
शु० भल्लातक	रसे०-भाव०	१० ,, २)
शु० मैनसिल	रसे०-सुन्दर	१० ,, १।।)
शु० कुचला विषतिन्दुक	रस०	१० ,, १।)
शु० गूगल	रसे०	२ ,, ॥=)
शु० नीलाथोता	रसे०	२ ,, ॥=)
शु० शिलाजतु नं० १ (मलाई सूर्य तापी)	भावप्रकाश	१ ,, १)
शु० शिलाजतु नं०२ अग्नितापी	,,	२ ,, २॥)
शिलाजीत के पत्थर	×	१० सेर ६।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
कमल केसर	×	१ तो० ।−)
कस्तूरी नं० १ (नाफा-खिल्ली)	×	१ तो० ६०)
कस्तूरी नं० २	×	१ तो ४८)
कस्तूरी नं० ३	×	१ ,, ३२)
कस्तूरी नं० ४		१ ,, २४)
केशर (काश्मीरी मोगरा)		१ ,, २॥)
मधु नं० १		१ सेर १॥)
मधु नं० २		१ सेर १)
सत गिलोय		१ तो० ।)
कज्जली		१ ,, ॥)

अधिकारभेद से औषधियोंका थोक मूल्य

रस-गुटिका

ज्वराधिकार

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
मृत्युञ्जय	रसे० भै०	६ तो० १।)
महाज्वराङ्कुश	,,	५ ,, १।)
हिंगुलेश्वर रस	,,	६ ,, १)
तरुण ज्वरारि	,,	६ ,, १)
नारदीय लक्ष्मी विलास	र० रा० सु०	१ ,, ४)
कफ केतु रस	,,	१ ,, ॥)
चन्दनादि लोह	,,	१ ,, १)
श्लेष्म शैलेन्द्र रस	,,	१ ,, ३)
विद्याधर रस	,,	१ ,, २)
अमृत मंजरी	रसेन्द्र	१ ,, ॥)

सन्निपात ज्वर

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
वसन्त तिलक	भै०भा०सं०	३माशे२॥)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
वृ० कस्तूरी भैरव	भै०भा०सं०	३ मा० २॥)
चतुर्भुज रस	,,	३ ,, ६)
रत्न गिरि रस	,,	३ ,, ७॥)
स्वल्प कस्तूरी भैरव	,,	६ ,, ४)
पञ्चानन रस	,,	१ तो० २)
ज्वर केशरी	,,	१ ,, ।॥)
सर्वतोभद्र रस	,,	१ ,, २)

विषमज्वर

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
श्री जय मंगल रस	भैषज्य	६ माशे ६)
शीत भंजी	,,	१ तो० ।॥)
वसन्त मालती		३ मा० ३।)
वृ० सर्व ज्वरहर (सोने वाला) लौह	,,	३ माशे ३॥)
सर्व ज्वरहर लौह	,,	२॥ तो० १।)
पुटपक्वविषम ज्वरान्तक लौह	,,	३ माशे २॥)
स्वच्छन्द भैरव	,,	१ तो० ।॥)
मकरध्वज (स्वर्णघटित)	भैषज्य	१ तो० ४)
षड्गुणबलि जारित मकरध्वज	,,	१ तो० ७)
चिन्तामणि रस	,,	१ तो० १॥)
सिद्ध मकरध्वज	,,	३ माशे ७॥)
ज्वरारि अभ्र	,,	१ तो० २॥)
श्लेष्म कालानल रस	,,	१ तो० ३)
वेताल रस	,,	१ तो० १)

नोट—खनिज द्रव्यों का बाजार भावके अनुसार मूल्य में कमी बेशी हो सकती है।

ज्वरातीसार, अतीसार, संग्रहणी-

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम		मूल्य	
सिद्ध प्राणेश्वर	रसेन्द्र०	भैष०	४ तो०	४)
कनकसुन्दर	,,	,,	४ तो०	१)
आनन्दभैरव	,,	,,	४ तो०	१)
कर्पूररस	,,	,,	४ तो०	३)
महाराज नृपतिवल्लभ	,,	,,	१ तो०	२।)
महागन्धक	,,	,,	२ तो०	१॥।≠)
लोकनाथ	,,	,,	४ तो०	४॥)
ग्रहणीगजेन्द्र वटिका	,,	,,	४ तो०	४)
हंस पोटली	,,	,,	४ तो०	३)
चित्रक गुटिका	,,	,,	४ तो०	२।)
कणाद्य लोह	,,	,,	२ तो०	१)
जातीफलादिवटी	,,	,,	२ तो०	४)
ग्रहणी कपाट रस	,,	,,	१ तो०	।॥)
हिरण्यगर्भ पोटलीरस	,,	,,	४।। माशे	४)

अर्श [बवासीर]—

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य	
अर्शः कुठार	रसेन्द्र	१ तो०	१)
चन्द्रप्रभावटी	,,	२ तो०	१॥)
अग्निमुख लौह	भैषज्य	४ तो०	४)
वृ० सूरण मोदक	,,	१०तो०	१॥)
प्राणदा गुटिका	,,	१०तो०	१।)
कांकायन गुटिका	,,	१०तो०	१।।)
बाहुशाल गुड	,,	२०तो०	१।।।)

अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि—

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य	
श्रीराम बाणरस	रसेन्द्र	२ तो०	१।।।)
अग्नि तुण्डीवटी	भैष०	१०तो०	२)
शंखद्राव	रसरा० भैष०	१ ड्राम	१)
महाशंखवटी	भाव० रसरा०	५ तो०	२)
गन्धकवटी	रसायन०	१०तो०	२)
संजीवनीवटी	शार्ङ्ग० सं०	५ तो०	१।)
अग्निकुमार	रसेन्द्र	५ तो०	१)
वडवानलरस	,,	२ तो०	१)
अजीर्ण कण्टकरस	,,	२ तो०	१
क्रव्यादरस	,,	१ तो०	२)
वृ० लवंगादिवटी	,,	१ तो०	२)
चिन्तामणिरस	,,	२ तो०	१।।।)
सुधासागर रस	,,	२ तो०	१।।)
अग्निसन्दीपन रस	,,	१ तो०	२)
पाशुपत रस	,,	१ तो०	३)

क्रिमि [पेट के कीड़े]

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम		मूल्य	
क्रिमि मुद्गर रस	भैषज्य		५ तो०	१)
क्रिमि कालानल रस	,,	रसेन्द्र	५ तो०	४)
विडंग लौह	,,	,,	५ तो०	१)
क्रिमि घातिनी गुटिका	भैषज्य		२ तो०	१)

पाण्डु, कामला, यकृत् [जिगर तिल्ली]

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य	
नवायस लौह	शार्ङ्ग	५ तो०	२)
पुनर्नवादि मंडूर	भैषज्य	५ तो०	१।)
पञ्चामृत लौह मंडूर	,,	५ तो०	४॥)
प्लीहारिरस	,,	५ तो०	४)
धात्री लौह	,,	२ तो०	१।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
विडंगादिलौह	,,	२ तो० १।)
कामलान्तक लौह	,,	२ तो० ३)
पाण्डु पञ्चानन रस	,,	२ तो० १।)
प्राणवल्लभरस	,,	२ तोले १॥)
चित्रकादि लौह	भैषज्य	४ तो० १।)
प्लीहारि वटिका	,,	२ तो० ३)
लोकनाथरस	भैषज्य	२ तो० ३)
यकृदरि लौह	,,	१ तो० २)
महामृत्युञ्जय लौह	,,	२ तो०२॥)

रक्त, पित्त, राजयक्ष्मा-खांसी

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
मालती बसन्त	भैषज्य	१ तो० १२)
चन्द्रामृत रस	,,	२ तो० २॥)
बसन्त तिलक	आ० सं०	३ मा० ५॥)
राजमृगांक रस	भै० र०	६ मा० २)
मकरध्वज	र० रा० सु०	१ तो० ४)
श्लेष्म शैलेन्द्र रस	भै० र०	१ तो० ३)
शृङ्गाराभ्र	,,	२ तो० २)
शतमूल्यादि	,,	२॥ तो० १)
रक्तपित्त कुल कुठार	,,	२॥ तो० १।)
क्षयान्तक लौह	,,	२ तो० २)
मृगांक रस	,,	१॥ मा० २)
स्वर्णगर्भ पोटली रस (हीरे वाली)	,,	१॥मा०१२॥)
हेमगर्भ पोटली रस	,,	१॥मा० ३॥।)
पंचामृत रस	,,	२॥ तो० २)
कास संहार भैरव	भै० र०	४ तो० २)
कास कुठार रस	,,	४ तो० १)
लवंगानन्द रस	,,	१ तो० २)

श्वास-हिक्का

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
श्वास कुठार	रसे०	२ तो० १॥-)
श्वास कास चिन्तामणिरस	रसेन्द्र	१॥मा० ३॥।)
महाश्वासारि लौह	भैषज्य	२॥ तो० २)
घोड़ा चोलि रस	र०रा०सु०	२ तो० १)
कालेश्वर रस	,,	३ मासे २॥)

अपस्मार (मृगी) उन्माद, मूर्छा

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
चतुर्भुज रस	र० रा० सु०	१॥ मा० ३)
उन्माद भञ्जन रस	,,	२ तो० २॥)
वात कुलान्तक	,,	२॥ ,, १०)
ब्रह्म वटी	,,	२ ,, ३)

वात व्याधियां-आमवात

(लक़वा-फ़ालिज वगैरा)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
चिन्तामणि चतुर्मुख	भैषज्य	३ माशे ७॥)
वात गजाङ्कुश	रसेन्द्र	२ तो० ६।)
बृ० वात चिन्तामणि	,,	६ माशे ६)
महा लक्ष्मी विलास	,,	२ तो० ९)
वात गजेन्द्रसिंह	,,	२ ,, ५)
चतुर्मुख (कृष्ण)	,,	१ ,, ०)
चिन्तामणि रस	भैषज्य	६ माशे ६)
आम वातारि रस	,,	४ तो० १)
स्वच्छन्द भैरव	रसराजसुन्दर	२॥ ,, २)
एकांग वीर रस	र० रा० सु०	२ ,, ४)

वातरक्त-शीतपित्त, कुष्ठ, श्वित्र-विसर्प रक्त विकार इत्यादि

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
विश्वेश्वर रस	र० रा० सु०	२॥ तो० १।)
गलत्कुष्ठारि रस	रसेन्द्र	२॥ ,, ५)
वात रक्तान्तक रस	,,	५ ,, ५)
अमृतांकुर लौह	,,	२ ,, ५)
कुष्ठ कुठार रस	,,	५ ,, ४)
श्लेष्म पित्तान्तक रस	भैषज्य	५ ,, ५)
रस माणिक्य	,,	२ ,, ३)
भूत भैरव	,,	२ ,, ३)

शूल-अम्लपित्त-परिणामशूल

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
धात्री लौह	भैषज्य	५ तो० ७॥)
महा शंख वटी	रसेन्द्र	१ ,, ३॥)
प्राण वल्लभ रस	भैषज्य	५ ,, ४)
तारामन्डूरगुडः	,,	३ ,, १)
अम्लपित्तान्तक लौह	भै० मू० व०	२॥ ,, ५)
त्रिफलामंडूर	,,	५ ,, २॥)
लीला विलास	,,	२ ,, ४)

उदावर्त-गुल्म (वायगोला) आनाह

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
नाराचरस	भैषज्य	५ तो० १।)
कांकायनगुटिका	,,	१० ,, १॥
वडवानल रस	,,	५ ,, ६।)
गोपी जल	,,	५ ,, २)
इच्छाभेदी रस	,,	५ ,, १॥)
वृ० गुल्मकालानल रस	,,	५ ,, ६)
गुल्म शार्दूल रस	,,	५ ,, ४)

हृद्रोग (दिल की बीमारियां

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
त्रिनेत्र रस	भैषज्य	२॥ तो० ५)
चिन्तामणि रस (सोने चांदी वाला)	,,	६ माशा ५)
हृदयार्णव रस	,,	५ तो० ४)
शंकर वटी	,,	५ ,, ५)

मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात (पेशाब बन्द होना) अश्मरी (पथरी)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
तारकेश्वर रस	भैषज्य	२ तो० ५)
चन्द्र प्रभावटी	,,	१० ,, ४)
वरुणाद्य लौह	,,	५ ,, ४)
चन्द्र कला रस	,,	५ ,, ४)
त्रिविक्रम रस	,,	५ ,, ३।)

प्रमेह (जरियान) मधुमेह, धातुदौर्बल्यता-बहुमूत्रता

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
वसन्त कुसुमाकर	भैषज्य	१॥ माशे ५)
चन्द्र प्रभा	,,	५ तो० २)
स्वर्ण प्रभा	,,	१ ,, ३)
सोमनाथ रस	,,	५ ,, २॥)
शिला जत्वादि वटी (स्वर्ण भस्म वाली)	,,	६ मा० ७॥)
मेहमुद्गर रस	,,	५ तो० ५)
मेह कुलान्तक रस	,,	५ ,, २॥)
वृ० बंगेश्वर रस (सोना मोती वाला)	,,	३ माशे ४॥)

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
वसन्त तिलक	भैषज्य	३ मा० ५॥)
इन्द्र वटी	,,	२ तो० ३॥
बृ० पूर्ण चन्द्र	,,	६ माशे ३॥)
पूर्ण चन्द्र	,,	१ तो० ३)

उदर रोग

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
इच्छाभेदी रस	भैषज्य	५ तो० १॥
नाराच रस	,,	५ ,, १।)
चोंदा चोली रस	,,	२ ,, १
जलोदरारि रस	,,	२ ,, १)
लोकनाथ	,,	२ ,, ३)
यकृत्प्लीहारि लोह	,,	५ ,, ४)
त्रैलोक्य सुन्दर रस	,,	२ ,, १)

शोथ (सूजन) अन्त्रवृद्धि श्लीपद भगन्दर

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
त्रिनेत्राख्य रस	भै०	२तो० ५)
शोथ कालानल रस	,,	२तो० ४)
पञ्चामृत रस	,,	५तो० ५)
स्वर्ण पर्पटी रस	,,	१तो० १०)
वातारि रस	,,	५तो० २॥)
नित्यानन्द रस	,,	५तो० ४)
अग्निमुखमँडूर	,,	५तो० २)
बुध्न वटी	,,	२तो० ४)
ताम्र वटी	,,	२तो० ३)
शशि शेखर रस	,,	१तो० २)
श्लीपद गज केशरी	,,	२तो० २)

उपदंश

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
फिरंग गज केशरी	योगरत्नाकर	१तो० ३)

क्षुद्ररोग

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
बृ० खदिर वटिका	भैषज्य	२तो० १)
चन्द्रोदयादि वर्ती	,,	१तो० १)
चित्रक हरीतकी	,,	२०तो० २)
महा लक्ष्मी विलास	,,	१तो० ४)
शिर: शूलादि वज्र रस	,,	५तो० १)

स्त्रियों और बच्चों के रोग

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
प्रदरान्तक लौह	भैषज्य	५ तो० ५)
गर्भ चिन्तामणि	,,	१तो० १)
सूतिकारि रस	,,	१तो० २॥)
दन्तोद्भेदगदान्तक	,,	५तो० ४)
मदागन्धक	,,	२तो०१।॥=)
सूतिकान्तक रस	,,	२॥तो० ६)
प्रदररिपु	,,	२तो० १)
नष्ट पुष्पान्तक रस	,,	२तो० ३)
रज:प्रवर्तिनी वटी	,,	४तो० १)
कुमार कल्याण रस	,,	१॥मा० ६)

रसायन-वाजीकरण

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
वसन्त कुसमाकर रस	भैषज्य	१॥ माशे ५)
मकरध्वज	रसेन्द्र	१ तो० ४)
मदनानन्दमोदक	भैषज्य	२० ,, २)
मन्मथाभ्र रस	,,	१ ,, ३।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
बृ० चन्द्रोदय मकरध्वज	भैष०	१ तो० ८)
पूर्ण चन्द्ररस	,,	१ ,, २
कामिनीविद्रावण रस	,,	१ ,, १)
गुग्गुलुः		
त्रयोदशाँग गुग्गुलुः	वातव्याधि	२० तो २)
कैशोर गुग्गुलुः	वात रक्त	२० तो० २)
महायोगराज (सप्त धातु मिश्रित)	आम वात (गठिया)	४ ,, १)
योगराज (चक्रदत्त)	,,	२० ,, २)
सिंहनाद गूगल	आम वात	१० ,, १।)
गोक्षुरादि गूगल	मूत्र कृच्छ्र पथरी	१० ,, १।)
कांचनार गूगल	गंड माला अपची।	१० ,, १।)
अमृतादि गुग्गुलुः	भगन्दर	१० ,, १।)
सप्ताँग गुग्गुलुः	कुष्ठ-नाड़ी-व्रण	१० ,, १)
नवक गुग्गुलुः	स्थौल्यता-भगन्दर	१० ,, १)
चन्द्र प्रभा गुग्गुलुः	प्रमेह	५ ,, २॥)
सप्तविंशतिको गुग्गुलुः	भगन्दर बस्तिशूल आदि पर	१० ,, १।)
शिवा गुग्गुलुः	आम वात (गठिया)	१० ,, १॥)
चूर्ण		
वृ० सुदर्शन चूर्ण	जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर	१ सेर ४)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
ज्वर भैरव चूर्ण (भैषज्य)	ज्वर	१ सेर ३॥)
निम्बादि चूर्ण (आयत-काश)	विषम ज्वर	१ सेर ३)
गँगाधर चूर्ण	अतीसार	१ सेर २)
जाती फलादि चूर्ण	,,	ऽ॥ सेर ३)
वृ० लाई चूर्ण	संग्रहणी	२०तो० ६।)
लवँगादि चूर्ण	,,	४०तो० ३)
भास्कर लवण	अग्निमान्द्य	१ सेर ४)
हिंग्वष्टक	,,	२० तो० १।॥=)
कपित्थाष्टक	अरुचि	१ सेर २॥)
चन्दनादि चूर्ण	प्रमेह	१ सेर ३॥)
तालीशादि	कास-अरुचि	१ सेर ४)
सितोपलादि	कास जीर्ण ज्वर	ऽ॥ सेर ३॥)
कामदेव चूर्ण (रस चिन्तामणि)	वाजीकरण	ऽ१ सेर ५)
सामुद्रादि चूर्ण	उदरशूल	ऽ१ सेर ६)
यवानिकादि चूर्ण	,,	२० तो० ३=)
यवानी षाँडव	अरुचि	२० तोला २॥)
नारायण चूर्ण	उदर रोग	१ सेर २)
पुष्यानुग चूर्ण	प्रदर रोग	१ सेर ४)
अविपत्तिकर चूर्ण	अम्लपित्त	२० तो० १॥)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
अर्क लवण	तिल्ली	२०तो० १)
अभया लवण	जिगर-तिल्ली	१० तो० १॥=)
दन्त मुक्ताकर मंजन	दन्त रोग	१ शीशी ।)
अपामार्ग तण्डुलीयनस्य	शिरो रोग	५ तो० १।)
नारसिंह चूर्ण	धातु पौष्टिक	२० तो० २॥)
अश्वगंधादि चूर्ण	वीर्य विकार	२० तो०॥।)
आमलक्यादि चूर्ण	ज्वर-अरुचि कफ	२० तो०॥।)
त्रिफला चूर्ण	कब्ज-रक्त-विकार ।	२० तो० ॥)
दाडिमाष्टक	अतीसार-अरुचि	४०तो०१॥)
यवक्षारादि चूर्ण	बच्चों की खांसी कफ विकार	१०तो०१॥)
शृंग्यादि चूर्ण	बच्चों की खाँसी ज्वर-पसीली,	१०तो०१॥)
दशांग लेप	विसर्प शोथ	४०तो०१॥)
चव्यादि चूर्ण	स्वरभेद-पीनस कफ-अरुचि	ऽ।पावभर१॥)
बालभद्राव लेहिका	बच्चों की खाँसी कफज ज्वर,	ऽ= ।॥)
जीर काद्य चूर्ण	ग्रहणी रोग	ऽ। २)
पञ्चकोल चूर्ण	अजीर्ण कफ खांसी	ऽ। १)
बड़वानल चूर्ण	अजीर्ण	ऽ। ।।।)
बृ० नायिका चूर्ण	ग्रहणी रोग शोथ-शूल अतीसार	ऽ। २)
मरिचादि चूर्ण	कास	ऽ। ।।।)
समशर्कर चूर्ण	कास-श्वास अरुचि मन्दाग्नि	ऽ। १)
लवणोत्तमादि चूर्ण	बवासीर	ऽ। १।)
व्योषादि चूर्ण	ज्वरातीसार गृहणी	ऽ। १।)
सारस्वत चूर्ण	उन्माद	ऽ। १॥)
न्यग्रोधादि चूर्ण	प्रमेह मूत्र कृच्छ्र	ऽ। २)

आसव-अरिष्ट

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
अमृतारिष्ट	ज्वर	२ सेर ५)
कुटजारिष्ट	अतीसार - संग्रहणी	२॥ सेर ४)
पिप्पल्यासव	क्षय-गुल्म-पाण्डु	२॥सेर २॥)
अभयारिष्ट	अर्श उदरविकार	२॥ सेर ५)
दन्त्यरिष्ट	उदर विकार बवासीर	२॥ सेर ५)
शँख द्राव	गुल्म-शूल	४ड्रामशी०४)
विडंगारिष्ट	अन्तर्विद्रधि अन्दर का फोड़ा	२॥सेर ५)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
लोहासव	प्लीहा	२॥सेर २।)
धात्र्यरिष्ट	पाण्डु-कामला	२॥सेर २॥)
कुमार्यासव	उदर-गुल्म	२॥सेर ४)
उशीरासव	रक्तपित्त	२ सेर २)
द्राक्षासव	क्षय-खाँसी	२॥सेर ५॥)
(योग चिन्तामणि)	अरुचि	
द्राक्षारिष्ट	,,	२॥सेर ४)
जँग्रासव	दौर्बल्यता	१॥सेर ७॥)
	खून की कमी	
कनकासव	कास-श्वास	२॥सेर २॥)
दशमूलारिष्ट	प्रसूत कम-	२॥सेर ५।)
	ज़ोरी	
अश्वगन्धारिष्ट	कमजोरी-	२ सेर ४॥)
	मूर्छा	
खदिरारिष्ट	कुष्ठ-रक्त-	२ सेर ४)
	विकार	
पार्थाद्यरिष्ट	हृदय रोग	२ सेर ४)
	रक्त पित्त	
चन्दनासव	प्रमेह-वीर्य-	२ सेर ४॥)
	[illegible]र	
देवदार्व्यरिष्ट	,,	२ सेर ४)
लोध्रासव(आयुर्वेद संग्रह)	प्रमेह प्रदर	२ सेर ४॥)
रोहितकारिष्ट	जिगर तिल्ली	२ सेर ४॥)
पुनर्नवाद्यरिष्ट	शोथ(सूजन)	२ सेर ४)
सारिवाद्यरिष्ट	रक्त विकार	२ सेर ४॥)
अशोकारिष्ट	प्रदर	२ सेर ४)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
पत्रांगासव	स्त्रीरोग	२ सेर ४)
अरविन्दासव	बालरोग	२ सेर ४)
कूष्माण्डासव (योग चिन्ता मणि)	श्वास-कास	२ सेर ८)
जम्बीरीद्राव	उदर रोग	२ सेर ८)
बब्बूलाद्यरिष्ट	कास-श्वास	२॥सेर २॥)
अर्क		
महामंजिष्ठादि	रक्त विकार	२ बो० १॥)
	वात रक्त	
अर्क दशमूल	प्रसूति-शोथ	,, ,, १)
अर्कसुदर्शन	मलेरिया,	,, ,, १)
	जीर्ण ज्वर	
पुनर्नवाष्टक	शोथ-जल-ज्वर	,, ,, १)
घृत		
बिन्दुघृत	उदर रोग	२०तो० १॥)
अर्जुनघृत	हृदय रोग	ऽ। २)
जात्यादिघृत	व्रण (जख्म)	ऽ। २)
महात्रिफलादिघृत	नेत्ररोग	ऽ। २।)
फल कल्याणघृत	स्त्री रोग (बन्ध्यात्व)	,, २)
कामदेवघृत	वाजीकरण	,, २॥।)
कासीसादिघृत	व्रणनाशक	,, २॥)
ब्राह्मीघृत	अपस्मार-उन्माद,	,, १॥।)
सारस्वतघृत	मेधाशक्ति वर्धक	ऽ। १॥।)
चैतसघृत	,,	ऽ। १)

तैल

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
किरातादि तैल	ज्वर	ऽ॥ २)
अँगारक तैल	,,	,, २॥)
लाक्षादि तैल	,,	,, ३)
महालाक्षादि तैल	,,	,, ४)
बृ० चन्दनादि	,,	,, ५)
बृ० ग्रहणीमिहिर तैल	ग्रहणी	,, ३)
बृ० कासीसादि तैल	अर्श:	,, ३)
पिप्पल्यादि तैल	अर्श:	,, ३)
चन्दनादि तैल	यक्ष्मा	,, ५)
नारायण तैल	वातव्याधि	,, ३)
मध्यम नारायण तैल	,,	,, ५)
कुब्ज प्रसारिणी तैल	,,	,, ३)
श्रीगोपालतैल (कस्तूरीरहित)	वाजीकरण	,, ७॥)
,, (कस्तूरी सहित)	,,	,, १६)
बृ० मरिच्यादि तैल	वात रक्त	,, ३)
बृ० सैन्धवादि	आम वात (गठिया)	,, ३)
विषगर्भ तैल	,,	,, २॥)
बृ० भयाराक्षस तैल	भय	,, ४)
कुंकुमादि तैल	मुखसौन्दर्य	,, ४)
भृंगराज तैल	शिरोरोग	,, ३)
चन्दनादि तैल	नीलिपलित	,, ३)
क्षार तैल	कर्ण शूल	,, ४)
स्वर्जिकादि तैल	,,	,, ३)
षड्बिन्दु तैल	शिरो रोग	,, ३)
प्रमेह मिहिर तैल	प्रमेह	,, ३)
वासा चन्दनादि तैल	यक्ष्मा-क्षय	ऽ॥ १)
	उरःक्षत-कास जीर्ण ज्वर	ऽ॥ १)
माष तैल	वातव्याधि	,, ३)
मल्लतैल (संखियेकातैल)	वात रोग नपुंसकता	१ तो० ४)
हिम सागर तैल	वात रोग	२० ,, ४)
विष्णु तैल	,,	२० ,, ४)

क्षार-लवण-सत्व

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
वज्र क्षार	उदर-गुल्म-अजीर्ण तिल्ली	१० तो० १)
अपामार्ग क्षार	मूत्र का रुकना खांसी-साँस	१० ,, १)
वासा क्षार	कास-श्वास	१० ,, १॥)
कटेली क्षार	,, ,,	१० ,, १)
केले का क्षार	मूत्रावरोध	१० ,, २)
इमली क्षार	अजीर्ण	१० ,, १॥)
तिल क्षार	,,	१० ,, २)
पलाश क्षार	रक्त गुल्म	१० ,, १॥)
अर्क क्षार	तिल्ली	१० ,, १)
यव क्षार	मूत्राघात	१० ,, १)
गिलोय का सत्व	जीर्ण ज्वर प्रमेह	५ ,, ३।)
सत शिलाजीत नं० १	धातुदौर्बल्य	५ ,, ३)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
धतूरे का क्षार	कास-श्वास	१ तो० १।)
शरपुंखा क्षार	यकृत्	१० ,, १।)
अर्क लवण	तिल्ली-गुल्म	१ ,, ॥)
अष्टाङ्ग लवण	मदात्य	१ ,, २)

खण्ड-मोदक-अवलेह-पाक

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
कुटजावलेह	अतिसार-संग्रहणी	१ सेर १॥)
बृ० सूरण मोदक	अर्श	½ ,, ४)
वासा कूष्माण्ड खण्ड	रक्त पित्त	¼ ,, २)
कूष्माण्ड खण्ड	,,	१ ,, ४)
नारिकेल खण्ड	,, शूल	¼ ,, २)
बृ० वासावलेह	कास-श्वास	१ ,, ४)
च्यवनप्राशावलेह	धातु-दौर्बल्य	२ ,, ७)
कुशावलेह	मूत्र कृच्छ्र-मूत्राघात-उष्णवात-सूजाक (गनोरिया)	१ ,, ४)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
हरिद्रा खण्ड	शीत पित्त पित्तीउछलना	ऽ॥ १)
चित्रकहरीतकी	प्रतिश्याय-नजला	ऽ॥ ३)
सौभाग्य शुण्ठी पाक	प्रसूत (स्त्री-रोगों पर)	,, २॥)
भार्ङ्गीगुड	कास	,, ३)
कण्टकारि अवलेह	कास	१ सेर २)
सिद्ध सुपारी पाक	प्रदरकमजोरी	,, ,, ७)
सुपारी पाक	,,	,, ,, ४)
सिद्धलाक्ष पाक (रजिस्टर्ड)	धातुदौर्बल्य	,, ,, ७)
सालबपाक	,,	,, ,, ४)
बादाम पाक	,,	,, ,, ४)
अश्वगन्धा पाक	,,	,, ,, २)
मदनानन्द मोदक	,,	,, ,, ७)
बाहुशालगुड	,,	२० तो० १॥)

नोट—हर प्रकार के स्वादिष्ट व पौष्टिक पाकों के लिये हमारे यहां की पाक मंजरी नाम की पुस्तक मुफ्त मँगाकर देखिये।

स्वप्नदोष नाशकवटी

ये गोलियाँ स्वप्नदोष (बद ख्वाब) के रोगियों लिये अमृत तुल्य गुणकारी हैं, इनके थोड़े ही दिन के सेवन से ख्वाब में बिगड़ना, धातु का पतलापन, बहुत जल्द दूर होकर शरीर हृष्ट, पुष्ट, शक्तिशाली बन जाता है। मूल्य २४ गोलियों की शी० १) । ३ शीशी २॥) डाक व्यय प्रथक्।

अजीब व गरीब तिला

बचपन की खराब आदतों व युवावस्था की अत्यन्त विषय वासना, हस्तमैथुन इत्यादि से जो इन्द्रिय छोटी, पतली, टेढ़ी और दुर्बल होजाती है इसके थोड़े ही दिन लगाने से ये सब शिकायतें बहुत जल्द दूर होकर लिंगेन्द्रिय स्थूल, और दृढ़ होजाती है, और मैथुन शक्ति प्रबल होकर पुरुष सन्तानोत्पत्ति के योग्य होजाता है, और इस से किसी प्रकार की हानि नहीं होती, और न छाला वगैरा ही पड़ता है। मूल्य १ शीशी २) छोटी शीशी १।) बड़ी तीन शीशियाँ ५) डाक व्यय आदि प्रथक।

नस ढीली की पोटलियां

(नामर्दी की अजीब दवा)

जिन पुरुषों ने हस्त मैथुन, प्रकृति विरुद्ध मैथुन, अकाल मैथुन, और अति मैथुन से लिङ्गेन्द्रिय को बेकार कर लिया है, उन मनुष्यों को इन पोटलियों की एक हफ्ते तक सेक करने से लिङ्ग में कैसा ही ढीलापन और सुस्ती व कमज़ोरी हो निहायत ताक़त आजाती है। बूढ़े को मानिन्द जवान के कर देती हैं। मूल्य १४ पोटलियों की जो एक सप्ताह के लिये काफी हैं सिर्फ ३) है। डाक व्यय आदि पथक।

सिद्ध उपदंश कुठार रसायन

[रजिस्टर्ड]

(आतशक की अक्सीर गोलियाँ)

इन गोलियों के सेवन से आतशक और उससे उत्पन्न हुए कुल उपद्रव अति शीघ्र जड़से दूर होकर शरीर कुन्दन की भाँति चमकने लगता है। न इनसे मुह आता है और न उल्टी, दस्त आदि ही होते हैं। क्योंकि इनमें पारे और संखिये की मिलावट नहीं है। आप आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त गोलियां मंगाकर सेवन कीजिये क्योंकि यह भयानक रोग एक से दूसरे को लग कर पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। इसलिये इसकी चिकित्सा में लापरवाही करना बड़ी भारी नादानी है। मूल्य एक शीशी मय मर्हम की डिबिया के ४) ।

काया कल्प वटी

(चर्म रोगों की अद्भुत दवा)

इसके फायदे इसके नाम से ही जाहिर होते हैं। इसके सेवन से शरीर अति साफ चमकीला और नवजात शिशु की भाँति कान्तिमान बन जाता है। सर्व प्रकार के चर्म रोग फोड़े, फुन्सी, दाद, खाज, स्याह व सफेद दाग मुंह की झाँई, आतशक, सूज़ाक, के विष से उत्पन्न हुए सारे उपद्रव और चम्बल आदि बड़े २ भयानक रोग

दूर होकर शरीर कान्तिमान होजाता है। अर्थात् यह गोलियाँ सर्व प्रकार के चर्म रोगों के लिये एक अद्भुत राम बाण दवा हैं। मूल्य १६ गोलियों का १) डाक व्यय प्रथक।

कृच्छ्र नाशक

(रजिस्टर्ड)

(सूज़ाक व क़ुरहा का अचूक इलाज)

रजस्वला स्त्रीके साथ विषय करनेसे, गर्म चीज़ों के इस्तेमाल से अथवा चूने की तपी हुई छत पर गरमी में पेशाब करने से और धूप में अधिक देर तक काम करने से अक्सर यह रोग हो जाता है। जिससे लिङ्गेन्द्रिय के मुख पर वरम हो जाता है पैशाब में जलन, खून और पीप का आना शुरू हो जाता है। फिर धीरे २ उसमें क़ुरहा पड़ जाता है। हमारा **कृच्छ्र नाशक** इन सब दर्दनाक हालतों को एक सप्ताह ही में पूर्णतया आराम कर देता है। चीस, चबक, जलन तो २४ घण्टे में ही जाती रहती है मूल्य फ़ी शीशी १।) तीन शीशी एक बार लेने पर ३) डाक व्यय प्रथक।

बृहत् प्लीह नाशक वटी

(तिल्ली दूर करने की अक्सीर दवा)

यह गोलियाँ तिल्ली के लिये अमृत समान गुणकारी हैं। बचों की बढ़ी हुई तिल्ली और पेट का ढीलेपना बहुत जल्द दूर होकर भूख बढ़ने लगती है, और शरीर में नवीन रक्त उत्पन्न करके शक्ति देती है। मूल्य ४८ गो० की० २॥)

सर सुगन्ध

यह सर धोने का निहायत ख़ुशबूदार मसाला है जो कि झड़ते हुये बालों की जड़ों को मज़बूत करके उनको मुलायम और भौंरे के समान काला बनाता है। मूल्य ।) पैकेट

बृहत् समीर पन्नग वटी रसायन

(रजिस्टर्ड)

इसके सेवन से एड़ी से चोटी तक के सर्व प्रकार के शारीरिक दर्द चाहे वह वात पित्तादि किसी भी दोष व किसी कारण से कैसा ही सख्त क्यों न हो उसे दूर करने में बिजलीकी भाँति असर दिखाती हैं। दर्दसे बेचैन मनुष्य तुरन्त हंसने लगता है। इसके अतिरिक्त यह गोलियाँ माहवारी को साफ़ लाने व नलों के दर्द में अपना तुरन्त असर दिखाती हैं। मूल्य ३२ गोलियों की एक शीशी का १) डाक व्यय पृथक।

आनन्द वर्धक तैल

यह एक अद्भुत तैल बड़ी बड़ी क़ीमती दवाओं के मिश्रण से ख़ास तौर पर बनाया जाता है। इस को अपनी प्रिया से आलिङ्गन करने के ५-७ मिनट पहिले लिङ्गेन्द्रिय पर लगाया जाता है जिससे कि बिल्कुल बेकार, मुर्दा लिंगेन्द्रिय में भी चैतन्यता (तेज़ी) और दृढ़ता आ जाती है। और अक्सर में इतना प्रेम हो जाता है कि जिसको बयान नहीं किया जा सकता; बस इसके सेवन से ही इसकी ख़ूबियाँ मालूम हो सकती हैं। यह चीज बड़े २ रईसों राजाओं के सेवन करने योग्य है। प्रति शी० ५)

कोष्ठ वद्धारि वटी

ये गोलियाँ अत्यन्तपाचक, कब्जकुशा, जिगर और मेदे को ताकत देने वाली हैं। इनके खाने से भूख खूब बढ़ जाती है, पेट साफ और हल्का रहता है, दस्त बिना तकलीफ के आसानी से आजाता है. दायमी कब्ज के लिये तो ये गोलियां अक्सीर हैं। २ गोलियां रात को सोते समय दूध से लेनी चाहिये। कीमत २४ गोलीकी शीशी ॥) १२ शीशी का ५) डाक व्यय पृथक्।

शूलगज हरि

इन गोलियों के सेवन से, पेट का फूलना, हवा का ज्यादह पैदा होना, वाय गोला, शूल इत्यादि सब प्रकार के उदरविकार दूर होते हैं। मूल्य २४ गोली का ॥)

अतिस्वादिष्ट चूर्ण की गोलियां

ये गोलियां बहुत ही खुश मजा हैं। खाने के बाद १-२ गोली अवश्य ही खानी चाहियें खाना हजम होकर एक दो डकार आकर मन प्रसन्न होजाता है। बदहजमी, क़ै, जी मिचलाना हैजा (विसूचिका) आदि के लिये निहायत अक्सीर हैं। मूल्य फी० शीशी ॥)

सिद्धश्वास कुठार रसायन

दमा एक खौफनाक मर्ज है. इसका मरीज प्रति दिन कमजोर व दुबला होता जाता है, इसकी तकलीफ अक्सर रात को ज्यादह होती है, दौरे के वक्त खांसते २ दम फूल जाता है, पसलियां दुःखने लगती हैं। कभी २ दम इतना उखड़ता है कि सांस लेना दुश्वार हो जाता है, मरीज घबरा कर उठ बैठता है। बदन पसीना २ होजाता है। इसके सिवाय खाँसी हमेशा उठती रहती है, और दम सा घुटा रहता है। ऐसी दर्दनाक हालतों में हमारा **श्वास कुठार** निहायत ही मुफीद रहता है, पहले ही दिन के सेवन से दमा बिलकुल दब जाता है। दौरे के वक्त एक दो खुराक देने से ही जादू का सा असर दिखाता है, बलग़म आसानी से निकलकर रोगी को चैन पड़ जाता है, इसी तरह कुछ अर्से के इस्तेमाल से दमे की जड़ बिलकुल जाती रहती है। मूल्य ५० गोली ३)

प्रतिश्याय नाशक

(जुकाम दूर करने की हुक्मी गोलियां)

नए और पुराने जुक़ाम के वास्ते अत्यन्त लाभ दायक हैं कुछ ही दिनों के सेवन से मस्तिष्क शक्ति बढ़कर बार बार जुक़ाम होना बन्द होजाता है। दिमाग को बड़ी ताक़त देनेवाली चीज है। मूल्य २५ गोलियों के एक पैकेट का १)

सिद्ध अर्शोहरि रसायन

(बवासीर की अक्सीर गोलियां)

यह गोलियाँ बवासीरके इलाज में हुक्मी असर रखती हैं बवासीर कितनी ही पुरानी हो खूनी

हो या बादी, कब्ज़ की शिकायत, मस्सों में चीस चबक दर्द आदि इन सबको रफ़ा करके बहुत जल्द बवासीर को जड़ से नष्ट कर देती हैं। मूल्य २४ गोली मरहम की १ डिबिया २)

रक्तार्श विमोचिनी गुटिका

यदि बवासीर का खून बहुत जोर से आरहा हो तो इन गोलियों का सेवन करना चाहिये। इस से रक्त बहुत जल्द बन्द होजाता है। २४ गोलियों का दाम १)

मरहम बवासीर

इसके लगाने से मस्से और गुदा नरम रहते हैं, दस्त आते समय तकलीफ़ नहीं होती, मस्सों व गुदा की सोजिश व जलन और फूलापन जाता रहता है। प्रति शीशी ।।)

अग्निसन्दीपनी वटिका

(अजीर्ण का अनुभूत इलाज)

अजीर्ण रोग देखने में तो एक साधारण सा मालूम होता है, परन्तु वास्तव में यह सब रोगों की जड़ है खाने पीने में असावधानी करने से अक्सर बदहज़मी होजाती है। जिससे कि मुंह का मज़ा खराब, खाने की तरफ़ रुचि न होना, छाती में जलन, खट्टी २ डकारें, भोजन करते ही दस्त की हाजत होना, पेट में गड़गड़ाहट का होना, जी मिचलाना, अफारा, दिन प्रतिदिन कमजोरी का बढ़ते आना, इन सब हालतों में हमारी अग्नि-सन्दीपन वटिका निहायत ही अक्सीर है। चन्द रोज के इस्तेमाल से कुव्वत हाज़मा बढ़कर गिज़ा अच्छी तरह तहलील होने लगती है और आहार रस बनकर शरीर दिन प्रति दिन मोटा ताज़ा और बलवान हो जाता है। मूल्य ४८ गोली १।।)

अमृत कर्पूर

(हैजे की मुजर्रबउल मुजर्रब दवा)

यह हमारे दवाखाने की तैयार की हुई जादू असर दवा है, जो क़रीब २ कुल घरेलू बीमारियों का जो अक्सर बूढ़े, बच्चों और जवानों को होती रहती हैं पूरा इलाज है। प्रायः जो बीमारियाँ अचानक आक्रमण कर देती हैं—जैसे सब प्रकार के पेट के दर्द, क़ै, हैज़ा, अफारा पेचिश, दौरा जुकाम, खाँसी, नज़ला वगैरह २ इसके इस्ते-माल से फ़ौरन ही दूर होजाते हैं। यह वह अमृत समान गुणकारी दवा है जिसकी एक बिन्दु गले से उतरते ही फौरन जादू का असर दिखाती है खासकर वबाई (संक्रामक) रोग में निहायत मुफ़ीद है। ताऊन (प्लेग) हैज़ा, मलेरिया बुख़ार के ज़माने में ज़रूर इस्तेमाल करनी चाहिये। यह वह दवा है जिसकी हर मनुष्य को घर में और मुसा-फिर को अपने साथ रखने की बड़ी जरूरत है। यह दवा खासकर दर्द-पसली, दर्द-सीना, दर्द-दाँत व दाद, बदहज़मी, तिल्ली, वमन, हैज़ा, पेचिश, मरोड़ा, सिर में चक्कर, अम्लपित्त इत्यादि में निहा-यत मुफ़ीद है। मूल्य ।।) शीशी १२ शीशी ५)

महा सुगन्धित उद्वर्तन

(निहायत खुशबूदार जिस्म पर मलने का उबटन)

यह उबटन मुहम्मदशाह बादशाह के लिये हुक्मा ने तैयार किया था, इसको जिस्म पर मल कर नहाने से जिस्म कुन्दन की तरह दमकने लगता है, और जिल्दी बीमारियाँ पास नहीं आतीं, खुशबू इतनी है कि आदमी मस्त हो जाता है। क़ीमत फ़ी पैकेट १)।

बच्चों के कमेड़े की दवा

कैसे ही ज़ोर से कमेड़े आते हों तीन चार खुराकें देने से आराम हो जाता है। फ़ी शीशी ॥)

समस्त चर्म रोग व रक्त सम्बन्धी सम्पूर्ण रोगों की

एक मात्र दिव्य बूटी

सुगंधित हरित हिमादजापर्णी

यह हिमालय पर्वत की उत्पन्न हुई दिव्य गुण वाली एक बूटी है जो कि हमारे यहाँ संवत् १९७२ से काम में लाई जाती है। इसके प्रयोग से आतशक, कुष्ट आदि का विष जो कि फूटकर शरीर को सड़ा देता है, और कई२ पुश्तों तक बराबर चलता रहता है शीघ्र ही १ सप्ताह में जड़ से नष्ट होकर काया को कुन्दन की तरह चमकाकर शरीर में शुद्ध रक्त का प्रवाह कर देता है। अब तक लाखों रोगी रोग से मुक्त होकर मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा कर चुके हैं। यह उपदंश (आतशक) सूजाक (गनोरिया) अट्ठारह प्रकार के कुष्ट, चम्बल, सूखा और गीली हर प्रकार की खारिश विसर्प, विस्फोट आदि दूर करने में रामबाण महौषधि साबित हो चुकी है। प्रार्थना है कि आप भी बतौर नमूने के कम से कम एक पाव बूटी जिस का मूल्य सिर्फ १।) रु० है, मंगाकर आज़माइश कीजिये। हमें पूर्ण आशा है कि आप एक बार में ही इसके गुणों पर मुग्ध हो जायेंगे। इसका स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध, सभी समान रूप से प्रयोग कर सकते हैं।

एक बार १ सेर मंगाने पर ४) रु०

डाक-व्यय हर हालत में पृथक होगा।

बुद्धि-बल वीर्य-वर्द्धक वय:स्थापक

प्राचीन मुनियों का पेय

द्राक्षासव

या

"अंगूरों का शुद्ध रस"

यह शुद्ध साफ़ अच्छे से अच्छे अंगूरों के रस से बनाया जाता है। यह सुबह शाम पाखाना साफ़ लाकर अग्नि को दीप्त करता है, इसके बल से १-१। सेर दूध २।।-३ छटांक घी रोज़ सहज में पच जाता है। रक्त बढ़ाने में, चेहरे को सुर्ख कान्तिमान् व तेजस्वी बनानेमें अपूर्व है,यह सभी अंगूर सेवन करने वाले जानते हैं। कैमिकल जांच करनेपर मालूम हुआ है कि इसमें कण रंजक (Haemoaldin) जो इस प्रकार की प्रोटीन है जिसमें आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाईड्रोजन, एवं लौह अंश पाये जाते हैं, जो

जीवन और रक्त-वर्धन के लिए जरूरी हैं, यही प्रोटीन जब रक्त में कम हो जाती है, द्राक्षासव इस कमी को पूरा कर देता है। बलवर्द्धक होने के कारण दिमाग को पुष्ट करता है, इसको बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, युवा सब ही समान रूप से सेवन कर सकते हैं। यक्ष्मा, क्षय, खाँसी, श्वास तथा दुर्बलता की महौषधि है। देखने तथा खाने में, गुण-लाभ में, गन्ध-स्वाद में, आकर्षक, मन-मोहक, दिल पसंद है। क़ीमत ४।।) फी बोतल (४० तोला) पोस्ट खर्च अलग।

२।। सेर से अधिक पर खास भाव होगा।

बच्चों के सूखिया मसान की मुजर्रब दवा

रत्न गर्भ गुटिका

ये गोलियाँ जवाहर, सोना, अम्बर, मुश्क, शेरनी का दूध और बहुत किस्म की जड़ी बूटियाँ मिलाकर तयार की जाती हैं ४० दिन के खिलाने से बच्चा कैसा ही सूख गया हो, तन्दुरुस्त होकर हृष्ट पुष्ट हो जाता है। ४० दिन के खिलाने और जिस्म पर लगाने की दवा का मूल्य १०)।

अष्ट मंगल तैल

बच्चे को नहलाने से पहले इस तैल को मलना चाहिये, बच्चे के जिस्म पर जिल्दी बीमारी नहीं होगी, जिस्म कुन्दन की तरह चमकने लगेगा। बच्चा ताकतवर और सुडौल होगा। सब अंग खूब पुष्ट हो जायेंगे, कुव्वत दिमाग, अच्छी याददाश्त वगैरा सारी उम्र कायम रहेंगे। हम सिफ़ारिश करते हैं कि हर बच्चे वाला इस शीशी को खरीद कर फ़ायदा उठावे। कीमत फी शीशी १)

शिशु सुखदा वटिका

(हबूब हाफ़िज़-सेहत बचगान)

इन गोलियोंके हमेशा इस्तैमाल करने से बच्चे बिल्कुल तन्दुरुस्त रहते हैं और हालत बीमारी में इस्तैमाल करने से बीमारी दूर होकर बच्चे मोटे ताजे हो जाते हैं। निहायत अजीब व गरीब गोलियाँ हैं। कीमत १०० गोली की १।)।

बच्चों के लिये एक सफ़ूफ़

जिससे रोज़ाना नियमित रूपसे दस्त आता है। पेट साफ रहता है। कीमत एक डिबिया ।)।

कुमार कल्याणक कषाय

श्लेष्म नाशक

बच्चों के कफ़, खाँसी, पसली रोग, बुखार, सनसम्न, जुकाम आदि व्याधियोंमें निहायत मुफ़ीद है। कीमत एक शीशी ।।) डाक व्यय पृथक।

स्त्रियों की खास बीमारियों की चन्द मुफ़ीद दवाएं

प्रदरान्तक वटिका

(योनि मार्ग से सफ़ेदे के गिरने को रोकने की लाजवाब दवा)

यह व्याधि स्त्रियों के लिये निहायत ही खौफनाक है। परन्तु वे इस व्याधि को शरम की

वजह से नहीं बतातीं। इस व्याधि के रहने से स्त्री गर्भ धारण नहीं कर सकती, और रोज़ ब रोज़ कमज़ोर होती जाती हैं। कमर और पेडू में हमेशा दर्द सा रहता है, भूख मर जाती है। चेहरे का रंग फीका सा हो जाता है धीरे धीरे दुबलापन आ जाता है। अन्त में तपेदिक होकर स्त्री की मृत्यु हो जाती है। ऐसी हालत देखकर उसके पति को चाहिये कि हमारे औषधालय से अपनी प्राण प्रिया को "प्रदरान्तक बटिका" फ़ौरन मँगाकर सेवन करावे जिसके एक माह के सेवन से स्त्री तन्दुरुस्त और ताक़तवर हो जावेगी। चेहरा ख़ुशरंग और पुर रौनक़ हो जावेगा। ६० गोली की डिबिया का मूल्य ३॥।) डाक व्यय पृथक।

सौभाग्य वटिका

मासिक-धर्म की ख़राबियों की लाजबाब दवा

अक्सर औरतों को मासिक धर्म (माहवारी) में नलों में सख्त दर्द हुआ करता है। जिससे वह घबरा २ उठती हैं। माहवारी बहुत कम या बिलकुल नहीं होती। और अक्सर माहवारी के दिन गुजरने के पश्चात मिकदार से बहुत अधिक हो जाती है। कइयों को शुरू में ही अधिकता से खून गिरता और कई रोज़ तक जारी रहता है। इस प्रकार की व्याधियाँ गर्भ का गिराने वाली होती हैं और गर्भ कदापि नहीं रह सकता। इस बीमारी से छुटकारा पाने के लिये हमारी तैयार करदा "सौभाग्य वटिका" माहवारी के दिन से एक सप्ताह पूर्व सेवन करनी चाहिये। इसके सेवन करने से मासिक धर्म के मुताल्लिक कुल व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। यदि दर्द के समय खाई जावे, तो दर्द फौरन बन्द हो जाता है। कैसी ही पुरानी बीमारी क्यों न हो उपर्युक्त तरीके से ३ मास तक सेवन करने से पूर्णतया आराम हो जाता है।

मूल्य ४८ गोलियों की एक शीशी का ६) रुपये। डाक व्यय पृथक।

बांझ-स्त्रियों की चिकित्सा

शास्त्र में ७ किस्म की बाँझ मानी गई हैं, जो औलाद पैदा करने के नाक़ाबिल हैं। यदि इनकी चिकित्सा की जाय तो ९० प्रतिशत औलादवाली हो सकती हैं। ऐसी स्त्रियों के वास्ते बड़ी मुजरब दवाइयाँ हमारे औषधालय में मौजूद हैं। जो साहब हमारा इलाज कराना चाहें, वह हमसे पत्र व्यवहार करें।

हम चन्द सवालात दरयाफ्त करने के बाद इस बात को मालूम करके कि औरत किस किस्म की बांझ है उसके मुताबिक दवाई तजवीज करेंगे।

ज्वर मुरारि

ये गोलियाँ सब प्रकार के नवीन और प्राचीन तथा बारी से आने वाले ज्वरों को जड़ से दूर कर देती है। इनके सेवन से भूख और शक्ति दिन प्रति दिन बढ़ती जाती हैं, चित्त प्रसन्न हो जाता है, मलेरिया के दिनों में स्वस्थ मनुष्य भी १ गोली प्रातः-काल दूध या गरम जल से लेते रहें तो मलेरिया के आक्रमण से बचे रहेंगे, इनसे किसी प्रकार खुश्की या गरमी नहीं होती। मूल्य २४ गोली का ।।।)

प्रमेह नाशक वटी

प्रमेह (जरियान) २० प्रकार का होता है, जिसमें सबसे भयङ्कर मधुमेह है, इस रोग में पेशाब में शक्कर मिलकर आती है, इसलिये पेशाब में चीटियाँ लगने लगती हैं, प्यास ज्यादह लगती है। कमजोरी दिनोंदिन बढ़ती जाती है। हमारे यहाँ इस बीमारी के लिये खास तौर पर गोलियाँ तैयार की जाती हैं कुछ दिनों के सेवन करने से पेशाब में शक्कर आना बन्द हो जाता है और गई शक्ति फिर आ जाती है। मूल्य ४८ गोलियों का ४)।

नमक सुलेमानी

जायका निहायत मजेदार है, हाज़िम इस क़दर है कि पेट के दर्द, बन्द हैज़ा, चुभन वगैरः बदहज़मी के रोगों को आनन फ़ानन में ही दूर कर देता है, और अनुपानोंके साथ आँखों, मेदे व पुरुषत्व को ताकृत देता है, गठिया, बुखार, खाँसी दमा आदि बहुत से रोगों में गुणदायक है। चेहरे के रंग को निखारता है, फ़ी शीशी ।=)।

दद्रुनाशक

नया पुराना कैसा ही दाद हो इस दवा के दो तीन बार लगाने से जड़ से आराम हो जाता है, किसी तरह की जलन व तकलीफ़ नहीं होती। कीमत ।) शीशी।

दन्त शूल नाशक

इसकी दो तीन बूँदें ही दाँत में या डाढ़ में लगाने से फौरन आराम हो जाता है। कीमत फ़ी शीशी ।)

कर्ण शूल नाशक

कान में चीस हो या फुन्सी, या पीप निकलती हो या सूजन हो दो कतरें डालने से आराम हो जाता है। और इसी तरह दो चार दिन डालने से बिलकुल आराम हो जाता है। फी शीशी ।)

दन्त मुक्ताकर मंजन

इस मंजन के सेवन से दाँतों की सब प्रकार की तकलीफें दूर होती हैं, बत्तीसी मोती की तरह चमकने लगती है, दाँत या मसूढ़ों में कैसा ही सख्त दर्द हो, दाँत हिलते हों, मसूढ़े फूल गये हों, पीप व खून आता हो, बदबू आती हो इत्यादि बीमारियों को यह मंजन लगाते ही फायदा करता है, इसकी मजेदार खुशबू बड़ी ही उत्तम है। कीमत ।)

कोकिल कण्ठ

आवाज़ को उत्तम बनाने की अजीबोगरीब गोलियाँ हैं, व्याख्यानदाताओं और गवैयों की जान हैं। फ़ी शीशी ।)

महा सुगन्धित दशांग धूप

थोड़ी सी धूप लेकर धूपदान या अगरदान में डालकर रख दीजिये बहुत जल्द तमाम कमरे में खुशबू फैल जायेगी, जहाँ २ यह खुशबू पहुँचेगी तमाम किस्म के जहरीले मादों से हवा को शुद्ध कर देगी। जहाँ पर ताऊन, हैजा, चेचक, मलेरिया बुखार वगैरा २ रोग फैल रहे हों वहाँ के निवासियों को इस धूप का सेवन करना बहुत जरूरी है। इसकी खुशबू निहायत दिल लुभाने वाली है कीमत फी पैकेट ।) फी सेर २)

करामाती टिकिया

सब प्रकार के फोड़े, फुन्सियों को दूर करने में जादू का काम करती है, केवल एक बार लगाने से ही फुन्सियाँ राख की तरह उड़ जाती हैं; कीमत २० टिकिया का पैकट ।)

सुगन्धित बादाम तेल

यह तेल बादाम की गिरियों को कुछ खास सुगन्धित द्रव्यों में भावना देकर देशी तरीके पर तैयार किया गया है। इसको सिर पर मलने और कुछ बूंदें सूंघने से दिल व दिमाग़ को बड़ी प्रफुल्लता होती है, दिमाग़ी कमजोरी, सिर का दर्द, सिर का घूमना, नींद का न आना, कानों की भिन भिनाहट, आँखों के आगे तिरमिरे दिखाई देना, आँखों की कमजोरी, रतौंधी, नाककी खुश्की, पुराना जुकाम, दाँतों का ढीलापन, बेवक्त बालों का सफेद होना, चेहरे का फीकापन वगैरा २ दूर होते हैं। दो २ बूंदें कुछ अर्से तक कानों में डालने से कान की खुश्की और बहरापन दूर हो जाता है, जिस्म पर मलने से बदन की ताकत बढ़ जाती है वबाई बीमारियों का असर नहीं होता। फ़ालिज, लक़वा, कम्पवाय, मृगी, दीवानगी, और भूल की बीमारियों में सिर पर मलना बहुत फायदेमन्द है।

महा सुगंधित केश वर्धन तैल

(बाल बढ़ाने वाला खुशबूदार तैल)

बालों को गिरने से रोकता है। और मजबूत करता है। इसके लगाने से बाल बहुत जल्द बढ़ जाते हैं। निहायत नरम, काले और चमकदार हो जाते हैं। कीमत फी शी० एक रुपया १) डाक व्यय पृथक।

चन्द्र बदन

चेहरे के मुहासों झाईं आदि को दूर कर सुन्दर बनाता है। मूल्य ।।)

क्षुधासागर चटनी

यह एक निहायत हाज़िम, कब्ज़ कुशा और बहुत ही लजीज नरम चूर्ण है कैसी ही बदहज़मी हो एक माशे भर चाटते ही डकार आ जाती है, भूख लग आती है, तबियत निहायत खुश हो जाती है। प्रति पैकट ।)

नयन पीयूष बिन्दु

इस दवाके दो तीन बिन्दु दिन में दो तीन बार आँख में डालने से आँख का दुःखना, आँख की कड़क, रड़क, बक, खुजली, सूजन, रोहे, सुर्खी, वगैरा दूर होते हैं कीमत फी शीशी ।)

अपस्मार नाशक

(मृगी की नायाब दवा)

यह मृगी की अक्सीर दवा है, इस के कुछ दिन सेवन करने से यौवनावस्था से पहले की मृगी निश्चय जाती रहती है, सिर पर लगाने और खाने की दवा मूल्य ५) रु०

कण्ठ माला की दवा

इस बीमारी को अक्सर लोग जानते हैं। इस में बेर से छोटी और बड़ी २ गाँठे गले में हो जाती हैं और निहायत तकलीफ होती है। इसके लिये हमारे यहाँ की दवा इस्तेमाल करने से यह मर्ज़ बहुत जल्द दूर हो जाता है। खाने लगाने की दोनों दवाओं की कीमत ५) डाक व्यय पृथक।

प्लेग संरक्षक मकरध्वज वटी

(ताउन से बचने के लिये बेमिसाल दवा)

इस मर्ज़ को वर्णन करने की कुछ जरूरत नहीं। तकरीबन सबही मनुष्य इसे समझते हैं। यह एक ऐसी संहारक व्याधि है, व्याधि क्या बल्कि जान की दुश्मन है, कि जहाँ जब यह फैलने लगती है खान्दान के खान्दान ग़ारत और गाँव के गाँव तबाह कर देती है। जहाँ इस व्याधि ने एक बार अपना बीज बो दिया तकलीफ ही देती रहती है। हमारे कारखाने में इस व्याधि को रोकने के लिये "प्लेग संरक्षक मकरध्वज वटी" नाम वाली गोलियाँ तैयार होती हैं। जिसे संक्रामक व्याधि के दिनों में एक एक सुबह शाम इस्तेमाल करते रहने से प्लेग का असर हरगिज़ २ नहीं होता। तजुर्बे ने साबित कर दिया है कि इससे उत्तम दवा इस मर्ज़ को रोकने के लिये दूसरी नहीं होगी। अलावा इस के निहायत मकव्वी दिल व दिमाग़ है। बड़ी २ असली कमजोरियों को दूर करने में रामबाण है। मूल्य १६ गो० का १) डाक व्यय पृथक।

शोथ नाशक

इसके लेप करने से हर प्रकार की सूजन, दर्द, गाँठ आदि को बहुत जल्द आराम हो जाता है। यहाँ तक कि प्लेग की गिल्टी में भी बड़ी मुफीद है। कीमत फी शी० ।।) डाक व्यय चार शी० तक ।≡)

शेरनी के दूध का सुर्मा

(रजिस्टर्ड)

यह हमारे औषधालय का तैयार किया हुआ अजीबो गरीब सुविख्यात सुर्मा है। इसमें शेरनी के दूध के लिये जो मुल्क आसाम के भीलों से मिलता है बड़ी महनत करनी पड़ती है। मोती, मूंगा, फीरोजा, लाल, बदख़शानी, ज़मरुद, याकूत अक़ीक यमनी, लाजोरू चाँदी, सोना मक्खी, दहना फरंग जाफ़रान, मुश्क, अम्बर, मामीरा चीनी, भीमसैनीकपूर संगबसरी, सुर्मा अस्फहानी वगैरा २ ४० कीमती अदवियात से सबज़ हरड़ के पानी में ६ माह तक कांसे के सिलवटे पर पीसा जाता है, बाद अर्से दराज तक नीम की जड़ को खोखला कर के उसमें रखते हैं, इसके बाद दो बार पीसकर

काम में लाया जाता है, इसके इस्तेमाल से बहुत दिनों का अन्धापन बशर्ते कि आंख की बनावट में बिगाड़ न आया हो अच्छा हो सकता है। इस के सेवन करने वाले को आंख का कोई रोग नहीं हो सकता, दृष्टि को साफ़, तेज़, और रोशन करता है, ऐनक लगाने की आदत छुड़ा देता है आंखों की कमज़ोरी, शुरू मोतिया बिन्द, आंखों की धुन्ध, जाला, फूला, खारिश, ढलका, नाखूना वग़ैरा आंख की बीमारियों में मुजर्रब है। मूल्य फी तोले ४) नमूने की शीशी ।।)

मोतियों का सफ़ेद सुर्मा

यह सुर्मा हमने उन साहिबान के लिये तैयार किया है कि जो काला सुरमा लगाना पसन्द नहीं करते, इसके तमाम गुण शेरनी के दूध वाले सुर्मे के मानिन्द ही हैं। मूल्य फी तोले ४) नमूने की शीशी ।।)

मदनराज सुगन्ध

प्यारी, धीमी व मीठी २ मस्त करने वाली खुशबू का खजाना। मूल्य ।।) शीशी

सुन्दर शरीर

जिस्म को खुशबूदार, चमकीला व सुन्दर बनाने वाला उबटन। कीमत ।)

बीमारों की बाबत आवश्यकीय प्रश्न जिनके उत्तर पूरे ध्यान से तहरीर में लाकर हमारे औषधालय को भेज देने चाहिये।

१—बीमारी कितनी देर से है और क्यों कर आरम्भ हुई ?

२—बीमार स्त्री है या पुरुष, यदि स्त्री है, तो गर्भवती है या नहीं ?

३—बीमार की आयु कितनी है ?

४—बीमार क्या काम करता है ?

५—बीमार की आदतें कैसी हैं, गर्म या ठंडी चीजें सेवन करने में क्या असर होता है ?

६—बीमार में ताकत कैसी है, शरीर मोटा है या दुबला ?

७—आंखों का रंग कैसा है, ज़बान का ज़ायका और रंग कैसा है ?

८—दस्त साफ़ आता है या कब्ज़ रहता है।

९—नींद का क्या हाल है ?

१०—पेशाब रात दिन में कितनी बार आता है, रुक कर या जलन से तो नहीं आता ? रंग कैसा होता है, ठंडा होता है या गरम ?

११—भूख प्यास कैसी है ?

१२—भोजन में क्या २ वस्तुएं शामिल हैं ?

१३—बीमार को किसी नशे की आदत तो नहीं है ?

१४—वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों ने जिनका इलाज आपने कराया मर्ज़ का क्या नाम आपको बताया ?

१५—क्या बीमारी खान्दानी है ?

१६—अलावा इसके जो जो बातें आपको अपने मरीज की बाबत ज्ञात हों तहरीर फरमावें।

नोटः—प्रश्न लिखने की आवश्यकता नहीं केवल नम्बर देखकर उत्तर लिख दें।

सिद्ध सालव पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह रसायन वीर्य-सम्बन्धी सब दोषों को दूर करके उसे शुद्ध पुष्ट एवं सन्तानोत्पत्ति के योग्य अमोघ बना देती है। धातु दौर्बल्य रोग से आक्रान्त होकर जिन मनुष्यों के रस, रक्त माँस शुक्रादि सम्पूर्ण धातु क्षीण हो गए हैं तथा वीर्य के पतला होनेसे स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, इन्द्रिय की शिथिलता, पुरुषत्वहानि, अधिक शुक्रपात तथा ध्वजभङ्गादि रोगों के कारण से इन्द्रिय-सुख रहित वंशलोप की आशङ्का से समय व्यतीत कर रहे हैं, उन्हें इस रसायन का सेवन करना संसार सुख एवं सन्तानोत्पत्तिके लिए अतीव सुखकारी होगा। यह दैवी औषधि वृद्ध पुरुषों को भी युवा तुल्य शक्तिमान् बना देती है, दिमाग़ को बड़ी ताक़त देती है। इस कारण उन लोगों के लिए जिन्हें दिमाग़ी काम करना होता है जजों, बैरिस्टरों, वकीलों, मास्टरों, कवियों विद्यार्थियों, क्लर्कों, एवं पत्र-सम्पादकों, व्याख्यानदाताओं आदि को बड़ी सुखकारी वस्तु है। हर तरह की निर्बलता को दूर करने वाली एक उत्तम स्वादिष्ट अनुपम खूराक है। मूल्य एक सेर ७) रु० १ पाव का डिब्बा २) रु०।

सिद्ध सुपारी पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह दिव्यौषधि ५० बहुमूल्य दवाओंसे तैयार होती है। योनि रोगों के दूर करने में इसके समान दूसरी औषध नहीं है। सहस्रों स्त्रियाँ जो योनि-रोगों की वेदना सहते २ लाचार होगई थीं जिन्हें गर्भ रहने की आशा ही न रही थी, जो स्त्री-समाज में लज्जित और दुःखित होती थीं, जिन्हें अपनी जिन्दगी भार मालूम होती थी, जो सन्तान के लिए रात दिन कुढ़ती और तरसती थीं आज वही सौभाग्यवती देवियाँ हमारे **सिद्ध सुपारी पाक रसायन** के गुणगान कररही हैं। जिसके सेवन से वे श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, मासिकधर्म की अनियमितता, बार २ गर्भ का गिरना, बालक हो-होकर मरजाना तथा एक बार बालक होकर फिर न होना, दौरे की बीमारी (हिस्टीरिया) शारीरिक निर्बलता, दुर्बलता, सिर, कमर, नलोंका दर्द, सिरका घूमना, चेहरे का फीकापन आदि अनेक रोगों की यन्त्रणा से छूटकर स्वस्थ और पुष्ट होकर कई २ बालकों की माताए बन गई हैं। इसके सिवाय जापे की बीमारी, बुढ़ापे की कमजोरी में बड़ा मुफ़ीद है। मूल्य एक सेर ७) रु० १ पाव का डिब्बा २) रु०।

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ़ करने के लिये सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिये केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा, कि इस की मालिश से लिङ्गेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता, छोटापन, टेढ़ापन व पतलापन दूर हो कर, इन्द्रिय में दृढ़ता, स्थूलता, और दीर्घता आ जाती है, जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वंचित (महरूम) हुवे अनेक पुरुषों ने इससे आशातीत लाभ प्राप्त करके इस दिव्यौषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०) ३ माशे की शीशी २॥)

भदावर प्रेस, ईश्वर-भवन, खारीबावली, देहली।

REGD. No. L. 2701.

वैद्यराज पं० महावीरप्रसादजी के लिये भदावर प्रेस ईश्वर-भवन, खारीबावली, देहली में छपा।

TELE. NO. 5174 JIVANSUDHA.

जीवन-सुधा

अगस्त १९३३

स्मृति

सम्पादक

कविराज—शशिकान्त मिश्र भिषगाचार्य

प्रकाशक—

बृहत्आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार देहली।

वार्षिक मूल्य ३) नमूना प्रति अङ्क ।)

जीवन-सुधा का विशेषाङ्क

महिला रोग-विज्ञान कैसा रहा ?

'महिला रोग विज्ञान' नामक जीवन सुधा के विशेषांक के लिये धन्यवाद । मैंने बड़े प्रेम से इसे पढ़ा है। इसकी छपाई व सफाई बड़ी सुन्दर और साफ है तथा पाठ्यसामग्री भी जानने योग्य बातों से परिपूर्ण है। अङ्क बहुत ही उपयोगी है और आप इसके द्वारा जो सेवा कर रहे हैं उसके लिये वैद्य-समाज आपका बहुत ही ऋणी रहेगा। मैं आपकी सफलता के लिये शुभ कामना करता हूँ।

—डा० एस. सी. आनन्द एम. बी. बी. एस.
लेफ्टिनेण्ट आई० एम० एस०

जीवन सुधा का विशेषाङ्क निकट भविष्य में वैद्य समाज में एक आदर की वस्तु समझा जायगा—यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है। केवल स्त्री-रोग विज्ञान के आधार पर ही इसका स्थान अपनी श्रेणी में सबसे ऊंचा होगया है।

—रामचन्द्र भारद्वाज

"जीवनसुधा का महिला रोग विज्ञान" पढ़ कर चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ। डा० कुन्तल कुमारी देवी तथा डा० कृष्णा कुमारी ने अपनी पूर्ण योग्यता का परिचय दिया है। प्रत्येक लेख सारगर्भित है। आज तक किसी वैद्यक पत्र ने ऐसी सजधज से विशेषांक नहीं निकाला है। प्रत्येक वैद्य को इस विशेषांक की एक प्रति अवश्य रखनी चाहिये। इस विशेषांक का मूल्य २) रक्खा गया है। यदि मुझसे सच पूछा जाय तो यह मूल्य विशेषांक पर निछावर है। लेखों में स्त्रियों के जटिल से जटिल रोगों का निदान तथा चिकित्सा-क्रम बड़ी योग्यता से प्रकाशित किया गया है।

—कविराज शान्तिदेव त्रिपाठी वैद्य शास्त्री

'महिला रोग विज्ञान' अर्थात् जीवनसुधा का विशेषांक प्राप्त करके अत्यन्त प्रसन्नता हुई। पढ़कर तो हृदय प्रफुल्लित हो उठा—वास्तव में अपूर्व वस्तु है। ऐसे प्रचार की हिन्दू महिला समाज में अत्यन्त आवश्यकता है। मैं आपको तथा इस अङ्क की सम्पादिका जी को ऐसे सुन्दर सफल और उपयोगी अङ्क को निकालने के लिये हार्दिक बधाई देता हूँ। मुझे निश्चय है कि यदि आप इसी प्रकार परिश्रम जारी रखेंगे तो जीवन सुधा वास्तविक 'सुधा' ही प्रमाणित होगी।

—डा० पुरुषोत्तमदत्त 'गिरिधर' वैद्यवाचस्पति,
[illegible]

आयुर्वेद—स्वास्थ्य और सौन्दर्य का सचित्र मासिक पत्र।

जीवन-सुधा

संसार से त्रय ताप के, संताप को हर लीजिये,
विस्तार घर-घर में प्रभो, "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी,
राष्ट्र की हित कामना युत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ३ } भाद्रपद वीरनिर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९९०, सन् १९३३, अगस्त { अङ्क १२

उद्‌गार!

"जीवनसुधा" जग जीवनसुधा सम।
प्रगट है विश्वमाहि अनुपम सुहायो है॥
सरल सुयोग शुचि सुन्दर अमूल्य रत्न।
सौरभ समुन्नति करि वेगि सरसायो है॥
मानसिक विचार जेते पूर्वज महर्षिन के।
तेते प्रकाशि आशु वैद्यन लुभायो है॥
धरणीधर सर्व सिरमौर देखि पत्रन में।
अति उत्साह चित्त आनन्द मनायो है॥

वैद्य पं० धरणीधर जी शास्त्री

तपेदिक़

ले०—श्रीयुत महेन्द्रनाथ जी शास्त्री भिषगाचार्य धन्वंतरी।

इस समय कई ऐसे भयङ्कर रोग हरेक देश में फैल रहे हैं जिनके रोकने का उपाय और उसे कम करने के लिये डाक्टर वैद्य और हकीम लगे हुए हैं परन्तु जहां तक कोशिश की जा रही है रोग उतने ही बढ़ते जा रहे हैं उनमें से तपेदिक़ भी एक ऐसा ही रोग है जो बड़ी संख्या में भारत वर्ष में फैल रहा है यह रोग कब पैदा हुआ? कैसे पैदा हुआ? इस बात का सही पता नहीं चलता। सुश्रुत में इस रोग के पैदा होने की कथा बड़ी विचित्र है। लेख न बढ़ जाय इस लिये पाठक महोदयो से प्रार्थना है कि यदि वे इस की उत्पत्ति जानना चाहें तो सुश्रुत उत्तर तन्त्र अध्याय ४० को पढ़ें उसमें विस्तार से इस की उत्पत्ति का कारण बताया है यह रोग क्यों पैदा होता है और उस का निदान क्या है, यह बताना सबसे आवश्यक है अत: थोड़े शब्दों में यह बताया जायगा कि रोगके होने का कारण क्या है?

रोग होनेका कारण और निदान

वेग रोधात क्षयाच्चैव साहसात् विषमासनात्।
त्रिदोषो जायते यक्ष्मा गदो हेतु चतुष्टयात्॥

पेशाब पाखाना, छींक, अपानवायु (पाद) विषय करते समय वीर्य, आंसू तथा हिचकी जम्हाई आदि रोकने से और दोषों के क्षय होनेसे तथा अपने से न होनेवाले भयङ्कर काम करने से बड़े साहससे और भोजन के अनापशनाप खाने से और जब तीनों दोष कुपित हो जाते हैं तब यक्ष्मा शुरू होता है। संस्कृत में इसे यक्ष्मा, रोगराट् आदि कई नामों से पुकारा गया है इङ्गलिश में इसे थाइसिस या टी० बी० कहते हैं हिन्दी में तपेदिक़ के नाम से पुकारा जाता है। उसकी तीसरी अवस्था को वैद्य और डाक्टर असाध्य मानते हैं प्रथम तो इस रोग का पैदा होना ही इस बात का साक्षी हैं कि यह मनुष्य नहीं बचेगा परन्तु उस रोग के थर्ड स्टेजपर पहुँचते २ हरेक रोगी और वैद्य यह समझ लेता है कि अब रोगी नहीं बचेगा इस रोग के आरम्भमें रोगीको थोड़ा ज्वर मालूम पड़ता है कुछ जुखाम भी रहता है साथ में थोड़ी बहुत खांसी भी रहने लगती हैं साथ ही ज्वर थोड़ा २ हर समय रहता है रात्रिको विशेष कर हाथ पैरोंमें पसीने आते हैं रोगी की देह गजाना कमजोर होती जाती हैं वा जितना भी भोजन करता है उससे उसके बलकी वृद्धि नहीं होती हम इस के विशेष लक्षण चरक से नीचे उद्धृत करते हैं।

अंस पार्श्वाभितापश्च तापः पाद करस्य च।
ज्वरः सर्वाङ्ग इति लक्षणं राजयक्ष्मा:॥

कन्धे, पार्श्व, हाथ पैर इनमें जलन और दर्द का होना और ज्वर का होना राजयक्ष्माका मुख्य लक्षण है। हमारी रायमें इस रोग के लक्षणों और उत्पत्ति में कुछ अन्तर पड़ गया है। प्राय: देखा गया है कि जो लोग अधिक चिन्ता और द्वेष करते हैं उनमें यह रोग अधिक पाया जाता

है यह रोग अधिक विषय करने से और भोजनादि ठीक समय पर न करने से भी होता है जब रोग वृद्धि पर होता है तो शरीर की अवस्था बदल जाती है और मन भी बिगड़ जाता है इस समय मन में चञ्चलता अधिक पैदा हो जाती है

क्षय या तपेदिक़ एक प्रकार से नहीं होता क्षय अनेक प्रकार का होता है धातुओंके क्षीण होने का नाम क्षय है जो धातु क्षय होती हैं उसी नाम से क्षय रोग पुकारा जाता है जैसे अस्थि क्षय, मज्जाक्षय, धातुओंके अलावा पाश्चात्य लोग और भी कई प्रकार के क्षय मानते हैं जैसे आन्त्र क्षय फुफ्फुसीय क्षय इसी प्रकार के अनेक और भी क्षय माने गये हैं आयुर्वेद इनको सप्त धातुओं के क्षय के अन्दर ही मानता है इसलिये उसने इनको अलहदा नामसे नहीं गिनवाया।

इसकी तीन अवस्थायें होती हैं पहली अवस्था को प्रथमावस्था दूसरी को मध्यमावस्था और तीसरी को थर्ड स्टेज या तीसरी अवस्था कहते हैं।

इस रोग की चिकित्सा

इस रोगकी प्रथमावस्था में किसी खास औषध के सेवन करने की आवश्यकता नहीं होती प्रातः सायं शुद्ध हवाका सेवन करना समय पर भोजन करना विषय वासनाओं को छोडना और ईश्वर में मन लगाना ही काफ़ी हैं। जब इस रोगकी द्वितीय अवस्था हो जाय तो रोगी को तुरन्त किसी अच्छे पहाड़ पर भेज देना चाहिये। ऐसे ही पहाडों पर भेजना अति उत्तम है जिनपर चीड़, देवदार, केला और चन्दन के वृक्ष हों इस समय में संयम से रहना अत्यावश्यक है। यदि इस प्रकार रहने से कम न हो तो औषधिका सेवन करना चाहिये जो लोग इस रोग से पीड़ित हों उन को निम्नलिखित नियमों का अवश्य पालन करना चाहिये।

प्रातः शौचादि क्रिया से निवृत हो कर घूमने जाना चाहिये और घूमने के बाद एक ऊंचे स्थान पर सूर्योदय से ५ मिनट पहले सारे कपडे उतार कर सूर्यके सामने आध घंटे तक खड़ा रहना चाहिये इस रोगकी पहली दूसरी अवस्था में यह चिकित्सा बडी लाभदायक है दूसरी अवस्था में मृगांक रस, हेम गर्भ पोटली रस-सर्वाङ्ग सुन्दर रस और क्षय केसरी रस अच्छे काम देते हैं।

पहली और दूसरी अवस्था में विशेष चिकित्सा

प्रातः नीचे लिखी औषधि का प्रयोग करना चाहिये।

बकरी का मूत्र ३ माशे बकरी का दूध ३ माशे बकरीका घृत ३ माशे और दधि इन सबको मिला कर शहदके साथ चाटना चाहिये लेकिन यह याद रहे कि औषधि की मात्रा रोगी की अवस्था और देशकाल को देखकर देनी चाहिये दोपहरको भोजन के बाद ६ मा० से १ तो० तक द्राक्षासव पिलाना चाहिये। रातको पीपल से दूध औटा कर ३ रत्ती शुद्ध शिलाजीत का सेवन करना चाहिये इस रोग में दस्त, कराना और जुलाब नहीं देना चाहिये यदि यक्ष्मा के साथ श्वास और खांसी भी हो तो नीचे लिखी औषध अच्छा काम देती है।

पंचामृत परपटी $\frac{1}{2}$ रत्ती सर्वतोभद्र आधी रत्ती
मालति बसन्त $\frac{1}{3}$ „ नवायस लौह „ „
प्रवाल २ „
सितोपलादि चटनी २ माशा

शहद के साथ रोगीकी अवस्था और समयको देखकर ऊपर लिखी चीजें देने से कोई खास लाभ तो नहीं परन्तु रोगी अधिक दिन तक जी सकता है। इस अवस्था में स्वर्ण घटित औषधियां अच्छा काम देती हैं।

गाय, घोड़ा, भेड़, बकरी, हाथी, हिरन, गधा और ऊंट इन सब के गोबर का रस इन्हीं सब के दूध में मिला कर देनी चाहिये इन सब की तादाद सम होनी चाहिये ऊपर लिखे नुस्खे में मुनक्का, पीपल, असगन्ध इनसे सिद्ध किये हुए घीसे और भी लाभ होता है। इस घी की मात्रा रोगी की अवस्था देखकर ३ मा० से ६ मा० तक देनी चाहिये। इस रोग की पहली अवस्था में चरक में लिखी हुई रसायन अच्छा काम देती है इसकी दूसरी अवस्था में चक्रदत्त के राजयक्ष्मा अधिकार में कहा गया विन्ध्यवासनी योग अच्छा काम देता है तथा इसी अध्याय में छागलादि घृत भी दूसरी तीसरी अवस्था में अच्छा काम देता है तथा योग चिन्तामणि में कहा गया मधुकादि घृत और यक्ष्मा परपटी अच्छा काम देता है इस रोग की तीसरी अवस्था में रसेन्द्र सार संग्रह में वर्णित राज मृगाङ्क रस और यक्ष्मा केसरी रस अच्छा काम देता है।

पाश्चात्य विद्वान और डाक्टर इस रोग के आरम्भ और तीसरी अवस्थामें काडलीवर आयल का बहुत प्रयोग करते हैं परन्तु इससे कोई खास फायदा नहीं होता आजकल भारतवर्ष में यक्ष्मा के लिये कई सेनीटोरियम खोले गये हैं जिनमें रोगियों की प्राकृतिक चिकित्सा-सूर्य रश्मि चिकित्सा की जाती है और औषधि में काडलीवर आयल का प्रयोग किया जाता है परन्तु इन दवाओं से तो खास फायदा नहीं होता परन्तु जल और वायु के परिवर्तन से बहुत कुछ फायदा हो जाता है।

अतएव पता चलता है कि इस रोग में जल वायु के परिवर्तन से बड़ा काम चलता है।

हिण्डनबर्ग के क्लेरेडिया नामक एक थाइसस के एक होशियार डाक्टर ने एक विशेष चिकित्सा निकाली है उस चिकित्सा की विधि यह है कि मनुष्य को बिल्कुल नंगा कर आठ हाथ लम्बे और चार हाथ चौड़े गढ़े में खड़ा कर दिया जाता है और रङ्ग के हर तरह के पेड़ के पत्तों और फूलों से उसे भर दिया जाता है। और मनुष्यको सिवाय बकरी के दूधके और कुछ नहीं दिया जाता। उसके शब्दों में यह बात पाई जाती है कि उसने कई सौ रोगियों को ठीक किया।

प्रकृति और मनुष्य

लेखक:—श्रीयुत कृष्णचन्द्र जी मुद्गल "दुखित"

किंगस्ले नामक एक अंग्रेज कवि ने एक स्थान पर लिखा है—"जिस हृदय का सम्बन्ध प्रकृति से प्रेम मय हो जाता है उसको कभी धोखा नहीं होता। प्रकृति का ऐसा धर्म है कि वह हमारे समस्त जीवन में सुख को बढ़ाती रहती है। क्यों कि वह हमारी अन्तरात्मा में, शान्ति और सौन्दर्य के द्वारा कुछ ऐसी श्रेष्ठता का सम्वाद भर देती है कि फिर निन्दकों के कटुबचन अन्यायी के पक्षपात पूर्ण निराधार और स्वार्थी पुरुषों की फटकारें और दैनिक जीवन की गड़ बड़ हम पर कदापि प्रभाव नहीं डाल सकतीं—हमारी सुखी आत्मा की शान्ति में बाधा नहीं पहुँचा सकती।"

आगे जाकर वे यह भी कहते हैं—"मैं अपने वासस्थान के चारों ओरकी अद्भुत वस्तुओंसे बड़ा आनन्दित रहता था। मैं अपने को अकेला कदापि नहीं समझता था। मैं यथाथ में एकाकी नहीं था। जब वहाँ अन्य पुरुष नहीं होते थे, तब वहाँ की मधुमक्खियाँ, पुरुष और कंकर-पत्थर मेरे साथी बन जाते थे, घूमते फिरते यही सब मेरे लिए पुस्तकों का काम देते थे। यही साथी और यही गुरुजन बन जाते थे।"

"वास्तव में यह सत्य है कि जो प्रकृतिसे प्रेम करते हैं वे सुस्त और उदास नहीं रहते निस्सन्देह उनको कष्ट और लालसाएँ सताती अवश्य हैं, परन्तु बहुत कम। वे सृष्टि के सौन्दर्य द्वारा अपने दुःखों को तनिक सी देर में भूल जाते हैं। प्रकृति का प्रेममय सम्बन्ध मनुष्य को उन क्षुद्र और नीच विचारों से, जो उनके मस्तिष्क की शान्ति को भंग करते रहते हैं, करने में बड़ी सहायता देता है। यह प्रेममय सम्बन्ध बढ़ता-बढ़ता हमें पूर्ण शान्त और सुखी बना देता है। विश्वपटल का प्राचीन से प्राचीन इतिहास साक्षी है कि पुरातन कालीन महापुरुष, बनदेवियों, पर्वत देवताओं-पक्षिदेवताओं, इत्यादि अनेक प्राकृतिक जीवों के साथ अभिन्न मित्रता और प्रेम करते थे और उनसे बरदान ले लेकर कृतार्थ होते थे। किसी किसी ने तो यहाँ तक कहा है कि, "यद्यपि आयुके व्यतीत वर्ष तो नहीं लौटते परन्तु जिनका प्रकृति से सम्बन्ध रहा है-जो हमसे प्रेम करते रहे हैं-जो उनके उपासक रहे हैं-वेसदैवयुवा रहते हैं। चाहे उनके सारे बाल सफेद क्यों न होजाय।"

परन्तु आज हममें वह प्रकृति प्रेम कहाँ है? जो वास्तव में होना चाहिये इसका भी एक कारण है और यह है समय समय पर होने वाले परिवर्तन मानव सृष्टि के बढ़ने से प्रकृति को एक और धक्का पहुँचा है। जंगलों के जंगल-जहाँ प्रकृति का साम्राज्य था काटडाले गये-उनके स्थान पर कितने ही

बड़े-बड़े आलीशान प्रसादों वाले नगर बन गये और चारों ओर कृत्रिमता का साम्राज्य स्थापित हो गया फिर भी आज गावों में-उन गावों में जहाँ की जनता अब भी कृत्रिम गावों और नगरों के कलुषित वातावरण से परे हैं—प्रकृति के चिन्ह और उसके पुजारी दिखाई देते हैं।

बहुतों का यह भी कहना है कि प्रकृति का निरीक्षण और उसका आनन्द लेनेके लिये पर्यटन करना आवश्यक नहीं है। श्रीमान् ज्येफ़ी जिन्होंने दुर्भाग्यवश कोई यात्रा नहीं की, घर बैठे ही प्रकृति के इतने निकट सम्बन्धी और उपासक हो गये कि जिनका कुछ कहना नहीं। वे अपनी एकपुस्तक में कहते हैं—सब मधुर वस्तुओं में स्वच्छ वायु के तुल्य कोई वस्तु नहीं है। वायु एक विशाल पुष्प है जिसकी परिधि भूतलपर्यन्त है उसकी विस्तृत पंखड़ियों में हमारी समस्त सृष्टि समाई हुई है उस फूल की सुगन्धि आकाशतक पहुँची हुई है और घर घर में व्याप्त है। और मैं इससे इतना अधिक प्रसन्न हूँ कि मुझे किसी स्थान में जाने की इच्छा ही नहीं होती। यही प्रकृति का अमृतसा प्रसाद मेरे जीवन की हृतन्त्रीको झंकृत किया करता है और सुखमय बनाता है।

महाकवि कालिदास, भवभूति बाण, श्रीहर्ष आदि प्रकृति सौंदर्य के कितने भारी उपासक थे। प्रकृति और मनुष्य का सम्बन्ध बतलाते हुए इन्होंने कितने ही ग्रन्थ लिख डाले। इंग्लैण्ड के महाकवि वर्डस्वथ ने तो प्रकृति को अपना जीवन साथी मानकर उसीके गुणगान में अपने जीवनका अन्त कर दिया। यही क्यों आज भी कविरविन्द्र जैसे विश्वकवि भी प्रकृति के अनन्य उपासक हैं।

उन बातों से हमें यह साफ विदित होत है कि प्रकृति का और मनुष्य का खासा सम्बन्ध है। एक बार प्रकृति मनुष्य के बिना रह सकती है परन्तु मनुष्य प्रकृति के बिना एक पल भी नहीं रह सकता। प्रकृति के ही बलपर उसका नित्यप्रति का काय बनता बिगड़ता और संचालित होता है।

❋ गर्भ क्यों नहीं रहता उसके कारण तथा चिकित्सा ❋

(ले० —आयुर्वेद विशारद पं० श्री देवदत्त जी शर्मा वैद्य शास्त्री शंकरगढ़)

गर्भ क्यों नहीं रहता, उसके न रहने के क्या कारण हैं, उन कारणों को किस तरह दूर किया जा सकता है इत्यादि बातों पर अब हमें विचार करना है सब से पहले इस बात पर विचार करेंगे कि गर्भ क्या है ? फिर धीरे धीरे अपने विषय की ओर अग्रसर होंगे।

गर्भ क्या है—

स्त्री और पुरुष जब दोनों सहवास करते हैं तब स्त्री का डिम्ब और पुरुष का वीर्यकीट का आपस में मिलाप होता है और यह दोनों मिलकर गर्भाशय ( ) में जाते हैं, वहाँ इन दोनों के सम्मिश्रण की वृद्धि होती है बस इसे गर्भ के नाम से पुकारते हैं। स्त्री और पुरुषका वीर्य सजीववस्थामें ही रहनेसे गर्भ धारण का हेतु बनता है। खुर्दबीन द्वारा देखने से पुरुषके सजीव वीर्य कीट मुखसे चपटा, लम्बा, गोल और पूछदार होता है अर्थात् पुरुष वीर्य कीटसे (वीर्य कण) तिगुने बड़े होते हैं।

इनका आकार अंडेके समान होता है, यह डिम्ब नंगी आंखों द्वारा नहीं देखा जा सकता। क्योंकि यह एक इंचके दोसौ भागमात्र होता है, पुरुषोंके अंडकोषके समान स्त्रियोंके गर्भाशयके इधर उधर दो कोष होते हैं जिन्हें डिम्ब कोष (overi) कहते हैं। जैसे पुरुष वीर्य में सफेद लसदार पदार्थ एक विशेष गन्धवाला होता है उसी तरह स्त्रियोंके डिम्बमें भी सफेद और पीला भाग होता है डाक्टरोंने इसका परीक्षण करने पर "न्यूक्लपस" और प्रोटोप्राज्म" नाम दिये है यह स्वच्छ झिल्ली दार और पारदर्शक होता है स्त्री की स्वस्थावस्था में नियमानुसार मास में एक बार २८ वें दिन मासिक धर्म होता है। मासिक धर्ममें निकलनेवाले रक्तका वर्ण पीपलकी लाखके समान कुछ विवर्ण

होता है। कपड़े पर पड़े हुए शुद्ध रक्तका चिन्ह धोने पर छूट जाता है।

दो धमनियोंके मुख से वायुकी प्रेरणासे योनी मुख में ऋतुधर्म आता है। जब यह मुख पर आता है तब डिम्बकोष से डिम्ब बाहर गर्भाशय में आते हैं, मैथुन के समय पुरुष वीर्य कीटाणुसे डिम्बका सम्बन्ध हो जानेसे गर्भ रहता है। डिम्ब कोष बादामके आकार का होता है और ४ इञ्च लम्बी दो नालियों द्वारा गर्भाशयसे सम्बन्ध रखता है पर इस बातको बहुत कम मनुष्य जानते हैं कि स्त्री की जननेन्द्रिय की वृद्धि १२ से १६ वर्ष तक और पुरुषोंको जननेन्द्रियकी वृद्धिका समय १५ से २५ वर्ष तक माना गया है। प्रायः प्रथम रजोदर्शनके बाद ३० वर्ष तक स्त्री गर्भ धारण करती है, इसके बाद प्रायः नहीं। जिन स्त्रियोंको मासिक धर्म नहीं आता या समय पर नहीं होता, मासिक रक्त अशुद्ध रहने से, उचित मात्रा में नहीं निकलने से, तथा जिनका गर्भाशय खराब हो गया है इस प्रकार की स्त्रियोंको गर्भ नहीं रहता इस बात को सब ही एक स्वर से मानते हैं।

उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त और भी बहुत से कारण हैं जिनसे गर्भ नहीं रहता जैसे—

गर्भाशय शोथ, ग्रन्थि, व्रण, कमलका मुखबन्द हो जाना, गर्भाशयका स्थान से हट जाना, प्रदर, शुष्कता, द्रवता, कमल में पानी भर जाना, कमल में वायु भर जाना, कमलमें मांस वृद्धि होना, कमलमें कृमि होना, कमलमें चर्बी का बढ़ना, या मुख छोटा होना आदि ऐसे कारण है जिनसे गर्भ नहीं रहता। इस लेखमें हम क्रमशः सबकी चर्चा करेंगे स्त्रीके कारणों के अतिरिक्त पुरुषोंके कारणों की भी चर्चा करना है क्योंकि गर्भ न रहने में दोनों ही कारण है।

महीने में एक बार २८ वें दिन स्त्रियोंको रक्त स्राव होता है उसे मासिक धर्म कहते हैं। हमारे देशमें १२ वर्ष की आयुसे लेकर १५ वर्ष तक की आयुवाली कन्याएं रजस्वला होती हैं जिन कन्याओंको इतने समय में बिना किसी कारणके देरसे रजो धर्म होता है या होता ही नहीं है। उन्हें अपने जीवन में बड़े कष्टों का सामना करना पड़ता है। मासिकधर्म के रुक जाने या समय पर ठीक न होने से नाना प्रकार के रोग शरीरमें अपना जड़ जमा लेते हैं जिसकी चिकित्सा बड़ी कठिन हो जाती है।

अधिक शारीरिक दुर्बलता, रक्त की कमी अथवा शरीर में रूक्षता बढ़ जाने से प्रायः मासिक धर्ममें देर हो जाती है जिन कन्याओंको इन कारणों से मासिकधर्म न हुआ हो तो उनकी शारीरिक कमजोरी को दूर कर रक्त वृद्धि का उपाय करना चाहिये। यदि शरीर में रूक्षता प्रधान हो तो स्निग्ध पदार्थ फलादिक सेवन करना लाभदायक है। प्रातः सायम भ्रमण करना अत्यावश्यक है क्योंकि शुद्ध वायु से जीवनी शक्ति बढ़ती है।

भोजनके बाद "द्राक्षासव" या अकेला "अश्वगंधारिष्ट" अथवा इन का मिश्रण गुणकारी है। या इस मिश्रण के साथ "दशमूलारिष्ट" उचित मात्रामें दिया जाए तो उत्तम फल होगा।

जो देश अधिक उष्ण है उसमें रजस्राव शीघ्र होता है। अथवा जो शीतप्रधान देश है उनमें देरसे मासिक धर्म होगा। १२ वर्षसे १४ वर्ष तक मासिक धर्म न हो तो कोई चिन्ता नहीं यदि २०-२१

वर्ष से भी अधिक दिन निकलने लगें तब चिन्ता करना आवश्यक है।

कम उम्र वाली कन्यायें अल्पवयस्क होने के कारण रजोधर्म के गुण से सर्वथा अनभिज्ञ होती हैं और दूसरों से कहती हुई भी लजाती हैं तथा विविध प्रकार की चेष्टाओंसे उसके रोकनेका प्रयत्न भी करती हैं इस प्रकार की कन्याओं का भावी जीवन कितना वीभत्स हो जाता है पाठकों से छिपा नहीं।

बहुत बार ऐसा देखा गया है जरा मासिकधर्म प्रारम्भ हुआ कि इस नई सभ्यता की पुजारिनें झट बिना सोचे समझे बर्फ का प्रयोग करने लगती हैं इसका परिणाम बड़ा भयानक सिद्ध होता है। कुछ पवित्रता की ठेकेदार अपने को इतना अपवित्र समझ बैठती हैं कि बार-बार स्नान शीत जल से करती हैं। इसी प्रकार के और भी उपाय करती हैं जिनके कारण वे सदा मासिक धर्म के रोगों की शिकार रहती हैं।

अशुद्ध-मासिकधर्म से अनेक कष्ट होते हैं। समय पर ठीक न होना, थोड़ा होना पेड़ू में दर्द होना, या सिर्फ दाग देकर रक्त का बन्द हो जाना, रक्त काला, छिछड़ेदार, पीला, नीला, विवर्ण, बहुत गाढ़ा या बहुत पतला होना, आध्मान, दर्द, सिर में चक्कर आना, दिल घबराना बेचैनी योनि में जलन आदि अनेक प्रकार के कष्ट दृष्टिगोचर होते हैं।

जिन स्त्रियोंको मासिकधर्म समयपर न होता हो, या रज-स्राव के समय दर्द होता हो, गाढ़ा छिछड़ेदार, काला रक्त कष्ट से आता हो, दुर्गन्धयुक्त हो, रक्तका दाग न छूटता हो, रक्त अन्दर जम गया हो। मासिक धर्म के सब रोगों पर हमारे निम्न प्रयोग बहुत बार के अनुभूत हैं। इनसे मासिकधर्म शुद्ध होकर समय पर आने लगता है। यह प्रयोग तब तक सेवन करते रहना चाहिये जब तक कि सर्वथा शुद्धि न हो जाए। यदि मासिकधर्म की खराबी से गर्भ धारण न होता हो तो मासिक ठीक होकर गर्भ स्थिति हो जायगी।

अब यहां मासिकधर्म लानेवाले और रक्त शुद्ध करनेवाले कुछ अनुभूत प्रयोगों का उल्लेख करेंगे।

मासिक धर्म विरोधादि फाण्ट—

अजमोद ३ मा० अजवायन देसी २ मा०
पीपरमेन्ट आइल ३ बूंद

विधि—दोनों औषधियों को भांग की तरह घोट लीजिये छान कर [illegible] कर पीपरमेन्ट का तेल गेर कर प्रति दिन प्रातः सायं सेवन करना चाहिये।

यदि पीपरमेन्ट का तेल न मिले तो पहाड़ी पोदीना घोटते समय गेर देना चाहिये। इस औषधि को मासिक धर्म के दिनों में लगातार व्यवहार करना चाहिये।

रजावरोधादि क्वाथ—

त्रिकटु १ तो०, काले तिल ४ मा०, बायविडङ्ग ४ मा०, पुराना गुड़ १ तो०।

विधि—आठ गुना पानी डाल कर क्वाथ कीजिये चौथा भाग रहने पर उतार कर छान लीजिये। इसके सेवन से मासिकधर्म आने लगता है।

ऋतुरोधक क्वाथ—

हाऊबेर ४ मा०, अजवायन २ मा०, अजमोद ३ मा०, बाबूना ४ मा०, हंसराज ६ मा०, अमल-

तास का छिलका १ तो०, कलौंजी २ मा०, पहाड़ी पोदीना३ मा०, गाजर के बीज ६ मा०, बांस की हरी पत्ती ७ पत्ते, पुराना गुड़ ३ तो०, घी गौ ४ तो० ।

विधि—सब औषधियों को अधकुटा कर आध सेर पानी में भिगोदें, रात भर भीगा रहने पर प्रातः क्वाथ बनालें। क्वाथ में गुड़ भी डाल देना चाहिये जब पानी आधा जल जाय उतार कर मलकर छान लें। फिर इस छने हुए क्वाथ में घृत और पैसे डाल कर फिर पकावें। पकते २ जब पानी आधा रह जाय अर्थात २ छटांक, तब पैसे निकाल कर रोगिणी को पिला दें।

गुण—वर्षों का बन्द मासिक धर्म बिना कष्ट के शुरू हो जाता है। यदि मासिक धर्म दर्द बेचैनी और घबराहट के साथ थोड़ा होता हो तो उसे उसी दिन मासिक धर्म के होने से ३, ४ घण्टे पहले यह क्वाथ पिला देना चाहिये।

नोट—घृत ताजा गौ का लेना चाहिये। यदि एक दो बार प्रथम बमन हो जाए तो चिन्ता नहीं करना। कुछ दिनोंमें बमन स्वयं बन्द हो जाती है।

मासिक धर्म शोधन चूर्ण—

बिनौले का आटा ५ तो०, शक्कर लाल ५ तो०, दोनों को मिला कर ६ मा० से १ तोला तक, कपास के १० डोढें का क्वाथ करलें इस क्वाथ के साथ चूर्ण लेना चाहिये। क्वाथ में २ तो० गुड़ मिला लेना, दोनों समय। पित्त स्वभाव वाली स्त्रियों को यह चूर्ण शीतल जल से देना चाहिये। इससे मासिक धर्म का आना शुरू हो जायेगा और शुद्ध भी होगा।

ऋतु शोधक चूर्ण—

सत्यानाशी की भस्म ६ माशे से १ तोला।

सत्यानासी के वृक्षों को भस्म बना कर रख लेना चाहिये। मधु के साथ सेवन कराइये। इससे मासिक धर्म खूब होता है।

सन्तति-निग्रह

(ले०—श्रीयुत डाक्टर धनीराम जी प्रेम)

उपरोक्त शीर्षक, यह महत्त्वपूर्ण लेख सहयोगी चाँद में प्रकाशित हुआ था जिसे हम दे रहे हैं।

कई वर्षों से सारे संसार में सन्तति निग्रह (Birth Control) का आन्दोलन जोर-शोर से चल रहा है। धीरे-धीरे अधिकाधिक व्यक्ति इसकी उपयोगितामें विश्वास करने लगे हैं कई वर्ष पूर्व मेरे अनेक मित्र, जिनके विवाह कुछ समय पूर्व हुए थे, इस प्रकार की खिल्ली उड़ाया करते थे। आज जीवनको वे उतना सरल नहीं समझते। आज वे कई बच्चों के बाप हैं और समझते हैं कि इतनी बड़ी गृहस्थी का भार क्या होता है। इसी लिए आज वे मुझसे सन्तति निग्रह के साधनों के विषय में लिखा पढ़ी करते हैं। यही दशा अन्य अनेक नवयुवकों तथा अधेड़ सज्जनों की है।

विदेशों में तो इसका प्रचार दिन पर दिन बढ़ रहा है। कुछ वर्ष पूर्व इस विषयको अधार्मिक बनाकर इसका प्रयोग अपराध माना जाता था—इसके प्रचारकों तथा लेखकों के ऊपर मुक़दमें चलते थे। परन्तु अब वायु का प्रभाव बदला है। लग भग दो वर्ष पूर्व इंगलैंड में पादरियों का एक सम्मेलन हुआ था जिस में इस विषय की भी चर्चा हुई थी। पादरी डीन इङ्ग जैसे क्रान्तिकारी धर्मप्रचारक के भाषणों के उपरान्त इस सम्मेलन ने कुछ अवसरों पर सन्तति निग्रह के उपायों को काम में लाने के लिये अनुमति देदी थी। इंगलैण्ड की सरकार ने भी उसी वर्ष प्रत्येक "काउण्टी' के हेल्थ आफिसर को सन्तति निग्रह की क्लिनिक (Clinics) खोलन की प्रेरणा की थी।

इङ्गलेन्ड में सबसे पहले इस काम को हाथ में लेने का श्रेय श्रीमती डा० मारिस्टोप्स तथा उनके पति को है। प्रारम्भ में डा० स्टोप्स के विचारों का बड़ा विरोध हुआ, चिकित्सा शास्त्र के डाक्टर, पादरी, तथा सरकार सभी इसके विरुद्ध थे उनपर कई मुक़द्‌मे भी चलाये गए। परन्तु वे अपने विचारों और कार्य में दृढ़ रहीं और लन्दन में दो वर्ष पूर्व जब मैंने एक सभा में उनका भाषण सुना, मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ उस सभा के सभापति लन्दन के एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक और उसमें भाग लेने के लिये अनेक सम्भ्रान्त स्त्री पुरुष आये हुए थे।

डा० मारीस्टोप्स ने लन्दन में एक बड़ी क्लिनिक की स्थापना की है जहां स्त्रियों को निःशुल्क इस विषय की शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त क्लिनिक की ओर से प्रचारक बाहर के भागों में जा जाकर जनता को सहायता देते हैं। इस क्लिनिक की ओर से मार्च १९३० तक लग भग-

१०,००० स्त्रियोंको शिक्षा और सहायता दी गई थी। केन्द्रस्थ क्लिनिक का कार्य मैंने स्वयम् जाकर भली भाँति देखा था, और वहां की कार्य प्रणाली वास्तव में अनुकरणीय थी यह ध्यान देने योग्य बात है कि इन दस हजार स्त्रियों में से ५ केवल ऐसी थीं जिनका विवाह नहीं हुआ था और गर्भ धारण कर चुकी थी दस हजार में यह संख्या न गण्य है। दूसरी ध्यान देने योग्य बात यह है कि इन में से अधिक संख्या उनकी थी जो क्लिनिक आने से पूर्व दो या तीन बच्चों की माताएँ हो चुकी थी।

डाक्टर स्टोप्स ने एक बड़ी मनोरञ्जक घटना का उल्लेख किया है कि सन् १६२१ में सेण्ट मेरी अस्पताल की प्रोफेसर मैकिलराय ने एक भाषण दिया था उस में सन्तति-निग्रह के साधनों का विरोध कर रबड़ कैप की बड़ी निन्दा की थी इस निन्दा से प्रभावित होकर एक पादरी ने जो वहां उपस्थित था, पुस्तक लिख डाली जिस में डाक्टर स्टोप्स की खूब खबर ली—

डा० स्टोप्स ने इस पर मान हानी का मुकदमा चलाया जिसमें फिर प्रो० मैकिलराय ने अपनी सम्पति बताई। कुछ दिनों बाद डा० स्टोप्स ने सुना कि प्रो० मैकिलराय सन्तति निग्रह की हामी होकर "रबड़ कैप" का प्रयोग स्त्रियों को बताती थीं। डा० स्टोप्स ने विश्वास करने के लिए, एक निर्धन स्त्री का वेश धारण किया और सेण्ट मेरी अस्पताल पहुंच गई, कुछ देर बाद हंसती हुई बाहर आई, क्योंकि प्रो० मैकिलराय ने उन्हें स्वयं "रबड़केप" पहनाया था। इस से विदित होता है कि सन्तति निग्रह के सिद्धान्त का विरोध किस प्रकार घट रहा है।

सन्तति निग्रह के साधन अनेक हैं उनमें से सर्व श्रेष्ठ और आदर्श है "इन्द्रिय-निग्रह"। जो स्त्री-पुरुष इस अमोघ शस्त्र का प्रयोग सरलता पूर्वक कर सकते हैं उनके लिये कोई कठिनाई नहीं, परन्तु आदर्श आखिर एक आदर्श ही है और उसका पालन करना सबके लिये सम्भव नहीं, इस कारण आगे कुछ साधन दिये जायँगे।

श्वास आदि क्रियाएं—

कुछ पुस्तकों में बताया गया है कि अमुक समय अथवा अवस्था में सहवास करने से गर्भ नहीं रह सकता अथवा यदि अमुक नासिका द्वारा श्वास लिया जाय तो इस से मुक्ति मिलती है। परन्तु ये सब कपोल कल्पित कथाएं हैं इनमें कोई सार नहीं।

कुछ स्त्रियों का यह ख्याल होता है कि जब तक बच्चा दूध पीता रहता है अथवा प्रसव के बाद जब तक मासिकधर्म बन्द रहता है तब तक सहवास किसी भी डर के बिना किया जा सकता है। यह उनकी भूल है। बच्चे को दूध पिलाते समय इसपर थोड़ा सा प्रभाव पड़ता है अधिक नहीं। ऐसी बहुत स्त्रियां मिलती हैं जो ३-४ मासका बच्चा गोद में है फिर भी गर्भवती है।

मासिक धर्म और गर्भधारण के सम्बन्ध के विषय में भी बड़ी भ्रान्ति फैली है। यह ठीक है कि मासिक धर्म होने के कुछ दिनों बाद तक गर्भ धारण की आशंका रहती है और फिर कम हो जाती है। यह सब कुछ होने पर भी यह याद रखना चाहिये कि किसी समय भी सहवास

करने पर गर्भाधान हो सकता है। वीर्य कीटाणु कई दिनों तक जीवित रह सकता है।

फ्रेञ्च लेदर

यह रबड़ का खोल होता है जो पुरुषेन्द्रिय पर चढ़ाया जाता है सहवास के समय वीर्य इसी में स्खलित होता है और इस प्रकार कीटाणु स्त्री के गर्भाशय में नहीं जा पाते, यह उपाय है अच्छा परन्तु इसमें कई आपत्तियां हैं। एक तो यह कि सहवास के समय फट जाता है और वीर्य स्त्री के योनि मार्ग में पहुँचता है यदि एक बार भी ऐसा हो जाय तो गर्भ रह जाने की आशंका रहती है। दूसरी आपत्ति यह है कि इसके प्रयोग से सहवास का सच्चा सुख प्राप्त नहीं होता और इस प्रकार स्त्री पुरुष के ज्ञान तन्तुओं को हानि पहुंचती है। तीसरी आपत्ति यह है कि वीर्य के जो पौष्टिक पदार्थ साधारणतया स्त्री के रक्त में मिलकर उसे लाभ पहुँचाते हैं वे सब इसके कारण व्यर्थ हो जाते हैं।

परन्तु नवविवाहिताओं के लिये यही उत्तम साधन है। रबड़ कैप या पैसरी (Check Pessry Or Occlusive Cap)

यह उपाय सब से अच्छा है। इसके द्वारा गर्भाशय के द्वार पर परदा डाल दिया जाता है, जिससे वीर्य कीटाणु भीतर प्रवेश नहीं कर पाते। सम्भोग के सुख में इस प्रकार बाधा नहीं पड़ती और वीर्य भी व्यर्थ नहीं जाती। इसका प्रयोग हमारे देश में अधिक नहीं किया जाता। इसका पहला कारण तो यह है कि स्त्री को गुप्तेन्द्रियों का ज्ञान बहुत कम व्यक्तियों को है। दूसरा कारण यह है बहुतेरी स्त्रियां कैप का व्यवहार करने से इनकार कर देती है।

यह कैप कई पदार्थों से बनाई जाती है जैसे धातुयें, सेलूलाइड तथा रबड़, रबड़ की कैप का भी प्रयोग अधिक किया जाता है। इसका किनारा कई प्रकार का होता है किसी में स्प्रिङ्ग लगी रहती है किसी में हवा भरी रहती है कोई ठोस होती है ठोस किनारे वाली के तीन नम्बर होते हैं।

नं० १—छोटे क़द की स्त्रियों के लिये तथा उनके लिये जो माता नहीं हैं।

नं० २—साधारण स्त्रियों के लिए।

नं० ३—उन स्त्रियों के लिये जिनका क़द बहुत लम्बा है अथवा जो कई बच्चों को जन्म दे चुकी हैं एक कैप ६ मास से २ वर्ष तक काम देती हैं। इङ्गलैण्ड की बनी हुई रोशियल प्रोरेस आदि कैप अच्छी होती है। इनका मूल्य २) से ३) के बीच में होता है। जर्मनी की बनी कैप भी अच्छी होती हैं और सस्ती भी होती हैं।

कैप को स्त्रियां स्वयं ही चढ़ा सकती हैं पहली बार लेडी डाक्टर से परीक्षा कराके चढ़ाने का ढङ्ग मालूम कर लेना चाहिये। निम्न लिखित बातें इस सम्बन्ध में उपयोगी सिद्ध होंगी।

१—कैप का नम्बर ठीक होना चाहिये। जो पहले नम्बर १ का प्रयोग करती रही हैं उन्हें बालक उत्पन्न होने के बाद नं० २ का प्रयोग करना चाहिये।

२—मासिक धर्म के समय तथा प्रदरादि रोगों में इस कैप का प्रयोग वर्जित है।

३—प्रयोग के पहले कैप को साबुन के पानी में डुबायें। स्त्री या तो लेट कर अपनी टांगोंको ऊपर

बैंच या तलवों के बल बैठ जाए । कैप के किनारों को उँगलियों से पकड़ कर भीतर ले जाए और गर्भाशय के मुख पर चढ़ा ले। कैप वहां पहुँच कर आप ही आप फिट हो जाती है।

४—किनारे पर एक रेशम का फीता बंधा रहता है। यह उतारते समय खैंचने के लिए हैं। परन्तु उसकी अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती और इसको निकाल डालना ही अच्छा है।

५—कैप सहवास के बाद कम से कम १६ घंटे अन्दर जरूर रहे। अधिक से अधिक कुल ४८ घंटे कैप अन्दर रखनी चाहिये। इसके बाद अवश्य निकाल लेनी चाहिये। कैप को अन्दर धारण करने पर किसी बात का कष्ट नहीं होता है इससे उसके अन्दर छोड़ रखने की अधिक सम्भावना रहती है।

६—निकालते समय उसी प्रकार बैठ कर या लेट कर अंगुलियों से उसे बाहर निकालना चाहिये। और फिर उसे गर्म पानी और साबुन से धोना चाहिये। उसके बाद उसे बोरिक या कारबोलिक लोशन में रखना अच्छा है।

यदि शीघ्र आवश्यकता हो तो सुखा कर रखना अधिक लाभ प्रद है। यदि उसमें छेद होजाए कहीं दरारें पड़ जायँ तो बदल देना ही अच्छा है।

७—जिन्हें सन्देह हो कि कैप ठीक नहीं चढ़ती वे उस पर चढ़ाने से पहले किनीन, चिनोसोल आदि का मरहम लगा सकते हैं परन्तु इस प्रकार खर्च अधिक बढ़ जाता है। निकालते समय डूश (Douche) लेना अर्थात् योनि मार्ग को पानी से धोडालना भी अच्छा है।

जिन्हें गर्भाशय के रोग के कारण लेडी डाक्टर कैप का प्रयोग करना असम्भव बताती हैं वे दूसरे प्रकार के कैप का प्रयोग कर सकती हैं। उस "डचपैसरी" (Dutch Pessary) कहते हैं। यह पैसरी गर्भाशय के मुख पर नहीं चढ़ाई जाती यह योनि मार्ग के उस भाग को बन्द कर देती है जो गर्भाशय के मुख के पास होता है। इस में कई दोष हैं इसी से प्रत्येक के लिए इसका प्रयोग ठीक नहीं।

कपड़े की डाट (Plug)

जो स्त्रियां निर्धन हैं या कैप का प्रयोग करना नहीं जानतीं उनके लिये बहुत सरल उपाय है। यद्यपि यह खतरे से खाली नहीं है।

एक स्वच्छ कपड़े का टुकड़ा लेकर गर्म पानी में भिगोना चाहिये। फिर उस पर औलिव आइल, आधा भाग सिरका और आधा पानी मिला कर, अथवा फिटकरी का पानी डालना चाहिये। उस कपड़े को योनि मार्ग में डाट की तरह लगा देना चाहिये। कपड़ा इतना अधिक नहीं कि सारा मार्ग उससे भर जाए, रबड़ आदि के स्पन्ज भी यही काम करते हैं।

९—योनि मार्ग में रखने की औषधियां—

यह कहा जा चुका है कि यदि किसी प्रकार वीर्य के कीटाणु योनी मार्ग में पहुंचते ही नष्ट कर दिये जायँ तो गर्भ का भय नहीं रहता। इसके लिये कई प्रकार की औषधियों (Suppositories Jellies and Pills) का आविष्कार हुआ है जो कीटाणुओं को नष्ट करती है। इनमें से लैक्टिक एसिड जैली, प्रोसेल्डीस बर्थ-कन्ट्रोल

कुचला (NUXVOMICA)

(लेखक—शशिकान्त मिश्र)

संस्कृत	विषमुष्टि-रम्यफल
गुजराती	मेर कोचला
कर्णाटक	हेम्पुष्टि
मराठी	काजरा
बङ्गाली	कुचला
तेलिंगी	कोकोडी
मलाया	कञ्जिराय
फारसी	अफेरकी

अरबी में इसको रजाकी तथा अँग्रेजी में पोइजननट और लेटिन Strychnos Nux Vomica स्ट्रिकनास नक्सवामिका कहते हैं।

इसकी कई जातियाँ उपलब्ध होती हैं उसका वृक्ष अन्य किसी देश में उत्पन्न नहीं होता। अफ्रीका में भी कहीं कहीं पाया जाता है अफ्रीकामें मिलने वाला कुचला भारत में उत्पन्न हुये कुचले से भिन्न है हम उसको कुचले की जाति में ही अन्तर-गत कर लेते हैं।

भारत में मालावार प्रान्त में अधिक होता है इसकी ऊँचाई चालीस से साठ फुट तक के लगभग होती है इसका वृक्ष घना छायादार डालियाँ मजबूत

टेब लेट्स, क्विनीन या चिनोसोल सपोजिटरी, कोन्ट्रोसेप्टे लीन, पेटेन्टेक्स, स्पेटोनेक्स, आदि के नाम प्रमुख हैं।

आपरेशन (Sterilisation) ❀

सबसे अधिक विश्वसनीय उपाय औपरेशन है, परन्तु यह उनके ही लिये योग्य है जिन्हें जीवन भर सन्तान उत्पन्न करने की अभिलाषा नहीं। जो कुछ समय के लिए ही सन्तानोत्पत्ति रोकना चाहते हैं, उनके काम का उपाय यह नहीं। यह आपरेशन डाक्टरों की सलाह से हो हो सकता है। सबसे अच्छी विधि यह है जिसमें दोनों ओर की रज ग्रन्थियाँ काट कर बन्द कर दी जाती हैं इस प्रकार रजग्रन्थियां रज को बनाती हैं, परन्तु नालियां न होने के कारण रज-कीटाणु गर्भाशय में आए वीर्य कीटाणुओं से नहीं मिल सकते।

संक्षेप में यह सन्तान निग्रह का विषय है। समाज और राष्ट्र का कल्याण चाहनेवालों को इसे अवश्य अपनाना चाहिये।

❀ नोट—जीवन सुधा के विशेषांक "महिलारोग-विज्ञान" में "गर्भाशय और डिम्ब ग्रन्थियों को पृथक कर देने से स्वास्थ्य पर हानि-लाभ" नामक लेख अवश्य पढ़ना चाहिए फिर आपरेशन कराना चाहिए या नहीं—इस पर विचार करें। —सम्पादक।

और टेढ़ी होती हैं। तने की छाल चिकनी देखने में धूसर वर्ण की स्वाद में कटु (कड़वी) नये पत्ते हरे कुछ रक्ताभ और देखने में भले प्रतीत होते हैं इसके पत्रनाल मज़बूत पत्ते बराबर कंगूरेदार नहीं होते कुछ मोटे और चिकने होते हैं पत्र अण्डे के समान ३ इञ्चसे ५ इञ्च तक लम्बे तथा १॥ से ६ इञ्च तक चौड़े नोकदार और पत्तों पर ३ से ५ तक रेखायें खिंची रहती हैं पुष्पों का वर्ण हरे पन के साथ श्वेताभ होता है यह मंजरियों के सदृश टहनी के अग्रभाग पर आते हैं।

कुचले का फल इन्द्रायण के समान और सुन्दर होता है। फल की त्वचा चिकनी पतली और मोहक होती है। फल को यदि तराश कर देखें तो अन्दर से सफेद तथा पीत वर्ण का गूदा दिखाई देगा और इसमें २ से पांच तक बड़े बटन के बराबर बीज निकलते हैं इनका वर्ण धूसर और यह बीज दृढ़ और मजबूत होता है। बीज की लम्बाई चौड़ाई का व्यास आध इञ्च से एक इञ्च तक होता है।

कुचले के बीज में से किसी प्रकार की गन्ध नहीं आती। इसकी छाल तथा पत्ते भी बीज जैसे ही विषाक्त होते हैं।

यदि पत्तों में कोई खाद्य वस्तु रख दी जाय तो वह विषयुक्त हो जायगी उसको खाने पर मृत्यु हो सकती है। यह स्वाद में तीव्र कडुवा होता है।

इन बीजों से एक प्रकार का सत्व पदार्थ निकाला जाता है इसे अंग्रेजी में स्ट्रिकनीन (Strychnia) कहते हैं। इसके अतिरिक्त ब्रूसीन नामक सत्व पदार्थ प्रतिशत १२ से १ परिमाण में निकलता है।

स्ट्रिकनीन एक बड़ा भारी विष है। कुचले की १५ रत्ती मात्रा से मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। जब कुचले का चूर्ण पेट में पहुँचता है आध घंटे से लेकर एक घंटे के बीच बीच में विष लक्षण उत्पन्न होने शुरू हो जाते हैं। सारे शरीर में बेचैनी तथा हाथ पांव ऐंठने लग जाते हैं। पेट में तीव्र शूल हड़ फूटन कटि में दर्द आदि लक्षण शुरू होकर के स्वेद आता है अन्त में रोगी थक जाता है शरीर में ऐंठन बराबर बढ़ती जाती है मृत्यु के कुछ देर पहले जबड़ों की मांस पेशियों पर प्रभाव होता है और अन्त में मृत्यु हो जाती है।

कुचला शरीर की गत्युत्पादक नाड़ियों की गति को कम करता है यदि साधारण मात्रा दी जाये तो इसके प्रभाव से त्वचा की सांवेदनिक नाड़ियां और शरीर को गति उत्पन्न करने वाली नाड़ियों को उत्तेजित करता है स्ट्रिकनीन का ऐच्छिकगति नाड़ियों तथा मज्जाजाल पर बहुत शीघ्र असर होता है इसके प्रभाव से हाथ पैरों की नाड़ियाँ एंठने लगती हैं शरीर धनुष के समान टेढ़ा हो जाता है। स्ट्रिकनीन का प्रभाव रक्त द्वारा फैलकर पृष्ठ वंश के अन्दर के मज्जातन्तु (Spinal Nerues) मस्तिष्क के तन्तुओं पर बहुत शीघ्र होता है जिसके कारण हृदय की गति बन्द हो जाती है।

प्रभाव—

इसके सेवन काल में धातु अधिक काम करती है तब ओषजनीकरण अधिक होता है अर्थात्— शरीर में शुद्ध वायु अधिक ली जाती है और कर्बन-द्विओषिद वायु शरीरसे अधिक बाहर निकलती है।

शरीर में यह प्रभाव वात संस्थान में परिवर्तन होने से होता है। अनुभव करने से यह विदित हुआ है कि मूत्र में शरकरा का परिमाण कम होता है।

नपुंसकता के लिये यह बहुत अच्छा साबित हुआ है इसके सेवन से कामशक्ति बढ़ती है और शिश्न की शिरायें सख्त और मजबूत हो जाती हैं इस कारण यह स्तम्भन का कार्य करता है।

वीर्य क्षीणतापर कुचला अच्छा फल दिखाता है।

ज्वर जब छूट कर बार २ दौरा करता हो तब इसके सेवन से ज्वर आना बन्द हो जाता है।

हमने इसका मलेरिया फीवर पर बहुत बार परीक्षा करके देखा है। वास्तव में अच्छा लाभ करता है।

एक बार तो पक्षाघात पर इसका चमत्कारिक फल देखा—

मेरे पास एक रोगी जिसकी अवस्था ३५ वर्ष की थी उसको पक्षाघात हो गया। बहुत चिकित्सायें कराने पर भी आराम न हुआ संयोग से वह केस मेरे पास भी आया मैंने इन औषधियों की व्यवस्था की—

शुद्ध कुचला	१ र०
मल्ल सिन्दूर	१ र०
वातारि गोली	१ र०

महारास्नादि काथ के साथ सेवन कराया उस को ५-६ दिन में ही आराम हो गया तब से लेकर अब तक इन्हीं प्रयोगों को बरत कर आशातीत लाभ उठाता हूँ।

बहुतसे रोगियों को इस प्रयोग से लाभ हो चुका है। इसके अतिरिक्त वायु रोगों में भी अच्छा लाभ देता है। क्षुधावृद्धि के लिये यह प्रयोग लाभदायक है—

अग्नितुण्डी वटी—

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, मीठातेलिया, अजमोद, त्रिफला, यवक्षार, चीता, सज्जी, सेंधा, जीरा, कालानमक, समुद्र नमक, वायविडङ्ग, सुहागा छः छः माशे।

शुद्ध कुचला ७ तो० इन सबका कपड़छन चूर्ण कर जम्बीरी नीम्बू के रस में खरल कर काली मिर्च के समान गोली बना लीजिये।

इसके सेवन से मन्दाग्नि नष्ट हो कर भूख लगती है। हैजे की अवस्था में कुचले का प्रयोग होता है यह रोगी के हाथ पैरों की ऐंठन पेट दर्द आदि को नाश करता है।

पुराने अतिसार के कारण आँतें बिगड़ जाती हैं। शुद्ध कुचला इस अवस्था को सुधारता है। आँतें अपना कार्य करने लग जाती हैं। उनमें एक प्रकार की चेतना उत्पन्न हो जाती है जिसके कारण आंत्र भाग पूर्व जैसा ही कार्य करने लगता है।

कम्प वायु को भी कुचला शीघ्र नाश करता है।

महेशदत्त जिसकी आयु १२ वर्ष की थी उसको कम्प वायु था। किसी वस्तु को उठाते हुए उसके हाथ कांप जाते थे और वस्तु गिर जाती। वह चल फिर भी नहीं सकता था। यहां तक कि १०। १५ क़दम चलते ही गिर जाता। बहुत ही परेशानी में थे उसके घर के, दो तीन बार बिजली भी लगाई गई। बिजली का फल यह हुआ कि कम्प वायु बहुत कुछ नष्ट हो गयी।

अब वह कुछ दूर चल भी सकता था परन्तु उसके पैर कांप जाते जिसके कारण चलते २ ही गिर जाता। (क्रमशः)

❋ जलनीम ❋

वैद्यभूषण कन्हैयालाल वैद्य 'सोहया' (जि० लुधियाना)

जल नीम नदी, तालाब, पुराने कुए आदि जलीय स्थानों में पैदा होता है ।

(आकृति) नोनियां के समान, पत्ते भी नोनियां के से कुछ बड़े और हरे होते हैं, फूल नीले रङ्ग के, कभी वर्षा कभी ग्रीष्म में फूलते हैं। देखने में अत्यन्त सुन्दर मालूम होते हैं।

नोट—नोनिया को पञ्जाबीमें सुलूनक कहते हैं।

(स्वाद) अत्यन्त तिक्त रस युक्त, कटु और किञ्चित कषाय रसान्वित है।

(गुण) कफ पित्त नाशक, रक्त शोधक है, पित्त को शमनकारी किन्चित वातको कुपित करती है, वमनकारक और मादक है इसमें ऊर्ध्व और अधो मार्ग से दोषों को निकालने की विचित्र शक्ति है।

(प्रयोग) समस्त रक्त के विकार, चर्म रोग, वातरक्त, उपदंश, आमवात, कुष्ट, बवासीर, उदर-रोग, शिरोरोग, कफ, खांसी, ज्वर और कोष्ठ-बद्धतादि रोगों में इसका प्रयोग करें।

अनुपान—शीतल जल, मधु, मिर्च, सैंधव लवण, गुर्च, उश्बा, चोपचीनी, त्रिफला, मजीठादि के साथ प्रातः सायं सेवन करना।

मात्रा:—३ मासे से ६ मासे तक, कमजोर और बच्चों को कम।

व्यवहार:—पञ्चांग या पत्ते सूखे या हरे, स्वरस, अर्क, चूर्ण, गोली के रूप में।

प्रयोग विधि:—जलनीम काली मिर्च के संग जल से घोट मधु मिलाय पीने से दो तीन मास में भयंकर रुधिर विकार, वातरक्त, कुष्ट, उपदंश, रोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

त्रिफला सङ्ग पीस कर गोली बना कर सेवन करने से अर्श रोग का नाश होता है।

कफादि श्वास रोग में कफ निकालने के लिये जल में घोट कर पीना चाहिये इससे ज्वर भी नष्ट होता है।

आमवात और उदररोग में सैंधव संग चूर्ण कर सेवन करना चाहिये।

कल्क और स्वरस के द्वारा घृत वा तैल सिद्ध कर, घृत को मूर्छा, भ्रम, मृगी एवं मस्तक रोग में देने से रोग नाश होते हैं।

(तैल) सिर पीड़ा में लगाया जाता है।

इसके काढ़े से व्रण धोने से व्रण शुद्ध हो जाता है इसे घृत आदि के संग मलहम बना कर व्रण, शोथ आदि स्थानों पर लगाने से पीड़ा तत्काल दूर हो जाती है। (उपदंश आतशक रोग में) जलनीम उश्बा, चोपचीनी और मजीठादि के साथ सेवन करना ठीक है।

इसको बहुत दिनों तक रसायन विधि से सेवन करने से शरीर में रसायन के गुण पैदा होते

हैं। रस रक्तादि धातु वृद्धि तथा शुद्ध होती है, नवीन रक्त पैदा होकर बल वृद्धि करते हैं, इसे गुर्च के साथ सेवन करने से सुजाक प्रमेह आदि जीर्ण ज्वर नाश होते हैं।

नं० २—रक्त शुद्ध कारक अर्क

माऊअर (गंगादि नदियों के कछार में होता है) जल नीम, रसोंत, उशवा मगरबी, चोपचीनी, मंजीठ, उन्नाव, मेंहदी फूल और पत्र, पित्तपापरा (शहतरा) का सर्वाङ्ग, सीरसछाल, मुंडी, छोटा गोखरू, वर्ग सरफोंका, चिरायता, वकायन छाल आंवला, बहेरा, बकला, गुल बनफशा, कचनार छाल, ये सब तीन तीन तोले बहे-मन सुर्ख, सफेद और रक्तचन्दन, नीम का फूल, ये सब दो दो तोला, बुरादा आबनूस और बम्बूर (कीकर) छाल, बड़ी हर्र का बकला, नीम-छाल, ये सब पाँच पाँच तोला, अर्क काशनी, अर्क मकोय, एक एक सेर सब दवाइयों को अध-कुचला कर डेग में एक मन पानी डाल एक दिन रात भिगो रक्खें, दूसरे दिन बकयन्त्र द्वारा (डेग भबका) अर्क खींच लें।

सेवन विधि: प्रातः, दोपहर, शाम दिन में ३ बार आध आध पाव अर्क में एक एक तोला उत्तम पहाड़ी शहद (मधु) को अर्क पीयें और सात या आठ बजे सबेरे निम्नलिखित घृतका जहां तक चर्म रोग हो लेपन करें और हर रोज कार-बोलिक सोप से मलकर स्नान किया जाय।

लेप (घृत का नुस्खा) नं० २—

जलनीम, मेंहदी पत्र, सफेद खैर, चौकिया सोहागा, रालधूप, नौनियाँ गन्धक, कपूर, कासी, सेन्दुर, मुर्दाशङ्ख, मैनसिल, कबीला, सफेदा काशगरी, गोलक सेन्दुर, तूतिया, रसौंत, मोम, हल्दी, विड़ंग, सरसों, लाल चन्दन, सिंघाड़ा, घोड़ावच, मंजीठ, नींब पत्र, कंजागिरी, महुवा छाल, जटामासी, सिरसा छाल, लोघ, पद्माख, गदापूर्ण, हर्र बकला, सब दवा चार चार मासे सबको खूब बारीक खरल कर दो सेर गऊ के घी में मिला ताम्र पात्र में रख सात दिन धूप में रक्खें और दिन में चार बार घोट दिया जाय पश्चात् काम में लाया जावे।

उपरोक्त विधि पूर्वोक्त नं० १ का अर्क पीने और नं० २ का घृत लगाने से समस्त रक्त विकार की बीमारियाँ कुष्ट, दाद, खाज, सेहुआ, अपरस, चकवय, लाल मण्डल, चकत्ते, विचर्चिका आदि गर्मी के घाव, नासूर, शोथ, भगन्दर सब प्रकार के घाव शर्तिया आराम होते हैं, शरीर के दाग, फुन्सी, फोड़ा मिट जाते हैं।

(परहेज) तेल, मिर्च, खटाई, सिरका, मांस, मद्य, स्त्री प्रसङ्ग, शोच, धूप, अग्नि, गुड़, बैंगन, उर्द आदि का त्याग।

(पथ्य) गेहूँ रोटी, पुराना चावल, भात, अरहर, मूंग की दाल, गऊ का दूध, घृत, मलाई, लौकी, कद्दू, नेनुआ, परवर, पालक की तरकारी।

सूचना—प्रथम जुलाब लेकर दवा का सेवन करें तो अति उत्तम है।

हस्त-सामुद्रक और शरीर विज्ञान

लेखक—पं० रामचन्द्रजी भारद्वाज

[गताङ्क से आगे]

नाखून और उनके लक्षण

हस्त सामुद्रिक के आधार में किसी मनुष्यकी शारीरिक और मानसिक क्रियाओं को समझने के लिये जितनी सहायता हमको उसके नाखूनों से मिलती है उतनी हाथ के किसी और भागसे नहीं। यदि इस विषय पर पूर्ण प्रकाश डाला जाय तो एक बड़ी पुस्तक लिखी जा सकती हैं। नाखून से मनुष्य का स्वभाव ही नहीं शरीर सम्बन्धी उन सभी कमजोरियों का पता चल जाता है जो जन्म से वह अपने साथ लाता है और समय पा कर वही उसके किसी न किसी रोग का कारण बन जाया करती हैं। पाश्चात्य डाक्टर और दूसरे अनुभवी विद्वानोंने इस विषयको बहुत कुछ स्पष्ट कर दिया है। स्थानाभाव से हम नाखूनों के कुछ लक्षण और उन रोगोंका वर्णन जो उन लक्षणों द्वारा जाने जा सकते हैं—करेंगे।

अवस्था भेदसे नाखून चार तरहके होते हैं—लम्बे, छोटे, चौड़े, और तंग। प्रायः जिन मनुष्यों के नाखून लम्बे होते हैं उनका सीना और फेफड़ा कमजोर होते हैं। शारीरिक शक्ति उनकी उतनी बढ़ी चढ़ी नहीं होती यदि नाखून सिरे के नीचे अङ्गुली की तरफ और एक कोर से दूसरी कोर तक अधिक मुड़ा हुआ हो तो कमजोरी भी उतनी ही अधिक समझनी चाहिए।

यदि नाखून अधिक लम्बे हों और उनके बीच में रेखायें पड़ी हों तो शरीर उससे भी अधिक कमजोर और नाजुक होता है। भले ही ऐसा मनुष्य छाती और फेफड़ों का रोगी न हो—परन्तु यदि परीक्षा करके देखा जाय तो यह रोग किसी न किसी रूपमें उसके खान्दान में अवश्य पाया जायगा। ऐसी दशा में मनुष्यको न्यूमोनियाँ Pneumonia आदि रोगोंसे सदा बचते रहना चाहिये।

यदि नाखून कुछ अधिक मोटे और चौड़े हों तो गले का सूज आना दमा शीत और दूसरे गले से सम्बन्ध रखने वाले रोग उत्पन्न हो जाया करते हैं।

लम्बे, सिरेपर चौड़े और नीचे की ओर अधिक नीले नाखून शरीर में शरीर का प्रवाह और हृदय की गति ठीक न होने के लक्षण हैं। नाखून चाहे लम्बे हों या छोटे यदि उनमें चंद्र(⌒ = Moon) न हो तो हृदय कमजोर होता है सम्भव है हृदय की

गति अनायास बन्द हो जानेसे मृत्यु हो जाए। यदि चन्द्र आकार में बहुत बड़े हों हृदयकी चाल उतनी ही अधिक तीव्र और शरीर में रुधिर प्रवाह अधिक शीघ्रता से होता है। ऐसे मनुष्य को कोई ऐसा काम न करना चाहिए जिससे शरीरमें उत्तेजना पैदा हो और रुधिर चक्कर खाने लगे। यदि ऐसा हुआ और रुधिरका प्रवाह बढ़ गया तो नीचे लिखे दो उपद्रव हो सकते हैं।

१—रुधिर का मस्तिष्क की ओर प्रवाह अधिक बढ़ जाना ऐसी अवस्था में मूर्छा, मृगी, अर्धाङ्ग, पक्षाघात, आदि वायु (Ap-o-Plec-tic) जनित रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

२—धमनियों पर अधिक दबाव पड़ने से हृदय की चपनी का फट जाना। ऐसे मनुष्यों को भांग, चरस, शराब, आदि नशीली वस्तुओं का सेवन भूलकर भी नहीं करना चाहिये।

उपरोक्त दोनों उपद्रवों में से कौनसा उपद्रव होना सम्भव है इसे जान लेना अधिक आसान है। यदि स्वास्थ्य रेखा (Health Line) अधिक स्पष्ट होकर हृदय रेखा से जीवन रेखा में जाकर मिलती हो तो इसका प्रभाव हृदय पर पड़ता है। ऐसी दशा में यदि सावधान न रहा जाय तो हृदय रोग होजाने की सम्भावना होती है।

यदि मस्तिष्क रेखा भौम अर्थात् मङ्गल-ग्रह के स्थान (Mount of mars) की ओर दौड़ती हो तो इसका मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है यदि इस मस्तिष्क रेखा पर कोई द्वीप का चिन्ह पड़ा हो तो यह अपना बुरा फल दिखाये बिना नहीं रहता।

लम्बे नाखून

जिन मनुष्यों की अँगुलियों के नाखून लम्बे होते हैं उन्हें प्राय: ऐसे रोग सताते हैं जिनका प्रभाव आधे शरीर के भाग पर होता है गले का सूज जाना, खाँसी जुकाम, न्यूमोनियाँ यदि अधिक सावधान न रहा जाय तो फेफड़ों का गल जाना (Tuber-cu-lo-sis) क्षय रोग इत्यादि।

यदि अँगुलियों के नाखून किसी हाथ में छोटे हों तो उन मनुष्यों के लिये जिनके कि ऐसे नाखून होते हैं, हृदय रोग को साधारण व्याधि हो जाती है और प्राय: ऐसे रोग जिनका प्रभाव शरीर के नीचे आधे भाग पर होता हो उनके लिये सदा तैयार रहते हैं।

प्राय: ऐसे बहुतसे मनुष्य होते हैं जिनके हाथों की अँगुलियों के नाखूनों में चन्द्र (⌒ = चन्द्राकार) होता ही नहीं बिना चन्द्र के छोटे नाखून उस खानदान के प्राय: सभी मनुष्यों के होते हैं जिसमें मनुष्योंकी हृदय और रुधिर की चाल ठीक न रहने का रोग होता है।

सब से बुरे नाखून वह होते हैं जिनमें चन्द्र नहीं होते और जो पतले और नीचे की ओर चपटे होते हैं। यदि छोटे नाखून अधिक चपटे और माँस में गढ़े हों तो सुनबहरी लकवा आदि(Par-a-lyt-ic) रोगोंकी शङ्का बनी रहती है। सीपी या कौड़ी के आकार के छोटे सिरे पर उठे हुए या मुड़े हुये नाखून ऊपर कहे गये रोगोंके अचूक लक्षण समझने चाहिये। यदि इन नाखूनोंका रंग नीचे से नीला हो तो इनका प्रभाव और भीचिन्ताजनक एवं भयंकर पड़ता है।

ऊपर जो कुछ कहा जा चुका है उससे यह न समझ लेना चाहिये कि जिनके नाखून लम्बे या छोटे होते हैं उन्हें वह रोग अवश्य होने चाहिये जो उनके लिये लिखे गये हैं या उन के सिवाय कोई दूसरा रोग उन्हें होता ही नहीं। बल्कि वह नाखून उन रोगों के प्रारम्भिक लक्षण हैं। जिनका कारण पहले ही से मनुष्य के शरीर में है या वंश परम्परा से उनके खानदान में होता आया है। लम्बे और तंग नाखून कमज़ोर कमर के लक्षण हैं और यदि अधिक लम्बे, ऊँचे और ज्यादा मुड़े हुये हों तो रीढ़ सम्बन्धी (Spinal) रोग होता है। है। पतले और बहुत छोटे नाखून निर्बल स्वास्थ्य और कमजोरी के स्वाभाविक चिन्ह कहे जाते हैं।

यदि नाखूनों के ऊपर दाग हों तो मनुष्य का स्नायुभाग कमज़ोर होता है। यदि हाथ पतला और रेखायें अस्पष्ट हों तो इसे स्नायविक दुर्बलता (Neneous Debility) का पूर्व रूप समझना चाहिये।

प्राकृतिक स्वभाव

लम्बे नाखून

जहाँ तक स्वभाव से सम्बन्ध है लम्बे नाखून के मनुष्यों में कोई विशेष विलक्षणता नहीं पाई जाती। उनका स्वभाव कोमल और सभ्य मनुष्यों जैसा होता है। प्राय: हर बात को वह आसानी से समझते हैं। परन्तु वह मनुष्य विशेषतः उन बातों में जो उनके स्वभाव के विरुद्ध पड़ती हैं, वहमी होते हैं। पीले नाखून अच्छे नहीं होते। यदि लम्बे और मुड़े हुए हों तो मनुष्य स्वभाव से निर्दयी और कठोर होता है। देखने में भले ही वह हँस मुख हो परन्तु दया या सहानुभूति उसको छू नहीं जाती।

इस श्रेणी में स्त्री या पुरुष कोई भी हो, प्राय: सभी बेरहम होते हैं। सम्भव है चिड़ीमार, मछली पकड़ने वाले या दूसरे शिकारी हों।

छोटे नाखून

इसके विपरीत वह मनुष्य जिनके नाखून छोटे होते हैं—

स्वभाव के विलक्षण होते हैं। बिना अनुसन्धान किये वे किसी बात पर विश्वास नहीं करते स्वभाव चंचल होता है तर्क वितर्क करने की शक्ति उनमें अधिक होती है। नाखून लम्बे होने की अपेक्षा यदि चौड़े अधिक हों तो दूसरों की हँसी उड़ाना या चिढ़ाना उन्हें खूब आता है और यदि कोई रेखा या ग्रह स्थान (Mount) अपना वैसा ही योग दे रहा हो तो ऐसे मनुष्य प्राय: झगड़ालू और अपने इष्ट मित्रों को असह्य होते हैं।

प्राय: देखा गया है कि कठिन परिश्रम या किसी रोग के होजाने के बाद कुछ सफेद दाग नाखूनों पर आ जाते हैं जो कि कमजोर और थकावट के लक्षण हैं। साधारणतः यह उस समय होता है जब कोई चिन्ता हो या कोई दूसरा ऐसा काम करना पड़े जिससे मस्तिष्क और स्नायविक शरीर पर आवश्यकता से अधिक दबाव पड़े। यदि तमाम नाखूनों पर सफेद दाग हो जावें तो समझना चाहिये कि स्नायविक जाल (Nevrous system) विशेष परिश्रम या अधिक चिन्ता करने से कमजोर होगया है।

कुछ विद्वानों का मत है कि सफेद और काले दाग क्रम से किसी अच्छे भविष्य और आने

वाली आपत्ति की सूचना देते हैं। यह बात अभी अनुभव में नहीं आई। विद्यार्थियों को यहां यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि सफेद दाग दो तरह के होते हैं—हम ऊपर कह आये हैं। कि किसी विशेष रोग द्वारा मनुष्य का शरीर कमजोर हो जायगा किसी तरह मस्तिष्क पर कोई अधिक दवाव पड़े तो प्राय: नाखूनों पर सफेद दाग आ जाया करते हैं। यह दाग शरीर की स्वाभाविक शक्ति घट जानेसे उत्पन्न होते हैं और धीरे धीरे नाखूनों के साथ आगे को बढ़ते जाते हैं—एक स्थान पर स्थिर नहीं रहते। स्वाभाविक रूपसे इन दागों का कोई अर्थ नहीं होता हां यदि स्वस्थ मनुष्य के नाखून पर ऐसा कोई सफेद दाग और अपने थानपर स्थिर हो तो परस्पर प्रेम और मित्रों में सम्मान पानेका लक्षण है। कुछ विद्वानों का मत है कि नाखूनपर काला दाग बुरा है और भविष्यत में अपना बुरा फल दिखाता है।

तुलनात्मक रूपमें नाखून के सफेद और काले दागों के लक्षण इस प्रकार समझने चाहिए।

नाखून	काला दाग	सफेद दाग
अँगूठा	त्रुटि, दोषपूर्ण कार्य	स्नेह, प्रेम
पहली अंगुली	हानि	लाभ
दूसरी अंगुली	मृत्यु या मृत्यु भय	सफर देशाटन
तीसरी अंगुली	अपमान, पराजय	सम्मान प्राप्ति
चौथी अङ्गुली	अविश्वास, निराशा	विश्वास, आशा
	व्यापारमें हानि	व्यापारमें लाभ

सौन्दर्य विज्ञान

महिलाओं की सौंदर्य वृद्धि के साधन

(डा० बसन्तलालजी बी० ए० आयुर्वेदाचार्य)

आंख

सारे अवयवोंकी अपेक्षा आँखे सबसे अधिक लुभायमान हैं। गोरा रंग, काली चमकती हुई बड़ी २ आँखें जादू कासा प्रभाव रखती हैं। जिसकी आँखें ऐसी सुन्दर हों उसकी अन्य त्रुटियों का नाम लेने को जी नहीं चाहता।

आँखों में रोज रात्रिको सोते समय अञ्जन या काजल डालना चाहिये या स्नान के पश्चात सुर्मा डालना चाहिये।

त्रिफले के जलसे उनको प्रति सप्ताह धोना चाहिये। सरसों का ताजा स्वच्छ तैल भी आँखोंमें डालनेसे अनेक लाभ होते हैं।

दांत

सुन्दर दाँतों के लिये आवश्यक है कि वह साफ और सफेद हों, बहुत कम दिखाई दें और मसूड़े बिलकुल दिखाई न देवें। दाँतों पर यदि मैल बहुत जम जावे या बहुत घिचपिच हों तो उनको स्क्रेप (Scrape) करवाना चाहिये जो कि एक निपुण दन्दानसाज ही कर सकता है। इस इस प्रकार से दाँतों में जो भी मैल आप के २० तथा ३० वर्ष की आयु में जमा हो गई होगी साफ हो जावेगी तत्पश्चात् उनको फिर न खराब होने दें। मिस्सी तथा तमाखू से भी दांत खराब हो जाते हैं। पान खाने के बाद पानी से कुल्ला कर लेना चाहिये जिससे कि पान और सुपारी के टुकड़े दाँतों में चिपके न रह जावें और रोज दाँतोंन करनी चाहिये। अंग्रेजी ब्रुश और दाँतोंकी क्रीम (Dental cream) से भी कोई लाभ नहीं होता इसके लिये 'दन्तमुक्ताकर मञ्जन' बहुत उत्तम चीज है, इस से दाँत मोतीसे साफ हो जाते हैं और हिलते हुये दाँत भी किञ्चित ठीक हो जाते हैं।

प्रातःकाल तो मञ्जन करना अत्यावश्यक है ही परन्तु रात्रि को सोने से पहले भी दाँतों को साफ करना बहुत ही आवश्यक है।

अधर

होठों का सुर्ख रंग बहुत भला मालूम होता है। होंठ मोटे नहीं होने चाहियें। नीचे का अधर ऊपर के अधर से किंचित भारी होता है। होठों पर पपड़ी नहीं जमने देना चाहिये। होठों पर प्राकृतिक अरुणता तो बहुत ही भली मालूम होती है परन्तु पान की लाली भी शोभा को बढ़ाने में कम नहीं होती। पञ्जाब प्रान्त में होंठों को लाल करने के लिये रमणियाँ प्रायः दन्दासे (अखरोट के वृक्ष की छाल होती है) का प्रयोग बहुत करती हैं परन्तु इसके दो गुण और भी हैं। पहला यह कि इससे दांत अच्छे स्वच्छ और चमकीले हो जाते हैं दूसरे मुख की दुर्गन्धि भी जाती रहती है।

हाथ

छोटे २ मुलायम और गुदीले पतली उँगलियों वाले हाथ सुन्दर कहलाते हैं। हाथों पर मेंहदी लगाना व्यर्थ है, इससे हाथों की प्राकृतिक सुन्दरता में न्यूनता आजाती है। नखों का ठीक तौर से कटा हुआ होना और इनमें गुलाबी रंग की झलक मारना बहुत अच्छा मालूम होता है।

पेट

यद्यपि पेट पर भी सुन्दरता बहुत कुछ अवलम्बित है, परन्तु भारतवर्ष में बहुत कम स्त्रियां इस ओर ध्यान देती हैं। पेट साफ और चिकना और छाती के उभार से नीचा होना चाहिये। बढ़ा हुआ पेट सुन्दरता में बाधक होता है परन्तु गर्भ की अवस्था में पेट का बढ़ना शुभ समझना चाहिये।

वक्षस्थल (छाती)

छाती हमेशा उभरी हुई ही अच्छी लगती है। स्त्रियों को कमीज़ या जम्फर के नीचे आँगी या अन्य ट्राइएन्गुलर बैंण्डेज (Triangular Bandage) का उपयोग करना चाहिये। इससे कुच ढलकने नहीं पाते प्रत्युत अपनी दृढ़ अवस्था में ही बने रहते हैं। यूरोपियन देशों में छाती को उभारने के लिये कई प्रकार के यन्त्र भी उपयुक्त किये जाते हैं, वहाँ पर ब्रेस्ट पम्प (Breast pump) कुचों को आगे की ओर खींचा जाता है, जिससे जिन महिलाओं की छाती कमज़ोर या चपटी भी हो तो वह भी उभर आती है।

ढलके हुए कुचों को ठंडे जल से धोना चाहिये। आंगी इत्यादि का भी उपयोग करना चाहिये। अपने ही हाथ से भी उनको ऊपर को संभालते रहना चाहिये। चलते समय झुककर नहीं चलना चाहिये, प्रत्युत वक्षस्थल को आगे को उभार कर चलना चाहिये। माजुफल या फिटकड़ी के लोशन से धोना भी उत्तम है।

(१) कूट, खरेंटी, बच, नागबला प्रत्येक बराबर लेकर जल में पीसकर लेप करें थोड़े ही दिनों में कुच कठोर और ऊपर को हो जावेंगे।

(२) चमगादड़ का रक्त कुचों पर लगाने से भी ठीक हो जाते हैं।

(३) लज्जालु और असगन्ध की जड़ को पानी में पीसकर लगाने से कुच दृढ़ हो जाते हैं।

(क्रमशः)
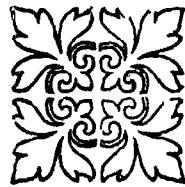
शृङ्गार दान

[ले०—प्रभुनारायण त्रिपाठी 'सुशील']

शिर के जूं—सुहागा पीस कर बालों में लगाने से जुएँ मर जाते हैं।

लाल शरीर—सुहागा ३ माशा, तिल काले-गो घृत, मैनफल, पानी १-१ तोला सबको एक बर्तन में जोश दे। जब केवल घी रह जाय तो उसका उपटन लगावे। यदि चेहरा काला हो तो लाल हो जायगा।

चेचक के दाग़—कच्चे नारियल के पानी से कुछ दिन मुंह धोनेसे चेचक के दाग़ मिट सकते हैं। (२) सेमल का कांटा गाय के दूध में पीसकर प्रलेप लगाने से चेचक के दाग़ तथा मुहांसे अवश्य मिट जाते हैं।

केश वर्द्धक—बे रम (Bay Rum) ३ औंस, स्मिथ साहब का लेवाना डि कम्पोजे (Lavona de composee) १ औंस, मेन्थाल की कंकड़ी (Menthol Crystal) $\frac{१}{४}$ ड्राम। बे रम में मेंन्थाल के टुकड़े गला डालो फिर उसमें लेवोना डिकम्पोजे मिलाकर एक चार औंसकी शीशी में भर शीशी में खूब हिलाओ। प्रतिदिन प्रातःकाल और रात्रि को बालों की जड़ में लगावे, जहां बाल न हों वहाँ अगुलियों के छोरों से खूब जोर से शिर पर मले। केश बढ़ाने, केशपतन को रोकने, केश मूल को फिर से जीवित करने, केश नाशक कीड़ों के नाश करने में यह बड़ी गुणकारी है। केश की जड़ पर ऐसा असर करती कि सफेद बाल फिर से पहले के समान काले बन जाते हैं। यदि इच्छा हो कि दवा सुगन्धित बने तो अर्क फ्रेंच फान फ्लू-अर (French Fon Fleur) चाय के आधे चम्मच भर उसमें मिला दे। जहां बाल बढ़ाना इष्ट न हो वहाँ इस दवा को हर्गिज नहीं लगाना चाहिए।

सुगंधित केश तेल—तिलका तेल व नारियल का तेल १-१ सेर ले एकमें मिला उबालें। जब उबाल अच्छी तरह से आनेको हो तो नीचे उतार उसे एक चीनीके बर्तनमें डाल ले। फिर एनीमल चारकोल (Animalcharcol)जो तेल की बदबू खोने वाला होता है अंदाजसे डाल २४ घण्टे बाद फिर गरम करे। जब खूब गरम हो जाय तो नख (लखि) आध पाव के दो-दो टुकड़ा कर एक कटोरी में गर्म करे और जब धुवाँ निकलने लगे तब इसे तेल में डाल दे। २४ घंटे बाद फिल्टरिंग पेपर से पोंछ द्वारा छान बोतलों में भर रखे और इन सुगंधियोंमें से जो पसन्द हो उसमें मिला दें—गुलाब का तेल (Oil of Rose) नींबू का तेल (Oil of Orange) धनिया का तेल (Oil of Coriander) चमेलो का तेल (Oil of Geranium) आयल आफ़ जरेनियम। (क्रमशः)

———

अनुभूत प्रयोग

लेखक—कविराज-एम० ए० भारद्वाज।

—:※:—

दन्त शूलान्तक—

कार्बोलिक एसिड क्रिस्टल	१० ग्रा०
केम्फर	८ ,,
मेन्थल	८ ,,
क्लोरोफार्म	४ ,,
आइल आफ क्लोवज़	१ ,,
आइल आफ मस्टर्ड	१ ,,

इन सब वस्तुओं को एक शीशीमें गेर कर रख दो आपस में मिलने से यह तरल पदार्थ बन जाता हैं दाँत में जहां दर्द हो उस स्थान पर रुई की फुरेरी से लगाना चाहिए दर्द फौरन शान्त हो जाता है।

श्वास-कासान्तक—

बांसे के हरे पत्ते	५ तो०
कुष्ठ	२ मा०
पुष्कर मूल	२ मा०
सोंठ	२ मा०
पीपल छोटी	२ मा०
शहद	१ तो०

ऽ॥ सेर पानी में औटा कर आध पाव रख कर छान लीजिए शीतल होने पर शहद मिलाकर दिन में ३ बार सेवन करना चाहिए।

मात्रा २॥ तोला

गुण—जिसे खांसी में कफ अधिक निकलता हो या शरीर में कफका प्रकोप हो, और श्वास (दमा) का वेग हो तब देना चाहिए।

जवारिश जालीनूस—

बालछड़, 'बड़ी इलायची, तज, दालचीनी, कुलीजन, लौंग, नागर मोथा, सोंठ, काली मिरच, पीपल, कुस्तबदरी, केशर, ऊदबलसां, तगर, हब्बुल्लास, मीठा चिरायता, प्रत्येक ७-७ माशे रूमी मस्तंगी १७॥ माशा।

सब औषधियों को अलहदा और रूमी मस्तंगीको प्रथक कूट छान लीजिए, केशर को पानी में पीसे, औषधियोंके बराबर कन्द और औषधियोंसे दुगना शहद, माजून की विधिसे तैयार कर लेना चाहिए।

रोग—नपुंसकता, पागलपन, सिर पीड़ा, खांसी, अर्श, पैरों की अंगुलियों का दर्द, शीत के कारण मूत्राधिक्य, मेदे की खराबी से होने वाले प्रतिश्याय में अत्यन्त लाभदायक है। बृक, तथा बस्तिकी अश्मरी में मुफीद है, शरीर में शक्तिदायक है यह यूनानीका प्रयोग बहुत ही लाभदायक है।

मात्रा—६ माशा से १ तोला तक।

समय—भोजनके बाद या पूर्व सेवन करना चाहिए।

विशेष—शीत से हुये नजले और मेदे की खराबी वाले रोगीको जवारिश जालीनूस ३ माशा खमीरा गावजवां ६ माशा

दोनों को मिला कर सेवन करने से मेदा और नजले की रतूबतको लाभ पहुँचाता है।

जातीफलादि वटी—

जायफल	३ माशा
छुहारा	,, ,,
अफीम	,, ,,

प्रथम छुहाराको चीरकर अफीम भर देनी चाहिए ऊपरसे गेहूँका आटा लपेट कर निर्धूम कोयलोंमें रख दीजिए जब लाल वर्ण हो जाए तो निकाल कर ऊपरका आटा हटाकर छुहारेको पीस लीजिए फिर जायफलका पतला चूर्णकर घोटिये२-२तोलेकी गोलियां बना लीजिए। रोग-अतिसार रक्तातिसार तथा सब प्रकारके तीव्र अतिसार। अनुपान तक्र

जयपाल शोधन—

जयपाल (जमालगोटों) छील कर उनके अन्दर से जीभ को निकाल डालिए और फिर जय पालसे आठवां भाग सुहागे का चूर्ण मिला कर पोटली बना कर गोबरमें दबा दीजिए। ३ दिन के पश्चात् निकाल कर धोकर दोला यन्त्र विधि से दूध में पकाइये—इस प्रकार से शुद्ध हुआ जयपाल औषध निर्माण में व्यवहृत करना चाहिये।

रक्तातिसार नाशक—.

चौलाई की जड़ २ तोला

चौलाईकी जड़ को पानी में पीस कर उस में शहद या खांड मिला कर पीने से रक्तातिसार नष्ट होता है।

श्लीपद नाशक—

पान ५ नग

पानके पत्तों को नमक के साथ पीस कर गर्म पानी से सेवन करने से श्लीपद नष्ट होता है।

रक्त प्रदर—

चौलाई की जड़

रसौंत

दोनोंको सम भागमें पीस कर शहद मिलाकर चावलों के धोवनके साथ सेवन करनेसे रक्त प्रदर नष्ट होता है।

त्रायमाणादि क्वाथ—

त्रायमाणा	१ तोला
गिलोय	
नीमकी छाल	
पटोल पत्र	
त्रिफला	३ तोला

इसका क्वाथ पीने से बच्चे वाली माता का दूध भारी हो तो पिलाना चाहिए। इस से दूध निर्दोष साफ शिशु के पीने योग्य हो जाता है।

अश्मरी नाशक—

तिल क्षार	१ तोला
अपामार्ग क्षार	,,
केला क्षार	,,
पलाश क्षार	,,
यव क्षार	,,

इन क्षारों को मिला कर रख लीजिए।

मात्रा-१ से ३ माशा

रोग-पथरी, मूत्रकृच्छ्र, दर्द गुर्दा, पेशाब के साथ आने वाली शर्करा नष्ट होती है।

अनुपान—भेड़ का मूत्र

———

प्रश्न उत्तर

प्र० नं० ४२

एक ऐसी पालिशकी आवश्यकता है जो पीतल आदि के बर्तनों पर लगा कर कपड़े से साफ कर दी जाए—जिस से बर्तन साफ चमकदार हो जाए जैसे "ब्राशो" नामक पालिश के लगाने पर हो जाता है।

प्र० नं० ४३

कागज, छोटे कार्ड आदि सुगन्धित करने की तरकीब की जरूरत है। हमने प्राय: बम्बई की तरफसे आये इस प्रकारके कार्ड सुगन्धित देखे हैं।

प्र० नं० ४४

इस प्रकार का दौरा प्रति २ मासके करीब हुआ है। जब दौरा आता है एक दम हाथ पैर जकड़ जाते हैं, अंगुलियां ऐंठ जाती हैं, जबड़ा भी बन्द हो जाता है श्वास की क्रिया भी मंद हो जाती है और अन्त में रोगी बेहोश हो जाता है-पहले यह बेहोशी ५-१० मिन्ट होती थी दिन में ३-४ बार। परन्तु जैसे २ दिन व्यतीत होते गये इस संख्या में भी वृद्धि होती जाती है, मल भी ठीक नहीं आता कभी अतिसार भी हो जाते हैं जब दस्त आने लगते हैं तब कमजोरी अधिक बढ़ जाती है। भोजन भी करना कठिन हो जाता है। जब रोगी को होश आता तब हाथ पैर ढीले पड़ जाते हैं होश में आनेके कई दिन बाद तक भी ज्ञान शून्य रहता है उसकी ज्ञानेन्द्रिय भली प्रकार कार्य नहीं कर पातीं। इनको क्या रोग है और उपचार क्या करना चाहिये।

भारद्वाज।

प्र० नं० ४५

एक ऐसे प्रयोगकी जरूरत है जो दायमी कब्ज पर कुछ दिन सेवन करनेसे लाभ हो, लेकिन ऐसा हो कि आदमी उसीका आदी न हो जाए, प्रयोग सस्ता, और साधारण हो आशा है वैद्यगण इस प्रश्न पर ध्यान देंगे।

टेकचन्द गर्ग
ग्रा० नं० ७३४

प्र० नं० ४६

हमको सुगन्धित डलियोंदार नमक बनानेकी आवश्यकता है—यह किस प्रकार बनाई जाती है जानकार ठीक ठीक लिखने का कष्ट करें।

प्र० नं० ४७

एक बिना नशीली स्तम्भन औषधि की आवश्यकता है प्रयोग अनुभूत होना चाहिये।

बालचन्द्र शुक्ल

उत्तर

उत्तर प्रश्न नं० ३५

मिश्री	।S	खस	३ तो०
मुनक्का	S२।	तज	३ तो०
बबूलकीछाल	S।।	तेजपात	३ तो०
आँबला	S≈	नागर मोथा	३ तो०
मुण्डी	S≠	नरकचूर	३ तो०
छरीला	३ तो०	चन्दन सफेद	३ तो०
जटामांसी	३ तो०		

अजवायन ३ तो०

शतावरि S≈ गोखुर S– कपिकच्छु S–

मूसली सफेद २ तो० मूसली स्याह २ तो० बहिमन सफेद २॥ बहिमन सुर्ख २॥ छोटी इलायची २॥ इन्द्र यव २॥ सोंफ २॥ तोदरी सफेद २॥ तोदरी सुर्ख २॥ बादाम ऽ॥ किसमिस ऽ॥ छुहारा ऽ॥

इन सब औषधियोंको अधकचरा करके १ऽ जल में डाल देवे उसी में ।ऽ मिश्री भी घोल देवे फिर ऊपर से ढाक कर कपड़ा से बांध देवे तीसरे दिन उसे लकड़ी से चलाता रहे तबतक सड़ावे जब तक शराब को भांति खमीर न उठे बाद में ऽ१ गो दुग्ध और ऽ२॥ सन्तरों का रस डाल कर भबके द्वारा अर्क निकाल लेवे ध्यान रहे अर्क ६ बोतल से अधिक न निकाला जाय अन्यथा गुणहीन हो जावेगा। कुछ नशा होगा। आप को जिला मजिस्ट्रेट (कलक्टर बहादुर) से स्वीकृति अवश्य लेनी पड़ेगी।

गुण—पौष्टिक-सब प्रकार की निर्बलता नाशक स्तम्भक-वाजीकरण, ज्वर, शिर का दर्द होना, प्रमेह, सुजाक, नेत्रों के सन्मुख धुंधलासा दीखना अजीर्ण नाशक, स्फूर्ति दायक अर्थात् शरीरमें नया जोश उत्पन्न हो जाना अनुपान भेदसे सैकड़ों रोगोंमें अनुभूत हो चुका है यह अर्क रक्त शोधक भी है।

उत्तर नं० ३६

आप स्वर्ण घटित स्वर्ण वङ्ग २ रत्ती उत्तम सत गिलोय १ मा० शीतल चीनी १ मा० वंशलोचन नीली डेलीका ४ रत्ती छोटी इलायची दाने २ रत्ती, शिलाजीत सत्व ४ रत्ती मिला कर प्रातः उत्तम मधु से खाइये। सायङ्काल मृगनाभ्यादि वटी १ गोली गोदुग्ध व मिश्री से सेवन कीजिये दोपहरकाल में भोजनोपरान्त २॥ तोला द्राक्षासव का सेवन कीजियेगा अवश्य लाभ होगा। आप पूर्णरूपसे स्वस्थ हो जावेंगे। यह योगशतसानुभूत है। आप बिलकुल संदेह न करें, स्वर्ण घटित स्वर्ण वङ्ग, सत शिलाजीत, द्राक्षासव मृगनाभ्यादि वटी यह सब औषधियां शुद्ध व सस्ती हिन्दू रसायन शाला छिबरामऊ फर्रुखाबाद के पतेसे मिल सकेंगी। व्यर्थ में रुपया नष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं। विश्वास रखिये इन औषधियोंसे शीघ्र लाभ होगा।

उत्तर नं० ३८

द्राक्षासव को भबके द्वारा अर्क निकालने से गुण अधिक बढ़ जाते हैं लेकिन कानूनकी पाबन्दी अवश्य करनी होगी। क्योंकि मद्यरूप हो जाता है। द्राक्षासव को कई वैद्योंने भब के द्वारा खींचा लेकिन उन पर मुकद्दमा कायम हुआ है। यदि आप खींचना ही चाहते हैं तो आप जिला मजिस्ट्रेट (कलक्टर बहादुर) से ।।) के स्टाम्प पर प्रार्थना पत्र भेजकर स्वीकृति अवश्य ले लें। फिर बनानेमें कोई कानून लागू न होगा।

उत्तर नं० ३९

बच्चे को रस कज्जली से विशेष लाभ पहुँचेगा। योग हिंगुल से निकला हुआ पारद शुद्ध आमला सार गन्धक सम भाग लेकर खरल में डालकर १ प्रहर घोट लेवे। प्रातः तथा सायं काल रस कज्जली १ रत्ती मधु के साथ और करीबन दिन के ६ बजे काडलिवर आयल ८ बूँद चटावें दो तीन दिन इस औषधी को लौट देगा। फिर उसे हजम होने लगेगी। काडलिवर आयल की शीशी किसी मेडीकल हाल (डाक्टरी औषधालय) में

मिलेगी। इस का मूल्य लगभग १।।) होगा बस आप २८ दिन इन दवाइयों का सेवन कराइये बच्चा हृष्ट पुष्ट हो जावेगा। कई बार की आजमाई हुई औषधि है।

उत्तर नं० ४०

ग्वारपाठा का गूदा ऽ।। बैतरा सोंठि ऽ। काला नमक ऽ। हींग भुनी ६ मा० बीच में सोंठि रक्खे और ऊपर से ग्वारपाठा तह पर हींग व नमक बुरकाता जाय १ सप्ताह धूपमें रक्खे और १ सप्ताह मलइया में करके गाड़ देवे और १ सप्ताह जमीन में गाड़े ऽ- नित्य सेवन करे अवश्य लाभ होगा।

लेप—अड़ियाइन की जड़ पीसकर गरम करके लेप करे। इस रोग में कुमार्य्यासव भी लाभप्रद है।

उत्तर नं०३३—प्रदरारि लोह ४ रत्ती मधु में मिलाकर सबेरे चटावे और ऊपर से २ तोला अशोकारिष्ट ४ तोला जल में मिलाकर पिलावे।

सायं को भोजनान्त में प्रदररिपु रस ४ रत्ती फलकल्याणघृत १ तोला में २ तोला शकर मिलाकर खिलावें। प्रातः पुरान चावल का भात घी, शकर और दूध से खावे, सायं को साग रोटी।

दो पहर को २ तोला काला तिल ४ तोला पुराना गुड़ मिलाकर खिलावे लाभ हो जायगा। परन्तु रजोदर्शन होते ही सब दवा बन्द कर देनी चाहिये और दो पहर को तिल गुड़ खिलाते रहें, इस रजो अलरवा नष्ट होकर रज पूर्ण परिष्कृत हो जायगा।

उत्तर नं० ३४—३ मासा पीपरामूल १ तोला गुड़ मिलाकर खिलावे इसमें निन्द्रा खूब आ जाती है, विषेला योग नहीं है।

उत्तर नं०३५—ब्रान्डी की नानी महाशक्तिवर्धक दवा आयुर्वेदीय मृत्यु संजीवनी सुरा भैषज्य रत्नावली की है इसे आप ब्रान्डी से अधिक गुणकारी और सस्ती पायगें।

उत्तर नं० ३६—उत्तम बङ्ग भस्म २ रत्ती नागभस्म २ रत्ती प्रातः काल खाकर ऊपरसे अश्वगन्धारिष्ट २ तोला में ४ तोला जल मिलाकर पियें।

सायं को ४ रत्ती लक्ष्मी विलास रस (नारदीय) मधु में मिलाकर खावे ऊपर से दूध शक्कर औटा हुआ पिये।

सायं प्रातः भोजनान्त मे त्रिफला घी शहद से खावें।

इन्द्री पर इत्र हिना और इत्र अम्बर ३-३ मासा को २ तोला चनों के तेल में मिलाकर रखलें रात्रि को सोवन सुपारी बचाकर १०-१२ बूँद तेल मल दिया करें बिना उपाड़ के १०-१२ दिन में गुप्ताङ्ग को कड़ा पुष्ट और स्थूलता लम्बाई प्रदान करेगा।

उत्तर नं०३७—अमृत भल्लातक पाक की विधि लम्बी है आप भैषज्य रत्नावली या योग चिन्तामणि आदि में देख लेवें कई प्रकार के योग लिखे हैं एक योग यहाँ लिखा जाता है।

अमृत भल्लातक पाक—पके हुए भिलावे जो स्वयं गिरे हों (ऐसे भिलावे पानी में डूब जाते हैं)४ सेर लेकर ईंट के चूर्ण के साथ खूब मले ताकि ऊपर की विषेली भुसी उतर जावे फिर पानी में धोडालें और धूप में सुखाकर १-१ के २-२ टुकड़े कर लेवें और १६ सेर पानी में पकावें ४ सेर पानी रहते उतार कर शीतल होने पर निकाल कर दूसरा १६ सेर पानी डाल कर पकावें ४ सेर पानी रहते फिर

इस पानी को दूर कर १६ सेर पानी में पकावें फिर ४ सेर जल रहने पर भिलावों को शुद्ध पानी से धोकर १६ सेर दूध में पकावे और ४ सेर दूध रहने पर निकाल लेवे और दूध को फेंकदें तथा भिलावों को पीस कर ४ सेर दूध में पकावें जब खोया सा हो जावे तब थोड़ा घृत डाल कर पकावें। और इसमें ३ सेर मिश्री की चासनी डाल कर मथानी से मथ डालें ताकि भिलावा खूब मिल जावे। अब इसमें:—

त्रिफला, त्रिकुटा, भीमसेनी कपूर, बालछड़, निशोथ, कत्था, विष शुद्ध, श्वेत चन्दन, अकरकरा, पीपल, शीतल चीनी, लोंग, दोनों मूसली, कंकोल, मोच रस, अजवाइन, अजमोद, गज पीपल, बिदारीकन्द, जायफल, जीरा, मोथा, जावित्री, करन्ज, अगर, समुद्र शोष, मेदा, महा मेदा (अभावे मुलेठी) फौलाद भस्म, चन्द्रोदय, बंगभस्म, केशर, प्रत्येक १-१ तोला मिलाकर रखलें। मात्रा ६ मासा से १ तोला तक है।

उत्तर नं०३८—द्राक्षासव का अर्क खेंचने में कोई रुकावट नहीं है। परन्तु तो भी आप आबकारी विभाग से इजाज़त ले लेवें।

उत्तर नं०३९—मखंडी की पत्ती ६ मासा हरी जल में पीस कर पिलावे या मोती की सीप पत्थर पर घिस कर पिलावें। कछुवे की हड्डी को बालक के गले में बाँधे। मखंडी की पत्ती हम मुफ्त भेजते हैं।

उत्तर नं० ४०—कुमारी आसव पिलावें तो तिल्ली कट जावेगी।

उत्तर नं०४१—स्वर्ण वङ्ग की विधि रसायन सार काशी में देख लेवें इस विधि से बना हुआ बिलकुल स्वर्ण कान्ति सा बनेगा।

—बालकृष्ण शर्मा वैद्यराज।

❀ जैसे को तैसा ❀

प्रहसन

[ले०—चन्द्रशेखर पाण्डेय "चन्द्रमणि"]

—०❀०—

(स्थान-शर्माजी का औषधालय)

शर्मा जी—अब मेरी किस्मत का सितारा ऊँचे आया, क्योंकि वैद्य सम्मेलन ने मुझे केन्द्राध्यक्ष बनाया। छोटी नाली ने दरिया की पदवी पाई, बिल्ली ने चूहों की फौज पर झपट लगाई। इसीलिये तो कहता हूँ, कि उल्टा हुआ ज़माना फिर सीधा होना चाहता है। हाँ एक मामूली वैद्य, वैद्य-शास्त्री होना चाहता है। सात लड़के आते हैं।

सब—शर्मा जी नमस्कार।

शर्मा जी—आपका नमस्कार, स्वीकार! आओ, जानते हो तुम्हें क्यों बुलाया है?

सब—हाँ पूड़ी खाने को। आपके नौकर ने पहले ही कह दिया है।

शर्मा जी—पूड़ी वूड़ी यहाँ कुछ नहीं हैं, एक मतलब की बात बताता हूँ।

सब—पूड़ियाँ नहीं हैं, तब तो हम लोग जाते हैं। अभी तक भोजन किया नहीं, भूख भी ज्यादह लगी है।

१ लड़का—मैं भोजन की तैयारी में था कि आपके नौकर ने न्यौता सुनाया, उसी दम बन्दे ने इधर कदम बढ़ाया।

२—अगर आप सच्चे हैं, तो लाइये पूड़ियाँ। क्योंकि यहाँ पेट कुलबुला रहा है।

३—नहीं लाते, तो लीजिये, बंदा जा रहा है।

शर्मा जी (नौकर से) क्यों हरी, यह तूने क्या सुनाया?

हरी—हुजूर, मैंने इन सबों को लाने के लिये ही यह जाल फैलाया। ये कंबख्त न आते थे। मेरी सूरत देखते ही नौ दो ग्यारह हो जाते थे।

शर्मा जी—खैर कोई चिन्ता नहीं। ले, एक रुपया जल्दी से। मिठाई ले आ। (रुपया देकर हरी को भेज देना, पुनः लड़कों से) आप लोग बैठ जाइये। मैंने मिठाई मंगवाई है।

सब—लीजिये हमने भी आसन जमाया है।

शर्मा जी—अच्छा, आप लोग कहाँ नौकरी करते हो?

१—क्या आप नहीं जानते?

शर्मा जी—मुझे अभी क्या पता। एक ही मास हुआ कि मैंने यहाँ औषधालय खोला है।

१—ओहो, तब तो जरूर बताऊँगा। (लड़कों से यारो अपनी नौकरी बताओ। शर्माजी हम सबों की स्थिति से बिल्कुल अज्ञान हैं।

शर्मा जी—वाकई ऐसा ही है। अच्छा तो बताइये, आप लोग किस जगह काम करते हैं?

१—हम शहर में।
२—हम नहर में।
३—हम ट्राम में।
४—हम गोदाम में।
५—हम तार में।
६—हम अख़बार में।
७—हम रेल में।
८—हम जेल में।

शर्मा जी—वाह भाई आप लोगों की नौकरी तो अजीब कामों से सम्बन्ध रखती हैं।

१—और नहीं तो क्या, हम लोग मामूली हैं?

शर्मा जी—अच्छा, तो आप लोगों को यह जान कर खुश होना चाहिये कि मैंने यहाँ पर 'वैद्य सम्मेलन' का केन्द्र खोल दिया है।

२—(लापरवाई से) कोई हानि नहीं।

शर्मा जी हानि नहीं, इससे लाभ है। सुनो, आप लोग अपनी अपनी तनख्वाह का कुछ अंश देश-सेवा में लगाइये। और आयुर्वेद की परीक्षा देकर योग्यता बढ़ाइये।

३—हम लोग तनख्वाह नहीं पाते हैं, बल्कि अभी काम सीखने जाते हैं।

शर्मा—तो क्या हर्ज है। अब यहाँ शुल्क देकर फार्म भर दीजिये। बस हम बिना पढ़े ही 'वैद्य विशारद का सार्टिफिकेट' दिला देंगे।

५—अगर सचमुच ऐसा है, तो हम लोग आपको दो दो दिन हलुआ पूरी खिला देंगे।

शर्मा—तो बस प्रतिज्ञा कीजिये। देखिये इस काम से आप लोग अच्छे खासे वैद्य विशारद हो जायेंगे। हमारा नाम होगा, और आपका काम होगा।

६—'वैद्य विशारद' परीक्षा का शुल्क कितना देना पड़ेगा।

शर्मा जी—सिर्फ ८) रुपया।

१—आठ रुपया! मिडिलकलास में तो मैंने ४) दिया था?

शर्मा—हाँ, ये तो ४)! किन्तु और चार मेरे अलग हुये—और पास करने पर मेरा नज़राना भी देना पड़ेगा।

२—कोई हर्ज नहीं आठ दस रुपया में वैद्य तो बन जायेंगे?

शर्मा जी—वैद्य नहीं—वैद्य विशारद। अच्छा इसका शीघ्र ही इन्तज़ाम करो।

सब—आज ही फार्म भर देंगे।

—×— (सब का जाना)

सम्पादकीय

विशेषांक युग

आजकल "विशेषांक" का निकालना एक फैशन है। वह चाहे अच्छा हो या न हो इस बात को जाने दीजिये—बस, विशेषांक होना चाहिये। हम विशेषांक निकालना बुरा नहीं समझते। कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो उन्नति के पथपर अग्रसर होने को बुरा समझे? पर विशेषांक तो विशेषांक ही होना चाहिये।

आयुर्वेदके पत्रों में विशेषांकों की एक बाढ़ सी आरही है, या यों कहना चाहिये कि आजकल आयुर्वेदीय पत्रों का विशेषांक-युग है। हमने पहले ही कहा है विशेषांक निकालने से कुछ न कुछ लाभ ही होता है। वह लाभ दो प्रकार का है—(१) ग्राहक संख्या वृद्धि, (२) नई नई बातों की खोज।

इन विशेषांकों से पहला लाभ तो अच्छा होता है परन्तु दूसरे में सन्देह है। क्योंकि जिस विषय पर विशेषांक निकाला जा रहा है उस विषय पर गवेषणापूर्ण अन्वेषण कहाँ होता है। आयुर्वेद के पत्रों के विशेषांक बहुत कम ऐसे होंगे कि जिनके सम्पादकों ने उस विषय पर गवेषणा पूर्ण लेख दिये हों—जैसे तैसे लेखक महोदयों के लेख आये और छपने भेज दिये। फिर ऐसे विशेषांकों से लाभ ही क्या? चाहिए तो यह कि उस विषय के विद्वानों के सारगर्भित लेख हों, जिससे वैद्यसमाज को और ग्राहकों को पढ़ने से लाभ हो।

जब कि साल भर में ४-६ विशेषांक निकालने हैं तब आप बताइये अच्छे विशेषांक कैसे तैयार हों?—एक विशेषांक अभी प्रकाशित भी नहीं हुआ, दूसरे का भार सम्पादक के मस्तिष्क पर सवार हो गया। वह बेचारा अच्छेसे अच्छा विशेषांक जनता को कैसे भेंट करे? यह अन्य बात है कि केवल हमारा उद्देश्य ग्राहक संख्या वृद्धि का ही हो। जब हम आयुर्वेद के दायरे से बाहर देखते हैं तो हमारे सामने कई पत्र आते हैं। उन्होंने थोड़े समय में ही जनता को अच्छे से अच्छे विशेषांक भेंट किये हैं। उनमें सबसे अच्छे विशेषांक देने का सौभाग्य "कल्याण" गोरखपुर को प्राप्त है, यह पत्र भक्तिवाद का है। इसके हमने कई विशेषांक देखे हैं—"ईश्वराङ्क, गीताङ्क आदि" सबके सब योग्य आवश्यक सामग्री से भरपूर मिले।

यदि हम पक्षपात को एक तरफ रखकर देखें तो आयुर्वेद के किसी पत्र को यह सौभाग्य प्राप्त नहीं। आयुर्वेद के पत्रों के हमने कई विशेषांक देखे हैं परन्तु किसी से भी सन्तोष नहीं मिला।

विशेषांक का तो मतलब यह है कि जिस विषय पर विशेषांक निकल रहा है उस विषय का आयुर्वेद और अन्य चिकित्सा सम्बन्धी गवेषणा पूर्ण लेख हों, केवल गप्प ही गप्प न हो। उन विशेषांकों में अन्धकार कूप से निकालकर रौशनी में खड़े होने की शक्ति भरी हो।

यदि यह कहा जाये कि ये अधूरे विशेषांक

आयुर्वेद की उन्नति में सहायक हैं, यह कोरी विडम्बना मात्र है।

सालभर में पत्र सम्पादक और सञ्चालक महोदय एकत्रित होकर विचार विनिमय करें आयुर्वेदिक पत्रों की उन्नति किस प्रकार हो और विशेषांकों को सफल बनाने के उपायों का विचार हुआ करे। मैं समझता हूँ इस विचार परामर्श से अधिक लाभ होने की सम्भावना है। मैं विशेषांकों पर इसलिये जोर दे रहा हूँ कि यह आयुर्वेद का स्थिर साहित्य बन जाता है। क्योंकि हमारी भावी सन्तानें इनके ही सहारे हमारे ज्ञान विस्तार की तुलना करेंगी।

मान लीजिये आपने "अनुभूत प्रयोगाङ्क" निकाला, हजारों की संख्या में आपके पास प्रयोग आये, एक एक प्रयोग के नीचे रोगों की नामावली लिखी देखेंगे।—अब यह पता लगाना बहुत कठिन है कि अमुक दवा किस रोग पर किस अवस्था में लाभदायक है इसका पता कुछ नहीं लगता। आयुर्वेद का मुखोज्वल करने वाला "वसन्त मालती" राजयक्ष्मा की किस अवस्था में लाभदायक है इसका निश्चित गुण किसी को मालूम नहीं। केवल अनुमान से औषधि का प्रयोग करते हैं इसलिये कि कुछ न कुछ तो लाभ होता ही है।

आप डाक्टरों के प्रयोगों पर दृष्टि डालिये, उनको अपने प्रयोगों के निश्चित गुण मालूम हैं। प्रयोग करने पर डाक्टर को अपने प्रयोग का प्रभाव मालूम है किस २ अंग पर कैसा प्रभाव हो रहा है। जैसे ऐस्प्रिन निश्चय से सिरदर्द को लाभ देती है। सिरदर्द किसी कारण से क्यों न हो। चाहे यह दवा हृदय को क्यों न कमजोर कर दे परन्तु सिरदर्द को निश्चय दूर करेगी। अब से १० वर्ष बाद फिर वैद्य-संसार को नये अनुभूत प्रयोगांकों के निकालने की जरूरत महसूस होगी। क्या चक्रदत्तादिकों में उस समय के अनुभूत प्रयोग नहीं हैं? हाँ हैं अवश्य, परन्तु उनमें भी निश्चित गुणों के लिखने का अभाव है। अब जितने भी अनुभूत प्रयोगांक निकाले जाएं उन सब में औषधि के निश्चित गुणों का वर्णन आवश्यक है तब ही विशेषांकों को सफलता मिल सकती है।

सूचना

जीवन-सुधा के विशेषांक "सूजाक और आतशक" का सम्पादन वैद्यक और ऐलोपैथिक के सुयोग्य विद्वान और श्री प्रिन्स यशवन्तराव हौस्पिटल इन्दौर के भूतपूर्व चीफ मैडिकल औफीसर—

कविराज डा० वेदव्यासदत्तजी शास्त्री M.A.M.S.M.B. (कल) M.D. (वाशि०) आयुर्वेदाचार्य

करेंगे। यह विशेषांक इस विषय में निकलनेवाले सब विशेषांकों से कहीं अधिक अच्छा और महत्वपूर्ण होगा।

लेखकों के प्रति सूचना

"सूजाक और आतशक" नामक जीवन-सुधा का विशेषांक अक्तूबर में निकलना निश्चित हुआ है। लेखक महोदयों से सविनय नम्र निवेदन है कि वे १५ सितबर तक अपना लेख "जीवनसुधा-कार्यालय" देहली भेज दें।

अनुभूत प्रयोगों को लिखते समय इस बात का विशेष ध्यान रक्खें कि यह प्रयोग रोग की किस अवस्था में किस अनुपान के साथ लाभदायक है केवल नवीन खोजपूर्ण बातों और अन्वेषणात्मक लेखों को स्थान दिया जायगा। कहानी, कविता, गल्प, प्रहसनादिक भी भेज सकते हैं।—सम्पादक।

Registered. N. 2701

जीवनसुधा के भावी अद्वितीय

विशेषांक शीघ्र प्रकाशित होंगे ?

आपने पहले विशेषांक को देखकर अन्दाज़ा लगा लिया होगा कि जीवन-सुधा उच्चकोटि के और महत्वपूर्ण विशेषांक प्रकाशित करने में किसी पत्रिका से पीछे नहीं है।

अक्टूबर में

नया डिजायन, नया ढंग, नई खोज पूर्ण बातों के साथ—

"मूज़ाक और आतिशक"

नामक विशेषांक प्रकाशित होने वाला है इसमें प्रसिद्ध वैद्य और डाक्टरों के सार गर्भित लेख और अनुभूत नुस्खे होंगे, यह अपनी श्रेणी में सबसे निराला ही होगा।

तीसरा विशेषाङ्क—

"शिशु रोग विज्ञान"

इसको सम्पादन करेंगी चिकित्सा जगत की चन्द्रिका

डा० कुन्तनकुमारी देवी

आप बच्चों के रोगों की विशेषज्ञ है।

नोट—ग्राहक होने पर विशेषांक सादर भेंट दिये जायेंगे।

मुद्रक व प्रकाशक—वैद्यराज पं० महावीरप्रसाद जी. 'भदावर प्रेस' देहली।

जीवन-सुधा

राजवैद्य श्री पं० महावीरप्रसाद जी रसायन-शास्त्री

जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

प्रोफेसर पं० भगवद्दत्त शर्मा आयुर्वेदाचार्य

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥, एक अङ्क का ≡) धर्मार्थ औषधालयों व छात्रों को १॥ वार्षिक में भेजी जायगी. सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तुकी दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, बीमा वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजना चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो फिर मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्त्ता

बृहत् आयुर्वेदीय औषध-भण्डार, जौहरी बाजार देहली

विज्ञापन छपाई का रेट

एक बार	६ मास	३ मास	एक बार
समस्त टाइटल पेज ४०)	२२)	१२)	४)
आधा ,, २०)	११)	६)	२॥)
साधारणपृष्ठ समस्त ३६)	१८)	१०)	३॥)
,, आधा २०)	१०)	४॥)	२)

विज्ञापन छपाई सम्बन्धी रेट बिल्कुल निश्चित हैं इसके लिए लिखने की तकलीफ न उठाएं।

मैनेजर विज्ञापन-विभाग 'जीवन-सुधा' देहली।

॥ ॐ ॥

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।

शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ५ (माघ, वीरनिर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९९१, फरवरी सन् १९३५) अङ्क २

वैद्यराज

वैद्यक पढ़ो है ना, मढ़ो है लोभ-लालच में,
माठा सोंठ धनियां पियावे महाजुर को।
बैठे निज बैठक बिसाल माल डालि गरे,
सौगुनो कसाइ तें न मानै वैद्य गुरु को।
कविराम नहरी बहति याके गहरीसु,
वैद्य अगर हरी हमारो मनमुरको।
जाने निज नारी को नभेद धावै नारी हेत,
धरै जाकी नारी सो सिधावै जमपुर को।

(माधुरी)

VITAMINS विटामिन्स

(गतांक से आगे)

हमारे भोजन के नवीन आवश्यकीय अंश

चरबी में हल होने वाली विटामिन (A) के अलावा दूध में एक और प्रकार की विटामिन मौजूद है। यदि दूध में से इसके ज़ाहिरन बेश-क़ीमती अजज़ा मसलन चरबी, कार्बोहाइड्रेट आदि निकाल दिये जावें तो वह जल जो बाक़ी रह जाता है एक निहायत सेहत बख़्श ख़ासियत रखता है जिससे एक ख़ास प्रकार का मर्ज़ कुछ दिनों में दूर किया जा सकता है। यदि इस जल को नज़र अन्दाज़ करके दूध के उन अजज़ा को, जो कि सन् १६१५ ई० तक इसके सम्पूर्ण अजज़ा तसव्वुर किये जाते थे, इस्तेमाल किया जावे तो नशवोनुमा मुकम्मल तौर पर नामुमकिन है। यानी दूधमें इसकी प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फ़ैट, और नमकियात के अलावा दो प्रकार की विटामिन पाई जाती हैं। एक वो जो चर्बी में हल हो जाती है जिसका ज़िकर प्रथम अङ्क में किया जा चुका है और एक वो जो पानी में हल होती है जिसको विटामिन बी (B) के नाम से पुकारा जाता है।

विटामिन बी (B) दूध के अलावा अनेक प्रकार के अनाजों, सब्ज़ियों, तरकारियों और अनेक प्रकार के सूखे हुए मेवों में बहुत पाई जाती है। चुनांचे टमाटर, गेहूं, अखरोट और चावल के छिलके विटामीन B की कमी से पैदा शुदा मर्ज़ और कमज़ोरियों को दूर करने में जादू का काम देते हैं। इन सब कमज़ोरियों की सरताज एक बीमारी है, जिसे बेरी बेरी (Beri Beri) कहते हैं। चावल बहुत ज़्यादा इस्तेमाल करने वाली क़ौमें इस बीमारी का अक्सर ग्रास बनती हैं, जब से मैशीन द्वारा तयार किए

चावलों का सेवन प्रारम्भ हुआ है, यह बीमारी उन देशों में तरक्की कर रही है। भारत वर्ष में चूँकि सब्ज़ियों, तरकारियों, दालों और अनेक प्रकार के और अनाजों को भोजन में ज्यादा अहमियत दी जाती है, इसलिये विटामिन बी (B) की कमी से पैदा शुदा मर्ज़ यहाँ कम पाये जाते हैं। बेरी बेरी (Beri Beri) एक ऐसा मर्ज़ है जिसका असर पहिले जिस्म के जोड़ों पर होता है। दर्द के अलावा मरीज़ की शारीरिक तरक्की रुक जाती है और भूख की कमी की वजह से कमज़ोर और दुबला होना शुरू हो जाता है। टाँगों के जोड़ इसका सब से पहिले शिकार होते हैं, घुटने सूज जाते हैं और बाद में इतने कमज़ोर हो जाते हैं कि चलना फिरना दुशवार हो जाता है, टाँगें इस कदर कमज़ोर हो जाती हैं कि जिस मरीज़ में यह मर्ज़ ज़ोर पकड़ गया हो वह इनको हिला तक भी नहीं सकता। जानवरों में इसी बीमारी का नाम पोली न्यूरॉटिस (Polyneuritis) है।

हयातीन की तीसरी किस्म विटामिन (C) है जो कि लैमन, सन्तरा और टमाटर के रस में, हरी हरी सब्ज़ियों में ताज़े फलों में और खुश्क मेवों में कसरत से पाई जाती है। सन् १७०० से सन् १९०० तक का Medical literature एक ऐसी बीमारी से पुर है जो कि सामुद्रिक फ़ौज और दूर तक जहाज़ में सफ़र करने वाले मुसाफ़िरों पर हमला करके उनकी जान की दुश्मन बनती रही है। अगरचे तजुर्बे से यह बात मालूम कर ली गई थी कि अगर ख़ूराक में लैमन का रस और इस्तेमाल किया जावे तो मुसाफ़िरों की सेहत बहाल रहती है। मगर यह केवल १५-२० साल की बात है कि इस बीमारी की असली वजह और इस की शफ़ा की वजूहात मालूम हो सकी हैं। स्कर्वी (Scurvy) का मरीज़ एक ऐसी थकावट महसूस करता है जो कि नींद या आराममें दूर नहीं होती। वह काम से जी चुराता है, उसके चेहरे का रंग उड़ा रहता है और शरीर की सन्धियों में दर्द शुरु हो जाता है, जिल्द पर ज़रा मालिश करने से उस जगह लाल २ निशान पड़ जाते हैं और ज़रा ज़ोरके दबावसे ख़ून जारी हो जाता है। नकसीर का जारी होना एक मामूली वाक़ा हो जाता है। दाँत कमज़ोर होकर गिरने शुरु हो जाते हैं और भिन्न २ जोड़ों से ख़ून जारी रहता है। स्कर्वी की बीमारी जनतामें सर्वसाधारण रूप से है। मामूली हमले को आम तौर पर किसी और मर्ज़ से तुलना किया जाता है। पशु पक्षी तुलनात्मक इस बीमारी से बचे हुए हैं। अतएव लैबोरेटरी में प्रयोग करने के लिए सूअर इस्तेमाल किए गए हैं, क्योंकि इन्सानों की तरह इन पर भी स्कर्वी के हमले को होते हुए देखा गया है। नींबू, सन्तरा और टमाटर के रस से यह बीमारी पूर्णतया दूर हो जाती है और इनमें से किसी एक के रोज़ाना इस्तैमाल से पास तक नहीं फटकती।

यह बात प्रत्यक्ष है कि विटामिन सी की ख़ूराक में कमी से वज़न कम हो जाता है। जानवर की उम्र कम हो जाती है और स्कर्वी

से पैदा होने वाली तमाम कमज़ोरियां ज़ाहिर होती हैं। ज्यों २ ख़ुराक में विटामीन सी मिला दी जाती है, त्यों ही त्यों वज़न में तरक्क़ी, स्कर्वी का असर कम और उम्रकी ज्यादती शुरू हो जाती है। साग, पात का इस्तेमाल इन्सान के लिए लाज़िम है। बच्चों की ख़ुराक की ख़ास तौर पर अहतियात लाज़िम है, क्योंकि इस उम्रमें शरीरके भिन्न २ अवयव धीरे २ बढ़ते हैं (कच्चे गोश्त में विटामीन सी काफ़ी मात्रा में पायी जाती है। औरयही कारण है कि सर्द मुल्कके लोग जैसे कि स्कीमो वग़ैरा जो सिर्फ़ मांसाहारी हैं इस रोग से बचे रहते हैं) योरुपीय महासमर के दिनों में सेनाओं को भीगे हुए चने और मटर दिए जाते थे, जिनकी मदद से वे इस बीमारी के बुरे असर से बचे रहते थे। ताज़ा मटर और चने ख़ुश्क होने पर अपनी विटामीन सी ज़ाया कर बैठते हैं। अगर इनको २४ घण्टे के लिए पानीमें भिगो दिया जावे तो वे फिर अपनी इसी ताक़त को प्राप्त कर लेते हैं।

दूध के डिब्बों के लेबिलों पर और विलायती गिज़ाओं के इश्तिहारों में शौक़ीन लोगोंने पिछले साल से एक तब्दीली नोट की होगी कि एन दरम्यान में तहर्रार को चीरती हुई दो लकीरों के बीच (With Vitamin D added) के अल्फ़ाज़ इस में कैसे लिखे जाते हैं कि देखने वाला इनको नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकता। विटामीन डि (D) उन चन्द चीज़ों में से है, जिनको कि साइन्स वेत्ताओं ने नक़ली तौर पर और ग़ैर क़ुदरती ज़रिये से लैबोरेटरी में तैयार करलिया है, और उसके कुछ अंशों को इन गिज़ाओं में शामिल करके, इन गिज़ाओं को बनाने वाले इनको अब क़ुदरती गिज़ाओं के बराबर वाला बयान करते हैं।

असलियत यह है कि विटामीन डी की ग़ैरहाज़िरी में इनकी क़दर कुछ भी नहीं. कैलसियम और फ़ासफ़ोरस को जिस्ममें जज़्ब करने के लिए और हड्डियों की मुकम्मल पुष्टि के लिए विटेमिन डी की मौजूदगी ज़रूरी है, और इसकी ग़ैर हाज़िरी में अच्छे से अच्छे भोजनों का सेवन भैंस के आगे बीन बजानासा है। अगर बच्चे की ख़ुराक में विटामीन डी कम करदी जाए, तो हड्डियों की बनावट में एक बड़ाभारी परिवर्तन होता है और हड्डियों का टेढ़ा होना उनकी कमज़ोरी का सबब है। यह कमज़ोरी सिर्फ़ विटामीन डी ख़ुराक में शामिल करने से दूर की जासकती है। वर्तमान नवीन विज्ञान के प्रकाश में हमें जब कभी भारतीय पुराने रिवाजों की तरफ ध्यान करने का मौक़ा मिला है तो हमने यह अनुभव किया है कि इन रिवाजों में एक ऐसी फ़िलासफ़ी है जो कि तजुर्बेकी बिना पर है। सुबह के वक़्त स्नान के बाद सूर्य नमस्कार की रस्म हिन्दुओं में आम रही है, और जिस्म पर सरसों के तेल की मालिश करके सूर्य की रोशनी में रखने का रिवाज जारी है। सुबह के वक़्त की सूर्य की किरणें अलट्रा वायोलेटरेज़ बहुत ज्यादा मिक़दार में रखती है, और इन किरणों के सामने शरीर लाने से शरीर में विटामीन डी की तरक्की विशेष होती है। स-

रसों के तेल में विटामीन डी पाई जाती है, और अगर इस तेल को या किसी ऐसी चीज़ को जिसमें विटामीन डी मामूली मिक़दार में पाई जाती हो, सूर्य की किरणों में रक्खा जावे तो इस चीज़ में विटामीन डी इस क़दर ज्यादह हो जाती है कि हैरानगी होती है। जिसपर सरसों के तेल की मालिश के बाद जिस्म को सूर्य की किरणों का सेवन कराना सेहत हासिल करने का सब से अच्छा रास्ता है। जिन सूबोंमें यह रिवाज आम है वहां पर आपको रिकैट्स का मरीज़ चिराग से ढूढने पर भी नहीं मिल सकेगा।

सूरज की किरणें और अलट्रा वायलेट् रेज़ ख़ुद कैलसियम वग़ैरा पैदा नहीं कर सकतीं मगर जिस्ममें कैलसियम और फास्फ़ोर्स वग़ैरा मौजूद हैं और बेकार हैं उनको इस्तेमाल के लायक़ बना देती हैं। चुनांचे प्रोफ़ेसर हैस लिखते हैं कि अगर इन्सान एक टांग को अलट्रा वायलेटरेज़ के सामने रक्खे चन्द मिन्ट में इसकी दूसरी टांग में भी कैल्शियम की डिपोज़िट शुरू हो जाती है, जो कि एक्सरेज़ की मददसे मालूम की जा सकती है। सब्ज़ियों, फलों और फूलों को अलट्रा वायलेटरेज के सामने रख कर फिर उनका इस्तेमाल करना उनकी गिज़ाइयत को विटामीन डी के लिहाज़ से दुबाला (दुगना) करता है। दूध पीते बच्चे वाली माताओं को अपने बच्चों की सेहत के ख़ातिर विटामीन डी को अपनी ख़ूराक में ख़ास अहमियत देनी चाहिये।

हयातीन की पांचवीं क़िस्म विटामीन ई (E) है जिसकी ग़ैरमौजूदगी में बच्चा देनेवाले जानवरों में बांझपन का मर्ज़ पैदा हो जाता है। मुद्दत तक इस विटामीन की ख़सूसियत ज़ाहिर नहीं हुई। मगर हाल ही में तजुर्बातकी बिना पर यह मालूम हुवा कि अगर जानवरों की ख़ूराक में तमाम अक़साम की विटामीन्स शामिल कर दी जायें, तो वे इस नक़ली ख़ूराक पर बिलकुल ख़ूबी से तरक्क़ी करते रहते हैं मगर कुछ साल के बाद उनमें से बच्चा पैदा करने की ताक़त जाती रहती है। शुरू २ में जब विटामीन ए (A) मौजूद हो, मगर थोड़ी मिक़दार में हो तो जो बच्चा पैदा होता है वह या तो पैदायश के बाद ही मर जाता है या कुछ दिन ज़िन्दा रह कर मर जाता है। कुछ हालतोंमें रहम में जनीन की नशव नुमा शुरू तो हो जाती है, मगर अर्से के बाद यह जनीन (गर्भस्थ बच्चा) रहम (गर्भाशय) की दीवारों में ही हल हो जाता है, इसका फल यह होता है कि बांझपन का मर्ज़ अपनी जड़ पकड़ लेता है। नर चीज़ों में विटामीन ई की कमी से उनकी मनि (वीर्य) के हैवान (सपर मेटोज़वा) कमज़ोर होकर मर जाते हैं, और मनीमें औलाद को ज़िन्दगी देने की ताक़त नहीं रहती। यह विटामीन चर्बी में हल हो जाता है, गरम करने से ज़ाया नहीं होती और अन्य तमाम हयातीनों से देर तक ठहर सकती है। नीचे इस नक़्शे में गिज़ाओं के आगे उनकी विटामीन्स दिखाई गई हैं। जिसमें यह जाना जा सकता है, कि किन गिज़ाओं का इस्तेमाल मुफ़ीद है और किनका

हानि कारक है।

चिन्ह विटामिन की गैरमौजूदगी—मौजूदगी का१, अधिकता का २, अत्यधिकता का ३।

नं०	भोजन का नाम	वि० ए	वि० बी	वि० सी	वि० डी	वि० ई
	बादाम	१	२	—	१	२
	सेब	१	१	२	—	१
	केला	२	१	२	१	२
	जौ	१	२	—	—	—
	रोटी सफेद आटे की	—	१	—	—	—
	साबुत गेहूँ	२	२	—	१	२
	बैंगन	—	२	—	—	२
	मक्खन	३	२	—	२	३
	दहीकी लस्सी	१	२	१	—	—
	साग ताज़ा सरसों का	२	३	३	२	२
	साग पका हुवा	१	२	१	—	—
	गाजर	२	२	२	२	२
	पनीर	२	—	—	—	—
	नारियल	१	२	—	—	—
	मलाई	३	२	१	—	—
	खजूर	१	२	१	१	१
	घी	१	—	—	१	२
	बनस्पति घी	—	—	—	—	१
	अंगूर	—	१	१	१	१
	शहद	—	१	—	—	२
	नीबू का रस	—	२	३	—	—
	मक्की	—	२	—	—	—
	आम	—	—	१	—	—
	दूध	३	२	१	३	२
	प्याज़	१	२	३	—	३
	शन्तरेका रस	२	२	३	—	—
	शन्तरे का छिलका	१	१	२	—	—
	मटर खुश्क	१	२	—	—	—
	मटर भिगोये हुवे	१	२	२	—	—
	आलू	१	२	२	१	—
	रसभरी	—	—	३	—	—
	चावल पौलिश किये हुये	—	—	—	—	—
	पालक ताज़ा कच्चा	३	३	३	२	—
	पालक पकी हुई	३	३	१	१	—
	टमाटर कच्चे या पक्के	३	३	३	२	१
	खांड	—	—	—	—	—

सूर्यकिरण द्वारा चिकित्सा

[ले०—श्री डाक्टर कार्तिकचन्द्र जी वसु एम० बी०]

र्य से ही पृथ्वीको प्रकाश और उष्णता प्राप्त होती है। वैज्ञानिक लोग कहते हैं कि ईथर में ही तरंग उत्पन्न होने से ही प्रकाश और उष्णता दोनों की उत्पत्ति होती है। ईथर को ही आकाश वा व्योम कहते हैं। ईथर की तरंगें पानी की तरंगों की तरह ही होती हैं। जल में कंकर फैंकने से लहरें धीरे २ चक्राकार फैलती हैं परन्तु ईथर की तरंग इतनी शीघ्र उठती हैं कि उसके वेग की कल्पना मनुष्य की बुद्धि से बाहिर है। प्रकाश की तरंग १ सैकिण्ड में १८६००० मील चल सकती है। एक कहने में जितना समय लगता है उतने में प्रकाश की तरंग पृथ्वी की आठ परिक्रमा देकर वापिस आ सकती है। प्रकाश इतना द्रुतगामी है तभी तो पृथ्वी तक आने में उसे कुल आठ ही मिनट लगते हैं। इस चाल से अनुमान किया जा सकता है कि सूर्य पृथ्वी से कितनी दूर है। भिन्न २ प्रकार की ईथर की छोटी बड़ी तरंगों के ही मिलाने से सूर्य का प्रकाश बन जाता है। सूर्य के प्रकाश का रंग सफ़ेद होता है, परन्तु इसकी किरणों के विश्लेषण करने से कई प्रकार के रंगों की किरणें देखने में आती हैं। जब सूर्य की किरणें कांच के एक ओर से प्रवेश करके दूसरी ओर निकलती हैं तो वे इन्द्र धनुष के समान भिन्न २ रंगों की किरणों में विभक्त हो जाती हैं; इसका कारण यही है कि किरणों के रास्ते में तिकोने कांचका टुकड़ा रखने से किरणों की दिशा बदल जाती है। भिन्न २ रंग की किरणें भिन्न भिन्न परिमाण से झुकती हैं इसी लिए कांच-खण्ड के बीच में होकर जाने से सूर्य के प्रकाश के भिन्न २ रंग अलग २ हो जाते हैं। सूर्य-प्रकाश के विश्लेषण करने से साधारणतः हमको सात ही रंग मिलते हैं। इन रंगों के नाम बैंजनी (गहरा नीला) नीला, हरा, पीला, नारंगी और लाल हैं, बैंजनी से लेकर सब रंगों की तरंगें क्रमशः बड़ी २ होती जाती हैं। प्रकाश की तरंगों में लाल रंग की तरंग सब से बड़ी और बैंजनी की सब से छोटी होती है बैंजनी से छोटी और लाल से बड़ी तरंगें सूर्य-प्रकाश में विद्यमान हैं, पर वे नज़र नहीं आतीं। इन सब तरङ्गों का अस्तित्व (मौजूदगी) हम को दूसरे उपायों से ज्ञात होता है, साधारण प्रकाश से Photographicplate में जो परिवर्तन होता है, वही छोटी बैंजनी तरंगों द्वारा भी हो सकता है। लाल की अपेक्षा बड़ी तरंगों का अस्तित्व

जानने के लिए साधारण प्लेट से काम नहीं चलता पर एक विशेष प्रकार की Photograh-plates दरकार होती हैं। प्रकाश के सदृश उष्णता भी ईथर की तरँगों से उत्पन्न होती है, पर इसकी तरँगें प्रकाश की अपेक्षा बहुत बड़ी होती हैं। सूर्य की किरणों में उष्णता की तरँगें भी बहुतायत से पाई जाती हैं। बैंजनी की अपेक्षा छोटी तरँगोंको अङ्गरेजी में Ultra-violet Rays अलट्रा वाईलट रेज कहते हैं। रोग-चिकित्सा के लिए यही किरणें बहुत उपयोगी होती हैं। लाल तरँगों से बड़ी तरँगों का नाम Infra-Red rays इनफ्रा-रैड-रैज हैं।

वृक्षों के ऊपर सूर्य की किरणों का प्रभाव--

सूर्य के प्रकाश बिना वृक्ष आदि जिन्दा नहीं रह सकते। सूर्य की किरणों की सहायता से ही वृक्षों के पत्ते वायु में से कार्बन डाई ऑक्साइड नामक गैस ले सकते हैं। अन्धेरे में पेड़ के पत्तों का हरा रँग नष्ट हो जाता है और वे पीले पड़ जाते हैं। अन्धेरे में वृक्ष जल्दी बढ़ता है इसमें सन्देह नहीं, पर बहुत दिन तक प्रकाश न मिलने पर वह मर भी जाता है। परीक्षाओं से मालूम हुआ है कि वायलैट्, आलट्रा वायलैट् किरणों के लगने से वृक्षों की वृद्धि रुक जाती। वृक्षों की डालियां व पत्ते आदि प्रकाश की ओर ही बढ़ते हैं, किन्तु जड़ अन्धेरे की तरफ ही फैलती हैं। फूलों में चित्र विचित्रके रँग और उनका खिलना लज्जावती (छुई मुई) के पत्तों का दिन को खिलना इत्यादि सब प्रकाश का ही परिणाम है।

बीजाणुओं पर सूर्यकी किरणों का प्रभाव

सूर्य के प्रकाश में बीजाणु बढ़ नहीं सकते और बहुत से मर भी जाते हैं। सूर्य की किरणों में से वायोलेट और अलट्रा वायोलेट ही बीजाणु नाशक हैं। Dowens और Blunt नाम के दो डाक्टरों ने १८७७ में सूर्य की बीजाणु नाशक शक्ति के सम्बन्ध में पहली परीक्षा की। इन्होंने तरह २ के रँगों की किरणों में बीजाणु रख कर यह देखा कि बीजाणुओं पर किन किन रँगों का प्रभाव पड़ता है। परीक्षा का परिणाम यह निकला कि वायोलेट और औलट्रा वायोलेट किरणों में बीजाणु सब से अधिक नष्ट होते हैं। इसके पीछे D. Arsonual और Charrin ने परीक्षाओं से साबित किया कि वायोलेट और औलट्रा वायोलेट किरणों को छोड़कर अन्य किन्हीं किरणों में बीजाणु नष्ट करने की शक्ति नहीं होती। फिन्सन ने परीक्षा करके यह देखा है कि बैसीलस प्रोडिजीयमस् नाम का बीजाणु धूप में रखने से एक घण्टे के अन्दर ही मर जाते हैं परन्तु इलक्ट्रिक आर्क लैम्प के प्रकाश में यह ८ या ६ घण्टे तक जीते रह सकते हैं। लैम्प से प्रकाश को केन्द्रीभूत कर के उसमें बीजाणु रखने से वे बहुत जल्द नष्ट हो जाते हैं। अब कहीं २ पीने के पानी के बीजाणुओं का नाश करने के लिए औलटा वायोलेट किरणों का उपयोग किया जाता है। यही किरण एक विशेष प्रकार के बिजली के यन्त्र द्वारा उत्पन्न की जाने लगी हैं। शहरों में रास्ते की धूल में निश्चय ही कई प्रकार के बीजाणु होते हैं, इसमें

प्रायः बहुत से धूप में नष्ट हो जाते हैं। दीपक के प्रकाश में भी बीजाणुओं कोनष्ट करने की कुछ शक्ति पाई जाती है।

प्राणियों पर सूर्य की किरणों का प्रभाव—

प्रकाश कई प्राणियों का तो प्राण ही है। वे प्रकाश बिना जी ही नहीं सकते। अँधेरेमें अंग के सब भाग अच्छी तरह से पुष्ट नहीं होते इससे इनके कई अवयवों का बल कम हो जाता है। फिन्सन के प्रकाश के चिकित्सालय में जितने डाक्टर काम करते थे उनके शरीरों पर जहाँ २ बिजलीका प्रकाश अधिक पड़ता था उन्हीं स्थानों में बाल बहुतायत से पाये गये। सर्प, मछली, मैंडक आदि, प्राणियों की त्वचा पर सूर्य की किरणें डालने से इनकी त्वचा के कोष्ठ समूह हिलते हुवे दिखाई पड़ते हैं। यह गति भी प्रकाश की उग्रता और रंग दोनों पर निर्भर होती है। दूसरे प्राणियों की त्वचाओं पर भी प्रकाश का कुछ परिणाम देखने में आता है। प्रकाश थोड़ा हो या ज़्यादह त्वचा के ऊपर डालने से शरीर में प्रवेश कर सकता है। शरीर के जिस भाग को अधिक प्रकाश लगता है उस जगह का चमड़ा सबसे कड़ा और मज़बूत हो जाता है और उस का रंग भी गाढ़ा हो जाता है। फिन्सन् और मौब्रेल्टर ने परीक्षाओं से सिद्ध करके बतलाया है कि त्वचा पर नीली अथवा अलट्रा वायलेट किरण डालने से त्वचा लाल दीखने लगती है। कई बार तो यह परिवर्तन दो दो साल तक बनो रहता है। अगर अलट्रा वायलेट किरणोंको चर्म त्वचा पर बहुत देर तक रक्खा जावे तो उसमें जलन पैदा हो जाती है। इस प्रकार की जलन बिजली के तेज़ प्रकाश में भी समय २ पर अनुभूत होती है। चमड़ेकीइस जलन को ऐरीथीमाइलैविट्रम कहते हैं। धूप में नंगे बैठने से शरीर में इसी तरह की जलन मालूम होती है, इस जलन को ऐरीथीमासोलर कहते हैं। फिन्सन् ने बहुत सी मैंडकियों के ऊपर पतला स्याही सोख काग़ज़ लपेट कर अणुवीक्षण यन्त्र के नीचे धूप में रख कर सावधानता से जाँच की तो देखा गया कि दस पन्द्रह मिन्ट में ही रक्त वाहक जाल समूह (net work of capileries) फूल गया, रुधिर की गति मन्द हो गयी और श्वेत कोष्ठ समूह, जाल समूह के बीच में से जाने के बदले उसके नीचे ही जाने लगे। वस्तुतः साधारण जलन में ये ही सब बातें पाई जाती हैं। इस परीक्षा से यह भी देखा गया कि लोहित कण का समूह भी किंचित् सिकुड़ जाता है। ओरेबैक और इंजिलमैन ने परीक्षा करके देखा कि प्रकाश में मेंडक की आँख के रैटीनाके कोष समूह सिकुड़ते हैं और अन्धेरे में फिर पहले की तरह फैल जाते हैं। मनुष्य की आँखों में भी यह परिवर्तन देखा जाता है।

सूर्य की किरणों से काले चमड़े में जलन नहीं होती। उष्ण देश के रहने वाले लोगों का वर्ण (रंग) स्वभावतः काला ही होता है। इसलिये धूप से उनको कोई विशेष हानि नहीं होती। फ़िन्सन् ने अपने हाथ के ऊपर चारों तरफ़ एक काले रंग की लकीर खींचकर उसको तीन घंटे तक धूप में रक्खा। पहले कृष्ण वर्ण की

रेखा के पास का स्थान कुछ लाल होने लगा, कई घण्टे बाद चिन्हितस्थान के सिवाय सब हाथ भर का चर्म लाल हो कर सूज गया, किन्तु काली रेखा मिटाने से मालूम हुवा कि वहाँ के चमड़े में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ। बाद को इस स्थान को फिर धूप में रक्खा तो वह भी लाल हो कर सूज गया।

अनेक वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि सूर्य की किरणों में से अल्ट्रा वायोलेट किरण ही इस प्रकार की जलन का मूल कारण है। प्रकाश से Hœmoglobin नामक लोहित पदार्थ की आक्सीजन लेने की ताक़त बढ़ जाती है और शरीर की दहन क्रिया भी अच्छी होती है। जो लोग धूप में बहुत देर तक रहते हैं उन सब के मूत्र में त्याज्य पदार्थ समूह अधिक परिमाण में होते हैं वह बात अनुभूत है। अलट्रा वायलेट किरणों से जैसे चमड़े में जलन पैदाहोती है, वैसे ही लाल किरणों से जलन दूर हो जाती है। कई लोगों का विश्वास है कि नीले रंग की किरणों से क्लेश या दर्द दूर हो जाता है। सूर्य की किरणों के साथ बहुत सी उष्णता भी आती है, इस उष्णता के कारण चर्म के रक्त वाहक जाल समूह फूल जाते हैं और पसीना बहुत निकलता है। धूप लगने से शरीर में जो परिवर्तन होते हैं उस का मूल कारण गर्मी और प्रकाश है।

सूर्य किरणों से चिकित्सा --

स्वास्थ्योन्नति अथवा रोगों को दूर करने के लिये सूर्य की किरणों की थोड़ी बहुत सहायता लेना हर एक देश में पुराने समय से चला आता है। भारतवर्ष में मातायें बच्चों को कुछ देर तक धूप में रखती हैं। धूप में बैठकर तैल मलना हमारे देशकी एक मामूली रीति है। सूर्य किरणों में सड़ने न देने की शक्ति होती है, यह बात हमारे देश को बहुत समय से मालूम थी। अचार आदि चीज़ें ख़राब न हो जावें इसलिये इनको समय २ पर धूप में रखना पड़ता है। मलेरिया ज्वर में कांपना धूप में बैठने से अनेक बार अच्छा हो जाता है। यह बात हमारे देश में बहुत से लोग जानते थे। शरीर के किसी भी स्थान में दर्द हो तो उस पर सूर्य की किरणें डाल कर मालिश करने से बहुत आराम होता है। लाल किरणों से जलन दूर होती है यह भी इस देश में मालूम था। आयुर्वेदीय वैद्य, चेचक निकलने से रोगी को पीले वा लाल रंग के कपड़े से ढके रखने का उपदेश करते हैं।

चीन, मैक्सिको, जापान, आदि स्थानों में बहुत समय से सूर्य की किरणों से कोई २ रोगों की चिकित्सा करनेको चाल है। ईरान में प्राचीन काल में कई लोग नियमित रूप से धूप खाते थे, इससे शरीरका तेज बढ़ता है और शक्ति बढ़ती है यह उनका विश्वास था। सिसेरो और वैंस्ट्रीसियस की लिखी हुई प्रबन्धावलि से मालूम होता है कि रोम के निवासी भी धूप में बैठते थे। प्राचीन समय में रोम में धूप लेने के लिये स्वलेरिया नामक एक बड़ा मंडप खड़ा किया गया था। हैरोडोटस नामक प्राचीन वैद्यक ग्रन्थ में दुर्बल रोगी को धूप में बैठने की चिकित्सा लिखी है। एन्टीलियस नामक प्राचीन वैद्य ने नियावा

ग्रन्थि की व्याधि, वात व्याधि और मानसिक रोग आदि रोगों पर सूर्य की ही किरणों से भिन्न भिन्न चिकित्सायें की हैं। मध्यकाल के वैद्यक ग्रन्थों में सूर्य की किरणों द्वारा चिकित्सा का कोई लेख विशेष नहीं मिलता। उन्नीसवीं सदी के शेष भाग में वैज्ञानिकों ने सूर्य की किरणों की कीटाणु नाशक शक्ति का आविष्कार किया, और इसके बाद बहुत से डाक्टरों की दृष्टि इस ओर गई, और सूर्य की किरणों से रोग अच्छे होते हैं यह बात देखने के लिये उन्होंने परीक्षायें आरम्भ कर दीं। डेनमार्क के डाक्टर नीलफिन्सन को इस चिकित्सा प्रणाली का आधुनिक प्रवर्तक कहते हैं। कई प्रकार की असाध्य व्याधियां सूर्य की किरणों की चिकित्सा से जाती रहती हैं। यह बात फिन्सन् ने ही पहले बतलाई है। इससे यह परिणाम हुवा कि डाक्टरोंका दिल इस तरफ़ झुका। १८९६ ई० में डेनमार्क की गवर्नमेन्ट ने सूर्य की किरणों का चिकित्सालय बनवाया और उसके ऊपर फ़िन्सन् को नियुक्त किया। इसी औषधालय में प्रधानतः दुरारोग्य (Lupus) ल्यूपस या चर्म के क्षयी रोग, और चर्म सम्बन्धी अनेक रोगोंकी चिकित्सा होती है। पाश्चात्य देशों में सूर्य की किरणें सहज में ही नहीं प्राप्त होती, इसलिये फिन्सन् के चिकित्सागाह में उसके निकाले हुवे फिन्सन् लैम्प के वैद्युतिक प्रकाश से चिकित्सा की जाती है। हमारे देश में कलकत्ता आदि दो एक स्थानों में फ़िन्सन् की चिकित्सा प्रणाली की व्यवस्था मौजूद है, पर इसकी चिकित्सा में रुपया बहुत खर्च होता है। इससे कुछ ही स्थानों में यह पद्धति प्रचलित है। हमारे देश में सूर्य की किरणों का बिलकुल अभाव नहीं इसलिये बहुत थोड़े पैसों में और कई वक्त तो बिल्कुल मुफ़्तमें ही आलोक चिकित्सा की व्यवस्था की जा सकती है। केवल वर्षा ऋतु को छोड़ और सब ऋतुओं में सूर्य की किरणें चाहे जितनी मिल सकती हैं। ग्रीष्म ऋतुके सूर्य किरणों में और ऋतुओं की अपेक्षा अधिक अलट्रा वायोलेट किरणें होती हैं। इसीलिये प्रातःकाल से मध्यान्ह के सूर्य की किरणें चिकित्सा के लिये अधिक उपयोगी होती हैं। आकाश में बादल रहने से अलट्रा वायोलेट किरण कम हो जाती हैं। मैदान की भूमि से ऊँचे पर्वतीय प्रदेश में अलट्रा वायोलेट किरणों का परिमाण अधिक पाया जाता है।

——— (क्रमशः)
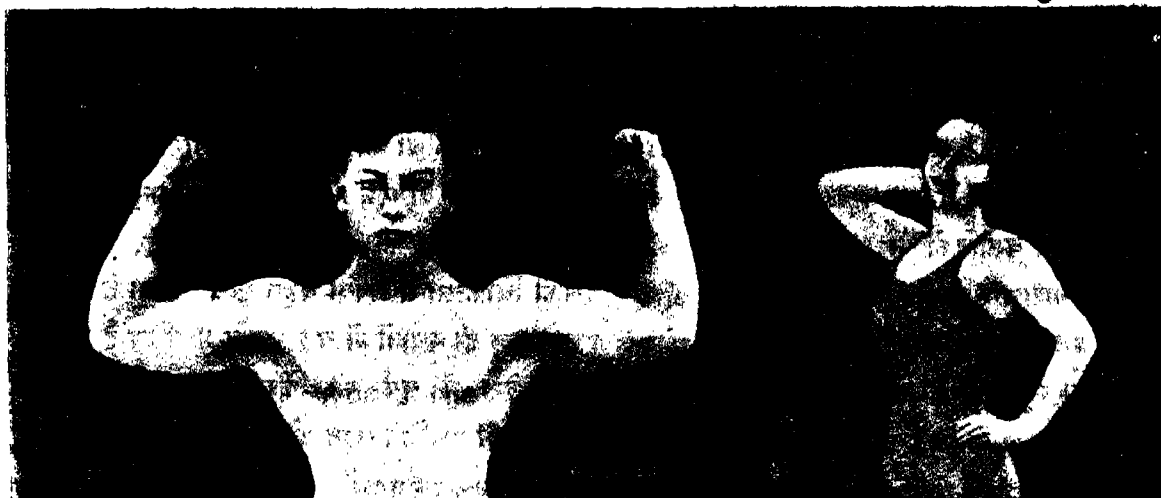
व्यायाम

स्वास्थ्यरक्षा के लिए परिमित भोजन व परिमित जल की तरह परिमित परिश्रम व व्यायाम की भी शरीर को आवश्यकता है। सारे शरीर के अंगों के उपयुक्त रीतिसे परिचालित न होने से उनमें बल व पुष्टि नहीं आती, उल्टे धीरे २ सारे अंग निकम्मे हो जाते हैं। यदि यथेष्ट रीति से अंगों को संचालित न किया जावे, तो मांस-तन्तु, मांसपेशी सभी दुर्बल व शिथिल हो जाती हैं। और हमारे शरीर में जो नन्हीं २ धमनियां व शिरायें हैं, सभी निर्बल व अकर्मण्य हो जावें। जो लोग सदा शारीरिक परिश्रम के नाना प्रकार के काम करते हैं उनका शरीर हट्टा कट्टा और दृढ़ बना रहता है। पहले समय में मनुष्य अनेक प्रकार के शारीरिक परिश्रम के कामों में लगे रहते थे, इसीसे मोटे ताजे व दृढ़ हुवा करते थे। आज कल सभ्यता के प्रताप से लिखने पढ़ने की वृद्धि के साथ २ हाथ पैर के हिलाने चलाने वाले कामों की कमी भी बहुत बढ़ गई है। इसी शारीरिक श्रम की विमुखता के कारण लोगों के शरीर भी खूब थक गए हैं, फलतः इनकी आयु भी घटती जाती है। इसी शारीरिक परिश्रम और व्यायाम के अभाव से सम्पन्न लोगों में बहुत से लोग अत्यन्त मोटे हो कर बे काम हो जाते हैं। इन्हीं कारणों से भद्र-समुदाय में कोष्ठ बद्धता व अजीर्णता आदि रोग भी फैले हैं, व फैलते जाते हैं। धनी लोगोंके यहां की स्त्रियां किसी प्रकार का भी शारीरिक परिश्रम नहीं करतीं, इसी का फल है कि इनमें अनेकों को हिस्टोरिया (उन्माद) आदि विविध प्रकार के रोग अधिक होते हैं। कायिक बलवृद्धि

के लिए इच्छा पूर्वक अङ्गों के संचालन को हम लोग व्यायाम या कसरत कहते हैं। शरीर की भलाई के लिए नित्यप्रति व्यायाम करना ही सबसे अच्छा उपाय है। जिन लोगों को अधिक शारीरिक परिश्रम से जीविका उपार्जन करनी पड़ती है। उनके स्वास्थ रक्षाके लिए और व्यायाम करने की आवश्यकता नहीं है। साधारणतः हमारा खाना, पीना, व चलना फिरना कितनी ही मांस पेशियों के सञ्चलित होने के कारण होता है सही, किन्तु शरीर के सब अङ्गों का संचालन नहीं होता। दिनभर हम जो काम करते हैं उसमें हमारे कोई न कोई अङ्ग अवश्य सञ्चालित होते हैं उनकी क्रिया की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट नहीं होता, इस लिए नित्य के कामों में हमारी मांसपेशियां संचालित मात्र होती हैं, किन्तु इससे व्यायाम का सारा अर्थ सिद्ध नहीं होता। व्यायाम के समय हम ध्यान देकर मन लगाकर जब किसी मांस पेशी को सिकोड़ते हैं, तो इसमें का रक्त हट जाता है, और अपने साथ इस स्थान के क्षय जनित खराब पदार्थों को भी लेता जाता है, और जब हम फिर उसे ढीली छोड़ देते हैं तो नाड़ियों में ताज़ा रक्त बहने लगजाता है, और नए पुष्टिकर पदार्थ उसमें आते हैं, तथा जो क्षय होता है उसकी पूर्ति हो जाती है। इस तरह पर सब अङ्ग प्रत्यंग बढ़ते व सबल होते हैं। सब को ही चाहिए कि शरीर के प्रत्येक भाग को नियमित व्यायाम द्वारा वर्धित व बलिष्ठ बनाते रहें।

सुबिधा और इच्छा के अनुसार लोग तरह २ के व्यायाम किया करते हैं। हमारे देशके पहलवान लोगों में बाहुयुद्ध, मल्लयुद्ध, दण्ड, बैठक करना, मुग्दर, लेजम, हिलाना आदि व्यायाम प्रचलित हैं, लाठी, बनेठी, चिक्रोट, चलाना आदि का चलन आज कल बिलकुल ही उठगया है। लेकिन प्राचीन कालमें इस प्रकार के व्यायाम का बहुत बड़ा प्रचार था, पटेबाज़ी वग़ैरा अबभी कहीं २ देखने में आती हैं। इन पिछली कसरतों से मनुष्य के सारे के सारे अङ्गों की कसरत हो जाती है, ऐसा कोई अंग नहीं रहता जो संचालित न होता हो। साधारणतः जनता के लिए दण्ड, बैठक व मुग्दर फिराना ये तीनों व्यायाम बहुत उपयोगी व सरल हैं। बैठक से दोनों पैर दृढ़ होते हैं व लेटकर दण्ड करने से सब पेशियों का संचालन होजाता है। मुग्दरसे दोनों बाहु दृढ़ व छाती चौड़ी होती है। घोड़े पर चढ़ना भी बहुत अच्छा व्यायाम है, इससे साहस व बल की वृद्धि होती है। अनुचित मोटापन दूर करने के लिए घोड़ेपर चढ़ना ही सर्वोत्कृष्ट व्यायाम और आमोद दोनों का काम देता है, इस काममें हाथ और छाती दोनों की पेशियां खूब दृढ़ होती हैं। तैरना भी कम उत्कृष्ट व्यायाम नहीं है। तैरने से भी शरीर की समस्त पेशियां संचालित होती हैं। तैल मलना और स्नान के पश्चात् अच्छी तरह से शरीर पोंछना भी शरीर के समस्त अंगों के व्यायाम का काम दे सकते हैं। यदि हम चाहें तो इस व्यायाम को सभी कर सकते हैं। बूढ़े और वह लोग जो दूसरे किसी प्रकारका व्यायाम नहीं करते उनके लिये भ्रमण करना भी बहुत

अच्छा व्यायाम है। पहाड़ या अन्य ऊंची धरती पर या सीढ़ियों पर चढ़ना और उतरना भी एक प्रकार का उत्तम व्यायाम है। विदेशी खेल क्रिकेट, फुटबाल इत्यादि का खेल भी अच्छा व्यायाम है क्योंकि इन खेलों से भी सारी मांस-पेशियां चलायमान होती हैं, किन्तु दोष यही है कि इन खेलों में होड़ा होड़ी होती है जिसके कारण आवश्यकता से अधिक व्यायाम अवश्य ही हो जाता है, और अधिक व्यायाम से शरीर पुष्ट नहीं होता, उल्टी हानि होती है। जापानी खेल युयुत्सु भी सुन्दर व्यायाम है। इस से देह बलिष्ठ और आत्मरक्षा की प्रणाली की शिक्षा होती है। सैण्डो का निकाला हुवा डम्बुल का व्यायाम समस्त यान्त्रिक व्यायामों में अच्छा है। इस प्रथा के अनुसार व्यायाम करना शरीर की सभी पेशियों को संचालित करता है, और थोड़े ही दिनों में शारीरिक बल बढ़ जाता है। पश्चिमीय देशों में अंग सौष्ठव अर्थात् शरीर को सुन्दर सुडौल बनाने के लिये महिला गण भी अनेक प्रकार के व्यायाम करती हैं। हमारे देश की ग्रामवासिनी महिलाएं यदि घर के काम काज में ही अपने शरीर की पेशियों के संचालन की ओर थोड़ा सा ध्यान दें तो भी बहुत कुछ इस अभीष्ट की सिद्धि हो सकती है। पानी भरना व उठाना बर्तन मांजना, चटनी आदि पीसना भी खासे व्यायाम के काम दे सकते हैं। पीसने कूटने में प्रायः सभी शरीर की पेशियां सञ्चालित होती हैं। नगरनिवासिनी धनसम्पन्न महिलाओं से यह सब न हो तो प्रातःकाल थोड़ा सा भ्रमण ही कर लिया करें, और नहीं तो छत के ऊपर आध घण्टा टहलने से बहुत कुछ लाभ हो सकता है।

व्यायाम का समय—

खुली जगह में व्यायाम करना ही सब से अच्छा होता है। यदि घर के भीतर ही व्यायाम करना हो तो खिड़कियों, दरवाज़ों और गवाक्षों (झरोखों) को खोल देना चाहिये। शीतकाल में खुली जगह में व्यायाम करना हो तो बदन को ठीक २ कपड़ों से ढका रखना उचित है, ऐसा न करनेसे व्यायाम जनित पसीना आने पर हठात् सर्दी लगने का भय रहेगा। धूप में व्यायाम करना कदाचित भी अच्छा नहीं। व्यायाम का ठीक समय या तो खूब सवेरे होता है या सन्ध्या के समय, इनके सिवाय तीसरा समय व्यायाम के लिये ठीक नहीं होता। इन दो समयों में से भी सवेरे का समय अधिकतर अच्छा होता है। जिनको सवेरे व्यायाम के लिये समय न मिले उन्हें हार कर दूसरे समय व्यायाम करना ही पड़ेगा। पर हमने ऊपर जो २ बातें कहीं हैं उन पर ध्यान रखना बहुत ही आवश्यक है। रात का समय व्यायाम के लिये किसी प्रकार भी बुरा नहीं कहा जा सकता, परन्तु कभी क्यों न हो भोजन के पश्चात् व्यायाम करना सदा शरीर को हानिकर होता है। जो खाने के बाद व्यायाम करना ही हो तो दोतीन घण्टे पीछे करसकते हैं।

व्यायाम की मात्रा—

आयु, बल, शरीर, देश, काल, पात्र और

आहार, आदि सारी बातों पर विचार करके व्यायाम को मात्रा निश्चय करनी चाहिये। जब तक शरीरमें स्फूर्ति मालूम हो तभी तक व्यायाम करना ठीक है। थकावट जान पड़ते ही व्यायाम बन्द कर देना उचित है। अनीयमित रूप से अति व्यायाम करना अति ही हानि करता है। साधारण तौर पर लोग समझा करते हैं कि जितना अधिक व्यायाम करेंगे उतना ही अच्छा होगा, परन्तु यह उनकी बड़ी भूल है। शरीर की क्षमता से अधिक व्यायाम करने से मनुष्य बलवान, मोटा, ताजा न हो कर उलटी हानि उठाता है। यह बात बहुत अंश में सत्य भी है, कि अधिक व्यायाम करने से अधिक लाभ होता है, किन्तु अधिक व्यायाम का यह अर्थ नहीं है कि एक समय शरीर की ताक़त से अधिक व्यायाम किया जावे। हां, धीरे २ ज्यों २ शरीर का बल बढ़ता जावे, त्यों २ व्यायाम की मात्रा भी बढ़ाता जावे। सब बात की सीमा होती है व्यायाम की भी सीमा है, जो इस सीमा का उलंघन करता है वह लाभ के बदले उल्टी हानि उठायेगा। ज़रूरत से अधिक व्यायाम करने से श्रम, क्लान्ति, धातु क्षय, तृष्णा, रक्तपित्त, श्वास कास, ज्वर और वमन आदि अनेक प्रकार के दोष हो जाया करते हैं। साधारण लोगों को १५ मिन्ट व्यायाम करना ही पर्याप्त होता है। पांच वर्ष के बालक से लेकर ८० वर्ष के बूढ़े तक व्यायाम कर सकते हैं। उचित व्यायाम स्वास्थ्य के लिये हितकर होता है, किन्तु एक ही प्रकार का व्यायाम सब के लिये एकसा उपयोगी नहीं होता। बलवान के लिये निर्बल की अपेक्षा अधिक और कड़ा व्यायाम लाभकारी होता है। जो पहलवानों की भाँति अपनी माँस पेशियों को समवर्धित नहीं करना चाहते, उन्हें कड़े और कठिन व्यायाम की कोई ज़रूरत नहीं। साधारण व्यायाम के लिये किसी प्रकार के भी यन्त्र की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु किसी २ को देखा जाता है कि यान्त्रिक व्यायाम से ही अधिक लाभ पहुँचा है।

हम कह चुके हैं कि व्यायाम वही अच्छा है जिससे शरीर की सारी ही माँस पेशियाँ संचालित हों। यदि ऐसा व्यायाम किया जायगा कि जिसमे कुछ पेशियां ही संचालित होंगी तो केवल वही पेशियाँ दृढ़, बलिष्ठ होंगी जो संचालित होती हैं। जैसे कारीगरों के हाथ व बाई-सिकिल आदि पर चढ़ने वालों के पैर ही दृढ़ बलवान होते हैं, क्योंकि इनकी पेशियों पर काम अधिक पड़ता है। और अंगों की पेशियाँ ज्यों की त्यों ही निर्बल रह जायंगी। हमें चाहिये कि जो पेशियां अधिक निर्बल हों उन पर अधिक ध्यान दें जिसमे हमारे सब अंग दृढ़ व पुष्ट हों। व्यायाम करते समय व्यायाम पर मन लगाना बहुत ही आवश्यक है, बिना मनोयोग के व्यायाम का पूरा फल नहीं मिलता, दो या अधिक व्यक्तियों के मिलकर व्यायाम करने से या बीच २ में दूसरे प्रकार के व्यायाम करने से अधिक लाभ होता देखा गया है। जो लोग विश्रृङ्खल (छोड़ छोड़ कर) व्यायाम करते हैं, आज किया, कल करके परसों किया व दो दिन नहीं, उन्हें व्यायाममें लाभ के बदले उल्टी हानि होती है।

रक्तपित्त पीड़ित, कृश, शोथ के रोगी, श्वास, कास व घाव आदि से पीड़ित, अत्यन्त बूढ़े और भूख से मरते हुओं के लिये व्यायाम करना हानिकर होता है।

व्यायाम का सुपरिणाम —

नियमित व्यायामसे सारी मांसपेशियां फूलती फलती, दृढ़ व कान्तियुक्त होती हैं। साधारण लोगों की पेशियां जो बल सह सकती हैं उससे कहीं अधिक बल व्यायाम करने वालों की पेशियां सहन कर सकती हैं। जिसे हम मोच आना कहते हैं वह केवल कुछ पेशितन्तुओंके छिन्न होने के सिवाय और कुछ नहीं। व्यायाम करने से पेशितन्तु जल्दी से टूटते या मुड़ते नहीं, मोच या बांहटे भी नहीं आते। नियमित व्यायाम से जो पसीना निकलता है उससे रोमकूप साफ़ रहते हैं। त्वचा की रक्तवाही शिराओं का काम सुचारु रूप से सम्पन्न होने के कारण सामान्य सर्दी, गर्मी लगने से किसी प्रकारका असुख नहीं हो सकता किसी २ के पसीने में बड़ा दुर्गन्ध आती है, यदि लोग खुली हवामें नियमके साथ व्यायाम करें तो यह दुर्गन्ध मिट सकती है। नियमित व्यायामसे फेफड़ों में वायु ग्रहण करने की शक्ति बढ़ जाती है और श्वासन पेशि समूह पुष्ट होकर छाती की परिधि भी बढ़ जाती है। जो लोग पांच सात मिनिट ही के परिश्रम से हांपने लगते हैं वे नियमित व्यायाम के प्रताप से सहज में ही एक घण्टा परिश्रम करने पर भी नहीं थकते। व्यायाम के प्रभाव से नाड़ियों के रक्त का वेग बढ़ जाता है। रक्त संचालन में सहायता पहुँचने के कारण व्यायाम के द्वारा शरीर से ही अनावश्यक व विषाक्त पदार्थ जल्दी निकल जाते हैं। परिमित व्यायाम से यकृत् और पाकयन्त्र की क्रिया भली प्रकार सम्पादित होती है, भूख बढ़ती है। व्यायाम से पेट के अंगों का भी संचालन होता है, इसी से कोठे का कड़ापन, कोष्टबद्धता और अजीर्ण आदि रोग भी मिट जाते हैं, मन की अवसन्नता भी दूर हो जाती है, शारीरिक उन्नति के साथ २ मस्तिष्क व स्नायु मण्डली पुष्ट रहती है और मन में भी उत्कर्षता (उत्साह) होता है। नियमित व्यायाम से मनुष्य के रोग नष्ट होते हैं और संक्रामक व्याधियां शीघ्र आक्रमण नहीं कर सकती। वात व्याधि भी व्यायाम से आराम होती है। मानसिक दोष हो तो खुली हवा में व्यायाम करने से जाता रहता है। अनिद्रा रोग, स्थूलता (मेद वृद्धि, अनुचित-मोटापन) यक्ष्मा आदि रोग व्यायाम से विदूरित होते देखे गये हैं। हृद रोग भी व्यायाम से दूर होता है। फेफड़े की बीमारियों में फेफड़ों का व्यायाम बहुत लाभदायक होता है। इतिशम्।

मलेरिया (विषम ज्वर) की चिकित्सा

ले०—श्री पं० विश्वनाथजी शास्त्री प्रिन्सिपल ललित हरिकालेज पीलीभीत

आयुर्वेद के आचार्य चिकित्सा शब्द से उस क्रिया को समझते हैं जो कि रोग दूर करदे साथ ही किसी तरह के उपसर्ग † की वृद्धि न करे। किन्तु वर्त्तमान पश्चिमीय वैज्ञानिक अपनी चिकित्सा प्रणाली में आधे वाक्य को तो मानते हैं किन्तु 'उपसर्ग की वृद्धि न करें', इसके ऊपर ज़ोर नहीं देते। अतः दोनों चिकित्साओं में थोड़ा सा अन्तर रह जाता है। प्राचीन चिकित्सक अपनी क्रिया वैशद्य को प्रकट करने के लिए चिकित्सा प्रणाली में प्रविष्ट होने के पूर्व ही प्रयत्नशील हो जाते हैं किन्तु आधुनिक चिकित्सक अपनी प्रणाली को दृढ़ करने के लिए अचानक व्याधि के ऊपर धावा बोलते हैं। पहले क्षण में भलेही वे रोग के ऊपर कुछ दबाव डालते हैं किन्तु द्वितीय क्षण में उनके साथ युद्धार्थ शरीर (क्षेत्र) और व्याधि दोनों तत्पर हो जाते हैं। उदाहरणार्थ—सुयोग्य वैद्य ज्वर की प्रारम्भ अवस्था में लङ्घन के साथ हलका दोष पाचन षडंगपानीय इत्यादि की व्यवस्था करते तथा ज्वर की सामावस्था बीतते ही शक्ति शाली शोधक, शामक औषधियों का प्रयोग करके व्याधि विकार को हमेशा के लिए रसातल में सुलादेते हैं। इधर एलोपैथिक चिकित्सक रोगी की व्याधि विवसता देखते ही कुनीन मिक्सचर देते हैं। परिणाम स्वरूप ज्वर का वेग या तो कम हो जाता है और सविराम * ज्वर का रूप (Relapsing fever) धारण करता है अथवा शारीरिक विषम प्रतिक्रिया के होने से भयानक रूप धारण करना पड़ता है। शमन इस प्रकार मुश्किल से हो पाता है, होता भी है तो रोगी की शक्ति छिन्न भिन्न करके। ऐसे रोगी बहुत देर में रोग शान्ति हो जाने पर भी पनपते दिखाई पड़ते हैं। किन्तु वैज्ञानिक सभ्यता के नाम पर मर मिटने वाले पाश्चात्य चिकित्सक अपने सिद्धान्त (Theory) को ही ठीक मानते हैं। अस्तु-मेरा अभिप्राय यह है कि

† सा चिकित्साविकाराणां, शमयेत न्यान्यं प्रकोपयेत्।

* स्तम्भ्यंते न विपच्यन्ते करोति विषम ज्वरम्,
दोषा बह्वाकषायेण स्तम्भितास्तरुणे ज्वरे।
इसी नियम से ज्वरदोषन दबकर पुनः ज्वर पैदा करते हैं या उग्र रूप धारण करते हैं। च०, चि० अ० ३ श्लो० १५९।

चिकित्सा लिखने के पूर्व पाठकों को यह बता दिया जावे कि यहां पर आयुर्वैदिक और एलोपैथिक चिकित्सा पद्धतियों के अनुसार अलग २ चिकित्सा न लिखकर के एक सिद्धान्तिक मार्ग रक्खा गया है क्यों कि मलेरिया शीर्षक द्वारा इस समय विषम ज्वरों को दोषोत्पन्न (वात पित्त कफ़ द्वारा) न मान कर प्रत्येक छोटे २ स्कूल के बच्चों को भी मच्छर-दंश जन्य ही ज्ञान-कराया जाता है। ऐसी स्थिति में केवल चिकित्सा प्रदर्शन के सक्त कीटाणु व दोष जन्य पार्थक्य पाठकों के मनमें न उपस्थित हो जाय जो सम्भ्रम को उत्पन्न करे। अतः पारस्परिक तुलनात्मक चिकित्सा क्रम दिखलाया गया है, जो एक मार्ग में ही चले।

चिकित्सा की दो प्रणालियां हैं (१) प्रतिबन्धक व (२) शामक।

प्रतिबन्धक—चिकित्सा वह है जिसमें रोगोत्पत्ति होने के पूर्व से ऐसे विधान काम में लाये जावें जो रोगोत्पत्ति न होने देवें। जैसे विषमज्वर (मलेरिया) में-(१) घर व इसके आस पास गन्दगी को न रहने दिया जावे। (२) साफ़ हवा व रोशनी का प्रबन्ध रहे (३) जहां पर दूषित जल का प्रयोग पानार्थ होता हो जैसे बंगाल, आसाम, पार्वत्य प्रदेश, बिहार, हज़ारी बाग़, पारस नाथकी पहाड़ियां इत्यादि वहां पर जलको उबाल कर पान किया जाय। क्यों कि दूषित प्रदेश व स्थल रोगोत्पत्ति के साधन हैं। जहां जलमें नित्य गर्द गुबार या सड़े गले पत्र या झाड़ काठ पड़ते हैं वहां का जल स्वतः दूषित हो कर रोगोत्पत्तिकर होगा। साथही उपर्युक्त प्रदेशों में अधिक तर बावलियों के जलों का प्रयोग पानार्थ हुवा करता है जिसमें चारों तरफ़ घास फूंस, पेड़ पत्ते, ढके रहते व सड़ते गलते रहते हैं। ऐसे दूषित प्रदेशों में मलेरिया के कीटणु भी वृद्धि को प्राप्त होते या उनके पोषक मच्छर (एनाफिलीज़ स्त्री जाति की) अधिक रहते हैं। (४) स्थान बहुत ही मैलेरियल हो तो संताप, पाइरेक्सिया में कुनैन इत्यादि रोधक औषधियों का सेवन होना आवश्यक है। इससे रोगाक्रमण नहीं हो पाता। (५) मलेरिया के मच्छरों के दंश से बचने के लिए मसहरी का प्रयोग होना चाहिए। (६) यदि गृह या ग्राम के आस पास कई पल्वल, पोखर या बावलियां हों तो उन्हें भरादिया जाकर एक उपर्युक्त जलाशय को जल पानार्थ व्यवहार में लाया जाय। (७) मच्छरों के नाशक उपायोंका अवलम्बन किया जाय। (८) नित्य ज्वरघ्न धूपों को (चित्रक, जटामांसी, गुगल, राल, धूप (देवदारु) राई, कटेरी, पुष्करमूल, निम्ब, कुटकी इत्यादि) इस्तैमाल में लायाजाय। यह धूप मच्छरों को मारता, उन्हें दूर करता व नई उत्पत्ति का बाधक है। (९) रुग्ण के साथ परिष्कार वस्त्र व जल भोजन का प्रबन्ध रखा जाय। हमेशा मसहरी में रखा जाय जिससे उसको काट कर मशक दूसरे को काट रोगाभिवृद्धि न कर सकें। (१०) मच्छर वृद्धि को रोकने के लिए मकान के आस पास २० फ़ीट की दूरी में गढ़, नालियों को भर कर शुष्क मिट्टी भरदो। तलावों में जल बहाने को

नालियां खोदो। यदि यह असम्भव हो तो मट्टी के तेल को जल के ऊपर छिड़को। क्यों कि मच्छर पैदा होकर पानी की सतह पर तैरते रहते हैं। इनकी उत्पत्ति कूड़े करकट गंदे प्रदेश, नालियां या सीलयुक्त घरों में होती है। इसके अण्डे २-३ दिन में रेंगने वाले जन्तु का आकार धारण कर लेते हैं। २ हफ्तों में पूरे मच्छर बन जाते हैं। यदि जल स्थल २० फ़ीट लम्बा २० फीट चौड़ा गढ़ा है तो उसमें एक छटांक मिट्टी का तेल काफ़ी होगा। पानी नित्य बरसा करता हो, जैसे बंगाल इत्यादि में, तो तेल हफ्ते में २ बार इसी तरह छिड़को। उसके अण्डे बच्चे मर जांयगे व वृद्धि रुक जायगी।

(११) घर व इसके आस पास कूड़े करकट न इकठ्ठा होने दो।

(१२) वर्षांत इत्यादि ऋतु इसके वृद्धि के लिए हित कर हैं इस समय वात वर्धक पदार्थ न सेवन करो। यह काल मन्दाग्नि होने का है अतः गरिष्ट भोजन न करो। यदि आध्मान या अजीर्ण मालूम पड़े तो उस वक्त कुछ न खाकर उपवास करलो।

(१३) आमाशय हमेशा साफ़ रखो। क्यों कि आमरस आमाशय में इकठ्ठा होकर ज्वर उत्पन्न करता है यदि यह परिष्कार व कार्यशील रहेगा तो ज्वर होगाही नहीं। (१४) हरे शाक, दधि, व दूध का सेवन न करो। जिन्हें ये सात्म्य हो गए हों उन्हें भी अल्प मात्रा में ही इस समय सेवन करना चाहिए। यह प्रायः ऐसे उपाय हैं जिनके द्वारा रोगका प्रसार व संक्रमण रोका जा सकता है।

शामक चिकित्सा

शामक चिकित्सा—वह चिकित्सा है जिस के द्वारा रोगियों के रोगोपशमार्थ उचित सामयिक औषधियों का प्रयोग किया जावे। इस तरह काम आनेवाली औषधियों को ३ भागों में विभक्त किया जाता है।

(१) ज्वर को घटाने वाली औषधियां, (२) ज्वर-वेग को रोक देने वाली (३) ज्वर के तापक्रम (हरारत) को दूर करके, दर्द इत्यादि को दूर करती हैं तथा शरीर की भी शुद्धि करती हैं।

ज्वरको घटाने (दूर करने वाली) औषधियाँ —

(१) **चित्रक** (२) **देवदारु** ३) **पुष्कर मूल** ४) **रक्तापामार्ग** (५) **ऐसीटैनीलाइड** (Acetanilide) (६) **फिनासिटिन** (Phenacetine) (७) **फिनाज़ोन** (Phenazone) (८) **कालमेघ** (यवनिका) (९) **गुड़ची** Tinospora cordifolia (१०) **कटेरी** sodanum Xanthe corpum. & S. jaquini : (११) **लघु पंचमूल** (१२) **टंकण** (Borax) (१३) **स्फुटिका** (Alum) (१४) **नरसार** (A. chloride) (१५) **सुदर्शन** (१६) **कुष्ठ** (Sausurealeppa clark. Aplolaxis Auriculate jaqua.) (१७) **कटुकी** (Picrorrhiza Kurroa.) (१८) **काशीश** (Ferry sulphas.) इत्यादि। **तैयार—अर्द्धनारीश्वर, शीतारि; आनन्द भैरव** इत्यादि। इन उपर्युक्त दवाओं से ज्वर की हरारत कम होजाती है। यद्यपि इन औषधियों का प्रभाव तन्दुरुस्त आदमियों पर उतना नहीं होता किन्तु हरारत

यदि ज्वर के कारण है तो यह अपना असर दिखलाती हैं—शरीर का तापमान प्राकृतावस्था में ६८' ५ होता है। इन औषधियों का असर इस तापमान को कम करने में नहीं होता। ताप के ऊपर विजय पाने के प्रधान दो मार्ग हैं। (१) चर्म द्वारा पसीना लाकर व (२) श्वास क्रिया द्वारा (वायु परिवर्तन द्वारा)। कभी कभी मल मूत्र निष्काशन द्वारा भी कम होने की आशा होती है। कई बार रेचन तापमान को एक दम कम कर देता है।

तापमान परिवर्तनार्थ कई प्रकार शरीर पर यह औषधियां असर डालती हैं।

(१) शारीरिक परिवर्तन द्वारा प्रभाव डाल कर। जैसे करंज, विषमुष्टि, त्वक्‌सत्व, कुनीन इत्यादि।

(२) तापमान प्रवर्द्धन की युक्तियों पर प्रभाव डाल कर। जैसे फिनास्टीन, फिनाज़ोन, अर्द्ध-नारीश्वर, सुदर्शन, नरसार, कशीश इत्यादि।

(३) रक्त वाहिनी नाड़ियों पर प्रभाव डाल कर। मृत संजीवनी सुरा, सौभाग्य, सैलीसिलेट

(४) पसीना लाकर। जैसे सुदर्शन, नरसार, पुष्करमूल, कूठ।

(५) गर्मी कम करने के शीतोपचार। जैसे—नाभि पर जल पात्र में जल डालना। कांजिकार्द्र वस्त्रावगुण्ठन। शीतजलावसेचन, शर्बत बर्फ-चूशन, व उड़नशील द्रवों (Lotions) के प्रयोग।

(६) विष हर क्रिया (किटाणु विष पर त्वक-गत द्रवभरण) जैसे कुनीन, संताप ज्वर वटी का मलेरिया ज्वर पर मैलेरिया पैरासाइट (कीटाणु) संहार करके।

प्रभाव व प्रयोग—

ज्वर के संताप दूर करने के लिये - सुदर्शन, काशीश, अर्द्धनारीश्वर, लघुपंचमूल, नरसार, का व ऐसीटैनीलाइड व फिनोज़ोन का व्यवहार बहुत कम किया जाता है। क्यों कि कभी कभी इनसे भयंकर लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। अतः इन्हें सोच विचार कर देते हैं। प्रधानतया काल-मेघ, नरसार, स्फुटिका, कुटकी तथा कुनीन के साथ सैलसिलिक एसिड का प्रयोग लाभ दायक है। यह ज्वर की साम और निरामावस्था दोनों में हितकर है। कांजी में आर्द्र किये हुये या शीत जल में भिगो कर निचोड़े हुये वस्त्र से शरीर को स्पंज करके पोंछना व अवगुण्ठन करना तापमान को कम कर देता है। जैसा कि भावमिश्र ने लिखा है—

> उत्तान सुप्तस्य गभीरताम्र,
> कांस्यादि पात्रे निहिते च नाभौ।
> शीताम्बु धारा बहुला पतंति,
> निहंति दाहं त्वरितं ज्वरं च ॥

अर्थात्—ज्वरी पुरुष को उत्तान सुला कर उसकी नाभि पर ताम्र या कांसी के गम्भीर पात्र को रखवे और पात्र में शीतल जल की धारा को छोड़े तो शीघ्र ही दाह और ज्वर नष्ट हो जाता है।

ऐसे ही स्नानावगाहन परिषेक, प्रदेह इत्यादि की भी व्यवस्था महर्षि सुश्रुत ने की है जिसमें दाह व ताप दोनों कम हो जाते हैं।

इन औषधियों के प्रभाव ऐसे ही हैं कि वे

ज्वर के ताप को घटावें। शरीर को स्वस्थ रखने की कोशिश करें। कभी कभी शीत पूर्व ज्वरों में ताप वर्द्धक क्रियायें भी की जाती हैं जिसमें किसी अंग इत्यादि की हरारत बढ़ाई जाय। ऐसी ताप वर्द्धक औषधियों को केलोरी क्रीमेंटस (chelory creaments) कहते हैं। इनमें कुछ तो बाह्य उपक्रम, सेक, प्रलेप द्वारा बढ़ाने की कोशिश करती हैं और कुछ आभ्यंतर प्रयोग द्वारा तापक्रम बढ़ाती हैं जैसे-मल्ल सिन्दूर, चन्द्रोदय, बेलाडोना, कैफ़ीन, सिंगिया शुद्ध और अन्य जान्तव विष। कभी कभी इनके लिए निर्मित जान्तवविष (कीटाणु प्रति विष सीरम इत्यादि) फ़िश स्प्रूवर कुलीग या एलव्यूनासिस इत्यादि। किन्तु इनका प्रयोग बहुत कम किया जाता है। अब यहां पर कुछ पूर्वोक्त औषधियों का प्रयोग अलग २ या मिलाकर दिखलाया जायगा।

चित्रक, देवदारु व कालमेघ—

इनका क्वाथ (Decoction) ५ से १० तोले परिमाण में व घनद्रवसत्व १ माशे के परिमाण में व शुष्क सत्व (Dry Extracts) आधे माशे से १ माशे के परिमाण में एक ख़ुराक में दिये जाते हैं। दिन भर में ३ मात्रा अधिक से अधिक देते हैं।

इनके यौगिक (Compounds & Mixtures)

इनके साथ योग करके सोंठ, नागरमोथा, शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, निशोथ, अमलतास को भी क्वाथ सत्व या शुष्क सत्व बनाकर देते हैं। कार्य ज्यों का त्यों किन्तु सुचारु और निश्चित होता है। मात्रा पूर्ववत ही रहनी चाहिए।

विषमुष्टि त्वक्सत्व्, करंज, रसौत का योग—

एक या पृथक २ क्वाथ या सत्व रूप में दी जाती है। इनका सत्व सद्यः मैलेरिया जीवाणुका नाशक है। परीक्षित भी है। इनका कार्य शारीरिक परिवर्तन से ताप परिवर्द्धन हुवा हो तो ताप को कम करना भी है।

काशीश, नरसार व सुदर्शन—

काशीश, व नरसार में से किसी एक को ३ माशे मात्रा में लेकर के दो तोले सुदर्शन स्वरस को दिया जाय तो बहुत तीव्र पसीना आता है। यहां तक कि कभी कभी शीतांगता और मृत्यु भी हो जाती है। इसको देते वक्त विशेष विचार मात्राको रखनी चाहिये। यह एण्टीफ़िब्रिस्टीनकी तरह काम करता है। इनका कार्य स्वेदकर ग्रंथियों में उत्तेजना देकर पसीना निकालना और ताप कम करने का होता है। इसे विशेष ताप की वृद्धि (१०६, १०७, ११०) होने पर ही प्रयुक्त करना चाहिए जब कि अधिक तापमान होने पर धातु पाक (Solidisation of Plasma) की सम्भावना हो।

अर्द्धनारीश्वरः—यह एक निर्मित यौगिक है जो तापोत्पादक ग्रंथियों व शरीरावयवों पर प्रभाव डाल कर तापमान कम करता है। इसके योग अधोलिखित हैं:—

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक १ भाग विष (सिंगिया) २ भाग, शुद्ध जयपाल २ भाग, मिर्च ४ भाग इनको त्रिफला के रस की ५ भावना देकर रख लेवे। कोई कोई निशोथ की भावना दे

लेते हैं।

प्रयोगः—जम्बीरी निम्बू के रसके साथ २-३ रत्ती मिलाकर नस्य देते हैं।

प्रभावः—आधे शरीर का तापमान कम हो कर अर्द्ध भाग शीतल हो जाता है। यह रस नासिका की सावेदनिक कलावों के द्वारा सौषुम्न नाड़ी मण्डल में प्रविष्ट हो कर अपना असर करता है। एक तरफ़ के नासिका-पुट में देने से आधे शरीर पर प्रभाव पड़ता है। जैसे—दक्षिण नासापुट में दिया जावे तो वाम भाग शीतल होगा, क्योंकि पिंगल नाड़ी मण्डल के द्वारा नाड़ी सूत्र के प्रतान सौषुम्न सेतु में आकर विपरीत दिशाओं में बंट जाते हैं। अतः वाम तरफ़ के नाड़ी सूत्र दायें भाग में मस्तिष्क के तथा दायें तरफ़ के सूत्र बांयें भाग में अपने जाल या केन्द्र फैलाते हैं और उनके ही प्रतान नासिका पुटों में आये होते हैं। अतः शारीरिक ताप ह्रास पर विपरीत दिशाओं में असर होता है।

नोटः—प्रयोग हर हालतों में नहीं करना चाहिए। केवल जब तापमान बहुत अधिक हो गया हो और रोगी प्रदाह प्रलाप इत्यादि से व्यग्र हो तो इसका प्रयोग करे।

शीतारि रस व मृतसंजीवनी रस—

इनका प्रभाव रेचन द्वारा तापमान कम करने का होता है। इनके सेवन कराते ही दस्त आने आरम्भ हो जाते हैं और मलद्वारा ताप निस्सरण होकर के शांति लाभ होती है।

योग—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध टंकण प्रत्येक एक तोले जैपाल शुद्ध २ तोले, सेन्धा नमक, काली मिर्च, इमली का क्षार, शर्करा प्रत्येक तोले तोले भर जम्बीरी के रस में रगड़ कर दो दो रत्ती की गोली बना लो। गर्म जल से एक गोली दो "रसः शीतारि नामायं, शीतज्वर हरः परः" यह इस का प्रभाव है। शीतहर है।

प्रभावः—आवश्यकतानुसार १, २, ३, गोली खिलाओ। रेचन प्रारम्भ होगा और तापमान कम हो जायगा। तापमान यदि एक गोली देने से कुछ कम होकर रुक जाय तो दूसरी दो। इस से भी रह जाय तो तीसरी दो। कहने का तात्पर्य यह है कि ज्वर के ताप बीत जाने पर इसका देना बन्द करो। रोगी की अवस्था, काल बल का भी विचार वैद्य करले। कभी कभी घबरा कर वैद्य २ या ३ गोली एक साथ दे देते हैं अतः पेट में ज़ोर का शूल उठता व तीव्र विरेचन होकर रोगी को घातक सिद्ध होता है। अतः ध्यानपूर्वक रोगी की प्रकृति व बल तथा कोष्ठ का विचार करके देवें।

मृतसंजीवनी रस—

ताम्र भस्म ४ तो०, शुद्ध जमालगोटा ३ तो० शुद्ध सुहागा २ तो० विष १ तो० इन सबों को खूब महीन चूर्ण करें फिर अदरक के रसकी भावना देकर रखले। बहुत से वैद्य ताम्र की जगह शुद्ध हिंगुल डालते हैं। शुद्ध हिंगुल मिश्रित प्रयोग भी हमारा कई बार का अनुभूत है।

अनुपान—आर्द्रक स्वरस १ तो० मात्रा २, ४ रत्ती। नवजवानों में १ माशे। इसका एक खुराक ही दे अधिक से अधिक दो २। दोनों बार मिलाकर दवा १ माशे से अधिक न होवे।

प्रभाव - एक मात्रा देते ही शरीर में तापमान बढ़ जाता है। अब रोगी कुछ व्याकुल होता है। ठीक आधे घण्टे में पाखाने आने लगते हैं और रोगी के दोष संग्रहानुसार २-८ तक आते हैं। ज्वर सन्ताप कम हो जाता है रोगी के ताप क्रम में एक खुराक देने से अन्तर न पड़े तो दूसरी खुराक पहले से हलकी दो अब और दस्त आकर ज्वर का नाश हो जायगा। कभी कभी औसत (Normal) से भी तापमान कम हो जाता है।

पथ्य:—दूध चावल, दूध मिश्री, दूध साबूदाना है। ज्वर के वेग बीतने के बाद उसे यह पथ्य अपराह्न में देना उचित है।

नोट:—रेचन होते वक्त कभी कभी जलन व दाह तथा बेचैनी होती है इस समय उष्णोदक दो। यदि दस्त अधिक आ रहे हों और रोगी में बलहीनता के चिह्न दृष्टिगोचर हों तो सौंफ मिश्री का शर्बत पिला दो। उस से दाह और दस्त के वेग रुक जावेंगे।

एसीटैनीलायड (Acetanilide) —

इस का दूसरा नाम फिनाइल एसिटेमाइड (Phenyl Acetamide) है और ज्वर तापहर (Antifebrin) है। मात्रा २, ५ ग्रेन। बड़ा खुराक ८ ग्रेन। दिन भर में २० ग्रेन (१० रत्ती)। इसके अन्य मिश्रण भी हैं जैसे एमोनोल (Ammonol) हैं। मात्रा २॥ से ५ रत्ती, पल्व एसीटिनलिडको (Pulv Acitinledeo) मात्रा ३, ५ ग्रेन, फिनैलजिन (Phenal gin) मात्रा ५ २० ग्रेन तक व एसिटोपायरिन (Acetopyrin) मात्रा ५ ५ ग्रेन तक इत्यादि।

प्रयोग इनका ज्वर व दर्द को दूर करने के लिये होता है।

फिनासिटीनम – (Phenacetenum)—

इसका दूसरा नाम ऐसिट-फिनेटि-डीनम है मात्रा ५-१५ ग्रेन तक।

इसके मिश्रण अधोलिखित हैं—

(१) क्रायोफिन (kryophin)-मात्रा ८-१५ ग्रेन। पसीना लाने, हरारत व दर्द दूर करने को।

(२) साईट्रोफेन (citrophen)-मात्रा व गुण फिनासिटीन की तरह है। ३-८ ग्रेन।

(३) फिनोसैल (Phenosal), एसपिरोफेन (Aspirophen) इत्यादि हैं। ५-१५ ग्रेन।

फिनाज़ोनम्-(Phenazonum)—या एन्टीपाइरिन भी नाम हैं।

मिश्रण—फैरी पाइरिन (Ferripirin), पाइरामीडोन, सैली-पाइरिन, ऐसीटोपाइरिन इत्यादि हैं।

प्रयोग व प्रभाव—एसीटैनीलिड का व्यवहार अब बहुत कम हो गया है। ज्वर कम करने के लिए इनका व्यवहार बहुत होता है। इनमें फिनास्टिन सब से अच्छी है। इसको देने के दो घंटे बाद बुखार कम हो जाता है। फिनाज़ोन, ऐसीटैनीलाइड शीघ्र ही हरारत कम कर देती है किन्तु पुनः हरारत बढ़ने का अंदेशा रहता है अतः इन्हें बार बार देना पड़ता है जिससे भयानक अवस्था उत्पन्न हो सकती है। हृदय कमज़ोर हो जाता है। इसे चिकित्सक व्यवहार में नहीं

जाते। जब रोगी की अवस्था तापाधिक्य के कारण शोचनीय हो रही हो तब इसका प्रयोग करना चाहिए, इसमें सफलता कम होती है कई बार आज़मा करके देखा गया है। दर्द दूर करने के लिए फिनाज़ोन और फिनासिटिन अच्छे हैं। ऐसा कोई भी दर्द नहीं है जिसको फिनाज़ोन दूर न करता हो। मात्रा १०-१५ ग्रेन दिन में ३-४ बार तक सिर दर्द दूर करने के लिये होता है। बच्चों को ज्वर आ रहा हो तो फिनास्टीन १ रत्ती देने से नींद आ जाती है। खांसी के साथ ख़ून आता हो तो इसके देते ही रुक जाता है।

इनको चूर्णकी शक्ल में हमेशा कैपशूल में बंद कर देते हैं। पानी के साथ देना हो तो फिनाज़ोन पिपरमेंट जल के साथ दो। बाक़ी पानी में नहीं घुलती अतः ब्रांडी, ह्विसकी, मृतसंजीवनी द्राक्षासव के साथ दो। फिनोज़ोन को हमेशा अकेली ही दो। यह बहुत ख़तरनाक है। अन्य के साथ उपद्रव पैदा करती है।

उपर्युक्त दवाओं के गुण कई रोगों के लिए हैं किन्तु यहां पर वर्णन केवल उनका ही किया है जिनका विषम ज्वर के तापमान के साथ संबंध है और इस काल में तापमान को कम करती है।

ज्वर के वेग व बारी रोकने वाली औषधियां

इस वर्ग में कही जाने वाली औषधियां बारी से आने वाले ज्वर को दूर करती हैं। वे दो रूप में अपना कार्य करती हैं। या तो वे खास क़िस्म के कीटाणुओं की मृत्यु कर देती हैं जैसे मलेरिया बुखार में कुनीन मैलेरिया पैरासाइट का नाश करता है। अथवा श्लेष्म वेग को शमन कर पाचन करती हैं या उनका निष्कासन करती हैं। जैसा विषम ज्वर के लिए श्लेष्म स्थान के अनुसार एकाहिक, द्वाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक इत्यादि ज्वर होते हैं जो आनन्द भैरव ज्वर बटी, विश्वनाथ रस, सौभाग्य बटी इत्यादि द्वारा पाचित हो कर के वेग के रोधक होते हैं। इनमें प्रधान —

(१) विषमुष्टि त्वक सत्व, (२) कालमेघ (३) अर्क मूल क्षार, (४) कुटकी, (Picrorrhiza) (५) सप्त पर्ण (Alstonia) (६) दारुहल्दी (Berberis) (७) सिनकोना त्वक (Cincona Bark) (८) कुनीन (Quinine) (९ करंज (१०) कुमारी मूल (११) गोदन्ती भस्म, (१२) धुस्तूर बीज, (१३) नवसादर (१४) फिटकरी,

निर्मित औषधियां —(१५) सौभाग्यवटी, त्र्याहिकारि, चातुर्थिककारि, विषम ज्वरान्तक लौह चन्दनादि लौह, ह्रीबेरादि तैल, संताप (ज्वरवटी) विश्वनाथ रस इत्यादि। इन औषधियों के कार्य जैसे ऊपर कहे गये हैं वैसे ही होते हैं। जो कीटाणु विष या श्लेष्म हर श्लेष्म नाशक होते व बारी को दूर करते हैं। इनके गुणों तथा प्रभावों का वर्णन यद्यपि सब वैद्य वृन्द जानते हैं किन्तु फिर भी उपर्युक्त वर्णित स्वरूप में दिखलाया जायगा।

(१) विषमुष्टि त्वक्—कुचले की छाल संकोचक, तिक्त, बलकारक, ज्वर दूर करने वाली व ज्वर रोकने वाली है। अकेली जड़ देने से पेट व आंतों में खराश व ख़ुश्की अधिक हो जाती है। इसका सत्व (क्वाथ करके घनरूप किया

हुआ) ज्वर रोधक होता तथा वातहर होता है। इसकी बारी रोकने की शक्ति को तीव्र करने के लिए अन्य औषधियों (तुलसो, करंज, सप्तपर्ण) के साथ देते हैं। इसको यदि मृतसंजीवनीसुरा के साथ दिया जाय तो उत्तम शक्ति वर्द्धक, ह्वदय वात शामक होता है। चूर्ण की मात्रा २ से ३ माशे।

सत्व (घन)—२-८ रत्ती तक।

क्वाथ—(Infusum sticina) १-२½ तोले तक।

कालमेघ—इसके भी कई योगिक बनते हैं।

मूल चूर्ण—जड़ को धोकर सुखा कपड़छन चूर्ण कर। २—३ माशे तक।

क्वाथ—क्वाथ विधि से बना हुवा, ४—१० तोले तक।

घन क्वाथ (Tincture)—१० बूंद से २५ बूंद तक।

सत्व (Extracts)—५ ग्रेन से १५ ग्रेन तक।

प्रभाव—कालमेघ महत्तिक, कफ पाचक, बल कारक, यकृत के कार्य सुधारक, ज्वर ताप-हर तथा ज्वररोधक है। इसे अकेले देने पर यह पित्त कार्य ह्रास करती है। दूसरी औषधियों के साथ मिला कर देते हैं तो भिन्न २ योगों से भिन्न २ रोगों को नष्ट करती है। तथा शुद्ध काशीश योग से यकृत, प्लीहा, कुटकी योग से पित्ताधिक्य, व एकाहिक, त्राहिकादि ज्वर, तथा करंज योग से चातुर्थिक ज्वर व त्वक रोग इत्यादि। नये यकृत व प्लीह-वृद्धि में अधोलिखित योग दें—

(१) कालमेघ सत्व	३ रत्ती
शुद्ध काशीश	१ रत्ती
अडूसा सत्व	१ रत्ती
नरसार	२ रत्ती
यवक्षार	२ रत्ती

इन सबको मिला कर तीन मात्रा बनावे। यदि रोग पुराना हो तो इसमें विष मुष्टिक्व सत्व व करंज सत्व मिला कर दें।

(२) कभी कभी सतत इत्यादि ज्वर बहुत हठ करते व शीघ्र दूर नहीं होते हैं। इस समय अधिक मात्रा में इसके न देने से बुखार नहीं जाता। रोग प्राणघाती हो तुलता है इस समय रोगी के ताप की तरफ़ ध्यान न दे करके १०, १५ २० रत्ती तक सत्व को मुख के रास्ते से देवें।

(३) कभी कभी चातुर्थिक सिर दर्द से प्रारंभ हो कर के आधे शिर में अधिक दर्द करता हुवा होता है इस समय कुनीन या कुचिला सत्व मिला कर देने ही जाता रहता है।

(३) अर्क

यह तीव्र श्लेष्म द्रावक, शोधक, ज्वरतापहर व वेग रोधक व रेचक है। सुश्रुत की क्षार प्रक्रिया से इसे निर्माण करना चाहिए। इसकी त्वचा (मूलकी) संकोचक व नाड़ी मंडल पर प्रभाव डालने वाली है। इससे वात शमन होकर चातुर्थिक पैरों से चढ़ने वाला शीघ्र ही दूर हो जाता है।

इसके प्रयोग—क्षार—३ से ५ रत्ती पर्यन्त।

(१) इसको चित्रक क्षार या चूर्ण में भी मिला कर देते हैं और ज्वर के वेग को भी यह प्रथम

मात्रा में ही रोकता है। क्षाराभाव में चित्रक चूर्ण १ माशे के साथ देते हैं।

(२) चूर्ण—ज़मीन के भीतर जड़ की पीली पीली नसों को पानी में धोकर धूप में सुखा कर चूर्ण बनालो। यह चूर्ण ३—७ रत्ती की मात्रा में ज्वर के वेग को रोकने के लिए देते हैं। यह विबंध, शूल, आम युक्त ज्वर में राम बाण सा असर करता है।

इनके अतिरिक्त यह अजीर्ण, विशूचिका, अग्निमांद्य व सर्वाङ्ग शूल की भी उत्तम औषधि है। इसे अकेले ही उष्णोदक से देते हैं। इसको सेवन करने से अस्थिभंजक ज्वर (Dengue Fever) शीघ्र शांत हो जाता है।

कटुकी (Picrorrhizae)—

यह स्वाद में कड़वी होती है। इस वृक्ष की पतली शाखें व कलियाँ काम में आती हैं। मात्रा—५-१० रत्ती चूर्ण बल वर्द्धन के लिए तथा ३ माशे से ४½ माशे तक ज्वर रोकने के लिए देते हैं।

इसके यौगिक—(१) कटुकी द्रव सत्व—(Extractum Picrorrhizae liquidum) मात्रा—१५ से ६० बूंद तक।

(२) कटुकी द्रव—(Tincture Picrorrhizae) मात्रा—½ से १ ड्राम तक।

प्रभाव व प्रयोग —

कटु होने के कारण पाचक शक्ति रखती है। व बढ़ाती है। अतएव कब्ज़ियत में देते हैं। पेट, आंतों की कमज़ोरी में लाभदायक है। इसको कुनैन की जगह, या कुनीन मिलाकर या कालमेघ सत्व, अथवा विषमुष्टि त्वक सत्व मिलाकर देने से मलेरिया बुखार में शर्तिया लाभ होता है। अधिक मात्रा में यह रेचक होती है। छोटी मात्रा में बल वर्द्धक। निम्ब त्वक कषाय के साथ इसका क्वाथ पित्त ज्वर को दूर करता है।

सप्तपर्ण—(Alstonia)—इसके छाल के सत्व, चूर्ण व द्रव तथा कषाय का ही अधिक प्रयोग होता है। इसके मिश्रण—

(१) सप्तपर्ण, शीत कषाय, फाण्ट व क्वाथ (Gufusum alstonae) मात्रा ½-१ औंस तक (एक औंस २½ तोले का है।

(२) सप्तपर्ण सत्व (Tincture alstonae) मात्रा—½ से १ ड्राम तक।

प्रभाव—मलेरिया बुखार में यह लाभदायक पाया गया है। आंत्र ज्वर (टाइफ़स फ़ीवर) व श्लेष्म ज्वर (इन्फ्लुएंजा) में जब रोगी की दुर्बलता रह गई हो दूर करने के लिए कुनीन व विषमुष्टि सा इसे लाभदायक पाया गया है। इस की छाल संकोचक, बल वर्द्धक, बारी बुखार रोकने वाली, पेट के कीड़े मारने वाली है। इसके दूध या ताज़े पत्तों का प्रलेप पूय युक्त व्रणों में लगाते हैं। इस से घाव भर जाता है। पुराने अतीसार में लाभदायक समझा गया है। इसके सेवन से शरीर में बल का संचार होता है।

दारुहल्दी (Berberis)—इसके मिश्रण—

(१) दार्वी द्रव—(Tincture Berberis) ½ से १ ड्राम।

(२) दार्वी सत्व या रसौत (रसांजन)—

(Extractum Berberidis) बाज़ारों में का हा रसोत इसका सत्व है किन्तु यह बहुत गंदा मिलता है। अतः इसे शुद्ध करने के लिए इसे ६० प्रतिशत तीव्रसुरा (Alcohol) में मिलाकर उड़ा दें जब गोली बधने लायक हो जाय। मात्रा २ से ४ माशे तक।

(३ दार्वी क्वाथ (घन) (Infusum Berberidis)—२० भाग पानी में १ भाग डालकर भिगोवे मात्रा—१—२½ तोले।

(४) इसके सिवा इसके तैयार योग कई एक और हैं. जैसे बरबैरीन कार्बोनेट, बैं० हाइड्रोक्लोराइड, बैं० फास्फेट, बैं० सल्फेट इत्यादि। मात्रा—१—५ ग्रेन तक।

प्रभाव व प्रयोग—यह हलका संकोचक, तिक्त, बल वर्द्धक व अल्प मात्रा में पाचक है। इसके खाने से पसीना आता है, बुखार कम होकर रुक जाता है, बड़ी मात्रा में दस्तावर है। लाभ इसका कुनीन की तरह ज्वर पर है। विषम ज्वर के लिए तो यह एक तीव्र रोधक है। क्षय व उपदंश में बल स्थिर रखने के लिए इसका प्रयोग होता है। आंत्र शोथ में यह संकोचक, बल वर्द्धक व परिवर्तक है गर्भिणी स्त्री की वमन को रोकने वाला है। नेत्राभिष्यंद में गुलाब जल में इसका द्रव प्रोटर्गलकी तरह फ़ायदेमंद है। नेत्र पीड़ा में पलकों पर लेप भी करने से लाभ होता है।

सिनकोना त्वक (Red cinchona Bark)

इसका अमेरिका में एक पृथक नाम से पुकारते हैं। रेडपेसवियन बार्क (Red pesuvian bark) मात्रा—१ माशे।

मिश्रण

(१) एक्सट्रेक्टम सिनकोनी लिक्विडम्। २) इनफ्यूजम सिनकोनी, (३) टिंचूरा सिनकोनी, (४) टिं० सि० कम्पोजिटा इत्यादि अनेकों इसके यौगिक हैं सिनकोनी सल्फास इत्यादि।

प्रभाव व प्रयोग—सिनकोना की छाल संकोचक, तिक्त, बल कारक व ज्वरतापहर है। अकेली जड़ आंतों में खराश पैदा करती है। अन्य कड़वी दवावों के साथ इसे ज्वर शमनार्थ देते हैं। कुनीन योग से बारी के बुखार रोकने को देते हैं। स्पिरिट एमोनियां एरोमेटिक के साथ इसका कम्पाउण्ड टिंचर देने से उत्तम बल वर्द्धक मिश्रण बनता है। इसके पीने से शराब पीने की आदत जाती रहती है। इसके यौगिक क्वीनीडाइन सल्फासको तृतीयक ज्वर दूर करनेके लिए सर्वोत्तम समझते हैं। इसे लगातार २ माह तक खाना चाहिए। मुंह से जो न खा सकते हों या जिन्हें इसके खाते ही वमन हो जाती हो उनको शिरागत इंजेक्शन से अच्छा लाभ होता है।

कुनीन (Quinine)—

यह उपर्युक्त औषधि का सत्व है। इसके कई एक यौगिक हैं जिन्हे ज्वर के रोधन के लिए देते हैं।

(१) कुनीन हाइड्रोक्लोराइड (Quinine Hydro chloride) मात्रा—शक्तिवर्द्धक २ रत्ती—मलेरिया ज्वर रोकने को १ माशे।

(२) कुनीन सल्फेट (Quinine sulphate) मात्रा—१-१० ग्रेन तक। इसके भी कई मिश्रण बनते हैं। यथा, पिल्युला कुनीन सल्फेटिस (२-८ ग्रेन) व टिंचूरा कुनीन एमोनाइटा

(½–१ ड्राम)

अन्य मिश्रण।

(३) क्युनाइन (Quinine) १½ ग्रेन मात्रा में शक्ति वर्द्धक, १ माशे मात्रा मलेरिया में।

यूकुनीन (Euquinine) यह कड़वी नहीं होती। अतः बच्चे चाव से खालेते हैं इसे, कुनाइनी ईथाइल कार्बोनास (Quininae Ethylcarbonas) भी कहते हैं, मात्रा—३–१५ ग्रेन तक।

(५) कुनीन बाई सल्फास (१५ ग्रेन) (६) कुनाइनी ग्लिसरो फ़ोसफ़ास (३–८ ग्रेन) (७) कुनीन हाइड्रो ब्रोमाइडम–यह सेवन करने से कुनीन का बुरा असर कम होता है।

(८) कुनैनी लेक्टास (Quninee lactes) कु० सैलीलास (Qu. salilas) प्रथम को खिलाते व सूची वेधभी करते हैं। द्वितीय बारी के बुखारों में गठिया में स्नायवीय पीड़ा तथा अतीसार में हितकर है। मात्रा १५ ग्रेनतक।

(९) सैलो कुनीन (Saloquinine) यह सैली सिलिक एसिड के योग से बनने के कारण कड़ुवा पन से रहित होता है। मात्रा ५–३० ग्रेन तक।

इस तरह कुनीन के योगज मिश्रण इस समय अनेकों तैयार हो गये हैं। प्रधान प्रधान का नामोल्लेख किया है। विशेष आवश्यकता अन्य की न समझ कर छोड़ दिया।

प्रभाव प्रयोग Actions & Uses:—

कुनीन आमाशय में पहुँचते ही पच कर रक्त में मिलजाता है। रक्त के श्वेतकण (White corpuscles) की निर्म्माण क्रिया स्थगित कर देता है। रक्त कणों (Red cars) के ऊपर कोई असर नहीं करता। बहुत लोग समझते हैं यह रक्तकणों के आकार में परिवर्त्तन कर देता है। अधिक मात्रा में देने से वमन हो जाता है। मलेरिया के कीट इसके प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं प्लीहा वृद्धि को रोकता है। स्वस्थावस्था में शारीरिक गर्मी पर इसका कोई असर नहीं होता मलेरिया के हालत में ज्वर के तपको रोकता है।

अल्प मात्रा में कुनीन बलदायक है। अधिक मात्रा में देने से विष के लक्षण उत्पन्न करता है इसको सिनकोनिज्म कहते हैं, इसके लक्षण—कानों से कम सुनाई देना, बहरा हो जाना नेत्रकी शक्ति का नष्ट हो जाना, बालों का झड़ना, धूपका बर्दाश्त न होना। बहुत से मनुष्य रंगो को नहीं शनाख्त कर सकते। शिर भारी होना, पागल होना, इत्यादि उपद्रव होते हैं। इसके विष के असर होने से, हृदय, श्रवण, नेत्र कमज़ोर हो जाते हैं, श्वास बन्द होकर मृत्यु हो जाती है।

गर्भाशय पर कुनीन का असर गर्भस्राव के रूप में होता है। प्रसव काल में इसके देनेसे दर्द शुरू होकर प्रसव शीघ्र होजाता है। गर्भाशय में कुनीन से दर्द भी होता है।

बहुत तीव्र मलेरिया के होने पर कुनीन गर्भिणी को भी २–५ ग्रेन मात्रा में हर दो घंटे पीछे देना उचित है इससे गर्भपात नहीं होता। श्लेष्म मुख के व्रण में शोधनार्थ इसका द्रव दिया जा सकता है। ज्वर उतारने में यह फ़िनोज़ोन, फिनास्टीन, ऐसीटैनीलाइड की बराबरी में

बहुत कम है। इसे हमेशा ज्वर के वेग कम होने पर देना चाहिए तेज़ी के वक्त देना व्यर्थ है। बारी बुख़ार के रोकने की यह ख़ास दवा है।

मैलेरिया में कुनीन देने के विधान का वर्णन

(१) तप व जूड़ी का बुख़ार (Ague) इसमें कुनीन की ख़ुराक १०-२० ग्रेन है जो बुख़ार होने के २ घंटे पूर्व देना चाहिए। इस तरह खून के रक्तकण में प्रविष्ट होने के पहले ही कीड़े मर जांयगे। कुनीन देने के पूर्व यदि रेचन दिया गया हो तो कार्य उत्तम होगा। बुख़ार उतरने पर भी ३-४ मात्रा थोड़ी थोड़ी देना उचित है। उतरते वक्त एक बड़ी खुराक देना चाहिए। साथ ही अधिक मात्रा में देना व्यर्थ है क्योंकि आमाशय इसे पचा न सकेगा। डा० एक्टन का कथन है—कुनीडाइन तृतीयक की उत्तम औषधि है मात्रा १० ग्रेन। दिन में २ बार। २ महीने तक।

कुनीन बाई हाइड्रोक्लोराइड--३ सप्ताह तक देने से इसे रोक पाता है। इसे मुख द्वारा ही खिलाना उत्तम है। तीन महीने बराबर देवे।

(२) बढ़ी हुई प्लीहा के साथ में लौह के यौगिक कुनैन के साथ उत्तम कार्य करते हैं। यथा—कुनीन सल्फ़ २ ग्रेन, फ़ेरी सल्फ़ ½ ग्रेन। पल्व रियाई ५ ग्रेन, पल्व इपीकाक ⅛ ग्रेन। पल्वजिंजीबरस २½ ग्रेन, सोडा बाईकार्ब २½ ग्रेन।

सब मिलाकर दिन में ३ बार देवें। यदि प्लीहा वृद्धि नई हो तो क्लोराइड of कुनीन ½ ग्रेन और मिला दें।

(३) तीव्र बुख़ार में २०-३०-४० ग्रेन तक कुनीन देना चाहिए। अन्यथा ज्वर कम नहीं होता।

(४ शिर दर्द, ठहर ठहर कर होना या आधा शीशी में यह अत्युत्तम है।

प्रसार—इसकी उपयोगिता देखकर इटली की गवर्नमेंट तथा पनामा (अमेरकन) गवर्नमेंट ने स्वस्थ पुरुष को भी खाने की आज्ञा दी है। उन्होंने सिद्ध किया है कि यह स्वस्थावस्था में दिये जाने पर मलेरिया का आक्रमण बचा सकता है। स्नायवीय शक्ति बढ़ने को लौह और विष-मुष्टि योग से देना चाहिए।

निरोध--(१) हृदय के कपाटों में रोगों से पीड़ित (२) जिन्हें हृदय में दर्द अनुभव होता हो, (३) अद्भुत प्रकृति के, (४) हृदयावरण दाह वाले रोगी कुनीन का सेवन न करें। कर्णरोग, पेट व आंतों के रोग, कामला, मस्तिष्क शोथ, शीतपित्त में कुनीन देना मना है।

कुनीन सेवन विधि—

इसको द्रव (Solution) के रूप में खिलाते हैं। कुनीन हल करने के लिए १ ग्रेन या १ बूंद डाइलूट नाइट्रिक एसिड (धातवीय तेज़ाब) ठीक है। टिंचर of फेरी क्लोराइड (काशीश) भी इसको हल करने को उत्तम है। कड़वाहट दूर करने के लिए साइट्रिकएसिड हलकर मिलाते हैं। बुरे लक्षणों से बचने के लिए डाइल्यूट हाइ-ड्रोब्रोमिक एसिड २ बूंद कुनीन की १ ग्रेन के हिसाब से मिलावें। किन्तु ध्यान रखना चाहिए हा० ब्रो० की अधिक मात्रा दस्त लाती है। मुख को कड़वापन दूर करने के लिए कुनीन खाने के

बाद चना, सुपारी, अमरूद या हरड़ खालो। बच्चों को यूकुनीन दो। मीठा होने से वे सरलता से खालेंगे। कुनीन खाते ही वमन हो जाय तो इंजेक्शन कर दो। ध्यान रहे—अत्यन्त आवश्यकता होने पर ही पिचकारी दो। कुनीन के साथ मिलाने को हमेशा परिश्रुत जल ही काम में लाओ। हठीले बुखार में टिंचर बार बार दो।

कुनीन पर रिसर्च कमेटी लखिनहार्डिंग कालेज की रिपोर्ट—

कुनीन तिक्त, संकोचक, रुक्ष और उष्ण होने के कारण आमाशयिक श्लेष्मिक कलाओं की क्रिया को स्तंभित कर देता है व समयानुसार एकाहिक द्वाहिक तृतीयक चातुर्थिक ज्वर वेग में आगत श्लेष्म का शोषण करता है। ताप को पैदा करने वाली ग्रंथियों पर प्रभाव डाल कर कृत्रिम ताप सेलों में उत्पन्न कर शीत रोधक है। श्लेष्म शोषक होने से वेग का रोधक होता है। यथा सुश्रुताचार्य की सम्मति विषम ज्वरार्थ श्लेष्म पक्ष में है।

कफ स्थान विभागेन, यथा संख्यं करोतिहि।
सततान्येद्युष्क तृतीयक, चातुर्थिक स प्रलेपकः॥सु०
कृत्वा वेगं गत बला, स्वेस्वे स्थाने व्यवस्थिता।
पुनर्विवृद्धाः स्वेकाले, ज्वरयंति नरं मलाः॥ च०॥

कुनीन यद्यपि तीव्र वेगों में ज्वर ताप हर तथा वेग रोधक है किन्तु एक तीव्र विष है। इसके कुछ दिन सेवन से ही कर्ण नेत्र व मस्तिष्क के रोग पैदा होते हैं जो कभी कभी भयंकर हो कर प्राण हर हो तुलते हैं। (विशेष विवरण १९३२-१९३३ की रिपोर्ट में देखो।)

करंज—

इसके त्वक, स्वरस, क्वाथ व फल सब ज्वर हर हैं। अलग अलग ज्वर हर औषधियों के साथ इनका प्रयोग होता है। इसके साधारण गुण सिनकोना के तरह ही हैं। मात्रा—क्वाथ—४-१० तो०, स्वरस—१-२ तो०, फल चूर्ण—१-२ रत्ती बल वर्द्धनार्थ, १-३ माशे ज्वर वेग रोधनार्थ।

(१) करंज शुंग (कोंपल) १ तो०, ४ दानेकाली मिर्च के ज्वर वेग से एक घंटे पूर्व २ बार दो। मलेरिया का वेग, शीत व दाह नहीं होगा न ताप वृद्धि होगी।

(२) कालमेघ-विषमुष्टि सत्व योग से यह मलेरिया बुखार के वेग को बहुत शीघ्र रोकता है। इसके योग वैद्य बन्धु स्वयं बनाकर, अर्कक्षार, वन तुलसी, चित्रक, चिरायता, कुटकी, सतपर्णी, निशोथ के साथ देवें।

घृतकुमारी

घृतकुमारी मूलकन्द ३-८ माशे बच्चों को, १ तो० तक युवकों को उष्णोदक से देते हैं। ज्वर वेग से २ घण्टे पूर्व। यह वमन* लाता है और ज्वरार्थ एकत्रित श्लेष्म को बाहर निकाल देता है अतः वेग होताही नहीं केवल वमनार्थ ही योग काम में लाया जाता है।

श्लेष्म शमन के लिए वमन ही युक्त चिकित्सा

*कुमारी मूल कर्षैक, पिबेत् कोष्णेन वारिणा।
विषमन्तु ज्वरंहन्ति, वमनेन चिरन्तनम्॥
गोपालकृष्ण (र० सा० सं)

है। अतः त्र्याहिकारि, चातुर्थिकारि, शीतारि इत्यादि रसोंकी योजना आचार्यों ने की है। इनके नुसखों के ऊपर पाठक ध्यान दें।

त्र्याहिकारि

खर्पर, शंख, तुत्थ इनमें प्रथम दो प्रत्येक १ तो०, तुत्थ ३ माशे लेवें इसको गोजिया, जयन्ती, चौलाई के रसों की भावना सात २ देवें। मात्रा ४-४ रत्ती।

प्रभाव-वमन व पसीना आना। इससे आमाशय स्थित श्लेष्म वमन से बाहर आता तथा कुछ क्लेदित भाग पसीने द्वारा निकलता है और श्लेष्म का शोषण व शमन होने से विषम वेग नहीं होते।

चातुर्थिक

शुद्ध हरताल, शुद्ध मैनशिल, शङ्ख, शुद्ध तुत्थ, शुद्ध गंधक, बराबर लेकर कुमारी स्वरस की भावना देकर संपुटित करो। मात्रा ४ रत्ती, अनुपान—कुमारी स्वरस। प्रभाव-पूर्वोक्त यथा

कुमारिका रसेनैव, वल्लमात्रा वटीकृता।
दत्ताशीत ज्वरंहंति, चातुर्थिकं विशेषतः॥
मरिच घृत योगेन, तक्रं पीत्वा चाहटोम।
एतया वमनं भूत्वा, ज्वरस्तस्मात् विनश्यति॥

गोपलकृष्ण

उपर्युक्त योग आयुर्वेदिक सिद्धान्त का मण्डन करते हैं। किन्तु अफ़सोस कि वैद्य गण इन अनुभूत योगों को छोड़ कर पेटेण्ट नुसखों के पीछे पड़ते हैं। उनका विचार है आयुर्वेदिक औषधियां हैं ही क्या। वे अपने कोष को जानते ही नहीं, जो जानते हैं वे समझते हैं अजी, चलो, वमन होते ही रोगी मुझे बेवकूफ़ समझेगा इत्यादि। अतः वद्यवर्गों से मेरी प्रार्थना है कि वे इन योगोंको प्रयोगमें लावें। यह मेरी कई वर्षों की आज़माई हुई है। फल शर्तिया है। वमन में उत्क्लेशादि लक्षण उग्र नहीं होते। रोगी आराम होते ही सैकड़ों आशीर्वाद देता है। अस्तु ऐसे ही शीतारि इत्यादि भी योग हैं।

गोदन्ती व धुस्तूर बीज

गोदन्ती को वर्त्तमान वैज्ञानिक श्वेतगंधक करके मानते हैं। बहुत से लोग इसे संखिया और गन्धक का योग मान कर हरताल भेद मानते हैं। या आयुर्वेदिक रस ग्रंथों में भी कहीं कहीं पर इसे आलभेद से ही उल्लेख किया है। अस्तुः—इस समय निश्चित हो चुका है कि गोदन्ती* गंधक भेद है इसकी प्रकृति दोनों में से कोई मानी जावे उष्णाही होगी। कफ़ शोषक तीव्र पाचक होने से यह भी बारी वाले बुखारों को रोकने वाला है। इसे संस्कारित कर और तीव्र बनाया जाता है। यथा—

गोदन्ती की डली १ पाव को दुग्ध व घृत-कुमारीमें शोधन करलो। स्वेदन विधिसे अब इस में के १ छ० को काल मेघ के रस में रगड़ो और पुट लगावो। ऐसी ७ भावना दो। पुनः चित्रक क्वाथ या स्वरस व वनतुलसी (कृष्णा) की

* गोदंती को पाश्चात्य खानिज वैज्ञानिक गंधक मानते हैं। विशेष विवरण के लिए हिंदी का 'आयुर्वेदीय खानिज' क० प्रतापसिंहजी रसायनचार्य बनारस द्वारा लिखित देखिए गंधक विवरण।

३-३ भावना दो और पुट लगादो। श्वेतभस्म मिलेगी।

मात्रा—१-४ रत्ती, रोगी के बलाबल का विचार कर दिन में ३-४ बार दो बुख़ार कम होगा और यदि बारी के बुख़ार को रोकना हो तो ३ घण्टे पहले से २-२ रत्ती की मात्रा दो। हठीले बुख़ार में मात्रा १ माशा तक दी जा सकती है खुश्की हो तो शर्बत अनार चटादो। प्रथम बार में ही वेग रुक जायगा। (यह विधि ललित हरि दातव्य औषधालय की है इसमें हिसाब लगाकर देखने से ८८% प्रतिशत रोगी इस बारी वाले बुखारों से त्राण पाये हैं। यह आंकड़ा ४४ हज़ार रोगियों पर अनुभव करके निकाला गया है।) ऐसे ही वैद्यगण चाहें तो और कल्पना मिश्रणोंकी करके उससे अनुभव कर सकते हैं। वैद्यों के नित्य प्रयोग में आने के कारण इसका विवरण विशेष नहीं लिखा गया।

धुस्तूर—उपविषोंमें से है। उष्ण व विकाशी है कफ शोषक व पाचक गुण इसमें होने से यह वेग रोधक होता है। इसके उपयोग (मूल चूर्ण, बीज चूर्ण व सत्व इन तीन प्रकारों से होता है) इसके सैकड़ों योग ग्रन्थों में हैं अतः विशेष विवरण देकर लेखका कलेवर नहीं बढ़ाया है।

नरसार व फटकरी

दोनों—क्षारीय तीव्र पाचक, कफ द्रावक व छेदक हैं। अतः ज्वर आने से पूर्व १-३ माशे की मात्रा में रोगी का बलाबल देखकर बताशे में दो। शर्तिया वेग बन्द होगा। स्फुटिका से नरसार का मंथन बहुत शीघ्र ज्वर आने से घण्टे पूर्व १-१ घण्टे पर देने से ३ मात्रा में वेग रोकता है।

संताप (ज्वर वटी) Anti Qunine: —

बहुत स डाक्टरों का ख़याल है कि आयुर्वेद में कुनीन के बराबर को कार्य करने वाली कोई औषधि नहीं है। रसों से कुछ कुछ फ़ायदा होता भी है तो बनस्पति से कुछ फ़ायदा नहीं होता। अथवा बहुत वैद्य भी ऐसा ही समझते हैं उन लोगों के कुतूहल को दूर करने के लिए ललित हरि आयुर्वेदिक कालेज की अन्वेषक समित (Research departmant) की एक औषधि प्रकाश अध्यक्षों की आज्ञा से व उनके परम अनुग्रह को प्राप्त कर किया जाता है। यह योग सर्वाधिकार सुरक्षित है फिर भी दिग्दर्शन इसलिये ही कराया कराया गया है जिससे वैद्य व डाक्टर इस विषय से परिचित हों। इसके लिए त्रयोविंशति अ० भा० वैद्य सम्मेलन बीकानेर ने प्रथम श्रेणी का मान पत्र साथ पदक के दिया है। उसके यौगिक मूल अवयवों का ही उल्लेख किया गया है क्योंकि इतना ही प्रकाशित करने की आज्ञा प्राप्त हुई है।

(शेष अगले अङ्क में)

अनुभूत प्रयोग और घरेलू चुटकले

इन से तिजारत करके लाभ उठावें

खिज़ाब—

सिलवर नाइट्रेट ३ ड्राम, निकिल सल्फ़ेट १२ ग्रेन, लाईकर अमोनिया फ़ोर्ट का वजन आवश्यकतानुसार।

विधिः—ऊपर की दोनों चीज़ों को अर्क गुलाब में घोल लेवें जब बिल्कुल घुलकर एक जान हो जावें तो तीसरी दवा को १-१ बूँद डालें, जब तक कि दोबारा तमाम जुज़ अच्छी तरह न घुल जावें। उसके बाद इतना अर्क गुलाब डालें कि सब १० तोले हो जावे बस तैयार है।

सेवन विधिः—बालों को साबुन से अच्छी तरह धोकर सुखा लें बाद में छोटे ब्रुश से दवा को लगावें और एक घण्टा ठहर जायें, फिर बालों को पानीसे धोकर कोई सा तेल लगावें।×

सिर दर्द पर लगाने का मरहम—

वैसलीन २० औंस, हार्डपैरफ़ीन १२ औंस, मैन्थोल ४ औंस, कैम्फ़र (कापूर) ४ औंस ऑइल ऑफ़ टरपन टाइन २ औंस ऑइल ऑफ़ यूक्लिप्टस २ औंस, ऑइल ऑफ़ विन्टरग्रीन २ औंस, ऑइल ऑफ़ सिट्रोनेला २ औंस।

विधिः—पहली दो चीज़ों को छोड़कर बाकी सब चीज़ों को चौड़े मुँह की बोतल में भरकर सख्त डाट लगादें और रख देवें जब तक कि वह सब न घुल जावें, फिर पहली दोनों चीज़ों को लेकर एक बर्तन में मिला कर बहुत हलकी आँच पर रक्खें, जब दोनों पिघल जावें तो आग से उतार लेवें फिर पहला तैयार किया मिक्शचर इसमें मिला कर चमचेसे हिलाते रहें, बस तैयार है, शीशियों में भरदें।

×यदि आप न बना सकें तो हमारे दवाखाने से मंगालें।

एण्टिसैप्टिक मौथ वाश

(सुगन्धित गंडूष)—थाइमौल ४ ग्रेन बैन ज़ोइक एसिड १४ ग्रेन टिंचर यूक्लिप्टस २२ बूँद, एसेन्स ऑफ़ पीपरमेंट ६ बूंद क्लोरोफ़ार्म १५ बूंद। एलकोहोल ३ बूंद। इन सबको मिलाकर शीशीमें भरलें। १५-२० बूँद एक गिलास जलमें डालकर कुल्ला किया करें। इससे मुखकी दुर्गन्ध—दांतों में पीप वगैरा और मुख और दांतोंके अनेक रोग दूर होते हैं।

खुशबूदारमंजन—

कोयला कीकर का २० भाग, चायना क्ले (चीनी मिट्टी) २० भाग, प्रेसिपिटेट चाक २० भाग, नीम के पत्ते १० भाग, काफूर ३ भाग, पीपरमेंट ३ भाग, रोज़ मेरी औयल १ भाग, पिग्मैंटकलर (सब्ज़ रंग) थोड़ासा सबको मिला कर तैयार करें। इस मंजन को रोज़ाना लगाते रहने से दांतों के अनेक रोग दूर होजाते हैं और दांत मोती के मानिन्द चमकदार बने रहते हैं।

श्री कविराज पं० गयाप्रसादजी शास्त्रीके कुछ अनुभूत प्रयोग

अपूर्व शक्तिवर्धक चूर्ण

गोखरू	५ तोला
ताल मखाना	५ ,,
शतावरि	५ ,,
सफ़ेद मूसली (दक्खिनी)	५ ,,
असगन्ध	१० ,,
सेमर का मूसला	५ ,,
बिदारीकन्द	५ ,,
बीजबन्द	५ ,,
कौंच के बीज	५ ,,
आंवला	५ ,,
सिंघाड़ा	५ ,,
मुलहठी	५ ,,
दाल चीनी	५ ,,
कबाब चीनी	५ ,,
श्वेत बिधारा	१० ,,
जायफल	२ ,,
नाग केसर	२ ,,
सौंफ	५ ,,
हल्दी	५ ,,
जंगी हरड़	१० ,,
सेमर का गोंद	५ ,,
बबूल का गोंद	५ ,,
छोटी इलायची	५ ,,

विधिः—ऊपर लिखी हुई औषधियों को कूट-पीस कर कपड़ छान कर लेना चाहिए। अनन्तर औषधों के चूर्ण के समान भाग मिश्री मिला कर प्रातः सायम् १ तो० चूर्ण गो दुग्ध के साथ सेवन करने से सब प्रकार का प्रमेह तथा प्रदर समूल नष्ट होता है।

गर्भस्राव रोधक

हाथी दांत का बुरादा	५ तोला
संगजराहत	२ ,,
माँई छोटी	२ ,,
ढाक का गोंद	२ ,,
छोटी इलायची	२ ,,
कमल केसर	२ ,,
नाग केसर (असली)	२ ,,
मिश्री	२० ,,

विधिः—ऊपर लिखी हुई औषधों को कूट-पीस कपड़े में छान कर रख लेना चाहिए।

मात्रा—३ माशा।

अनुपान—गो दुग्ध की लस्सी।

प्रदरारि वटी

पारद (शुद्ध)	२ तोला
गन्धक	२ ,,
नाग भस्म	४ ,,
रसौत (शुद्ध)	१२ ,,
पठानी लोध	२४ तोला

विधिः - प्रथम पारद—गन्धक की उत्तमोत्तम

सम्पादकीय समालोचना

कज्जली प्रस्तुत करके नाग भस्म तथा शेष दोनों औषधों का कपड़छन चूर्ण मिला कर अडूसा के स्वरस में एक दिन तक भली भांति घोट कर ४ रत्ती प्रमाण गोली बना लेना चाहिए। प्रातः-सायम् गो दुग्ध या जल के साथ सेवन करने से प्रदर रोग में अत्यधिक लाभ होता है।

स्वास्थ्य और रोग—

इस अद्वितीय पुस्तक के प्रसिद्ध लेखक श्रीमान् डाक्टर त्रिलोकीनाथजी वर्मा सिविल सर्जन महोदय हैं, आपने इससे पूर्व भी हमारे शरीरकी रचना नाम की पुस्तक प्रथम व द्वितीय भाग के रूप में लिखकर अर्द्धशिक्षित वैद्यसमाज का बड़ा उपकार किया है जिनकी उपयोगिता को बड़े २ योग्य विद्वान्, वैद्य, डाक्टर और हकीमों ने भी हृदय से स्वीकार किया है, वे ही महानुभाव इस उपरोक्त ग्रन्थ के भी लेखक हैं। आपने इस पुस्तक में स्वास्थ्य और रोग संबंधी विविध विषयों पर लिखते हुए अनेक प्रकार के मत मतान्तरों तथा भिन्न २ सामाजिक कुरीतियों की भी बड़े ओजस्वी और तर्क पूर्ण शब्दों में तीव्र आलोचना की है। यद्यपि इन बातों का स्वास्थ्य व रोग अथवा चिकित्सा से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, परन्तु फिर भी मानसिक विचारों का शरीर के स्वास्थ्य पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है, इसी विचार से आपने सामाजिक जीवन के विविध विषयों पर भी खूब लिखा है, आपने एक स्थान पर (प्र० अ० पृ० ४३) लिखा है कि जिस प्रकार हाकिम के पास उसके मातहत मनुष्य नज़र व भेंट लाते हैं, उसी प्रकार अज्ञानी और डरपोक मनुष्य ने अग्नि को जिमाना शुरू किया, हम आप के ऐसे २ विचारोंके साथ सहमत नहीं, क्योंकि अग्नि जिमाना, या हवन वग़ैरा करना, इत्यादि २ अनेक धार्मिक प्रथाओं के अन्दर हमें जब कभी कुछ गहराई के साथ विचार करने का अवसर मिला है तभी इनके मूल में अनेक गूढ़ सिद्धान्तों की धारणा हुई है। अग्नि में सुगन्धित द्रव्य कपूर, घृत तथा अनेक प्रकार के रोग नाशक द्रव्यों के डालने से वायु शुद्ध होकर मनुष्यों को जो स्वास्थ्य लाभ होता है वह तो प्रत्यक्ष ही है। इसके अतिरिक्त भोजन करने से पूर्व सभी बने हुए पदार्थों की थोड़ी २ मात्रा लेकर अग्नि में छोड़ने की प्रथा प्राचीन काल से चली आती है, इससे भोजन की उत्तमता और उसमें यदि किसी ने विष मिला दिया हो तो वह भी अच्छे प्रकार पता लग जाता है।

जैसा कि आयुर्वेद के अध्ययन करने वाले विद्वान् लोग जानते हैं कि अष्टांग हृदय (वागभट्ट) सूत्र स्थान अध्याय ७ अन्न रक्षाध्याय में राजा के वैद्य को सविष भोजन की पहिचान किस प्रकार बताई गई है—

वहां पर लिखा है-प्राप्याग्नं स विषं त्वग्निरेका-वर्तः स्फुटत्यति। शिखि कँठाभ धूमार्चिरनर्चिर्वो ग्रगंधवान्॥ अर्थात विषैले भोजन को अग्नि में डालने से बहुत तेज़ गन्ध वाला मोर के गर्दन के समान काला नीला रँग वाला धूँआ निकलता है इत्यादि २। इस प्रकार वर्तमान काल में शिक्षा के अभाव से मनुष्य इन धार्मिक कृत्यों के सिद्धांतों को अच्छे प्रकार न समझ सके परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं हो सकता कि वे प्राचीन प्रथायें भ्रम पूर्ण व अविश्वासनीय हैं। इसी प्रकार आपने और भी अनीश्वर वाद इत्यादि के विषय में भी लिखा है जिसका यहां उल्लेख करना अनुचित सा प्रतीत होता है, हम तो नहीं कह सकते कि इस आधुनिक भौतिक विज्ञान के प्रवाह में बहते हुए आप जैसे विद्वानों के इन विचारों में कहां तक सत्य व स्थिरता है, परन्तु इसमें किंचिन्मात्र भी सन्देह नहीं कि आपने इन विषयों पर जो प्रकाश डाला है तथा जिन युक्तियों का अवलम्बन किया है वे एक बुद्धिमान के विचारों में क्रान्ति उत्पन्न करके उसके लिये विचारास्पद हो जाती हैं। इस प्रकार से आपने प्रथम अध्याय को समाप्त करके अग्रिम अध्यायों में क्रमशः स्वास्थ्य क्या चीज़ है, जीवाणु शरीर में किस प्रकार प्रविष्ट होकर रोग को उत्पन्न करते हैं, भोजन के आवश्यकीय अंश प्रोटीन, वसा, कर्बोज जल, लवण इत्यादि की मात्रा का भिन्न २ पदार्थों में उपस्थित होना, तथा हैज़ा (विशूचिका) क्षय, (नवैदिक) चेचक, खसरा, इन्फ्लुइंजा, मलेरिया, डेंगूफीवर, प्लेग इत्यादि भयङ्कर सांक्रामिक रोगों की उत्पत्ति व, उनके लक्षण, संक्षेप में उनकी चिकित्सा व बचने के उपाय भी बड़ी उत्तमता से लिखे गये हैं, जिससे वैद्य, हकीम, डाक्टरों के अतिरिक्त प्रत्येक साधारण गृहस्थी भी अच्छे प्रकार से ज्ञान प्राप्त करके अपने परिवार की रक्षा कर सकता है। इसी प्रकार और भी दैनिक कार्य में आने वाले अनेक गृहस्थ सम्बन्धी विषयों को बड़ी खूबी के साथ लिखकर और साथ २ अनेक प्रकार के करीब १०० सौ चित्रों से इस पुस्तक को अलंकृत करके बड़ी योग्यता के साथ ८६४ पृष्ठों और २८ अध्यायों में पूर्ण किया है।

इस पुस्तक को इतना सर्व साधारणोपयोगी बनाते हुए भी आपने इसका मूल्य सिर्फ ६) रु० ही रक्खा है, पुस्तक की छपाई आकार प्रकार सभी सुन्दर हैं पुस्तक मनन करने योग्य तथा हृदयङ्गम करने के लायक है। हम आशा करते हैं कि पाठकगण इस पुस्तक से अवश्य लाभ उठा कर लेखक महोदय के परिश्रम को सफल करेंगे।

आसवारिष्ट संग्रह—

इस पुस्तक के नाम से ही इसमें प्रतिपादित विषयका अच्छी प्रकार ज्ञान होजाता है. इसके लेखक कविराज जगदीशप्रसाद जी गर्ग (बिजनौर) हैं, जिन्होंने बड़ी योग्यता के साथ अनेक आयुर्वेदीय ग्रन्थों से उपयोगी तथा प्रसिद्ध आसव अरिष्ट

के प्रयोगों को बड़े परिश्रमसे इकट्ठा करके स्वतंत्र ही इस विषय को एक पुस्तक के रूप में वैद्य समाज के सन्मुख रक्खा है। इस पुस्तक में आसवारिष्ट निर्माण विधि शीर्षक के साथ एक विस्तृत निबन्ध भी लिखा हुआ है, जिसके लेखक आयुर्वेदाचार्य कविराज श्री पं० हरदयाल जी वैद्य वाचस्पति प्रोफेसर दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज लाहौर हैं। आप ने बड़ी योग्यता से वैज्ञानिक सिद्धान्तानुसार आसव की पक्वापक्व अवस्था, उसमें होने वाले रासायनिक परिवर्तन कार्बोनिक गैस और आसवीय द्रवद्रव्यों में लोह सुवर्णादि धातुओं को किस प्रकार विलीन करना चाहिए इत्यादि अनेक आवश्यकीय विषयों पर अपने निबंध में विज्ञान पूर्ण प्रकाश डालकर इस पुस्तक की उपयोगिता को और भी अधिक कर दिया है। पुस्तक उपयोगी तथा मनन करने योग्य है। इसमें पृष्ठ संख्या १५० डेढ़ सौ के करीब है, छपाई, सफाई सभी श्रेष्ठ है। हम आशा करते हैं कि वैद्यबन्धु इस से लाभ उठा कर लेखक के परिश्रम की सराहना करेंगे। मूल्य सिर्फ १।) है।

—सम्पादक।

ग्राहकों को सूचना

ग्राहकों से निवेदन है कि गत जनवरी मास से 'सुधा' ने अपने शैशव काल को समाप्त कर के पंचम वर्ष में प्रवेश किया है, सुधा के इस प्रकार प्रतिवर्ष आशातीत उन्नति करने तथा लोकप्रिय होने में आप महानुभावों का सहयोग एवं सहायता ही कारण है। इसीलिए सुधा ने अपने प्रेमी पाठकों से सिर्फ दो रुपया वार्षिक मूल्य ही लेना पर्याप्त समझा है। जिससे कि इसके पाठक पहले से भी अधिक उत्साहित होकर सदैव की तरह इसकी सहायता करते रहें, इसलिए आप लोगों से प्रार्थना है कि अब पञ्चम वर्ष का मूल्य जो कि सिर्फ दो रुपया मात्र है शीघ्र से शीघ्र जीवन सुधा कार्यालय में भेजकर अनुगृहीत करें। जिससे हमें भी व्यर्थ में रजिस्ट्रेशन व डाक व्यय खर्च न करना पड़े और हम आपकी सेवा पहले से भी अच्छी प्रकार कर सकें। और जो महानुभाव वार्षिक मूल्य न भेजें उनके नाम मार्च का अङ्क जो अप्रैल की एक तारीख को निकलेगा वी० पी० द्वारा भेजा जायगा। इसीलिए जो पाठकगण आगामी वर्ष का ग्राहक होना स्वीकार न करें वह मार्च की ता० ३१ तक ही हमें अवश्य सूचित कर दें।

नोट—जो महाशय हमें सिर्फ पाँच ग्राहक बना देंगे उनके नाम सहायक सूची में धन्यवाद सहित छाप कर साल भर तक जीवन सुधा उनके पास विशेषाङ्क सहित मुफ्त भेजा जायगा। ऐसे उपयोगी पत्र के लिए दो रुपया कौनसी बड़ी बात है इसलिए हम अपने पाठकों से अनुरोध करते हैं कि वे इस कार्य में अवश्य हमारी सहायता करेंगे।

भवदीय—

सम्पादक

अपूर्व ! दर्शनीय !! अनूठा !!!

भा० दि० जैन परिषद् के साप्ताहिक वीर का विशेषांक

जैन "वीरांक"

जैन पत्र संसार में क्रान्तिकारी दर्शनीय वस्तु और एक संग्रहणी चीज होगा। वीर रससे बुदबुदाती यह रचना जैन जगत में जीवन का संचार और जैन धर्म का गौरव लोकमें स्थापित करेगी। जैन पूर्वजों की वीरता और शौर्य से यदि अपने हृदयों को आप पवित्र करना चाहते हैं तो फौरन ही इस विशेषांक को प्राप्त करने के लिये वीरके ग्राहक बन जाइये। विशेषांक प्रेस को दिया जा चुका है और वह छपने लगा है। इसलिये वह ठीक—

श्री महावीर जयन्ती की पुन्य तिथि को प्रकट हो जायगा

विशेषाङ्क में सारगर्भित ओजस्वी लेख, हृदय को अंकुरित करने वाली कवितायें, मन मोहक वीर भावोत्पादक कहानियां और मार्मिक टिप्पणियां पढ़िये।

देखिए, विशेषांक के भुवन विख्यात लेखक कौन हैं

सर्व श्री प्रो० ओटो स्टीन प्राह यूरुप, प्रो० बी० शेषागिरि राउ, प्रो० के० जी. कुन्दनगर, प्रो० विधुरशेखर भट्टाचार्य शान्तिनिकेतन, पं० चम्पतराय जैन बैरिष्टर, राज शिरोमणि के० बसवराज अरस, पं० चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ, पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री, मास्टर वर्द्धमान हेगड़े इत्यादि।

वीरांक के सुकवि लेखक ये हैं, देखिए

कविवर श्री कल्याणकुमार जी शशि, स्नातक राजकुमार जी विद्याभूषण, काव्यकलानिधि प० मूलचन्द्र जी वत्सल, श्री गुणभद्र जैन प्रभृति।

देखिए, इस अंक के प्रसिद्ध कहानी लेखक

श्री जैनेन्द्रकुमार जी, आचार्य जगदीशचन्द्र जी, पं० कन्हैयालाल जी मिश्र आदि

वीरांक के कुशल चित्रकार यह हैं
श्रीमान मंजय हेगड़े, श्रीयुत शाह

कई दर्शनीय रंगीन और सादा चित्र होंगे जो सोने में सुगन्धि की उक्ति चरितार्थ करेंगे। बस इस अनूठे विशेषांक को प्राप्त करने के लिये आज ही एक पत्र निम्न पते पर लिखिये। मूल्य १) 'वीर' के ग्राहकों को भेंट।

वीर जैन समाज का निडर और निर्भय होकर सुधारक, सर्व श्रेष्ठ सुन्दर और सचित्र साप्ताहिक पत्र है। इसमें जोरदार टिप्पणियां, महत्वपूर्ण लेख, मनोरंजक कहानियां महिला महिमा, विज्ञान आदि २ विषयों से विभूषित सप्ताह भर के समाजिक व्यापारिक तथा तथा देश विदेश के समाचार। वार्षिक मूल्य ३) रुपया

प्रकाशक 'वीर', मल्हीपुर प्रेस, (सहारनपुर)

आवश्यकीय सूचना

प्रिय पाठकगण हमारे पास इस समय ऐसे सुयोग्य विद्वान व चिकित्सक एक व्यक्ति मौजूद हैं कि जिन्होंने डाक्टरी व आयुर्वेदिक अनेक संस्थाओं से सोने व चांदी के मैडिल तथा अनेक प्रशंसापत्र प्राप्त किये हैं, तथा डी० ए० वी० कालिज लाहौर की सर्वोच्च वैद्यवाचस्पति तथा पंजाब की संस्कृत में सबसे बड़ी शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करके कलकत्ता आदि की अनेक प्रमाणिक संस्थाओं से भी सार्टीफिकेट इत्यादि प्राप्त किये हैं। जिनमें से कुछ उपाधियां निम्नांकित हैं—

Kaviraj M. A. M. S., D. Sc. M. D. (wash), M. B. (cal.) H. M. D.
Ayurvedacharya Vaid Vachaspati, Vidya Nidhi, Chikitsak Churamani.

इत्यादि उपाधियों से विभूषित हैं। और इस समय अपनी प्राइवेट प्रेक्टिश एक अच्छे शहर में कर रहे हैं। परन्तु आप उदार चित्त होने के कारण किसी धर्मार्थ औषधालय में काम करना चाहते हैं। इसलिये मैं निवेदन करता हूँ कि आप ऐसे योग्य विद्वान चिकित्सक महोदय के लिये स्थान मालूम होने पर जीवन सुधा कार्यालय को सूचित करें। —सम्पादक।

REGD. NO. L. 2701.

वैद्यराज पं० महावीरप्रसादजी के लिए इन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, कूचा तारासाम, देहली में छपा।

जीवन-सुधा

राजवैद्य श्री पं० महावीरप्रसाद जी रसायन-शास्त्री

प्रकाशक—

जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—

प्रोफ़ेसर पं० भगवद्दत्त शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क =)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥, एक अङ्क का ≈), धर्मार्थ औषधालयों व छात्रों को १॥) वार्षिक में भेजी जायगी. सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक, होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो फिर मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्त्ता

बृहत् आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार, जौहरी बाजार देहली

ॐ

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री प० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय तार के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी।

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ५ | फाल्गुण, वीरनिर्वाण सं० २४६१, वि० सं० १९९१, मार्च सन् १९३५ | अङ्क ३

स्वास्थ्य-सुधा

दन्त धावन करके हम, कुल्ला करें इक तेल का।
तेल हो सर्षप का सुन्दर, स्वच्छ व बिन मेल का॥
कण्ठ शोषण, दन्तपीड़ा, भाग जाती हैं सभी।
तेल में पाकर के वायु होंठ फटने के नहीं॥
दाँत दृढ़ हो जायें हिलने, रोग मुख के नष्ट हों।
कान्ति मुख की स्थिर रहे, रद में न कोई कष्ट हो॥
है चरक भगवान् का मत तेल का कुल्ला करो।
वज्र दाँतों को बनालो, रोग मुख के परिहरो॥

मलेरिया (विषम) ज्वर की चिकित्सा

[ले० श्री पं० विश्वनाथ झा शास्त्री, प्रिन्सिपल ललित हरिकालेज, पीलीभीत]

(गताङ्क से आगे)

संताप के मूल यन्त्रः—

विष मुष्टि त्वक सत्व, काल मेघ सत्व, सप्तपर्णा त्वक सत्व, यही तीन मूल पदार्थ हैं जिनके एक निश्चित मात्रा में मिलने से 'संताप' तैयार होता है। इसके सत्व क्वाथ को घना (गाढ़ा) करके ही बनते हैं। क्वथित होते वक्त बहुत सा विषाक्त भाग नष्ट हो जाता है। अतः कोई विकार अधिक सेवन पर भी दृष्टि गोचर नहीं होता। जैसा कि कुनीन के सेवन से सिनकोनिज़म को होते पहले देखा गया है। ऊपर वाले द्रव्यों को मिला चनके बराबर गोली बना देते हैं।

गुण व प्रभाव—

यह अति तिक्त वल्य, संकोचक, ज्वरहर तथा ज्वर के वेग को रोकने वाला है। ज्वर से पूर्व ३ घण्टे एक एक गोली घण्टे भर के अन्तर से दी जाने पर हर तरह के बारी वाले बुखारों को रोकने के लिए गोली सा असर दिखलाता है। तिक्त होने के कारण हर एक को कुनीन सम्मिश्रण का भ्रम पैदा होता है। किन्तु विज्ञ वैद्य उपर्युक्त वनौषधियों के स्वाद को समझकर इसके स्वाद का अनुमान लगा सकते हैं। आमाशय में जाकर के ही रक्त में मिश्रित होता है और मलेरिया के कीटाणुओं को रक्तकणों में प्रविष्ट होने के पहले ही मार डालता है अतः ज्वर का वेग रुक जाता है।

परीक्षा—

जिस किसी को भ्रम हो एक टेस्ट ट्यूब में

मैलेरिया पैरा साइट (मैलेरिया के कीटाणु) को व एक और ट्यूब (परीक्षण नलिका) में मैलेरिया के कीटाणु लेवे दोनों में एक साथ ही एक में कुनीन और दूसरे में सन्ताप को बराबर मात्रा में डाल देवें। देखेंगे थोड़े ही देर में कीटाणु मर गए। संताप का कार्य कुनीन से भी तीव्र है। कीटाणु नाशक शक्ति इसकी कुनीन से तीव्र है। जिसे सन्देह हो (डाक्टर, वैद्य अथवा और कोई भी) ।) आ० के टिकट भेज कर नमूना मंगा सकते व परीक्षा कर सकते हैं। बड़ी संस्थाओं को लिखने पर मुफ्त भी भेजा जायगा।

प्रयोग—

(१) ज्वर में ५ ग्रेन से १५ ग्रेन तक दे सकते हैं। उष्णोदक के साथ इसके सेवन करते ही ज्वर का वेग रुक जाता है। तीव्र ज्वर में ज्वर के वेग कम होने पर इस को देवें। पसीना आकर ज्वर उतर जायेगा। यदि विबंध होगा तो उष्णोदक अनुपान रखने पर एक दो दस्त भी आजायेंगे। बारी वाले बुखारों पर इसका असर बहुत शीघ्र होता है। ज्वर के साथ के अंगमर्दादिक उपद्रव भी दूर हो जाते हैं।

(२) वात व्याधि में—एक गोली या चूर्ण २—५ ग्रेन उष्णोदक से शीघ्र असर करती व वात-व्याधि के दर्द को दूर करती है।

(३) उदराध्मान—इसमें ३ रत्ती की मात्रा में मुनक्का १० दाने के अनुपात से आध्मानादि उदर रोग शीघ्र दूर हो जाते हैं।

(४) स्वस्थ्य मनुष्य के तापक्रम पर इस का असर नहीं होता। यदि मैलेरिया संक्रमणकाल में नित्य इसका सेवन किया जाय तो विकार नहीं हो पाता। इनफ्लुएंज़ा और शीर्ष सौषुम्न ज्वर (गर्दन तोड़ बुखार) में भी यह तीव्र असर करता है। इसके प्रकोप स्थलों पर सेवन करने से ये रोग नहीं होते।

सावधानी—चढ़े बुखार व तरुण ज्वर में नहीं देना चाहिए। जब ज्वर का वेग कम पड़ने लगे दो। यदि ज्वर हटीला है तो अधिक मात्रा में १५ रत्ती तक दे सकते हो। रोगी के बलाबल का ध्यान रखना बहुत ही आवश्यक है।

(५) निद्रा—ज्वर की तीव्रावस्था में अक्सर बेचैनी होकर नींद नहीं आती इसके सेवन करते ही नींद आजाती है।

(६) इसको ज्वर की उन अवस्थाओं में जब हृदयावसाद दिखलाई पड़े, मन मुरझाया हुवा, रोगी अपने को बहुत निर्बल समझे इसका सेवन हृदय को उत्तेजित करता व बल देता है।

(७) ज्वर त्याग के बाद भी आधी गोली या २–५ ग्रेन मात्रा में सेवन रोगी की हालत को शीघ्र सुधारती व ताक़त देती है।

(८) एक बार इससे ज्वर शांत होकर पुन नहीं आता। जैसा कुनीन से देखा जाता है।

पथ्य—दूध, दूध साबूदाना, दूध बार्ली, दूध व मंड, पेया वगैरह।

ऊपर जितने योग वर्णित हैं सब शीत पूर्व ज्वर (शीत ज्वर) में ही अधिक कार्य करते हैं।

दाह पूर्व ज्वर में—चन्दनादि लोह, विषम ज्वरांतक लोह, ह्री बेरादि तैल (देखो तैल रहस्य लेखक निर्मित) का प्रयोग अधिक हितकर है।

पलविस, ग्लाइकोसोल इत्यादि अनेकों हैं।

सैलीसीन (Salicin) भी इसी की जाति का कड़वे स्वाद का है। मात्रा-५-२० ग्रेन। दिन भर में ६ माशे तक दिया जा सकता है।

प्रभाव व प्रयोग-Actions+Uses

सैलीसिलिक एसिड और सैलीसिन दोनों शुद्धिकारक हैं। २% प्रति शत द्रव (Solution) कीड़े मारता और सड़न रोकता है। इसके अम्ल (Acids) के ही ये गुण हैं। अन्य मिश्रणों के ये गुण नहीं हैं। सूंघने से छींकें तथा खांसी पैदा करता है।

यह पेट में जलन पैदा करता है। सोडियम सैलीसिलेट, सैलीसीन व एसपिरिन जलन पैदा नहीं करते। सैलीसिन तिक्त, वात वर्द्धक और पाचक है। एसपिरिन के ऊपर आमाशय की क्रियायें नहीं होतीं। आंतों में जाकर यह सो० सैलीसिलेट और सो० एसीटेट के रूप में अलग अलग हो जाते हैं।

सैलिसिलेट साधारण मात्रा में ज्वर को उतार देती है। २०-३० ग्रेन की मात्रा में देने से १०५ डिग्री का बुखार १०१ होजाता है। इससे पसीना खूब आता है सैलीसिलेट और एसपिरिन पित्त वर्द्धक हैं। दर्द दूर करने व ज्वर उतारने के लिए यह विशेष शक्तिशाली है।

इसके अवगुण अधिक सेवन करने पर सिनकोना के समान हैं। आरम्भ में कानों में भनभनाहट, नेत्र शक्ति हीनता व शिरः पीड़ा देखी जाती है। जब ये लक्षण पैदा हों तो यह दवा बंद कर देनी चाहिए। इसके बाद भी दवा दीजाय तो कै, दस्त, बहरापन, प्रलाप, नाड़ी शैथिल्य, नासिका व पेशाब से रक्त निकलने लगता है। श्वास गम्भीर चलेगी और यहां तक कि मृत्यु श्वासावरोध होकर हो सकती है।

साधारण फोड़ों पर इसका अवचूर्णन व्रण को सुखा देता है। गठिया की यह खास दवा है इससे बुखार कम होता तथा सूजन घट जाती है, दर्द बन्द होजाता है। २०-३० ग्रेन इसे हर दो घंटे के अंतर से देना चाहिए। इसके साथ बाइ कार्बोनेट of सोडा मिलाना हितकर है। इसका अधिक सेवन हृदय को कमज़ोर करता व हृदयावरण में दाह पैदा करता है।

यकृत की दुर्बलता में इसका उपयोग हितकर है। अश्मरी तोड़ने व वृक्कशूल दूर करने को यह—सोडा सैलीसिलास व एसपिरिन के साथ देना उचित है। सोडियम सैलीसिलेट व एसपिरिन मधुमेह की शकरा को कम कर देते हैं।

नोट—(१) हमेशा इसे घोल बना कर दो (२) कुनीन के संग मत दो। घोल इससे फट जायगा। (३) सोडा बाई कार्ब के साथ देने पर अरोचक कम होगा। (४) इसके सेवन से कै हो तो ब्रोमाइड्स मिला कर दो।

ऊपर लिखे वर्णन चिकित्सा प्रणाली से न लिख कर अथवा रोगावस्था के अनुकूल न लिख कर एक साधारण आयुर्वैदिक और एलोपैथिक साम्य को रख कर एक श्रेणी विभाग से किया गया है। सम्भव है बहुत से पाठक इसे पढ़ कर नाक भौं सिकोड़ें। इस लिये उनसे प्रार्थना है कि वे इसे ध्यान पूर्वक पढ़ें और इसमें की त्रुटियां

(लेखक—श्री डाक्टर एस० जी० मुकर्जी)

चिकित्सा का प्राकृतिक विधान जिसे होम्योपैथिक कहते हैं, डाक्टर सैमूयेल हैनिमैन ने उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में आविष्कार किया था। इस महा पुरुष का जन्म सन् १७५५ ई० की १० वीं

ज्ञात करावें। नुस्खे बहुत से कल्पना करके लिखे जा सकते हैं किन्तु यहां पर केवल अनुभूत व ब्रिटिश फार्माकोपिया इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका की सम्मति लेकर लिखा गया है। इसमें के प्रत्येक गुण व प्रभाव परीक्षा करने योग्य हैं। इन्हें परीक्षक परीक्षा की कसौटी पर कस कर ठीक पाने पर विशेष प्रसन्न होंगे। जो कुछ संदेह हो व गलती मालूम हो लेखक को सूचना देने पर शीघ्र उसके परिमार्जन का उपाय किया जायगा।

अप्रैल को जर्मनी के मिसेन नगर में हुआ और १८४३ ईसवी की २ जुलाई को फ्रान्स के पेरिस नगर में उनकी मृत्यु हुई। उनका यह पांच भौतिक शरीर अदृश्यतिरोहित हो गया, लेकिन उनकी आत्मा प्राकृतिक सत्य होम्योपैथीके अमर कलेवरमें अब भी वर्तमान है, और सदा रहेगी। इस प्राकृतिक नियमावलम्बित चिकित्सा प्रणाली ने चिकित्सा जगत् में एक क्रान्ति सी उत्पन्न कर दी है, इसकी आश्चर्यमय आरोग्यकारिणी शक्ति ने अन्य चिकित्सा शैली के बड़े २ डाक्टरों को भी विस्मित कर दिया है किन्तु न तो वे अपने उस द्रव्य प्राप्ति साधक व्यवसाय को छोड़ सकते हैं, और न लोक लज्जा के भय से खुल्लम खुल्ला होम्योपैथी को ग्रहण ही कर सकते हैं। हां कभी कभी छिप छिप कर इससे लाभ उठाते हैं। प्राकृतिक नियम अनिवार्य है, उसे मनुष्य त्याग नहीं सकता। अस्तु ज्यों २ मनुष्य जाति

का सूक्ष्म ज्ञान बढ़ता जाता है, त्यों २ होम्योपैथी का विस्तार होता जाता है, और यही कारण है कि आज समग्र पृथ्वी के लाखों शिक्षित लोगों ने इस आदर्श शिक्षा प्रणाली को ग्रहण किया है, और उससे आशातीत लाभ उठा रहे हैं।

होम्योपैथी क्या है ?

किसी विशेष औषध द्रव्य के सेवन से एक स्वस्थ मनुष्य में जो शारीरिक तथा मानसिक उपद्रव या लक्षण प्रकाश पाते हैं रोगवश किसी मनुष्य के शरीर और मन में उसी प्रकार के उपद्रव या लक्षण उपस्थित होने पर, उसी औषध के सेवन करने से वह सर्व लक्षण दूर हो जाते हैं। इसी का नाम सदृश विधान सम हसम समयतिया होम्योपैथी है। इसको अंग्रेजी में Similia — Similibus— Curantur सिमिलिया सिमिलिबस क्यूरेण्टर कहते हैं।

एलोपैथी क्या है ?

रोग विरोधी मत अर्थात् रोग के विपरीत अवस्था का उत्पादन करके रोग के दूर करने को एलोपैथी अर्थात् कन्ट्रेरिया कन्ट्रेरिस—Contraria Contraris कहते हैं। जैसे धारक (कब्ज करने वाली) औषध का प्रयोग करके दस्त को बन्द करना या कब्ज में रेचक औषधि द्वारा दस्त कराकर कब्ज की चिकित्सा करना इत्यादि। होम्योपैथी में स्वस्थ या नव शरीर पर औषधियों की परीक्षा होती है परन्तु एलोपैथी में बिल्ली कुत्ते, मेंढक आदि जानवरों पर परीक्षा की जाती है। क्या बिल्ली कुत्ते आदि जानवरों के तथा मनुष्यों के मानसिक लक्षण समान हो सकते हैं ?

एलोपैथिक चिकित्सा में हर रोज तबदीलियाँ होती रहती हैं और प्रत्येक चिकित्सक अपने अपने विचारानुसार नई नई चाल चलाते जाते हैं। कारण उनकी चिकित्सा प्रणालीमें कोई मूल तथा निश्चित सिद्धान्त नहीं है जिस के आधार पर वे सब सम्मत हो कर काम कर सकें। परन्तु होम्योपैथी प्राकृतिक नियम के आधार पर स्थापित होने के कारण कभी बदलती नहीं। विज्ञान में जो आज सत्य है वो सर्वदा सत्य रहेगा। होम्योपैथिक चिकित्सा ने अन्यान्य सर्व प्रकार की चिकित्साओं में सर्वोच्च स्थान ग्रहण किया है, यह बात इस चिकित्सा के विरुद्ध मतावलम्बीगण भी दिल ही दिल में स्वीकार करते हैं। आइरबर में शस्त्र चिकित्सा अर्थात् सर्जरी (Surgery) द्वारा शस्त्र क्रिया होने पर भी अति साधारण फोड़े, बिसहरी (whitlow), स्तन के फोड़े (Breast tumours) इत्यादि का अकसर नासूर होते हुए, विपरीत चिकित्सा द्वारा अथवा अत्यधिक औषध के प्रयोग के बाद रोग को जटिल और अचिकित्स्य होते हुए, अधिक कुनाईन के सेवन के बाद रोगी बहरा और अन्धा होते, तिल्ली के बढ़ते हुए, पुराने रोगों के आराम होने के बजाय हानि पहुँचते हुए तथा इसी प्रकार के उस चिकित्सा के अन्य विस्मय परिणाम को देख कर बुद्धिमानों में उस चिकित्सा के प्रति श्रद्धा घटती जाती है। यही कारण है कि इतने अल्प समय में भारत-

वर्ष में होम्योपैथी ने इतना गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त किया है। यह अवश्य ही स्वीकार्य है।

रोग किसे कहते हैं ?

इस विषय को समझने के पहिले हमें यह समझना चाहिये कि मनुष्य क्या है ? मनुष्य क्या केवल हाथ, पांव, कान, नाक, जिगर, तिल्ली, फेफड़ा इत्यादि का समष्टि है —या इसके सिवाय और भी कुछ है ? यदि वह हाथ पांव इत्यादि का समष्टि ही होता तो उसमें और एक मशीन (machine) कल जैसे घड़ी इत्यादि में कोई फर्क न रहता। मशीन का प्रत्येक भाग अलग अलग एक दूसरे की सहायता से काम कर रहा है, यदि उसकी एक कल खराब हो जाय तो उसे मरम्मत करने ही से वह फिर काम करने लगेगी। मगर मनुष्य में भिन्न २ अंगों के अतिरिक्त कुछ और भी है। उस में जीवन शक्ति और मन है। मनुष्य और मशीन में यही भेद है। जब प्राण देह से निकल जाता है तब फिर मनुष्य को रोग नहीं हो सकता। इस प्राण के रहते हुए ही मनुष्य को रोग होना सम्भव है। कारण मृत शरीर को रोग नहीं होता जैसे किसी मेज़ या, कुर्सी इत्यादि अचेतन पदार्थको रोग नहीं होता। जीवन शक्ति ही मानव शरीर यन्त्र का विधिवत् संचालन करता एवं उसकी रक्षा के लिये सदैव व्यस्त रहती है। अस्तु यह प्रगट हो गया कि स्थूल शरीर पर रोग का आक्रमण न होता है और न हो ही सकता है। इसका प्रभाव जीवनशक्ति (Bitalforce) पर ही पड़ता है। जीवनशक्ति सूक्ष्म और अदृश्य है इसलिये इस में विकृति उत्पन्न करने वाली रोग शक्ति (morbific force) भी सूक्ष्म तथा अदृश्य होनी चाहिये। इस धारणा को स्वीकार करने में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती। रोग शक्ति और जीवन शक्ति दोनों में अत्यन्त शत्रुता है रोग शक्ति जीवन शक्ति को नष्ट करने की चेष्टा करता है, मगर जीवन शक्ति देह की रक्षा करने के लिये यथासाध्य रोग शक्ति को परास्त करने की चेष्टा करती है। इस प्रकार संघर्ष दोनों शक्तियों में सदैव होता रहता है। किन्तु जब रोग शक्ति अधिक प्रबल होती है तब जीवन शक्ति उसे अपने वशमें नहीं कर सकती, और उसे अभिभूत होना पड़ता है, अतः स्वभावतः समस्त देह यन्त्रों में भी विपर्यय उपस्थित होता है और नाना प्रकार के लक्षण प्रकाश करता है। राज्य के राजा ही में यदि शान्ति न रहे तो प्रजा के अन्दर शान्ति कैसे रह सकती है।

जिस प्रकार दृश्यमान शाखा प्रशाखा तथा भूम्यन्तस्थ अदृश्य जड़ें मिल कर एक चीज़ वृक्ष है; उसी प्रकार जीवन शक्ति की अदृश्य विकृति और ऊपर की अस्वाभाविक लक्षण समष्टि दोनों मिलकर एक चीज़—रोग है। वृक्ष कहने से जैसे साधारणतः हम लोग लोचन गोचर वस्तु का ही ख्याल करते हैं, उसी प्रकार रोग कहने से हम लोगों को ऊपर के लक्षण समूह का ही बोध होता है। वृक्ष का मूल ही जैसे समस्त वृक्ष का परिपोषक है, अदृश्य होने पर भी जैसे मूल ही समस्त वृक्ष की उत्पत्ति और पोषण का कारण है, जीवन शक्ति की विकृति भी उसी प्रकार रोगोत्प

त्पत्ति का हेतु है और उसकी रोग परिपोषक आन्तरिक विकृति के द्वारा ही रोग लक्षणादि सृजित होकर देह पर लक्षित होते हैं। अतएव बाह्य लक्षण समूह तथा सूक्ष्म जीवन शक्ति की विकृति अभिन्न हैं। समझने की सुविधा के लिये ही हम इन्हें पृथक् भाव से कहा करते हैं।

होम्योपैथिक औषधि की शक्ति —

बिना शक्ति के कोई काम पूरा नहीं हो सकता। उसके प्राप्त करने के उद्देश्य से ही हिन्दुओं में शक्ति देवी की साधना प्रचलित है। शक्तिदेवी की कृपा से जैसे तुच्छ मनुष्य शक्तिशाली हो सकता है, उसी तरह महात्मा हैनिमान की कृपा से निर्जीव, निष्क्रिय पदार्थ ने भी भीषण रोगोत्पादिका और रोगनाशिनी शक्ति को प्राप्त किया है। यह शक्ति स्थूल शक्ति नहीं है, यह सूक्ष्म शक्ति बाहिर की इन्द्रियों और जड़ बुद्धि के अतीत है। इसीलिये जड़वादी इसकी हंसी करते हैं। शक्ति के बहुतेरे श्रेष्ठ पुत्र पागल के नाम से विख्यात हैं। इस से उनको कुछ भी लाभ हानि नहीं होती। मगर श्रद्धावान् मनुष्य उनके आशीर्वाद से बहुत कुछ लाभ उठाते हैं। इसी प्रकार से समलक्षण तत्व के समझने वाले होम्योपैथिक औषधि की शक्ति से विशेष लाभ उठाते हैं, इसमें कोई भी सन्देह नहीं।

हम अब इस निश्चय पर पहुँचे कि (१) रोग का यथार्थ कारण सूक्ष्म है, (२) यथार्थ मनुष्य या जीव जिसे रोग होता है वह भी सूक्ष्म है (३) मनुष्य के सूक्ष्म होने की ही वजह से सूक्ष्मकारण के बिना उसे रोग नहीं हो सकता (४) इसीलिए सूक्ष्म शक्ति सम्पन्न औषधि के बिना रोग भी आराम नहीं हो सकता। योगं योगेन योजयेत्। यही नीति समीचीन और सुसंगत है। इसीलिये महात्मा हैनीमैन ने विघर्षण और आलोडन (The process of trituration and Succussion) क्रिया विशेष द्वारा स्थूल औषधि को प्राण शक्ति सदृश सूक्ष्म रूप दिया है। "Medicinal substances are not dead masses in the ordinary sense of the term, on the contrary, their true essential nature is only dynamically spiritual, in pure force, which may be increased in potency almost to an infinite degree, by that very remarkable process of trituration and succussion according to the homeopathic method."

Hahnemann's materia medica pure—

सुचारु रूप से किसी भी काम के करने के लिए एक विशेष विधि अपेक्षित है जिसके अनुसार चलने में उस कार्य में सिद्ध लाभ होता है. इसी प्रकार होम्योपैथिक मैटीरिया मैडिका को हृदयङ्गम करने के लिये भी किसी विशेष पाठन विधि को ग्रहण करना आवश्यक है। विधि पूर्वक पाठ करने से यह अति शीघ्र कण्ठस्थ किया जा सकता है।

(शेष फिर)
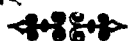
शिशु रक्षाविधान

[ले० कविराज पं० काशीनाथ जी आयुर्वेदाचार्य (चिकित्सक बाबा कमली वाले धर्मार्थ औषधालय)]

प्रथम पुष्प

मनुष्य जीवन का सार, गृहस्थका अमूल्य रत्न, तमाम आशाओं का समुद्र, शिशु (बच्चा) है। माता पिताओं का परम कर्तव्य है कि बालक के उत्पन्न होते ही उसकी रक्षा के लिये परमोत्कृष्ट उपायों को कार्य में लावें। अगर माता पिता शिशु रक्षा विधान से अनभिज्ञ हैं तो किसी सुयोग्य वैद्य की सलाह लेवें। बच्चा पैदा कराने वाली औरतों द्वारा जन्म के पीछे जन्म की जरायु को बच्चे के शरीर पर से साफ़ करावें सैंधा नमक और घृत से मुख की शुद्धि करावें रुई का फोहा घृत में भिगोकर तालुवे पर लगावें नाभि नाड़ी (नाल) आठ अंगुल नाप कर सूत्र में बांध देवें और अगाड़ी से कतर डालें नाल में जो सूत्र बंधा हुवा है उसको बच्चे के गले में ढीला सा बांध देवें और नाभी को कुष्ठ (कूठ) से सिद्ध किये तैल से सींचे बाद में शीतल जल से आश्वासन कराके शहद, घृत, अनन्तमूल, ब्राह्मी का रस, इनमें एक रत्ती सोने के वर्क मिला लें अनामिका अंगुली से चटावें, खरैंटी के तैल की शरीर पर मालिश करें बाद में क्षीरी वृक्ष बड़, पीपल, पिलखन, आदि के कषाय से अथवा एलादिगण के जल से अथवा सोने चांदी के तप्त पत्रों से बुझाये हुवे जल से अथवा कैथ के पत्रों के कषाय से जैसा दोष जैसा समय देखे उसके अनुसार स्नान करावें तदनंतर वैदिक विधि से जाति कर्म करें। चूंकि तीन चार दिन तक प्रसूता स्त्री के हृदयस्थ धमनियों के मुख खुले रहते हैं अतः तीन चार दिन बाद

स्त्री के स्तनों में दूध आता है। प्रथम दिन बच्चे को शहद, घृत, अनन्तमूल मिलाकर पिलाना चाहिये दूसरे और तीसरे दिन सफ़ेद कटहरी से सिद्ध घृत और मधु मिला कर पिलाना चाहिए चौथे दिन स्तनों का कुछ दूध निकाल कर दोनों समय पिलावें तथा तीन हिस्से शहद और एक हिस्सा घृत मिलाकर दोनों समय चटावें। रेशमी कपड़े मे या वैसे हो अन्य मुलायम कपड़े मे ढक कर और मुलायम ही कपड़ा बिछा कर बच्चे को खाट पर लिटावें और नीम की टहनी मे धीरे २ हवा करते रहें। जिस हफ़्ते में बच्चा पैदा होता है उस हफ़्ते में प्रायः अधिक सोता है बनिस्बत और हफ़्तों के अतः उसके सोने के लिये अत्यन्त आराम देने वाले कपड़े और पलंग आदि होने चाहिये। सोते हुये बच्चे के मुंह पर मक्खियां कभी नहीं बैठने देना चाहिये। क्योंकि मक्खियों के बैठने से आंखें आ जाती हैं और बदन पर फुन्सियां निकल आती हैं और दस्त भी हो जाते हैं। सोते हुये बच्चे का शिर कभी नहीं ढकना चाहिये क्यों कि बच्चे को अत्यन्त स्वच्छ वायु की आवश्यकता है। बालक के शिर पर प्रति दिन तैलका फोहा रखना परमावश्यक है। वच, गूगल सरसों, नीम के पत्ते, आदि जो रोगोत्पादक कीटाणुओं का नाश करने वाले द्रव्य हैं उनकी धूनी देनी चाहिये तथा इन्हीं द्रव्यों को बालक के हाथ पैर शिर ग्रीवा आदि पर लगाया करें। तिल, अलसी, सरसों, इन में से कोई भी द्रव्य बच्चे के आस पास बिखेरें इसके बाद दशवें दिन बालक का नाम करण संस्कार करें बालक को फर्श पर या ज़मीन पर कभी नहीं लेटने या बैठने दें क्यों कि ऐसा करने से जमीन पर से मैली चीज़ें उठाकर बच्चा मुंह में डाल लेता है जिसके कारण रोग पैदा होने का अंदेशा रहता है बालक को स्वच्छ रखना परमावश्यक है। उस को प्रति दिन स्नान कराना चाहिये। यदि किसी कारण वश सम्पूर्ण शरीर को स्नान करावे तो मल मूत्रादि के स्थान को अवश्य ही प्रति दिन साफ़ रखना चाहिये बच्चे के दांत निकलते समय उसको बहुत सी ज्वरातो सारादि पीड़ाओं का का सामना करना पड़ता है अतः उसकी यथा दोष चिकित्सा करें और ऐसे तरीको को वर्ताव में लावें जिससे आसानी से दांत निकल आवें। दांत निकलने के समय उसके हाथ में उसको चूसने के लिये अत्यन्त कड़ी चीज़ देनी चाहिये। जो वस्तु बालक को चूसने के लिये दी जावे वह समय २ पर साफ़ कर लेनी चाहिये। बच्चे के बदन के कपड़े स्वच्छ होने चाहियें मैले कपड़े पहनने से कसाड़ आदि रोग पैदा हो जाते हैं। लड़के के लिंग के सामने की चमड़ी को समय २ पर पीछे खिसका कर साफ़ करना चाहिये अगर चमड़ी नहीं खिसके तो किसी वैद्य या डाक्टर को दिखा कर फैलवाना चाहिये। लड़की के मूत्र स्थान की सलवट तथा दरार को भी देखना चाहिये और साफ़ करना चाहिये। बालकों का रोना स्वाभाविक है वे बिना भूक के भी रोया करते हैं अगर बालक कभी २ नहीं रोए तो समझना चाहिये। कि उसको कोई रोग है रोने से बच्चे अपनी शरीर की स्नायुओं का व्यायाम

करते हैं अतः जब भी बच्चा रोए तभी दूध पिलाने का रवत माता को नहीं डालना चाहिये। उत्पन्न बच्चे का वज़न ५३ सेर या ५४ सेर होता है तत्पश्चात् छै मास बाद प्रति सप्ताह ४ औंस के औसत से वज़नी होना चाहिये। उसके बाद के छै महीने में प्रति सप्ताह ४ औंस से कुछ कम वृद्धि होनी चाहिये। दूसरे वर्ष में बच्चे को प्रायः छै पौंड वज़न प्राप्त करना चाहिये। अगर इस प्रमाण में कुछ कमी बेशी हो तो उसमें कारण माता का मिथ्याहार विहार और बच्चे को उचित खुराक का नहीं मिलना ही है। बच्चे की खुराक माताका दूध है, अगर उसमें कोई खराबी है या उसका अभाव है तो बच्चा कभी नीरोग और हृष्ट पुष्ट नहीं हो सकता। ऐसी अवस्था में बच्चे के लिये सुयोग्य शिशु रक्षा विधान में पटु, समान वर्ण वाली, युवती, रोग रहित शीतल स्वभाव वाली, शुद्ध दुग्ध वाली, जिसके बच्चे जीते हों, जिसकी चूंची अधिक लम्बी और ऊंची न हों, बच्चे से प्रेम करने वाली, और रूपवती ऐसी धाय रखनी चाहिये, ध्यान रहे कि धाय भी बच्चे की एक दूसरी माता ही होती है। उसके रहन सहन आचार विचार और दूध का असर बच्चे पर पड़ता है अतः जहां तक हो सके धाय खूब देख भाल कर रक्खे और एक ही रक्खे। अलग २ धायों का दूध पिलाने से बच्चे को रोग होने का अंदेशा रहता है धाय को जहां तक हो सके गरिष्ट भोजन करने को न देवे चूंकि गरिष्ट भोजन से दूध भारी हो जाता है और बच्चे को पचता नहीं है दस्त आदि बीमारी पैदा कर देता है। तमाम शरीर को और खास कर चूचियों को धाय के लिये साफ रखना परमावश्यक है। अति तीक्ष्ण, उष्ण पदार्थ क्रोध शोकादि धाय को नहीं करना चाहिये इससे दुग्ध नष्ट हो जाता है। माता या धाय का दुग्ध दुष्ट हो गया हो तो उस की जल में परीक्षा करनी चाहिये। जैसे जो कषाय रस हो जल में डालने से तिरे तो वात दुष्ट समझना चाहिये, जो खट्टा हो जलमें डालने से पीली धारी सी हो जावें तो पित्त दुष्ट समझना चाहिये जो बहुत गाढ़ा हो जल में डालने से डूब जावे तो कफ दुष्ट समझना चाहिये इसकी दोषानुसार चिकित्सा करनी चाहिये, यदि माता या धाय का दूध बच्चे के लिये पर्याप्त नहीं है तो उस हालत में बच्चे की क्षुधा निवृत्ति के लिये बकरी का या गाय का दूध देना चाहिये। एक स्वस्थ बालक को प्रति दिन एक से चार बार टट्टी आती है परन्तु २ या ३ मास के बच्चे को प्रति दिन २ बार टट्टी लगती है। यदि प्रति दिन बच्चा एक या दो बार टट्टी न करे तो अजीर्ण की चिकित्सा करनी चाहिये। बालक को जैसे उसका शरीर सुख पावे वैसे गोद में रक्खे डरावे नहीं। सोता हो तो झट पट से न उठावे और झट से न ऊपर को करे और न नीचे को करे इससे वायु का रोग हो जाने का अंदेशा रहता है। अति छोटे बच्चे को बिठावे भी नहीं। बिठाने से बच्चा कुबड़ा न हो जावे यह डर रहता है। बालक को तीक्ष्ण पवन बिजली की चमक, वृक्ष, बेल, शून्य स्थान, नीचे स्थान, दीवारों की परछाई, अशुद्ध जगह, मोरी, पाखाना आदि के पास खुली मकान की छत,

स्वास्थ्य रक्षा

लेखक—कविराज डा० वेदव्यासदत्त शर्मा शास्त्री M. B. (cal) M. D. आयुर्वेदाचार्य, वैद्य वाचस्पति, आयुर्वेदमणि एक्स चीफ मेडीकल औफिसर प्रिन्स यशवन्तराव हौस्पीटल (इन्दौर) कल्पतरू भवन जालन्धर सिटी

स्वास्थ्य याने तन्दुरस्ती हर एक प्राणी वर्ग के जीवन ज्योति को जागृति करने वाली एक आभ्यन्तरिक दीपक की बत्ती के सदृश अदृश्य एवं एक अनुपम वस्तु है, जो वात पित्त कफ़ नामक त्रिदोषात्मक तेल में जागृत रहती है। पर हमें यहाँ हर एक प्राणी वर्ग से तात्पर्य न रख सिर्फ़ मानव शरीर के सम्बन्ध में ही इस के रक्षार्थ विवरण देना है। अस्तु इसके प्रथम मानव शरीर का सूक्ष्मतया विवरण देना आवश्यकीय प्रतीत होता है।

इस मानव शरीर का ढांचा निम्नांकित दश उपादानों के ऊपर निर्भर है।

(१) श्वासोच्छ्वास-संस्थान (Respiratory System) इसमें नासिका, फेफड़ा, टेंटुआ, स्वांस, प्रस्वांसक नालियां सम्मिलित हैं।

(२) पोषण-संस्थान—(Digestive System) इस में पोषण क्रिया के सञ्चालनार्थ अन्न बहानाली, लाला ग्रंथियां, आमाशय, पित्त-पक्वाशय, क्षुद्रान्त्र तथा वृहदन्त्र व क्लोम ग्रंथि शामिल हैं।

(३) रक्त वाहक-संस्थान—इस में हृदय, धमनियां, शिरायें, केशिकायें, फेफड़े आदि सम्मिलित हैं।

(४) मूत्र संस्थान—Urinary System इसमें दो वृक या गुर्दे में दो मूत्र प्रणाली वस्ति व मूत्र बहिद्वार तथा मूत्रनाली सम्मिलित हैं।

(५) मांस संस्थान—इसमें मांस सैलें तथा मांस पेशियां हैं।

(६) नाड़ी संस्थान—वृहद् तथा क्षुद्र मस्तिष्कमें निकली हुई नाड़ियों के जोड़ों, सुषुम्ना,

---

गरम हवा, वर्षा आंधी तलाब नदी आदि का किनारा, इत्यादि खतरनाक स्थानों से बचावे। छठे महीने बालक को अन्न प्राशन करावे। जो अन्न बालक को दिया जाय वह हलका पतला और हित होना चाहिये। कोई न कोई मनुष्य अवश्य बच्चे के पास रहना चाहिये। इस तरह बालक के चिरजीवन की आशा करने वाले माता पिता को नित्य बालक के अनुकूल और प्रिय सैकड़ों उपाय करने चाहिये ऐसे पूर्वोक्त उपायों के करने बालक प्रसन्नचित्त रह कर प्रति दिन वृद्धि को प्राप्त होता है। बाल रोगों का वर्णन और चिकित्सा आगामी अङ्क में करेंगे।

— —

दृष्टि केन्द्र, श्रवण केन्द्र, जिह्वा केन्द्र, आदि समस्त शरीर व्यापी नाड़ियां यानी शरीर में होने वाले समाचारों को छोड़ने तथा पहुँचाने वाले तार रज्जियो अर्थात् नाड़ियां सम्मिलित हैं।

(७) अस्थि संस्थान—सारे शरीरमें हड्डियां सम्मिलित हैं।

(८) जोड़ संस्थान—(Syndesmology) सारे जोड़ बन्धनों का विवरण है।

(९) ज्ञानेन्द्रिय-संस्थान—में नाक, कान, आंख जीभ व त्वचा सम्मिलित हैं।

(१०) उत्पादक संस्थान—में योनि। डिम्ब, डिम्बाशय, डिम्ब प्रणाली, गर्भाशय योनिद्वार, लिंग शुक्राशय, अण्डकोष सम्मिलित हैं।

इनके अलावा शरीर में (Cele) सेल, सैलों को मिलाने व यथास्थान सुरक्षित रखने वाला मसाला सूत्र Fiber व तरल fluid हैं। उपरोक्त दश उपादानों व चार आदानों के ऊपर ही हमारा स्वास्थ्य निर्भर है। इनमें से एक भी बिगड़ जाए तो प्रथम तो जीवनयात्रा ही समाप्त हो जाती है नहीं तो कम से कम सारे शरीर में खलबली अवश्य मच जाती है, यानी शरीर रोग ग्रसित होना स्वास्थ्य का गिरना कहा जाता है। इनकी यथोचित रक्षा इनका अनवरत तथा नियमित रूप से कार्य में लगा रहना ही स्वास्थ्य रक्षा है। अन्यथा बल तथा वर्ण युक्त सुख पूर्वक आयु के उपभोग का नाम ही स्वास्थ्य है। एवं वात पित्त कफ त्रिदोषात्मक शरीर का आवश्यकतानुकूल वात पित्त कफ सहित आयु बल्मान ही स्वास्थ्य है।

अब प्रश्न उठता है इसकी रक्षा का, सो स्वास्थ्य उपर्युक्त दश उपादानों के ऊपर निर्भर है। पर इन उपादानों का बाह्य तथा आभ्यन्तरिक आवरण—आहार विहारादि, ऋतु परिवर्तनादि, शोक चिन्तादि, शीतधूपादि, गृह प्रबन्धादि, व्यवसायादि, जल आबोहवादि, रहन सहनादि, नैतिक तथा दैनिक कार्यादि, मानसिक व्यवसायादि, आर्थिक संकटादि, सौख्यादि उपटनादि स्नानादि तथा सहवासादि की प्रबल बेड़ियों से सुरक्षित है। जहां एक बेड़ी की ज़ंजीर ढीली पड़ी अथवा स्वास्थ्य नियमोपनियम पालन की अवहेलनात्मक वर्षा से जंग जम गई तहां रोग शत्रु के लिये शरीर प्रवेशनार्थ आप ही आप स्वास्थ्य रक्षा की जंजीर ढीली पड़ जाने से दरवाज़ा खुल जाता है। पुनः इस दरवाज़े की मरम्मत निदान संगत औषधोपचार से फिर से स्वास्थ्य लाभ होता है। यही चिकित्सा है। यदि चिकित्सा के झंझट में न पड़ पेशतर से ही स्वास्थ्य रक्षार्थ स्वास्थोपालन नियमोंकी रक्षा की जाय तो स्वास्थ्य रक्षार्थ कहीं श्रेयस्कर है, चोर भगाने से चौकसी करना ही अच्छा है। इस पर भी रोगी शरीर व्यथित व निर्बल हो, निरोग होने पर बल का सञ्चार पाता है। स्वस्थ्य शरीर स्वयं सबल है। यदि बल में बल की वृद्धि की जाय तो अवश्यमेव उत्तरोत्तर वृद्धि होगी। मूलधन को उठाकर यदि फिर से उसी मूलधन को पूरा किया जाय तो पूर्व मूलधन का मूलधन ही रहेगा। अक्सर देखने में आता है स्वास्थ्य में परिवर्तन हुआ नहीं—औषधालयों के दरवाज़े खटखटाने की ज़रूरत पड़ती है। यदि प्रथम से

ही स्वास्थ्य नियमादि के सद् उपयोग व्यवहारादि का स्मरण रहे तब तो औषधालयों के दरवाजे खटखटाने पटफटाने की नौबत ही न उठाना पड़े। पूर्व काल से आज तक भारत के ऋषि मुनियों के प्रणीत प्रशंसित स्वास्थ्य रक्षा के नियमों से ओत प्रोत चरक, भावप्रकाश, वाग्भट्ट, सुश्रुत, शार्ङ्गधर संहित-माधवनिदान, चक्रदत्त अमृत सागर प्राचीन-चिकित्सा चन्द्रोदय वैद्यक शिक्षा, वैद्य राकेश धन्वन्तरि अनुभूत योगमाला, चिकित्सा चमत्कार, जीवन सुधा, आरोग्य मित्र आदि आदि वैद्यक सम्बन्धी पत्र अर्वाचीन काल में मान्य है। यदि इनके सूक्ष्म तत्वों की ओर दृष्टिकर प्रकृत्यानुकूल देश काल आबोहवादि का विचार कर रहन सहन रख चिपटा जाय तब तो रोग को भगाने के लिए दवारूपी बन्दूक की लायसेन्स की दरख्वास्त ही पेश न करनी पड़े।

अस्तु स्वास्थ्य रक्षार्थ निम्नांकित नियम पालनीय ही नहीं अनिवार्य हैं इन नियमों के पालनोप पालन से स्वास्थ्य रक्षा ही नहीं; वरन् अनुपम उत्तम स्वास्थ्य चमत्कार शरीर में विद्यमान रह सकता है।

आहारादि व स्वास्थ्य रक्षा

आहारादि नियमों के पालन से खास कर पोषण संस्थान की रक्षा होती है फलस्वरूप जिसके रक्त मांस मेद अस्थि मज्जा शुक्र और+ ओज यह अष्टधातु मूत्र, पुरीष स्वेदादि मल समूह उपयुक्त मात्रा में रहते हैं। यदि पोषण संस्थान के अवयव अपने कार्यक्रम पर ठीक तौर निरूपण हैं तो खाद्य पदार्थ से उपरोक्त प्रभृति रस रक्त के अतिरिक्त शरीर का बल स्थिर रहता है, शरीर बल पर ही स्वास्थ्य निर्भर है। अस्तु इसके विवरणार्थ मुँह गह्वर से ही विवरण देना ठीक है।

(१) मुँह गह्वर जीभ दांत लाला ग्रन्थियों से युक्त है। भोज्य पदार्थ सर्व प्रथम इसी मुँह गह्वर पर प्रविष्ट होता है प्रविष्ट भोज्य वस्तु को जीभ मुँह में इधर से उधर, उधर से इधर धकेलती है। दांत उसे पीसने (चबाने) का कार्य सम्पादन करते हैं लाला ग्रन्थियों से पाचक रस मिल मिल कर भोज्य वस्तु चिकने व मुलायम रूप हो अन्न वाही नली जो जीभ की जड़ से शुरू होती है व युवावस्था में १० इञ्च लम्बाई की हो जाती है प्रवेश कर इस भोज्य वस्तु को आमाशय (Stomach) में पहुंचाती है। यहाँ स्मरणीय है भोज्य वस्तु के पाचनार्थ सबसे प्रथम दांतों का ही काम आता है। इसलिये सबसे प्रथम दांतों के हिफाजत की ओर निगाह देना अति जरूरी है। अन्यथा एक दांतों के अलाहिदा होजाने से मुंह में भोज्य वस्तु का चूरा नहो सकने से दांतों का काम आमाशय को करना पड़ता है। आमाशय अपने ऊपर कार्य के डबल भाव को सहन न कर सकने से ज्यों का त्यों भोज्य पदार्थ क्षुद्रान्त्र की ओर धकेल देता है फलस्वरूप अतिसार, अग्निमान्द्य, ज्वर, ग्रहणी, संग्रहणी, अर्श आदि अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। इस लिये इतनी वेदना बल पालने में

+ ओज उपधातु है। —लेखक।

दांतों के सुरक्षित रखने की ओर भी दृष्टि देना अति उत्तम है। अस्तु

(१) हर भोज्य पदार्थ जो मुँह में प्रवेश होता है कम से कम ३२ बार अवश्य चबाया जाय।

(२) दांतों को सुरक्षित रखने के लिये बहुत ठण्डा व बहुत गरम पदार्थ या पानी अथवा तरल वस्तु सेवन नहीं करना चाहिये। क्योंकि इनसे दन्तवेष्टों को हानि पहुंच दन्तहर्ष नामक रोग का प्रादुर्भाव होता है।

(३) दांतों को कोयले, बालू रेती व मिट्टी से कभी भी मन्जन करना ठीक नहीं। कारण कि कोयला मिट्टी दांतों को घिस घिस कर नाजुक कर देती हैं।

(४) हर भोज्य पदार्थोपरान्त ५।७ कुल्ली करलेना निहायत ज़रूरी है। अन्यथा भोज्यवस्तु के सूक्ष्म कण दांतों के जोड़ों में फँस जाने से— सड़कर मुँह में बदबू दन्तकृमि व पायरिया (Pyorrhea) आदि रोग पैदा हो जाते हैं।

(५) तमाखू पान सुर्ती सिगरेट बीड़ी शराब शिरको आदि अति अम्ल व मीठी वस्तु भी क्रमशः दन्त बुकाई कृमिरोग पैदा करते हैं व दन्तक्षय होना शुरू होता है। यह (Pyorrhea) पायरिया नामक दांतों के भयंकर रोग का बीज है।

दन्तरक्षार्थ वर्तनीय

(१) दन्त रक्षार्थ, कोमल, हवा, शुद्धिकारक, पायोरिया कीटाणु नाशक दवाइयां ही हित कर होती हैं।

(२) नीम बबूल पदमाँख कायफल तेजबल का दतून रोज़ाना प्रातः शौचादि से निपट अवश्य लेना चाहिये। दतून एक बालिश्त लम्बा आध इञ्च मोटाई का हो सूखे दतौनों को पानी में भिगो कर नरम करके काम में लेना ठीक है। उपयोग धीरे धीरे हो ताकि मसूड़ों पर की रक्त नालियां न कटने पावें।

(३) वर्तमान कालीन दन्त बुरुश जो फैशनेबुल बोर्ड के स्वीकृत प्रस्ताव से बहु उपयोगी होरहा है उसे यदि काममें लेना ही हो और अपनी पोजीशन में दतून लेने से धब्बा लगने का डर हो अथवा पैसों को ही तहखानों में रहते रहते दिमाग विलायत जाने का शौक चढ़ा हो तो तिरछे काम में न लेकर खड़े तौर से ऊपर से नीचे की ओर रख करके काम में लेना चाहिये। इस तरह दांतों में फंसे हुए खाद्य कण सुगमता से निकल आते हैं। हमारी अपनी समझ तो जानवरों के रोमों व हड्डियों से बने बुरुश को मुँह में लगाने के बजाय अति उत्तम गुणकारी प्राचीन कालीन प्रचलित सुगमता से प्राप्त स्वच्छ सुन्दर जीव तत्व (Viamin) युक्त ईश्वर प्रदत्त दतून ही सर्व श्रेष्ठ है।

(४) देखा गया है दांतों के अन्दरूनी मुंह की तरफ़ का भाग नित्य मंजन करने पर भी अस्वच्छ रहता है। अन्दर से साफ़ न करना ही इस का कारण है। इस भागमें काली जंग जम अनेकानेक रोगों की मूल कारण होती है इसलिये दांतों को सिर्फ़ बाहर से उज्वल करने की चेष्टा न कर अन्दर से भी साफ़ करना ज़रूरी है।

भोजन व स्वास्थ्य रक्षा

आहारके निमित्त-स्नानोपरान्त स्वच्छ सुन्दर

निर्यात स्थान में बैठ ताज़ा स्वच्छ वस्तुओं से स्वच्छता पूर्वक परिपक्क व तत्काल का बना हुआ न अति उष्ण न शीत स्निग्ध मधुरादि छौं रसों से युक्त बलदायक रुचिकारक प्रिय जन के हाथ से प्राप्त या स्वयं निर्मीणित हर एक कौर को सावधानी से चबा चबा कर प्रसन्न चित्त हो प्रिय जनों के साथ प्रेमयुक्त वार्तालाप कर कर के भोजन करना यथेष्ठ है।

पर बहुत आचार्यों का मत-मौनावलम्बन हो भोजन करने का भी है। मेरी समझ से मौनावलम्बन होना इसी लिए ठीक समझा गया होगा कि भोज्य पदार्थ जब मुँह में अन्न नाली पर प्रवेश करता है तो इसी अन्न नलिका के शुरू भाग पर स्वरनलिका का मुँह बोलने की वजह से खुला रहता है सो खुला रहने से भोज्य कण स्वरयन्त्र पर प्रवेश करते हैं जिन्हें स्वर यन्त्र के कपाट निकाल बाहर कर देते हैं। इस धक्कम धक्कला की वजह फेफड़ों व नासिका तथा हृदय को महान कष्ट होता है। इसी से भोजन काल में बोलना मनाही की योजना होती होगी। पर साथ ही साथ भोजन करते समय प्रेमयुक्त वार्तालाप व मधुर हास्य का हृदय पर अच्छा प्रभाव पड़ता है व भोजन मधुर जचता है। इससे यही ठीक होगा कि कौर के निगलने के समय न बोला जाय बीच बीच में मधुर हास्य तथा बोलना उत्तम है।

आहार की मात्रा

आहार की मात्रा उतनी ही होनी चाहिये जिसके सेवन से इन्द्रिय समूहों को प्रसन्नता मालूम हो क्षुधा प्यास को शान्ति हो शयन उपवेशन गमन स्वांस प्रस्वास में कष्ट मालूम न हो इतना पेट भर देना भी ठीक नहीं जिस से पेट भारी मालूम पड़े हृदय तथा कुक्षि में दर्द हो। इस पर भी भोजन के गुरुता तथा लघुता की ओर भी दृष्टि रहनी जरूरी है गुरुत्वयुक्त याने देर में पचने वाले भोजन आधे पेट (आधा आहार) ही करना चाहिये जैसे हलुवा पूड़ी कचौड़ी दालमोट वगैरह साथ ही इसके अल्प भोजन भी हानिकर है। अल्पाहार से अतृप्ति रहने की वजह से उदावर्त रोग उत्पन्न हो आयु बल वर्ण रस रक्त धातु ओज आदि क्षीणता को प्राप्त होते हैं यथा अग्निमांद्य रोग पैदा होता है मन बुद्धि खिन्न रहते हैं जिससे स्वास्थ्य पर भयंकर आघात पहुँचता है। व मात्रा से अधिक आहार करने पर दोष कुपित हो अजीर्ण अतिसार विशूचिका, खट्टी डकार रोग का होना, जी मचलाना, ऐंठन अकड़न पेट में व कुक्षि में दर्द पैदा होना व शिर में भी दर्द का ज़ाहिर होना अरुचि आदि रोग पैदा होते हैं। यथाः—विषमाशनस्य।

आलस्य गौर वाटोप शब्दांश्च कुरुतेऽधिकम्।
हीन मात्र तनोः कार्श्य रुगोचित बल क्षयम्॥
(भाव प्रकाश)

साथ ही अस्वच्छ शत्रु गृह, मलेच्छ जाति गृह समय कुसमय, बासी, देर का बना हुवा, मक्खी आदि कीटाणुओं से दूषित, अस्वच्छ वर्तन में, अस्वच्छ वस्त्र पहिन, पूर्व का आहार हज्म न होते हुए पुनः आहार

करने पर, आहार निषद्ध रोग ग्रसित होते हुए भोजन करने से, सूखी व मिट्टी वस्तुओं के सेवन से अनेक भयंकर रोग पैदा होते हैं। अतएव इनका त्याज्य ही श्रेय कर है।

जलपान

भोजन करने के प्रथम जल पीने से अग्निमांद्य होती है व शरीर दुर्बल होता है. भोजन के मध्य में पानी पीने से अग्नि दीपन होती है पर थोड़ा थोड़ा पीना चाहिए भोजन के अन्त में पानी पीने से शरीर मोटा होता है। पर भोजनोपरान्त आध घण्टे पीछे पानी पीना ठीक है। वह भी एक बारगी बहुत ज्यादा नहीं, भोजन के समय बीच बीच में आवश्यकतानुकूल एक आध घूंट पानी पीना भी अच्छा है। जिनको प्यास लगी हो बिना प्यास बुझाये भोजन करना ठीक नहीं व तेज प्यास पर एक बारगी पानी पी जाने से कभी कभी हृदय की गति रुक कर अहित होने का भय रहता है इसमें प्रथम प्यास शान्त करने को थोड़ा ही जल प्रथम बताशा मिश्री चाबकर पीना चाहिए ऐसे ही बहुत तेज क्षुधा में पानी पीना नुकसान देता है। एवं मार्ग गमन में पसीनादि वेग रुकने पर, श्वांस प्रक्रिया स्थिर हो जाने पर थोड़ा थोड़ा करके जलपान करना चाहिये।

जलपान के लिये स्रोतों का जल व साफ़ कुवों का जल अच्छा है। खास कर जिस जल का उद्गम बालू चूने चट्टान मयभूमि गन्धकी जगह से हुवा हो व बहता हुवा स्वच्छ हो ऐसा जलपान करने से बल क्रान्ति तेज का विकाश होता है।

पर तालाब व बरसाती गड्ढों व जिन चश्मोंके पानी में पत्ते सड़े या पड़े हों व पानी निकास न पाता हो, कृमि दीख पड़ते हों, बू आती हो व पानी गाढ़ा या किसी किस्म का वर्ण युक्त हो ऐसा जल कदापि पान करने योग्य नहीं। जिस जल में कोई किस्म का रंग या गाढ़ापन व बू मालूम न पड़े साफ़ सफ़ेद शीशी में डालने पर शीशी के तलछट पर कोई वस्तु न जमती हो व पानी डालने पर शीशी पारदर्शक रहे ऐसा जल खौलाने के पश्चात् साफ़ मिट्टी या तांबे के घड़े में ठण्डा हो जाने पर छान कर पान करना चाहिये। पानी रखने के लिये तांबे के घड़े उत्तम हैं। कारण तांबे में पानी शुद्ध करने का अपूर्व गुण विद्यमान रहता है हाँ पानी ठण्डा नहीं रहता इस से बेहतर है पानी खौलनेके पश्चात् १ घण्टा तांबे के घड़े में पड़ा रहे व छान कर सुराही में कर दिया जावे सुराही में भी तांबे का साफ़ टुकड़ा डाल देना चाहिये। बावड़ी कुवों को साफ़ करने के पश्चात् चूना व पक्की लकड़ी का कोयला डाल कर जल अति उत्तम हो जाता है। परमेंगनेट आफ़ पोटासी से भी जल शुद्ध होता है। इस शरीर में अधिकांश जल भाग रहता है इस लिए स्वास्थ्य रक्षार्थ जल की स्वच्छता तथा उत्तमता पर पूरा ख्याल जरूरी चाहिए। प्रातः काल उठते ही शीत जलपान आमाशय व यन्त्रादि को स्वच्छ कर साफ़ टट्टी खोलता है व दिन भर तबियत दुरुस्त रहती है एवं बहुत आचार्यों का मत नासिका से जल पान करने पर कफ जुकाम आदि विकारों के लिए हितकर बतलाते हैं।

कोई जुकाम आदि विकारों के लिए गरम नमक युक्त जल का नासिका से जल पान का उपदेश करते हैं। यही जलपान विधि है।

दुग्धपान

दूध मनुष्य मात्र के लिए बच्चों से वृद्धों तक के लिए अमृत सदृश गुणकारी है पर आज दिन मँहगा बिकने से हर परिस्थिति वाले इस अलभ्य रत्न से बहुत कम लाभ उठा पाते हैं, बच्चों की जीवन शक्ति का अधिकांश विकास दुग्ध के ऊपर ही निर्भर है दूध में जीवन के लिए सभी आवश्यक द्रव्य पूर्ण मात्रा में मौजूद रहते हैं जैसे कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, गन्धक और नाइट्रोजन (Protein) दूध से आहार व प्यास दोनों की शान्ति होती। वर्तमान काल में वैज्ञानिक अनुसन्धानों से इस पर और भी प्रकाश पड़ा है दुग्ध सेवन से आयु में दशमांश वृद्धि की आशा की जा सकती है। प्राचीन ग्रन्थों ने तो मुँहतोड़ प्रशंसा की है। वास्तव में दुग्धपान है भी अनुपम गुणकारी। भावप्रकाश में लिखा है। यथा:—

दुग्धं क्षीरं पयः स्तन्यं बालजीवन मित्यपि।
दुग्धं सुमधुरं स्निग्धं वात पित्त हरं सरम्।
सद्यः शुक्रकरं शीतं सात्म्यं सर्वशरीरिणाम्।
जीवनं बृहणं बल्यं मेध्यं वाजी करं परम्॥
वयः स्थापन मायुष्यं सन्धिकारि रसायनम्।
विरेक वान्ती वस्तीनां सेव्यमो जोविवर्द्धनम्॥
जीर्ण ज्वरे मनोरोगे शोषमूर्छा भ्रमेषुच।
ग्रहण्यां पाण्डु रोगेच दाहे तृषि हृदामये॥
शूलोदावर्त गुल्मेषु वस्ति रोगे गुदाङ्कुरे॥
रक्तपित्तेऽतिसारे च योनि रोगे श्रमे क्रमे।
गर्भ स्रावेच सततं हित मुनिवरैः स्मृतम्।
बाल वृद्ध क्षत क्षीणाः क्षुद्व्यवाय कृशाश्चये॥
तेभ्यः सदाति शयितं हितमेत दुदाहृतम्।
(भावप्रकाश)

स्वच्छता पूर्वक दुहा हुआ धारोष्ण दूध बहुत अच्छा है। औरत, बकरी, गधी, गाय का दूध उत्तम माना गया है पर गधी का दूध सिर्फ बुद्धि मलीन कर देता है। निरोग स्वस्थ जानवरों से ही दूध लेकर पानी मिला ४–८ उफान (उबाल) आने पर पान करना चाहिए। सायंकाल के भोजनोपरान्त सोते समय का दुग्धपान दिन भर के भोज्य पदार्थों के सब रसों को सम कर व रसयुक्त बढ़े हुए दोषों को दूर कर बल शुक्र व तेज के साथ साथ पाचक रस की वृद्धि करता है।

स्वास्थ्य रक्षार्थ भोजनोपरान्त कर्त्तव्य

भोजन करने के पश्चात् पान खाना, जायफल, लौंग, कबाब चीनी, छोटी इलायची, कपूर, सुपरी इस्तेमाल करने से खाया हुआ भोज्य पदार्थ पुनः लार के प्राप्त होने से आसानी से हजम होता है। मुँह की विरसता दूर हो सुगन्ध प्राप्त होती है। तत्पश्चात् शारीरिक मानसिक कार्यों को न कर १५–२० मिनट के लिए आराम से बैठना या लेटना चाहिए। भोजन के बाद शारीरिक परिश्रम गमन ऊँट घोड़े व मोटर इक्का बग्घी तांगे आदि की सवारी करना आग सेकना धूप में

बैठना उचित नहीं। हां देश काल के मुताबिक हेमन्तऋतु में धूप में बैठना आग सेकना हानि कर नहीं होता। समय विसमय पुन जब तक प्रथम भोज्य हज़म नहीं हो जाता भोजन करना ठीक नहीं व क्रोध करना कसरत करना भी ठीक नहीं व रात्रि का दधि सेवन सर्वथा हानिकर है। रात्रि के भोजन के पश्चात् शयन करना चाहिए।

स्वास्थ्य रक्षार्थ शयन कर्त्तव्य

शयन युवाओं के लिए ७—८ घण्टा, बालकों के लिए ९—१०॥ घण्टा सोना पर्याप्त है अधिक या कम सोना अनेक रोगों का मूल कारण है दिन में सोना हानिकर है हां ग्रीष्म ऋतु में १-१॥ घण्टा लेटना हानि नहीं करता। बालक वृद्ध खास रोगी क्रोधी उन्माद वाले, दुर्बलों को दिन में सोना हितकर है। रात्रि को १० बजे सो जाना चाहिए। बांया करवट लेकर सोना उत्तम है। (शेष अगले अंक में)

एक जापान के प्रसिद्ध डाक्टर का सिद्धान्त

(By Lieut S. C Anand, M. B. B S ,I. M. S. (Retd.)

एक जापान के प्रसिद्ध डाक्टर (वैद्य) जिनका नाम कोआन-ओगाटा था। सन् १८१२ ईस्वी में आपका जन्म हुआ था और सन् १८६३ ईस्वी में आपका ५१ वर्ष की आयु में स्वर्गवास होगया। आपने आयुर्वेद प्रणाली यानी डाक्टर या वैद्य का मुख्य कर्तव्य और उसका रोगी के प्रति क्या धर्म है ? इस विषय पर आपने जापानी भाषा में एक पुस्तक की रचना की है जिसका नाम "फ़ुशी-इकाई-नो रियाकू" है और जिनका डाक्टर शीरो तशीरो ने तथा मार्टिन एच फ़िश्चर ने अं-

ग्रेज़ी भाषा में अनुवाद कर के एक अमेरिका के मेडिकल एसोसियेशन के जनरल (पत्रिका में) प्रकाशित किये हैं। ये सिद्धान्त अति गूढ़ तथा लाभदायक प्रतीत हुए हैं जिसके द्वारा एक साधारण वैद्य या डाक्टर एक आदर्श और योग्य वैद्य या डाक्टर बन सकता है। आशा है कि आप इन सिद्धान्तों को ग्रहण करके रोगियों को लाभ पहुँचावेंगे।

१—चिकित्सक का पहला कर्तव्य है कि उसे इस बात का हमेशा ध्यान रहे कि उसका जीवन केवल परमार्थ के लिये है उसको अपने स्वार्थ को लेशमात्र भी हृदय में स्थान न देना चाहिये। उसका लक्ष केवल रोगी को लाभ पहुँचाना ही होना चाहिये चाहे रोगी के प्राण बचाने में उसे कितना ही कष्ट उठाना पड़े—वैद्य का मुख्य धर्म रोगी की सेवा करना है न कि अपनी प्रशंसा के हेतु परिश्रम करना, वैद्य को अपने आप को मनुष्य मात्र का सेवक समझना चाहिये—इसमें जाति पाँति का कुछ भेद नहीं होना चाहिये।

२—रोगी के रोग का निरीक्षण करते समय उसकी दौलत पर विचार न करें किन्तु उसके रोग पर विचार करें। वैद्यों को अमीर व गरीब दोनों को समान दृष्टि से, आदर सत्कार तथा रोग की परीक्षा करना चाहिये। क्योंकि अमीरों के मुट्ठी भर सोने के चनों के सामने गरीब के सच्चे हृदय से दी हुई आशीर्वाद फलदायक तथा मूल्यवान् है।

३—जिस समय तुम अपने व्यवसाय को काम में ला रहे हो तब इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि रोगी एक ढाल के समान है न कि तीर या कमान के रोगी के रोग से वैद्य को खेलने की चेष्टा करनी चाहिए परन्तु रोगी के रोग की परीक्षा तथा निदान बड़ी सावधानी तथा सोच समझ कर करना चाहिए।

४—नए नए रसायनों और आविष्कारों के समझने का प्रयत्न करो तथा उनका प्रयोग भी करना चाहिये। रोगी का अपने ऊपर विश्वास हो ऐसा प्रयत्न करना चाहिए। रोगी के साथ कभी कोई धोखा न करना चाहिए और न ऐसी बात कहनी चाहिए कि उसे धोखा हो और तुम पर अविश्वास करने लगे।

५—रोगी की परीक्षा बड़ी बारीकी से और सावधानी से करनी चाहिये कई परीक्षाओं से अच्छी प्रकार से की हुई एक परीक्षा अधिक लाभदायक है।

६—दिन भर का रोगी के रोग की तत्काल लिखो और उस पर विचार करके रोगी का इलाज शुरू करो इसी पर रोगी का लाभ और मनुष्य जाति की उन्नति निर्भर।

७ यदि रोगी का रोग असाध्य हो तो ऐसी दशा में रोगी को उसकी शोचनीय दशा का ख्याल न होने देना चाहिए और उसके जीवन को सफल बनाने का यत्न करना चाहिए और उसको तसल्ली देते रहना चाहिए।

८ वैद्य को इस बात का ध्यान हर समय रखना चाहिए कि रोगी का निरोग करने में ज्यादा व्यय न हो जितना कम से कम खर्च हो अच्छा

क्योंकि यदि उसकी सामर्थ्य से बाहर खर्च कर के उसके जीवन को तुमने बचा लिया तो भी वह मरे ही के तुल्य है क्योंकि तुमने उसे प्राण दान दे कर उसकी जीविका को उससे सदा के लिए छीन लिया ऐसी अवस्था में उस को सदा के लिए दुखित जीवन बिताना पड़ेगा। वह कदापि सुखका अनुभव न कर सकेगा। इससे कहीं अच्छा होता कि उस का अन्त हो जाता और उसे अपने जीवन में क्लेश न उठाने पड़ते।

९—वैद्य या डाक्टरको कभी किसी प्रकारका नशा न करना चाहिए। जुआ अति भोगविलास इत्यादिसे सदा दूर रहना चाहिए क्योंकि यह सब वस्तुएँ बुद्धि के नष्ट करने वाली होती हैं। वैद्य के लिए यह अधिक महत्व की बात है कि वह जनता के विश्वास को (Goodwill) को जीते तुम कितने ही योग्य और सुचरित्र वैद्य क्यों न हो यदि जनता की श्रद्धा तुम पर नहीं है तो तुम्हारी सब योग्यता, चतुराई, शीलता इत्यादि व्यर्थ हैं। तुम में चरित्रता (Character) और शीलता (Genlenss) इत्यादि गुण होने आवश्यक प्रतीत होते हैं जहां तक बने ज्यादा न बोलो यदि रोग या निदान समझ में न आवे तो गपसप मत कहो और उनको धोखा देने का साहस मत करो। कम बोलना ही अति उत्तम है।

१०—वैद्य या डाक्टर को अपने पेशे में लोगों से सदा सहानुभूति करनी चाहिए। एक दूसरे के दोष तथा ग़लतियों को जनता पर कदापि प्रगट न करना चाहिए। उनसे सदा बन्धु का सा व्यवहार करना चाहिए। किसी की कमी या ग़लतियों को बयान करना नीचता का व्यवहार है और उनकी ग़लती या अयोग्यता साबित करने के लिए ज्यादा बहस या व्याख्यान ना दो क्योंकि तुम्हारी बहस तुम्हारी शोहरत पर हमेशा के लिए पानी फेरने का कारण बन जायगी। हर एक वैद्य या डाक्टर का चिकित्सा करने का ढंग अलग २ होता है। इस लिए उस पर आक्षेप करना बुद्धिमानी नहीं है यदि कभी तुम्हें किसी वैद्य या डाक्टर के साथ किसी रोगी की परीक्षा करने का सौभाग्य प्राप्त हो तो जिसका वह रोगीहै उसी वैद्य या डाक्टर की चिकित्सा प्रणाली से सहानुभूति प्रगट करो और उसी की तारीफ़ करो।

११—रोगी के रोग की परीक्षा करने के लिए ज्यादासे ज्यादा तीन सुयोग्य वैद्य या डाक्टरोंको चुनना चाहिए ज्यादा को इकट्ठा करना उत्तम नहीं है। मश्वरे के समय रोगी के रोग पर और उसके निदान पर ही विचार करो और किसी बात पर बहस या विचार मत करो।

१२—यदि कोई रोगी किसी वैद्य या डाक्टर का इलाज छोड़ कर तुम्हारे पास आवे और तुम से सलाह मांगे तो तुम पहिले डाक्टर या वैद्य के नुस्खों पर विचार करो यदि तुम्हें उस में कुछ भूल मालूम पड़े तो भी तुम रोगी से उसके प्रति कुछ मत कहो क्योंकि यह सभ्यता के खिलाफ़ है यदि रोग अधिकता पर हो और रोगी की जीवन लीला समाप्त होनेको हो तो फ़ौरन ही उसकी जो कुछ तुम सेवा और मदद कर सकते हो करो
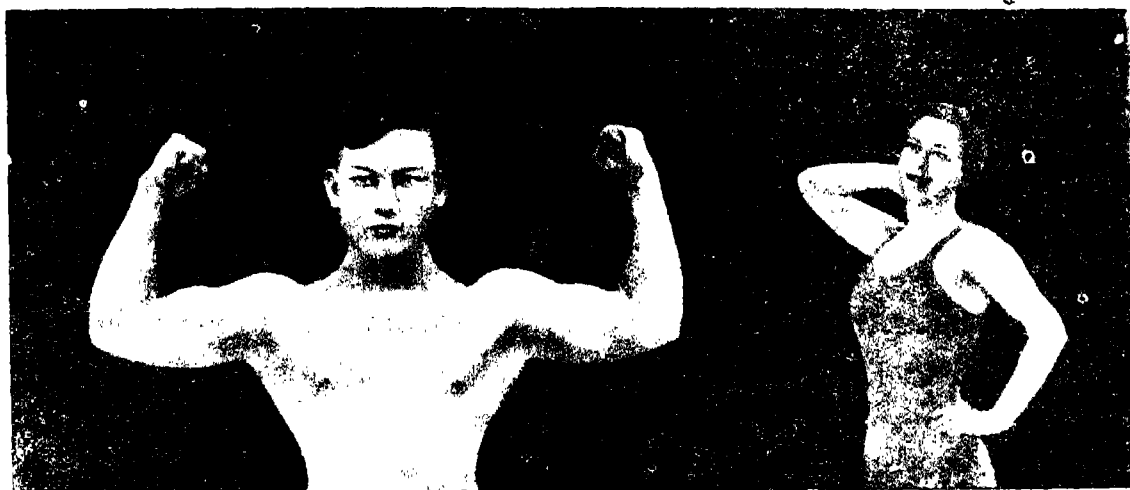
व्यायाम

व्यायाम की वर्तमान दशा—

साधारणतः व्यायाम शब्द से लोग दण्ड, मुद्गर, मल्लयुद्ध, डम्बुल, फुटबाल, क्रिकेट प्रभृति अंगसञ्चालक क्रियाओं का ही अर्थ समझते हैं। जो लोग दुर्बल, रोगी, स्वास्थ्यहीन हैं वह दुर्बलता के कारण व्यायाम नहीं करते। केवल स्वस्थ सबल पुष्टकाय लोग ही व्यायाम करते हैं। जो लगातार काम में व्यस्त रहते हैं वह भी समयाभाव से व्यायाम की तरफ़ ध्यान नहीं देते या नहीं दे सकते। बहुत लोग ऐसे भी हैं जो व्यायाम करते लजाते हैं इसलिये नहीं करते। सार यह है कि सार्वदेशिक रीति देखते हुये व्यायाम मल्लों व पहलवानों तक ही परिमित हो रहा है।

व्यायाम न करने से हानि—

व्यायाम के ही ऊपर हमारे मानवशरीर की स्वस्थता आधार रखती है। यदि यथेष्ट रूप से जितना उचित है उतना अंग प्रत्यङ्गों को न चलाया जाये तो मांस पेशी व मांसतन्तु सब दुबले हो जाते हैं, और हम लोगों के शरीर में सैकड़ों कोस लम्बी छोटी २ नाड़ियां व शिरायें जो चल रही हैं, सब ही अकर्मण्य व निर्बल हो

और उसे नीरोग करने की चेष्टा करो।

यह १२ कायदे मैंने अपनी सफलता के लिए लिखे हैं और बहुत कम मनुष्यों को दिखाये हैं। और इन्होंने मुझे सफल बनाने में मेरी मदद की है।

———

जाती हैं। रातदिन शरीर में स्वभाव से ही शरीर को क्षय करने वाली क्रिया होती ही रहती है। इस क्षय क्रिया द्वारा जो द्रव्य हमारे शरीर से निकल जाते हैं उनकी जगह नये दूसरे तेजस्कर पदार्थ आने चाहियें, नहीं तो शरीर कदाचित ठीक सबल स्वस्थ नहीं रह सकता। मन में प्रश्न हो सकता है कि क्या दिन प्रतिदिन के काम काज में हमारे शरीर का प्रत्येक अंग काम के योग्य नहीं रहता। यद्यपि खान पान चलना फिरना आदि क्रियाओं के द्वारा कितनी ही मांसपेशी चलती रहती हैं, लेकिन शरीर के प्रत्येक अंग का ठीक सञ्चालन नहीं होता, इस कारण अनेकों के शरीर के अंग विशेष में मेद वृद्धि होकर तोंद निकल पड़ती है। साधारण दैनिक क्रिया के लिये हम लोगों का चित्त विशेष रूप से आकर्षित नहीं होता। यही कारण है कि मांसपेशी समूह के सञ्चालित होने मात्र से, उनकी सारी क्रिया नहीं हो जाती।

व्यायाम की आवश्यकता—

जब हम लोग चित्त लगाकर किसी मांसपेशी को सिकोड़ते हैं तो उसके भीतर का सब रुधिर विदूरित होता है व अपने साथ ही उस स्थान के क्षय जनित पदार्थों को भी लेता जाता है। इसके पीछे जब मनुष्य थककर शिथिल हो जाता है, तब नाड़ियों में होकर ताजा रुधिर प्रवाहित होता है और नये पुष्टिकर पदार्थ क्षय को पूरा करते हैं। प्रकृति के नियम बहुत ही उत्तम हैं। जिस मुहूर्त में अंग परिचालन के कारण क्षीणता प्राप्त होती है उसके ठीक पीछे दूसरे ही मुहूर्त में तेजस्कर व पुष्टिकर पदार्थों के द्वारा परिपुष्टि हो जाती है। इस भांति हमारे अंग व प्रत्यङ्ग समवर्धित व बलिष्ठ हो जाते हैं। यदि यही परिचालन क्रिया कतिपय मांसपेशियों पर ही समाप्त रहे तो केवल उन्हीं मांसपेशियों की वृद्धि होगी। यही कारण है कि लोहार के हाथ, व पैर गाड़ी पर चढ़ने वालोंके पैर, अन्य अंगों से अधिकतर मजबूत होते हैं। शरीर को पूरी तरह पर बलवान बनानाहो तो प्रत्येकअंगप्रत्यङ्गको मनोयोग के साथ व्यायाम द्वारा समवर्द्धित करना होगा। जो लोग सदा अपने २ नित्य नैमित्तिक कर्मों में लगे रहते हैं, उनकी कई एक मांस पेशियां जिन का काम पड़ा करता है बलिष्ठ व वर्द्धित होती हैं, लेकिन इन लोगों के शरीर के दूसरे अंग निस्तेज व निकम्मे पड़ जाते हैं। इसलिये हम में से हर एक का ही कर्तव्य है कि शरीर के सब या प्रत्येक अंग को ही नियमानुसार व्यायाम द्वारा काम में लावें और इस तरह उन्हें वर्द्धित व बलिष्ठ बनावें। सार यह है कि हरेक मनुष्य को, क्या नर, क्या नारी, उचित है कि कुछ देर तक नित्य प्रति व्यायाम करे और आवश्यक मान कर करे।

व्यायाम सब का ही कर्तव्य कर्म है—

व्यायाम करना सब को ही उचित है। ४ वर्ष के बच्चे से लेकर ६० वर्ष के वृद्ध पर्यन्त शरीर की उन्नति साधन कर सकते हैं, भोजन अच्छी रीति से परिपाक होता है, शरीर पुष्ट, ताजा व बलवान होता है। जैसे स्नान से शरीर का बाहिरी मल साफ़ होता है, उसी तरह

पर नियमित रूप में व्यायाम करने के द्वारा शरीर के भीतर का क्लेद समूह साफ़ हो जाता है। मांसपेशी के चलाने में जो क्षीणता प्राप्त होती है वह भोजनों के द्वारा फिर परिपूर्ण हो जाती है। व्यायाम करना जठराग्नि को प्रदीप्त करता है और खाद्य द्रव्य में से सारांश संग्रह करके रक्त द्वारा सारी क्षतियों को पूरी करने के लिये सारे शरीर में भेजता है इन सब कामों के लिये अधिक ऑक्सिजन की आवश्यकता होती है। व्यायाम के समय श्वास की गति अधिक होने से यह ऑक्सिजन की कमी भी पूरी हो जाती है। विभिन्न अवस्था व विभिन्न समयों में किस तरह पर सब कोई अनायास ही व्यायाम का अभ्यास कर सकते हैं, इस पर आगे क्रमशः प्रकाश डाला जायेगा।

❋ सम्पादकीय ❋

सूर्यरश्मि-चिकित्सा

सूर्य की किरणों द्वारा चिकित्सा करने के यंत्र

साधारणतः सूर्य की किरणों से चिकित्सा करने के लिये किसी विशेष यन्त्र की आवश्यकता नहीं है, तथापि विशेष २ स्थानों पर यन्त्र की सहायता लेने से जल्द फ़ायदा मालूम होता है। इस प्रकार की चिकित्सा करते समय रोगी को किसी गाढ़े रंग का चश्मा लगा देना आवश्यक है। इससे आंखों को अधिक धूप लगने पर भी कोई अनिष्ट नहीं होता। सब शरीर में धूप लगाने की जरूरत हो तो सिर पर बरफ़ की थैली Ice bag रख कर उस में बरफ़ रक्खें, अगर यह न हो सके तो अंगोछे को ठण्डे पानी में भिगो कर सिर पर रखना चाहिये। खुले बराण्डे में, छत पर या मैदान में सूर्य की किरणों द्वारा चिकित्सा करने की व्यवस्था की जा सकती है। घर बनाते समय इस उद्देश्य को ध्यान में रक्खें तो चिकित्सा के लिये बड़ी सुविधा होगी।

सूर्य की किरणों को प्रतिबिम्बित और केन्द्री भूत करने के लिये विशेष प्रकार के कई साधारण और पैराबोलिक (Porabolic) शीशों का प्रयोजन होता है। कांच के लेन्स से भी सूर्य की किरणें केन्द्रीभूत हो सकती हैं। कांच में एक बड़ा दोष यह होता है कि इस में से बहुतसी अलट्रा व्हायोलेट किरणें दूसरी पार नहीं जातीं इसलिये कांच के बदले कार्टज (Quarteg) का बना लेंस काम में लाते हैं। साधारण आतसी कांच (Magnifying glass or sun glass) की सहायता से सूर्य की किरणें केन्द्रीभूत करके सहज ही में छोटे२ घावों की चिकित्सा की जा सकती है। केन्द्रीभूत करने से सूर्य की किरणों की उष्णता भी अत्यन्त बढ़ जाती है, इसलिये केन्द्रीभूत किरणों को रोग के स्थान में डालने के पहिले की उष्णता नष्ट कर देनी चाहिये। इसी कारण यन्त्र से लेन्स के चारों ओर ठण्डा पानी रखते हैं। फिटकरी के पानी में एक चमत्कारिक गुण यह है कि उस में से उष्णता पार नहीं जा सकती, पर प्रकाश की किरणें सुलभता से प्रवेश कर सकती हैं। फिटकरी के पानी में से प्रवेश करके केन्द्रीभूत किये हुये प्रकाश को रोगी के शरीर पर डालने से रोगी को बहुत थोड़ी उष्णता मालूम होती है। रोगी को किसी विशेष रंग की किरणों से चिकित्सा करनी हो तो उसी रंग का कांच बीच में देकर सूर्य की किरणों को आने देना चाहिये। बहुत प्रकार के रोगों में धूप के (Sunbath) स्नान से बहुत फायदा दीख पड़ता है। रौद्र स्नान के लिये विशेष कोई सरंजाम की आवश्यकता नहीं होती, बराण्डा

या छत जिस स्थान में धूप हो कम्बल बिछा कर रोगी को सुला देना चाहिये । रोगी के मस्तक को तकिये के सहारे ऊँचा कर देना चाहिये और सिर को धूप न लगे इसलिये छाता या पर्दे का बन्दोबस्त कर देना चाहिये । ठण्डे जल में भिगोया हुवा अंगोछा या बरफ़ की थैली रोगी के सिर पर रखनी चाहिये, और उसकी आंखों पर गाढ़े नीले रंग का चश्मा लगा देना चाहिये, शरीर पर किसी प्रकार का कपड़ा न रखना ही अच्छा होता है । पहिले दिन १०-१५ मिन्ट से अधिक धूप में रहने देना उचित नहीं । खूब पसीना निकलने के बाद पीठ ऊपर कर के उस पर भी धूप लगने देना चाहिये । रौद्र स्नान के बाद शरीर को मर्दन कर के शीतल जल में स्नान करने से बहुत ही लाभ होता है ।

रोग चिकित्सा—

ऊपर बतलाये हुये रौद्रस्नान से वात, रक्ताल्पता, मधुमेह और मूत्र ग्रन्थि की पीड़ा में स्नायविक दुर्बलता, उपदंश के घावादि, और कई प्रकार के चर्मरोग आदि में विशेष फल प्राप्त होता है । अति दुर्बल रोगी को, हृद्रोग के रोगी को, और ज्वरी के रोगी को रौद्र स्नान (धूप स्नान) करना उचित नहीं । जिन व्याधियोंमें इस चिकित्सा से विशेष फ़ायदा दीख पड़ता है उन्हें हम नीचे लिखते हैं ।

लूपस (Lupus)—

त्वचा का क्षय रोग—इस रोग में त्वचा में छिद्र उत्पन्न होते हैं । यह अति असाध्य रोग है । फिंसेनके चिकित्सालय में इसी रोग की चिकित्सा में आश्चर्यजनक फल प्राप्त हुआ है । किरणों की उष्णता को दूर करके फिर उन्हें रोगग्रस्त स्थान पर केन्द्रीभूत करना चाहिए । लूपस के सिवाय और दूसरे प्रकार के त्वचा के रोगों को भी इसी प्रयोग से फायदा होता है ।

व्रण असाध्य, पुरातन फोड़ा, एक्ज़िमा, गञ्जापन आदि व्याधियों में भी इस चिकित्सा से यथेष्ट लाभ होता है, किरणों को केन्द्रीभूत करने की व्यवस्था न हो तो धूप लगाने से ही कई बार आराम होजाता है ।

जोड़ों का फूल जाना—

क्षय से जोड़ों का फूल जाना या अन्य कारणों से जोड़ों में जलन होना, सादी किरणों से अच्छा न हो तो केन्द्रीभूत किरणों की चिकित्सा से बहुत लाभ होता है । प्रति दो दिन में एक दिन आधे घण्टे तक किरणों का प्रयोग करना चाहिए ।

स्वरयन्त्र का क्षय रोग—

Tuberculosis of Larynx इस रोगमें एक छोटे से दर्पण (Laryngoscope mirror) की सहायता से सूर्य की किरण गले के अन्दर पहुँचाते हैं इस से आराम हो जाता है । रोगी को मुंह फैला कर बिठाना चाहिए, और १५ मिन्टों से आधे घण्टे तक सूर्य की किरणों का प्रयोग करना चाहिये अगर थकावट मालूम हो तो रोगी का बीच २ में मुंह बन्द करदेना उचित है । इस चिकित्सा से इस असाध्य रोग को कभी २ एक दम आराम होते देखा गया है ।

क्षयी (तपैदिक)—

इस रोग वाले को रौद्र स्नान से अनिष्ट होता

आयुर्वेद महा महोपाध्याय रसायन शास्त्री पं० भागीरथजी

कलकत्ता के कुछ

अनुभूत प्रयोग

हिचकी की दवाई--

आजकल हिचकी चाहे जब चलने लगती है। इसमें मनुष्य हैरान हो जाता है। वैद्य डाक्टरों के पास जाकर पैसा खरचने पर भी किसी समय आराम नहीं होता, अतएव सर्वसाधारण के उपयोगी शास्त्रीय प्रयोग पाठकों के भेंट किया जाता है।

१-सुंठी १ मासा गुड़ १ मासा को पीसकर पतला पानी सा बना कर नाक में खूब चढ़ालो। बस एक या दो बार में हिचकी बंद होजायगी।

२-अथवा सुंठी, छोटी पीपल-आंवला-समान भाग पीस कर ६ मासा मधु १ तोला दिन में दो तीन बार चाटने से हिचकी बन्द हो जाती है।

३-अथवा १ या दो काली मिर्चों को नाक में देने से तत्काल हिचकी बन्द हो जाती है।

आजकल कामशक्ति बढ़ानेकी लोगोंको बहुत इच्छा रहती है। अतः शक्तिवर्द्धक साधारण प्रयोग भेंट करता हूँ। अश्वगन्धा का चूर्ण ६ मासा मधु १ मासा नवनीत घृत १ तोला मिला कर प्रातः और सायङ्काल नित्य प्रति १ मासा तक वा ४० दिन तक खाने से तथा ऊपर से दूध पान करने से अद्भुत शक्ति का संचार होता है।

तेल, खटाई, लाल मिर्च, गुड़, सिर्का कांजी से पथ्य रखना।

है, किन्तु उष्णतारहित केन्द्रीभूत प्रकाश को छाती पर डालनेसे कभी २ फायदा भी होता है। किन्हीं डाक्टरों का कहना है कि केन्द्रीभूत नीला किरणों का उपयोग करने से इस रोग को विशेष आराम होता है।

स्नायविक जलन और वेदना—

स्नायविक वेदना हो अथवा फोड़ा या और किसी प्रकार की सूजन या घाव हो तो जहां जलन या पीड़ा होती हो वहां पर नीली किरणें डालने से बहुत आराम होता है। डाक्टर मिनिम कहते हैं कि किसी स्थान पर अस्त्र प्रयोग करने के पहिले नीली किरणें डालने से वह अनुभवशक्ति शून्य या साधारण मात्रा में मर जाता है, और अस्त्र प्रयोग करने से रोगी को बिलकुल दुःख नहीं होता। उनका कहना है कि कोकेन के बदले नीली किरण उपयोग में लाई जानी चाहिये।

विषैले कुत्ते की दवाई--

१-कुत्ते के काटने पर तत्काल, कडुवा तेल, चूना-कत्था समभाग महीन पीसकर लगाना।

२-आक के महीन छोटे२ पत्ते २१ घोट कर गुड़ मिला कर २१ गोली बना कर एक घण्टे के भीतर खा लेने से कुत्ते के विष का असर नहीं होता है।

नकसीर--

२ मासा फिटकड़ी पानी ६ तोला में घोल कर दो चार बार खूब सूंघ लो। इससे नकसीर मिट जावेगी।

अग्नि से जल जाने पर--

बेर की पत्ती पीस कर लेप करने से छाला नहीं पड़ेगा। ठंड पड़ जायगी।

अथवा कछुवे की चर्बी लगाते ही वेदना शान्त होगी, छाला न पड़ेगा।

सर्प की अव्यर्थ दवाई--

बड़े पत्र वाली द्रोण पुष्पी के २ तोला स्व-रस में ११ काली मिर्च घोट कर पिलावे। रोगी को पकड़ कर नाक में पिचकारी देकर शिर तक दवा पहुँचाये और दो तोला स्वरस पिलावें। इस प्रकार दो दो घण्टे में ४, ६ बार पिलानी चाहिए। रोगी को ज़रा भी सोने नहीं देवे। दवा की पिचकारी देकर नाक के छिद्र को ५।१० मिनट ऊँगली से बन्ध रख देवे। रोगी को खाट पर रखना कम से कम २४ घण्टे भूमि में नहीं सुलाना। इससे सैंकड़ों सर्प काटे हुए रोगी आराम हुए हैं। यह दवा एक परोपकारी महात्मा द्वारा मालूम पड़ा है। यदि यह दवाई ठीक ढँग से दी जायगी तो सर्प का काटा कभी नहीं मरेगा।

अनुभूत प्रयोग

हेयरटॉनिक

(बालों को मज़बूत करनेवाला)

बेरम (bayrum) २. भाग

फ्लूइड एक्सट्रैक्ट ऑफ़पेज—५ भाग

टिंचर कैप्सिकम—१.५ भाग

कुनैन सल्फेट—१.३ भाग

मेन्थौल—०.१ भाग

क्लरोफार्म—४ भाग

एलकोहल—५ भाग

जल—६२.८५ भाग

खुशबू—.२५ भाग

विधिः—पहले क्लोरोफार्म और एलकोहल को मिला लेवें। और उस में कुनीन और मेन्थोल घोल देवें। दूसरी जगह फ्लूइड एक्सट्रैक्ट ऑफ़पेज़ बेरम में मिलादेवें। फिर इसमें जल फिर उसमें टिंचर कैप्सिकम और खुशबू मिला देवें, फिर इसमें जल मिला देवें इसके बाद पहला तैयार किया कुनैन का सोल्यूशन मिला देवें, तीन दिन तक रक्खा रहने देवें। फिल्टर पेपर में छान लेवें। यह सब बनाने की विधि चीनी या शीशेके वर्तन में करनी चाहिये।

आतशक

गर्मी खारिश वगैरा खून की बीमारियों के लिये अक्सीर है। बहुत बार अनुभूत है)

शीशम की लकड़ी का बुरादा ४ छटांक

चोबचीनी गुलाबी का बुरादा २ छटांक

उन्नाब (हिरायती) २५ दाने

सन्दल सफेद ३ तोले

सन्दल सुर्ख ३ तोले

शाहतरा २ तोले

हड़ का बक्कल २ तोले

अफ़तीमून २ तोले

बिसफायज़ २ तोले

कसतर्की २ तोले

गुलेनीलोफर २ तोले

गुलाब का फूल ३ तोले

गुलबनफ्सा ३ तोले

सनाय १० तोले

सुरञ्जान शीरीं २॥ तोले

विधिः—पहिली दो दवाओं को छः सेर गर्म पानी में एक रात दिन बराबर भिगोवें फिर उबाल कर (पानी पकते २ आधा रह जाय) फिर मलकर छानलें, उस पानी में बाकी सब दवायें भिगोदें एक रातदिन तक भिगोकर उबाल कर छानलें। इसमें १॥ सेर मिश्री डालकर शर्बत बनालें। मात्रा २ तोलेसे ४ तोले तक सायं प्रातः जल में डालकर पीवें।

मोतियों का खमीरा—

अनबिध मोती (बसरे की पक्की खाड़ी का) १ तोले, ज़हरमोहरा ख़ताई असली माशे ४, यशब सब्ज़ माशे ६, कहरुवा शमई माशे ६, वँशलोचन माशे ६ सन्दल सफेद अर्क गुलाब में घिसा हुआ माशे ६, गाजुवाँ के फूल माशे ६, सेवती के फूल माशे ६, गाजुवाँ के पत्ते माशे ६, मिश्री ३० तोले शहद ७ तोले वर्क चांदी माशे ६, अर्क गुलाब अर्क वेदमुश्क १०-१० तोले।

विधि:—पहली चार चीज़ों को अर्क गुलाब और वेदमुश्क में खूब बारीक सुर्मे की मानिन्द पीस लें, बाकी चीजों को बारीक खुश्क पीस लें, मिश्री को अर्क गाजुवाँ में चासनी करलें, चासनी तैयार होने पर सब चीज़ें मिला लें बस तैयार है। मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक। यह दिल और दिमाग को ताकत देनेमें बड़ा अजीब है। दिलकी धड़कन, गर्मी की घबराहट तथा दिल की बेचैनी में बड़ा मुफ़ीद है, मोतीझारा, चेचक, मियादी बुखार, खसरा में देने से दिल की ताकत को बनाये रखता है मरीज़ की शक्ति नष्ट नहीं होने देता और दानों को आसानी से बाहर निकाल देता है। यदि किसी को पथरी की वजह से दर्द-गुर्दा या गुर्दे में जख्म हो तो इसमें हजरल उल-यहूद और सैगसरेमाही ६-६माशे और बढ़ा दें।

× × + × × ×

कुन्दरु गोंद को ४॥ माशे आधा पाव पानी में भिगो कर सुबह उस का पानी नितार कर छान कर पीने से २१ रोज़ में भूल की बीमारी दूर हो कर याददास्त अच्छी हो जाती है।

× × × × × +

पेचिश, पुरानी संग्रहणी में अच्छा फायदा करता है—इन्द्रजौ, मोचरस, धाय के फूल सोंठ-भांग की पत्ती भुनी हुई सब को बारीक करके सफूफ-बना लें २॥ माशे सुबह ठन्डे पानी से फंकी लेवें। पथ्य—मसूर, चावल, दही चावल। गरम मसाले वगैरह न खावें।

× × × × × ×

खूनी बवासीर के लिए शर्तिया—मकई के ऊपर के बाल माशे ७, काली मिर्च माशे ७ दोनों घोट छान कर पीने से बवासीर का खून बन्द हो जाता है।

× × × × × ×

तेज खून को बन्द करने के लिए—मेंहदी २ माशा, पाषाणभेद असली एक हिस्सा कूट छानकर पानी में हथेली और पैरों के तलवे पर खूब मोटा २ लेप करदें।

पाचक गोलियां—

आंवला छिला हुआ माशे २, धनिया खुश्क माशे ३, तुख्मजका छिलका माशे २, नमक लाहौरी माशे ६, काला नमक माशे ६, वँशलोचन माशे ३, सफेद चन्दन माशे २, अनारदाना ४ तोले, जरिश्क ४ माशे, सीमाकका छिलका ४ माशे, काला जीरा २ माशे, सब्ज पौदीने की पत्ती ३ माशे, आधा पाव नीबू के अर्क में घोट कर चने बराबर गोलियां बना कर भोजन बाद खाया करें। निहायत

हाजिम क्षुधावर्द्धक, वमन को दूर करने वाली गोलियां हैं।

बवासीर सब प्रकार की पर--

शु० रसौत, कत्था गुलाबी एक२ तोले, नीम के बीजों की गिरी १ तोले, बकायन की गिरी १ तोले, कलमी शोरा २ माशे, मूली का रस बोतल १ सब दवाओं को बारीक करके लोहे की कड़ाही में डाले, मूली का रस डाल कर घोटते रहें, जब रस सब खुश्क हो जावे चने बराबर गोलियां बनावें, २-२ गोली सुबह शाम पानी से लेवें। ये गोलियां खून को भी साफ़ करती हैं।

श्वेत प्रदर पर--

शतावर, मोचरस, गोखरू, छोटी कटेली, कीकर की फली, तालमखाना, मजीठ, नरकचूर, मूसली काली, सतिगलोय मैदा लकड़ी, छोटी इलायची, वंशलोचन, खसखस के बीज, सालम मिश्री, कीकर का गोंद, कतीरा, वँगभस्म, सिरवाली, सफेद मूसली, बहमन सुर्ख सफेद, शकाकुल, बीजबन्द, उटंगन के बीज, गुलाब का जीरा असली हरएक चार माशे, कुलफे के बीज, सन्दल सफेद, ढाक का गोंद हरएक पाँच माशे सब के बराबर मिश्री। मात्रा ६-६ माशे दूध या पानी से लेवें।

कलौंजी

इसका क्षुप काला जीरा या कड़ुजीरा जैसा ही होता है। इसके बीज को कलौंजी, मगरैलो या मुग्रेला हिन्दी, बंगला और मराठी भाषा में कहते हैं। संस्कृत में इसे स्थूलजीरक, उपकुंचिका आदि कहते हैं। कई लोग कांदा या प्याज के बीज को ही कलौंजी भ्रमवश मानते हैं। प्याज का बीज भी कलौंजी जैसा ही होता है, किन्तु कलौंजी को रगड़ने पर जो सुगन्ध आती है, वह पलाण्डु बीज में नहीं आती।

कलौंजी बीज त्रिकोणाकार द इञ्च लम्बा, ऊपर से कालेवर्ण का खुरदरा, अन्दर से श्वेत तेलयुक्त होता है। हाथ में लेकर रगड़ने से नीबू की सुगन्ध जैसी गंध आती है। इसके क्षुप के पत्र आदि जीरे के ही पत्रादि जैसे होते हैं। कलौंजी गरम मसाले में या कढ़ी वगैरा में डाली जाती है।

गुणधर्मः—

कलौंजी में ½ भाग बाष्परूप से उड़ने वाला पीतयुक्त श्वेतवर्ण का तैल होता है, जो कटु, सुगन्धि, जठराग्निदीपक, वीर्यवर्द्धक, अजीर्णनाशक, कोष्ठवात प्रशमक, ज्वरहर, आध्मान, वातगुल्म, रक्तपित्त, कृमि, पित्त, आमदोष, शूलादि नाशक है। इसमें मूत्रल, आंत्रकृमिनाशक, रजस्रावक तथा अन्य औषधियों के विकारों को शमन कारक गुण हैं। गर्भाशय पर इसकी प्रत्यक्ष उत्तेजक क्रिया होती है। यह गर्भाशय का संकोचन एवं विकासन जोर के साथ करता है, जिससे ऋतुस्राव साफ़ हो जाता है।

पीड़ितार्तव के निवारणार्थ इसकी मात्रा ५ से १० रत्ती तक दी जाती है। गर्भवती स्त्री को इस मात्रा से अधिक मात्रा में सेवन कराने से गर्भस्राव होने का भय है। प्रसूति सम्बन्धी विकार जैसे ज्वर, क्षुधामांद्य, योनिस्राव, योनिपीड़ा आदि पर यह अपूर्व गुणदायक है। कलौंजी में दुग्धोत्पादक शक्ति भी सराहनीय है। प्रसूता को इसका सेवन कराने से स्तनों में भरपूर दुग्धोत्पत्ति होती है, तथा अग्निमांद्य, अतिसार, आदि विकार भी दूर हो जाते हैं। साधारणतया इसकी मात्रा ६ माशा से २ तोला तक की है। बच्चों को तथा गर्भवती स्त्री को इसे ५ से ८ या १० रत्ती तक की मात्रा में ही देना चाहिये। इसके सेवन से तैल या घृत को पचाने की शक्ति बढ़ती है। स्वेद या पसीने को लाने का भी गुण इसमें पाया जाता है।

प्रयोगः—

(१) त्वग्रोगपर—त्वचा पर फोड़े, फुंसियां उठी हों तो कलौंजी को पीसकर, तिल तैल में मिला लगावे। इससे खुजली दूर हो जाती है।

किन्तु नमक कम खाना चाहिये।

(२) एकांतरा आदि विषम या मियादी ज्वरों पर:—कलौंजी अधकच्चो भूनकर और महीन चूर्ण कर १ तोला तक की मात्रा में, सम-भाग गुड़ मिला सेवन करावे।

(३) प्रतिश्याय या सर्दी लगी हो तो कलौंजी को भूनकर, पीस तथा वस्त्र की पुटली में बांध बार २ सुंघाने से, शान्ति प्राप्त होती है।

(४) पित्त शमनार्थ (जी मिचलाता हो या कै होते हों) इसका महीन चूर्ण शक्कर में मिला सेवन करावे।

(५) अजीर्ण, अग्निमांद्य, आम, शूल आदि पर—इसका अष्टमांश क्वाथ सिद्धकर, उसमें थोड़ा काला नमक मिला पिलावे।

(६) प्रसूति के पश्चात् कभी २ योनि मार्ग में अत्यन्त ही वेदना होती है, उसके शमनार्थ-कलौंजी, गजपीपल और संचर नमक मद्य में मिला पिलाते हैं। और योनी पर इसकी जड़ का लेप करते हैं।

(७) रेचनार्थ—इसके चूर्ण को रेचक द्रव्यों के साथ मिला जल के साथ सेवन कराने से दस्त खुलासेवार हो जाता है, पेट में मरोड़ वगैरा नहीं होने पाता। ध्यान रहे कलौंजी में रेचन गुण नहीं है, किन्तु आन्त्रप्रशमन का विशेष गुण इसमें है। तथा आंत्र के गोल कृमियों को यह नष्ट कर देती है।

(८) शोथ एवं वेदनायुक्त अर्श पर – कलौंजी की धूनी देने से वेदना शमन हो जाती है।

(९) ऊनी या रेशमी वस्त्रों को कीटकों से सुरक्षित रखने के लिये, उनकी तहों में कलौंजी और कपूरचूर्ण एकत्र मिला फैला देते हैं। कपूर न मिलाते हुए, केवल कलौंजी से भी यह कार्य सम्पन्न होता है।

(१०) यकृत् की विकृति से यदि कामला रोग हुआ हो तो कलौंजी बीज को स्त्री दुग्ध में पीस, दोनों शाम नस्य प्रयोग करे।

(११) शरीर का कोई भाग जकड़ गया हो या वेदनायुक्त हो तो उस स्थान पर कलौंजी की मींगी का महीन चूर्ण गरम कर मर्दन करे, शीघ्र ही लाभ होता है।

(१२)वायुके रोधनके कारण सर्व शरीर जकड़ गया हो तो कलौंजी बीजों का चूर्ण ७ से १६ माशे तक, जल मिला ३ व ४ टिकिया बनावे तथा आग पर सेंक कर गो घृत में मिला सेवन करावे, नित्य ७ दिन तक, पूर्ण लाभ हो।

(१३) हृदय में अधिक धड़कन हो, हृदय की गति अनियमित हो या हृदय दौर्बल्यता पर-कलौंजी का महीन चूर्ण १ से ३ मासा तक, गधी का दूध ५ तोला में मिला पिलावे। नित्य १४ दिन तक, पूर्ण लाभ हो।

वैद्य कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी० ए०

आयुर्वेदाचार्य चांदा सी० पी०

मँगल और विनोद

'इटावा' के पाक्षिक पत्रों की देखा देखी लखनऊकी 'सुधा' सुहागिन भी पन्द्रहवें दिन ठुमकने लगी हैं। इसी लिये तो विश्वेश्वरदयाल वैद्यराज जी ने 'सुधा' से इनकमटैक्स के रूप में उसका एक आभूषण (दूध का स्वास्थ्य से सम्बन्ध वाला लेख) छीन कर अपनी प्यारी 'अनुभूत योगमाला' को पहना दिया है। देखना है रूपेन्द्रनाथ शास्त्री भी छीना छीनी करते हैं, या एक 'चुप' से लाखों बला टालते हैं।

× × ×

कुछ ही दिनों में अनुभूत योगमाला देवी ने भी रंगीन साड़ी पहनना सीख लिया है। यही देख कर तो उनके आशिकों ने लार टपकाना शुरू किया।

× × ×

पर इसमें बेजा क्या है, आज कल तो स्त्रियों के उत्थान का जमाना है। नये वस्त्रों में सज धज कर निकलना सभी स्त्रियों (पत्रिकाओं) ने स्वीकार किया है, यह देख कर अगर प्रौढ़ा 'माला' का जी चटपटाने लगा, तो क्या बेजा है? कुछ नहीं जी खरबूजे को देख कर खरबूजा अपना रंग बदलता है।

× × ×

आज कल पं० देवदत्त शर्मा जी धनंजय आरोग्यभवन के अखाड़े में कितने पत्र डंड पेलते हैं। कोई पंजाबी भाई बता सकता है?

× × ×

इटावा के 'रत्नाकर' जी मुर्दे से जिन्दा हो चुके थे पर आज कल पता नहीं कि किस अस्पताल की हवा खा रहे हैं। सुनते हैं सब पत्रों की देखा देखी 'रत्नाकर' जी भी अपना विशेषांक निकालेंगे। जहां तक संभव है, शाहजहांपुरी 'मित्र' महाराज का प्रोपगेंडा भी भड़कने वाला है।

+

विशेषांकों की बहुतों से अगर हकीम जी की मेज टूट गई, तब तो बहुतबेजा बात होगी। दुहाई है गवर्नमेंट दयालु की हुजूर किसी तरह इस बाढ़ से गरीबों की रक्षा कीजिये।

——'सरपट'

मोटर पर भूतों का आक्रमण

अंग्रेज महिला बेहोश

अहमदाबाद में सनसनी

'इवनिंग न्यूज़ आफ इण्डिया' में भूतों की लीला का एक अत्यन्त भयानक समाचार इस प्रकार प्रकाशित हुआ है कि अहमदाबाद शहर के के बाहर एक सुनसान सड़क पर, जहां मुसलमानों की प्राचीन कबरें बनी हुई हैं, एक अंग्रेज कारीगर की स्त्री आधी रात से थोड़े ही समय पूर्व मोटर में आ रही थी। उसने बीच सड़क पर एक सफेद आदमी खड़ा हुआ देखा। उसने मोटर एक दम वहीं रोक दी और ज्योंही मुड़कर दाहिनी ओर को देखा त्योंही दो व्यक्ति लड़ते हुए दिखाई दिये। दोनों में भयङ्कर युद्ध होने के पश्चात एक व्यक्ति ने तलवार से दूसरे का सिर काट डाला। सिर कटे हुए व्यक्ति के गले से खून की धारायें सीधी मोटर की ओर छूटने लगीं। कारीगर की स्त्री एकदम भय के मारे कांपने लगी और बेहोश हो गई। थोड़ी देर के बाद उसने अपने तई तथा अपनी मोटर को कुछ गजों के फासले पर एक खेत में खड़ा पाया। जब उसने इस दुर्घटना का समाचार अपने जर्मन मित्र से कहा तो उसने दूसरी रात को उसके साथ मोटर में घटनास्थल पर जाने की प्रतिज्ञा की और जब यह दोनों व्यक्ति घटनास्थल पर पहुँचे तो इन्होंने बड़े जोर की हसने की आवाज़ सुनी और थोड़ी देर बाद उन्हें दो बड़े बड़े काले हाथ मोटर पर आते हुए दिखाई दिए। परन्तु कारीगरनी के जर्मन मित्र ने खंजर से उन्हें काट डाला और इस प्रकार कारीगरनी को बचा लिया। कहा जाता है कि कारीगरनी के गले में दाग पड़ गये हैं। इस खबर से शहर में सनसनी फैल गयी है। (अर्जुन)

सांप काटे का अजीब इलाज़

१२ वर्ष के लड़के ने इनाम लेने से इनकार कर दिया

जूनागढ़, २४ अगस्त—सांप के काटे का एक बिलकुल ही नया और विचित्र इलाज १२ वर्ष के एक छोटे लड़के ने धोराजी में कर दिखाया।

गांव के एक आदमी को बहुत ज़हरीले सांप ने काट खाया था, बैल गाड़ी पर धोराजी ले जाया गया, परन्तु धोराजी पहुँचने के पूर्व ही उस आदमी की सब नस नाड़ियां सूज गयीं और वह बेहोश हो गया। स्थानीय दरगाह के पास गाड़ी के पहुँचने पर १२ वर्ष के एक लड़के ने उसे देखा और उसको स्वस्थ कर देने का ज़िम्मा ले लिया।

लड़का उस आदमी के गले के पास एक घाव कर खून बाहर निकालने लगा। लोगों को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि इस प्रकार खून निकलने के थोड़ी ही देर बाद मूर्छित व्यक्ति होश में आ गया। तब लड़के ने खून बन्द करने के लिये उस के घाव पर अपनी थूक लगा दी।

आदमी बिलकुल भला चंगा हो जाने पर लड़के को इनाम दिया गया पर उसने किसी तरह का इनाम लेने से इनकार कर दिया।

(नवयुग से)

REGD NO L 2701.

जीवनसुधा

की

पुरानी फाइल समाप्त होचली

शीघ्रता कीजिए नहीं तो पछताना पड़ेगा।

क्योंकि ?

यह आप को पीयूषपाणी कुशल चिकित्सक बनाएगी।

इसके अन्दर देखिए—

बड़े बड़े कविराजों, डाक्टरों, हकीमों के सिद्ध अनुभवी ख्वानदानी नुसखों को।

इसके अलावा

सार गर्भित अच्छे २ लेखों को जिनको पढ़ कर आप वैद्यक के विद्वान् बन जायेंगे।

पीछे के चारों वर्ष की फायलें विशेषांकों सहित सिर्फ ८) मात्र

मैनेजर

जीवन-सुधा कार्यालय,

चांदनी चौक, देहली

... देहली में छपा।

जीवन-सुधा

इस अंक के खास लेखक—

(१) पं० चन्द्रशेखर जी पाण्डेय 'चन्द्रमणि' धन्नांवा (रायबरेली)।

(२) वैद्यराज श्री स्वामी चैनदास जी (लाडनूं) मारवाड़।

(३) डाक्टर वेदश्यामदत्त जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य जालन्धर।

(४) प्रोफेसर श्री पं० धर्मानन्द जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य गुरुकुल कांगड़ी।

(५) श्री डाक्टर एम० जी० मुकर्जी।

(६) श्री डाक्टर कार्तिकचन्द्र जी वसु एम० बी० कलकत्ता।

प्रकाशक—
जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—
प्रोफ़ेसर पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क ≡)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ≈), धर्मार्थ औषधालयों व छात्रों को १॥) वार्षिक में भेजी जायगी. सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक, होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो फिर मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्त्ता

वृहत् आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार, जौहरी बाजार देहली

विज्ञापन छपाई का रेट

एक वर्ष		६ मास	३ मास	एक बार
समस्त टाइटल पेज	४०)	२२)	१२)	४)
आधा ,,	२१)	११)	६)	२॥)
साधारणपृष्ठ समस्त	३६)	१५)	१०)	३॥)
,, आधा	२०)	१०)	५॥)	२)

विज्ञापन छपाई सम्बन्धी रेट बिल्कुल निश्चित हैं इसके लिए लिखने की तकलीफ न उठाएं।

मैनेजर विज्ञापन-विभाग "जीवन-सुधा" देहली।

ॐ

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ४ | चैत्र, वीरनिर्वाण सं० २४६०, वि० सं० १९९१, अप्रैल सन् १९३४ | अङ्क ३

आयुर्वैदिक पत्र

(चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि')

नित आप के वैद्यवरों के सन्देश,
स्वदेश की व्याधि मिटा रहे हैं।

प्रकटाकर औषधियों का प्रभाव,
विशेषता स्वीय दिखा रहे हैं।

उपकार की बानि जिन्हें है पड़ी,
मरते हुए को भी जिला रहे हैं।

बन जीवन-ज्योति की जीव-प्रभा।
वह जीवन-दीप जला रहे हैं॥

आयुर्वेद और कविगण

लेखक—
(श्री० चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि')

शताब्दी नहीं, युग नहीं, अनादि काल से प्रकृति देवी के क्रीड़ा क्षेत्र इस संसार में आयुर्वेद अपना अखण्ड राज्य कर रहा है। हाँ, सचमुच! प्राणी-जन की उत्पत्ति के साथ ही आयुर्वेद की आवश्यकता हुई। उनकी नाना प्रकार की बाधायें नष्ट करने का श्रेय आयुर्वेद को ही है। दैहिक के अतिरिक्त दैविक और भौतिक ताप भी आयुर्वेद नष्ट कर सकता है। इसकी व्यापकता के विषय में किसी को संशय न होना चाहिये। विज्ञान, जिसके आविष्कारों से आज सभ्य-संसार आश्चर्य-चकित है, वह आयुर्वेद का ही एक प्रधान अंग है।

यद्यपि इसकी परिभाषा करते हुए इसमें विज्ञान की भिन्नता पाई जाती है, तो भी हमें विचार करने की आवश्यकता है यदि हम इस की व्याख्या करते हुए 'आयुः' के आगे 'विद ज्ञाने' धातु से बने हुए रूप 'वेद' को मिला कर अर्थ निकालते हैं, तो केवल 'आयु का जानने वाला' ही अर्थ निकाल सकते हैं। किन्तु इससे हमें संतोष नहीं। सिन्धु में भरे हुए अगाध जल की जगह हमें एक ऐसा बूँद चाहिये, जिस के अन्दर सिन्धु अन्तर्हित हो। अब हमें 'आयुर्वेद' शब्द को व्यापक बना लेना चाहिये। विज्ञान की करामात, अनेक प्रकार की रसायनिक क्रिया और औषधि-गुण-विवेचन तथा चिकित्सा प्रणाली सब आयुर्वेद में ही तो अन्तर्हित हैं।

पाठक गण! क्षमा करना, ऐसे विवेचन की आवश्यकता यहाँ नहीं। लेख के शीर्षक से भिन्न ही हम बहके जा रहे थे। उपरोक्त विवेचन के लिए दूसरा लेख लिखना होगा। आवश्यक और अनावश्यक का विचार तो प्रत्येक स्थल पर होना

चाहिये अस्तु !

आयुर्वेद साहित्य का प्रमुख अंग है। प्रत्येक कवि के लिये इसका ज्ञान आवश्यक है। बिना आयुर्वेद के ज्ञान के कोई पूर्ण कवि कहा ही नहीं जा सकता। किसी के रूप वर्णन में बिना आयुर्वेद ज्ञान के कोई क्या कर सकता है। आजकल— नहीं, नहीं, सर्वदा से मनो-विज्ञान से भरी हुई कविता को ही लोग कविता कहते हैं वैसे तो सभी कवि बनने का हौसला रखते हैं।

मनो-विज्ञान की विस्तृत विवेचना करने वाले को सबसे पहले आयुर्वेद का भली प्रकार अध्ययन करना चाहिये। बिना इस ज्ञान के कोई लाभ नहीं। इन्द्रियों के विषय, और तन्मात्राओं के ज्ञान के बिना मनो-विज्ञान मुश्किल है। प्रथम इन्द्रिय-प्रकार अर्थात्—

पंच बुद्धीन्द्रियाण्याहुः पाक्तनानीतराणि च।
कर्मेन्द्रियाणि पंचैव कथयन्ते सूक्ष्म बुद्धिभिः॥

जानकर तब कहीं मन-ज्ञान हो सकता है। गीता में—

"इन्द्रियेभ्यः परं मनः"

कहा है मन उभयात्मक है। अर्थात् बुद्ध्यात्मक के साथ ही क्रियात्मक भी है। क्रियात्मक शक्ति से कार्य करता है और बुद्ध्यात्मक से विवेचन करता है, उसी विवेचन को हम बुद्धि कहते हैं। जिसे आचार्यों ने 'मनसस्तु परा बुद्धिः' कहा है। और यही मनो-विज्ञान की पहली सीढ़ी है।

उपरोक्त विज्ञान के प्रभाव से ही कविता रचने वाले कवि कहां तक सफल हो सके हैं, यह उनके स्थायी साहित्य अर्थात् पुष्ट वस्तु ही अस्तित्व क़ायम रख सकता है।

आदि कवि महर्षि वाल्मीकि जी की रामायण उलटिये। आप उसमें स्थान स्थान पर आयुर्वेद, ज्योतिष, विज्ञान, दर्शन, न्याय आदि आदि विषयों की अधिकता पायेंगे और इन्हीं विषयों की बदौलत उनकी रचना अमर हो गयी है। शताब्दी नहीं, युग बीत जायँ, परन्तु रामायण का नाम अमरत्व स्थायी रहेगा। इसके रचयिता उस नीम हकीम की तरह नहीं, जिसने—

पहले नमक छिड़क कर, ज़ख्मोंको कसके बांधा,
टाँका लगा लगा कर, फिर खोल खोल डाला

ऐसे हकीम या वैद्य रोगका निदान भी नहीं कर पाते। बावले मीर की तरह वे भी यही कह देते हैं—

इक आग सी लगी है, क्या जानिये कि क्या है।

ऐसे ही वैद्यों को कबीरदास ने बेतरह फटकारा है।

जाहु वैद घर आपने, तेरा किया न होय।
जिन या वेदन निर्मयी, भला करेगा सोय॥

बस, चले जाइये आप। मेरी दवा न की जायगी तो कोई परवा नहीं। लोग कहते हैं, कि बीमार का साथी वैद्य है, मगर मुझे आप की कोई ज़रूरत नहीं। साथी ही बनाना है, तो अभी भी दो साथी मौजूद हैं।

कभी अफ़सोस है आता, कभी रोना आता।
दिले बीमार के हैं दो ही अयादत वाले॥
[ज़ौक़]

अमीर ने इसका समर्थन भी किया है:—

अमीर आया जो वक्तेबद तो सबने राहली अपनी:
हज़ारों सैकड़ों में दर्दोग़म दो आशना ठहरे।

समझे आप, इन दो आशनाओं के होते कोई अकेला नहीं कहा जा सकता। अगर दवा की जायगी, तो किसी योग्य वैद्य की ! जो भले प्रकार उपचार कर सके। हां !

उर में घाव रूप से सेंके, हित की सेज बिछावै
दृग-डोरे सुइयां वर बरुनी, टाँके ठीक लगावै॥

यह कविरत्न सत्यनारायण जी हैं, जिनकी कविता आयुर्वेद विषयसे लबालब भरी है। आपने किसी वियोगिनी स्त्री के रोग का निदान अच्छी प्रकार करके तब कहीं उपरोक्त उपचार बताया है। और पथ्य भी उसी के अनुरूप ही है। जरा यह भी देखिये:—

मधुर सचिक्कन अंग अंग छवि हलुका सरस खवावै।
श्याम तबीब इलाज करैं जब तब घायल सचुपावै॥

वाकई कमाल है। रोग का निदान करना ही तो ज़रा मुश्किल है दवा करना तो सभी जानते हैं। बग़ैर निदान के यही होगा कि —

"मर्ज़ बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा की।"

मगर वैद्य और हकीम कब मानने वाले। उन्होंने अनकों प्रकार की युक्ति निकाली। यूनानी, आयुर्वेदिक, होमियोपैथिक, एलोपैथिक, प्राकृतिक आदि आदि चिकित्साओं से रोगी के नाकों दम कर दिया। किसी के मना करने का ख्याल न करके।

"आने वाले आते हैं यूं फांद कर दीवार को।"

और —

'मान न मान मैं तेरा मेहमान'

की कहावत के अनुसार ही उन्होंने किया, आखिर हिम्मत छूट ही तो गयी। तभी तो कबीर साहब ने उन अकल के पुतलों को समझाया कि —

प्रेम बान जिहि लागिया, औषध लगत न ताहि।
सिसकि सिसकि कर मरि-मरि जियें, उठें कराहि-कराहि॥

× × × ×

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी एक विरहिनी के काम ज्वर का निदान करते हुए निम्न पद्य लिखा है :—

थाकी गति अंगन की मति परि गयी मन्द।
सूखी झाँकरी सी ह्वै के देह लागी पियरान॥
बावरी सी बुद्धि भयी, हँसी काहू छीन लई।
सुख के समाज जित तित लागे दूरि जान॥
'हरीचन्द' रावरे विरह जग दुख भयो।
भयो कुछ और होनहार लागे दिखरान॥
नैन कुम्हलान लागे, बैनहू अथान लागे।
आओ प्राननाथ, अब प्रान लागे मुरझान॥

कामज्वर के निदान का वर्णन करते हुए वियोगिनी का कैसा साफ़ चित्र अंकित किया है। इसे कहते हैं काव्य कौशल !

अब ज़रा बिहारी जी की रचना देखिये ! आप कब के चूकने वाले थे। आखिर यही कहा—

जो वाके तन की दशा, देख्यौ चाहत आप।
तौ बलि नेक बिलोकिये, चलि औचक चुपचाप॥

हाँ पीछे फिर यह न कहा जाय कि—

उसके देखे से जो आ जाती है मुँह पर रौनक़।
वह समझते हैं, कि बीमार का हाल अच्छा है॥

इसीलिये 'चलि औचक चुपचाप' कहा गया है।

× × × ×

मानसकार गोस्वामी तुलसीदास जी भी आयुर्वेद के पूर्ण ज्ञाता थे। उनकी रचनाओं में उचित स्थलों में आयुर्वेदीय अनुभूत प्रयोगों का वर्णन मिलता है। अधिक न लिखकर एक ही चौपाई हम उद्धृत करते हैं—

सेइय भानु पीठि उर आगी।
स्वामी सेइय सब छल त्यागी॥

यहाँ पर 'भानु-पीठि' और 'उर आगी' में आयुर्वेद कूट कूट कर भर दिया गया है। सूर्य के सम्मुख निहारने से नेत्रों में तिमिर हो जाता है और पृष्ठ भाग में घाम हितकारी है। रीढ़ की हड्डियों में सूर्य रश्मियों के लगने से जठराग्नि बलिष्ठ होती है। यह बात सर्व-सिद्ध है कि सूर्य ही हमारे अन्न को पचाता है, इसी लिये कहा गया है कि 'सेइय भानु पीठ'। अब बाकी रहा 'उर आगी'। आप आग की तरफ पीठ करके बैठ जाइए पीठ भले ही गरम हो जाय, परन्तु आपके शरीर से शीतता न दूर होगी। शीत का प्रकोप बाह्य ही नहीं भीतर भी होता है, उस पीठकी तरफ की अग्नि नष्ट नहीं कर सकती और सामने से श्वास के द्वारा जो तप्त वायु अन्दर प्रवेश करती है वह फेफड़े में होकर हृदय में आये हुए रक्त को गर्म कर देती है और स्वयं भी अपनी नाड़ियों के मार्ग से सारे शरीर को उष्ण कर देती है। इसीलिये 'उर आगी' कहा गया है। धन्य हो गोस्वामी तुलसीदास जी! आपकी कृति क्यों न आदरकी दृष्टिसे देखी जाय।

अब देखिये आदि कवि बाल्मीकि जी की रचना। जिस वक्त रावण की शक्ति से लक्ष्मण जी आहत हुए थे, तब श्री रामचन्द्र जी को विश्वास हो गया, कि लक्ष्मण की मृत्यु हो गयी। आप का विलाप वानरों को और भी सन्तप्त करने लगा। उसी समय आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान सुषेण ने लक्ष्मण की परीक्षा करके जो शब्द कहा है, वे बाल्मीकि जी के ही शब्दों में देखिये:—

न मृतोयं महाबाहो लक्ष्मणो लक्ष्मिवर्द्धनः।
न चास्य विकृतं वक्त्रं नापि श्यावं न निष्प्रभम्॥
सुप्रभं च प्रसन्नं च मुखमस्याभि लक्ष्यते।
पद्म रक्त तलौ हस्तौ सुप्रसन्ने च लोचने॥
एवं न विद्यते रूपं गता सूनां विशांपते।
दीर्घायुषस्तु ये भत्योस्तेषां तु मुखमीदृशम्॥
[वा० रा० यु० कां. स. १०२ श्लो० १५।१६।१७]

जीवित और मृत की पहचान महर्षि ने किस खूबी के साथ मुख और नेत्रों द्वारा व्यक्त की है। आपके विषय में अधिक क्या कहा जाय, आखिर तो आप आदि कवि के आसन पर विराजमान हैं।

अब हम कवि कुल-गुरु कालिदास जी की कृति को उद्धृत करके इस लेख को समाप्त करते हैं। उत्तरमेघ में मेघों से अपनी प्रिया की पहचान कराता हुआ विरही यक्ष प्यारी के रोदन कल्पना करके उसके नेत्रों के फूलने और होठों की श्वास-गर्म उच्छ्वासों से नष्ट होने की पहचान बताता है:—

शीत पित्त रोग और उसकी चिकित्सा

(लेखक—स्वामी चैनदास वैद्य लाडनूं -मारवाड़)

यह शीतपित्त रोग शारीरिक त्वचा गत रोगों में से एक रोग है। इस शीतपित्त रोग को ऐलोपैथिक में (Articaria) आर्टी केरिया. यूनानी में शरी और बोल चाल में लोग "पित्ती" या 'पित्ती उछलना' कहा करते हैं। आयुर्वेद शास्त्र में इस को दोषानुसार उदर्द, उत्कोट और कोठ कहते हैं: किन्तु इसका आयुर्वेदीय वास्तविक शुद्ध और मुख्य नाम शीतपित्त ही है। शरीर में इस शीतपित्त रोग के प्रकट हुये का—

सामूहिक रूप से चिन्ह

मुख्यतः त्वचा पर शरीर के किसी एक भाग में अथवा सम्पूर्ण शरीर में अत्यन्त खाज तथा जलन सहित न्यूनाधिक बड़े और परिमित उभार युक्त ददोड़ों का होना है। इन ददोड़ों की आकृति का कोई खास एक नियम नहीं, कभी गोल कभी लम्बे और कभी चपटे-किंचित श्वेत तथा विशेष कर लाल रंग के होते हैं। इनके विस्तार का आकार उड़द की दाल से लेकर करीब रुपये के बराबर तक होजाता है। शरीर में इन ददोड़ों का उभार कभी तो खासा दूर २ होता है और कभी इतना पास-पास होता है कि ददोड़े आपस में मिल जाते हैं, जिससे रोगी के शरीर पर बेत मारने के चिन्ह के सदृश लम्बी २ सूजी हुई लकीरें-सी दीखती हैं। यह सूजन रोगी के शरीर में चेहरादि भागों पर अधिक मालूम होती है। ददोड़े आकार में कुछ बड़े और पास-पास अधिक संख्या में निकलने के कारण परस्पर मिले हुए तथा एक पर एक चढ़े हुये मालूम होते हैं। ददोड़ों की कठिनता के कारण उनके आस-पास चौतरफा लाल लाल चकत्ते दिखाई देते हैं। मनुष्य के शरीरमें इस शीतपित्त रोगका उद्भव अकसर निम्न लिखित कारणों को [illegible] कर होता है।

रोगोत्पादक कारण

(१) आहार—गरम मसाला, अरहर, ककड़ी, तेल और तेल में बनी हुई वस्तुयें, गरम वस्तुयें, मछलियों का मांस और चर्बी, शराब, एलोमीनियम और पीतल के बरतनों में अधिक देर तक रखी हुई खटाई, मैले-कुचैले-तालाबों आदि का जल, वमन-विरेचन कारक औषधियें इत्यादि का

नूनं तस्याः प्रबल रुदितोच्छून प्रियायाः
निश्वासानाम शिशिर तया भिन्न वर्णाधरोष्ठम्।
अर्थात्—
हाय ! गई होगी उसकी वे आँखियाँ रोते रोते फूल।
गरम उसासें लगकर होंगी ओठोंकी आभा प्रतिकूल
किं बहुना, इत्यलम् !

——

तथा रोगोत्पादक अन्य मिथ्याहारों का लगातार अधिक सेवन करना।

(२) विहार—अत्यन्त गर्मी से हठात सर्दी में आना, अधिक कसरत करना, वमन के वेग को रोकना, जलन कारक (खुजलाट कारक) पौदों का तथा जन्तुओं का स्पर्श, अत्यधिक गन्दगी एवं अस्वच्छता रखना, इत्यादि रोगोत्पादक मिथ्या-विहारों का सेवन करना।

(३) आगन्तुक—खटमल, मकड़ी, मच्छर, जूं, तथा बर्रात के कीटाणु इत्यादि जन्तुओं के काट खाने आदि के द्वारा इन विषैले जन्तुओं का विष शरीर में अधिक परिमाण में पहुँच जाने से भी शीतपित्त का प्रभाव हो जाता है।

(४) रोगज—अजीर्ण, स्नायु (बाला) मलावरोध आदि के प्रभाव से तथा स्त्रियों के ऋतुबन्द और गर्भाशय सम्बन्धी विकारों के हो जाने से।

इत्यादि इन उपर्युक्त मिथ्याहारों-विहारों के तथा रोगोत्पादक अन्य कारणों के प्रभाव से रस रक्तादि धातु दूषित हो कर उनमें एक प्रकार का शीतपित्त रोगोत्पादक विष उत्पन्न हो जाता है। यही विष रक्त के दौरान के साथ २ समस्त शरीर में अथवा शरीर के किसी एकाध भागों में पहुँच कर अल्पकालिक और दीर्घकालिक दो प्रकार का शीतपित्त रोग शरीर में उत्पन्न करता है।

(१) अल्पकालिक शीतपित्त के लक्षण

रोगी के शरीर की त्वचा पर ददोड़ प्रकट होने के पहिले चार पांच दिन तक तृषा की अधिकता, हल्लास, भोजनादि की अनिच्छा, शरीर भारी और सर्वांग में जकड़ापन, नेत्रों में लालिमा की अधिकता और सुर्खी आदि चिन्ह लक्षित होते हैं। तदन्तर मस्तिष्क में तथा शारीरीय त्वचा में झनझनाहट एवं चूटनी सी हो कर अचानक ही ततैया के काटने के समान त्वचा पर ददोड़े उठते हैं जो बीच २ में से कुछ नीचे और चौं तरफ से ऊँचे होते हैं। शरीर के जिस भाग में यह ददोड़े निकलते हैं वह भाग सूज जाता है और वहाँ पर अत्यन्त तेज खाज एवं चमक चलती है, जिसको खुजालने से रोगी को कुछ चैन पड़ता है। इसलिए रोगी कभी एक हाथ से और कभी दोनों हाथों से अपने शरीर की त्वचा को खुजलाते २ छील डालता है। इसके अतिरिक्त रोगी के मस्तिष्क और पेट में दर्द, त्वचा में दाह सर्वांग में जकड़ापन, वमन की इच्छा, मन में घबराहट, मलावरोध और नेत्रों के आगे अँधेरा सा होना, इत्यादि लक्षण भी प्रकाशित होते हैं। रोगी का चेहरा सूज जाने के कारण भद्दा मालूम देता है। इस प्रकार इस व्यथा का वेग अचानक ही हो कर और कुछ घंटों तक रह कर बहुधा स्वतः ही कम पड़ जाता है और एक दो दिन में रोगी को बिलकुल आराम हो जाता है। कभी २ इसका यह वेग कई रोगियों के एक दो दिन तक भी ठहर जाता है; किन्तु इतना बहुत कम रोगियों के ठहरता है। अधिकतर यह व्यथा दो तीन दिन के अन्दर २ ही बिलकुल निर्मूल हो जाया करती है। यदि इसके वेग के समय रोगी को वमन विरेचन करवा दिये जांय तो और भी शीघ्र आराम हो जाता है। स्त्रियों के इस रोग का प्रभाव यदि रजावरोध एवं गर्भाशय सम्बन्धी विकारों

तैल २० तो० ।

विधि—प्रथम कपूर को तैल में डाल कर तैल को आंच पर चढ़ा कर गरम करें, जब कपूर गल कर तैल में मिल जावे तब तैल को आंच से नीचे उतार कर उपर्युक्त अन्य सब द्रव्यों को महीन पीस कर उक्त तैल में मिला कर शीशी भर कर रक्ख लें।

व्यवहार · दिन भर में ४—५ दफ़े तैल को शरीर में मालिश करवावें।

गुण—खाज सहित शीतपित्त के ददोड़ों को नष्ट करता है।

साधारण पथ्य

गेहूँ, लाल चावल, मूंग, कुल्थी आदि का बना हुआ हलका भोजन, साधारण घृत और सैंधव नमक, करेला, पटोल, परवल मसूर आदि का शाक अंगूर, अनार, केला आदि हरे फल और गरम जल का व्यवहार तथा परिषेक पथ्य है।

[ले०—श्री कविराज डाक्टर वेद व्यासदत्तजी शर्मा शास्त्री M. B. (Col) md. आयुर्वेदाचार्य वैद्यवाचस्पति (जालन्धर)]

स्त्री सहवास (गताङ्क से आगे)

स्त्री सहवास का स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है अतएव जब भोजन किये ४ घण्टे व्यतीत हो जाँय तब सहवास करें क्योंकि ४ घन्टेके अनन्तर भोज्य पदार्थ आमाशय में पाचन हो एक किस्म की हलकी स्फूर्तिमय देह हो जाती है,याने बन रात्रिके १ या २ बजे सुन्दर शीलवती युवती से स्वच्छ गृह में व अपनी तथा युवती की निरोगावस्था मे प्रसन्न चित्त हो साल में १ बार अथवा दो बार अपनी शक्त्यनुसार माहवारी ज्यादे से ज्यादे महीने में दो बार स्त्री सहवास सुख शान्ति व स्फूर्ति दायक है। इस पर भी हेमन्त ऋतु में महीने में ५। ४ मरतबा नुकसान दायक नहीं गर्मी व वर्षा में बहु मैथुन अति हानिप्रद है। पुरुष के शरीर में शुक्र एक अमूल्य पदार्थ है इसकी रक्षा करना स्वास्थ्य के लिये नितान्त फल प्रद है अन्यथा दुरुपयोग या बहु मैथुन से प्रमहादि अजीर्ण अग्निमान्द्य अरुचि चिड़चिड़ापन क्रोध अधैर्यता वातव्याधि इन्द्रिय शैथिल्य शिर-शूल हृत्कम्प स्वासप्रस्वास रोग, शोषरोग, कटिदर्द, ओड़ों का टूटना, तृषा, चक्कर आना, भ्रम, मूर्छा, स्मरणशक्ति विलोपता आदि अनेक रोग पैदा हो, आयु बल व कांति का क्षय होता है। शुक्रहीन हो जाने से पुरुष खुक्खल या दीमक लगे पेड़ के मानिन्द खोखा हो क्षीण प्रतिक्षीण होता जाता है। ब्रह्मचर्य धारण करना अपने को सबल कर पुरुषार्थ दिखलाना है।

शृंगार युक्त पुस्तकाध्ययन ड्रामा सिनेमादि का देखना अश्लील वार्तालाप एकान्त गृह में स्त्री के साथ रहना हस्त मैथुन पशुमैथुन आदि करना व स्त्री तथा मैथुन की मानसिक कल्पना करना अपने अमूल्य रत्न शुक्र को खोना व पुरुषार्थहीन होना है तथा रोगों को निमन्त्रण करना है।

साथ ही रजस्वला, रोग पीड़िता, चर्मरोग ग्रसिता, यक्ष्मादि से प्रकोपिता अनाचार विशिष्टा, परस्त्रिया, व संकीर्ण योनियुक्ता, गुदद्वारादिप्रेमशगाता, हस्तमैथुनता एव प्रातः सन्ध्या काल पूर्णमासी अमावस्या संक्रांति चतुर्दशी देवालय, श्मशान, जलाशय, गुरु ब्राह्मण का गृह शराब की दुकान, व बहु जनता मध्य ज्वरादि किसी भी रोग पीड़ित दुर्बल कम से कम १८ वर्ष से नीचे की आयु में भूख प्यास व क्रोध में मार्ग चलकर मदिरा अफ़ीम गांजा भांग सेवन करके अति उष्ण पदार्थ लहसुनादि हींग प्याज़ मांस आदि सेवन करके व हृदय रोगियों को भल कर भी

उक्त दर्शित तिथि व निशिद्धकाल वासर तथा स्थान प्रभृति में कदापि मैथुन नहीं करना चाहिए अन्यथा भारी अनिष्ट होने की सम्भावना रहती है। सिर्फ निज गृहिणी से शास्त्रानुकूल उचित सहवास करना उत्तम है।

स्वास्थ्य व व्यायाम

रात्रि शयनोपरान्त एक घन्टा पेश्तर बिस्तर छोड़ शौचादि से निपट कर, व्यायाम (कसरत) ललाट में पसीना आने तक अथवा निर्दिष्ट अंग का व्यायाम निर्दिष्ट अंग में पसीना आने तक या सुर्खी फिरने तक करना चाहिये। शीत व बसन्त ऋतु व्यायाम के लिए अच्छे हैं और ऋतुओं में व्यायाम कम करना चाहिये। कारण, इन ऋतुओं में व्यायाम करने से तृष्णा, क्षय, रक्तपित्त, ज्वर, वमन, प्रभृति रोगों के होने का डर रहता है। साथ ही भोजनोपरान्त मैथुनोपरान्त राह चलकर तृष्णा की अवस्था में धूप में दोपहर में, सवारी करने के पश्चात्, अम्ल या उष्ण वस्तु सेवन के पश्चात्, गुरुत्व भोजन के उपरान्त व्यायाम करना हानिकर है। आहार व निद्रा की भांति उचित मात्रा में व्यायाम करने से अंग प्रत्यंगों का सुगठन व वातादि गठिया आदि रोगों का क्षय हो बल बुद्धि स्फूर्ति का उदय होता है। अग्नि की प्रदीप्ति होती है। आयु व चेहरे में विकाश होता है। मन उत्साहित हो निज कार्य कर्तव्य में सफलता प्राप्त होती है। आवश्यकतानुकूल डम्बेल्स हाईजम्प, लोंगजम्प, फुटबाल, दौड़धूप खेलना, रस्सियों पर चढ़ना, तैरना आदि उत्तम हैं। दुध मुहें बालकों के लिए रोना, व ८-१० वर्ष के बालकों के लिए खेलना ही सर्वोत्तम व्यायाम है। व्यायाम करने के पेश्तर व आध घन्टा पश्चात् मिश्रीयुक्त दुग्धपान से सद्यफल प्राप्त होता है। बिल्कुल भूखे पेट भी व्यायाम करना ठीक नहीं। परन्तु बालक वृद्ध वातपित्तकारी रोगी व अजीर्ण रोगियों को व्यायाम नहीं करना चाहिये।

तैल मर्दनादि व स्वास्थ्य रक्षा

व्यायाम के पश्चात् कुछ समय तक तैल मर्दन हित कर है। इससे शारीरिक त्वचा मुलायम चिकनी सुघड़ व चमकीली होती है। शारीरिक श्रम मिटता है स्फूर्ति आती है, रात्रि सोते समय तैल मर्दन से सुन्दर निद्रा प्राप्ति होती है चित्त शान्त रहता है व मच्छर आदि ज्यादे नहीं सताने पाते। प्रातः तैल मर्दन के पश्चात् स्नान करने से सर्दी जुकाम याने पानी नहीं लगता जल का शरीर पर दूषित प्रभुत्व नहीं जमने पाता खासकर पद तलुओं शिर में अवश्य तैल मर्दन करना चाहिये। कानों में तैल डालना श्रवणशक्ति प्रदायक है। शिर में तैल डालना स्मरणशक्ति को बढ़ाता केशों को मुलायम करताहै साथ ही नेत्र व कान की ताकत बढ़ती है पैर के तलवों में तैल मर्दन नेत्रों की ज्योति प्रदायक है सर्वाङ्ग तैल मर्दन त्वचा को सुन्दर करता व चर्म रोगों को दूर करता है। बालकों को तैल मर्दन हितकर है तैल-तिल जैतून व पीली सरसों का अच्छा होता है। बच्चों को जैतून (Olive oil) के तैल से मर्दन करना अच्छा है। तैल का मर्दन स्वास्थ्य के लिये अति गुणप्रद है जिस भांति तैल के

व्योहार मे लोहा जंग नहीं पकड़ने वाला हर एक धातु की मशीनरी ज्यादा टिकाऊ रहती है उसी भांति मनुष्य शरीर के लिये भी तेल की मालिश हित कर है। परन्तु वमन विरेचनोपरान्त अजीर्ण रोगी को तेल की मालिश नहीं करनी चाहिये।

स्वास्थ्य रक्षा व स्नान

तेल मर्दन के पश्चात् साफ़ स्वच्छ शीतल जल से स्नान करना चाहिये स्नान करने के लिए प्रथम शिर को शीतल जल मे धोना चाहिये पश्चात् अन्य अंग क्योंकि प्रथम शीतल जलधारा शिर की गर्मी दूर करके स्मरणशक्ति, नेत्र-ज्योति की प्रदायक व बल प्रद है शिर के रोगों को हित कर है। गरम जल मे शिर धोने मे फ़ायदे के बजाय हानि हासिल होती है। ऐसे ही प्रथम शीतल जल मे पैर धोने के पश्चात् शिर धोने मे हानि होती है। हां ऋतु देशानुकूल तथा उम्र व बल रोगानुसार आवश्यकता पर गरम जल का स्नान भी अच्छा है। यदि बरदाश्त हो सके तो शीतल जल का स्नान अति गुणप्रद है। स्नानों में फल प्रद नदी का स्नान है। बहते पानी व स्वच्छ जलयुक्त नदी में तैर कर स्नान करना अति गुणप्रद है। दुग्ध स्नान भी हित कर बताया गया है याने दूध से स्नान करके पश्चात् जल से स्नान करने पर कांति बढ़ती है त्वचा कोमल व सुन्दर होती है पर यह अक्सर असम्भव सा हो गया है। जिनके मुंह मे फुन्सियोंका विकार रहता हो उन्हें सिर्फ दूध से मुँह धोना चाहिये। यथाशक्ति स्नान के लिये पर्याप्त जल होना चाहिये व सारे शरीर को मलमल कर स्नान करना उचित है जो बस लोटे जल शिरमें डाल स्नानों की गिनती में भरमार करना ठीक नहीं।

स्नान करने से शरीर की दुर्गन्ध, मैल, दाद, पसीना, आलस्य, तन्द्रा बीभत्सता खुजली दूर हो शारीरिक बल की वृद्धि व स्मरणशक्ति का विकास अग्नि की प्रदीप्ति, स्फूर्ति की जागृति दिल का उत्साह तथा पवित्रता पैदा हो सात्विकी चित्त होता है। पर स्मरण रहे स्नानोपरान्त ही प्रथम गीले निचोड़े हुए पश्चात् सूखे तौलिये से देह पौंछ स्वच्छ वस्त्र धारण करना चाहिये पश्चात् चन्दन सुगन्धित बादामीन हिमकल्याण तेल ब्राह्मी तैल, जैतून या तिल का तेल सुगन्ध युक्त मुंह शिर व बदन में मलना चाहिये इससे और भी चित्त को प्रसन्नता बढ़ शरीर बर्ण सुन्दर बनता है। याद रहे—

भोजनोपरान्त, खास रोगों में, नेत्रकर्ण व मुँह रोग में, प्रतिश्याय में, अतिसार, पीनस, अजीर्ण रोग में स्नान करने से अनिष्ट होता है।

वायु सेवन व स्वास्थ्यरक्षा

प्रातःकाल उठ शौचादि से निपट बाग या उपवन में वायु सेवनार्थ स्वच्छ सुन्दर देश कालानुकूल वस्त्र पहिन नंगे शिर यथाशक्ति मुँह बन्द करके तेजी के साथ एक दो मील तक चलना चाहिये, निर्दिष्ट स्थान में पहुँच १० मिनट विश्राम कर वापिसी में धीरे धीरे आना चाहिये। शीतकाल में वायु सेवनार्थ न भी आया जाय तो कोई क्षति नहीं पर वसन्त ग्रीष्म व शरदऋतु वायुसेवनार्थ अति उत्तम है। सूर्योदय के १ घण्टा पेस्तर वायु सेवनार्थ आना उचित है ताकि सूर्यो

रूप तक बाबत आशातीत आम वायु सेवन से बल बुद्धि व अग्नि की वृद्धि होती है, उत्साह बढ़ता है। कार्य में चित्त स्थिर होता है। गठिया, वात-व्याधि नहीं पकड़ने पाते, नजला नहीं होता फेफड़े मजबूत होते जाते हैं इससे तपेदिक, (शोष) रोग के कीटाणु अपना अड्डा नहीं जमाने पाते। फेफड़ों को विचरने से पर्याप्त मात्रा में औक्सि-जन गैस प्राप्त होने से खून शुद्धि से हृदय का बल बढ़ता है, हृदय का बल बढ़ने से अनेक रोगों का नाश होता है। नंगे शिर के भ्रमण से शिर शूलादि रोग सूर्य्यांशुओं से नष्ट होते हैं व ब्रेन की ताकत सबल होती है। यथाशक्ति वायु सेवनार्थ विच-रना तन्दुरुस्ती को सुस्थिर रखना है। याद रहे प्रतिश्याय के रोगी निमोनिया, ज्वर पीड़ितों को आघातादि ग्रस्तों को वायु सेवनार्थ नहीं जाना चाहिये। हां सोने व रहने का कमरा ऐसा हो जिसमें आक्सिजन गैस युक्त वायु का पर्याप्त मात्रा में प्रवेश होता रहे।

वस्त्र व स्वास्थ्य

वस्त्र स्वच्छ सुन्दर ऋतु अनुकूल गर्म व पतले पसीना को सोखने वाले शरीर में गर्मी सर्दी से बचाव रखने वाले सुगमता से स्वच्छ हो जाने वाले शरीर में न चुभने वाले हों, ऐसे भी न हों जो शरीर को बोझ मालूम पड़े। वस्त्रों को धारण करने में स्वच्छता की ओर पूरा ध्यान रखना जरूरी है। पसीने में भीगे कपड़ों को पसीना सूख जाने पर बदल देना चाहिये पसीने के समय कपड़ा उतारना, पानी पीना बहुत हानि-कर है। स्वच्छ वस्त्रों का हृदय पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। वस्त्र ऐसे भी न हों जिससे आत्माभिमान की वृद्धि होने लगे। सादे श्वेत स्वच्छ वस्त्र ही अति उत्तम हैं।

स्वास्थ्य व गृह

निवासस्थान सुन्दर स्वच्छ हवा के प्रवेशनार्थ दरवाजों व खिड़कियों से युक्त हो। सुन्दर सफेदी चूना आदि से पुताई किया हुआ हो। शयनागार में अगड़म बगड़म कोई सामान न हो वीर नेता व देवताओं के चित्रों से सुसज्जित हो।

रसोई स्थान—अति स्वच्छ सीलन रहित सूर्य्य रश्मि से सम्पन्न हो सकने वाला हो शयना-गार भी सीलन रहित होना चाहिये।

टट्टी—ऐसे स्थान पर बनी हो जहां से टट्टी घर की दूषित वायु रहन, सहन, व रसोई कमरे में प्रवेश न कर सके।

रहन कमरा—सफेदी से स्वच्छ उत्तम फर्स व हवा सूर्य रश्मियुक्त सीलन रहित हो।

पानी के बरतन खाने पीने का सामान चूहों मक्खियों व अन्य जीव जन्तुओं से अलहिदा कमरे में सुरक्षित रखना जरूरी है।

रोगी के कमरे में सीलन न हो हवा पर्याप्त आती हो व खाने पीने का सामान इस कमरे में न रहे।

स्वास्थ्य रक्षार्थ ऋतुनुकूल परिचर्या

वसन्त ऋतु

इस ऋतु में हेमन्त का सञ्चित कफ वसन्त की गर्मी से कुपित हो पाचकाग्नि को दूषित करता है इसीसे बहुतेरे रोग पैदा होते हैं। इसलिये वमन कारक औषधियों से कफ को निकालना

ठीक है व साथ ही मधुपाक उष्णवीर्य, कटु तिक्त कषाय लवणयुक्त आहार स्नान पान व शौचादि कार्यों पर कीमगरम जल उपयोग करना चाहिये । पोशाक वस्त्र हेमन्त की तरह होवे । युवती स्त्री का संग प्रशस्त है । गुरु स्निग्ध द्रव्य अम्ल मधुर रस भोजन । दिनमें शयन करना हानिकर है । इस ऋतु के कर्तव्य पालनार्थ भावप्रकाश लिखता है । यथा—

वान्ति नस्यमथा थाभयां च मधुना व्यायाम मसुद्धर्तनं संमेवेत सद्यो कफप्रकवर्ल शूलं फलं जांगलम् ॥

गोधूमा न्वदृशालिभेश्च शहितान्

मुद्‌गान्यवान् षष्टिकान् स्तेपश्चान्दने ॥

कुंगुमागुरुकृतं रूक्षं कटूष्णं लघु ॥

मिष्टमम्लं दधि स्निग्धं दिवा स्वप्नं च दुर्जरम्

अवश्यायमपि प्राज्ञो वसन्तो परिवर्जयेत्—

[भावप्रकाश]

ग्रीष्मऋतु

इस ऋतु में मधुर रसयुक्त शीतल और स्निग्ध द्रव्य आहार व पान करना चाहिये व जंगली पशु पक्षी का मांस घृत दूध हलके पुराने चावलों का भात दिन मान के बढ़ जाने तथा तेज़ धूप के पड़ने से दिन में एकाध घन्टा सोना, रात्रि में चन्द्रमा की सुन्दर छटा में बैठना व मकान की छत अर्थात् ऐसे स्थान पर पलंग लगा के सोना चाहिये जहां से चन्द्रशीत किरणें निज शरीर में प्रवेश पा सकें । सोते समय मिश्री युक्त दुग्धपान इस ऋतु में उत्तम ही नहीं अति विशेष बल प्रद है, शीतलजलपान प्रातः स्नान व भ्रमण, चन्दनादि से सुगन्धित (Sand al woop oil तेलों को जो तिल तेल पर प्रस्तुत है सिर व मलना व देहमें मालिश करना हितकारी है । तिल तेल का बना आंवले का तेल भी उत्तम है । सोते समय पदतलुओं को आंवले के तेल से मलना उचित है । शीतल जलसे पद प्रक्षालन तलहत्थियों से आंखों को शीतल जलका स्पर्श इस ऋतुके कारण पैदा हुई आंखोंकी जलन को दूर करता तथा ज्योतिप्रद है । मैथुन इस ऋतु में नहीं करना चाहिये, सूर्योदय के पूर्व ही बिस्तर छोड़ देना चाहिये । चरपरे, खारी, खट्टे पदार्थ धूप में रहना फिरना कड़ाके की मेहनत करना, मद्यपान उष्णवीर्ययुक्त तथा गुरुरूक्ष भोजन करना इस ऋतु में बहुत हानिप्रद है । आवश्यकतानुकूल हलका स्वच्छ वस्त्र पहनना चाहिये । खसकी टट्टी पर पानी छिड़क कर ठन्डी सुगन्धमय हवा लेना, सुराही का जल पीना पक्के मकानों के अन्दर जिनमें घास या ईंट की छत हो व ऊँचे हों रहना, पंखोंकी हवा लेना, प्रातः हलका नास्ता दूध आदि पीना बहुत अच्छा है । बहुत मानसिक परिश्रम चिन्ता क्रोधमय हानिप्रद है ।

वर्षाऋतु का स्वास्थ्य कर्तव्य

वर्षा ऋतुमें ग्रीष्म सञ्चित वायु कुपित होती है इसकी शान्ति के लिए खासकर मधुर खट्टे व खारी रसों का सेवन व अनुवासन वस्ति (कर्म) लेना चाहिये । इस ऋतु में अग्नि बल क्षीण होने के कारण भोजन हलका व सुपाच्य होना अच्छा है इस ऋतु में पानी बरसने से शीत व धूप पड़ने

से ग्रीष्म ऋतुका अनुभव होता है इसलिए आहार व्यवहार रहन सहन भी शीत अवस्था में शीत ऋतु के मानिन्द गह गरमी में ग्रीष्म ऋतु के मानिन्द होना चाहिये मधु सेवन इस ऋतु में अच्छा है। जो उपयोग में लाना चाहिये। स्नान के लिए खौलाया हुआ ठण्डा जल लेना ठीक है। दिन को सोना, नदी के पानीमे स्नान,व्यायाम, मैथुन वर्षा ऋतुमें वर्जित हैं। ओस व वर्षा के कारण भूवाष्प जमीन मे जो एक प्रकार की गैस पैदा होती है उससे बचना चाहिये पसीना आने पर नदी तैरना या भीगना बहुत हानिकर है ऐसी अवस्था में शयन समयमे पूर्व गरम नमकीन जल में पैर १५ मिनट भिगाने पश्चात् गरम तेल पदतलुओं में मालिस करनी चाहिये।

शरत ऋतु व स्वास्थ्य रक्षा

इस ऋतु में, वर्षा ऋतु का सञ्चित पित्त इस शरद् ऋतु की सूर्य किरणों से कुपित हो जाता है। इसलिए घी प्रचुर कसैले कड़वे पदार्थ खाना दूध पीना, शीतल व हल्के पदार्थों का सेवन मिश्री ईख गेहूँ जौ मूंग व भात का भोजन करना, स्वच्छ वस्त्र पहिनना, सुगन्धित तैलादि की मालिस करना जल में तैरना, रेचन 'जुलाब' लेना बलवान पुरुषों को फस्त खुलवाना स्वच्छ जलपान करना, दिव्य चन्द्र छटा में विचरना, फूलमाला, धारण करना मकानोंकी सफेदी करना व होमादि कर्मसे मकान को शुद्ध करना व इस ऋतु में विरेचन करना हितकर है। क्योंकि विरेचन से सञ्चित पित्त क्षय होता है।

क्षार द्रव्य, दही, ज्यादा व्यायाम करना खट्टा तीक्ष्ण ऊष्ण दिन का शयन व बहुत कड़वे पदार्थ का सेवन बरफ़ का उपयोग धूप में चलना हानिकर हैं। बहुतेरे आचार्य इस ऋतु में तेलमर्दन की मनाही करते हैं पर सुगन्धित चन्दनादि व आंवले का तेल शिर में डालना पदतलुओं में मलना लाभकारी है।

हेमन्त ऋतु

हेमन्त ऋतु में प्रातः काल में भोजन मीठे व खारी रस वाले पदार्थ खाने चाहियें। शरीर में तेलमर्दन पसीना निकलने तक परिश्रम गेहूँ चावल उड़द मसूर, मांस मिष्ठान पकवान तेल खाना, केसर, अगर, कस्तूरी का सेवन गरमजल का स्नान महीने में ४।५ बार का मैथुन रुई व ऊनी गरम कपड़े पहिनना, आग सेकना हितकर है।

शिशिर ऋतु

शिशिर ऋतु में हेमन्त ऋत्वनुकूल चलना व भोज्य वस्तु सेवन करना चाहियें इस बाबत भावप्रकाश में लिखा है। यथाः—

शिशिरे शीतमधिकं रौक्ष्यं चादानकालजम् ॥
विशेषतस्ततस्तत्र हेमन्तस्य मतो विधिः ॥

[भावप्रकाश]
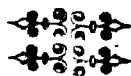
मधु

[लेखक प्रोफ़ैसर धर्मानन्दजी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य गुरुकुल कांगड़ी]

स्वास्थ्य के लिए आवश्यक दूध घी आदि पदार्थों में मधु भी एक अत्यावश्यक वस्तु है। परन्तु इसका शुद्ध रूप में मिलना कठिन हो गया है। केवल अमेरिका या कुछ अंश में पहाड़ी प्रान्तों में जहाँ मधुमक्खियों को घरों में पाला जाता है शुद्ध मधु मिल सकता है। आयुर्वेद तथा धर्मशास्त्रों को देखने से पता चलता है कि पहले ज़माने में लोग इसके महत्त्व से भली भाँति परिचित थे। उन्होंने मधु के विषय में पूरी खोज कर इसकी अनेक जातियां सिद्ध की हैं। और आजकल की भाँति गुड़, खाँड, सितोपल आदि के स्थान पर प्रायः मधु का ही प्रयोग था। पूर्वज लोग मधु के शुद्धाशुद्ध परीक्षण, गुण दोष, प्रयोग, निषेध आदि के विषय से अच्छी तरह परिचित थे। आयुर्वेद में रोगी के पोषण के लिए शर्करा तथा सितोपला आदि मधुर और पोषक द्रव्यों के होते हुए भी मधु को विशेष स्थान दिया गया है कि मधु रोगको किसी अवस्था में दिया जा सकता है। अतः साधारण मधुर रस [गुड़, खांड, मुनक्का आदि] की अपेक्षा मधु अधिक सुपच्य और पोषक द्रव्य माना जाता है।

मधु स्वरूप

मधु चिपचिपा अर्धपारदर्शक हल्के भूरे रंग का सुगन्धियुक्त, मधुर तथा कटु कषाय रस [अनुरस] गाढ़ा सा द्रव है जो पानी में अच्छी तरह घुल जाता है। रासायनिक विश्लेषण—मधु में द्राक्षा शर्करा तथा फलशर्करा विशेषतः पाई जाती है। अंगूरी खांड की अधिकता से मधु देर तक रखने से जम जाया करता है। पहाड़ी प्रान्तों में लोग मधु को जमाने के लिये उसमें घी मिला देते हैं ऐसा सुना जाता है। इसके अतिरिक्त मधु में पोषक तत्त्व Protein सुगन्धित उड़नशील तैल, चूर्ण, लोह तथा Vitamin और मधु मक्खियों द्वारा प्राप्त पुष्प की नाली के समान एक पोषक तत्त्व के कुछ अंश भी पाए जाते हैं।

मधु के भेद

मधु सञ्चय करने वाली मक्खियों की जाति विभिन्नता के कारण मधु भी आठ प्रकार का माना जाता है। १ माक्षिक, २ क्षौद्र, ३ पौत्तिक, ४ भ्रामर, ५ आर्घ्य, ६ छात्र, ७ औद्दालक और ८ दाल।

मधुनि माक्षिकं क्षौद्रं पौत्तिकं भ्रामरार्घ्यकम्।
छात्रौद्दालक दालं च, यथा पूर्वं गुणोत्तरम् ॥

परन्तु औषधियों में दो ही प्रकार का मधु काम आता है। १-माक्षिक २ मधु जाति का साधारणतः बड़ी मक्खियों के बनाए हुए शहद को माक्षिक और छोटी मक्खियों के बनाये हुए शहद को मधु कहते हैं।

कार्तिकीमधु

वर्षान्तमें उत्पन्न विभिन्न वनस्पतियों (परिपक्वावस्था में) के पुष्पमूल में होनेवाले मधुर रस को लेकर कुवारके महीने पर मक्खियों द्वारा सञ्चित किया हुआ और कार्तिक मास में निकाला मधु, 'कार्तिकी मधु' कहा जाता है। यह मधु अन्य ऋतुओं के मधु की अपेक्षा विशेष गुणदायक माना जाता है, क्योंकि शारीरिक दोषोंकी विकृति को शमन करने वाली औषधियां शरदृऋतु में ही ग्रहण की जाती हैं। इन दिनों सभी प्रकार की औषधि पुष्पित होती हैं और इन का रस मधु के रूप में सञ्चित किया जाता है जिस से यह त्रिदोष नाशक (विशेष स्वास्थ्यकर) और पोषक तथा सुपच होता है।

मधु की परीक्षा

आजकल मधु का व्यापार होने से इस का शुद्ध मिलना कठिन है क्योंकि खांड के गाढ़े शर्बत में थोड़ा सा निम्बुसत्व (Citric Acid) मिला देने से वह भी मधु की तरह प्रतीत होता है। अतः इस प्रकार का मधु बाज़ारोंमें बहुत सस्ता और बहुतायत से मिलता है। इस में भी मक्खी पड़कर उड़ जाती है। साधारणतः शुद्ध मधु की परीक्षा लिखी है कि इसकी बत्ती मोम की तरह अच्छी जल सकती है और इसे कुत्ता नहीं खाता है परन्तु यह बातें बनावटी मधु में भी वे लोग दिखा देते हैं। अतः मधु के विषय में वैद्य का अपना अनुभव ही उत्तम परीक्षा है। कभी २ शुद्ध मधु होते हुए भी उस में अपक्व मधु मिश्रित होने से भी उसमें यथार्थ वर्ण, गन्ध तथा रस प्रतीत नहीं होते हैं।

मधु के सामान्य गुण

रस मधुर कषाय (अनुरस) गुण शीत रूक्ष सूक्ष्म पाक कटु वीर्य उष्ण दोष कफ हर (विशेषतः) सामान्यतः त्रिदोष हर।

प्रभाव

मधु लेखन और लघु (Light) है अर्थात् किसी स्थान पर कफ प्रकोप अन्य शोथ होने पर भिन्न २ औषधियों के साथ मधु का बाह्याभ्यन्तरिक प्रयोग किया जाय तो उस स्थान की श्लेष्मा बहकर साफ हो जाती है और रोग हट जाता है। चिरकाल तक गुरुपाक द्रव्य भोजन तथा अधिक भोजन करने से आमाशय, पक्वाशय में शोथ होने पर मधु का सेवन (स्वतन्त्र अथवा किसी औषधि के साथ) करने से आमाशयस्थ अंगों की रस ग्रन्थियां उत्तेजित हो अधिक निका-

लने लगती है जिससे शोथ हट कर क्षुधा अच्छी तरह लगती है। अतः मधु का आमाशयादि अंगों के लिए दीपक प्रभाव होता है। आंतों में श्लेष्म प्रकोप के कारण पुरातन प्रवाहिका या अतिसार होने पर मधु की वस्ति देने से आराम आता है अर्थात आन्त्र का श्लेष्म प्रकोप शान्त होकर उनमें अच्छी तरह रस निकलने लगता है जिससे आहार रस भली भांति शोषित होता है और मलबन्ध या अतिसारादि उपद्रव मिट जाते हैं अतः मधुग्राही है। अञ्जन की तरह यदि नित्य एक बार आंखोंमें मधु लगाया जाय तो आंसुओं द्वारा श्लेष्मस्राव होकर उन का भारीपन मिट जाता है और नेत्र सदा स्वच्छ रहते हैं अतः नेत्रों के लिए मधु चक्षुष्य (हितकर) है। स्वर यन्त्र की दुर्बलता या उस में श्लेष्म प्रकोप के कारण स्वरोपघात हो जाय तो थोड़ा २ बार २ मधु चटाने से उसका दौर्बल्य और श्लेष्म प्रकोप मिट जाता है अतः मधु को स्वरप्य लिखा है। मतान्तर में भी स्वरोपघात के लिए मधु चाय की बहुत प्रशंसा की जाती है। अत्यन्त दुर्बलता या यकृत् क्रिया मांद्य में जब कि साधारण पोषक रस जैसे दूध दही घृत आदि हजम न हो तो मधु सुगमता से हजम हो जाता है और वात-नाड़ियों को बल मिलता है, अतः इसे वृष्य और बलवर्धक कहते हैं। यकृत रोगों में जब कि यकृत की शर्करा बनाने की शक्ति क्षीण हो जाती है मधु glocose का काम करता है क्योंकि इस में मधु मक्खियों का लाला रस जो कि पाचक होता है पर्याप्त मात्रा में होता है जिससे यकृत को शर्करा बनाने में विशेष कार्य नहीं करना पड़ता है। यह सूक्ष्म गुण के कारण चिरकाल तक सेवन करने से ज्ञान तन्तु, मस्तिष्क की दुर्बलता या श्लेष्म प्रकोप को मिटा धारणा तथा स्मृति शक्ति को बल देता है अतः मेध्य माना जाता है। अशुद्ध व्रणों के श्लेष्म प्रकोप जन्य शोथ स्राव तथा पूय आदि को पतला कर बहा देता है अतः व्रण शोधक है और शुद्ध व्रणों में मांसांकुरों का पोषण कर व्रण भर देता है जिससे यह व्रणरोपक कहा जाता है।

उपयोग

मधु में योगवाहि गुण अर्थात् जैसे द्रव्यों के साथ दिया जाय वैसा गुण करने वाला माना जाता है इसीलिए प्रायः आयुर्वेद में सभी औषधियों का अनुपान मधु लिखा है। विशेषतः प्रतिश्याय, कास, श्वास, गलशोथ, लालास्राव, अजीर्ण, मलबन्ध निमोनिया इन्फलुइञ्जा, जीर्ण-ज्वर और यकृत रोगों में औषधियां मधु के साथ दी जाती है। नवीन मधु कुछ रेचक और पुरातन कुछ ग्राही होता है। ग्राही धर्म बढ़ाने के लिए आयुर्वेद में पुराना शहद लेने को लिखा है। बालकों और दुर्बल के लिए यह उत्तम औषधि और भोजन है। इस को सोते समय दूध के साथ सेवन करने से उनको निद्रा अच्छी आती है और दस्त साफ आता है। मधुमेह में जब यकृत और अग्न्याशय अधिक दुर्बल या विकृत हो जाते हैं और शरीर का पोषक तत्व मूत्र द्वारा बाहर निकलने लगता है तो पोषण के लिए पोषक तत्व (मधु रस भोजन) की आवश्यकता

होता है परन्तु यकृत की दुर्बलता में मधुर रस पौष्टिक गुरु भोजन पचने नहीं पाते हैं। ऐसी दशा में मधु ही सर्वोत्तम पोषक तत्व होता है। सौन्दर्य के लिए प्रातः प्रति दिन मधु जल में निम्बुरस डाल कर पीने से बहुत लाभ होता है। त्वक् रोगों में मधु को गलसरीन के साथ मिला कर लगाने से चर्म रोग हट जाते हैं। अथवा पञ्चतिक्त औषधि क्वाथ में डाल कर देने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। अनेक मनुष्य आटे में नमक मिला कर रोटी बनाया करते हैं या सोडा, खमीर डाल कर डबल रोटी बिस्कुट आदि खाने की चीज़ें बनाई जाती हैं यदि क्षार और नमक की अपेक्षा आटे में थोड़ा सा मधु मिला कर रोटी आदि चीज़ें बनाई जायें तो वे अधिक सुपच होंगी तथा बहुत देर तक बिगड़ भी नहीं सकती हैं। दृष्टि की दुर्बलता में मधु को त्रिफला चूर्ण के साथ सेवन करने से बहुत लाभ होता है। मेद वृद्धि की दशा में मधुसे उत्तम और कोई औषधि नहीं है। लोहभस्म और मधु मिला कर सेवन करने से या मधु में पांच गुना जल मिला कर पीने से मेदोवृद्धि घट जाती है। मधु में व्यवायी गुण (शारीरिक धातुओंमें शीघ्र लीन होने वाला) के Glycerine के स्थान में व्यवहृत होता है। मांसार्बुद मांस की विकृति में मधु को मूत्र में मिला कर पीने को लिखा है। व्रण रोगी को रोपण के लिए दूध के साथ और शोधन करने के लिए हरिद्रा के साथ खिलाया जाता है।

मधु सेवन करने में सावधानता

ततैय्यों की तरह भ्रमर आदि मक्खियों में भी किसी समय विष अधिक होता है। यदि उस समय वे विषैले पुष्पों से रस लेकर मधु बनायें तो वह मधु विषैला होता है। प्रायः वर्षान्त में निकाला हुआ मधु विषैला और पतला होता है। उसमें विष के सदृश गुणधर्म जमा आ जाते हैं क्योंकि असली मधु वह है जो पित्त तथा प्रकोप को शान्त करे। यदि इस में पुष्पों द्वारा विष-भाव (पित्त प्रकोप धर्म) आ जाता है तो रूक्ष, उष्ण, तीक्ष्ण सूक्ष्म विशद व्यवायी लघु आदि अनेक विषगुणों से संयुक्त हो जाता है और प्रयोग करने पर विषैला प्रभाव दिखाता है। इसी दोष के डर से प्रायः मधु गरम करके सेवन करना निषेध है कि अग्नि, सूर्यताप, पीड़ित मनुष्य को तथा गरम मौसम और स्थानोंमें और तीक्ष्ण गुण द्रव्यों के साथ नहीं खाना चाहिए। परन्तु यदि पूर्ण निश्चय हो कि यह विष पुष्पों का तथा विषैली मक्खियों का नहीं है तो पित्त प्रकोप तथा उष्ण ऋतु में भी दिया जा सकता है। क्योंकि देखा जाता है कि पर्वतीय लोग मधु को कड़ाई में गरम या पका कर अनेक प्रकार की मिठाई बनाते हैं परन्तु कोई दुर्गुणों की घटना नहीं सुनी जाती है। इसी तरह आकाशीय जल के साथ सेवन करने से भी इस में कभी २ विष दोष उत्पन्न देखे जाते हैं। अतः मधु सेवन में उक्त बातोंका ध्यान रखना चाहिए।

उष्ण मधु का विधान

यदि मधु का प्रयोग वमन या निरूह वस्ति के लिए करना हो तो उसे उष्ण करके तथा उष्ण औषधियों के साथ देने में कोई हानि नहीं है।

[ले०—श्री डाक्टर एस० आर० मुकर्जी]

(गताङ्क से आगे)

हम लोग प्रत्येक औषध के लक्षणों को तीन भाग में विभक्त कर सकते हैं। यथा—

(१) व्यापक या सर्वाङ्गीण लक्षण (general symptoms) जैसे औषध के धातु और प्रकृति, मानसिक लक्षण, स्वभाव, भय, क्रोध, आकांक्षा घृणा, गर्मी या ठंडक की इच्छा, चित्त की अस्थिरता, जलन, नींद, प्यास, किस कारण से रोग की वृद्धि या ह्रास होता है, इत्यादि।

(२) अस्वाभाविक, असाधारण, आश्चर्यजनक लक्षण समूह (strange rare uncommon symptoms, i. e. characteristic symptoms.)

(३) स्थानीय लक्षण समूह (Particular symptoms) अर्थात् शरीर के किसी अंग पर

क्योंकि वमन या वस्ति में दिया हुआ मधु पाक होने के पूर्व ही बाहर निकल आता है। सम्भव है वमन तथा वस्ति के रुकने पर इसी कारण उसे शीघ्र निकालने का आदेश हो। कतिपय विद्वानों ने इसको चाय की तरह पीने का उपदेश दिया है। परन्तु उसमें भी यही शर्त है कि वह शुद्ध परीक्षित हो।

यद्यपि अष्टविध मधु के पृथक् २ विशेषगुण भी लिखे हैं परन्तु वर्तमान में दो तीन प्रकार का मधु ही मिलता है और काम में लाया जाता है। अतः उन सब का पृथक् २ वर्णन न करके केवल काम में आने वाले मधु के विषय में लिखना योग्य समझा गया है। आशा है इस पर वैद्य बन्धु अधिकाधिक प्रकाश डालेंगे।

लक्षणों का प्रकाश।

महात्मा हैनिमैन और उनके सभी शिष्यगण मानसिक लक्षण ही को प्रधान मानते हैं। बड़े २ ज्ञानी पण्डितों ने देह और मन के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की आलोचना करके यही स्थिर किया है, कि मन ही प्रधान है। डाक्टर केण्ट ने भी अपनी होम्योपैथिक फिलासुफी नामक पुस्तक में कहा है कि मनुष्य की चिन्तनशक्ति और प्रेम यह दोनों निकाल देने से मनुष्य में और कुछ भी नहीं रहता। अतएव प्रत्येक होम्योपैथिक चिकित्सक को चाहिये कि यथासम्भव मन के लक्षणों को मिला कर औषध का प्रयोग करे। औषध प्रयोग करने के बाद चित्त की अवस्था में उन्नति हुई या नहीं इस पर विशेष लक्ष्य रखना चाहिये। मन के लक्षणों में उन्नति न होकर यदि सिर्फ शरीर के लक्षण दूर हो जायें तो ख्याल करना चाहिये कि रोगी वास्तव में आरोग्य नहीं हुआ।

केस टेकिङ्ग या लक्षणसंग्रह प्रणाली

चिकित्सक को चाहिये कि चित्त को स्थिर रखकर रोगी के पास बैठकर विशेष विवेचना पूर्वक दर्शन, स्पर्शन और प्रश्नादि द्वारा रोगी के आनुपूर्विक समस्त लक्षणों को जान ले और उन्हें लिख ले। यह याद रहे कि होम्योपैथी लाक्षणिक चिकित्सा है। अतएव लाक्षणत्व ही इसका मूल है। रोगीका इतिहास लिखते समय इस बात पर विशेष लक्ष्य रखना चाहिये कि कोई लक्षण छूट न जाय या आनुमानिक कोई लक्षण उसमें मिल न जाय। पहिले रोगी अपनी तकलीफ़के सम्बन्ध जो कुछ वर्णन करे उसे अक्षरशः लिखना होगा उसके बाद रोगी के सुश्रुषाकारी लोगों ने जो लक्षण देखा है या रोगी को कहते हुए सुना है वह सब पूछकर लिख लें। उनका वर्णन समाप्त होने पर चिकित्सक उन सब लक्षणों के सम्बन्ध में और जो कुछ जानने की आवश्यकता समझे वह सब पूछकर लिख लें। रोगी को कभी इस तरह से प्रश्न नहीं करना चाहिये कि वह एक या दो शब्दों में प्रश्न का उत्तर देकर चुप हो जाये, बल्कि इस तरह से प्रश्न करना चाहिये जिससे वह यथार्थ और सविस्तार उत्तर देने को बाध्य हो। रोगी के अपना इतिहास खतम करने के बाद उसके धातु प्रकृति, मानसिक अवस्था, क्रोध, भय, अस्थिरता, आकांक्षा, घृणा, गर्मी या ठंडक की इच्छा, प्यास, जलन, नींद, शरीर किस तरफ़ रोगाक्रान्त हुआ है, दाहनी या बांयी तरफ़, रोगाक्रान्त स्थान को दबाने से दर्द की वृद्धि या ह्रास का होना, दिन या रात के किस भाग में, किस समय, किस घण्टे में तकलीफ़ की वृद्धि या ह्रास होता है, क्या उपाय करने से तकलीफ़ में कमी या वृद्धि होती है इत्यादि समस्त विषय अति-सूक्ष्मदर्शिता के साथ जांच कर के लिख लेना चाहिये। तबियत गिरी २ मालूम होती है, कुछ अच्छा नहीं लगता, भूख नहीं लगती, दस्त साफ नहीं होता, मुंह का स्वाद अच्छा नहीं है। इत्यादि ऐसे साधारण लक्षण (Common Symptoms) ध्यान देने के योग्य नहीं है। रोगी के मानसिक और विशिष्ट लक्षणों (Mental and characteristic Symptoms) पर ही विशेष ध्यान देना चाहिये

मनुष्य को पहिचानने के लिए जैसे उसके कुछ अस्वाभाविक लक्षण आदि का प्रयोजन होता है, उसी प्रकार औषध और रोग निर्णय करने में भी अस्वाभाविक लक्षणादि (Uncommon and strange symptoms) की आवश्यकता होती है। अतएव मानसिक और शारीरिक परिवर्तन की समष्टि (totality of symptoms) लेकर विवेचक और बुद्धिमान चिकित्सक किसी एक औषधि का सादृश्य या प्रतिकृति (Picture) देख पाते हैं, वही रोग की प्रतिकृति या रोग है। लक्षण समष्टि दूर होने से आभ्यन्तरिक जीवन शक्ति की विकृति दूर होती है और रोगी भी आरोग्य होता है।

औषध की प्रयोग विधि

बिना समझे बूझे बार २ औषध का प्रयोग करना हानि कारक है, नवीन रोगों (acute disease) में रोग की तीव्रतानुसार (According to the acuteness of the disease) अल्प या अधिक समय के अनन्तर औषध का प्रयोग करते ही से औषध की क्रिया प्रकाश होती है और जबतक वह क्रिया चलती है और रोगी की अवस्था अच्छी मालूम हो, उस वक्त तक औषध की दूसरी मात्रा दुहरानी नहीं चाहिये। उस क्रिया के समाप्त होने पर यदि फिर औषध देने की आवश्यकता हो तो दी जा सकती है। औषध की एक खूराक दे कर रोगी की अवस्था को देखते रहना चाहिये। यदि उपयुक्त समय के अन्दर किसी प्रकार की क्रिया प्रकाश न हो तो उसी औषध की और दो या एक खूराक देकर देखना चाहिये कि क्रिया होती है या नहीं। इसमें भी क्रिया प्रकाश न होने पर एन्टि-सोरिक औषध सल्फर या सोरिनम की एक खूराक देकर उसके कुछ समय के बाद निर्वाचित औषध की और एक खूराक का प्रयोग करना चाहिये, इसपर भी यदि किसी प्रकार की क्रिया उत्पन्न न हो तो यह समझना चाहिये कि औषध या औषध की शक्ति का ठीक निर्वाचन नहीं हुआ है। अतएव रोगी के लक्षणों पर फिर विचार करके अन्य कोई औषध या शक्ति स्थिर करके उसका प्रयोग करना होगा। तीव्र असहनीय दर्द में औषध की क्रिया जिस क़दर शीघ्र सफल होती है, हलके दर्द में उतनी शीघ्र प्रकाश नहीं होती। जिस रोग में जिस क़दर जल्दी मृत्यु या अनिष्ट होने की आशंका रहती है, ईश्वर की कृपा से उसी रोग में उसी क़दर जल्दी औषध की क्रिया प्रकाश होती है। जैसे हैज़े में १५ या २० मिनट के बाद ही औषध का बार २ प्रयोग किया जा सकता है मगर क्रिया प्रकाश होने पर पूर्वोक्त नियम के अनुसार औषध बन्द कर देना होगा। पुराना रोग एक्ज़िमा इत्यादि चर्म रोग में मृत्यु होने की आशंका नहीं रहती, इसीलिए उन सब रोगों में औषधकी क्रिया शीघ्र नहीं होती। अतः उन सब रोगों में औषध की एक खूराक देकर उसकी क्रिया के लिए १० । १५ । २० दिन या उससे भी अधिक एक या दो महीना अपेक्षा करना पड़ता है।

पर्याय क्रम से Alternately होम्योपैथिक औषध का प्रयोग कभी नहीं होना चाहिये।

एक समय में एक ही औषध व्यवहृत होता है। होम्योपैथिक औषध सेवन करने के दिनों में एलोपैथिक या अन्य किसी प्रकार की लगाने की औषध शरीर के ऊपर लगाना नहीं चाहिये।

औषध की मात्रा

होम्योपैथिक औषध की क्रिया उसके परिमाण पर निर्भर नहीं है. औषध की शक्ति के प्रभाव ही से रोग आरोग्य होता है। असल अर्क Mothr Tincture या नीची शक्ति की औषध अधिक परिमाण में रोगी को सेवन कराने से रोगी को हानि पहुँचती है। १५ या २० नम्बर की एक या दो गोली ज़बान पर देनेही से औषध की क्रिया उत्पन्न हो जाती है। साधारणतः पूर्ण वयस्क मनुष्य को १ बूंद और ५ से १० वर्ष के लड़के लड़कियों को इसका आधा और बच्चों को इसके ४ भाग का १ भाग दिया जाना है। औषध खाने के बाद एक घण्टे तक पानी नहीं पीना चाहिये।

पोटेन्सि या शक्ति निर्णय

औषधि की शक्ति का निश्चय करना चिकित्सक के तजुर्बे पर निर्भर है। किसी रोग में नीची शक्ति से और किसी रोग में उच्चशक्ति से उपकार होता है। नवीन रोगों (Acute diseases) में बच्चों के लिये ३ शक्ति और पूर्णवयस्क रोगी के लिये २०० शक्ति का साधारणतः प्रयोग करना निरापद है। पुराने रोगों में यदि समस्त लक्षण मिल जायें तो उच्चशक्ति का प्रयोग करना चाहिये वरना नहीं अन्यथा रोगी को हानि पहुँचेगी। असाध्य वा प्राणनाशक रोग में सुनिर्वाचित औषध की उच्चशक्ति का प्रयोग करने से रोगी को विपद्ग्रस्त करना है। अतएव औषध देने से पूर्व रोग की चिकित्स्य अथवा अचिकित्स्य दशा पर विचार कर लेना चाहिये। यदि रोग के आरोग्य होने की सम्भावना हो तो उच्चशक्ति का प्रयोग करना उचित है। ऐसा करने से रोगी क्रमशः उन्नति कर सकता है, और बहुत दिनों तक जीवित रह सकता है, यह याद रहे कि यदि उच्चशक्ति से विशेष फल न मिलता हो तो नीची शक्ति का प्रयोग करके देखना चाहिये, और यदि कभी नीची शक्ति से वाञ्छित फल न मिले तो उच्चशक्ति देकर देखना चाहिये।

औषध सेवन का नियम

होम्योपैथिक औषध सेवन करने के पहले हमेशा मुंहको अच्छी तरह से धो डालना चाहिये। औषध सेवन करने के पूर्व और पश्चात् कम से कम दो घण्टे के अन्दर किसी प्रकार का खाद्यपदार्थ पान तम्बाकू इत्यादि खाना वर्जित है। खिंचा हुआ पानी।

(Distilled water) शक्कर (Sugar of milk) या गोलियों में औषध बना कर सेवन करना चाहिये। आधा औंस पानी में औषधी की एक बूंद डालने से पूर्ण व्यस्क रोगी के लिये एक खुराक औषध बन जाती है। लड़के और लड़कियों को इसी की अर्द्ध मात्रा देनी चाहिये। छोटे छोटे बच्चों को शक्कर या गोलियों में दवा बनाकर देनी चाहिये। पुराने रोगों में सुबह के वक्त खाली पेट में औषध सेवन करना चाहिये।
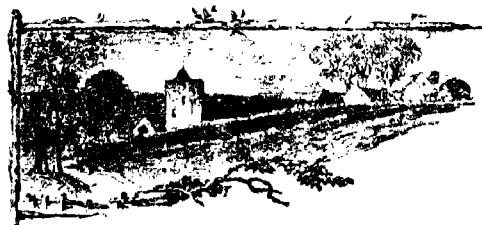
कुचला

कुचले का पेड़ तेंदू के पेड़ की तरह बड़ा होता है। इसके पके हुए फल देखने में नारंगी की तरह के होते हैं। इन्हीं फलों के बीज का नाम कुचला है। कुचला के बीज का आकार गोल, चपटा, पैसे जैसा होता है। बंगाल में कुँचिला व पूर्व बंगाल में कुशील भी कहते हैं। यह हिन्दी में कुचला संस्कृत में विषतिन्दुक और अंग्रेज़ी में नक्सवोमाइका कहलाता है। कुचला, कड़ुआ (तिक्तरस) लघुपाक, पीड़ा हरने वाला नशा करने वाला, वीर्य वर्धक, ग्राही, कफ़-पित्त नाशक होता है और वातरक्त, कुष्ठ, अजीर्ण, अर्श और व्रण की बीमारियों में बहुत फ़ायदा करता है।

पुराने व जीर्ण ज्वर में, प्लीहा, यकृत, अजीर्ण भूख न लगने, व पित्त के रोगों में कुचले से वैसा ही लाभ होता है, जैसा कि वात, पक्षाघात, शुक्र-मेह, मूर्च्छा और सब तरह की चमड़े की बीमारियों में। यद्यपि शास्त्र में इसका वर्णन होते हुए भी हमारे वैद्य बन्धु इसका प्रयोग कम ही करते हैं किन्तु पश्चिम के चिकित्सा शास्त्र में कुचले का व्यवहार बहुत ही ज्यादा देखा जाता है। टिंचर नक्सोमाइका, लाईकर स्ट्रिकनीन इत्यादि सब कुचले की ही बनी दवाइयां हैं, और इन्हें डाक्टर लोग बड़े आग्रह के साथ बर्तते हैं। आज कल हमारे देश में अजीर्ण की बीमारी खूब बढ़ रही है, इसके लिए कुचला बड़ी ही लाभदायक वस्तु है। हमने स्वयं परीक्षा करके कुछ प्रयोग देखे हैं कि:- चौथाई या आधा कुचला सन्ध्या के समय आधी छटांक जल में भिगो देवे फिर दूसरे दिन प्रातःकाल वह

निषिद्ध वस्तुएँ

प्याज़, लहसुन, गर्म मसाले, छोटी या बड़ी इलायची, दारचीनी, लौंग, सौंफ़, सौंठ, अदरक, मूली, कपूर, सिरका, खटाई, चटनी, अचार, पोदीना, मेथी का शाग, हींग, खुशबूदार तेल, गंधक, नीम की दातून, मक्खन इत्यादि तीक्ष्ण वस्तुएँ औषध सेवन करने के दिनों में वर्जित हैं।

जल पिया करें तो कुछ दिन में बहुत फायदा होता है। और जो इसमें गिलोय का सत ३ माशे भर और मिला लें तो आश्चर्य जनक फल प्राप्ति होती है। इसी प्रकार तिल्ली, जिगर की वृद्धि के साथ यदि जीर्ण ज्वर हो तो कालमेघ, लाल चीत की जड़, सहजने की छाल, गिलोय लालचन्दन, छोटी हरड़के दो दाने कुचला चौथाई हिस्सा और ऊपर की दवायें ५—५ माशे लेकर आध सेर जल में धीमी २ अग्नि से पकावें। जब एक छटांक रहे तब उतार लेवें उसमें से आधी छटांक जल लेकर ३० बूंद पर्पाते (अरराड खबूजे) का चिपचिपारस (गोंद) मिला कर सेवन करें तो असाध्य रोगी भी अच्छा हो सकता है।

वायु रोग में

असली सरसों का तैल ऽ= आधपाव, कुचला आधी छटांक, अदरक का रस आधपाव, लाल कौंच का चूर्ण आधा तोला, सैंधा नमक टका भर। सबको इकट्ठा ले कर पकावे जब तैल मात्र शेष रह जावे तो लेकर छानले, इस तैलकी मालिश से सब प्रकार के वायुरोग, स्नायुओं की जकड़ाहट दूर होती है। और शिथिल इन्द्रियाँ भी बलवान हो जाती हैं।

कुचले को खाने के काम में लाना हो तो निम्न प्रकार से इसकी शुद्धि करें—एक छटांक कुचले को भैंस के एक सेर गोबर व दोसेर पानीमें डालकर कोरी हांडीमें रखकर पकावें, जब पानी जल जावे तो निकालकर धोकर छिलका दूर कर दें और बीचमें से दो दाल करले। इसके अन्दर के हिस्से में पान जैसी अत्यन्त छोटी पत्ती होती है उसे निकाल डाले फिर कुचले के छोटे २ जौ के बराबर टुकड़े कर पानी में खूब धो डाले। फिर सुखा कर गौके घी में भून कर लाल करके कपड़े से पोंछ कर रख छोड़े। इनको जाड़े के मौसम में एक जौ का चौथाई हिस्सा रोज पानी में या मक्खन में लेवें। साधारणतया सदा शुद्ध कुचले को खाने के काम में लाना हो तो इसकी चौथाई रत्ती से लेकर १ रत्ती तक की मात्रा है इससे ज्यादा न खाना चाहिये। इसके सेवन के लिए मनुष्य को किसी चतुर वैद्य से आज्ञा ले लेनी चाहिये।

गुण

विषतिन्दुकमात्रा कटु कं दीपनं परम्।
उष्ण वीर्य तीक्ष्ण सारं कामोद्दीपनमुत्तमम्॥
अम्लपित्तप्रशमनं मूत्र लक्षुत्प्रदीपनम्।
पाचनं श्लेष्महरणं बलसंजनन परम्॥
मेदोहरं रुचिकरं सारमेयः विषापहम्॥
प्रहर्णीहर मत्यन्तं तथोन्माद विनाशनम्॥
आध्मानापहमत्यन्तं तथा अजीर्ण विनाशनम्।
आमाशयो त्थशूलघ्नं हृद्दौर्बल्य हरं परम्॥
श्वासप्रशम न श्चैवतथा फुप्फुसशोथनुत्।
अर्धांङ्गादित वातघ्नं नाड़ी बल विवर्धनम्॥

इसके और बहुत से गुण हैं जो फिर किसी अङ्क में दिए जावेंगे।

❧ ❧ ❧ ❧

सूर्यरश्मि चिकित्सा

पुरुषत्वहानि—

रोज़ २० मिन्ट तक अण्डकोषों पर लेंस से सूर्य की किरणों को केन्द्रीभूत करने से अनेक बार ध्वजभंग रोग को लाभ हुआ है। लेंस को इस तरह पकड़ना चाहिये कि अण्डकोषों का चमड़ा तो लाल होजावे पर वह जलने न पावे। ८ या १० मिन्ट में ही फायदा दीखने लगता है।

शीतला—

पहिले पहिल डाक्टर फिनसन ने ही लाल किरणों से चेचक की चिकित्सा की थी। चेचकके रोगी के घर दरवाज़े व खिड़कियों में लालपर्दा लगा देने से शरीर पर चेचक के दाग़ नहीं होते। यह बात भारतवर्ष को बहुत पुराने समय से ही मालूम है। एक समय की बात है कि बहुत से कैद किये हुये सैनिकों में चेचक की बीमारी फैली और इस बात से यह अनुभव प्राप्त हुआ कि जो सैनिक अन्धेरी कोठरी में बन्द थे उन सब पर चेचक ने जोर नहीं किया। इनके फोड़ों में पीप न हुई न इनके शरीर में दाग़ पड़े, पर जो सैनिक उजेली कोठरी में बन्द थे उन सबके फोड़े पके और उनके शरीर पर दाग़ भी पड़े। फिनसन ने परीक्षा करके देख लिया कि वायोलेट (बैंजनी) और इन्हीं के सदृश किरण ही जलन उत्पन्न करने वाली हैं। इसी से चेचक के रोगी को केवल लाल किरणों में ही रखने से केवल अन्धकार के सदृश आराम मालूम होता है। फिनसन ने कहा है कि चेचक के औषधालय के दरवाज़ों और खिड़कियों में लाल कांच (शीशा) लगाना चाहिये। फिनसन के कथनानुसार १८६७ ईसवी में नार्वे देश के Lindholm और Swendsen नामक दो डाक्टरों ने चेचक के नौ रोगियों को लाल-प्रकाश में रख कर चिकित्सा की (इनमें से ८ रोगियों को एक दफ़ा भी टीका न लगाया था। इस लिये इनको चेचक बहुत जोर से निकली) इस चिकित्सा से यह फल हुवा कि सब रोगी चँगे होगये। और किसी के शरीर में दाग़ न पड़े। कई डाक्टरों ने चेचक में इस चिकित्सा से लाभ उठाया है। चेचक के पहिले लक्षण ही दृष्टिगोचर होने पर रोगी को लाल प्रकाश में रखना चाहिये। रोग के आरम्भ के ८—६ दिन के अन्दर ही रोग की चिकित्सा आरम्भ कर देने से फोड़ों में पीप नहीं होती। अगर इसमें देरी करके चिकित्सा आरम्भ करें तो फल का निश्चय नहीं हो सकता। दिन की रोशनी घर के अन्दर कभी भी न आसके इस बात की सावधानी रखनी चाहिये। अगर लाल प्रकाश से कुछ लाभ न जान पड़े तो समझना चाहिये कि घर में किसी प्रकार से सूर्य का प्रकाश प्रवेश करता है। रोगी की

कोठरी में फोटोग्राफ़िक प्लेट रख कर देखने से मालूम हो जाता है कि बाहर का उजेला घर के अन्दर आता है या नहीं क्योंकि लाल से फोटोग्राफ़िक प्लेट में कुछ भी परिवर्तन नहीं होता। छोटी व बड़ी शीतला ऐरिसि पोलस आदि रोगों में लाल किरणों से विशेष फायदा होता है।

दुखदायी फोड़ा

अनेक असाध्य फोड़े सूर्य की किरणों के प्रयोग से अच्छे हो जाते हैं। डाक्टर शिलि का कहना है कि त्वचा का कैन्सर (फोड़ा) भी इसी चिकित्सा से चला जाता है और यही चिकित्सा Ray अथवा रेडियम की बहु मूल्य चिकित्सा से किसी तरह बुरी नहीं होती। मुँह में, नाक में अथवा शरीर के दूसरे स्थान में फोड़ा हो तो शिलि ने निम्न लिखित उपाय से सूर्य की किरणों का प्रयोग करने का उपदेश किया है। लेंस (शीशे) की सहायता से सूर्य की किरणों को केन्द्रीभूत करके १०—१५ मिन्ट तक फोड़े पर प्रयोग करना चाहिये। फोड़े पर अगर सूखे चमड़े का आवरण हो तो जब तक रोगी को कुछ वेदना न मालूम हो तब तक इसी प्रकार से लेंस (शीशा) प्रयोग करते रहना चाहिये। बाद में लेंस इस तरह धीरे २ दूर लेजाना चाहिये कि रोगी की वेदना घटती जाये। इस प्रकार क्रम से एक बार प्रबल धूप डाल कर फिर मीठी २ किरणों का प्रयोग करना चाहिये। प्रायः १० मिन्ट के बाद ऊपर का चमड़ा काला हो जायगा और कुछ दिन बाद यह अलग होकर निकल जावेगा। खाल निकलने के समय सूर्यकी किरणों एक दिनके अन्तर से फोड़े पर डालनी चाहिये। खाल निकल जाने पर फोड़े के स्थान पर कुछ ग्रेन कोकेन छोड़ना चाहिये, और ३—४ मिन्ट बाद फिर किरणों का प्रयोग करना चाहिये। अगर रोगी को बहुत कष्ट होता हो तो लेंस को ज़रा दूर ही रखना उचित है। दुर्बल बालक बालिका वा वृद्ध लोगों की स्वास्थ्योन्नति के लिये आज कल कई डाक्टरों ने धूप खाने की व्यवस्था की है। जिनेवा नगर के डाक्टर Professor roget ने रोगी बच्चों के लिये एक सूर्य की किरणों का अस्पताल बनाया है। इस औषधालय में बच्चों को बिलकुल नंगा करके धूप में खेलने देते हैं या घर के किसी काम में लगा देते हैं। थोड़े ही दिनों में यह बच्चे खूब बलवान होजाते हैं। यूरोप के अनेक स्थानों में इसी प्रकार रौद्र सेवन का बन्दोबस्त किया गया है। Crichton Browne ने कहा है कि कपड़े पहने रहने पर भी सूर्य की किरणों से शरीर को फ़ायदा होता है। गिरगिट आदि प्राणियों के रङ्ग भिन्न २ रंग के प्रकाश के अनुसार बदलते रहते हैं। किन्तु इन प्राणियोंकी आंखें ढकी रहनेसे उनमें उपयुक्त रंग का परिवर्तन नहीं होता। इससे मालूम होता है कि शरीर का परिवर्तन आँखों पर प्रकाश पड़ने पर बहुत कुछ निर्भर है। Crichton barowne कहते हैं कि धूप में बैठने से ही शरीर को बहुत लाभ होता है। अन्धेरे की अपेक्षा प्रकाश में बैठने से बालकों में अधिक स्फूर्ति दीख पड़ती है। हमारे देश में शीतकाल की धूप में बैठ कर बात चीत करना, कहानी

सम्पादकीय

खसरा

* * *

यह रोग महामारी के रूप में फैलता है। यह प्रायः चेचक की महामारीके साथ २ फैलता है। इसीलिए कभी २ इसके और चेचक की प्रारम्भिक अवस्था के लक्षणों में भेद करना कठिन सा हो जाता है। परन्तु यह आमतौर पर बच्चों का रोग है, इसीलिए इसका प्रकोप प्रायः दो और ६ वर्ष की बीच की उम्र में बच्चों को होता है, परन्तु यह हो सकता है कि जिनको बचपन में खसरा न हुआ हो उनको तरुणावस्था में हो जावे। इसके कीटाणु का अभी तक पता नहीं लगा है परन्तु इस रोग का अव्यक्ति काल सम्भवतः १४ से १६ दिन तक का है। अर्थात् रोगाणु लक्षण प्रकट होने से १४ दिन पूर्व शरीर में प्रवेश करके अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं।

कीटाणु प्रवेश प्रकार

इसका कीटाणु रोगी के मल-मूत्र, थूक, कपड़े तथा छूने से होता है। इस रोग के प्रथम लक्षण प्रकट होने से लेकर दानों के छिलकों के सूखने तक इस रोग का संक्रमण हो सकता है। प्रायः संक्रमण का समय ४ सप्ताह तक का होता है। इतने समय तक रोगी से बचना चाहिये।

कहना. बच्चों और प्रसूतिकाओं के लिये गौद्र-सेवन करने की प्रथा प्राचीन काल से ही प्रचलित है।

लक्षण

इसमें प्रारम्भ में, कास, प्रतिश्याय [जुखाम] बार २ छींक का आना, कभी २ गला पड़ जाता है, और ज्वर ९९ डिगरी से १०२ तक होता है। [इस अवस्था में गाल के भीतरी तल पर जो पहली डाढ़ के पास है नीलापन लिए एक सफेद धब्बा जिसके चारों तरफ एक लाल २ घेरा सा होता है प्रायः दिखाई देता है। रोगारम्भ से चौथे दिन कानों के पीछे तथा ऊपर के होंट पर छोटे २ लाल धब्बे दिखाई देते हैं। इसके एक दिन बाद ही दाने मुंह गर्दन बाहु आदि पर निकलकर फिर पेट टांगें इत्यादि नीचे के अंगों पर भी निकल आते हैं। कभी २ चेहरे के दाने कई २ आपस में मिल कर सूजन बढ़ने से चेहरा फूला हुआ और सुर्ख दिखाई देने लगता है। रोमकूप फटे २ और २ दिखाई देते हैं।

फिर ३—४ दिन बाद पहले चेहरे के दाने मुर्झा कर चेहरे का भरभरापन जाता रहता है और साथ ही दाने सूख कर मुर्झा जाते हैं और धीरे २ अन्य स्थानों के भी दाने सूख कर उनकी भूसी सी निकलने लगती है। दानों के निकलते वक्त ज्वर १०३ या १०४ डिगरी तक कभी इससे भी अधिक हो जाता है। फिर ज्यों २ दाने मुर्झाते रहते हैं ज्वर भी घटता जाता है। कभी २ ज्वर के वेग की अधिकता से रोगी बहकने लगता है। नींद नहीं आती।

उपद्रव

रोग की तीव्रता से कहीं २ से खून निकलने

अनुभूत प्रयोग

सेंधानमक, पीपल, बड़ीहरड़ का वक्कल, चीते की छाल, आमला सूखा इन सब को बराबर भाग में लेकर बारीक छलनी छन करलें इस में से ३-३ माशे सुबह शाम ताज़े पानी से लेने से श्लेष्मा का विकार जोकि बसन्त ऋतु में उत्पन्न होकर मन्दाग्नि हो कर भोजन में अरुचि हो जाती है, उस सब को दूर कर अग्नि को प्रदीप्त करता है। निहायत ही कब्ज़ कुशा चूर्ण है।

सब प्रकार की खाँसी पुराना जुकाम, नज़ला अरुचि आदि के लिये—सोंठ, मिरच, पीपल, अमलबेत, चव, तालीशपत्र, चीते की छाल, सफेद जीरा, इमली, इन सब को दो दो तोले दालचीनी, इलायची, तेजपात इन की २-२ तोले लेकर पुराने गुड़ पावभर या जितने में अच्छी प्रकार गोली बन जायें मिला कर १-१ माशे की गोली बना कर रख लें सुबह शाम गरम जल से लेवें।

सब प्रकार की बवासीर के लिये चूर्ण—

सैन्धव (लाहौरी) नमक, चीते की छाल, इन्द्र जौ, करञ्ज के बीज की गिरी, बकायन की गिरी, इन सब को बराबर लेकर ३-३ माशे सुबह शाम तक (छाछ) के साथ लेने से सात दिन में ही बवासीर के मस्से मुर्झाकर रोगी शीघ्र ही अच्छा होजाता है। यह खूनी और बादी दोनों प्रकारकी बवासीर में फलप्रद है।

अर्शो हर मोदक—काली मिर्च १तोले, सोंठ २ तोले, चीता ४ तोले, जिमीकंद ८ तोले गुड़ पुराना १५ तोले इन सबका बारीक चूर्ण कर गुड़ में मिलाकर १॥ १॥ माशे के मोदक बनाकर सुबह शाम १-१ जल से लेने से बहुत फ़ायदा होता है।

अद्भुत स्तम्भन योग—

जावित्री, जायफल, लाल चन्दन, पीपल,

लगता है और मृत्यु हो जाती है, इस रोग में गलग्रन्थियों का फूल जाना, न्युमोनियां, कर्णस्राव, नेत्राभिष्यन्द (आंखें दुखना) बच्चों को कम्हेड़ा वगैरह हो जाता है। यह अत्यन्त भयंकर रोग है इसमें विशेष सावधानी से चिकित्सा करनी चाहिए।

बचने के उपाय

यह रोग बहुत ही संक्रामक है रोगी के मुख इत्यादि छिद्रों द्वारा और दानों के छिलके की भूसी में विशेषकर रोगाणु रहते हैं, इसीलिए जिस मकान में खसरे का रोगी हो वहां पर दूसरे बच्चों को न जाने दिया जावे, इसी प्रकार यदि स्कूल या पाठशाला में किसी को यह रोग हो तो तीन सप्ताह तक के लिए बन्द कर देवें, रोगी के कमरे तथा उसकी खाट या पलंग के नीचे इन चीज़ों की धूप देवें।

धूपनद्रव्य

गूगल, नीम के पत्ते, बच, कूठ, हरड़, जौ, सरसों, घृत, इन सब को मिलाकर धूप देवें और सफाई का विशेष ध्यान रक्खें।

समालोचना

हमारे पास कविराज शिवशरण वर्मा फगवाड़ा (पंजाब) निवासी महोदय रचित व्रणबन्धन, मूत्रपरीक्षा, फेफड़ों की परीक्षा, इस प्रकार ये तीन पुस्तकें समालोचनार्थ प्राप्त हुई हैं।

व्रणबन्धन

पृष्ठ १३२ यह पुस्तक अनेक प्रकार के चित्रों के साथ २ एलोपैथिक और स्थान २ पर आयुर्वेदिक मतानुसार लिखी गई है। पुस्तक अतीव उपयोगी तथा हृदयंगम करने योग्य है, इसमें वैद्यों को शल्यचिकित्सा में बहुत सहायता मिलेगी। मूल्य १।=) सजिल्द १॥=)

फेफड़ों की परीक्षा

पृ० संख्या १७६ मूल्य १॥)। इस पुस्तक के प्रथम भाग में फुप्फुस रोगों के जानने के लिए संक्षेप में फुफ्फुस की रचना को अच्छी तरह समझा कर अग्रिम भाग में प्रत्येक रोग में फुफ्फुस की विचित्र २ विकृतावस्थाओं का वर्णन किया गया है। इसमें वैद्य बन्धुओं को फुफ्फुस रोगों की चिकित्सा में बड़ी सहायता मिलेगी।

मूत्रपरीक्षा

पृष्ठ संख्या ६१ मूल्य १) इसमें मूत्रपरीक्षा के विषय में बड़ी खोज की गई है। वास्तव में मूत्र परीक्षा के बगैर बहुत से रोगों की चिकित्सा में सफलता नहीं मिल सकती, विद्वान् लेखक ने इस विषय को बड़ी खूबी के साथ लिख कर वैद्य समाज का बड़ा उपकार किया है। मैं निवेदन करता हूँ कि पाठकगण इन पुस्तकों से अवश्य लाभ उठा कर लेखक महोदय के परिश्रम को सफल करेंगे। (सम्पादक)

सुखमार्ग

यह एक हिन्दी का मासिक पत्र है जिसमें कि शारीरिक, मानसिक आदि विविध विषयों के साथ अनेक सुन्दर २ कवितायें भी रहती हैं। छपाई सफ़ाई सुन्दर है। ग्राहकों को चाहिये वे इसमें अवश्य लाभ उठावें। वार्षिक मूल्य १॥)

केसर, लौंग, सोंठ, अकरकरा प्रत्येक २-२ तोले शुद्ध रूमी सिंगरफ़, गन्धक प्रत्येक ६ ६ माशे विशुद्ध अफ़ीम ४ तोले इन सब को मिला कर २-२ रत्ती की गोली बनावे। इनको दूध के साथ सेवन करने से वीर्य स्तम्भन होता है, काम शक्ति बढ़ती है। यह बहुत उत्तम योग है।

अनुभव से सिद्ध हुआ है कि दाद खाज छाजन आदि जितने देर में अच्छे होने वाले त्वचा के रोग हैं, वे सब कुत्ते को दही या मीठा लगा कर चटाने से जाते रहते हैं। परन्तु कुत्ता नीरोग और जवान हो, और दही इसतरह लगाया जावे कि कुत्ते को दांत लगाने की ज़रूरत न पड़े, एकदम बहुत ज्यादा दही या मीठा रखने से सम्भव है कुत्ता मुंह फैला कर उठावे और घाव में दांत लग जावे।

विचित्र वार्तायें-प्रहसन

अनसोमैना (नींद न आना) के मरीजों को पौलेण्ड के हस्पताल में रात को नींद लाने के लिये ऐसे पायजामें दिये जाते हैं, जिनमें क्लोरोफ़ार्म लगा होता है, जिसके असर से मरीज़ रात भर आराम से सोता है।

× ×

जुनुबी (दक्षिणी) रोडिसाया के निवासी जुजुफ़ नूडमी ने जो किसी वक्त में शेरों को सधाता था अब चूहों को लिखना सिखाया है, चूहे अपने पँजों को स्याही में डुबो लेते हैं और मालिक के इशारे के मुताबिक लकीरों और नुकतों के जरिये कागज पर लिखते हैं।

× ×

ऑन्टेरियो नामी एक शख्स ने गैस का एक चूल्हा खरीदा लेकिन ज्यूंही उसे जलाया तो वह बातें करने लगा, बाद को मालूम हुवा कि इस चूल्हे की धात पर रेडियो ब्राड कास्टिंग का असर होता है, और जब वह जलाया जाता है इसके जरिये तमाम प्रोग्राम सुना जा सकता है।

× ×

ब्रोसील्ज़ के एक बाशिन्दे ने एक दावत में अपने मेहमानों को ये चीजें खिलाई (१) तीन हज़ार वर्ष पहले गेहूँ के आटे की रोटी—ये गेहूँ एहराम मिस्री से लाया गया था (२) मलका एलिज़बेथ के जमाने का मक्खन। (३) शहर पोम्पाईका सेब—जो उसकी तबाही से पहले लाया गया था।

× ×

आशिक—प्यारी अगर तुम मुझसे शादी करोगी तो मुझ जैसा मज़बूत आदमी हर वक्त तुम्हारे घर की हिफ़ाज़त करता रहेगा,

महबूबा—मुझे तो ऐसा शौहर चाहिये जो अक्सर घर से गायब रहा करे।

× ×

नौजवान हसीना—(ज़ख्मी फौजी अफ़सरों के हस्पताल में , मैं लैफ्टिनेण्ट स्मिथ से मिलना चाहती हूँ।

सनरसीदा औरत—करीबी रिश्तेदारों के सिवाय और किसी को यहाँ मरीजों से मिलने की इजाज़त नहीं है।

हसीना—मैं उनकी बहिन हूँ।

सनरसीदा औरत मुझे आपको देख कर बड़ी खुशी हुई मैं उनकी माँ हूँ।

× ×

मलेरिया विशेषाङ्क पर लोकमत

आयुर्वेदाचार्य कविराज हरदयाल जी वैद्य वाचस्पति K. R. A. V. M. A. S.

आयुर्वेदाध्यापक डी० ए० वी० कालेज शंकर औषधालय लाहौर

महोदय !

आपका प्रेषित किया 'जीवन-सुधा' का मलेरिया विशेषांक पढ़ बड़ी प्रसन्नता हुई, मलेरिया सम्बन्धी विज्ञान को बड़ी खोज से संग्रह करने के कारण आप धन्यवाद के पात्र हैं, लेख सब विज्ञानपूर्ण और लाभदायक हैं।

वैद्यराज गणेश विट्ठल पलसे जैन आयुर्वेदाचार्य, मु० बार्शी सोलापुर—

सुधा का मलेरिया विशेषांक देख कर मन प्रसन्न हुआ प्रत्येक लेख भावपूर्ण और चिकित्सा कालमें वैद्यों, डाक्टरोंको बड़ा लाभदायक सिद्ध होगा, मैं सुधाकी हृदयसे उन्नति चाहता हूँ।

पण्डित चन्द्रशेखरजी पाण्डेय चन्द्रमणि—

महोदय !

'जीवन-सुधा' का मलेरिया विशेषांक मिला, कृशतनु होते हुए भी यह अपने विषय में अद्वितीय है, मैं भरती के लेखों से पत्र का आकार बढ़ाने की अपेक्षा, गागर में सागर भर देना अच्छा समझता हूं। प्रस्तुत मलेरिया अङ्क ऐसी ही सामग्री है।

कविराज नानकचन्द जी आयुर्वेदाचार्य मच्छीहट्टा लाहौर—

इस 'जीवन-सुधा' में प्रकाशित मलेरिया सम्बन्धी निबन्ध वास्तव में प्रशंसनीय हैं क्योंकि सब लेख गम्भीर गवेषणापूर्ण लिखे गए हैं, आशा है, वैद्य मण्डल इन लेखों से विशेष लाभ प्राप्त कर सकेगा, विशेष कर डा० वेदव्यासदत्त जी का लेख अत्यन्त अन्वेषणात्मक है।

डाक्टर शिवदत्तप्रसाद जी वाजपेयी वैद्य भूषण एच० एम० बी० अजगैन उन्नाव—

श्रीयुत सम्पादकजी, 'जीवन-सुधा' का मलेरिया अङ्क मिला, यह अङ्क वैद्यों के लिए तो संग्रहणीय है ही किन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लिए और खासकर ग्रामीण वैद्यों के लिए बड़ी आवश्यकता की वस्तु है क्योंकि प्रायः ग्रामों में उत्तम वैद्यों के अभाव के कारण यथोचित चिकित्सा न होने से सैकड़ों मनुष्य अकाल में ही काल कवलित हो जाते हैं, लेख खोजपूर्ण और उत्तम हैं, इसके लिए सम्पादक तथा अध्यक्ष महोदय को बधायी है।

प्रोफेसर वैद्यराज डाक्टर के० डी० तलनियाँ वैद्य शास्त्री,
श्रीयुत महोदय !   **श्री कैलाश आयुर्वेद विद्यालय, अल्मोड़ा।**

समालोचनार्थ मलेरिया विशेषांक प्राप्त हुआ, यह अङ्क प्राच्य, प्रतीच्य सिद्धहस्त चिकित्सकों द्वारा सारगर्भित लेखों से परिपूर्ण है, विशेषतया सम्पादकीय लेख में मलेरिया का पूर्ण इतिहास अन्य रोगों से पृथक्करण, तथा श्रीमान् डाक्टर वेदव्यासदत्त जी M. A. M. S के लेख से, कुनैन से हानि लाभ, व उसका इतिहास, तृतीयक, चातुर्थिक ज्वर का तीसरे, चौथे ही दिन अपने नियत समय पर क्यों आता है, इत्यादि गम्भीर विषयों का वर्णन इस अङ्क के सुन्दर पृष्ठों पर अङ्कित है तिस पर भी सफ़ाई और छपाई विशेष सराहनीय है अतएव यदि इसे मलेरिया का सर्वाङ्ग-पूर्ण विशेषांक कह दिया जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी।

दैनिक पत्र 'वतन' ४ दिसम्बर सन् १९३४ इतवार

'जीवन-सुधा' का मलेरिया का विशेषांक—.

हिन्दी के मशहूर रिसाला 'जीवन-सुधा' ने जो गुजिश्ता ४ साल से शाया हो रहा है, इस बार मलेरिया नम्बर निकाल कर अपनी शोहरत में इज़ाफ़ा किया है, इस नम्बर में मलेरिया के मुतल्लिक़ हर मालूमात को अच्छी तरह से बयान किया है, मज़ामीन दिलचस्प और मुहक्क़ाना। खोज-पूर्ण है रिसाले के अध्यक्ष वैद्यराज पं० महावीरप्रसाद जी रसायन शास्त्री बड़ी कोशिशों से रिसाले को बेहतरीन बना रहे हैं पिछले मौके पर 'जीवन सुधा' ने महिला रोग विज्ञान नम्बर एक आला पैमाने पर निकाला था, जिस पर रिसाले को आल इण्डिया हिन्दी साहित्य-सम्मेलन प्रदर्शिनी की तरफ़ से स्वर्णपदक मिला था आयुर्वेदिक यूनानी तिब्बी में दिलचस्पी रखनेवाले हिन्दी जानने वालों को रिसाले की सरपरस्ती करनी चाहिए, अब नए साल से रिसाले में निहायत दिलचस्पियों का इज़ाफ़ा किया गया है और साल का चन्दा सिर्फ़ दो रुपये हैं, जो रिसाले की खूबियों को मद्देनज़र रखते हुए कुछ ज्यादा नहीं है।

वैद्यराज पं० महावीरप्रसादजी के लिये चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, कूचा शार्लाराम, देहली में छपा।

JIWANSUDHA.] [मई जून १९३५

जीवन-सुधा

स्वर्गीय रसायन-शास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज देहली।

संस्थापक—जीवनसुधा और बृहत आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—प्रोफेसर पं० भगवद्दत्त शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य ३) प्रति अङ्क ≈)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ≋) सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)॥ का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो फिर मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्ता

बृहत् आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार, जौहरी बाजार, देहली

विज्ञापन छपाई का रेट

	एक वर्ष	६ मास	३ मास	एक बार
समस्त टाइटल पेज	४०)	२२)	१२)	४)
आधा ..	२)	१२)	६)	२॥)
साधारणपृष्ठ समस्त	३६)	२१)	१०)	३॥)
.. आधा	२०)	१०)	५॥)	२)

विज्ञापन छपाई सम्बन्धी रेट बिल्कुल निश्चित है इसके लिए लिखने की तकलीफ न उठाएं।

मैनेजर विज्ञापन-विभाग 'जीवन-सुधा' देहली।

❀ ॐ ❀

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से भय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ४ वैशाख-जेठ, वीरनिर्वाण सं० २४६१, वि० सं० १९९२, मई-जून सन् १९३५ } अङ्क ५-६

श्रान्त पथिक !

(रचि०—वैद्यराज पं० योगीन्द्रचन्द्र शुक्ल L. M. B. इलाहाबाद)

(१)

चलो पथिक क्यों श्रान्त हुए हो,
अभी मार्ग है अति गम्भीर।
उत्साहित हो चरण धरा ज्यों,
श्रम हर लेगा तुरत समीर॥

(२)

वन-लतिकाएँ झूम झूमकर,
कर लेंगी तेरा शुभ प्यार।
शुक, मयूर कलकंठ आदि निज,
स्वर से कर लेंगी सत्कार॥

(३)

हरीत की खम्भार बिभी तक—
के तरु होंगे छत्र समान।
सुन्दर स्रोतों के अमृत से,
फूलेगा मानस उद्यान॥

(४)

मृग, मयूर, हंसादि संग तू,
प्रकृति देवि के लख कर रूप।
औषधियों से व्याप्त विपिन में,
धर लेगा "योगी" का रूप॥

प्रकृत्यनुकूल स्वास्थ्य चर्य्या।

लेखक—
श्री पण्डित डाक्टर वेदव्यासदत्त जी शर्मा, आयुर्वेदाचार्यः, 'जालन्धर'

(गतांक से आगे)

वायु प्रकृति वालों को स्निग्ध उष्ण मधुर अम्ल लवण रसयुक्त द्रव्य भोजन, ठण्डे जल का स्नान, शीतलजलपान, हाथ पैर का दबाना, सर्वदा सुखजनक कार्य, घृत तेलादि स्नेह द्रव्य व्यवहार अनुवासन वस्ति अग्नि प्रदीपक व पाचक औषधि सेवन हितकर है।

पित्त प्रकृति वालों को:— मधुर तिक्त और कषाय रस संयुत शीतल द्रव्य पान व भोजन, घृत-पान, चन्दनादि तेल व आंवले के तेल का व्यवहार. पुष्पादि की माला धारण करना श्वेत स्वच्छ वस्त्र पहिनना, प्रियजनों से बात चीत, क्रोध का त्यागन ठण्डी हवा, चन्द्रकिरण में फिरना, सुन्दर उपवन नदीतट बाग पर्वतों में घूमना, कम बोलना, मांस लहसुन प्याज़ खटाई गुड़ लालमिर्च काले लाल वस्त्र का त्याग, ब्राह्मी बूटी का सेवन। विरेचन लेने, धूप में न फिरने, सादा सुपाच्य भोजन करने तथा कम मैथुन से पित्त शान्त रहता है।

कफ प्रकृति वालों को:—कटु तिक्त और कषाय रसयुक्त तथा तीक्ष्ण ऊष्णवीर्य द्रव्य पान व भोजन, अश्वारोहण, व्यायाम, रात्रि जागरण रूक्ष द्रव्य द्वारा गात्रमर्दन धूम्रपान उपवास उष्ण वस्त्र परिधान व वमन करना कफ प्रकृति वालों को हितकर है।

शरीर के १० उपादानानुकूल स्वास्थ्य रक्षा

श्वासोच्छ्वास संस्थानः—श्वास के इस उपादान में फेफड़े नासिका टेंटुवा स्वरयन्त्र श्वास प्रश्वास नालियां हैं। इस उपादान की रक्षा तथा कार्यक्रम पर ही जीवनज्योति जागृत है। हृदय के दांये क्षेपक कोष्ठ से फुफ्फुसिया दो धमनियों के ज़रिये हमारे सारे शरीर का अशुद्ध रक्त शोधनार्थ फेफड़ों तक पहुंचता है फेफड़ों के वायु कोषों की उत्तम वायु आक्सिजन गैस से शुद्ध हो पुनः हृदय

के बाये से रक्त कोष्ठ की महाधमनी के जरिये सारे शरीर में वितीर्ण हो हमारा शरीर बलपुष्ट तथा तेजोमय बना रहता है। रक्त जब दूषित अवस्था में रहता है तो कारबोनिट गैस युक्त होता है। हम जो नासिका से स्वाँस लेते हैं उसमें आक्सिजन (Oxygen) प्रवेश होकर हमारे अशुद्ध फुसफुसिय कोषों में फुसफुसिया धमनी के जरिये आये हुए रक्त को शुद्ध करता है हमको यह आक्सिजन पेड़ पौधों से प्राप्त होती है। कारण, पेड़ पौधों की त्यागी हुई गैस ही आक्सिजन है जो हमारे लिए प्राणप्रद वायु कही जाती है हमारी प्रश्वास की यानी त्यागी हुई दूषित वायु इन पौधों की गिज़ा है। अस्तु हर प्राणी मात्र के लिए आक्सिजन का प्राप्त करना नितान्त जरूरी है। इसके लिए रहन स्थान के समीपवर्ती बाग़ बनाना पौधे लगाना निवासस्थान में हवा प्राप्ति के लिए खिड़कियाँ व दरवाजे काफ़ी रखना मकानों की मन्जिल ऊँची करना प्रातः सायं पर्यटनादि करना व प्राणायाम करना शयनागार में ज्यादा भीड़ न रखना व ज्यादा भीड़ में प्रवेश न होना तम्बाकू सिगरेट न पीना, शिर ढांप न सोना पर मुंह बन्द रहे नासिका से ही स्वाँस प्रस्वास करना चाहिये।

गुण—आयु बल की वृद्धि होती है। रक्त शुद्ध रहने से चर्म रोग नहीं होते। स्मरण शक्ति का विकाश होता है। हृदय की ताक़त बढ़ती है अग्नि प्रदीप्ति होती है। नेत्र व कानों की शक्ति बढ़ती है। शरीर का सुगठन रहता है। छाती चौड़ी होती है, तपेदिक़ का कुछ भी असर नहीं पड़ने पाता अपनी शक्ति स्थिर रहती है, रोग व्याप्त नहीं होने पाते।

प्राणायाम—यानी मुँह बन्द किये एकान्त स्वच्छ स्थान में एक या दोनों नासिका छिद्रों से वायु खींच फेफड़ों को फुला फेफड़ों में सामर्थ्यानुकूल नियमित समय तक वायु स्थिर रख पुनः धीरे २ छोड़ना ही प्राणायाम है।

प्राणायाम से—आयु बल व शक्ति की वृद्धि के साथ २ (शोष) तपेदिक व स्वाँस की बीमारी (Asthma) दमा वग़ैरह नहीं होने पाते।

ग्रीष्म ऋतु में पहाड़ों बाग़ों नदीतटों उपवनों चीड़ के जंगलों में घूमना चाहिये व इन स्थानों की शीतल हवा में विश्राम ले प्रकृति पर मुग्ध हो मनोविनोद करना चाहिए। कारण, मनोविनोद व प्रसन्नचित्तता का असर हवाख़ोरी में उत्तम लाभप्रद है।

पोषण संस्थान व स्वास्थ्य रक्षा।

इस संस्थान का विशेष सम्बन्ध आहार से रहता है आहार कैसा व किस विधि से तैयार होना चाहिए यह पूर्व वर्णन हो चुका। जो भोजन खाया जाता है वह अन्न वाहीका नली से आमाशय में पहुँच आमाशयिक रस से ४ घण्टा मथ चुकने पश्चात् रस, रस से रक्त आदि को परिणत हो सारे देह का पोषण कार्य चलता है। इसलिए मानसिक विचार अवस्था भय क्रोध ईर्षा आदि का प्रभाव भोजन पर विकट पड़ता है अतः भोजन प्रसन्न चित ही हो करना यथेष्ट है। अन्यथा आमाशय खाद्यवस्तु को रस रक्त में परिणत न कर सीधा बिना पचा ही मलाशय की ओर भेज देता है जिस से लाभ के बजाय हानि हासिल होती है व शरीर क्षीण हो रस रक्त का क्षय हो चर्म रोग वात व्या-

धि मूर्छा भ्रम हृदय की कमजोरी आदि अनेक रोग होते हैं। अस्तु पोषण यन्त्र के दुरुस्त सञ्चालनार्थ भोज्य वस्तु के निर्माण तथा उपयोग पर पूर्ण दृष्टि रहनी चाहिए। व भोजन वात पित्त कफ रज तम सत प्रकृत्यनुकूल होवे।

रक्त वाहक संस्थान व स्वास्थ्य रक्षा।

रक्त वाहक संस्थान का मुख्य स्थान (Heart) हृदय है पोषण संस्थान याने आमाशय पकाशय क्षुद्रान्त्र वृहदन्त्र आदि से रस, रस से रक्त परिणत हो हृदय के जरिये ही समस्त देह में विभाजित होता है। हृदय को यदि सारे शरीर का मन्त्री कहा जावे तो कोई अयुक्ति न होगी। हृदय जीवन का चिराग है यदि यह ज्योतिर्मय चिराग बुझ जाय तबतो सारा विश्व ही समाप्त है। इसलिए इसकी रक्षा करना जीवन को क़ायम रखना है। हृदय का विशेष सम्बन्ध मानसिक विचारों, ईर्षा, क्रोध, भय, चिन्ता, सुख-दुःख आर्थिक संकट, यात्रा, ऐश-आराम, शब्द, ज्योति, शीत, धूप, आदि से रहता है। इसीलिए एकाएक बिजली गिरने, बहुत बड़े आहट, अद्भुत भयंकर वस्तु देख कर; शेर चीता आदि देखकर, अत्यन्त भय या अत्यन्त खुशी, अत्यन्त, कष्ट, अत्यन्त प्रेम, मैथुन, तथा रुग्णावस्था से हृदय स्तब्ध हो जाता है। याने अपने अनवरत रूप के कार्य क्रम से च्युत हो जाता है। हृदय का च्युत (बन्द) होना ही मृत्यु है। अस्तु उपरोक्त विवरण पर साहस, धैर्य, रखने से ही व सान्त्वना देने, सहायता करने, भय टालने आदि से या प्राणायाम व्यायाम, शीर्षाशनादि, से हृदय सबल अर्थात् बल प्रद होता है एवं अंगूर सेव, नासपाती, दाख, ईख, पान, लीची, लुकाट, शरीफा, केला, नारङ्गी, आम, तरबूज, खरबूजा, आदि फलों वाली. अरारोट. जौ, गेहूं, मास शोरवा, अण्डा, दूध, चीनी, मिश्री, ठण्डाजल से व अभ्रक भस्म, मालती वसन्त, रसेन्द्ररस, काश्मीरी केशर, डिजिटेलिस (Digitalis) आदि दवाओं से हृदय का बल बढ़ता है पर दवाइयाँ रोगावस्था पर ही उपयोगी हैं व अन्य पदार्थ देशकाल अवस्था आदि के ऊपर सेवनीय है। प्रसन्नता हृदय को बहुत बल देता है अस्तु हमेशा प्रसन्न चित्त रहना बहुत जरूरी है। दयालुता दिखलाना भी बहुत अच्छा है। सारे शरीर में हृदय एक अमूल्य रत्न है इसी के ऊपर जीवन यात्रा निर्भर है अस्तु इसको कभी निर्बल नहीं होने देना चाहिए.

मूत्र संस्थान व स्वास्थ्य रक्षा

हमारे शरीर का दूषित रक्त व द्रव्य अधिकांश तो फेफड़ों के जरिये शुद्ध होता है। पर कुछ रहा सहा भाग वृक याने गुर्दों के जरिये साफ होता है। वृक या गुर्दे रक्त के दूषित अंश को मूत्र के रूप में रूपान्तर कर मूत्र बहिर्द्वार से बाहर कर देते हैं।

इस मूत्र संस्थान में ६ अंग हैं। दो वृक या गुर्दे, दो मूत्र प्रणाली एक वस्ति व एक मूत्र बहिर्द्वार। अति ऊष्ण चरपरा, ग्रीष्म का भ्रमण अति शीतांगावस्था (हैजा प्रभृति रोग में) शोक भय (Gonorrhea) सोजाक, (मूत्रकृच्छ) उपदंश आदि रोग डिजिटेलिस कुनियायन (Nuxvomica) कोचीला आदि दवाओं, जन्मगत उपदंश रोगादि से गुप्तेन्द्रिय अर्थात् मूत्र संस्थान पर बाधा पहुँचती है। अतएव उपरोक्त आहार तथा दूषित

व्यवहार से वर्जित रहना ही मूत्र संस्थान यन्त्रों की रक्षा है।

मांस संस्थान

मांँस संस्थान छोटे छोटे सेलों सौत्रिक तन्तुओं, रक्त वहां शिरा केशिकाओं कफ पित्त तथा वायु से सम्पन्न युक्त चल अचल पेशियों से निर्मित है जिसके याने शरीर के बाहरी आवरण पर त्वचा नामक खोल जो सूक्ष्म छिद्रों से युक्त है चढ़ा हुवा है। रक्त का दूषित द्रव्य पसीने के रूप में इन्हीं छिद्रों से शरीर से बाहर होता है अतएव माँस संस्थान की रक्षा के लिये मामूली पसीना आना व नहाना अति आवश्यक है साथ ही तेल मर्दन मांस त्वचा को मुलायम सुघड़ व चमकीली बनाये रहता है। अन्दरूनी माँस पेशियों की रक्षा वमन विरेचन व उपवासादि अनुवासन वस्ति के ऊपर देश काल व समय के परिमाणानुकूल निर्भर है। पैरों की बिवाई के लिये तथा होठों के फटने की रक्षा के लिये सोते समय वाइसलीन प्रेट्रोलियमजैली (Petroleumjelly) व ग्लीसरीन (Glycerine) का उपयोग ऐसे ही तिल तेल (oil of seesam) का व्यवहार फलप्रद है। एवं फोड़ा फुन्सी एकजीमा स्केबीज आदि चर्म रोगों के लिये दस्त, वमन लेना रक्त शोधक द्रव्य उसबामूल (सालसा सप्रैला) मन्जिष्ठादि क्वाथ, गोमूत्र सेवन आदि हितकर है। फोड़ों को दवाने के बजाय पाक होने देना उचित है अन्यथा अन्दरूनी दूषित रक्त दूसरे स्थान पर प्रकोप करेगा। यही माँस संस्थान की रक्षा है।

नाड़ी संस्थान

इस स्थान का खास सम्बन्ध मस्तिष्क के वृहद तथा क्षुद्र भाग से है। इन्हीं के जरिये ज्ञानेन्द्रियां अपने कार्य क्रम पर आरूढ़ रहती हैं। शिर को ग्रीष्म वसन्त में खुला रखना सिर पर बाल रखना तिल ब्राह्मी जैतून आंवला सन्दल का तेल डालना बार बार कंघी करना. ग्रीष्म वसन्त शरद में प्रातः सायं घूमना, कम बोलना. घृत दूध सरबत मिश्री सेब अंगूर आम फालसा नारंगी केला नीबू कागजी, इमली अनार नासपाती ब्राह्मीघृत का उपयोग प्रथम स्नान के लिये सिर में ठन्डा जल छोड़ना कानों में तेल डालना मैथुन न करना जंगली चिड़ियों का शोरवा खाना अण्डे का इस्तैमाल करना दूध पीना सात्विक चित्त रहना सादे स्वच्छ वस्त्र पहिनना प्रिय जनों से मिलना उत्तम ध्येय रखना नाड़ी संस्थान की रक्षा करना है इसके विरुद्ध हानि होती है।

अस्थि संस्थान

अस्थि में विशेष अंश चूने का होना है अस्तु इसके दृढ़ार्थ मसूर की दाल क्योंकि इसमें चूने का अंश अधिकांश है। व हर किस्म की दाल पान के साथ चूने का उपयोग दूध अण्डा का इस्तेमाल टिमाटर का व्यवहार मांस का शोरवा लाइमवाटर से बना शर्वत उपकारी है। व लवण युक्त भोज्य भी हितकर है।

सन्धि संस्थान

इस संस्थान की रक्षा व्यायाम के ऊपर व पर्यटनादि शारीरिक परिश्रमादि के ऊपर निर्भर है। अस्तु—तेल मर्दन तैरना मुग्दर हिलाना डम्बेल्स चलाना दौड़ना फांदना कूदना उछलना आदि के ऊपर नियुक्त है।

टाइफाइड फीवर

[ले०—आयुर्वेदाचार्य कविराज नानकचन्द्र वैद्यशास्त्री आ० वे० धुरीण, आयु वे० रत्न]

"टाइफाईड" यह नाम प्रायः एलोपैथी के विधान वर्णन करते हैं। इस ज्वर को अन्य नामों से भी पहचाना जाता है जैसे—आन्त्रिकज्वर, मोतीझरा, मन्थरज्वर, एण्टेरिक फीवर, टाइफाईड फीवर यह सब नामान्तर ही वर्णन किये गए हैं।

परिचय—

यह एक तीव्र संक्रामक व्याधि है जिसमें छुद्रान्त्र की लसी का ग्रन्थियों में शोथ तथा व्रण हो जाते हैं, शनैः २ ज्वर बढ़कर कुछ काल के अनन्तर घट जाता है। इसमें प्रायः तीन सप्ताह लग जाते हैं। सद्योपचार होने से या आरम्भ में ही विरेचन देने से यह ६८ दिन तक रोगी को नहीं छोड़ता।

कारण—

पाश्चात्य विद्वान इस ज्वर का कारण एक प्रकार का दण्डाकार कीटाणु मानते हैं जिसे "वैसिलस टाईफोसिस" कहते हैं। यह कीटाणु रोगी के आन्त्रिक व्रण, मूत्राशय, पित्ताशय, प्लीहा रक्त और पिडिकायों में रहता है, अतः रोगी के मल मूत्र तथा स्वेद में उपस्थित रहता है, रोग मुक्ति के अनन्तर भी कई सप्ताहों तक मल मूत्र में आता रहता है। इस दूषित मल मूत्र से क्रिमि कई प्रकार से आहार द्रव्यों तक पहुँचकर उनको दूषित कर देते हैं इससे रोग प्रसार का कारण हो जाता है।

संक्रमण के हेतु—

१—रोगी या संक्रमवाहक के मल मूत्र से स्पर्श हो जाने पर बिना शुद्ध किये उन्हीं हाथों से भोजन कर लेने से। प्रायः परिचारक आदि में ऐसा हो जाता है।

२—मलमूत्र से मक्खी मच्छर आदि कीटाणु, ओं को पैरों के साथ लेकर आहार द्रव्यों पर जा बैठते हैं और उन्हें दूषित कर देते हैं।

३—रोगी के दूषित वस्त्रादि के धोवन से पानी का विकृत होना या अन्य जल में जो पीने वाला हो उसमें कीटाणु के मिलने से।

४—परिचारक, संक्रामवाहक यदि अपने हाथों को भली प्रकार धोवें और खाद्य पदार्थों को स्पर्श कर दे तो वह पदार्थ दूषित हो जाते हैं। विशेष ग्वाले तथा अन्य दूध बेचने वाले इस प्रकार प्रसरण के हेतु हो जाते हैं अतः दूध में कीटाणु अति शीघ्र वृद्धि प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार अन्य संसर्गज हेतु भी इसके कारण हो जाते हैं।

व्यापकता—

आन्त्रिक ज्वर प्रायः सारे भूमण्डल पर होता है वरञ्च अधिकतर उष्ण प्रदेशों में और वहां पर भी ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में अधिक होता है।

सम्प्राप्ति —

कीटाणु अन्त्रियों में जाकर उसकी भित्ति में रहने वाली लसी का ग्रन्थियों के समूह में शोथ उत्पन्न कर देते हैं। यह शोथ शनैः २ वृद्धि को प्राप्त हो जाती है। दूसरे सप्ताह में व्रण बन जाते और उनके ऊपर से श्लैष्मिक कला के टुकड़े झड़ने लगते हैं। औदरीय कला की लसी-का ग्रन्थियां भी शोथ युक्त हो जाती हैं और पीड़ा करती हैं। यकृत प्लीहा में वृद्धि हो जाती है। व्रणों के बढ़ने से यदि रक्त वाहिनी भी इसमें फटने लग जायें तो रक्त स्राव होने लगता है, तथा व्रण जब अन्त्र की भित्ति को विदीर्ण कर उदर कला तक पहुंच जाय तो उदर कला में भी शोथ उत्पन्न कर देता है।

परिपाक काल—

१० से १४ दिन तक और मर्यादा ५ से २० दिन तक होतो है।

लक्षण —

यह रोग शनैः २ आरम्भ होता है। आरम्भ में शिरःशूल, अंगमर्द और अवसादादि पूर्व रूप में प्रतीत होने लगते हैं। पुनः अल्प ज्वर होता है। दिनोंदिन लक्षण तीव्र होते जाते हैं। ज्वर बढ़ जाता है दो चार दिन में रोगी अशक्त हो जाता है और शैया पर पड़ जाता है। नाड़ी की गति ज्वर की अपेक्षा मन्द होती है। जिह्वा मलीन तथा रक्तांकुरों से युक्त होती है। जिह्वा के किनारे तथा अग्रभाग रक्तवर्ण होते हैं कभी २ कोष्ठबद्धता परन्तु प्रायः पतला मल उतरता है। उदर वायु पूर्ण होता है। और नाभी को दबाने से व्यथा होती है, प्लीहा, यकृत बढ़े हुए प्रतीत होते हैं। सात दिन तक या कभी २ इससे पूर्व भी ज्वर (१०४–१०५) तक पहुँच जाता है।

द्वितीय सप्ताह में ज्वर अपनी सीमा तक पहुंचकर वहां स्थिर रहता है, दुर्बलता तथा अन्य लक्षण अधिक हो जाते हैं कभी २ प्रलाप, कम्प, तथा उदर पर रक्तवर्ण की पिडिकायें दिखाई देती हैं दबाने से थोड़े काल में मिट जाती है पुनः निकल आती हैं यह गौर वर्ण व्यक्तियों में स्पष्ट प्रतीत होती हैं। कभी २ देह पर विशेषतः ग्रीवा, वक्ष और उदर पर श्वेत वर्ण की छोटी २ पिडिकायें निकल आती हैं जिन्हें लोग तोड़की कहते हैं। परन्तु यह वास्तव में स्वेद ग्रन्थियों के मुख पर शोथ के कारण होती है जो ग्रीष्मऋतु में अति स्वेद से प्रत्येक सन्तत ज्वर में हो सकती है। जिह्वा शुष्क, फटी हुई, ओष्ठ वा दातों पर मैल जम जाता है। यदि प्रथम सप्ताह में अतिसार हो तो वह बढ़ जाता है और उदर प्रायः फूला रहता है। नेत्र स्तब्ध तथा तेजहीन होते हैं। यदि व्रण धमनियां विदीर्ण हो जायें तो मल में रक्त आता है यदि व्रण प्रवृद्ध हो जायें तो उदर कला में शोथ उत्पन्न कर देते हैं यह अवस्था भयानक होती है इसी में तीव्रताप, टाक्सीमिया अतिसार, रक्तस्राव, या उदर कला में से मृत्यु हो जाने का भय रहता है। कभी २ यह अवस्था एक सप्ताह से २, ४, ६ सप्ताह तक भी चली जाती है। असाध्यावस्था में भी यही लक्षण होकर मृत्यु हो जाती है।

तृतीय सप्ताह में ज्वर शनैः कम होने लगता है। प्रातःकाल बहुत कम होता है सायंकाल कुछ बढ़ जाता है। अन्य लक्षण भी घटने लगते हैं इस सप्ताह

के अन्त तक सब लक्षण दूर हो जाते हैं, चतुर्थ सप्ताह में ज्वर उतर चुका होता है परन्तु दुर्बलता रहती है। धीरे २ वह भी हट जाती है अन्त में व्रण भर जाते हैं। यदि इसी सप्ताह में कुपथ्य या मिथ्या विहार हो जाये तो व्रण बिगड़ कर पुनः ज्वर हो जाता है।

यह रोग अधिक भयानक होता है इसमें १५, २०, प्रतिशत रोगी मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, बच्चे इस रोग से अधिक बच जाते हैं। उनकी मृत्यु संख्या भी कम होती है परन्तु दूध पीते बच्चे इससे कम बचते हैं अति स्थूल वा कृश तथा मद्यपायी लोग इससे अधिक ग्रस्त होते हैं। कोष्ठ-बद्धता अतिसार की अपेक्षा अच्छा लक्षण है।

उपद्रव

ज्वराधिक्य, सकर्णमयिया, प्रलाप, आध्मान, रक्तस्राव औदरीय कला शोथ, फुफ्फुसप्रदाह, कई बार यह ज्वर फुफ्फुस प्रदाह के साथ ही आरम्भ होता है, वृक्क शोथ, आदि इसके उपद्रव होते हैं।

रोगमीमांसा--

लक्षणों द्वारा रोग पहचानना कठिन नहीं होता यतः ज्वर का क्रमशः बढ़ना, नाड़ी की तापापेक्षा मन्द गति और जिह्वा का वर्ण इसे नितान्त स्पष्ट कर देता है। परन्तु जब ज्वर अकस्मात् या शीघ्र ही अपनी सीमा पर पहुंच जाय तो इसे विषमज्वर तथा सन्तत ज्वरों से भिन्न करना कठिन होता है।

प्राचीन मतानुसार इसके लक्षण इस प्रकार वर्णन किये गये हैं।

लक्षण — यथा

"ज्वरो दाहो भ्रमो मोहो ह्यति सारो वमिस्तृषा।
अनिद्रा च मुखं रक्तं तालु जिह्वे च शुष्यतः"
ग्रीवादिषु च दृश्यन्ते स्फोटकाः सर्षपोपमाः।
कण्ठौष्ठ मुख नासानां पाकः स्वेदश्च जायते।
एतच्चिह्नं भवेयस्य स सुघोर क उच्यते॥ इतिस्पष्टम्

अस्यपूर्वरूपाणि —

"अंगानां गौरवं ग्लानि रस्थिभेदो ऽतिनिद्रता।
पूर्व लिंगं तु सर्वेषा मेषा मिदमुदीरितम्॥ इतिस्पष्टम्

यहाँ "सर्वेषा मेषामिद मुदीरितम्" यह पद महर्षि ने दिया है इससे यह स्पष्ट है कि यह अर्थात् पांच प्रकार का सन्निपात ज्वर होता।

चोक्तं ज्वर तिमिर भास्करे—

ब्राह्मणं क्षत्रियो वैश्यः शूद्र श्चाण्डाल एव च।
प्रथितः पञ्चधा वर्णो रयं रोगः कीर्तितः॥

यथाच —

ब्राह्मणः श्वेतवर्णश्च क्षत्रियो रक्त वर्ण भृत्
वैश्यः पीतश्चविज्ञेयः कपिलः शूद्र एव च।
कृष्ण वर्णश्च चाण्डालो रोगिप्राणान्त कृन्मतः
इति ॥

इन सब ज्वरों में पूर्वोक्त लक्षण होते हैं और सब में काल, अरुचि, तृष्णा, प्रलाप और दाह युक्त ज्वर होता है और जैसे श्वेत रक्त पीतादि वर्ण त्वचा का हो जाये उसकी वैसी ही संज्ञा हो जाती है। यह ज्वर प्रायः रक्त की विकृति से विशेष कर होता है। इसे मन्थर ज्वर मानते हैं उसमें भी यही पूर्वोक्त लक्षण होते हैं। वास्तव में यहां स्फोट होने का वर्णन किया है वह अन्यत्र भाग में भी हो जाते हैं।

चिकित्सा——

चिकित्सा लिखने से पूर्व एक वृत्त सन्मुख रखना चाहता हूँ जिसे पाठक पढ़ कर लाभ उठा सकें।—

कुछ मास व्यतीत हुए एक धनी क्षत्री की लड़की को ६ सप्ताह से आन्त्रिक ज्वर हो रहा था वहाँ ससुर के प्रसिद्ध तथा अनुभवी डाक्टर चिकित्सा कर रहे थे परन्तु ४२ वें दिन उस लड़की का पिता मेरे पास आकर कहने लगा कि पंडित जी हमारी सहायता करें। मैंने पूछा तुम्हें क्या कष्ट है जिसके लिये सहायता चाहते हो; उसने अपनी कथा आरम्भ कर दी, "कि मेरी लड़की को ६ सप्ताह से ज्वर आ रहा है परन्तु आज डाक्टर रक्त परीक्षा करना चाहता है। लड़की इस समय अत्यन्त दुर्बलावस्था में है उसमें तो रक्त दृष्टिगोचर नहीं होता। मैंने पूछा रक्त परीक्षा किस लिये की जाती है उत्तर मिला कि व्याधि निश्चय के लिये। बड़े आश्चर्य का विषय है कि डाक्टर महोदयने अभी तक व्याधि का निश्चय भी नहीं किया, इलाज किस बात का हो रहा था ?। क्या महाराज हम लोगों का जीवन रुपया नष्ट करने पर न सुरक्षित रह सकेगा उसने बड़े दुःख से यह शब्द कहे।

रोग निरीक्षण—

सान्त्वना देकर रोगी को जाकर देखा। तो बल मांस क्षीण ही पाया ज्वर उस समय प्रातः १००, १०१, मध्यान्ह में शनैः २ बढ़ता हुआ १०३ तक बढ़कर ६ घण्टे में पुनः प्रातः उसी उक्त अवस्था तक पहुँच जाता था। वह लड़की उठ भी नहीं सकती थी, केवल अस्थपिञ्जर ही शैय्या पर पड़ा हुआ था; उदर में शूल, विष्टब्धता, तृष्णा, दाह, आदि लक्षण भी होते थे।

शुभ लक्षण—

हर एक बात का युक्त उत्तर देना, नेत्रज्योतिमय, औषध में दोष न होना, मृदु शब्दों का उच्चारण यह सब देखकर मन में कुछ उत्साह हुआ और अन्तरात्मा ने भी साक्षी देकर इस कार्य करने के लिये स्पष्ट ही कह दिया कि यह अच्छी हो जावेगी चिन्ता मत करो। चिकित्सा आरम्भ हो गई—इसके लिये औषधि

प्रयोग—

प्रवाल १॥ रत्ती, गुडूची, करञ्ज, अतिविषा (अतीस) कुटकी, चिरायता इन पांच औषधियों को बारीक कूटकर पृथक २ सब एक २ तोला लें, उसमें से १ रत्ती चूर्ण उक्त प्रवाल में मिलाकर ४ मात्रा दिन में अर्थात् तीन घण्टे के अनन्तर अर्क सौंफ २ तोला तथा गिलोय २ तो० के साथ दें, इससे पहिले दिन ही बढ़ने वाला ज्वर कम हो गया इसी प्रकार तीन दिन देने के अनन्तर ज्वर ९० डिग्री हो गया परन्तु विष्टब्धता दूर न हुई इस पर ज्वराग्नि की २ रत्ती मात्रा उक्त गुडूच्यादि चूर्ण में मिलाकर गिलोय के अर्क से दी गई जिससे २ तीन घण्टे बाद कठिन २ मल निकला जिससे रोगी को दुर्बलता अधिक हो गई। पुनः उसे अभ्रक १॥ रत्ती प्रवाल १॥ रत्ती गुडूच्यादि चूर्ण २ रत्ती मिला मधु ६ माशे अर्क गिलोय २ तो० के साथ देते रहे, इसी तरह १ सप्ताह में लड़की निरोग होकर पथ्य लेने लग गई।

आयुर्वेद में प्राकृतिक चिकित्सा

[ले०—श्री० पं० विश्वनाथ जी शास्त्री प्रिन्सिपल ललित हरि कालेज (पीलीभीत)]

प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली का जन्म दाता आयुर्वेद है यह कहना अत्युक्ति नहीं अपितु सत्य और प्रमाण पूर्ण है। जिस समय वर्तमान प्राकृतिक चिकित्सा की नींव भी नहीं पड़ी थी आयुर्वेद ने गम्भीर शब्दों में इसकी घोषणा उससे कई हजार वर्ष पूर्व ही कर दी थी। इस समय प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति के पिता या आविष्कारक 'मेक-फाडेन' कहे जाते हैं जिनकी उत्पत्ति उन्नीसवीं शताब्दी के अवशिष्टांश में हुई थी। किन्तु आयुर्वेद अनादि काल से निरवच्छिन्न रहने वाला तथा वर्तमान प्रसिद्ध वैज्ञानिकों द्वारा भी सर्व प्राचीन सिद्ध हो चुका है। इसका जन्म स्थान अथर्व-वेद कहा जाता है। यद्यपि अथर्व-वेद में चिकित्सा विधान अत्यधिक है किन्तु ऋग्वेदादि में भी इसकी प्राप्ति होती है। यह ज्ञान भण्डार वेद वैज्ञानिकों द्वारा भी सर्व प्राचीन पुस्तक स्वीकृत किये जा चुके हैं। अतः यद्यपि आयुर्वेद के साथ वर्तमान प्राकृतिक चिकित्सा की तुलना कभी नहीं हो सकती फिर भी दिनों दिन प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति साधारण जनता के झुकाव को देखकर यहां पर आयुर्वेदोक्त प्राकृतिक चिकित्सा का वर्णन किया गया है।

जो चिकित्सा शारीरिक विषों को अनायास शरीर से बाहर निकाल करके उसमें स्वाभाविक

विहार—

आन्त्रिकज्वर में रोगी के मल को तथा थूक आदि को भली प्रकार से निराकरन करना चाहिये अर्थात् किसी तरह साफ करने वाले पर उसका आक्रमण न हो। स्वच्छता का पूर्ण रूप से ध्यान रखना चाहिये। इस ज्वर में प्रायः अन्त्यन्त्र भाग में व्रण हो जाते हैं अतः नितान्त सादा भोजन अर्थात् जब तक ज्वर रहे दूध ही देना ज्वर उतरने पर मूंग की दाल गेहूं का हलका फुलका आदि ही देना चाहिये, अतिसारावस्था में ज्वर न रहने पर चावलादि दे सकते हैं। कठिन वा अधिक लवण या मसालादि नहीं देना चाहिए।

रोगी को पूर्ण विश्राम देना चाहिये। लेटे २ ही मलादि का परित्याग कराना चाहिये। इसमें अधिकतर पार्श्व भाग से सोना चाहिए नहीं तो शैय्या व्रण होने की सम्भावना हो जाती है।

इस प्रकार यथावस्था देखकर दोषानुकूल मृदु औषध का प्रयोग हितकर होता है।

गुडूच्यादि प्रयोग से होने वाला "मलेरिया" एक दो दिन में उतर जाता है यह अनेक बार अनुभव किया जा चुका है। प्रवालभस्म के प्रयोगों को पहिले कई बार आयुर्वैदिक पत्रिकाओं में प्रकाशित कर चुके हैं यदि वैद्य लोग चाहें तो पुनः भी प्रकाशित कर दिये जा सकते हैं।

स्वस्थता की लहर भर सके उसे ही प्राकृतिक चिकित्साकहा जाता है। आयुर्वेद जहाँ स्वास्थ्य रक्षा की शिक्षा अभी प्रारम्भ करता है वहां पर प्रथम सूत्र में ही यों आदेश देता है—

"ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत स्वस्थोरक्षार्थ मायुषः"

अर्थात्–स्वस्थ पुरुष ब्राह्म मुहूर्त में आयु-रक्षार्थ उठकर शय्या त्याग कर देवे। ब्राह्म मुहूर्त सूर्योदय होने से एक पहर पूर्व के काल को कहते हैं। जिस समय उषा अपने शुभ्र मुखचन्द्र को ढकने वाली नीली साड़ी के आच्छादन को छोड़कर प्राकृतिक तथा मनोमुग्ध-कर ईषत गुलाबी व पीत वर्ण की प्रकाशमान सुन्दर अंबर को धारण करके हर एक जीवित प्राणियों के मन को आह्लादित करती है उस समय की वायु शीतत्व, स्वास्थ्य प्रद, शरीर के प्रत्येक अवयवों में नयी शक्ति व स्फूर्ति देने वाली होती। है

उस समय उठकर शीतल वायु में भ्रमण करने से शरीर में के दूषित तथा विषैले पदार्थ नष्ट हो जाते हैं। उषाकाल में भ्रमण करने वाले मनुष्य के शरीर में एक प्रकार की किरणें जिन्हें अल्ट्रावाय-लेट रेज (Ultra voilet rays) कहते हैं पड़ती हैं जिनका प्रभाव विचित्र होता है। शरीर त्वचा द्वारा ये किरणें भीतर प्रविष्ट होने लगती हैं तब सुनहली शक्ति शरीर में लेकर प्रविष्ट होती हैं। स्वर्ण के भस्म के सेवन से जो गुण प्राप्त नहीं हो सकते वे तथा उससे अधिक गुण इस सुनहली शक्ति प्रदायक किरणों द्वारा प्राप्त होते हैं। जब तक सूर्य रश्मि का विश्लेषण नहीं हुआ था तब तक पाश्चात्य वैज्ञानिक आयुर्वेद के इस सूत्र को व्यर्थ समझते थे किन्तु जब से इन रंजित किरणों का ज्ञान विश्लेषण द्वारा हुआ है तब से वे बैंजनी रंग की अपेक्षा छोटी तरंगों से प्राप्त किरण (Ultra violet rays) तथा लाल तरंगों से बड़ा तरंगों को (Infra Red rays) इनफ्रा रेड रेज नाम की किरण के गुणों पर मुग्ध होकर प्रातः कालीन शय्या त्याग व भ्रमण को मुख्य ध्येय समझने लगे हैं। प्राचीन विश्लेषक (ज्ञान चक्षु) के द्वारा इसे विश्लेषित करके उसके स्वर्णोपम गुणों को अमिट बनाने के लिए ही स्वास्थ्य रक्षा के नियमों में सर्व प्रथम स्थान दिया था। उषा काल की तथा उदय होते समय की स्वास्थ्य रक्षक किरणों का सर्वप्रथम कार्य शरीर के ऊपर आक्रमण कारक जिवाणुओं का नाश ही है। डी० आरसोनल ने (D.Arsonual) परीक्षाओं से साबित कर दिया है कि वायलेट व अल्ट्रा वायोलेट रेज (किरण) को छोड़कर किसी में भी बीजाणु नष्ट करने की शक्ति नहीं है। यहां तक कि इस काल की (उषाकाल) रश्मियों के ही प्रभाव से प्रकृति अपने पुष्पों में चित्र विचित्र रंगों को प्रदान करती है। जहां प्राणियों का जीवन प्रकाश है वहां रात्रि के कई घण्टे अंधकार पूर्ण मृत्युवत ही मालूम होते व सिद्ध होते हैं। अब पुनः प्रकाश के नवोदय काल के शय्या त्याग को व भ्रमण को कौन ऐसा मूर्ख होगा जो स्वास्थ प्रद न समझेगा।

भला पाठक विचारें, कि जिस मुहूर्त में चिड़ियां अपने घोंसले त्यागकर फुदकती हुई उषादेवी के स्वागत के लिए मधुर राग अलाप करके उद्बोधित करती हैं, पशु कीट पतंग अपने स्थान बिल मांद को छोड़कर चारों तरफ घूमते फिरते नजर आते हैं हम उस समय खाट पर सोकर पड़े-पड़े करवटें

यह प्राकृतिक नियम है कि जब प्रकाश पूरा नहीं होता और हम शारीरिक अवयवों को आराम देते हैं तो शरीर दोषों को मल को, जहर को शरीर से बाहर करने का प्रयत्न करता है। आराम करते वक्त शारीरिक कार्यों के कारण जो मल शरीर में अलग २ पैदा हुए थे अब एकत्र होने लगते हैं शरीर का यह उद्योग इस लिए है कि जिस से यह हानिकर पदार्थ शरीर से एक साथ ही दूर किये जा सकें। कण्ठ में कफ, मलाशय मे मल, मूत्राशय में मूत्र, आंखों व कानों तथा जीभ पर के मल इत्यादि ये सब इन ही क्रियाओं द्वारा शरीर से अलग हो जाते हैं। इनके धोदेने और दूर कर देने से शरीर विषरहित व स्वच्छ हो जाता है। इसमें एक नवीन शक्ति का संचार होना मालूम पड़ता है। वही यदि आलस्य वश दूर न किया जावे तो रोगों का घर न बनावेगा तो क्या आरोग्यता देगा ?

अतः जलपान द्वारा ये सब विकार एकत्रित हो करके एक साथ ही दूर किये जाते हैं और स्वास्थ्य लाभ होता है। भावमिश्र अनुभव पूर्वक उषाकाल के जलपान के गुणों को इस प्रकार लिखा है।—

अर्श शोथ ग्रहण्यो ज्वर जठर जरा कुष्ट मेदोविकारा !
मूत्राघातास्रपित्त, श्रवण गलशिरः श्रोणिशूलाक्षिरोगाः
ये चान्ये वातपित्तक्षतजकफ कृता व्याधयःसतिजन्तो-
तांस्तानभ्यास योगा दपहरति पयः पीत मन्ते निशायाः

अर्थ—प्रातः काल का जल पान, बवासीर, सूजन, ग्रहणी, ज्वर, उदर विकार, वृद्धता, कोढ़, मेद रोग, मूत्रघात, रक्तपित्त (नासिका इत्यादि से रक्त स्राव) कर्ण, गला, सिर, तथा श्रोणि (पंसवाड़े) के रोग, आँख के रोग अथवा जितने भी वात पित्त कफ क्षत इत्यादि से होने वाले रोग हैं उन सबों को दूर करता है।

कैसी अपूर्व ताक़त है इस योग में। प्राकृतिक चिकित्सा के जन्मदाता मेकफाडेन यदि आयुर्वेद के इन विषयों पर ध्यान देकर मनन किये होते तो वह भी एक बार आयुर्वेद की प्राचीन संस्कृत पर विमुग्ध हो जाते पाठक, स्वयं देखिये इन साधारण प्राकृतिक क्रियाओं के द्वारा जब शतायु हुआ जा सकता है तब और भी प्राकृतिक नियमों का अनुशीलन कैसे न मनुष्य को स्वास्थ्य और शतायु प्रदान कर सकेगी।

बहुत से व्यक्ति एक दो दिन जल पान करते हैं किन्तु सरदी वा जुकाम होते ही छोड़ देते हैं। उसके पीने की तरक़ीब वह नहीं है। वह ग़लत रास्ते पर होते हैं अतः रोगी हो जाते हैं। विधि यों है—

'यदि प्रारम्भ करना हो तो उस दिन की रात को लघु-भोजन करो प्रातः काल शय्या त्याग करके १०० कदम कम से कम टहलो, फिर प्रथम दिन ४ छटांक जल पीलो। पुनः एक फर्लांग चलो। इसी तरह ३ दिन के अन्तर से २ छटांक पानी बढ़ाते जाओ यह ठीक है कि प्रकृति के कम होते होते कुछ सरदी या प्रतिश्याय (जुकाम) मालूम पड़े किन्तु रोग समझ कर छोड़ न दो। बराबर कार्य जारी रक्खो। जब से सर्दी मालूम होने लगे पानी की बाढ़ को रोक दो। अब शरीर का निकृष्ट कफ निकल जायगा। कुछ जरूर ही तकलीफ मालूम होगी (कफ प्रकृति वालों को ही) किन्तु नियम भंग न करो। बराबर इसे जारी रक्खो। अब यह क्रिया सात्म्य हो जायगी और स्वास्थ्य पुनः लौटता सा मालूम पड़ेगा। पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त हो जाने के

गृहस्थों का स्वास्थ्य और उपाय

[ले०—पं० दयाशंकर जी द्विवेदी वैद्य रत्न, नोखा शाहाबाद]

अगर ध्यान पूर्वक देखा जाय तो आज यह दावे के साथ निःसंकोच कहा जा सकता है कि वर्तमान कालीन भारतीय गृहस्थों की शारीरिक अवस्था बहुत ही खराब हो रही है। आज मुझे इसी पर विचार करना है कि हमारे गृहस्थों की शारीरिक अवस्था इस तरह हीनावस्था को क्यों पहुंच गई है? आज भारतीय गृहस्थ निर्बल क्यों हैं? आज दुनियां की सभी उन्नति-शील जातियाँ, उन्नति की घुड़ दौड़ में एक दूसरे से आगे बढ़ जाने की फिक्र में चिन्तनीय देखी जा रही हैं, सभी उन्नति-शील जातियों में शीघ्रता पूर्वक परिवर्त्तन हो रहा है, और अधिकांश अपने को इस संसार व्यापी परिवर्त्तन के अनुकूल बनाने की चेष्टा करते देखी जा रही हैं; पर यह सब देखते हुए भी भारतीय गृहस्थ समाज चुपचाप क्यों है? अन्य देश वासियों से उन्नति की घुड़ दौड़ में पीछे क्यों हैं? हम इसके उत्तर में सिर्फ यही कहेंगे कि हमारे आधुनिक कालीन गृहस्थों के शारीरिक मानसिक तथा आर्थिक पतन का प्रधान कारण, उनकी "अकर्मण्यता तथा असावधानी" है। यह

बाद अन जल की मात्रा बढ़ाकर २ ढाई या ३ सेर तक (२४० तो०) कर लो। अब अपने अन्दर अपूर्व परिवर्तन पाओगे।

शौच शुद्ध होगा। मूत्र साफ होगा। शरीर हल्का और शक्ति पूर्ण मालूम होने लगेगा। उदर, मूत्राशय तथा शुक्र सम्बन्धी रोग नष्ट हो जांयगे। गर्मी भयानक पड़ने पर जहां हरएक प्राणी शीतल जल के लिये तरसते रहकर तकलीफ उठाते हैं तुम्हें प्यास न मालूम होकर अपूर्व शांति प्राप्त होगी बाल यदि श्वेत हो रहे होवें तो उनकी वृद्धि रुक जायगी और कृष्ण तथा मुलायम हो जांयगे। नेत्र की दर्शन शक्ति बढ़ने लगेगी। बुद्धि भी वृद्धि को प्राप्त होगी और आरोग्यता हर प्रकार से तुम्हारी दासी हो कर के रहेगी।

किन्तु यह क्रिया यह फल कुछ दिनों में दिखलायगी। सद्यः फल चाहने वालों को इस व्रत का अनुष्ठान बहुत बुरा खटकेगा। सम्भव है लेखक के लिये कुछ कटु व मधुर शब्द अनुकम्पा पूर्वक उनके मुख कमल से निकल आवें। अतः उन्हें कृपा पूर्वक ऊपर की बातों पर ध्यान देकर प्रारंभ करना चाहिए।

यह बातें अनुभव पूर्ण हैं अतः कोई गलती प्राप्त नहीं हो सकती। यदि किसी को भ्रम हो तो लेखक से पूछ सकते हैं।

अब शौचादि कार्य से निवृत्त हो करके भ्रमण के लिए स्वच्छन्द चलो। भ्रमण के ऊपर प्रकाश फिर आगे के लेख में दिया जायगा।

(अपूर्ण क्रमशः)

"असावधानी" क्या है ? यह बताने के पहले मैं वर्तमान कालीन गृहस्थों से कुछ कहने की धृष्टता कर रहा हूँ।

गृहस्थो ! आज तुम किस अवस्था में हो ? तुम किस प्यारी निद्रा में बेसुध सो रहे हो ? क्या तुम्हें कुछ भी खबर है कि दुनियाँ किस ओर जा रही है और तुम किस विपरीत दशा की ओर आंख मूंदे जा रहे हो ? उठो ! अब सोने का समय नहीं है। अब उठ कर अपनी प्रकृति अवस्था पर ध्यान दो और सोचो कि तुम क्या थे ? क्या हो गये ? और क्या होगे ? उठो ! आओ आज इसी समस्या पर विचार किया जाय. बिना अतीत का ज्ञान प्राप्त किये, वर्तमान और भविष्य पर कुछ सोचना बेकार होगा । गृहस्थो ! तुम अपने को आज किस मुंह से गृहस्थ कहते हो ? क्या तुम अपने को गृहस्थ कहते समय, कुछ लज्जा का अनुभव नहीं करते ? क्या तुमने कभी गृहस्थ शब्द अर्थ पर विचार किया है ? यदि आज तुम गृहस्थ शब्द के अर्थ को जानते तो तुम्हारी अवस्था कदापि इस दर्जे को न पहुँचती । "गृहं तिष्ठतीति गृहस्थ" अर्थात् जो मनुष्य घर में रहे वह गृहस्थ है। गृहस्थ शब्द से यहाँ यह तात्पर्य है कि जो गृहस्थ स्त्री पुत्र भ्रातृ आदि स्वसम्बन्धियों के साथ घर में रहता हो, यानी जो गृहस्थ परिवार स्त्री पुत्र पौत्रादिकों से सर्व प्रकारेण पूर्ण है। जिस गृह में गृहस्थोपयोगी सभी प्रकार के वस्तुओंकी बाहुल्यता है, जिस गृह में हृष्ट पुष्ट स्वस्थ्य और सुन्दर बालक अपनी मधुर तोतली वाणी से पारिवारिक जनों का मनोरंजन करते हुए स्वच्छन्द विचरते हों, जिस गृह में व्याधि ग्रस्त स्त्री पुरुषों की दर्द भरी वाणी सुनाई न पड़ती हो। जिस गृह में मतैक्य, प्रेम तथा सौहार्द का निष्कण्टक राज्य हो, जिस गृह में सुख शान्ति प्रदायनी सरस्वती देवी का आधिपत्य हो। जिस गृह में सुख समृद्धि प्रदायनी भगवती महा-लक्ष्मी वैभव का भण्डार लिये स्वयं विराज रही हों, जिस गृह में आरोग्य दात्री आरोग्यता रूपी देवी का निवास हो, जिस गृह में आदर्श वाक्य "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" को चरितार्थ करते हुए दयालु भगवान के प्रदान किये सृष्टि के जनक स्त्री रूपी महा प्रसाद का समुचित आदर होता हो. अहा ! वही गृह सच्चा गृहस्था-गार है, नहीं २ भूलोक का स्वर्गागार है। इसी गृह का स्वामी सर्व प्रकारेण सुखी गृहस्थ है। गृहस्थो ! अब सोचो क्या तुम अब भी अपने को गृहस्थ कहोगे ? हाय ! गृहस्थो !! जिस गृहस्थाश्रम की प्रशंसा में, हमारे प्राचीन काल के ऋषि मुनि तथा शास्त्रकारों ने किताब के पृष्ठ के पृष्ठ रंग डाले हैं, जिस गृहस्थागार में कभी देवता भी जन्म लेने को तरसते थे, जिस गृहस्थागार की प्रशंसा शास्त्रकारों ने तथा देवताओं ने एक स्वर से मुक्त कण्ठ से की है, वही सुख-सर्व सम्पन्न सर्वोच्च गृहस्थागार आज कष्टागार क्यों हो रहा है ? जो आश्रम कभी स्वर्ग के नन्दन वन से भी अधिक आनन्द मय था वही गृहस्थाश्रम आज नरकागार क्यों हो रहा है ? जिस आश्रम को सच्चे आनन्द व सच्चे सुख का सुखागार होना चाहिये था, वही आश्रम आज नाना प्रकार के दुर्व्यसनों का निकेतन क्यों बन रहा है ? जिस आश्रम मे ब्रह्मचर्य्य व्रत का पालन कर वीर्य्य-रक्षण करना अपना प्रधान कर्त्तव्य समझा

जाता था, सन्तान पैदा करने के सिवा "यों" स्त्री सेवन करना जहाँ अनिष्ट कर ही नहीं वरन परले दर्जे का पाप समझा जाता था जिस आश्रम वासियों ने कभी अपने समय और ब्रह्मचर्य का सिक्का समस्त भूमण्डल पर जमा कर संसार को चकित कर दिया था, वही आश्रम आज काम वासना की पैशाचिक लीला का केन्द्र क्यों हो रहा है? वही आश्रम वासी आज इन्द्रिय लोलुपता और व्यभिचार में प्रवृत्त दिखाई पड़ रहे हैं। जिस आश्रम के लोग योग शास्त्र के निम्न सूत्र "मरणं विन्दु पातेन जीवनं विन्दु धारणात" अर्थात् वीर्य्य पात ही मृत्यु और वीर्य्य रक्षा ही जीवन है, को चरितार्थ करते हुए वीर्य्य रक्षा को अपना प्रधान कर्तव्य समझते थे, उसी आश्रम के लोग आज वीर्य्य नाश करना अपना परम पुरुषार्थ समझ अपना धन, वैभव, सौन्दर्य्य तथा स्वास्थ्य "स्वाहा" क्यों कर रहे हैं? जिस आश्रम में कभी बड़े २ तपस्वियों ने, बड़े २ योगियों ने, बड़े २ त्यागी व बड़े २ ऋषि मुनियों ने, बड़े २ शूरवीरों ने, बड़े २ वैज्ञानिकों ने, बड़े २ वेदान्तियों तथा दार्शनिकों ने, इसी भारत भूमि पर जन्म धारण कर अपने अलौकिक गुणों से, संसार को आलोकित कर, समस्त भूमण्डल को अपने दिव्य प्रकाश पुंज से चकित कर संसार का कल्याण किया था—उसी गृहस्थागार में आज लोभी, रोगी, दुर्बल, अल्पायु, विलासी, कामुक, इन्द्रिय लोलुप, पाखण्डी, असत्यवादी, देश द्रोही, कामुरूप, भिक्षुक, निर्दयी, मूर्ख तथा गुलाम क्यों पैदा हो रहे हैं? जिस आश्रम में सदा चैन की वंशी बजती थी, उसी आश्रम में आज शान्ति के स्थान पर "तू तू मैं, मैं, हाय !! हाय !" क्यों मचा हुआ है? जिस आश्रम की गृहलक्ष्मियाँ सदा आदरणीय दृष्टि से देखी जाती थीं, उस आश्रम के लोग आज अपनी गृहलक्ष्मियों को पैर की जूती से भी बदतर समझ उन्हें काम वासना की पूर्ति का साधन बनाये हुए हैं। गृहस्थो! भला कहो तो क्या? तुम्हारी जन्म दात्री, गृह देवियाँ आज रुग्णावस्था में पड़ी तुम्हें कोस २ कर दुःख के आंसू नहीं बहा रहीं हैं? भला कहो तो अपनी गृहणियों को उचित शिक्षा न देकर उनके स्वास्थ्य की यथोचित रक्षा न कर उनके ऊपर सरासर अत्याचार क्यों कर रहे हो?

अस्तु। जिन गृहस्थाश्रमियोंने इस मन मन्दिर में निवास करने वाले काम-वायु की स्थित शक्ति व प्रचण्ड तेज को परास्त कर, संयम और अखण्ड ब्रह्मचर्य्य का पाठ चिरकाल तक लोगों को पढ़ाया था। गृहस्थागार में वही गृहस्थ खुले व्यभिचार का ताण्डव नृत्य कर रहे हैं। उसी आश्रम में आज स्त्री परमानन्द की चरम सीमा हो रही है। स्त्री में ही स्वर्ग सुख समझा जारहा है। क्षणिक सुख व आनन्द की लालसा से स्त्री को सेवन कर वीर्य्य को पानी की तरह बहा कर, प्रसिद्ध नीति कार चाणक्य के निम्न वाक्य—

"सद्यः प्रज्ञाहराताडी, सद्यः प्रज्ञाकरी वचा।
सद्यः शक्ति हरी नारी, सद्यः शक्ति करं पयः॥"

पर हरताल करने वाली निकम्मी सन्तान पैदा हो रही है।

यद्यपि लोग सृष्टि कारण से ही, इस मानव तन में व्याप्त रहने वाले काम वायु की अजय शक्ति के आगे सदा नतमस्तक होते आ रहे हैं। इस मन मन्दिर में रहने वाले अनंग देव ने "अपने

प्रचण्ड तेज व दुर्दमनीय प्रभाव से हम साधारण जनों की कौन कहे, कितनेक बड़े २ तपस्वियों के भी लंगोटे खुलवा दिये हैं।" इस काम-वायु की दुर्दमनीय अजेयशक्ति व प्रबल प्रभाव से बड़े बड़े तपस्वी, योगी, सती आदि एक भी अपने को न बचा सके तथापि क्या तुम्हारे गृहस्थाश्रम में आग सा अति मैथुन, पशु मैथुन, हस्त मैथुन, अप्राकृतिक मैथुन, गुदा मैथुन, [बटुक विलासिता] जैसी अप्राकृतिक अनुचित समाज संहारक व्यवहार, वीर्य स्राव, स्वप्न दोष, उष्ण वात, उपदंश जैसी दुर्दमनीय व्याधियाँ, ध्वज भंग, ध्वज वक्रता, जैसी अघटित घटनायें; कभी देखी या सुनी गई थीं? गृहस्थो! सिवाय इसके और भी कितनी ही वीर्य्य विनाशक तदवीरें निकाल कर अपना और अपने भावी सन्तानों का सत्यानाश क्यों कर रहे हो? इन कुकर्मों के फेर में पड़ भरी जवानी में ही, नपुँसक और निकम्मे हो, क्षय, प्रमेह, स्वप्न दोष, उष्ण वात, (सुजाक) और उपदंश जैसी घातक दुर्दमनीय तथा दुःचिकित्स्य व्याधियों के शिकार बन, अपने गृहस्थागार को सन्तान हीन तथा वंश परम्परा को बर्बाद क्यों कर रहे हो? भला कहो तो क्या तुम्हारे ही इस अनुचित व्यवहार व भयानक अत्याचार से तुम्हारी सैकड़ों कुल ललनायें कुलटा व व्यभिचारिणी बन तुम्हारी छातीपर कोदों नहीं दल रही हैं? क्या तुम्हें यह मालूम हुआ है कि तुम्हारी जवानी कब, आह! क्या हुई, और कैसे चली गई? इस भरी जवानी में ही, तुम्हारे चेहरे से जवानी की चमक दमक हवा क्यों हो गई? रूप लावण्य का नामोनिशान क्यों मिट गया? आंखों के नीचे काले गढ़े क्यों पड़ गये? मुख पर काले २ धब्बे और झुर्रियाँ क्यों पड़ गईं? असमय में ही बाल सुफैद क्यों हो गये? उम्र पच्चीसी आई नहीं कि आँखों पर चश्मा सवार क्यों हो गया? होंठ चूसे हुए व रक्त हीन क्यों नजर आने लगे? कमर झुक कर कमान क्यों हो गई? हाय! आज ही वीर्य वर्द्धक, मदनानन्द मोदक, स्तम्भक, धातु पुष्टिकर, पलंग तोड़, स्वप्न दोष, प्रमेह, उपदंश, गन्होरिया (सूजाक) तथा नामर्दी नाश करने वाली दवाइयों की खोज क्यों होने लगी? गृहस्थो! यही तुम्हारे स्वास्थ्य का शब्द चित्र है। अब बस। तुम्हारे काले कारनामों की कहानी लिखने में हमारी क्षुद्र लेखनी सर्वथा असमर्थ हो रही है। साथ ही मैं विषय प्रसंग से भी बहुत आगे बढ़ गया हूँ।

अस्तु। इन हृदय को दहलाने वाली बातों व अपनी दर्दनीय दशा पर क्या तुमने कभी कुछ भी विचार किया है कि, तुम्हारे इस घोर अधःपतन का कारण क्या है? तुम्हें रात दिन जो नाना प्रकार की वैकृत तथा प्राकृतिक व्याधियाँ सतत सता रही हैं, इसका कारण क्या है? जिस आश्रम में तुम रहते हो वह आश्रम क्या दुःख भोगने के ही लिए है? क्या तुम आज वास्तव में सुखी हो? मैं तो समझता हूँ कि तुम में से शायद सौभाग्य से कोई विरला ही ऐसा गृहस्थ होगा जो सर्व प्रकारेण सुखी गृहस्थ कहा जा सके। गृहस्थो! क्या तुम्हारे लिए भारत भारती के ये वाक्य '**हम कौन थे, क्या होगये, अब और क्या होंगे अभी**' चिन्तनीय नहीं थे? "यों—इस परिवर्तन-शील संसार में सुख की इच्छा कौन नहीं करता? भगवान की मनोहर सृष्टि में जितने जीव

हैं सभी सुख के लिए लालायित हैं, मनुष्यों को कौन कहे, पशु, पक्षी, कीड़े, मच्छर, तक दिन रात सुख की लालसा से कार्य्य करते दिखाई पड़ते हैं। इस चराचर सृष्टि के अन्दर प्रवेश करते ही प्रत्येक मानव प्राणी के मन में यह स्वभाविक अभिलाषा उत्पन्न हो जाती है कि मुझे चिरस्थायी सुख, ऐश्वर्य, और जीवनोपयोगी सभी प्रकारकी सामग्रियां उपलब्ध हो जाएँ। यही नहीं हमारी इच्छा इतनी बढ़ जाती है कि हम चाहने लगते हैं कि हमारे शरीर में इतनी प्रचुर शक्तियों का समावेश हो जाय कि हम, इन शक्तियों के द्वारा नाना प्रकार की सांसारिक कठिनाइयों को दूर कर, बड़े २ दुसह तथा कष्ट साध्य कार्य्यों को, सरलता पूर्वक सिद्ध कर अपने को सर्व प्रकारेण सम्पन्न बना स्वर्गिक सुखों का अधिकारी बनालें। इसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए हम सब सदा नाना प्रकार की चेष्टाएँ करते रहते हैं पर इतना परिश्रम, इतना प्रयत्न, इतनी चेष्टा, तथा उद्योग करने पर भी हमें यथार्थ सुख नहीं मिलता इसका कारण क्या है ? आइये ! अब हम लोग इस अधःपतन का कारण ढूँढ निकालें तथा इस बात का प्रमाण करें कि हम फिर अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त करलें। यह प्रश्न कुछ कम महत्व का नहीं है, इस पर ही तुम्हारे भले बुरे का दारोमदार है। सुख ! सुख २ चिल्लाने से मिलने वाली खास प्रकार की कोई वस्तु विशेष तो है नहीं कि तुम्हें बिना किसी प्रयास के ही झट पट मिल जाय। तुम्हें इस सुख की प्राप्ति के लिए गृहस्थोपयोगी नियमों को पालन करने का प्रयत्न करते रहना चाहिए था जिसे हमने भुला कर, अपने को इस हीन व शोचनीय अवस्था को पहुंचा दिया है। यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय तो यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि इन उपरोक्त कही हुई सब बातों का प्रधान कारण यह है, कि गृहस्थोपयोगी जो आयुर्वेदीय नियम हैं उनकी अनभिज्ञता ही इन दुःखों का मूल कारण है। बिना किसी तैयारी के गृहस्थाश्रम रूपी क्षेत्र में उतर पड़ने का ही यह सर्व नाशक भयङ्कर परिणाम है अथवा जीवनोपयोगी स्वास्थ्य रक्षा के सुख-दायक नियमों की उपयोगिता न समझना, तथा जानते हुए भी आलस्य व प्रमाद वश उनकी अवहेलना कर अनियमित जीवन बिताना ही,— हमारे अधःपतन का मूल कारण है। पाठक ! प्रकृति के वैचित्र्य संसार की आश्चर्य जनक वस्तुओं, नहीं रचनाओं में यह मानव शरीर भी एक अद्भुत प्राकृतिक यन्त्र है जो अगणित छोटे कल पुर्जों से बना हुआ है। यानी मानव देह विभिन्न सूक्ष्म यन्त्रसमष्टि निर्मित एक बहुत बड़ा यन्त्राधार है। इस प्राकृतिक यन्त्र का कार्य-क्रम प्रकृति के अटल नियमों पर अवलम्बित है। अतः ये यन्त्र जबतक सबल व शक्ति सम्पन्न रह कर, अपनी - क्रियाओं को नियमित रूपेण सदा करते रहते हैं, तबतक यह मानव शरीर भी सर्व प्रकारेण स्वस्थ्य, सबल और कार्यक्षम बना रहता है। जब हम मनुष्यों की असावधानी तथा स्वास्थोपयोगी नियमों की अनभिज्ञता के कारण मानव यन्त्र में विकार पैदा हो जाता है, तब यह मनुष्य जीवन सदा कष्ट मय एवं अस्वस्थ रह कर नाना प्रकारके दुखों का केन्द्र बन, असमय में ही अशक्त और निर्जीव हो विनाश को प्राप्त

हो जाता है। अतः आरोग्य रहने के लिए इस स्वास्थोपयोगी नियमों का यथोचित ज्ञान रखना प्रत्येक मानव प्राणी का प्रधान कर्तव्य है। संसार में आरोग्य रहने के बराबर कोई सुख नहीं है। आरोग्यता ही "गार्हस्थ्य" सुख है। इस बातको भली भांति समझने के लिए आप किसी धातु निर्मित वाष्प यन्त्र को खोल कर उसके अन्तर प्रदेश के कार्यशील तथा क्रियाशील छोटे बड़े सभी प्रकार के यन्त्र और उसकी विभिन्न प्रकार की गतियों का निरीक्षण कर देखें तो, आप को इस बात का पता सहज में ही चल जायगा, आप देखेंगे कि किस प्रकार ये विभिन्न प्रकार के यन्त्र अपने विशेष प्रकार की विशेष गतियों से, किस प्रकार उस वृहत् यन्त्रधार का कार्यक्षय कर रहे हैं। इसी प्रकार हमारा शरीर भी नाना प्रकार के उपयोगी अंगों तथा गुणों से युक्त है। इस मानव यन्त्र का कार्य क्रम भी इसके भीतर वर्तमान मस्तिष्क, फुफ्फुस, हृत्पिण्ड, आहारनलिका, श्वास नलिका, हृयद, प्लीहा, आमाशय, वृक्क कर्मेन्द्रिय तथा ज्ञानेन्द्रिय आदि नाना प्रकार के सजीव यन्त्रों पर ही विशेष रूपेण अवलम्बित है। जिस प्रकार धातु निर्मित यन्त्र के कल पुर्जे आदि अनियमित तथा अनियन्त्रित दशा में व्यवहार करने से असमय में ही टूट फूट जाते हैं, उसी प्रकार यह मानव यन्त्र भी नियमों की अवहेलना तथा असावधानी के कारण व्याधि ग्रस्त हो असमय में ही शक्तिरहित व निर्जीव हो काल कवलित हो जाता है। सिवाय इसके प्रत्येक काम के करने का समय भी निश्चित है, इसलिए निर्दिष्ट समय पर किये काम का फल भी विशेष फलदायक होता है। यदि इसके विपरीत आलस्य-वश अपने मन की इच्छा पर काम किया जाय तो यह निश्चय सत्य नहीं कि लाभ के स्थान पर हानि अवश्य होगी। कहने का तात्पर्य यह है कि जड़ या चैतन्य विशिष्ट चाहे कोई भी यन्त्र हो, यदि उसको नियमानुकूल व्यवहार में लाकर उससे नियम पूर्वक काम लिया जाय तो उसके सम्पादित कार्य यथा सम्भव विशेष प्रकारेण अवश्य सफल होंगे। इसके विपरीत यदि इससे विशृंखल अवस्था में व्यवहार कर अनियमित रूप से काम लिया जाय तो यह निश्चय निर्विवाद सत्य है कि इसके अधिकांश कार्य अवश्य ही असफल तथा निरर्थक होंगे। यह मानव जीवन पूर्णतया नीरस तथा कष्टमय होगा और इस प्रकार के कष्टमय शरीर से जीवनोपयोगी, परमावश्यक, ऐहिक सुख जनक (विद्या, धन, यश, अभीष्ट लाभ) अथवा पारलौकिक धर्म मूलक (व्रत, यज्ञादि, दान) कार्य सम्पादन इन दो में कोई एक भी सम्पन्न (सम्पादन) नहीं हो सकता, माना पुरुषार्थ चतुष्टय (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष इन चारों) में से एक भी नहीं प्राप्त किया जा सकता है। सचमुच में संसार में "आरोग्य" रहने के बराबर कोई सुख नहीं है। इस संसार में जितने सुख हैं उन में आरोग्यता ही प्रधान सुख है। शास्त्रों में लिखा हुआ है कि—धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यम् मूल मुत्तमम्" अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन को प्राप्त करने के लिए मनुष्य की शारीरिक आरोग्यता ही एक सबसे प्रधान या मुख्य साधन है। संसार में शरीर की "आरोग्यता" ही सर्व श्रेष्ठ शक्ति है। संसार में आज कर्मण्यों का ही राज्य

है। जिस मानव प्राणी के पास यह अलौकिक शक्ति है वह इस आनन्द मय संसार में कभी भी दुःख नहीं उठा सकता, उसके लिए संसार का कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है। किसी ने कहा है कि—"शरीर माद्यं खलु-धर्म साधनं" शरीर ही धर्म का पहला साधन है। मानव शरीर की रक्षा करना एवं इसे स्वस्थ्य बनाना ही मनुष्य का सर्व श्रेष्ठ धर्म है।

पाठक! प्राचीन समय में एक जमाना था कि जब प्रायः समस्त उच्चवर्णों के भारतीय आरोग्य शास्त्र अवश्य पढ़ते थे, और सदा पद पद पर गायनोपयोगी स्वास्थ्य विषयक नियमों का पालन करते थे। इसी कारण वे लोग दीर्घायु हो मानव जीवक के आश्रय चतुष्टय के सभी अंशों को पूर्ण रूपेण भोग कर पंचत्व को प्राप्त होते थे। इसी से वे महा बलवान व अजेय शक्ति सम्पन्न होते थे। उनकी सन्तान भी हृष्ट, पुष्ट, बलिष्ट, सत्यवती, बुद्धिमती और दीर्घ जीवी होती थी, एवं उनकी गृहलक्ष्मियां सभी पतिव्रता व विदुषी होती थीं। उनको आज की तरह नाना प्रकार की आदि व्याधियों का शिकार न बनना पड़ता था। वे संसार के सभी प्रकार के सुखों का भोग कर दीर्घायु हो, संसार में अपनी उज्वल कीर्ति छोड़ कर मृत्यु आने पर अपनी इच्छानुकूल सुख से इस संसार का त्यागन करते थे। परन्तु अब समय का कैसा विचित्र परिवर्तन हो गया है कि हम लोग इन आयुर्वेदीय ग्रन्थों को पढ़ेंगे कहाँ, इसके साधारण अंग दिनचर्या व रात्रि चर्या का भी ज्ञान नहीं रखते। हम सर्व साधारण की तो बात दूर रही, जो आज कल इसही पेशे को करते हैं, उनमें से भी अधिकांश वैद्य नाम धारी जीवों की आयुर्वेद सम्बन्धी शिक्षा—"बूटी दर्पण व रसराज महोदधि" तक ही सीमित हो समाप्ति को पहुंच गई है। ये वैद्य नाम धारी जीव कवि के निम्न पद:—

अपकार करता धूर्त ये, उपकारियों के वेष में।
लूट मार मचा रहे, दिन दहाड़े देश में॥

को चरितार्थ करते हुए किसी प्रकार काल यापन कर अपना निकृष्ट जीवन बिता रहे हैं। जब पेशेवर नाम धारी वैद्यों की यह भीषण दयनीय अवस्था है, तब सर्व साधारण में इस महोपयोगी सुखकरी व अर्थकरी विद्या का प्रचार कहाँ तक हो सकता है, यह आप स्वयं सोच लें। जब तक भारत वर्ष में हमारे वर्तमान शासक महाप्रभुओं का मंगलमय पदार्पण नहीं हुआ था, तब तक हमारे पूर्वज संसार की सर्व श्रेष्ठ आयुर्वेद विद्या के प्रभाव से आज की अपेक्षा दीर्घजीवी, आरोग्य व बलवान रह शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य लाभ कर "धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष" इन चारों पदार्थों को प्राप्त कर सर्व प्रकारेण सुखी थे। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि आयुर्वेद शास्त्र मनुष्य के शारीरिक तथा मानसिक कर्मों को, स्वास्थ्य रक्षा के नियमों द्वारा नियमित और नियन्त्रित कर, इस अलभ्य मानव तन को पूर्णतया स्वस्थ और सुखी रहने का मंगलमय उपदेश प्रदान कर, मनुष्योचित कार्यों को करने का अजस्र आदेश करता है। मैं पहले कह चुका हूं कि हमारे शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक घोर पतन व इस दयनीय दुर्दशा का एक मात्र कारण गृहस्थों के स्वास्थ्य रक्षा के स्वास्थ्य विषयक नियमों की अवहेलना ही है। इन स्वास्थ्य

विषयक आरोग्य दायक नियमों की अजानकारी व अवहेलना ही का यह विषम और घातक परिणाम है कि हम आज इस घोर पतनावस्था की ओर तीव्र गति से अग्रसर होते जारहे हैं। इस असावधानता ने ही सर्व सुख सम्पन्न गृहागार को निकृष्ट दुःखागार बना, हमें सब २ दशा को पहुँचा, पथ का भिखारी बना छोड़ा। सिवाय इसके एक दूसरा कारण भी है। वह यह है कि जिस दिन से भारत में विदेशियों का पदार्पण हुआ है, उस दिन से ही हम लोग शनैः शनैः अपने पूर्वजों की शास्त्रानुकूल बातों को भूल कर, आज कल की नई सभ्यता के गुलाम ही नहीं वरन् अन्ध भक्त बन गये हैं। समय भी ऐसा विपरीत हो गया है कि आज कल जिधर आंख उठाकर देखिये सर्वत्र नई सभ्यता का प्राधान्य हो गया है, जिसके चित्ताकर्षक प्रकाश ने हमको इस प्रकार अन्धा व ज्ञान शून्य बना दिया है कि, हम साधारण जनों की कौन कहे, अपने को शिक्षित कहने वाले तथा समझने वाले व्यक्ति विशेष भी, नई सभ्यता के प्रभाव में पड़ अपने पूर्वजों की, हजारों वर्ष क्यों, अनादि काल से अकथ्य परिश्रम द्वारा अर्जित की हुई प्राचीन शास्त्रों को कोरी कल्पना व गप्प समझ रहे हैं। उनकी यह प्रबल धारणा हो गई है कि ये प्राचीन बातें हमारे उन्नति पथ में रोड़े अटका रही हैं। ये हमारे शास्त्र अब बहुत पुराने हो जाने के कारण रद्दी के टोकरे में फेंकने योग्य हो गए हैं। पर बात यह नहीं है। मैंने जहां तक पढ़ा है, जहां तक इसपर विचार किया है, मेरे विचार में यही ठीक जचता है कि हमारे शिक्षित नवयुवकों का विचार बिलकुल गलत है। असल बात यह है कि हम आज गुलाम हैं। सदियों की गुलामी के कारण हमारे हृदय से अपनी संस्कृति का अभिमान उठ गया है। आज भारत का सितारा बुलन्दी पर नहीं है। आज भारतियों के दिन अच्छे नहीं हैं। आज बूढ़े भारत की दशा हमारे शासक महा प्रभुवों की स्वार्थान्ध व रक्त शोषक नीति जैसी विशेष कृपा से बिलकुल गिरी हुई है, "जिसका राज उसकी दुहाई वाली" लोकोक्ति अक्षरसः चरितार्थ हो रही है; इसी से हमारे प्राचीन शास्त्रों की सारी बातें बिलकुल निरी गप्पी ही समझी जा रही हैं। इतना ही नहीं, हम सब आज ऐसे मतहीन हो गये हैं कि अपनी शास्त्रों की बातों को तब सही मानने को तैयार होते हैं, जब कोई विदेशी विद्वान उसे सही बताता है, उसकी प्रशंसा करता है। तभी—मैं उस के राग मे राग मिला उसे सही मानता हूं। अन्यथा नहीं। यह कैसी अन्ध भक्ति है ? हम रोगी होने पर किसी विदेशी डाक्टर (एलौपैथी) की सलाह मान बिना सोचे विचारे झट कुनैन की गोली खा सकते हैं, विदेश से बन कर आई व्यय साध्य मदिरा मिश्रित औषधि बिना किसी संकोच के पान कर सकते हैं, बहुमूल्य विलायती टूथ पेस्ट व ब्रश का प्रयोग कर सकते हैं, किन्तु भारतीय आरोग्य शास्त्रानुसार उसी रोग के लिए आधे पैसे की दवा व उन दांतुनों का जो मुफ्त में मिलती हैं (जिनसे दन्त रोग शमन होते हैं, दांत स्वच्छ व दृढ़ होते हैं) प्रयोग करने में अपनी हीनता तथा बे इज्जती समझते हैं। उस पर से हमारा विश्वास उठ गया है।

(अपूर्ण शेष अगले अङ्क में)
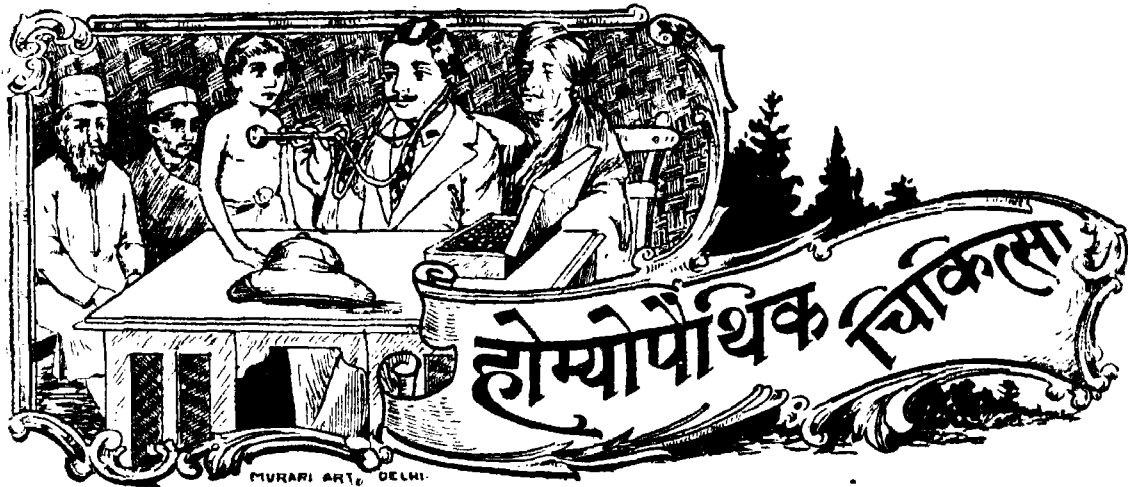
[ले०—वैद्यराज डा० धरणीधर शर्मा वैद्यशास्त्री L. M. S. (H) M. B. कछवा-मिर्जापुर]

एकोनाइट

यह आयुर्वेद की प्रधान औषधि शृंगिक विष (सिंगिया) के सार वस्तु से निर्माण होती है, मस्तिष्क और पीठ के समस्त स्नायु मंडल पर इसकी प्रधान क्रिया होती है। मानसिक विकलता अथवा सहसा कोई आपत्ति आजाने पर आशातीत लाभ करता है। जैसे, मौत का भय होना, अधिक भीड़ में जाने का भय। अकारण ही शारीरिक या मानसिक उद्वेग आदि में इसके द्वारा बड़ी सफलता प्राप्त होती है। प्रधानतः हृष्ट पुष्ट आदमी को एका एक कोई बीमारी होने पर अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। शिशिर ऋतु में शुष्क और शीतल वायु के लगने से, या पसीना बन्द हो जाने की वजह से कोई भी बीमारी होने पर और प्रदाह में उत्पन्न हुई बीमारियों को प्रथमावस्था में जैसे, ज्वर, जल चेचक, सर्दी, हाम, सूखी खांसी, घुगडी खांसी, ब्रङ्काइटिज, न्यूमोनिया, नवीन वात, सन्धि वात आदि पर यह अपना खूब प्रभाव जमाता है। ऐसी ऐसी बीमारी में जोकि सूखी हवा में जाने से वा कपड़ा उतार देने पर कम होती हो और गर्म कोठरी में या बाईं करवट सोने से रोग बढ़ता हो, और प्यास की अधिकता हो, बदन गर्म और रुक्ष हो, पसीना बिल्कुल न आता हो, नाड़ी की गति द्रुत हो, चेहरा लाल, श्वांस में कष्ट, पेशाब लाल, कलेजे की धड़कन, रज की रुकावट आदि पर यह एक अमोघ औषधी है। मेरे अनुभव में आये हुये निम्न प्रयोग हैं।

१—हैजा धुले हुये तरबूज के पानी की तरह दस्त होना, पेट में अधिक दर्द, बेचैनी, प्यास, ठंढ मालूम होना, रक्त मिला हुआ या दस्त होना, गर्मी या सर्दी

का हैजा, ज्वर मिश्रित हैजा, शरीर ठंडा होकर मुर्दे के समान हो जाने आदि पर प्रयोग करे।

२-डिपथिरिया (Diphtheria) गले की श्लेष्मिक झिल्ली के प्रदाह पर और विसर्प की फुंसियां निकलने के प्रथम आक्रान्त स्थान में जलन होने पर लाभ होता है ।

३--तरुणग्रन्थि वात की प्रथमावस्था के लिये यह अत्युत्तम औषधी है। सन्धि स्थल या पेशियों में कतरने की तरह वेदना या चिलक, तीव्र ज्वर के साथ बेचैनी, आक्रान्त स्थान में सूजन गर्दन की अकड़, शीत ऋतु की वायु से उत्पन्न हुआ वात आदि की एक ही औषधि है।

४ शिरदर्द रक्त संचय से उत्पन्न हुआ भयानक सर दर्द, ऐसा मालूम हो मानो सर के भीतर की सब चीजें ठेलकर बाहर निकलना चाहती हैं और अर्धकपाली के दर्द में, कनपटी में अत्याधिक दर्द के साथ नेत्र भी दर्द करते हों, हिलने डोलने, सर झुकाकर बैठने, परिश्रम से, मैथुनोपरांत, आदि में दर्द की अधिकता और विश्राम से शांति पड़ना, उपरोक्त कारणों के समय उक्त औषधी का प्रयोग करना अधिक लाभप्रद होता है।

५-गृध्रसी में, स्नायु शूल में, जोकि ठण्डी हवा लगने के कारण से उत्पन्न हुआ हो, कपाल में लगने से गालों में खीचन या दर्द हो, रक्त संचय से यदि चेहरेमें दर्द हो तो इस औषधि का प्रयोग करे।

६—सामान्य प्रकार के हृद् रोग प्रधानतः बाईं बाँह के सुन्न होने के साथ ही बेहोशी हो, और साथ ही हाथ के उंगलियों में झनझनाहट तथा दर्दहो, ऐसी दशा में यह अनेकों बार आजमाया गया है।

७ नई सर्दी (प्रतिश्याय) की प्रथमावस्था में थोड़े जाड़े के साथ कुछ ज्वर जंम्हाई बदन का टूटना, आँखों में जलन एवं पानी गिरना, गर्मश्वांस प्रश्वास बार २ अधिक छींक आना, शिर में भारीपन, पतलाश्लेष्मा निकलना, शरीर में सुस्ती और रूक्षता, अधिक प्यास, जाड़े के दिनों में ओस लग कर सर्दी आदि होने पर यह औषधि अधिक लाभप्रद है।

८-वायु नली सूजन प्रदाह (Bronchitis) ब्रोन्काइटिस यदि कलेजे और गले में कूट २ कर तकलीफ देने वाली खांसी तथा इसी कारण से कपाल और कनपटी में दर्द होने पर रोग की प्रथमावस्था में अधिकांश लाभ करता है ।

९--वक्षा वरक-झिल्ली प्रदाह (Pleurisy) प्लूरसी इस रोग में फेफड़े के ऊपरी भाग के या वक्षके प्राचीर की चारों ओर झिल्लियों में प्रदाह के साथ कम्प, ज्वर, शुष्ककास, पार्श्व वेदना आदि होता है, जिस समय रोग प्रारम्भ हो अर्थात् गर्मी प्यास, कपकपी, वक्षस्थल में वेदना मालूम हो उस समय २-३ मात्रा के सेवन से ही पसीना होकर रोग कम हो जाता है।

१०--दमा (Asthma) (एज्मा) के विकार में श्वांस के घबड़ाहट में आक्षेपिक श्वास, श्वास लेने में कष्ट, कलेजे में दबाव मालूम होने पर हृदिगढ़ की मृदु क्रिया पर जादू का असर किया है।

११--फुस्फुस प्रदाह न्यूमोनिया (Pneumoniya) की प्रथमावस्था में जैसे कुछ ज्वर, सर्दी, अधिक सुस्ती, बेचैनी, कन्धों के बीच में दर्द, बन्द

हैज़ा CHOLRB (कालरा)

(ले०—प्रोफ़ेसर पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्यः)

विसूचिका

यह एक आशुप्राणहर भयङ्कर रोग है जो कि कोमाबेसीलस (Comma bacillsu) के नाम रोगाणु द्वारा फैलता है। यह रोग भारत वर्ष के कुछ भागों में बना रहता है, और कभी २ वबा के रूप में बहुत दूर तक फैलकर सैकड़ों मनुष्यों को यमराज के घर भेज देता है। इस रोग के लक्षण तेज़ उल्टी, दस्त, हाथ पैरों में ऐंठन और दर्द, मूर्च्छा, पेशाब का बन्द हो जाना और अन्त में ज्वर हैं। इसका रोगाणु कोमा की शकल अथवा अंग्रेज़ी के एस (S) अक्षर के समान होती है। यह रोगी के मल में और आंतो में मिलता है, शरीर के किसी आभ्यन्तरिक अंग या रुधिर में नहीं मिलता। इसका विष आंतों में पैदा होकर रोग के लक्षण पैदा करता है। इसका विष छूतदार है इसी से जहां मेला और मनुष्य का मजमुआ इकट्ठा होता है, वहां से बहुधा यह रोग फैलता है और इसका विष रोगी के वमन-अतीसार में होता है इस लिये यदि उल्टी या दस्त की छींट का थोड़ा सा हिस्सा किसी तरह से पीने के पानी में मिल जाये और वह पानी दूध या अन्य खाने की चीज़ों में मिल-जावे तो तुरन्त ही यह रोग हो जाता है। इस रोग का विष कितना ही कम मात्रा में क्यों न हो परन्तु शरीर में पहुँच कर शीघ्र ही अपना असर कर देता है। उल्टी और दस्तों के अलावा इस रोग का विष मल की भाप द्वारा भी फैलता है, अर्थात् इस प्रकार के रोगी के मल में से सूर्य की तेज धूप के कारण भाप उठे और उस स्थान की हवा बन्द हो तो यह खराब होकर सांस द्वारा फेफड़े में पहुँचती है, फिर रुधिर प्रवाह में मिलकर यही दूषित वाष्प रोग का कारण बन जाती है। इसी लिये बड़े २ मेलों मे यह वबा के रूप में फैल जाता है। यह विष शुद्ध पानी में मर जाता है और बदबू दूर करने

स्थल में दर्द, थोड़ी खांसी, तीसरे समय बीमारी का बढ़ना आदि में अत्यन्त लाभदायक है।

१२—खांसी (Cough) अधिकांश सूखी और नई खांसी और साथ ही बेचैनी सर में दर्द, चेहरे का रंग लाल, गले का सूखना, कुछ जलन के साथ थोड़ा पेशाब कब्जियत, चित्त, सोने से खांसी का बढ़ना और करवट से दबना, खांसते वक्त छाती में दर्द, ठण्डी हवा लगने की वजह से खांसी, आदि में बड़ी लाभप्रद औषधि है।

नोट—उपरोक्त प्रयोग एकोनाइट नं० ३० का लिखा गया है, इससे अधिक शक्ति का भी प्रयोग किया जा सकता है। और रोग की दशा देखकर घण्टे पर दवा दी जा सकती है।

वाली औषधियों से मर जाता है। यदि पीने के पानी को उबाल लिया जावे तो उसमें यह बढ़ता नहीं। परन्तु जिस पानी में बनस्पति का सड़ा हुवा माद्दा हो उसमें यह विष बहुत बढ़ता है। गर्मी के दिनों में रोगाणु पृथ्वी के भीतर बढ़ सकते हैं हवा में उड़ते फिरते हैं। यह विष २ से ५ दिन तक शरीर में गुप्त रूप से रहता है।

कारण—

निर्धनता, पथ्य में बद परहेज़ी, मदिरापान, बद चलनी, शोक, चिन्ता, ज्यादह जुलाब लेना, ऐसा पेशा करना जिसमें चित्त स्थिर न हो, अचानक हैज़े की जगह में पहुँचना, एक बार हैज़ा भोग चुकना, इसके अतिरिक्त जहां ज्यादह आदमी होते हैं वहां मैला कुचैला रहना, गाँव के चारों तरफ़ कूड़े का पड़ना, बन्द और पत्ते वगैरा से सड़े पानी का पीना इसके अलावा मक्खियां भी इस रोग के फैलाने में बहुत सहायक होती हैं। वह अपनी स्वाभाविक आदत से हैज़े की क़ै व दस्तों पर बैठकर फिर दूध मिठाई फल या तरकारियों पर जा बैठती हैं, और अपने थूक मल और परों द्वारा जिनमें बहुत से विसूचिकाणु रहते हैं पहुँचा देती है। कभी उल्टी और दस्तों की छींटें पानी खींचने के बरतन जैसे बाल्टी डोल वगैरा पर पड़ती हैं और उन्हीं बरतनों द्वारा कुंए से पानी निकाला जावे तो ये रोगाणु कुँए के पानी मे भी मिलजाते हैं। इस रोग की छूत सीधी बीमार से नहीं लगती परन्तु उसके मल द्वारा और मक्खियों द्वारा बिगाड़े हुवे पानी से साग सब्जी धनिया अन्य खाने के पदार्थ उस पानी में धोने से या उसे पीने से छूत लगती है। यह रोग प्रायः गर्मियों में और पतझड़ के दिनों में फैलता है। और स्त्री पुरुष दोनों को ही सब अवस्था में होता है। परन्तु यह बात ध्यान रहे कि हैज़ा प्रातः काल हो तो कठिन और भयंकर होता है।

रोग के मुख्य लक्षण—

अचानक एक साथ क़ै और दस्तों का होना, पहले तो क़ै और दस्तों में, पका या अधपका भोजन भी निकलता है, फिर शीघ्र ही क़ै और दस्त चावल के मांड जैसा पतला हो जाता है जो कुछ पीता है उसे तुरन्त ही उलट देता है इस तरह बार २ ज्यादह क़ै और दस्तों के कारण शरीर से जलीय अंश बाहर निकर कर खून गाढ़ा हो जाता है, ठंडा पसीना आता है। आँखें अन्दर गढ़े में बैठ जाती हैं, आवाज़ बैठ जाती है। हाथ पैरों में बांयटे आते हैं। और दर्द होता है, धमनी स्पन्दन इतना कम हो जाता है कि कभी पहुँचे पर नब्ज़ मालूम नहीं देती। पेशाब बन्द हो जाता है, यदि इस अवस्था में चिकित्सा न की जाये तो रोगी शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

लक्षण —

आयुर्वैदिक ग्रन्थों में इसके दो भेद हैं। (१) अलसक अर्थात् गुम हैजा या सूखा हैज़ा, (२) विसूचिका, इन दोनों के लक्षण इस प्रकार हैं। यथा —

कुक्षरानह्यत्यर्थं प्रताम्यं त्परिकूजति ।
निरुद्धो मारुतश्चैव कुक्षावुपरिधावति ॥

वात वर्चो निरोधश्च यस्यात्यर्थं भवेदपि ।
तस्यालसकमाचष्टे तृष्णोद्गारौ तुयस्य च ॥

अर्थात् जिस रोग में अपान वायु, पाखाना अत्यन्त रुक कर दोनों तरफ़ की कोखें फूल जायें और वायु रुक कर कोख के ऊपर हृदयादिक की तरफ़ दौड़े और इससे रोगी पीड़ा के मारे घबराये और व्याकुल हो जावे, प्यास, डकार ज़्यादह आवें पेशाब बन्द हो जावे उसे अलसक यानी हैजा कहते हैं।

विसूची के लक्षण —

मूर्छा तिसारोवमथुःपिपासा शूलभ्रमोद्वेष्ट न जृम्भ दाहाः। वैवर्ण्य कम्पौ हृदये रुजश्च भवन्ति तस्यां शिरसश्चभेदः ॥

अर्थात् जिस रोग में—बेहोशी, दस्त, कै, प्यास, पेट में दर्द, चक्कर, हाथ पैरों में ऐंठन, जम्भाई, दाह, कँपकँपी, शिर में दर्द, हृदय में भारीपन ये लक्षण होवें इसे विसूचिका कहते हैं।

ये दोनों प्रकार के हैज़ा मन्दाग्नि के कारण अपक्व आहार आमाशय में पहुंच कर प्रथम आम दोष को उत्पन्न करके फिर उत्पन्न होते हैं।

पाश्चात्य मतानुसार लक्षण —

डाक्टरी सिद्धान्त में इसके लक्षणों को संक्षेप में चारभागों में बांटा गया है, यथा—(१) इन्क्यूबेशन स्टेज अर्थात् रोगारम्भ समय-किसी में रोग प्रकट होने से पूर्व थोड़े से लक्षण प्रगट होते हैं। जैसे सुस्ती, काहिली, बेचैनी, सिर में दर्द, कानों में आवाज़, आमाशय के स्थान पर दर्द और भारीपन बिना दर्द के ही दस्तों का होना, चेहरे की रंगत फीकी होनी इत्यादि लक्षण प्रगट होने के बाद दूसरा दर्जा प्रारम्भ हो जाता है—

(२) रावेक्यूएशन स्टेज अर्थात् कै दस्तों की अवस्था —

बहुधा प्रातःकाल या अन्य समय दस्त आरम्भ होते हैं, पेट में बड़े ज़ोर से दर्द होकर दस्त खूब होने लगते हैं। टांगों में ऐंठन से दर्द होता है, प्रारम्भ में दस्त मलयुक्त होते हैं। परन्तु फिर शीघ्र ही चावल के मांड के सदृश सफ़ेद और पहले से अधिक परिमाण में होते हैं, दस्तों के साथ ही वमन भी ज़ोरों से शुरू हो जाती है उसमें भी चावल के मांड के सदृश सफ़ेद पतला पानी सा निकलता है। इस दर्जे में प्यास बहुत लगती है, परन्तु पानी ठहरता ही नहीं पीते ही उल्टी हो जाती है। कभी दस्त जब बिना दर्द के अधिक मात्रा में होते हैं तब उल्टी शुरू होती है। जिस में पहले खाना निकलता है पर बाद में वही चावल का सा मांड निकलता है। शरीर स्पर्श में ठंडा धमनी स्पन्दन तेज़ और कमज़ोर होता है। दस्त और कै होते २ रोगी निढाल हो जाता है और फिर कुछ देर बाद तीसरा दर्जा शुरू होता है।

(३) तृतीयावस्था - एलजाइड या कोलैप्स स्टेज अर्थात् बेहोश होना या ठंडा पड़ जाना —

दस्त और कै द्वारा शरीर का जलीय अंश अधिक मात्रा में निकल जाने से यह तीसरी अवस्था प्रगट होती है इस अवस्था में शारीरिक उष्णता कम हो जाती है, शरीर का खुला हुआ

घण्टे बाद देवें। यह नुसखा तीन बार से ज्यादा न देवें।

दूसरा नुसखा —

ऐसिड एसटिक डायल्यूट ½ ड्राम (३० बूँद) स्प्रिटईथरिस नैट्रोसाई २० बूँद, स्प्रिटकैम्फर २० बूँद, स्प्रिट अमोनियम ऐरोमैटिक्स २० बूंद, जल १ औंस १–१ खुराक हर दो-दो घण्टे बाद देवें।

शीतावस्था में—-

यह नुसखा देवें बहुत शीघ्र फ़ायदा करता है।

नुसखा—

स्प्रिट अमोनियम ऐरोमैटिक १५ बूंद, स्प्रिट क्लोरोफार्म १० बूँद, इन्फ्यूजन डिजिटेलिस् ३० बूंद टिंचर (मस्क) कस्तूरी १५ बूंद, जल १ औंस हर २–३ घण्टे बाद चार खुराकें दे सकते हैं, इसके पिलाने से शरीर की गर्मी वापिस आ जाती है, दिल की हरकत ठीक होकर नब्ज़ की गति ज़ोरदार, और ठंड पसीने आने बन्द हो जाते हैं। इस शीतावस्था (कौलेप्स की अवस्था) में दस्त आने बन्द हो जाते हैं, इस लिये कब्ज़ करने वाली दवाइयों की विशेष आवश्यकता नहीं रहती और आंतें तथा आमाशय का शोषण शीघ्र कम हो जाने से अधिक मात्रा में दवा देने से कोई लाभ नहीं होता। इसलिये थोड़ी २ मात्रा में उपरोक्त औषधियां प्रयोग करते रहें।

हैजे की प्रथमा अवस्था में संजीवनी वटी १ गोली, कर्पूररस १ गोली को प्याज़ का रस ६ माशा पोदीने का अर्क १ तोला, अर्क कपूर १ तो० अर्क-गुलाब २ तोले मिलाकर ऐसी ४ मात्रा १–१ घण्टे बाद देवें, और नाभी के ऊपर जायफल को पानी में पीसकर लेप करें। यदि पसीने ज्यादह आकर बदन ठंडा होने लगे तो सोंठ, कायफल दोनों समभाग लेकर बारीक चूर्ण करके हाथ पैरों के तलवों पर मसलें इससे बदन में गर्मी आ जाती है, नब्ज़ की हालत ठीक हो जाती है।

हैजे से बचने के उपाय—

(१ हैजे के दिनों में किसी प्रकार का विरेचन नहीं लेना चाहिये। यदि एकदम दस्त शुरु हो जाये तो शीघ्र ही पहले कहे हुवे उपाय करें।

(२) इन दिनों में खाली पेट और ज्यादह पानी का पीना निषेध है।

(३) जल को उबाल कर पीना चाहिये।

(४) किसी तरह की सबजी हरे शाक फल वगैरा खाने से पहले १ रत्ती पोटाश परमैंगनेट, १ सेर जल उबाल कर ठंडा किया हुवा उसमें कम से कम २ घण्टे डुबोकर इस्तैमाल करें।

(५) अपने भोजन पर मक्खी को न बैठने दो और साथ ही बाजार का दूध, मिठाई वगैरा जिनपर मक्खी भिनकती हों इस्तैमाल न करें।

(६) रोगी के वमन, विरेचन की छींटें वर्तन व कपड़ों से बचायें। उससे सने हुवे कपड़ों को पीने के पानी या बहते हुवे पानी से कभी न धोवें। अनेक बार जब ऐसा पानी घोषी वगैरा के दूध में मिल जाता है तो उससे गाँव के गाँव खाली हो जाते हैं। भोजन में पोदीना,हरी मिर्च,प्याज़ का इस्तेमाल करना अच्छा है। रोगी के मल-मूत्र, उल्टी को आग में जला दें, या किसी ऐसे स्थान में जहाँ का पानी न बहता हो गाड़ देवें।

तुलसी

इसको संस्कृत में वैष्णवी, सुगन्धा, अमृता, सुखल्लरी, पवित्रा, भूतघ्नी इत्यादि नामों से कहा जाता है, और अरबी में उलसीवरुदत, फारसी में रेहान, अंग्रेजी में ह्वाइटबेझिल-परपल् ग्टाकुड वेझिल, बँगला में तुलसी कहते हैं। यह प्रधानतया सफेद और काली दो प्रकार की होती है। ये दोनों प्रकार की तुलसियां गुणों में प्रायः एकसी होती हैं। यह खाने में चरपरी, उष्ण तीक्ष्ण, दाह और पित्तजनक, हृदय को हितकारी, कुछ कसैली, अग्नि को दीप्त करने वाली, लघु, वायु और कफ के रोगों को नष्ट करने वाली श्वास खांसी, हिचकी पेट के कीड़े, वमन, दुर्गन्धि, कुष्ठ रोग, पार्श्व शूल, विष, मूत्र, मूत्रकृच्छ, भूत बाधा, शूल, हिचकी, और मलेरिया ज्वर इनको नष्ट करती है। तुलसी
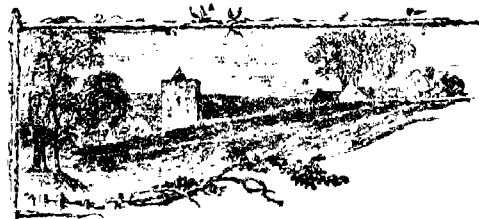
के क्षुप (छोटे २ पेड़) जंगल में और बागों में बहुत होते हैं, इसके पत्ते गोल २ कुछ लम्बाई लिए हुए अत्यन्त मुलायम सुगन्धिदार होते हैं। इसकी प्रत्येक डाली में बाल या मँजरी निकलती है, दूसरी कुछ काले पत्तों की काली तुलसी कहलाती है। मलेरिया ज्वर चढ़ने से पूर्व इसकी १॥ माशे पत्ती और ८ या ९ काली मिर्च माशे भर कर्खुवे की पत्ती या गिरी के साथ घोट कर २-३ घण्टे के बाद दिन में चार बार पीने से मलेरिया ज्वर शीघ्र दूर हो जाता है। और इससे भूख भी खूब लगती है। इसके पत्तों का रस निकाल चौथाई हिस्से तिल तैल को पकाकर ठगडा कर लें इस तैल की मालिश से शरीर का दर्द दूर होता है और सिर में डालने से जूं वगैरा मर जाती हैं। जाड़े के मौसम में विलायती चाय जो कि स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकर होती है, उसे इस्तैमाल न करके, तुलसी की ताजा पत्ती माशे ३. दालचीनी माशे २ सोंठ माशे १॥ केशर काश्मीरी माशे १, जावित्री माशे

२, लोंग माशे १॥, इनमें केशर के अतिरिक्त और सब चीजों को आध सेर जल में पोटली द्वारा पकाकर पाव भर शेष रहने पर पोटली निकाल दें। उसमें पाव भर दूध मिलाकर उपरोक्त माशे भर केशर दो चमचे भर दूध में घिसकर उस दूध में मिलाकर बूरा डालकर रात को पिया करें। इससे कफ-खाँसी जुकाम, नजला, सिर का दर्द और सर्दी का लगना दूर होकर शरीर में उष्णता और स्फूर्ति पैदा होती है और किसी प्रकार का रोग प्रमेह या बवासीर वगैरा भी पैदा नहीं होती। तुलसी के गुण हमारे वैद्य भाई अच्छी तरह जानते हैं कि यह विष नाशक और ज्वर नाशक है किन्तु पश्चिमीय विज्ञान वेत्ताओं को अब कहीं जाकर इसके गुण मालूम होने लगे हैं। कलकत्ते के एक दैनिक पत्र में रायबहादुर गुप्त लिखते हैं कि तुलसी की रासायनिक परीक्षा से मालूम हुआ है कि उसमें एक प्रकार का तेल है जो वायु में उड़ सकता है। इस तेल में थाइमौल (सत अजवायन) के समान जन्तु नाशक गुण हैं। मेजर लारी मोर ने अपना अनुभव प्रकट किया है कि तुलसी में मच्छर और डाँस मारने की शक्ति है अर्थात् तुलसी की हवा लगने से ही वे मर जाते हैं। बम्बई के ग्राण्ड मैडिकल कॉलेज के भूतपूर्व प्रोफेसर वर्ड वुड साहब जब बम्बई में थे तब वहाँ का विक्टोरिया गार्डन उन्हीं की देख रेख में लगा था, उस समय वहाँ की जमीन बड़ी दलदली थी, पालेकर नामक अपने नौकर को आज्ञा से उन्होंने वहाँ तुलसी के वृक्ष खूब लगवाये इससे वहाँ के मच्छर वगैरा नष्ट हो गये। हमारे देश में तुलसी के लिये ऊँचा चबूतरा बनवाकर उसमें तुलसी लगवाई जाती है। इसका यही अर्थ है कि पूजा करते और प्रदक्षिणा देते समय तुलसी का स्वास्थ्यकर वायु शरीर के भीतर पहुँचकर कीटाणुओं को नष्ट करे। कहते हैं यूनान की किसी कब्र के ऊपर तुलसी का वृक्ष लगा था. उसे लोगों ने शुभ समझा, जिस दिन प्रथम वह वृक्ष देखा गया था वह दिन आज तक त्योहार समझा जाता है उसे सेण्ट बेसिल डे कहते हैं। इस दिन तुलसी की डालियाँ लेकर पादरी के यहाँ जाते हैं और वहां से पवित्र जल छिड़कवा कर लाते हैं। उसकी पत्तियाँ घर में लड़के बच्चे और कुटुम्बियों को बांटी जाती हैं, वे पत्तियाँ उसी तरह सब लोग खाते हैं जैसे हम लोगों के यहाँ चैत्र शुक्लाप्रतिपदा को नीम की पत्ती खायी जाती हैं। उसकी डालियाँ घर में लटका दी जाती हैं। उनका विश्वास है कि इससे घर में मच्छर, पिस्सू डाँस और चूहों का उपद्रव नहीं होता। मुसलमानी धर्म्म में भी तुलसी की जाति का ही सब्जा नामक वृक्ष पवित्र माना जाता है। यह वृक्ष दरगाहों के पास लगाया जाता है। वृक्ष रासायनिकों का कथन है कि तुलसी में ३२ प्रतिशत थाई मौल है। इस लिये घर या दरवाजे में तुलसी वृक्ष लगाने से बहुत लाभ होता है।

कलकत्ता के संग्रहालय के बनस्पति शास्त्र वेत्ता डाक्टर ह्वयर का कथन है कि तुलसी में जो सुगन्धित तैल है वह औषधि है। उससे वायु शुद्ध होती है, डाक्टर लोग शस्त्र क्रिया और जख्मों में उस का प्रयोग करते हैं। पाठकगण आप विचारें कि जिन गूढ़ सिद्धान्तों को हमारे पूर्वज आचार्यों ने धर्म में सम्मिलित कर अवश्य सेवन करने के लिये बाध्य किया है, उनके गुणों को आधुनिक विज्ञान वेत्ता अब किस प्रकार स्वीकार करते जा रहे हैं। हमको जब कभी भारतीय रस्म रिवाजों व धार्मिक प्रथाओं के विचार का अवसर मिला तभी तभी इन की गहराई में अनेक गूढ़ सिद्धान्तों की धारणा हुई है।

मरहम बवासीर

इसके लगाने से मस्से और गुदा नरम रहते हैं, दस्त आते समय तकलीफ नहीं होती, मस्सों और गुदा की सोजिश व जलन और फूलापन जाता रहता है। प्रति शीशी ॥)

अग्नि सन्दीपनी वटिका

(अजीर्ण का अनुभूत इलाज)

अजीर्ण रोग देखने में तो एक साधारण सा मालूम होता है, परन्तु वास्तव में यह सब रोगों की जड़ है खाने पीने में असावधानी कर देने से अक्सर बदहज़मी हो जाती है। जिसमें कि मुंह का मज़ा खराब होना, खाने की तरफ़ रुचि न होना, छाती में जलन, खट्टी डकारें, भोजन करते ही दस्त की हाजत होना, पेट में गड़गड़ाहट का होना, जी मिचलाना, अफारा, दिन प्रति दिन कमज़ोरी का बढ़ते जाना, इन सब हालतों में हमारी अग्नि सन्दीपन वटिका निहायत ही अक्सीर है। चन्द रोज़ के इस्तेमाल से कुव्वत हाजमा बढ़ कर गिज़ा अच्छी तरह तहलील होने लगती है और आहार रस बन कर शरीर दिन प्रति दिन मोटा ताज़ा और बलवान होता है। मूल्य ४८ गोली १॥)

अमृत कर्पूर

(हैजे की मुजर्रबउल मुजर्रब दवा)

यह हमारे दवाखाने की तैयार की हुई जादू असर दवा है, जो क़रीब २ कुल घरेलू बीमारियों का जो अक्सर बूढ़े, बच्चों और जवानों को होती रहती हैं पूरा इलाज है। प्रायः जो बीमारियाँ अचानक आक्रमण कर देती हैं—जैसे सब प्रकार के पेट के दर्द, कै, हैज़ा, अफारा पेचिश दौरा, जुकाम, खांसी, नज़ला वग़ैरह २ इसके इस्तेमाल से फौरन ही दूर हो जाते हैं। यह वह अमृत समान गुणकारी दवा है जिसकी एक बिन्दु गले से उतरते ही फौरन जादू का असर दिखाती है। खासकर वबाई (संक्रामक) रोग में निहायत मुफ़ीद है। ताऊन (प्लेग) हैज़ा, मलेरिया बुखार के ज़माने में ज़रूर इस्तेमाल करनी चाहिये। यह वह दवा है जिसकी हर मनुष्य को घर में और मुसाफिर को अपने साथ रखने की बड़ी ज़रूरत है। यह दवा खास कर दर्द-पसली दर्द-सीना, दर्द दांत व दाढ़, बदहज़मी, तिल्ली, वमन, हैज़ा, पेचिश, मरोड़ा, सिर में चक्कर, अम्लपित्त इत्यादि में निहायत मुफ़ीद है। मूल्य ॥) शीशी, १२ शीशी ५।

अति स्वादिष्ट चूर्ण की गोलियां

ये गोलियां बहुत ही खुशमज़ा हैं। खाने के बाद १-२ गोली अवश्य ही खानी चाहिये खाना हज़म होकर एक दो डकार आकर मन प्रसन्न हो जाता है। बदहज़मी, कै, जी मिचलाना, हैज़ा (विसूचिका) आदि के लिए निहायत अक्सीर है। मूल्य फी० शीशी ॥)

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार देहली।

REGD. NO L. 2701.

वैद्यराज पं० महावीरप्रसादजी के लिये चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, कूचा घासीराम, देहली में छपा।

जीवन-सुधा

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य

अध्यक्ष—

जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—

प्रोफ़ेसर पं० भगवद्दत्त शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क =)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख़ को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ≋). सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ़्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ़्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहिये।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख़ तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्त्ता

बृहत् आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार, जौहरी बाजार देहली

विज्ञापन छपाई का रेट

	एक वर्ष	६ मास	२ मास	एक बार
समस्त टाइटल पेज	४०)	२१)	[illegible]	४)
आधा ,,	२१)	१२)	६)	२॥)
साधारणपृष्ठ समस्त	३६)	१८)	१०)	३॥)
,, आधा	२०)	१०)	५॥)	२)

विज्ञापन छपाई सम्बन्धी रेट बिल्कुल निश्चित हैं इसके लिए लिखने की तकलीफ़ न उठाएं।

मैनेजर—विज्ञापन-विभाग "जीवन-सुधा" देहली।

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ५ { आषाढ़ वीरनिर्वाण सं० २४५९, वि० सं० १९९२, जौलाई सन् १९३५ } अङ्क ७

कोई ये माने कोई वो माने

वो काबा है ये बुतखाने, कोई ये माने कोई वो माने।
सब मालिक के हैं काशाने, कोई ये माने कोई वो माने॥

है राह जुदा हर मशरब की, है मंज़िल एक मगर सबकी।
तौहीद के हैं सब मस्ताने, कोई ये माने कोई वो माने॥

है एक ही नगमा एक ही लै, है एक ही साग़िर एक ही मैं।
गो सबके जुदा हैं पैमाने, कोई ये माने कोई वो माने॥

कोई काबे का है रखवाला, कोई बुतखाने का मतवाला।
हैं एक शमा के परवाने, कोई ये माने कोई वो माने॥

सब एक उसी के बन्दे हैं, झगड़े नाहक के धन्धे हैं।
कोई वो समझे कोई ये जाने, कोई ये माने कोई वो माने॥

हर शख्श को दावए-ईमां है, कोई हिन्दू कोई मुसलमां है।
ये हरि वो खुदा के दीवाने, कोई ये माने कोई वो माने॥

सुखमार्ग

मोटापा या मेदोवृद्धि

(ले०—कविराज पं० गयाप्रसाद शास्त्री वैद्य साहित्याचार्य, आयुर्वेद वाचस्पति "श्री हार")

यह मनुष्य नाम धारी जीव बड़ा लालची तथा असन्तोषी है। जो चीज़ उसे प्राप्त है, उस की उपेक्षा करना और जो चीज़ अप्राप्त है उसकी चाह में घुट घुट कर मरना या स्वातिबिन्दु के लिए चातक के समान मुख फैलाए रहना इसका बहुत पुराना स्वभाव है। स्त्री, पुरुष, मित्र, धन, दौलत, मान-सम्मान तथा रूप-रंग आदि संसार के सभी पदार्थ इसी नियम के अन्तर्गत हैं। तब फिर बतलाइये यह बेचारा मोटापा इन मनुष्यों की दिव्य दृष्टि से दूर भला कैसे रह सकता था। जो लोग दुबले-पतले हैं, वे मोटे होने की चिन्ता में घुला करते हैं और जो मोटे हैं, उन बेचारों की तो दशा ही न पूछिये। वे तो दुबले होने के लिए अपना सब कुछ निछावर करने के लिये सदा तैयार रहते हैं। वस्तुतः अत्यधिक दुबला पतला होना तथा अत्यधिक मोटा होना दोनों ही अवांछनीय हैं। फिर भी अधिक दुबला-पतला होना उतना हानिकर तथा भयानक नहीं है, जितना अत्यधिक मोटा होना। यद्यपि किसी भी जीवित राष्ट्र जाति तथा समाज के लिए ये दोनों ही प्रकार के अल्पप्राण प्राणी केवल अनुपयुक्त ही नहीं किन्तु भाररूप है, फिर भी इन दोनों में से अत्यधिक मोटे जीवों का जीवन तो बहुत ही शोचनीय है। एक वैद्य की हैसियत से इन स्थूल शरीर वाले व्यक्तियों की चिकित्सा करते हुए हमें जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उसके आधार पर हम दावे के साथ कह सकते हैं कि इस महा भयानक मोटापे या मेदोवृद्धि के कारण यदि शत-प्रतिशत नहीं तो कम से कम ९० प्रतिशत स्त्रियां बांझ (बन्ध्या) एवं पुरुष नपुंसक हो जाते हैं। इन मोटे आदमियों को जीवन केवल अपने ही लिये नहीं किन्तु अपने परिवार के लिए भी अत्यन्त दुःखद तथा भारभूत हो जाता है। मुम्बई तथा अहमदाबाद

में मलावरोध एवं संग्रहणी आदि पेट के रोगियों के सिवाय मुझे क्षय तथा योषापस्मार-हिस्टीरिया (Hysteria) रोग से पीड़ित रोगियों की चिकित्सा करने का बहुत अधिक अवसर मिला । हिस्टेरिया (heystria) रोग के अन्यान्य कारणों में से रति-सम्बन्धिनी अतृप्ति भी एक कारण है । पता लगाने से ज्ञात हुआ कि उन उन्मादिनी रमणियों में से कई एक के नाम-मात्र के पतिदेव अत्यन्त स्थूलकाय होने के कारण केवल रतिक्रिया में ही असमर्थ नहीं हैं किन्तु पुरुषत्व से भी हाथ धो बैठे हैं । इस प्रकार यह मोटापा वा मेदोवृद्धि का रोग केवल अपना ही सर्वनाश नहीं करता है किन्तु परिवार के अन्य व्यक्तियों के जीवन का भी सर्वनाश कर डालता है । यों तो प्रत्येक रोग ही अपने कुकर्मों तथा पापों का फल है किन्तु मोटापे का जन्मदाता स्वयं वह प्राणी है, जिसे यह रोग हुआ करता है । यह रोग गरीबों को न होकर प्रायः उन राजा-महाराजाओं, अमीर-उमराओं तथा सेठ-साहूकारों को हुआ करता है, जो किसी प्रकार का व्यायाम आदि शारीरिक परिश्रम न करके अपने निकम्मे शरीर से मसनद और गद्दों को रौंदा करते हैं ।

सन् १९१८ की बात है । उस समय मैं देहरादून के अत्यन्त रमणीय मोहल्ला डालनवाला में स्व० सेठ बलदेव सिंह जी की कोठी में रहा करता था । उन्हीं दिनों उनके एक मित्र सेठ जी अपनी चिकित्सा कराने के लिए देहरादून पधारे थे । कुछ दिनों तक सेठ जी के महमान रहकर अनन्तर वे मंसूरी चले गये थे । वे बहुत अधिक मोटे थे । पेट के बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण वे अपने आप शौच क्रिया भी नहीं कर पाते थे । यह काम उनके दो नौकरों को करना पड़ता था । सेठ जी जीते जी भीषण नारकीय यन्त्रणाओं को भोग रहे थे । नौकर-चाकर तथा घर के सभी लोग मन ही मन उनके शीघ्र ही मरने की प्रार्थना तो ईश्वर से अवश्यमेव करते होंगे किन्तु मृत्यु भी इस विशालकाय प्राणी के पास आने से डरती थी । वात प्रकोप के कारण, बढ़ी हुई ऊष्मा के कारण उन्हें निद्रा नाश का रोग हो गया था ! एक घन्टे भर भी गहरी नींद नहीं आती थी । सारी रात उसे निद्रा देवी की प्रतीक्षा में तड़फते हुए काटनी पड़ती थी । उस समय निद्रा देवी को लक्ष्य कर के मैंने एक पद्य लिखा था । पाठकों के मनोरंजनार्थ उसे यहां उद्धृत करता हूं ।

परमाश्रये ! तेरा नहीं आश्रय जिसे जगमें अहो !
उन दुःखियों की दुःखगाथा हा कहें कैसे कहो ॥
वे सेठ-साहूकार जिनके पास बहु डाक्टर खड़े ।
ढमढोल से दुलका करें पर्यङ्क के ऊपर पड़े ॥

इस प्रकार एक नहीं सहस्रों प्राणी इस भीषण रोग Obesity मेदोवृद्धि या मोटापा के शिकार बनकर जीवन पर्यन्त नारकीय यन्त्रणाओं को भोगते हुए अपना बहुत ही करुण अन्त किया करते हैं । अतः प्रत्येक व्यक्ति को इस रोग से बहुत ही सावधान रहना चाहिए ।

कारण

व्यायाम (कसरत) या अन्य किसी प्रकार

को भी कठोर शारीरिक परिश्रम न करके गद्दी के ऊपर रात दिन बैठे रहना, दिन का सोना, हलुवा, मालपुवा, घी, दूध, मलाई आदि कफ़-कारी, मधुर अन्नरसों का आवश्यकता से अधिक खाते रहना, आलस्यवश अधिक काल तक किसी कोमल बिस्तर या पलंग पर पड़े रहना एवं हृदय जड़ता तथा मूढ बुद्धि होने के कारण कर्तव्यकर्म की चिन्ता का अभाव इन्हीं सब पूर्वोक्त कारणों से स्त्रियों तथा पुरुषों में मोटापा Obesty रोग का प्रादुर्भाव हुआ करता है।

लक्षण

मेद के द्वारा शरीर के सभी मार्ग आवृत होने के कारण अन्य धातु अस्थि, मज्जा तथा वीर्य आदि की वृद्धि न होकर केवल मेद ही बढ़ता रहता है। अन्य धातुओं के समान यद्यपि मेद भी सर्वशरीर-व्यापी है फिर भी उसका मुख्य निवास पेट तथा अस्थिओं में है, यही कारण है मेदोवृद्धि मोटापा Obesity रोग पेट की वृद्धि के साथ २ आरम्भ होता है। अनन्तर शरीर के अन्य भाग भी शनैः २ बढ़ने लग जाते हैं। मोटापा के कारण कोई भी व्यक्ति चाहे वह पुरुष हो या स्त्री थोड़े ही दिनों में जीवन संग्राम या संसार के सभी कार्यों में निकम्मा तथा असमर्थ बन जाता है। मेद बढ़ने के कारण थोड़ा सा भी परिश्रम करने पर भैंसे के समान हांफना, आलस्य के कारण जहां-तहां पड़े रहना, अल्पश्वास, प्यास, मोह, नींद को ठीक २ न आना, शरीर में पीड़ा, छींकें अधिक आना, शरीर से दुर्गन्ध तथा पसीना (प्रस्वेद) का आना, जीवन शक्ति की क्षीणता एवं मैथुन शक्ति की अल्पता आदि लक्षण इस रोग में लक्षित होते हैं। मेद से शरीर के सभी मार्ग ढक जाने से कोष्ठ के मध्य में प्रवृद्ध हुआ वायु जठराग्नि को अत्यधिक प्रदीप्त करता है, अतः मेदस्वी व्यक्ति जो भी भोजन करता है, वह भस्मीभूत हो जाता है, किन्तु न उसकी भूख शान्त होती है और नहीं उन भोज्य पदार्थों से उसके शरीर का पोषण ही होता है। इस रोग में वायु तथा अग्नि दोनों ही विकृत तथा प्रवृद्ध होकर जिस प्रकार जंगल का अग्नि जंगल को जला डालता है, उसी प्रकार ये दोनों शरीर को नष्ट कर डालते हैं। मेद के बहुत अधिक बढ़ जाने से वायु आदि दोष प्रकुपित हो कर बवासीर, भगन्दर, प्रमेह, नपुंसकता तथा रक्त-विकार आदि रोगों को उत्पन्न करके इस दुर्लभ मानव-शरीर का बहुत ही शीघ्र अन्त कर डालते हैं।

चिकित्सा

[१] आंवला	१	तोला
हरड़	१	तोला
बहेड़ा	१	तोला
शहद	२	तोला

विधिः—त्रिफला को दरदरा कूट करके ३० तोला पानी में दो चार घंटे भिगो कर अनन्तर अग्नि के ऊपर चढ़ा देना चाहिये। ७॥ तोला काढ़ा (क्वाथ) शेष रहने पर शहद डाल कर पीना चाहिए। कमसे कम ४१ दिनोंतक

प्रातः सायम, इस क्वाथ के पीने से मेदोवृद्धि Obesity रोग में पर्याप्त लाभ होता है।

(२) शीतल बासी पानी ५ तोला
　　असली शहद　　२॥ तो०

विधिः—प्रातः काल उठ कर और प्रातःकृत्य से निवृत्त होकर ५ तोला जल में शहद मिला कर पीने से मोटापा का रोग दूर होकर शरीर हलका तथा बलशाली होता है। अथवा गर्म करके शीतल किए हुए ५ तोला जल में २॥ तोला शहद मिला कर पीने से मेदोवृद्धि रोग दूर होता है।

[३] सोंठ	१	तोला
मिर्च	१	,,
छोटी पीपल	१	,,
ज़ीरा	१	,,
चव्य	१	,,
चित्रक	१	,,
काला नमक	१	,,
हींग (तालाबी)	६	,,

विधिः—हींग को घी में भून कर तथा अन्य सभी औषधों के सहित कूट, पीस, छान कर चूर्ण बना लेना चाहिए।

मात्राः—३ माशे

समयः—प्रात-सायम्।

अनुपानः—शहद।

रोगः—मोटापा, अग्निदोष।

[४] छोटी पीपल का चूर्ण ४ रत्ती से लेकर ८ रत्ती तक प्रातः-सायम् १ तोला शहद के साथ चाटने से मोटापा दूर होता है।

उपर्युक्त औषधों के सिवाय अमृतादि गुग्गुलु, योगराज गुग्गुलु, त्रिमूर्तिरस तथा वडवानल रस आदि शास्त्रीय औषधें इस रोग में बहुत ही लाभकारी सिद्ध हुई हैं।

पथ्यः—कठोर व्यायाम (कसरत) चिन्ता, मानसिक तथा शारीरिक श्रम, रात्रिजागरण, मैथुन, भ्रमण, जौ, चावल, गेहूं का दलिया, कुलथी, मूंग तथा रूक्ष पदार्थ।

अपथ्यः—दिन का सोना, अधिक सोना, बेकारी का जीवन बिताना, दुग्ध, घृत, मलाई, हलुआ तथा अन्य स्निग्ध पदार्थों का उपभोग।

शिलाजतु

(ले०—कविराज रामलाल अग्रवाल वैद्यवाचस्पति कृष्णा गली, लाहौर)

आयुर्वेद में दैवी चिकित्सा बहुत महत्वपूर्ण है। उसी चिकित्सा के अन्तर्गत आश्चर्यप्रद गुण दिखाने वाली शिलाजतु है।

शिलाजतु क्या है ?

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की किरणों से अतिशय तप्त होकर पर्वत शिलाओं द्वारा लाक्षा के समान प्रकाशमान रसों को बहाते हैं। इसी रस का नाम शिलाजतु है। संस्कृत साहित्य में "शिला" नाम पर्वत या विशाल पाषाण-खण्डों का है और "जतु" लाक्षा या लाखको कहते है। इसी प्रकार 'अद्रि रस' आदि नाम भी साभिप्राय हैं। यथा—

हेमाद्या सूर्य संतप्ता स्रवन्ति गिरि धातवः।
जत्वाभं मृदु मृत्स्नाभं यन्मलं तच्छिलाजतुः॥
(चरक चिकित्सा)

शिलाजतु के भेद

शिलाजतु जिन धातुओं से उत्पन्न होता है, उनके गुण उसमें विद्यमान रहते हैं। इस कारण सुवर्णोद्भव, रौप्योद्भव, अयोद्भव, ताम्रोद्भव, सीसकोद्भव और वङ्गोद्भव भेद से छः प्रकार का होता है। परन्तु रसायन प्रकरण में प्रथम चार ही आते हैं। यथा—

मधुरश्च सतिक्तश्च जपा पुष्पनिभश्च यः।
कटुर्विपाके शीतश्च स सुवर्णस्य निस्रवः॥
रौप्यस्य कटुकः श्वेतः शीत स्वादु विपच्यते।
ताम्रस्य बर्हिकण्ठाभस्तिक्तोष्णः कटुपच्यते॥
लौहं जटायु पक्षाभं तिक्तकं लवणं भवेत्।
विपाके कटुकं शीतं सर्व श्रेष्ठ मुदाहृतम्॥
(चरक चिकित्सा)

इनमें ताम्रोद्भव आग्नेय है, शेष सब सौम्य हैं। ये समस्त भेद अब प्रयोग में नहीं आते। इसलिये तन्त्रकारों ने प्रायः इसके दो ही भेद माने हैं:—

"शिलाजतु द्विधा प्रोक्तो गोमूत्राद्यो रसायनः।
कर्पूर पूर्वश्चान्यस्तत्राद्यो द्विविधः पुनः।
ससत्व श्चैव निःसत्वस्तयोः पूर्वो गुणाधिकः॥
(रस रत्न समुच्चय)

उपर्युक्त दोनों प्रकार का शिलाजतु सम्प्रति उपलब्ध है। गोमूत्र गंधी शिलाजतु ही चरक संहिता में अयोद्भव शिलाजतु नाम से वर्णित है। यह सब प्रकार से श्रेष्ठ माना गया है और सौभाग्य से यही आज कल बहुतायत से पाया जाता है।

शिलाजतु शोधन की आवश्यकता

शिलाजतु जिस रूप में पर्वतों से प्राप्त होता है वह व्यवहार योग्य नहीं। उसमें कई गुना मिट्टी आदि अग्राह्य पदार्थ मिले रहते हैं। अतः दूषित पदार्थों को प्रथक् करने के लिए शिलाजतु का शोधन करना चाहिए अन्यथा वह लाभ के

स्थान पर हानि पहुँचाता है और दाह, मूर्च्छा भ्रम, रक्तपित्त, रुधिर विकार, अग्निमांद्य तथा विष्टम्भादि अनेक उपद्रव उत्पन्न कर देता है। प्रायः देखा गया है कि मूर्ख लोग ऐसाही शिलाजतु बाजार से सस्ते भाव पर लाकर व्यवहार में लाते हैं और जब उपद्रव खड़े होते हैं तब वैद्य समुदाय या वैद्यक को गालियां देते हैं बाजार में जिसको शुद्ध शिलाजतु कह कर अनेक स्वार्थी अविद्वान् बेचते फिरते हैं, वह भी शुद्ध नहीं। प्रथम तो उसमें अनेक मिश्रण रहते हैं और यदि किसी ने बहुत कृपा ही की तो मिश्रण दूर कर दिये। परन्तु इतने से काम नहीं चलता। जबतक यथा विधि शोधन न कर लिया जाय तब तक शिलाजतु लाभप्रद नहीं होता।

शिलाजतु शोधन

ऊपर लिखा जा चुका है कि गोमूत्रगन्ध कृष्णवर्ण लौह शिलाजतु उत्तम होता है। अतः यत्न पूर्वक ऐसे शिलाजतु का संग्रह करके प्रथम बाह्य मल दूर करने के लिए समीचीनतया प्रक्षालन कर लेना चाहिए। तदनन्तर—

"लौह त्रिफला निम्ब गुडूचि सर्पिर्यथा तथावत् परिभावयेत्तत्। सन्तानिका कीट पतङ्ग दंश दुष्टौषधी दोष निवारणाय॥

पश्चात् इलायची के क्वाथ में घोल कर आठ पहर रखा रहने दें। तदुपरान्त नितार कर छान लें और अग्नि या सूर्य के ताप से शुष्क कर लें।

अथवा—एक सेर शिलाजतु को १६ सेर त्रिफला क्वाथ में डाल कर आठ पहर रख छोड़ें। तत्पश्चात् नितार कर छान लें और अग्नि पर चढ़ा दें। जब घन हो जाये तब उतार लें। यही अग्नितापी शुद्ध शिलाजतु है।

यह स्मरण रहे कि अग्नितापी की अपेक्षा सूर्य तापी शिलाजतु अधिक गुणकारी होता है।

आयुर्वेद में और भी अनेक विधियां शिलाजतु शोधन की वर्णित हैं, परन्तु विस्तार भय से हम उनको न लिख कर इस विषय को यही समाप्त करते हैं:—

ग्रीष्म ऋतु में जिस स्थान पर धूप भली भांति पड़ती हो वहां चार लौह पात्र रक्खो। पहले लौह पात्र में उपर्युक्त विधि से प्रक्षालन किया हुआ शिलाजतु बहुत बारीक पीस कर डाल दो। तत्पश्चात् पका कर अर्ध शेष किया हुआ जल शिलाजतु से द्विगुण मात्रा में डालो और समीचीनतया हाथों से मसल कर छोड़ दो। तीन-चार दिन तक धूप में रक्खा रहने से इस पर अच्छी मोटी काली मलाई जम जाती है। इस मलाई को सावधानी से उतार कर दूसरे पात्र में डाल दो। अब इस दूसरे पात्र में भी स्वच्छ उष्ण जल (अर्ध शेष करने की आवश्यकता नहीं) मलाई से द्विगुण परिमाण में डालो और हाथ से मल कर घोल दो। कुछ काल में इस पर भी पूर्ववत् मलाई जम जाएगा। बस, पूर्वोक्त क्रम से दूसरे से तीसरे और तीसरे से चौथे पात्र में डाल कर मलाई उतार लो। अब जब आप उस मलाई को पृथक पात्र में डाल कर पूर्वोक्त रीति से घोल कर रक्खेंगे तो मलाई न आकर स्वच्छ जल ऊपर आजाएगा। इस

जल को नितार कर सूर्य ताप मे घन करके रख लें, यही सर्वोत्तम सूर्यतापी शिलाजतु है।

शिलाजतु के गुण

शिलाजतु ज्वर, पाण्डु, शोथ, धातुक्षीणता मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, स्वप्नदोष, नपुंसकता, अशक्ति को दूर करने वाला, अग्निसन्दीपक, मुटापे को नष्ट करने वाला, राजयक्ष्मा को शान्त करने वाला और शूल, गुल्म, प्लीहावृद्धि तथा उदर विकार व हृदय शूल का नाशक है। चर्मरोगों को दूर भगाता है। गर्भपात जनित दुर्बलता और प्रदररोग में लाभकारी है। सम्भोगानन्तर सेवन करने से सारी दुर्बलता को दूर करके चित्त को प्रफुल्लित कर देता है। शरीर को लोहे के समान दृढ़ बनाता है। और कहां तक लिखें—

"रसोपरस सूतेन्द्र रत्न लोहेषु ये गुणाः।
वसन्ति ते शिलाधातौ जरामृत्युजिगीषया।
"न सोऽस्ति रोगो भुवि साध्यरूपः
शिलाजतू यं न जयेत् प्रसह्य।
तत्कालयोगैर्विधिवत प्रयुक्तं
स्वस्थस्य चोर्जो विपुलां ददाति"

शिलाजतु की मात्रा

मात्रा का कोई निश्चित परिमाण नहीं। रोगी के बलाबल व काल को देखकर युक्ति युक्त मात्रा का प्रयोग करना चाहिये। यद्यपि चरक भगवान् ने शिलाजतु की उत्तम मात्रा एक पल (४ तोला) और अधम एक कर्ष अर्थात् एक तोला बताई है, परन्तु यह उसी समय की बात है। आजकल इतनी मात्रा में इसका प्रयोग सर्वथा अनुचित है। भगवान् चरक का ही वचन है—

मात्राया नास्त्यवस्थानं दोषमग्निं बलं वयः।
व्याधिं द्रव्यञ्च कोष्ठञ्च वीक्ष्य मात्रां प्रयोजयेत॥

अतः वर्तमान काल में इसकी मात्रा ४ रत्ती से २ माशे तक हो सकती है जो कि रोगी के बलाबल पर निर्भर है। युवक के लिए एक मात्रा एक माशा होनी चाहिए।

परिहार

शिलाजतु सेवन करने वालों को विदाही व गुरु पदार्थ नहीं खाने चाहिए। कुलत्थ का प्रयोग भी निषिद्ध है। यथा—

"शिलाजतुप्रयोगे तु विदाहीनि गुरूणि च।
वर्जयेत्सर्वकालं तु कुलत्थान्परिवर्जयेत्॥

शेष साधारण परहेज जो रसायन प्रयोग में आवश्यक है, इसके सेवन काल में भी रखना चाहिए।

उपद्रव शान्ति

यदि कोई व्यक्ति मूर्खतावश या धोखे से अशुद्ध शिलाजतु खा ले और उपद्रव खड़े हो जाएँ तो उसे सात दिन तक ६ माशे काली मिर्च कपड़छान की हुई एक तोला घी में मिलाकर चटाएँ। इससे अशुद्ध शिलाजतु जनितोपद्रव शान्ति हो जाते हैं। यथा—

"मरिचं घृतसंयुक्तं सेवयेद्दिन सप्तकम्।
शिलाजतुभवं दोषं शान्तिमाप्नोति निश्चितम्"॥

भावना से विशेष गुण

शिलाजतु को और अधिक गुण दायक बनाने

के लिए अथवा विशेष २ रोगों की शान्ति के हेतु अनेक द्रव्यों की भावना दी जाती है। कुशल वैद्य स्वयं रोगानुसार द्रव्य कल्पना करके शिलाजतु को भावित करके अधिक लाभ उठा सकते हैं। कुछ प्रयोग हम यहां नीचे लिखते हैं —

(१) यदि शिलाजतु को दशमूल क्वाथ से भावित किया जाए तो ८० प्रकार के वातरोगों में अपूर्व लाभ देता है।

(२) यदि अष्टवर्ग के क्वाथ की भावना दी जाय तो मूर्छादि ४० प्रकार के पित्तरोगों को दूर करता है।

(३) बृहत्पञ्च मूल और पञ्चकोल के क्वाथ से भावित किया जाए तो २० प्रकार के कफ रोगों को शान्त करता है।

(४) शतावरी मूल के रस या क्वाथ से भावना दी जाए तो वीर्य विकारों में अद्भुत लाभ पहुँचाता है।

(५) यथा क्रम त्रिफला क्वाथ, गिलोय और दशमूल क्वाथ, शालिपर्णी और पृश्निपर्णी के क्वाथ से भावित करके काकोली और क्षीर काकोली के रस की भावना दे देने से शुद्ध शिलाजतु क्षयी को आरोग्य बनाने वाला हो जाता है। यह शिलाजतु बहुगुण सम्पन्न होता है।

अनुपान

शिलाजतु अनुपान भेद से समस्त रोगों में लाभकारी है। क्योंकि यह योगवाही बलकारक, अग्निदीपक और सौम्य है। इसलिए कुछ प्रसिद्ध रोगों के हेतु शिलाजतु के अनुपान नीचे लिखे जाते हैं —

(१) रसायन पद्धति के अनुसार २१ दिन लोहभस्म के साथ गोदुग्ध से शिलाजतु सेवन किया जाये तो बुढ़ापे से बचाव रहता है। कुष्ठ का भी नाश हो जाता है।

(२) गोक्षुरादि के चूर्ण के साथ सेवन करने से बाजीकरण हो जाता है।

(३) त्रिफला चूर्ण के साथ शहद मिला कर शिलाजतु खाने से प्रमेह दूर होता है।

(४) मूत्ररोग व ऊरुस्तम्भ में दशमूल के क्वाथ से शिलाजतु का सेवन करना चाहिए।

(५) पाषाणभेद, वरुण (बरना), गोखरू, और ब्राह्मी के क्वाथ में शिलाजतु डाल कर गुड़ मिला कर ककड़ी वह खीरा के छिले हुए बीजों के कल्क के साथ खाने से अश्मरी नष्ट हो जाती है। अश्मरी के लिए यह बहुत आम प्रयोग है।

(६) पाण्डु व क्षय की निवृत्ति के लिए शिलाजतु, लोहभस्म और माक्षिक एकत्र १५ दिन तक वायविडंग व हरीतकी चूर्ण के साथ शहद, घी और मिश्री मिला कर खाना चाहिए।

(७) शंखाहुलि के रस में डाल कर शिलाजतु खाने से मेधा शक्ति बढ़ती है।

(८) सुदर्शन क्वाथ से शिलाजतु सेवन सब प्रकार के ज्वरों को दूर भगाता है।

(९) पित्तपापड़े के क्वाथ से शिलाजतु खिलाया जाये तो जीर्ण ज्वर दूर होता है।

(१०) शोथ रोग में शिलाजतु का प्रयोग हरीतकी के सूक्ष्म चूर्ण के साथ करना चाहिए।

शिलाजतु के कुछ प्रसिद्ध योग

शिलाजतु लौह—(रसेन्द्र सारसंग्रह)

चन्द्रप्रभा गुटिका — ,, प्रमेह रोगों पर

त्रैलोक्य मोहनरस—सुजाक और प्रदर रोगों पर

शिलाजतु पाक—पौष्टिक व बुद्धि वर्धक

पूर्णचन्द्र रस—(रसेन्द्र सार संग्रह) रसायन, स्वप्नदोषादि

चन्द्रकला रस — (आ० संग्रह) प्रमेह नाशक, शीत, दाहशामक, मूत्रप्रसादक—

शिलाजतु परीक्षा

इस प्रवञ्चनामय काल में स्वार्थी लोगों की कमी नहीं। ऐसे लोग २—४ पैसे के लाभ के आगे दूसरे के जीवन का भी कोई मूल्य नहीं समझते। शिलाजतु जैसी महान् उपकारक ओषधि भी ऐसे व्यवसायियों के हाथ में पडकर निःसत्व और हानिकारक सिद्ध हो रही है। दुर्भाग्य से शिलाजतु की कोई सिद्ध परीक्षा भी नहीं है जो परीक्षाएँ प्रचलित हैं वे भी सर्वांश में ठीक नहीं। जैसे—

(१) अग्नि पर रखने से शिलाजतु लिङ्गाकार हो जाता है तथा धुआँ बिलकुल नहीं देता।

(२) तृण पर उठाकर पानी पर रखने से गल जाता है और तार छोडता है।

(३) असली शिलाजतु को बन्दर या लंगूर बड़े चाव से खाता है।

(४) असली शिलाजतु को भलीभाँति जला कर चूर्ण करके भी पानी पर छोड़ने से पूर्ववत् तार छूटते हैं।

इस प्रकार की कुछ अन्य परीक्षाएँ भी हैं, परन्तु नक्काल भी इन सबसे परिचित हैं। वे बनावटी शिलाजतु में भी इन गुणों का यथाकथञ्चित् समावेश कर देते हैं। बन्दर अशुद्ध शिलाजतु को बड़े चाव से खाता है। इससे केवल नकल और असल की परीक्षा हो सकती है, शुद्धाशुद्ध की नहीं। कभी कभी वनस्पतियों की भावना के कारण सर्वोत्तम शिलाजतु भी अग्नियोग से धूम्र देने लगता है। इस कारण किसी भी परीक्षा से पूर्ण निश्चय पर नहीं पहुँचा जा सकता।

यदि किसी वैद्य महानुभाव को कोई और सिद्ध परीक्षण किया ज्ञात हो तो प्रकाशित करने की कृपा करें। शिलाजतु से लाभ उठानेकी इच्छा रखने वाले सज्जनों को चाहिए कि या तो वे स्वयं ही सर्वोत्तम सूर्यतापी शिलाजतु तैयार करें या किसी विश्वस्त वैद्य बन्धु से प्राप्त करें। यह हानिरहित रसायन बाल, वृद्ध, युवती सबके लिए उपयोगी है। मानवसमाज को इस दिव्यौषधि से अवश्य लाभ उठाना चाहिए क्योंकि—

न सोऽस्ति रोगो भुवि मानवानां
शिलाजतु यन्न जयेत् प्रसह्य।

गृहस्थों का स्वास्थ्य और उपाय

(ले०—पं० दयाशंकर जी द्विवेदी वैद्य-रत्न, मोखा शाहबाद)

(गताङ्क से आगे)

मैं अब अधिक क्या कहूं। समय बता रहा है व आगे भी बतायेगा कि हमारे प्राचीन शास्त्रों की बातें किस हदतक सत्य हैं। पश्चिमी सभ्यता के अन्ध भक्तो! अपने बाप दादे की बहुमूल्य कीर्तियों को गडरिया का गीत बताने वालों के राग में राग मिलाने वालो, यह याद रक्खो कि तुम्हारा यह विचार यथार्थतः भ्रम मूलक व मिथ्यात्व से परिपूर्ण है। कारण कि संसार का कोई सिद्धान्त प्राचीन होने से ही बुरा एवं अमान्य नहीं हो सकता। सत्य सदा सत्य ही रहेगा, सत्य कभी छिपाये नहीं छिपता, यह ध्रुव सत्य है। अस्तु, इस नाशकारी भ्रान्त धारणा के पालन का ही यह भीषण परिणाम है, कि हमारी सन्तान बिलकुल नाजिये के समान मढ़ी खोखली ढांचा हो रही है। आज हम में कुछ भी वास्तविकता नहीं रह गई है। हमआज बिलकुल कृत्रिम हो रहे हैं। आज कल हमारे कुछ राजनीति विशारद नेता हमारे इस घोर पतन व दयनीय दुर्दशाका प्रधान कारण केवल "स्वराज्य" का न होना बतलाया करते हैं और वह यह समझते हैं कि स्वराज्य होते ही हमारे सब संकट दूर होजायेंगे। साथ ही इसके वे इन सारी बातों का दोष विदेशी शासन के मत्थे मढ़ इस बातकी प्रायःशिकायत किया करते हैं कि परतन्त्रता की बेड़ी में जकड़े रहने के कारण हमारी आर्थिक, शारीरिक, व मानसिक आवश्यकतायें कभी भी पूरी नहीं होतीं, इसलिये हमारा स्वास्थ्य दिन बदिन बिगड़ता जा रहा है। हमारी अवस्था प्रति पल नीचे की ओर अग्रसर होती जा रही है। इस कारण हम दारुण दुर्दशा भोग कर, असमय में ही काल के ग्रास बन जाते हैं।

पाठक! हम मानते हैं कि हमारे आदरणीय देश हितचिंतक नेताओं की वे बातें बहुत हद तक सत्य हैं, यह रोग भारत की दरिद्र जनता के पीछे "हाथ पैर धोकर" बेतरह पड़ा हुआ है, किन्तु हम पूछते हैं कि हमारे धनिक और धनिकों के बालक क्यों डाक्टर वैद्यों को घेरे रहते हैं, क्यों धनिकों को आये दिन रोज़ ही उपदंश उष्णवात, वीर्यविकार, कोष्ठबद्धता, नपुंसकता जैसे भयंकर लज्जाजनक रोग हुये ही रहते हैं? क्यों धनी अधिक क्षयी के शिकार होते हैं? क्यों धनीमानी लोग अधिकतर निः संतान रह जाते हैं? क्यों हमारे देश के नवयुवकों का, जिन पर भारतमाता अपने उद्धारकी आशा किये बैठी है। जिन पर देश का उत्कर्ष और अपकर्ष

निर्भर करता है, जो राष्ट्र की सम्पत्ति हैं, जो स्कूलों कालेजों और यूनिवर्सिटियों में बेहिसाब रुपया खर्च कर शिक्षा ग्रहण करते हैं, जो अपने को बड़े गर्व से श्रीमान् पिता का श्रीमान् पुत्र कहा करते हैं, जो महलों में रहते हैं, जिनको सभी प्रकार की सुखजनक सामग्रियां उपलब्ध हैं; स्वास्थ्य दिनबदिन बिगड़ता ही जा रहा है? जिन्हें पेट भर क्या ज़रूरत से अधिक भोजन मिला करता है, और वह भी बहुत बढ़िया सुस्वादु, और चट पटा, जिसे खाकर ये लक्ष्मी के लाडिले अजीर्ण और कोष्टबद्धता के शिकार बन जाते हैं, जिसे दूर करने के लिये इन्हें नमक सुलेमानी फ्रूटसाल्ट, सोडाबाई कार्ब, तथा नाना प्रकार की पाचक औषधियाँ दिन रात भकोसनी पड़ती हैं, क्या इन धनिक व धनिकोंके सुशील पुत्रों के धन का अधिकांश भाग डाक्टर व वैद्यों के बिल चुकाने में ही खर्च नहीं होता? क्या इनके घर शीशियों व बोतलों की प्रचुरता के कारण अस्पताल से प्रतीत नहीं होते? क्या अब भी आप कहेंगे कि इन के ऊपर आपकी यह "स्वराज्य" वाली लचर दलील लागू होती है? नहीं, और कारणों के सिवा प्रधान कारण केवल यही है कि, इनको यह शिक्षा मिली ही नहीं कि किन २ कारणों से मनुष्य का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, किन २ कारणों से मनुष्य असमय में ही काल कवलित हो जाते हैं, किन २ कारणों से भरी जवानी में ही पुरुषत्व मारा जाता है, किन २ कारणों से हम क्षयी ऐसे जान-मारक रोग के शिकार होते हैं, किन २ कारणों से हमारा यह शरीर व्याधि मन्दिर बन जाता है, किन २ कारणों से हमें दिन रात सक्रामक रोग घेरे रहते हैं, वह कौन कारण है कि दुनिया हमें हिक़ारत की दृष्टि से देख रही है? मूर्खों को छोड़िये, अशिक्षितों को छोड़िये, देहातियों को छोड़िये, मैं आज कल के, शहरों में रहने वाले शिक्षितों से पूछता हूँ, कि जनाब! आप में से कितने व्यक्तियों को यह मालूम है कि हमारा शरीर क्या है? यह मानव शरीर किन २ तत्वों से बना है? क्या आप को यह ज्ञात है कि इस मानव तन को पूर्णतया निरोग रखने के लिए, हम सब को किन २ स्वास्थ्य विषयक दैनिक नियमों का पालन करना चाहिए, हमें कब किस प्रकार का भोजन करना चाहिए? किस प्रकार के भोजन से किस प्रकार का रस, रस से रक्त, तथा रक्त से वीर्य्य बनता है? किस प्रकार के भोजन से शरीर पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है? कहने का तात्पर्य्य यह है कि हम अनजाने भी अपने स्वास्थ्य का संहार करते हैं। हमें बहुत सी जानने योग्य, अति आवश्यकीय, जीवनोपयोगी, स्वास्थ्य विषयक, बातें आज तक विदित ही नहीं। इस कारण भी हम अपने को इस बड़े भाग्य से मिलने वाले मानव शरीर की, सम्यक रूप से देख रेख नहीं कर सकते। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आज कल हमारे विद्यालयों में भी जहां अन्य विषयों की शिक्षा में हज़ारों रुपया प्रति वर्ष व्यर्थ व्यय किया जाता है, वहां इस परमावश्यक, पद-पद पर काम आने वाले जीवनोपयोगी

विषय की ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया जाता। इन आधुनिक कालीन विद्या मन्दिरों के विद्यार्थी ऊँचे दर्जे का गणित, दर्शन, राजनीति तथा साहित्य की मोटी २ पुस्तकें पढ़ जाते हैं, दुनिया की हिस्ट्री की मोटी २ पुस्तकों की घटनायें ही नहीं, बल्कि घटनाओं की तारीख तक रट डालने की शक्ति रखते हैं, भूगोल व खगोल के कोने २ तक का परिज्ञान रखते हैं, आकाश, पृथ्वी, चन्द्र, तारे, सूर्य, जल, जलवायु तथा नये व पुराने ग्रहों की रचना तथा उनकी गति का पता बता सकते हैं, प्रेम वियोग व श्रृङ्गार रस की कवितायें रच सकते हैं। यहीं तक नहीं साइन्स की विशेष जानकारी से परमात्मा के अस्तित्व पर भी सन्देह करने लग गए हैं (कुछ दिन से कुछ लोग, सब नहीं) परन्तु "चिराग तले अंधेरा" लोकोक्तिनुसार उन्हें अपने ही शरीर व शरीर के अंगों तथा क्रियाओं का ज़रा भी ज्ञान नहीं है। न वे कभी जानने की चेष्टा ही करते हैं। मैं यहां पर यह कहे बिना नहीं रह सकता कि ये बिचारे विद्यार्थी जाने भी तो कैसे—जबकि हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में 'स्वास्थ्य' विषय को कोई स्थान ही नहीं है। उन्हें यह बताया ही नहीं जाता कि स्वास्थ्य क्या है ? इससे मानव जीवन का कितना सम्बन्ध है ? इससे मानव जीवन का कितना व किस प्रकार विकास होता है ? अब आपने समझा कि शिक्षा प्रणाली में ऐसे उपयोगी विषय की उपेक्षा का ही यह विषम परिणाम है कि हमारा शिक्षित युवक समाज आज इस दयनीय अवस्था को प्राप्त हो मानव जीवन का आनन्द उठाने में अपने को सर्वथा असमर्थ पा रहा है। मेरा तो वर्षों का अनुभव यही है कि—आधुनिक शिक्षा प्रणाली आज जिस रूप में प्रचलित है वह अत्यन्त दूषित, गलत, और सर्वथा दोषपूर्ण है ? आधुनिक कालीन शिक्षित भारतीय नवयुवाओं का बिगड़ा स्वास्थ्य, उनकी अकर्मण्यता तथा बेकारी क्या इस बात को प्रकट नहीं करती कि आज कल की प्रचलित शिक्षा प्रणाली स्कूल और कालेजों में जिस रूप में प्रचलित है वह सर्वथा दोषपूर्ण है। मैं ही नहीं देश के सभी विचारशील, देशहितचिन्तक भारतवासी, वर्षों से इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली को सर्वथा अपूर्ण, अनुपयुक्त तथा असामयिक बताते आ रहे हैं, इतना ही नहीं देश के विद्वानों, आदरणीय नेताओं तथा विश्व विद्यालयों के संचालकों ने भी समय २ पर अपने भाषणों, निबन्धों, तथा विचारों से इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली को सर्वथा दोषपूर्ण तथा विनाश की ओर ले जाने वाला बतलाया है। ऐसी अवस्था में अब आवश्यकता है पाठशालाओं से लेकर विश्वविद्यालयों तक की शिक्षा प्रणाली को बदलने की। अच्छा होता कि अब पाठशालाओं से लेकर विश्वविद्यालयों तक में मातृभाषा 'हिंदी' को प्रथम स्थान दिया जाता, औद्योगिक, व्यावहारिक तथा व्यावसायिक ज्ञान की पर्याप्त शिक्षा दी जाती, साहित्य, गणित, दर्शन, विज्ञान तथा सच्चे इतिहास, स्वास्थ्य, ब्रह्मचर्य, देशभक्ति इत्यादि जीवनोपयोगी विषयों की शिक्षा दी

जाती, नियमित दिनचर्य्या व व्यायाम प्रत्येक विद्यार्थी के लिये अनिवार्य विषय करार दिया जाता। यानी वर्तमान शिक्षाप्रणाली का नवीन संस्कार कर समयोपयोगी शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता, तभी हम लोगों का कल्याण होगा अन्यथा नहीं।

हो सकता है कि हमारे अबतक के उपरोक्त विवेचन से बहुत से पाठक कदाचित यह न समझने लग गये हों कि हम आधुनिकता के कट्टर विरोधी व प्राचीनता के कट्टर समर्थक हैं। और प्राचीन कालीन रूढ़ियां व सामाजिक परिपाटी ही हमको विशेषरूपेण पसन्द है। पर बात ऐसी नहीं है। मैं यह अवश्य कहूँगा तथा आप भी कहेंगे कि भारतीय गृहस्थों व नवयुवाओं का वर्तमान अधःपतन व उनकी दयनीय दुर्दशा के मुकाबिले में प्राचीन कालीन गृहस्थों की दशा आज से कहीं अधिक सुखदायिनी थी। क्या इस दृष्टि से प्राचीन अवस्था में रहने वाले गृहस्थों की शिक्षा प्रणाली, रहन-सहन तथा स्वास्थ्य की प्रशंसा करना स्वाभाविक नहीं है ?

पाठक ! प्रत्येक कार्य्य के करने का समय निश्चित है, और इसमें सन्देह नहीं कि सदा निश्चित समय पर नियम पूर्वक सम्पादित कार्य सदा लाभ प्रद हुआ करता है। इसके विपरीत यदि मन माने ढंग पर मन की इच्छानुसार बिना कुछ समझे बूझे अनियमित रूपेण काम किया जाये तो, इसमें सन्देह नहीं कि आपके किए हुए सभी काम सदा विफल होंगे तथा आपको सदा लाभ के स्थान हानि उठाना पड़ेगी।

प्रकृति की रीति भी ऐसी ही है। प्रकृति के प्रत्येक कार्य्यों से पद-पद पर हमें इस बात की शिक्षा मिलती आई है। सूर्य्य, चन्द्र, जल, वायु, अग्नि, और आकाश अपने २ नियमित कार्य्यों को सदा निश्चित समय पर करते हैं, व हमें उपदेश देते हैं कि तुम भी सदा अपने कार्य्यों को निश्चित समय पर कर सुखी रहने की चेष्टा करते रहोगे तो यह निश्चय समझलो कि तुम सदा फूले फले रहोगे, तुम्हारा कभी कुछ बिगड़ नहीं सकता।

पाठक ! मैं विषय प्रसंग में बहुत आगे बढ़ गया हूँ, जिसे लिखने की इच्छा मुझे तनिक भी न थी। पर क्या करूं। प्रसंग आजाने पर अपने उद्देश्य को भलीभांति समझाने के लिए सब बात यथावत् कहनी ही पड़ती है। अस्तु-मैं पहले ही कह चुका हूँ कि हर कार्य्य के करने का समय निश्चय किया हुआ है, और निश्चित समय पर किया हुआ कार्य्य सदा आशातीत फलप्रद हुआ करता है। यथा प्रातः जागरण प्रातः भ्रमण, मल मूत्र का त्याग-स्नान, भोजन आदि मनुष्य के आवश्यक दैनिक कार्य्य हैं। परन्तु जब इन कार्य्यों को हम सब समय का विचार छोड़, मन की इच्छानुसार अनियमित रूपेण सम्पादित करते हैं तब वही काम हमें लाभ के स्थान पर हानि पहुँचा हमारे स्वास्थ्य के नाश का कारण बनते हैं। अगर आप ब्राह्म मुहूर्त में न उठ दिन निकलने पर शय्या का त्याग

करें तो आप यह अवश्य अनुभव करेंगे कि आपको सुस्ती व आलस घेरे हुए हैं। सर दुख रहा है। मलमूत्र-विसर्जन उचित प्रकार से न हुआ। इसी प्रकार यदि मलमूत्र का त्यागन उचित समय पर (आपके आलस्य वश) न हुआ तो मलावरोधके कारण आपको उदावर्त्त आदि नाना प्रकार की पीड़ाएँ अवश्य उत्पन्न होंगी। यदि भोजन नियत समय पर न किया गया, भोजन की इच्छा रोकी जाय या भोजन समयानुसार न कर आगे पीछे किया जाय तो इस का परिणाम यह होगा कि आप अजीर्ण, अग्निमन्दता कोष्ठबद्धता, अरुचि, सिरदर्द आदि व्याधियों के शिकार बनेंगे। आपके बल का क्षय अवश्य होगा। यदि आपको जुकाम हुआ है, व आप इसकी परवा न कर मन माने ढंग पर सर्द गर्म वस्तुओंका व्यवहार कर रहे हैं तो ऐसी अवस्था में जुकाम आपको अधिक दिनों तक घेरे रहेगा जिसका फल यह होगा कि जुकाम बिगड़ कर श्वास व खांसी का रूप धारण करेगा। यदि खांसी की अवस्था में खांसी की चिकित्सा की उपेक्षा कर संयम से न रह स्त्री-सेवन किया तो आपको दिक या क्षय रोग होजाने की विशेष सम्भावना है। मैं यहां पर यह कहे बिना नहीं रह सकता कि आज कल बहुत से लोग इस कर्म से ही श्वास, खांसी, तथा क्षय ऐसे प्राणघातक रोग के शिकार बन रहे हैं। एतदर्थ अब यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि आयुर्वेद विज्ञान साधारण गृहस्थोपयोगी-स्वास्थ्य विषयक नियम (जो दिनचर्य्या का प्रधान अंग हैं, जिन का प्रत्येक व्यक्ति को जानना ज़रूरी है) उनकी अनभिज्ञता तथा अवहेलना ही हमारे इस अधःपतन का मूल कारण है।

अतएव मैंने यह निश्चय किया है कि अपने पाठकों के समक्ष "गार्हस्थ्य सुख" प्रदायक आयुर्वेदीय स्वास्थ्यविषयक नियमों को (जो प्रत्येक स्त्री पुरुष के दिनचर्य्या के प्रधान अंग हैं—रक्खूँ, इनको पालन कर सब्य लोग स्वस्थ व बलवान बनें तथा दीर्घजीवी हों, अपनी पूर्णावस्थाको प्राप्त कर ऐहिक व पारलौकिक पुरुषार्थचतुष्टय को प्राप्त कर आनन्दमय स्वाधीन जीवन बिता सकें। यहां इस विषय पर लिखने के पहले मैं अपने पाठकों के समक्ष अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना चाहता हूं, ताकि इस लेख के पाठक मुझे इस विषय का विशेषज्ञ समझ मेरे इस लेख में प्रगट किये विचार को 'ब्रह्मवाक्यम्' न समझें, न मेरी छोटी मोटी भूलों पर किसी प्रकार का आक्षेप, आक्रमण तथा शास्त्रार्थ आरम्भ करें—कारण कि मैं न तो लेखक हूं, न किसी स्कूल, कालेज या विद्यापीठ का डिगरी या डिप्लोमा होल्डर आयुर्वेदाचार्य्य हूं, न होमियोपैथी, एलोपैथी या और किसी अन्य पैथी का डाक्टर हूं। मैं बहुत ही साधारण तरह से घर पर पढ़ा हुआ एक अति साधारण (अपने नहीं लोगों के कथनानुसार) देहाती वैद्य तथा शिक्षक हूं। असल बात यह है कि मैं बहुत दिनों से इस विषय की नई, पुरानी सभी प्रकार की पुस्तकों, मासिक पत्रिकाओं, तथा समाचार पत्रों को बराबर पढ़ता आ रहा हूं, जो समझ में नहीं आता इस

विषय के विशेषज्ञों से पूछ कर सीखा करता हूं, हमेशा कुछ न कुछ विशेष जानने की चेष्टा करता आ रहा हूं—जहां तक बन पड़ा है, अपनी बुद्धि के अनुसार बहुत से रोगियों की चिकित्सा कर उन्हें लाभ पहुँचाया है। उसी अनुभवके बल पर मैं आपके समक्ष इस लेख के रूप में उपस्थित हो रहा हूं। हो सकता है कि इस में कुछ त्रुटि हो। भूल करना मनुष्य का स्वाभाविक गुण है, भूल मनुष्य ही से होती है, वह मनुष्य, मनुष्य नहीं बल्कि देवता है, जो दुनिया में आकर भूल न करे। अतः अगर इस निबन्ध में कहीं कुछ त्रुटि हो तो, कृपया उसे सुधार लें, अथवा मुझे सूचित करें। मैं सदैव आपकी बतायी त्रुटियों को (उन पर विचार करने के पश्चात्) सुधार दूंगा मैं फिर भी कहता हूं कि इस लेख में मेरा कुछ भी नहीं है, सब कुछ आप ही का है, क्या आप ही की दी वस्तु आप ही को सौंपने का भी अधिकार मुझे नहीं है? अस्तु—यों तो यह विषय बहुत बड़ा है, यदि इस पर विस्तार पूर्वक लिखा जाय तो एक पोथा ही तैयार होजाय, जो मेरी शक्ति व समय से परे की बात है। अतः अब मैं संक्षेप में ही अपने इस लेख द्वारा अपने सहृदय पाठकों को प्रतिदिन काम में आने वाले आयुर्वेदीय नियमों को जो दिनचर्या के प्रधान अंग हैं। यथाशक्य, यथाबुद्धि, समझाने का यत्न कर रहा हूँ। आशा एवं विश्वास है कि हमारे जीवन सुधा के सहृदय पाठक इस तुच्छ निबन्ध में बताये नियमों को स्वयं पालन कर अपने साथियों, रोगियों और होनहार बच्चों से जो राष्ट्र के प्रधान अंग हैं, जिन पर देश का भविष्य निर्भर करता है, पालन कराने का प्रयत्न कर मेरे परिश्रम को सार्थक करने की कृपा करेंगे अगर मेरे कद्रदान पाठकों ने मेरे इस तुच्छ निबन्ध से थोड़ा सा भी लाभ उठाया तो भविष्य में मैं, (अगर समय मिल सका तथा आपकी प्रेममयी आशा हुई तब) इस के और अंगों पर अपना विचार प्रकट करूंगा—

प्रातः जागरण—

यदि आप सदा सर्वदा स्वस्थ रह दीर्घजीवी बन स्वार्थ परमार्थ साधन करना चाहते हैं, तो आप हमेशा ब्राह्म मुहूर्त्त में (सूर्योदय से ४ घड़ी पहले) उठने की आदत डालिये। आयुर्वेद शास्त्र में ब्राह्म मुहूर्त्त का उठना परम लाभ दायक माना गया है,

आचार्य्य भावमिश्र लिखते हैं:—

ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत स्वस्थो रक्षार्थमायुषः ।
तत्र दुःखस्य शान्त्यर्थं, स्मरेद्धि मधुसूदनम् ॥

"स्वस्थ अर्थात निरोग मनुष्य अपनी आयु की रक्षा के लिये ४ घड़ी के तड़के अर्थात ब्राह्म मुहूर्त्त में शय्या का परित्याग करदें उसी समय दुःख की शान्ति के लिये जगदीश मधुसूदन का स्मरण करेंगे"। आचार्य्य वाग्भट ने भी लिखा है कि:—

ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्तिष्ठे, त्स्वस्थो रक्षार्थमायुषः ।
शरीरचिन्तां निर्वर्त्य' कृतशौचविधिस्ततः ॥

अर्थात्, स्वस्थ पुरुष अपनी आयु की रक्षा के लिये ब्राह्म मुहूर्त्त में (पहर रात बाकी रहे) उठे और शरीर चिन्ता से निवृत्त हो, शौच आदि

क्रियाओं से विधिपूर्वक निबट ले। यहां पर एक बात यह है कि जो लोग अपनी पुरानी आदत से लाचार हों, देर से उठने के आदि होगये हों, उनको चाहिये कि वे ब्राह्म मुहूर्त्त में उठने की आदत डालने के निमित्त रातको ९-१० बजे अवश्य (अपने समय पर) सोजायें व शयन करते समय भगवान का नाम स्मरण कर यह भावना (इच्छा) करलें कि "हमें प्रातः काल ४ बजे ब्राह्म मुहूर्त्त में उठना अवश्य है"। आप देखेंगे कि ईश्वरेच्छा से आप की निद्रा उस दिन ४ बजे ब्राह्म मुहूर्त्त में अवश्य भंग होजायगी, व आप अनुभव करेंगे कि कोई गुप्त दैवी शक्ति, आपके इच्छित तथा निश्चित समय पर आपकी निद्रा भंग कर गई। पाठक! मनोभाव साधारण वस्तु नहीं है, मन का प्रभाव शरीर पर कम नहीं पड़ता, इच्छा शक्ति दृढ़ होने से मनुष्य बहुत अधिक दिनों तक जीवित देखे गये हैं। आप परीक्षा कर सत्यासत्य का निर्णय करदेखें। यदि आप अपना भला चाहते हैं तथा नाना प्रकार के शारीरिक, मानसिक, तथा आर्थिक कष्टों से अपने को बचा कर आनन्दमय जीवन बिताना चाहते हैं तो, रात को भोजन करने के बाद ९-१० बजे तक सो कर सूर्योदय से पहले ही अपनी शय्या का परित्याग कर उठ बैठिये और शुभ दर्शन के पश्चात्, ईश उपासना में कुछ समय लगाइये, तत् पश्चात शौच आदि आवश्यकीय क्रियाओं से निबट कर स्वच्छ वायु सेवनार्थ खुले मैदान में निकल जाइये, और शुद्ध वायु में सात आठ बार खूब लम्बी सांस लीजिए। यही नहीं आप सदा लम्बी सांस लेने का अभ्यास कीजिये। लम्बी सांस स्वास्थ्य के लिए अमूल्य पदार्थ है। योग शास्त्र दीर्घ श्वास (जिसका नियमित और विस्तृत रूप प्राणायाम है) की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करता है। अस्तु सामर्थ्यानुसार शीतल मन्द सुगन्ध और स्वच्छ सुहावनी दक्षिणी वायु में प्रति दिन धीरे २ टहलने से शरीर सदा आरोग्य रहता है, शरीर में तेज व बल का संचार होता है। आयु विद्या बुद्धि और स्मरण शक्ति की वृद्धि होती है। शरीर में एक विशेष प्रकार की फुर्ती आ जाती है जिस से काम करने में मन लगता है। इस समय कठिन से कठिन विषय तुरन्त आसानी से समझ में आ जाता है। इस समय का याद किया पाठ विद्यार्थियों को सदा स्मरण रहता है। इस समय की सुहावनी दक्षिणी वायु अपनी विशेष शक्ति से रक्त को शुद्ध कर शरीर व चेहरे को कान्तिवान बना देती है। सचमुच इस अमृत बेला में प्रकृति माता हम सब प्राणियों के दीर्घ जीवन के लिये दक्षिणी वायु रूपी अमृत की वर्षा करती है, इस समय प्रकृति का कोना २ पवित्रता से भरा रहता है। पत्ते २ से आरोग्य-वर्धक हवा निकलती रहती है। इसी से शायद इस समय को लोग अमृत बेला कहा करते हैं। अंग्रेज़ी में भी एक कहावत प्रसिद्ध है—

"Early to bed and early to rise, makes a man healthy, wealthy and wise."

अर्थात् थोड़ी रात गये सोने से व थोड़ी

रात रहे उठने से मनुष्य स्वस्थ धनवान और बुद्धिमान हो जाता है। इसके विपरीत सूर्योदय तक सोते रहने से आरोग्यता अवश्य नष्ट हो जाती है, मन सदा सुस्त रहता है, आलस्य घेरे रहता है। शौच साफ़ नहीं होता, दिन भर अन्यमनस्कता घेरे रहती है। विद्या बुद्धि बल आयु और स्मरण-शक्ति का नाश हो जाता है। अल्पपित्त, रक्तपित्त, अग्नि मन्दता, कोष्ठबद्धता, नेत्रज्योतिहीनता आदि नाना प्रकार की उदर व्याधियां घेरे रहती हैं, इसलिए प्रसिद्ध नीतिकार चाणक्य बाबा ने क्या ही ठीक लिखा है—

कुचैलिनं दन्तमलोपधारिणम्,
वह्वाशिनं निष्ठुरभाषिणं च।
सूर्योदये चास्तमिते शयानं,
वि-मुञ्चति श्री यदि चक्रपाणिः॥

अर्थात् जो मनुष्य गन्दा वस्त्र पहनता है, जो अपने दांतों को साफ़ नहीं रखता, जो बहुत भोजन करता है, जो कड़वी बात बोलता है, और जो सूर्योदय व सूर्यास्त के समय सोया रहता है—वह व्यक्ति चाहे चक्रधारी विष्णु ही क्यों न हो, तो भी लक्ष्मी उसका साथ अवश्य छोड़ देती है। अब बस। अतः जो निरोग रहना चाहें वह ऊपर की पंक्तियों पर खूब ध्यान दें। ब्राह्म मुहूर्त में उठने की बान डालें। मैं एक बात लिखना भूल गया था वह यह है—कि सवेरे सोकर उठते ही यानी पलंग पर से उठने के साथ मनुष्य अपने दाहिने हाथ का अगला भाग देखे, या दर्पण में अपना मुख देखे, अथवा दही, घी, सरसों, बैल गौ, गोलोचन, और फूल आदि का दर्शन करे, इन का दर्शन करने से शुभ कार्य की प्राप्ति होती है, ऐसा भाव-प्रकाशकार भावमिश्र जी ने लिखा है। जिन लोगों को अधिक ज्ञान की इच्छा होवे रोज़ 'घी' में अपना मुँह अवश्य देखा करें, यह प्रातः काल का शुभ दर्शन है।

मल मूत्र विसर्जनः—

शौच जाने के लिये प्रातःकाल और सायंकाल का समय ही सब से श्रेष्ठ है। जिनका शौच का समय निश्चित नहीं है, उनको भी अभ्यास द्वारा धीरे २ यही समय निश्चित कर लेना चाहिए। सवेरे ही मलमूत्र और वायु आदि लगने यानी शौच से निपट लेने से, आंतों की गुड़गुड़ाहट, पेट का अफ़ारा व भारीपन आदि विकार दूर हो चित्त स्वस्थ हो जाता है, आयु बढ़ती है। इसलिए अति आवश्यकीय काम से निपटने में विलम्ब करना मौत को न्योता देना है।

शरीर के वेगों (चलता हुआ वीर्य, मल-मूत्र, अधोवायु, वमन, छींक, उद्गार, जृम्भा, भूख, प्यास, और निद्रा आदि) को रोकने से सिवाय हानि के कुछ लाभ नहीं है। इसमें विलम्ब करने से नाना प्रकार की बीमारियां उत्पन्न हो शरीर का श्राद्ध करना प्रारम्भ कर देती हैं। इसी लिए वैद्यक शास्त्र में लिखा है—'सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः।'

अर्थात् संसार के समस्त रोग केवल मात्र मलमूत्र के बिगड़ने से ही पैदा होते हैं। अतः

शरीर के वेगों को भूल कर भी—कभी रोकने की चेष्टा मत कीजिये, कारण कि यह शरीर की स्वाभाविक क्रिया हैं। इसके अतिरिक्त एक बात और भी है, प्रकृति का यह नियम भी है कि मनुष्य की इन्द्रियां मनुष्य शरीर को ठीक रखने के निमित्त समयानुसार सूर्योदय से पूर्व अपने मलों को द्रव रूप में निकाला करती हैं। इस लिये शास्त्रानुसार 'न वेगान् धारयेत् धीमान् जातान् मूत्रपुरीषयोः॥' बुद्धिमान पुरुष को चाहिए कि मल मूत्र आदि शारीरिक वेगों को न रोके। कारण कि मनुष्य शरीर का यह एक नैसर्गिक नियम है कि शरीर में नियम विरुद्ध थोड़ा परिवर्तन होते ही शरीर के शोषक यन्त्र अपनी शोषण क्रिया द्वारा शरीर में रात भर के संचित दूषित रस को पुनः अपने में शोषित करने की क्रिया जारी कर देते हैं इस लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने काम में लगने के पहले (सूर्योदय से प्रथम ही पूर्व रात्रि में संचित मल मूत्रादि दूषित पदार्थों को त्याग कर शरीर को सब प्रकारेण शुद्ध कर लेना चाहिए। आज कल बहुत लोग विशेषकर शिक्षित समाज के लोग लज्जा आलस्य प्रमादवश तथा काम में लगे रहने की अवस्था में, शरीर की स्वाभाविक क्रियाओं के शौच आदि वेगों के रोक लेने की व्यर्थ चेष्टा किया करते हैं। यह उनकी बड़ी भयानक भूल है। उन्हें सदा याद रखना चाहिए कि वास्तव में 'कोष्ठ बद्धता' ही अगणित रोगों की जननी है। वीर्य्य विकार, पाचन शक्ति तथा मानसिक शक्तियों पर कोष्ठ बद्धता बड़ा बुरा प्रभाव डालती है। किसी कवि ने क्या ही ठीक लिखा है—

शतं विहाय भोक्तव्यं, सहस्रं शौचमाचरेत्।
लक्षं त्यक्त्वा पिबेत्तोयं, किं वैद्यस्य प्रयोजनम्॥

अर्थ बिलकुल साफ़ है। आप सदा इसपर ध्यान रखकर चलें। मैं दावे के साथ कह रहा हूं, आप कभी बीमार न होंगे। शरीर के वेगों के रोकने से क्या २ हानियां होती हैं, इस के ऊपर मैं किसी दूसरे लेख में स्वतंत्र रूप से विचार करूँगा। आजकल अधिकांश लोगों को सदा दस्त क़ब्ज़ की शिकायत बनी रहती है जिन्हें लोगों को उचित है कि प्रातः काल बिस्तर से उठते ही आधसेर शुद्ध बासी पानी अपने नाक के दोनों नथनों को दबा कर पी जांय, व कुछ देर तक पुनः बिस्तर पर बायीं करवट लेट रहने के पश्चात् वायु सेवनार्थ मैदान में निकल जांय। प्रति दिन कम से कम ३-४ मील टहलने की आदत डालें व सदा नियमित व निश्चित समय पर शौच से निपटने का अभ्यास करते रहें। खूब फल खांय। फुर्ती की कसरत करें। बादी वस्तुओं से परहेज़ रक्खें। दिन रात में मिलाकर कमसे कम ३ सेर पानी (शुद्ध व ताज़ा) अवश्य पी जांय, प्रातः काल मुँह धोने के पश्चात् आधा सेर गरम पानी (सेंधा नमक डाल कर गर्म किया हुआ) चाय की तरह फूंक २ कर पीने से कोष्ठ बद्धता में आश्चर्यजनक लाभ दिखाई पड़ता है। यदि इतना करने पर भी कोष्ठ परिष्कार न हो व बिना दवा लिये काम चलता न दीख पड़े तो उन्हें चाहिए कि

निम्नलिखित दस्त की दवा खाकर अपना पेट अवश्य हलका कर लिया करें:—

शुद्ध सनायकी पत्ती का चूर्ण २ तो०, मुनक्का के बीज २ तो०, गुलकन्द गुलाब ताजा ४ तो०, सब को एक में मिलाकर रखें। आवश्यकता पड़ने पर समयानुसार १ तो० खाकर ऊपर से थोड़ा गाय का गर्म दूध अभाव में गर्म पानी पी जायें। मात्रा अपने स्वभावानुसार घटायी बढ़ायी जा सकती है। यह औषधि बहुत ही सहूलियत के साथ बिना किसी कष्ट के दो तीन खुलासा दस्त ला, पेट को शुद्ध कर देती है। किसी प्रकार के परहेज की आवश्यकता नहीं। मल मूत्र विसर्जन करते समय, अगर आप अपने दांतों को दृढ़ता पूर्वक दबालें, तो आप निश्चय विश्वास रखें कि आप को दन्त रोग कभी होगा ही नहीं। आप ऐसा नियम बनालें इसके अनुसार काम कर इसके आश्चर्य जनक लाभ को देखें। शौच के समय बोलना, थूकना और जोर २ से श्वास लेना हानिकर है।

दन्तधावनः

वास्तव में तन्दुरुस्ती ठीक रखने के लिए सदा दांतोंको साफ़ करते रहना बहुत ही ज़रूरी है। जो लोग सुन्दर स्वास्थ्य के इच्छुक हैं, उन्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि दांतों पर मैल न बैठने पावे। दांतों की गन्दगी से पाचन शक्ति बिगड़ जाती है, कोष्ठबद्धता आघेरती है और आंखों की ज्योति और सुन्दरता का नाश हो जाता है। सिवाय इसके एक और भी बड़ी भारी बुराई यह पैदा होती है कि दांतों पर एक प्रकार की प्रकृति प्रदत्त पालिश होती है जो नाना प्रकार के रोगों से शरीर की रक्षा करती है। दांतों पर मैल जम जाने से तथा खाद्य पदार्थ के कुछ अंश (आप की असावधानी से) दांतों में अटक कर रह जाते हैं इस के सड़ने से, एक प्रकार का ज़हर पैदा होता है। यह ज़हर, दांतों के ऊपरी कोट (Enamel) को काटकर भीतर पहुँचता है व पायरिया (दन्तपूय दांत से पीब व खून निकलना) तथा केरिस (दांत में गढ़ा होना, या कीड़ा लगना) आदि अनेक प्रकार के दुखजनक दन्त व्याधियों की उत्पत्ति का कारण बन स्वास्थ्य का नाश करता है। यह जहर दांत ही को नहीं वरन् आंख आदि शरीर के और अंगों को भी विशेष हानि पहुँचाता है, क्योंकि यह मुंह की राल तथा थूक (Saliva) और भोज्य पदार्थों के साथ मिल पेट में पहुँच अन्न पचाने वाली शक्ति को कम कर देता है। इसका फल यह होता है कि पेट बिगड़ कर शरीर रोगी हो जाता है। अब तक के विवेचन से आपने यह बात भली भांति समझ ली होगी कि हमारा स्वास्थ्य और सौन्दर्य—बहुत कुछ दांतों की स्वच्छता पर निर्भर करता है, इस लिये प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह अपना दांत सदा साफ़ रखे। आज कल हमारे देश के अधिकांश लोग—विशेषकर पश्चिमी शिक्षा प्राप्त नवयुवक अपने देश की इस प्राचीन कालीन परम लाभदायक परिपाटी को छोड़ते जा रहे हैं, वे या तो अपना दांत ही गन्दा रखेंगे या विदेश में बने टूथपेस्ट व ब्रश का प्रयोग कर दांतों को खराब

कर डालेंगे, परन्तु अफ़सोस ! अपने यहां के उन मुफ्त व बिना परिश्रम के प्राप्त होने वाली दांतुनों का प्रयोग नहीं करेंगे, जिनके प्रयोग से दांत दृढ़ व साफ़ होने के अतिरिक्त दंत रोग भी शमन हो जाते हैं।

प्रत्येक स्त्री पुरुष को चाहिए कि वह नित्य अपने निर्दिष्ट समय पर नीम, बबूल, जामुन, खैर करंज, महुआ और बघरेंड़ा आदि में से जिस प्रकार की दांतुन मिल सके, उसे दांतों से धीरे २ कुचल कर कूची बना, एक २ दांतको नीचे ऊपर बाहर भीतर धीरे २ कुछ देर तक रगड़े। यदि पीपल, सोंठ, मिर्च और सैंधव लवण के चूर्ण में शहद या शुद्ध सरसों का तैल मिला, इस मंजन से दांतों को दांतुन की कूची से आहिस्ते २ मल कर जीभ साफ करने के पश्चात् स्वच्छ पानी से खूब कुल्ला कर लिया जाय व शीतल जल के छपाके या छींटे मार कर आंखों को धोया जाय तो इस से मुंह हलका हो जाता है। मुंह का विरसता दूर होती है। चित्त प्रसन्न रहता है। रुचि उत्पन्न होती है। नेत्रों को विशेष लाभ पहुँचता है। आंखों में एक विशेष प्रकार की तरी आ जाती है। आंखों की ज्योति पुष्ट होती है। मीठी व खट्टी वस्तुएँ दांतों को विशेष हानि पहुँचाया करती हैं, क्योंकि इन के व्यवहार से दांतों में एक विशेष प्रकार की खटाई (Acid) बहुत जल्द पैदा हो जाती है जो दांत को काट देती है। बहुत गर्म व सर्द वस्तुएँ भी दांतों को हानि पहुँचाया करती हैं। गर्म दूध या गर्म चाय पीकर तत्काल ठंडे पानी से मुंह नहीं धोना चाहिए अन्यथा दांतको जड़ कमज़ोर पड़ जाती है। जो अपना दांत, सदा दृढ़ व दन्त रोग से मुक्त रखना चाहें, वे दांत साफ करने के सिवाय प्रति सप्ताह (सप्ताह में एक बार) शुद्ध तिल तैल का कुल्ला अवश्य करें। यदि यह न हो सके तो रोज़ रात को सोते समय, शुद्ध तिल तैल या वैद्यक शास्त्र का प्रसिद्ध दंतरोग विनाशक "इरि-मैदादि तैल" दांत पर, अपनी अंगुलियों से अवश्य मल लिया करें। जिन्हें दन्त पूय-पायरिया का मर्ज हो, उन्हें चाहिए कि, वे प्रतिदिन सुबह शाम एक २ घण्टे तक ताज़ा बबूल या गूलर की दांतुन को धीरे २ चबावे व उसके निकले स्वरस से दांतों को भीगने दें, पश्चात् नीचे लिखे दन्त मंजन से दांतों को मले यदि पायरिया के रोगी कुछ दिन धैर्य धर इस प्रयोग को सतत प्रयोग करें तो मुझे विश्वास है कि उनका पिण्ड इस रोग से अवश्य छूट जायगा। रूमी मस्तगी, माजूफल और बकुल (मौलश्री) छाल। तीनों को समान भाग लेकर कूट पीस बहुत सूक्ष्म कपड़छन चूर्ण बनालें, यही मंजन है। पान,सुर्ती, ज़र्दा तमाखू आदि वस्तुएँ दांतों को विशेष हानि पहुँचाया करती हैं, इसलिये इनका पूर्ण बहिष्कार होना चाहिए। इन में से सब या अधिकांश दन्त रोग पैदा करने वाली हैं।

(शेष अगले अङ्क में)

फुफ्फुस (LUNGS)

(ले०-प्रो० पं० भगवद्देव शर्म्मा आयुर्वेदाचार्यः)
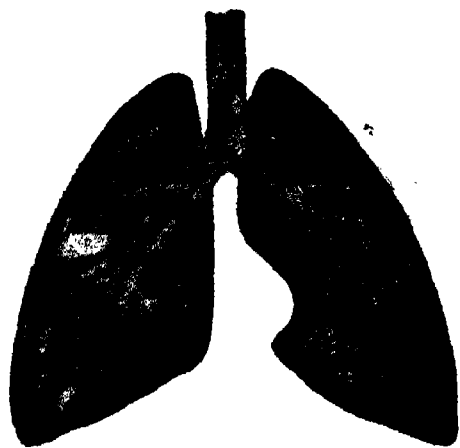
प्रत्येक श्वासनली की शाखा फुफ्फुसमें जाकर बहुत छोटे २ अंशों में विभक्त हुई है इन्हीं को वायुकोष या वायु मन्दिर भी कहते हैं। प्रत्येक वायुकोष को एक २ पृथक २ छोटे २ फेफड़े के नामसे भी पुकार सकते हैं। इसका कारण यह है कि प्रत्येक वायुकोष में ही भिन्न २ शिरा धमनी स्नायु, मांसादि विद्यमान हैं, और प्रत्येक वायु कोष पृथक् रूपसे रोगाक्रान्त हो सकता है और श्वास नली की शाखा और भी क्षुद्र अंशों में विभक्त हुई है। इन्हीं को रसवाहिका नली (Alveolar Ducts) कहते हैं, यही रसवाहिका नली के नाम से फैलगई है और प्रत्येक रसवाहिका शाखा कितने ही वायु कोष द्वारा आवृत और ठीक अंगूर के अलग २ गुच्छे के समान देखी जाती है। रस वाहिका नली को डंठल और वायु कोषों को अंगूर के गुच्छे कहना अनुचित न होगा। वायु कोषकी भीतोंमें समस्त शिरायें अत्यन्त सूक्ष्म २ अंशों में विभक्त हैं। इन्हीं सब सूक्ष्म शिराओं के शोणित (रक्त) और शुद्ध वायु का व्यवधान (अन्तर) बहुत ही थोड़ा सा है। इस थोड़े से व्यवधान (अन्तर) में होकर वायु और रक्त के मध्य में वाष्प का आदान प्रदान होता रहता है। हमारा विश्वास है कि इसी कारण दूषित रक्त विशुद्ध रुधिर में बदल जाता है। इस तरह पर दूषित रक्त वायु में से ऑक्सिजन ग्रहण करके कार्बोनिक एसिड गेस प्रदान करता रहता है अर्थात् प्रति दिन शारीरिक व्यापार के कारण हमारे शरीर की मलों के संघर्ष से जो ऊष्मा जनित वाष्प पैदा होती है, वह निश्वास के रूप में शरीर से बाहर निकलती है और उसके बदले हम शुद्ध वायु में से ऑक्सिजन या जीवन शक्ति प्राप्त करते रहते हैं।

इस प्रकार क्रमसे वक्षदेश (छाती) का फैलना व सिकुड़ना स्नायु यन्त्रद्वारा हुआ करता है। इस स्नायु यन्त्र का प्रधान कार्य-क्षेत्र मस्तक के अन्दर की लम्बी कोठरी है। इसी प्रधान कार्य-क्षेत्र को ही निश्वास-प्रश्वासक प्रधान केन्द्र कहा जाता है। यदि यह मस्तिष्क केन्द्र ध्वस्त हो जाये तो निश्वास प्रश्वास पेशी को संकोचन और प्रसारण की आज्ञा कौन देवे और अन्त में श्वास का आना जाना भी बन्द हो जावे क्यों कि सब इन्द्रियों के केन्द्र मस्तिष्क में ही विद्यमान हैं और मस्तिष्क के द्वारा ही सब इन्द्रियां मन के आश्रय

मे अपने अपने विषयों को ग्रहण करती हैं। महर्षि चरक का कथन है कि—

प्राणाः प्राणभृतां यत्राश्रिताः सर्वेन्द्रियाणि च।
यदुत्तमाङ्ग मङ्गानां शिरस्तदभि धीयते॥

अर्थात् जिस अंगमें प्राणधारियों के प्राण और सब ज्ञानेन्द्रियां आश्रित हैं और जो सब शारीरिक अंगों में उत्तम श्रेणी है उसे शिर कहते हैं। अस्वाभाविक उत्तेजना से इन सब मांस पेशियों की कार्य शीलता बढ़ जाती है परन्तु एक बात बड़े आश्चर्य की यह है कि यदि हम अपनी इच्छा से गहरा या ज़ोर से श्वास लें या छोड़ें तो हम थोड़ी सी देर में घबड़ा कर थक जाते हैं किन्तु शारीरिक परिश्रम करने के समय हम लोग अधिक समय के श्वास प्रश्वास से भी न तो घबड़ाते हैं और न थकते हैं। इस का कारण यही है कि हमारे स्वेच्छा कृत निश्वास प्रश्वास से हमारा मस्तिष्क जल्दी दुर्बल हो जाता है किन्तु शारीरिक परिश्रम से मस्तिष्क दुर्बल नहीं होता। मस्तिष्क की दुर्बलता ही से हमें दुर्बलता का अनुभव होता है। हम लोग श्वास क्रिया पर अपनी मनोवृत्तियों का प्रभाव देखते हैं। जैसे भय से या आश्चर्य से हांप उठना, क्रोध में श्वास क्रिया वेगवती होजाती है मनोवृत्ति जनित उत्तेजना के अतिरिक्त शरीर के दूसरे स्थानों की भी उत्तेजना से श्वास वेगवान् व नाड़ी की गती चञ्चल होजाती है। शिशु जन्म ग्रहण करने पर शरीर में शीतलवायु स्पर्श करते ही पहला श्वास लेता है। यही कारण है कि जो बच्चा जन्म से ही रुदन नहीं करता अथवा श्वास लेना आरम्भ नहीं करता तो उसे शीतल या गरम जल से स्नान कराया जाता है। बालक तो बालक अनेक बार युवा शरीर पर भी शीतल जल पड़ने से श्वास ज़ोर से चलने लगता है इत्यादि।

(क्रमशः)

रोज़ी कमाने के कुछ मुजर्रिब नुसखे

ब्ल्यूब्लैक स्याही बनाना:—

गैलिक एसिड् १ औंस, टैनिक एसिड् ३ औंस, गमएरेबिक १ ड्राम, (Gum arabic) कारबोलिक एसिड् १ ड्राम, सलफेट औफ आयरन २ औंस, बैगाई क्लोराइड सोल्यूशन I. R. C. १ औंस, इन्डि गोटिन १॥ औंस जल ७॥ पिन्टस (१ पाइन्ट=१० छटांक)

विधि बनाने की—पहले ६ पाइन्ट गरम जल में अच्छी तरह गैलिक एसिड्, टैनिक एसिड् को मिलाले। बाकी १॥ पाइन्ट ठंडे जल में और दवाइयों को मिलाले, फिर दोनों सोल्यूशनों को मिलादें, और १४ दिन तक अलग रख कर फिल्टर होने दें, बाद में एक २ औंस की शीशियां भर कर सुन्दर लेबिल लगा कर पैक करके बेचें।

सस्ता और अच्छा साबुन बनाने की तरकीब (बिना पकाये)

नारियल का तेल २॥ मन, कास्टिक सोडा

१६॥ सेर, जल ३३॥ सेर, सिलिकेट औफ़ सोडा २५ सेर, जल २५ सेर।

विधिः—पहले ३३॥ सेर जल में कास्टिक सोडेको हल करलें इस मिक्सचरको अलग रखदें। फिर सिलिकेट औफ़ सोडा को २५ सेर जल में हल करलें, इसको भी अलग रखदें, पहले मिक्सचर को नं० २ के मिक्सचर में थोड़ा २ डालते जावें और शीशियों की डंडी हिलाते जायें, जब दोनों मिलकर एक हो जावें उस मिक्श्चर को नारियल के तेल में थोड़ा २ डाल कर मिलाते जावें जब तमाम खतम हो जावे हिलाना बन्द करदें क्योंकि ज़्यादा घोटने से साबुन के ज़र्रे अलग २ हो जाते हैं, फिर इसमें अपनी मर्ज़ी के मुताबिक कोई रंग और खुशबू मिला सकते हैं, जो कि खासतौर से साबुनों के लिए ही बिकते हैं, फिर इस लेही को चौकोर सांचों में ढाल दें फिर रात भर रख कर खुश्क करके सांचों में से निकाल कर बेचो।

एक्ज़िमा लाजन का मरहम—

लैनोलीन २०० औंस, पैट्रोलेटम २०० औंस बीज़ वैक्स ५० औंस, फिनौल ५ औंस, कैम्फर १० औंस, यूकिलपटिस औयल ५० औंस, सैल-सिलिक एसिड १० औंस और इच्छानुसार कोई खुशबू मिला कर मरहम बनालें सुबह शाम मसललें।

सिर के गंज के लिए अकसीर दवा—

मुर्दासंग, तूतिया, सुहागा, गन्धक, माजूफल पोस्त अनार, हिना के पत्ते, हल्दी, कमीला, हर एक ६-६ माशे, सबको पीस कर सरसों के तेल ३ छटांक में पकाकर लगावे। परन्तु पहले गंज की फुन्सियों को साकरहाइड्रो-जिराइ पर क्लोराइड, यह पारे का मुरक्कब तरल पदार्थ है इससे पहले धो कर फिर ऊपर का तेल लगावें।

हैज़ के तकलीफ से आने में अकसीर है—

जब मासिक धर्म के दर्द के साथ थोड़ा २ ज्वर भी हो लाई कर अमोनिया एसिटेटिस १ ड्राम, स्पिरटईथरिस नैट्रोसाई २० बूँद, टिंचर हायोस्सीमस १५ बूँद, सोडियम सैलिसिलास १५ ग्रेन, पोटेसियम ब्रोमाइड १० ग्रेन, मैगनेशियम सल्फास १ ड्राम (३॥ माशे) कर्पूर जल (एक्वाकैम्फर) १ औंस, ऐसी १-१ मात्रा ४-५ बार हरेक चार घन्टे बाद पिलावें। और इस रोग में अमरीकन साम्नारिमो कैमिकल कम्पनी की—

एलि टैरिस कार्डियल नाम की दवाई बहुत मुफ़ीद साबित हुई है।

फ्रूटसाल्ट अर्थात् विरेचक चूर्ण जो कि क़ब्ज़ के लिये अकसीर है—

टारटरिकएसिड	२ भाग
सोडियम बाई कार्बोनेट	२ भाग
मैगनेशियम सल्फेट	१ भाग
पोटासियमबाई टारटरेट	२ भाग
मैगनेशियम साईट्रेट	२ भाग
सफ़ेद चीनी	४ भाग

इन सबको अलग २ चूर्ण करके फिर सबको

इकट्ठा मिला कर रखलो। इसकी १ तोले की मात्रा गरम जल से लेवें।

सब तरह के दर्द के लिये अक्सीर मर्हम

वैसलीन	४४ भाग
मैथाइल सैलिसिलेट	१० ,,
यूकेलिप्टिस औयल	२ ,,
वूल फैट (चर्बी)	२० ,,
मैन्थौल	२ ,,

सब को अच्छी तरह से मिलाकर चौड़े मुंह की शीशी में भरदो दर्द के वक्त धीरे २ मलो।

रूमाल की सुगंध—

पैटिट ग्रेन औयल (Petit Grain Oil)	160 Gms.
स्वीट औरेंज औयल (Sweet Orange Oil)	160 Gms.
रोज़ जरेनियम औयल (Rose Geranium oil)	140 Gms.
जैसमिन (Jesmine)	130 Gms.
लवेन्डर मोन्ट ब्लेंक (Lavender Mont blanc)	120 Gms.
,, औयल (Lavender Oil ordinary)	80 Gms.
नेरोली (Naroli)	80 Gms.
रोज़ बल्ग्रेन (Rose Bulgrain)	50 ,,
थाइम औयल (Thyme Oil)	25 ,,
पालमारोसा औयल (Palmarosa Oil)	20 Gms
क्लोव औयल (Clove Oil)	20 ,,
कासिया औयल (Cassia Oil)	20 ,,
मुश्क अम्बरीट (Musk ambrette)	20 ,,

हेयर क्रीम

लाइम वाटर (चूने का पानी)	पौंड २
व्हाइट वैक्स (सफेद मोम)	औंस १
अलमोण्ड औयल (बादाम रोगन)	पौंड २
ग्लीसरीन	औंस २
औइल औफ वर्बेना	ड्राम १
औइल औफ लैमन	,, ६
औइल औफ बर्गमौट	,, ३

तमाम किस्म के तेल आपस में मिलालो। कुछ औंस तेल में सफेद मोम को भली भांति पिघला लो, बाद में बाकी पहले ही गरम किए हुए तेलको भी मिला दो। ग्लिस्सरीन को लाइम वाटर के साथ मिलालो और तमाम को धीरे २ करके तैलों के मिश्रण के साथ मिलादो और साथ में आहिस्ता २ बराबर हिलाते भी जाओ। थोड़ी देर खुश्क होने के लिए रखदो बाद में सुन्दर पेचदार ढक्कन वाली शीशियों में भर कर सुन्दर लेबिल लगा कर पैक करलो।

मिल्क पाउडर — (दूध का चूर्ण)

कार्बोनेट आफ सोडा—आधा ड्राम

जल—औंस १ या २॥ तोले

इन दोनों को आपस में मिलालो और ताज़ा दूध १ क्वार्टर (१४ सेर) बूरा १ पौंड (आध सेर) इन सब को मिला कर खूब पका कर गाढ़ा करलें, जब यह शर्बत की तरह गाढ़ा हो जाय फिर उतार कर चौड़े मुंह के चीनी के बर्तन में डालदें, ठंडा होने पर वह जम जायगा, पपड़ी सी उतार कर चूर्ण कर लें। इसमें से थोड़ा सा लेकर पानी में घोल कर सफर के वक्त पीने से भूख प्यास व थकावट सब दूर हो जाती है।

विचित्र वार्तायें

पुरुष बन्दर होता जा रहा है !

कमर झुक गई, सिर बढ़ गया, ऊँचाई १ फुट कम हो गई

डाक्टरों से सहायता की अपील

दक्षिण कैलिफोर्निया के अजुन्ना नामक नगर में जार्ज बोकलेट नामक एक ४६ वर्ष के व्यक्ति ने अपने आपको शनैः शनैः बन्दर होते जाने पर डाक्टरों से सहायता की अपील की है।

उसने बतलाया है कि उसका सिर पहले से तिगुना होता जारहा है। उसकी कमर झुक गई है। उसकी ऊँचाई भी १ फुट से अधिक कम हो गई है। सारे शरीर पर बाल उगते आ रहे हैं और कभी २ उसकी नसों में जोर का दर्द होता है।

× × ×

३० बच्चों का बाप

१२५ वर्ष की अवस्था में भी बिलकुल स्वस्थ है

हिरात के गांव में एक ऐसे व्यक्ति का पता चला है जिसने अभी अपनी १२५ वें वर्ष गांठ मनाई है।

इस व्यक्ति का नाम रसूकखां है। उसने ३ बार शादी की और अब वह ३० बच्चों का बाप है। उसका स्वास्थ बहुत अच्छा है। आखों की ज्योति बिलकुल ठीक है और एक नौजवान आदमी की तरह दौड़ सकता है।

५ जून १९३५ नवयुग

× × ×

संसार का सब से बूढ़ा चीनी पुरुष

१८० बच्चों का पिता और १४ स्त्रियों का पति

२५५ साल की उमर में भी पेन्शन पा रहा है।

संसार में सब से अधिक आयु वाला मनुष्य चीन में है। शगबुआन नामक गांव के चींगयुन नाम के सज्जन की उम्र इस समय २५५ वर्ष की है। हाल ही में उनकी २५६ वीं वर्ष गांठ मनाई गई है। वे अब तक मजबूत हैं, बिना चश्मा लगाये ही किताबें पढ़ लेते हैं, आश्चर्य की बात यह है कि इस समय भी दिन में कई मील पैदल चल सकते हैं। सौ वर्ष की अवस्था तक तो आप जंगली जड़ी-बूटियां भी बेचते रहे हैं। अब तक आपने १४ स्त्रियों से विवाह किया है। आपको १८० बच्चों का पिता होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस संख्या में से इस समय भी कुछ जीवित हैं। आपके जीवन की आवश्यकताएं बहुत थोड़ी हैं। आप सदा प्रसन्न रहते हैं। अभी आप पेन्शन पाते हैं।

× × ×

मरहम बवासीर

इसके लगाने से मस्से और गुदा नरम रहते हैं, दस्त आने समय तकलीफ नहीं होती, मस्सों और गुदा की सोजिश व जलन और फूलापन जातारहता है। प्रति शीशी ॥)

अग्नि सन्दीपनी वटिका

(अजीर्ण का अनुभूत इलाज)

अजीर्ण रोग देखने में तो एक साधारण सा मालूम होता है, परन्तु वास्तव में यह सब रोगों की जड़ है खाने पीने में असावधानी कर देने से अक्सर बदहज़मी हो जाती है। जिससे कि मुंह का मज़ा खराब होना, खाने की तरफ़ रुचि न होना, छाती में जलन, खट्टी डकारें, भोजन करते ही दस्त की हाजत होना, पेट में गड़गड़ाहट का होना, जी मिचलाना, अफारा, दिन प्रति दिन कमज़ोरी का बढ़ते जाना. इन सब हालतों में हमारी अग्नि सन्दीपन वटिका निहायत ही अक्सीर है। चन्द रोज के इस्तेमाल से कुव्वत हाज़मा बढ़ कर गिज़ा अच्छी तरह तहलील होने लगती है और आहार रस बन कर शरीर दिन प्रति दिन मोटा ताज़ा और बलवान हो जाता है। मूल्य ४८ गोली १॥)

अमृत कर्पूर

(हैजे की मुजर्रबउल मुजर्रब दवा)

यह हमारे दवाखाने की तैयार की हुई जादू असर दवा है, जो क़रीब २ कुल घरेलू बीमारियों का जो अक्सर बूढ़े, बच्चों और जवानों को होती रहती हैं पूरा इलाज है। प्रायः जो बीमारियाँ अचानक आक्रमण कर देती हैं—जैसे सब प्रकार के पेट के दर्द, कै, हैज़ा, अफारा पेचिश दौरा, जुकाम, खाँसी, नज़ला वगैरह २ इसके इस्तेमाल से फौरन ही दूर हो जाते हैं। यह वह अमृत समान गुणकारी दवा है जिसकी एक बिन्दु गले से उतरते ही फौरन जादू का असर दिखाती है। खासकर वबाई (संक्रामक) रोग में निहायत मुफ़ीद है। ताऊन (प्लेग) हैज़ा, मलेरिया बुखार के ज़माने में ज़रूर इस्तेमाल करना चाहिये। यह वह दवा है जिसकी हर मनुष्य को घर में और मुसाफिर को अपने साथ रखने की बड़ी ज़रूरत है। यह दवा खास कर दर्द-पसली दर्द-सीना, दर्द दांत व दाढ़, बदहज़मी, तिल्ली, वमन, हैज़ा, पेचिश, मरोड़ा, सिर में चक्कर, अम्लपित्त इत्यादि में निहायत मुफ़ीद है। मूल्य ॥) शीशी, १२ शीशी ५)

अति स्वादिष्ट चूर्ण की गोलियां

ये गोलियां बहुत ही ख़ुशमज़ा हैं। खाने के बाद १-२ गोली अवश्य ही खानी चाहिये खाना हज़म होकर एक दो डकार आकर मन प्रसन्न हो जाता है। बदहज़मी, कै, जी मिचलाना, हैज़ा, (विसूचिका) आदि के लिए निहायत अक्सीर है। मूल्य फी० शीशी ॥)

वृहत् आयुर्वेदीय औषध भण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार देहली।

REGD. NO L. 2701.

वैद्यराज पं० महावीरप्रसादजी के लिये चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, कूचा पातीराम, देहली में छपा।

JIWANSU

जीवन-सुधा

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज ।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य ।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये ।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी ।।

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः । पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ।।

वर्ष ५ } श्रावण, वीरनिर्वाण सं० २४६१, वि० सं० १९९२, अगस्त सन् १९३५ } अङ्क ८

स्वास्थ्य सूक्त

सावन साग भादों मही,
क्वार करेला कातक दही ।
अगहन ज़ीरा पूसे धना,
माघे मिश्री फाग चना ।।
चैते गुड़ वैशाखे तैल,
ज्येठे पन्त आषाढ़े बेल ।
इन बारह से बचे जो भाई,
ता घर वैद न सुपने आई ।।

"शरीर पर अधिक भोजन का प्रभाव"

(लेखक—कविराज क्षेत्रपालगुप्त ग्रेजुएट ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज हरिद्वार)

बहुत से मनुष्यों का विश्वास है कि जितना स्निग्ध तथा गुरु भोजन अधिक मात्रा में खाया जायेगा उतना ही स्वास्थ्य उत्तम होता है परन्तु वास्तव में यह धोखा है। अधिक भोजी पुरुष भले ही स्थूलकाय तथा मेदस्वी हो जायें परन्तु उस को तनिक सी भी बीमारी जिसको अन्य पुरुष ध्यान भी न दें पहाड़ सी दिखाई पड़ती है और कुछ समय उपरांत वह स्वयं अपनी इस स्थूलता की निन्दा करता हुआ दीख पड़ता है। जितनी सहसा मृत्यु होती हैं उनमें से अधिक संख्या ऐसे ही रोगियों की होती है। मुझे एक अंग्रेज डाक्टर की इसी विषय पर लिखी हुई पुस्तक की कुछ पंक्तियां बहुत सुन्दर मालूम होती हैं जिन को मैं सम्पूर्ण में नीचे उद्धृत करता हूँ क्योंकि वह संक्षेप में ही साफ तौर से बतलाती हैं कि किस प्रकार हमारी बहुत सी बहुमूल्य अवस्थाएँ हमारे ही हाथों व्यर्थ में छोटी करदी जाती हैं "We are all familiar with the lines seen so often in the morning paper. 'Mr. Prominent citizen, apparently in best of health sat down to read the evening paper after a hearty dinner, and was found dead in his chair.' After this a list of his virtues follows, and never a thought printed about the cause of death which will point a lesson to be learned. Is there any mystery about such a death.? Better for the coming generations if the lines read thus: 'Mr. Over-fed stuffed himself to death last night and cheated himself, his family and his community of what might have been a useful citizen." (अर्थात्) हम प्रायः सवेरे समाचार पत्रों में पढ़ते हैं कि

नगरके एक प्रतिष्ठित व्यक्ति आनन्दसे भोजन करने के बाद शाम का समाचारपत्र पढ़ने के लिए बैठे और कुर्सी में मृत पाये गये। इसके उपरांत उन के गुणों की चर्चा होती है परन्तु कभी भी किसी का ध्यान मृत्यु के कारण की ओर नहीं जाता ताकि दूसरे व्यक्तियों को भी शिक्षा मिल सके। क्या ऐसी मृत्यु किसी गुप्त कारण से होती है? अच्छा हो कि यदि इन पंक्तियों का अर्थ इस प्रकार समझा जावे कि:—महाशय अधिक भोजी ने पिछली रात को नाक तक ठूंस कर भोजन खाया और मृत्यु को प्राप्त हुए। इस प्रकार उन्हों ने अपने आप को अपने सम्बन्धियों तथा अपनी जाति को धोखा दिया।

सदैव ही अधिक भोजन खाने की आदत मद्य पीने से अधिक घातक है अपेक्षतया अधिक मृत्यु इससे होती हैं, क्योंकि मद्य की हानियां तो सब जानते हैं परन्तु अधिक भोजन की हानियों से अल्प संख्यक मनुष्य ही परिचित हैं। इस में इतनी धीरे २ हानि होती है कि मनुष्य को उस का कुछ भी पता नहीं चलता और कुछ समय उपरांत जब कि शरीर को काफ़ी क्षति पहुँच चुकी होती है क्षतिके लक्षण आरंभ होते हैं। अधिक भक्षण से शरीर को इतनी अधिक हानि पहुँचती है कि शायद उतनी विष से भी न पहुँचे। नियमित मात्रा में भोजन अवश्य ही शरीर को अमृत के गुण पहुँचाता है परन्तु अधिक मात्रा में खाने से वह घातक परिणाम दिखाए बगैर नहीं रहता।

Metabolism(पोषण) पर प्रभाव

प्रकृति ने शरीर में ऐसा प्रबन्ध कर रखा है कि हर समय थोड़ी बहुत शक्ति (energy) को अपने अन्दर संकट के समय के लिये जमा रखता है। निरन्तर अधिक भोजन करने के कारण जब वह शक्ति के माल गोदाम यकृत् (liver) आदि भर जाते हैं और भोजन उसी प्रकार अधिक खाया जाता है तो वसा अधिक बढ़ जाती है और वह उदर कला में जमा होती रहती है कुछ रक्त भार भी बढ़ जाता है। कुछ समय उपरांत हृदयस्थ मांस पेशियों में भी वसा जम जाती है जिससे शक्ति क्षीण होजाती है। इसी कारण से वृक्क भी अपना कार्य भली प्रकार संपादन नहीं कर पाते और शरीर से भिन्न भिन्न प्रकार के विष निकालने में असमर्थ होजाते हैं जिससे रक्त में यूरिया, यूरिक एसिड, ऐसीटोन तथा अन्य विष रुक जाते हैं।

पाचन संस्थान पर प्रभाव

अधिक भोजने के प्रभाव से सर्व प्रथम पाचन संस्थान ही प्रभावित होता है। मनुष्यों को इस बात का विश्वास दिलाना ज़रा कठिन है कि एक बार भी अधिक किये हुए भोजन के पाचन के लिये कितनी अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है और जब हमेशा ही अधिक भोजन किया जाता है तो कुछ दिनों तक पाचन में भाग लेने वाले अंग कमी को पूरा करने की चेष्टा करते हैं परन्तु अन्त में थक कर बैठ जाते हैं और उनका रचनात्मक क्षय (atrophy) होने लगता है और नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं

यथा अतिसार, अजीर्ण, संग्रहणी, कोष्ठ-बद्धता आदि आदि।

रक्तसंस्थान पर प्रभाव

अधिक भक्षण का प्रभाव रक्त संस्थान पर पाचन संस्थान से भी अधिक पड़ता है। हृदय का स्थान वसा से भर जाता है तथा उसकीकला में भी वसा भर जाती है तो इसकी मांस पेशियों के कार्य में भी बाधा पड़ने लगती है। इस दशा को (Fatty heart) कहते हैं जो वास्तव में बहुत भयानक है। इस के अतिरिक्त अधिक भोजी पुरुषों की धमनियां (arteries) सख्त हो जाती हैं, और उनकी स्थितिस्थापकता नष्ट हो जाती है, उनमें एक (Calcarious) पदार्थ जम जाता है जिसके कारण रक्त भार (Blood pressure) बढ़ जाता है। इस प्रकार हृदय का कार्य और भी बढ़ जाता है और वह थोड़ा सा सहसा परिश्रम पड़ने पर फेल हो सकता है।

वात संस्थान पर प्रभाव

यह पहले ही बताया जाचुका है कि एक बार के भी अधिक खाये हुए भोजन को पचाने के लिये भी कितनी अधिक शक्ति (energy) की आवश्यकता होती है तो जब हमेशा ही अधिक भोजन खाया जाता है तो पाचन अंगों की शक्ति क्षीण होजाती है और वह अन्य अंगोंसे energy (शक्ति) चुराने लगते हैं जिससे अन्य अंग भी खाली (exhaust) होजाते हैं जिसके कारण शरीर में थकावट तथा दुर्बलता होने लगती है, यद्यपि रोगी भोजन उसी प्रकार किये जाता है। चन्द बारका अधिक किया हुआ भोजन शरीरको कठिन शारीरिक परिश्रमकी अपेक्षा शीघ्रतर शक्तिहीन (exhaust) कर देता है। रोगी nervous होजाता है, स्वभाव चिड़चिड़ा होजाता है, दिमाग दुर्बल तथा मानसिक शक्तियों का ह्रास होने लगता है।

अन्य अंगों पर प्रभाव

अधिक भक्षण का प्रभाव त्यागने वाले अंगों (Excreatary organs) पर भी बहुत अधिक पड़ता है। शरीर के विषों को निकालने में वृक्क (Kidney) का प्रथम स्थान है। रक्तमें विष जाते ही रहते हैं और हृदय पहिलेही दुर्बल हो चुका होता है, इस कारण से वृक्क भली प्रकार विषों को बाहर नहीं निकाल पाते जिससे नाना प्रकार के वृक्क रोग होने की सम्भावना रहती है। ऐसे पुरुषों को Albuminuria तथा डायबटीज़ की शिकायत अक्सर रहा करती है। त्वचा से भी विष बहुत कम निकलते हैं और वह शुष्क रहती है। Sexual Power का बहुत कुछ ह्रास हो जाता है।

निद्रा और अंगों का पोषण

यह निश्चय है कि हमारा दिन का किया हुआ भोजन दिन ही में अंगो का पोषण करने के योग्य नहीं होता है बल्कि जब हम रात्री में सोते हैं उस समय शरीर की रसायनशाला में भिन्न भिन्न अंगो के लिये पोषक पदार्थ बनाये जाते हैं और उसी समय अंगो को पहुँचाये जाते हैं। यही कारण है कि जो लोग रात्रि में अधिक भोजन करके सोते हैं वह रात भर चैन से नहीं सो पाते। रात्रि में अंगो को पोषण पहुँचाने के कारण

रक्त भार कुछ बढ़ जाता है और यह पहले भी बताया जा चुका है कि अधिक भोजी पुरुष की धमनियां कुछ सख्त होजाती हैं इस लिये रक्त भार हमेशा ही बढ़ा रहता है, इस दशा में यदि धमनियों पर ज़रा सा भी अधिक दबाव पड़ जाय तो मस्तिष्क की छोटी धमनियां (Capillaries) फट जाती हैं। इसी कारणसे बहुत से मनुष्यों को निद्रा में अक्सर मृगी के सदृश दौरे (Apaplectic seizures) पड़जाते हैं जिसे लोग हृदय के दब जाने के कारण कहा करते हैं।

हमलोग वास्तवमें बहुत अधिक भोजन करते हैं,हममें से भी विशेषकर वह जोकि कम परिश्रम वाले व्यवसाय (Sedentary occupations) करते हैं। कोई कोई मनुष्य तो आवश्यकता से चार चार गुना भोजन कर जाते हैं। कभी २ तो चूर्ण अथवा गोली का स्थान भी नहीं छोड़ते। बहुत से मनुष्य तो जीवन का उद्देश्य ही खाना समझते हैं। फारसी के प्रसिद्ध लेखक श्री शेख़-सादी क्या उत्तम लिखते हैं—

खुर्दन बराये ज़ीस्तन व ज़िक्र कर्दन अस्त।
तू मीतक़िद कि ज़ीस्तन बराये खुर्दन अस्त॥

अर्थ—भोजन जीवन को क़ायम रखने के लिये तथा ईश्वरका भजन करने के लिये है, परंतु तू समझता है कि जीवन ही भोजन के लिये है।

पाठकों को यह जान कर विस्मय होगा कि कितना थोड़ा भोजन हमारे शरीर को निरोग रखने के लिये आवश्यक है। एक प्रसिद्ध भोजन विशेषज्ञ का कथन है कि हमारे भोजन का ⅓ भाग तो हमारे पोषण में समर्थ होता है और शेष ⅔ वैद्यक (Medical Profession) को पुष्ट करने में काम आता है।

यह ईश्वर की जीवों पर विशेष दया है कि भोजनको स्वादिष्ट बनाया। यह अच्छा होता कि भोजन बालू के सदृश स्वादरहित होता ताकि लोग पेट फटने के स्थान तक ठूंसने से तो बाज़ रहते।

कुछ मनुष्यों का विश्वास है कि कुछ भक्ष्य पदार्थ तत्काल ही शक्ति प्रदान करते हैं। वह समझते हैं कि यदि मांस खायेंगे तो शीघ्र ही मांस बढ़ जायेगा और दूध पीयेंगे तो तत्क्षण में शुक्र बन जायेगा। यह बहुत कुछ मिथ्या है। प्रत्येक भक्ष्य पदार्थ पाचन होने पर अपने भिन्न २ तत्वों में विभक्त हो जाता है उस समय वह तरल रूप में होता है। उसके उपरांत वह भिन्न २ अंगों के पास पहुँचता है जिसमें से अंग अपने पोषण के लिये पोषक पदार्थ चुन लेते हैं जैसे कि चुम्बक लोहे को पकड़ लेता है। उसके उपरांत अंगोंमें भिन्न २ रासायनिक परिवर्तन होते हैं और तब अंग पुष्ट होते हैं

अधिक भक्षणकी आदत ठीक मद्यकी आदतके समान है। यह दोनों मिथ्या तथा अस्वाभाविक वातसंस्थानकी उत्तेजना उत्पन्न करता है और भूख मालूम होती है, जिसको रोगी हर प्रकार से पूर्ण करना चाहता है और अन्त में अधिक भोजन की आदत पड़ जाती है यह स्वयं मेरा अनुभव है। मुझे ऐसी आदत पड़ गई थी कि बग़ैर कुछ न कुछ खाये ४ घंटे भी नहीं रह सकता था यद्यपि कुछ समय बाद भोजन पूर्ण तरह पचता भी नहीं

था परन्तु भोजन की इच्छा वैसी ही रहती थी। भोजन के निश्चित समय के बाद भूखा रहना तो मृत्यु दिखाई देता था। मैं जब अधिक भोजन का इतना शिकार होगया तो मेरे एक मित्र ने मुझे रविवार का व्रत रखने की राय दी मैंने उपवास शुरू कर दिया। जब भोजन का निश्चित समय आता तो मुझे बड़ी भूख लगती और मैं लाचार होकर खाने पीने की चीज़ें ढूँढ़ता मगर मेरे मित्र चोरी करने का समय न देते थे। एक बार व्याकुल होकर मैंने पिछले दिनके फलों के छिलके ही चोरी से खा लिये। ज्यों ज्यों सामान्य दिनों के भोजन का समय बीतता था मेरी व्याकुलता बढ़ती जाती थी यहां तक कि ४ बजे सायंकाल तक मैं बोलने के समर्थ भी नहीं रहता था और जब मेरे मित्र मुझे ६ बजे दूध भात देते थे तब बोलने की शक्ति आती थी। धीरे २ मेरी शक्ति बढ़ती गई, अधिक भोजन की आदत भी जाती रही और मेरा स्वास्थ्य बहुत उत्तम होगया। यहाँ तक कि एक बार में पांच दिन का निर्जल व्रत रखने में भी समर्थ हुआ।

अधिक भक्षण वास्तव में एक अव्यक्त आत्म हत्या है जिसका किसी को कुछ पता नहीं होता और न सरकार के क़ानून में ही ऐसे लोगों पर कोई जुर्म है। शीघ्र फैलने वाले रोग (Epidemic Diseases) ऐसे ही पुरुषों को अधिक पकड़ते हैं और मृत्यु भी इन्हीं की अधिक होती है। बहुत से रोगी जो बिना भूख लगे भी भोजन कर लेते हैं उपवास के दिन अधिक फुर्तीले दिखाई पड़ते हैं। कुछ रोगी उपवास के रोज़ मीलों चल सकते हैं परन्तु अन्य दिनों में उनको चलने का नाम भी भयभीत बना देता है। इसका कारण स्पष्ट है कि उपवास के दिन पाचक अंग विश्राम लेते हैं और उनपर तथा अन्य अंगों पर जो रोज़ाना बोझा रहता था उतर जाता है। बहुत रोगी दैनिक भोजन का तिहाई खाकर अच्छी तरह रहते हैं।

हमारे भोजन की आरोग्यवर्द्धक मात्रा क्या है?

हर समय हमारे शरीर का कोई न कोई अंग किसी न किसी कार्य में लगा रहता है और इस कार्य में उसके बहुत से तंतु नष्ट होते रहते हैं, उनका पुनरुद्धार करने के लिये ही हमको भोजन करना पड़ता है। थोड़ा भोजन उष्णता तथा शक्ति उत्पन्न करने के लिये भी आवश्यक है इस लिये हमको इतना भोजन करना आवश्यक है जो नष्ट हुए तन्तुओं का पुनरुद्धार कर सके। रोज़ाना काम करने के लिये उष्णता तथा शक्ति प्रदान करे और अंगो को नियमित रख सके। कुछ भोजन शरीर की Reserved energy (रिज़र्व शक्ति) को पूरा करने के लिये भी आवश्यक है। इससे अधिक भोजन की आवश्यकता मनुष्य को नहीं है। यदि इससे अधिक भोजन किया जाता है तो वह शरीर से किसी न किसी तरीक़े से निकाल दिया जाता है बहुधा Glycosuria तथा albuminuria के रूप में। प्रकृति इन रोगों की उत्पत्ति से पूर्व ही मनुष्य को सावधान करने की चेष्टा करती है और विशेष कर बच्चों की दशाओं में (दूध गिरना, हरे पीले दस्त आना आदि. यदि इस पर भी मनुष्य नहीं

भारतीयों का प्राणरक्षा शास्त्र

[लेखक—आयुर्वेदाचार्यः कविराज मदनमोहन, चोपड़ा, वैद्य शास्त्री, लाहौर]

हम भारतवासियों के लिये 'प्राचीन भारत' का नाम अनिर्वचनीय भावों से परिपूर्ण है। इन दो शब्दों का मधुर तन्त्री-नाद हमारे अन्तःकरण में उन असंख्य समृद्धियों के रूप को जागृत करता है, जो यहां अधिकतर विद्यमान थीं। जब से हिन्दुसौभाग्य का निष्कलङ्क मयङ्क अस्ताचल में अस्त हुआ है, जब से भारत-लक्ष्मी अन्तर्हित हुई है, जब से आर्यावर्त की राजनीति, समाजनीति तथा धर्मनीति में विशेष विप्लव और अधःपतन हुआ है तभी से ऋषि मुनि रचित वेद वेदांग उपवेद तथा शास्त्रादि प्रायः लुप्त हो गये हैं। और इन्हीं के साथ समस्त प्राणियों का

मानता तो वह इस अपराध का पूर्ण दण्ड देती है। इस भयसूचक चिन्ह (Danger signal) के समय रोगी यदि उपवास करे तो बहुत शीघ्र ही सब शिकायतें दूर हो सकती हैं। प्रत्येक मनुष्य के लिये भोजन की मात्रा एक नहीं हो सकती। भिन्न २ पुरुषों के लिये मात्रा उसके बल, काल, देश, असात्म्य तथा सात्म्य के अनुसार तथा शारीरिक और मानसिक परिश्रम के ऊपर निर्भर है। एक मज़दूर को एक ठाली रहने वाले मनुष्य की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार मज़दूर को मानसिक परिश्रम करने वाले व्यक्तिकीअपेक्षा अधिक कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrate) की आवश्यकता होती है और मानसिक परिश्रम करने वाले को अधिक प्रोटीन की आवश्यकता है। परन्तु इन सब से अधिक महत्वपूर्ण पाचन शक्ति है। जितना भोजन बिना किसी उपद्रव के आसानी से पच जाता है वही उस व्यक्ति के लिये साधारण दशाओं में उसकी भोजन मात्रा है। अकसर लोग कहा करते हैं कि भोजन करनेके बाद आलस्य आता है परन्तु यह बहुत कुछ मिथ्या है। आलस्य उसी समय आता है जब कि भोजन बग़ैर भूख तथा अधिक खाया जाता है। वास्तविक भूख लगने पर किया हुआ भोजन हमेशा प्रसाद का देने वाला होता है और स्फूर्ति तथा तेज को बढ़ाता है। इसका अनुभव उपवास के दिन भली प्रकार हो सकता है। भोजन के पूर्व की दशा को भोजन के बाद की दशा से मिलाने पर भली प्रकार निर्णय हो सकता है।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुये यदि हम अपने भोजन को कम से कम ¼ कम करदें और नियमित समय पर खायें तो हम बहुत से रोगों से बच सकते हैं और स्वास्थ्य बहुत उत्तम हो सकता है। बच्चों को आरंभ से ही नियमित समय पर नियमित भोजन देना चाहिए।

कल्याणकारी हमारा प्राचीन आयुर्वेद भी जीर्ण शीर्ण अवस्था को प्राप्त हो गया है। इस भांति आयुर्वेद के अधिक साहित्यके लुप्त होजाने पर भी उपलब्ध ग्रन्थों में कितने ही महत्वसम्पन्न विषयों का कुछ कम प्रतिपादन नहीं है। बड़े २ सत्यार्थ कल्पित कथाओं से आवृत पाये जाते हैं और बड़े २ सिद्धान्त आख्यायिकाओं से तिरोहित दिखाई देते हैं। तत्वबोधी न्यायाधार के लिये इन विध्वस्त आगारों में देदीप्यमान ज्ञानराशि का दृष्टिगोचर होना कठिन नहीं और वह उन अनाच्छादित स्तम्भों को भी देख सकता है जो कभी इस विशाल प्रासादके आधार थे। जिस की दिगन्तव्यापिनी भास्करप्रभा संपूर्ण संसार को चकित करती थी। जब २ उन ध्वंसकारी राजकीय तथा सामाजिक विप्लवों की ओर ध्यान जाता है जब अन्य धर्मावलम्बि-विदेशियों की स्वधर्मान्ध-ताजन्य क्रूरताद्वारा हुए अत्याचारोंसे हम कल्पना करते हैं तथा वर्तमान कालिक अपनी अवनत स्थिति पर विचार करते हैं तो यह कहने में तनिक भी सङ्कोच नहीं होता कि यह भारतवासियों का परम सौभाग्य है तथा आयुर्वेद का महान् गौरव है जिसने ऐसी विकट अवस्था में भी स्वयं जीवित रह कर लोगों की प्राण रक्षा करने में तत्पर है। और इस अवनत दशा में भी अपनी जन्म भूमि के असंख्य प्राणियों की रक्षा करके रात दिन व्याधियों के साथ संग्राम कर रहा है। अन्य चिकित्सा पद्धतियां सम्मिलित रूप से जितने रोगियों को बचाती हैं उन से अधिक संख्या को तथा अल्प व्यय से अकेला आयुर्वेद बचा रहा है। केवल यही नहीं परञ्च दुःसाध्य रोगों को शमन करके नित्यप्रायः विजयी हो रहा है। आयुर्वेद ने अतीत समय में प्रबल आक्रमणों और अत्याचारों को सहन कर अपनी चिरंजीविता से अपनी सत्य-समृद्धि स्थायी-विज्ञान और अटल सिद्धांतों का प्रत्यक्ष परिचय दिया है। यदि आयुर्वेद को राजा और प्रजा से समुचित आश्रय मिले तो निश्चय ही संसारकी समस्त चिकित्सा पद्धतियों का अग्रणी और मुक्तकंठ से प्रशंसित होगा इसमें तनिक भी संदेह नहीं।

"जीव रक्षा करो" "निःस्वार्थ भाव से जीव रक्षा करो"

यही भारतीय भैषज्य का आदेश है। जैसे कि कहा भी है—

"नात्मार्थं नापिकामार्थमथ भूतदयां प्रति
वर्त्तते यश्चिकित्सायां स सर्वमतिवर्तते।
कुर्वते ये तु वृत्यर्थं चिकित्सापण्यविक्रयम्
ते हित्वा काञ्चनींराशिं पांसुराशिमुपासते॥"

यह उदार भाव भारतीय भैषज्य को छोड़ कर अन्यत्र दुर्लभ है। ये केवल शाब्दिक ललितोक्तियां ही नहीं हैं किन्तु सहस्रों वैद्य वर्तमान में भी अपने देशवासियों की निस्स्वार्थ भाव से सेवा करने में संलग्न हैं।

आयुर्वेद का विषय—

आयुर्वेद प्राणरक्षा शास्त्र का नाम है। जैसे कि कहा भी है—

"हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥"

यह अर्थ विश्वव्यापी वैद्यक शास्त्र का बोधक है। जिसका उद्देश्य मनुष्यमात्र ही नहीं, अपितु प्राणिमात्र को आरोग्य प्रदान करना है। शास्त्र में भी कहा है। यथाः—

व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणञ्चेति

आयुर्वेद केवल भैषज्यवाचक ही नहीं किन्तु उसके "१ शल्यतन्त्र, २ शालाक्यतन्त्र, ३ अगद-तन्त्र, ४ वाजीकरणतन्त्र, ५ रसायन तन्त्र, ६ कौमार भृत्यतंत्र, 'कायचिकित्सा तन्त्र और भूततन्त्र' ये आठ प्रधान अंग हैं। प्रत्येक अंग की समृद्धि के लिये उसके विशेषज्ञों के सम्प्रदाय और ग्रंथ विशेषों के महान् पुस्तकालय नियत थे।

हमारा कर्त्तव्यः—

आयुर्वेद का पुरातन गौरव कैसा ही क्यों न हो पर हम लोग यदि यह समझें कि अभी तक हम उन्नति के शिखर पर आरूढ़ हैं तो हम आत्मवञ्चना करेंगे। भारतवर्ष में वैद्य असंख्य हैं पर यथार्थ तत्वबोधी तथा सर्वथा शास्त्र पारङ्गत वैद्य बहुत न्यून हैं। पुरातन रूढ़ियों के हठ की पट्टी जिनकी आंखों पर बहुत दृढ़ता से बंधी हुई है। और जो प्रत्येक नवाविष्कृत वस्तु को घृणास्पद समझते हैं वे विज्ञान मूलक सिद्धान्तों पर कुठाराघात करते हैं। और इसके विपरीत जो पाश्चात्य-आडम्बर के सामने पुरातन को Unscientific बताने में अपना गौरव समझे हुये हैं वे विज्ञान वृद्धि के कल्याणकारी मार्ग में विषैले जन्तु हैं। जिससे वे राष्ट्र के साथ विद्रोह कर रहे हैं। अस्तु! सच्ची उन्नति यही है कि दुराग्रह का परित्याग करके और असंकुचित हृदय से तत्व अन्वेषण करने का प्रयत्न किया जावे। देखिये शास्त्र किस उदार भाव से कह रहा हैः—

"तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते।
स चैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत् ॥"

हमारा शल्य शास्त्र Surgey और रसायन शास्त्र Chemistry प्राचीन चाहे कितने ही हों, परन्तु आज उनका नवीन आदर्शों के अनुसार संस्कार और परिवर्त्तन करने की आवश्यकता है। अध्ययन का प्राचीन क्रम बड़ी उच्च कोटी का था परन्तु यह मानने मे सङ्कोच नहीं करना चाहिये जिस प्रकार आजकल वैद्य और कविराज नामधारी आलसी प्रमादपूर्ण विद्यार्थियों में से घड़ जाते हैं उसका परिमार्जन करने से ही किसी उज्वल भविष्य की कल्पना हो सकती है।

आयुर्वेद की औषधनिर्माण क्रिया जो हमारी चिकित्सा पद्धति का आधारभूत है उसके बनाने में हम जिन साधनों को प्रयुक्त करते हैं उनको नूतन ढ़ग के अनुसार Machinary रचना अथवा संस्कार करके व्यवहार में लाने से हम अधिक उन्नति प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार अपनी त्रुटियों को दूर करने से ही आज हम पुनः आयुर्वेदोत्थान का साहस कर सकते हैं।

यद्यपि इस विषय में बहुत सा शुभ कार्य किया जा रहा है। तथापि जो कुछ होना चाहिये

उसकी अपेक्षा यह बहुत न्यून है। हस्त लिखित पुस्तकों का जीर्णोद्धार, आयुर्वेद विद्यालयों की स्थापना, जिनमें शरीर अवयवविच्छेद Anatomy जीव विद्या Physialoepy, द्रव्यगुणशास्त्र और भेषजनिर्माण की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध होना चाहिये। चिकित्सालयोंको होना अत्यावश्यक है। जिनमें विद्यार्थी रोगोपचारशास्त्र का प्रत्यक्षानुभव प्राप्त हो सके। और इस प्रकार सफल चिकित्सक बन सकें। आयुर्वेद मतानुसार द्रव्यविश्लेषण Analysis तथा औषधनिर्माण और औषध अनुसन्धान Researchका निरन्तर परिश्रम होने से ही अपनी त्रुटियों को कई अंशों में पूर्ण कर सकेंगे। इस महत्वशाली तथा कल्याणकारी कार्य के लिये राजा तथा प्रजा दोनों की उदारता पूर्ण सहायता अपेक्षित है। भारतवर्ष में कोटिशः प्राणधारी रोग से पीड़ित होकर जीवन को दुःखमय बना रहे हैं। उस महती संख्या के लिये वर्त्तमान कालिक Disp-assies केवल ग्रासमात्र है। फिर उस पर खर्च बहुत आता है। इसलिये गवर्नमेंट को चाहिए कि वह आयुर्वेदिक चिकित्सालय खोलकर सार्वजनिक हितकर कार्य करे और इस प्रकार साधारण व्यय बहुसंख्यक प्रजा को रोगमुक्त कर के कल्याणकारी कार्य हो सकता है।

हम अपने पाठकों का ध्यान यू० पी० गवर्नमेंट की इस वर्ष की स्वास्थ्य रिपोर्ट की ओर आकर्षित करते हैं।

एलोपैथिक चिकित्सालयों की सहायता के लिये ३६००००० छत्तीस लाख रु० खर्च किए। और आयुर्वेद विभाग पर केवल ३५००० रु० व्यय किए गए। वर्षोपरान्त जांच करने पर यह आश्चर्यजनक सर्वसम्मत परिणाम निकला कि जहां एलोपैथी से ५६००००० उनसठ लाख रोगियों को आराम हुआ वहां आयुर्वेद ने ३६००००० रोगियों को स्वास्थ्य प्रदान किया।

इसका अभिप्राय स्पष्ट है कि जहां आयुर्वेद पर खर्च किया गया एक रुपया १०० से अधिक रोगियों के जीवन प्रदान करने में समर्थ है वहां हमारी नूतन साइन्स की दुलारी एलोपैथी उसी एक रुपए में दो से भी कम रोगियों की परिचर्या कर सकी। अस्तु! विज्ञ पाठक स्वयं ही इस परिणाम से अनुमान लगा सकते हैं कि दोनों पद्धतियों में कौनसी अधिक लाभप्रद कल्याणकारी तथा अल्पव्ययसाध्य है।

क्या हम आर्ष ग्रन्थों में पाठ परिवर्तन कर सकते हैं ?

पं० मस्तराम जी ने चरक का पाठ बदलवा कर अनधिकार चेष्टा की है।

[ले० आयुर्वेदाचार्य सुरेन्द्रमोहन बी० ए० प्रिंसीपल दयानन्द आयुर्वैदिक कालेज, लाहौर]

विद्वद्वर्य !

भारतविख्यात श्री यादव जी द्वारा सम्पादित संशोधित चरक संहिता के २य संस्करण में, जो निर्णय सागर प्रेस (बम्बई) में इस वर्ष (१९३५) में मुद्रित हुआ है, चिकित्सास्थान के अ० २३ के श्लोक ४३ के चतुर्थ पाठ को वाग्भट के अनुसार परिवर्तित कर दिया गया है, जैसा कि नीचे लिखे वृत्त से स्पष्ट होगाः—

रक्तं हि विषाधानं वायु,
रिवाग्नेः प्रदेहसेकैस्तत् ।
शीतैः स्कन्दति तस्मिन्,
स्कन्ने व्ययं याति विषवेगः ॥ ४२ ॥
विषवेगान्मदमूर्च्छा विषाद,
हृदयद्रवाः प्रवर्तन्ते ।
शीतैर्निवर्तयेत्तान् न,
वीज्यश्च लोमहर्षः स्यात् ॥ ४३ ॥
(चः चि० अ० २३)

यह दो श्लोक सर्प विष के सम्बन्ध में कहे हैं। इन से पूर्व सर्पदंश के अनन्तर रक्तमोक्षण का वर्णन है क्योंकि रक्त ही विषाधान (प्रसारक) है। उसकी वृद्धि और प्रसारणसे प्राणी मर जाता है। इन श्लोकों का अर्थ यह है

रक्त विष का आधान है जैसे वायु अग्निका तत् (वह रक्त) शीत प्रदेह (लेपों) और सेकों (शीतजलसिञ्चनादि) से जम जाता है। उसके जमने पर विषवेग शान्त हो जाता है। ॥ ४२ ॥ (यदि विषवेग शान्त न हो, तो) विषवेग से मद, मूर्च्छा विषाद और हृदय दुख (हृदय की धड़कन) (आदि उत्पन्न) हो जाते हैं। तान् (इन उपद्रवों को) शीतैः (ठण्डे लेपसेकादि से) निवर्तयेत (वैद्य निवृत्त करे) रोगी को वीजन न करे, क्योंकि इस वीजन (पंखाहिलाने) से लोमहर्ष हो जावेगा (या होने की सम्भावना है ॥ ४३ ॥

यहां चरक का आशय स्पष्ट है कि रक्त स्कन्दन शीत लेप सेकादि से किया जावे और मद मूर्च्छादि होने पर पंखा न करे। उससे लोमहर्ष होगा। लोमहर्ष से विष शरीर में भ्रमण करेगा।

निद्रां तन्द्रां क्लमं दाहं सपाकं लोमहर्षणम् ।
शोफं चैवातिसारं च जनयेज्जङ्गमं विषमम् ॥ ५॥
(च० चि० अ० २)

महर्षि चरक ने अ० २३ के १५ श्लोक में जंगमविष के लक्षण बताते हुए लोमहर्ष का

वर्णन किया है, जैसाकि उक्त श्लोक से स्पष्ट है अतः बीजन (Fanning) से लोमहर्ष और (विषवेग) को उत्पन्न करना ठीक नहीं। यह चरक का आदेश उसके अपने शब्दों से सिद्ध है। उसे परिवर्त्तन करना हमारे अधिकार से बाहर है।

श्लोक ४३ पर श्रीचक्रपाणि ने कोई टीका नहीं की, क्योंकि श्लोक सुगम हैं, यदि कोई गंभीर भाव उसमें होता वा कोई पाठभेद होता, तो अवश्यमेव श्री चक्रपाणी कुछ टीका टिप्पणी करते, जैसा कि हम अन्यत्र देखते हैं।

श्री गंगाधरादि टीका कारों का मत

श्री चक्रपाणी की संस्कृत टीका के अतिरिक्त चरक पर दूसरी टीका म० म० श्रीगंगाधर की मिलती है। उसमें भी पाठ पूर्ववत् है यथा—
शीतैर्निवर्त्तयेत् तान् न बीज्यश्च लोमहर्षः स्यात्।

टीका करते हुए वह लिखते हैं—

"मदादयो विषवेगात् प्रवर्त्तन्ते जन्यन्ते।
तान् मदादीन् शीतैर्द्रव्यैः परिषेकादिभिःनिवर्त्तयेत् बीज्यश्चन लोमहर्षः स्यात्।

यदि हम भाषाटीकाओं को देखें तो पूर्ववत् भाव आप को मिलेंगे। श्री पं० रामप्रसाद जी राजवैद्य कृत चरक भाषाटीका अ० २५ में आप निम्न लिखित पाठ देखेंगे:—

विषवेगान्मदमूर्च्छा विषादहृदयद्रवाः प्रवर्त्तन्ते।
शीतैर्निवर्त्तयेत्तान्न बीज्येल्लोमहर्षः स्यात् ॥ ४१ ॥

अर्थ—विष के वेग से मद, मूर्च्छा, विषाद, हृदय का फड़कना, अथवा गिर सा जाना यह लक्षण होते हैं, इन सब उपद्रवों को शीतल लेप की क्रिया आदिकों से शान्ति होती है। काटे हुये स्थान में शीतल लेप ही करने चाहियें। किन्तु पंखे की पवन नहीं करनी चाहियें। अथवा पंखे की पवन करने से रोमाञ्च खड़े होकर विष नहीं ठहर सकता। इसलिये शीतल लेपों का करना ही हित है।

इस भावार्थ में प्रूफ संशोधन में असावधानी के कारण कुछ त्रुटियां हैं, तो भी भाव वही हैं, जो हम ऊपर बता चुके हैं।

यदि आप चरक की टीकाएँ किसी अन्य भाषा बंगाली, गुजराती, मरहठी, तैलंगु आदि में देखेंगे, तो आप को श्लोक और अर्थ पूर्ववत ही मिलेंगे, इस से स्पष्ट है कि चरक का यह श्लोक पूर्वापाठ सम्बन्ध से ठीक है।

परिवर्तित पाठ

उक्त श्लोक को चरक के नवीन संस्करण में यों बदला गया है, देखो पृष्ठ ५ ७ ३, श्लोक ४ ३ (अ० २३)—

विषवेगान्मदमूर्छा विषादहृदयद्रवाः प्रवर्तन्ते।
शीतैर्निवर्त्तयेत्तान् बीज्यश्चालोमहर्षात्स्यात् ॥४३॥

अर्थभेदः—देखिये! श्लोक कैसा कुरूप और कराल होगया है। और अर्थ भी बदल गया है, अर्थात् बीज्यश्च बीजयेच्च तावत, यावल्लोमहर्षः स्यात्—पंखा तब तक हिलावे, जब तक कि रोमांच हो। यह चरक के भाव से सर्वथा विपरीत है

यदि यही भाव अर्थात् बीजन करना चाहिये

१—बीज्यश्च वा न बीजयेत—इनसे पाठों में कोई अन्तर नहीं।

संशोधक महोदय को अभिमत था तो भी चरक के पूर्वपाठ से सिद्ध हो सकता है और वह इस नवीन पाठ से अच्छा है। देखिये—

न वीजयश्च लोमहर्षःस्यात्—तथा न वीजयेत् यथा रोमाञ्चो भवेदिति,यहां तथा यथा या तावत् यावत् लुप्तनिर्दिष्ट समझने चाहियें। यह विकल्प वह नीचे टिप्पणी (Foot-note) में दे सकते थे, जिससे चरक पढ़ने वाले छात्र वा अध्यापक दोनों अर्थ समझ लेते। नानार्थवाचक श्लोक बहुत हैं, जिन के भिन्न २ भाव चक्रपाणि आदि टीका कारों ने बताने का प्रयत्न किया है, परन्तु जो अर्थ उन्हें अभीष्ट था, तदनुसार उन्हों ने चरक को बदलने का यत्न नहीं किया।

पाठ बदलने के प्रमाण

श्री यादव जी वा पं० मस्तराम जी ने यह परिवर्तन अष्टांग हृदयके आधार पर किया है,यथा

अस्कन्ने विषवेगाद्धि मूर्च्छायमदहृद्रुजः।
भवन्ति तान् जयेच्छीतै वीजेच्चालोमहर्षतः ॥३७॥
(अष्टांगहृदये उत्तरतन्त्रे अ० ३६)

श्री अरुण दत्त इसका अर्थ यूं करता है, अस्कन्ने ऽसृ नेऽस्यन्दमाने हिरकते विषवेगेन मूर्च्छादयो भवन्ति। तांश्चजयेच्छीतैलेपादिभिः। तथा रोमाञ्चो यावच्छीतेन स्यात् तावद्वीजेच्च। अर्थात् रुधिर न जमने पर विषवेग से मूर्च्छादि हो जाते हैं। उन को शीतल लेपादि से जीते और पंखा जब तक करे, जब तक कि रोमाञ्च हो।

ग्रन्थकारों में मतभेद

वाग्भट के उक्त श्लोक को देख कर हम यही कह सकते हैं कि यहां चरक और वाग्भट में मत भेद है। यदि चरकोक्त श्लोक के दूसरे अर्थ कर लिये जावें, तो दोनों में अन्तर कम रहजाता है। उस अवस्था में वाग्भट कहता है कि रोमाञ्च होने तक पंखा हिलाओ, चरक कहता है कि जिस में रोमाञ्च न हो इतना पंखा हिलाओ। हमें यह दूसरा मत अच्छा प्रतीत होता है, क्यों कि लोमहर्ष को उत्पन्न करना अभीष्ट नहीं।

मतभेद की अवस्था में हमारा कर्तव्य

जहां ग्रन्थकारोंमें मतभेद हो, वहां सम्पादन कर्त्ताका क्या कर्तव्य है ? यह हमें सोचना चाहिए क्या चरक, सुश्रुत, हारीतादि में कहीं मतभेद नहीं ? यदि आप चक्रपाणी, डल्हणादि की टीकाओं को पढ़ें तो उनमें स्थल २ पर आप को संहिताकारों के मतभेद के दृष्टान्त मिलेंगे. सब टीकाकार वहां भिन्न २ अर्थ करके समाधान करने का यत्न करते हैं वा मत भेद कहकर उसे छोड़ देते हैं, परन्तु श्लोकों को नहीं बदलते। कहीं श्लोक प्रक्षिप्त हो वा उसका पाठान्तर मिले, तो ऐसा दर्शाकर अपनी सम्मति देदेते हैं। यही विधि हमें भी पालन करनी चाहिए, परन्तु पाठ नहीं बदलने चाहियें, जब तक कि पाठान्तर किसी हस्तलिखित ग्रन्थ में न मिले तब भी उसे नीचे टिप्पणी में परामर्शार्थ देना चाहिये। ग्रन्थों में यथारुचि हस्तक्षेप करना सर्वथा अनुचित व्यवहार और नियम विरुद्ध Uncustomary and illegal है।

पाठ बदलना विश्वासघात करना है।

हम चरक की तरह प्रति संस्कर्त्ता नहीं, प्रत्युत सम्पादक हैं (Editors)। हमें सम्पादन

वा संशोधन करते समय न्याय और सावधानी से बरतना चाहिये। यदि कोई पाठान्तर हस्तलिखित ग्रन्थ manuscript में मिले तो मूलपाठमें उसे दे दो, व टिप्पणियोंमें अन्यथा कोई परिवर्तन मत करो चाहे ग्रन्थकारों में मतभेद क्यों न हो। यदि हम इच्छानुसार वा स्वबुद्धि बलानुसार पाठ बदलेंगे, तो हम विश्वासघात करेंगे। जिन लोगों को पाठ कण्ठस्थ हैं वा जो अध्यापक प्रतिदिन पढ़ाते हैं, उन्हें परिवर्तित पाठों को देखकर शंका होगी और ग्रन्थ को दूषित समझा जावेगा।

क्या हम कालिदास भवभूति, मनु, उपनिषद, Tennyson, Wordsworth, Shakespere आदि को बदल सकते हैं? क्या हम किसी के ग्रन्थ, काव्य, नाटक व पत्र वा वक्तव्य को यथारुचि बदल सकते हैं? यदि हम ऐसा करेंगे तो हमें कोर्ट में दण्ड हो सकता है और जनता में अफ़वाह होगी,

चरकादि ग्रन्थ तो सर्व संसार की सम्पत्ति Property of the whole world हैं। चाहे पं० मस्तराम जी हों वा कोई और उसे नहीं बदल सकते।

श्री यादवजीने अपनी भूल स्वीकृत करली है।

इस विषय में जब मैंने श्री पूज्य यादव जी महाराज से पत्र व्यवहार किया तो उन्होंने अपनी भूल स्वीकृत करली और इस परिवर्तनका उत्तरदायित्व पं० मस्तराम जी पर डाला। हमें पता चला है कि प्रूफ संशोधन के लिये पं० मस्तराम जी के उनके शिष्य श्री हरिदत्त जी के पास आते थे और उन्हों ने यथा रुचि पाठ बदलने का दुःसाहस किया है, जो अप्रशस्त और निन्दनीय है। वैद्य जगत् को उन्हों ने अपनी विद्वत्ता दिखाने के घमण्ड में धोका दिया है और उस परिवर्तन की कल्पना पर इतराते हुए एक दर्पपूर्ण लेख "अनर्थपाठध्वान्तध्वंसः" शीर्षक वाला लिख कर चरक का अपमान किया है और उसे पदपद पर अशुद्ध कहा है।

क्या वैद्यसमुदाय ऐसी अनाधिकारचेष्टा को सहन करेगा?

वैद्यों का अब कर्तव्य है, कि निर्णयसागर प्रेस द्वारा मुद्रित चरक के २ य संस्करण(१९३५) को दूषित और शंकित समझें। संशोधक और मुद्रक को विवश करें कि जहां जहां पाठ बदला गया है, उन पृष्ठों को पुनः प्रकाशित करें वा अशुद्धि पत्र उस २ पृष्ठ के सम्मुख लगावें। जैसे भी हो, चरकको निर्भ्रान्त और पाखण्डाभिमानियों द्वारा संशोधित पाठों से रहित करें। तथा आयुर्वेद महामण्डल को बाधित करें कि ग्रन्थ प्रकाशन का कार्य अपने हाथ में लेलें और किसी विशेष सभा के आधीन करदें।

गृहस्थों का स्वास्थ्य और उपाय

(ले० पं० दयाशंकर जी द्विवेदी वैद्यरत्न नोरवा शाहबाद)

(गतांक से आगे)

स्नान—

जिस तरह हम लोग नाक औरमुंहसे श्वास लिया करते हैं, उसी तरह हमारा शरीर भी प्रति दिन अपने रोम छिद्रों द्वारा सांस लिया करता है। जब शरीर के रोम छिद्रों के मुंहपर मैल बैठ जाता है, तब शरीर रोगी और अस्वस्थ सा दीख पड़ने लगता है। अत स्वस्थ रहने के लिये स्नान की विशेष आवश्यकता है। स्नान करने से रोम छिद्रों पर का जमा, मल दूर हो जाता है। रोमछिद्रों द्वारा शरीर में शुद्ध वायु का प्रवेश होता है।

स्नान मैल दूर करने वाले उपायों में सर्वोत्तम है। स्नान करने से शरार पवित्र व चित्त शुद्ध होजाता है। शरीर स्वस्थ होता है। स्नान खाज, खुजली, थकान, आलस्य, पसीना शरीर का दुर्गन्ध, और विवर्णता का नाशक है। स्नान शरीर की इन्द्रियों का शोधन करता है। स्नान आयुःवर्द्धक, बल बढ़ाने वाला, और अत्यन्त स्फूर्तिदायक है। स्नान से खून साफ़ होता है और जठराग्नि प्रदीप्त होती है। अतः प्रति दिन नियम पूर्वक स्नान करना चाहिये। स्नान के लिये कुएं का स्वच्छ ताजा जल विशेष गुणकारी है। स्नान करने से पहले सारे शरीर में शुद्ध सरसो का तेल, और शिरमें शक्ति, सामर्थ्य और समयानुसार किसी अच्छे तेल का मालिश अवश्य होना चाहिये। आज कल का शिर में लगाने वाला सेन्ट मिला बाज़ारू तेल किसी काम का नहीं होता, उन में कोरा white oil (व्हाइट आयल) रंग और विदेशी सेंट के सिवा और कुछ नहीं रहता, इससे सदा बचना चाहिये। आप बाज़ारू तैलों से किसी लाभ की आशा न रख, इसका सदा बहिष्कार करते रहें। कभी २ कान में भी तैल डालते रहना चाहिये, इससे कान के पर्दे सदा तर रहा करते हैं, मस्तक और कान के दर्द का नाश होता है। ऊंची आवाज़ सुनना, बहिरापन, मन्यास्तम्भ, वायुजनित कर्ण रोग प्रभृति पीड़ाएं उत्पन्न नहीं होतीं। यदि आप अपनी आंखों की रक्षा करना चाहते हों तो बिना किसी सोच विचार के पैर के तलवों में शुद्ध सरसों का तैल मालिश किया कीजिये। इससे आंखों को विशेष लाभ होता है, इसमें सन्देह नहीं। बात यह है कि तलवों की दो मोटी मोटी नसें मस्तक तक गई हैं, और बहुत सी नसें आंखों तक पहुँच गई हैं। इसी कारण पांव के तलवों में जो चीज़ें मालिश की जाती हैं वह सब इन नसों के द्वारा आंख में पहुँच लाभ

का कारण बनती हैं। पहले ज़माने में तैल मालिश करने के बाद, तैल की चिकनाई व शरीर का मैल छुड़ाने के लिये, शरीर में उबटन लगाने की चाल थी, परन्तु पश्चिमी सभ्यता की विशेष दया से आजकल उबटन का स्थान चर्बी मिश्रित साबुन ने ग्रहण कर लिया है। सर्द मुल्क में रहने वालों के लिये साबुन का प्रयोग भले ही लाभदायक हो, परतु भारतियों के लिये इस का प्रयोग लाभ दायक नहीं है। यदि आप साबुन लगाने के आदी हो गये हों, उन्हें सदा ध्यान रखना चाहिये कि वह किस प्रकार का साबुन अपने काम में ला रहे हैं। घटिया, बाज़ारू और कम कीमत का साबुन चमड़ी को खराब कर डालता है। इस लिये आप सदा अधिक मूल्य का साबुन व्यवहारमें लावें। स्नान करनेके पहले शिर को धोलेना चाहिये तब और अंगों पर पानी डालना चाहिये। शास्त्र में भी ऐसा ही आदेश है-" न च स्नाया छिना शिरः " अर्थात् बिना शिरको भलीभाँति भिजाये स्नान नहीं करना चाहिये। शरीर पर एक दो लोटा पानी डाल कर "कौआ स्नान" करना ठीक नहीं है। स्नान करते समय शरीर के सभी अंग प्रत्यंगों को खूब रगड़ २ कर स्नान करना चाहिये। बदन को खूब मोटे तौलिये से रगड़ कर स्नान करने से, रोज़ छिद्रों में घुसे हुए छोटे २ मल कण भी निकलजाते हैं। स्नान पश्चात् साफ मोटे तौलिये से शरीर को पोंछकर शुद्ध-स्वच्छ वस्त्र पहन लेना चाहिये। भोजन से पहले, पीछे, मैथुन करके कसरत के पश्चात् थकान और पसीने की अवस्था में तत्काल स्नान करना अत्यंत हानिकर है। ज्वर, अतिसार, प्रतिश्याय नेत्र रोग कर्ण रोग, वायु रोग, पीनस, और अजीर्ण रोग वाले स्नान न करें। सबेरे का स्नान विशेष लाभ दायक होता है।

व्यायाम—

संसार कर्मक्षेत्र है। इस कर्मशील संसार में प्रत्येक मनुष्य के जीवन में सैकड़ों प्रकार की परिस्थितियां सदा एक के बाद दूसरी आती जाती हैं, और प्रत्येक मनुष्य को इन परिस्थितियों का सामना किसी न किसी प्रकार अवश्य करना पड़ता है। यदि मनुष्य के शरीर में यथेष्ठ बल रहता है, यदि उसके हृदय में साहस रहता है, यदि वह सचमुच कर्म क्षेत्र में कर्मठ होकर जीवन पालन करना चाहता है तो वह इन परिस्थितियों की परवाह न कर सदा संसार के जीवन क्षेत्र में सिंहवत् स्वच्छन्द विचरता रहता है। वह संसार की कठनाइयोंमें बच ऊबता नहीं साहस के साथ कठनाइयों तथा परिस्थितियों का सामना कर जीवन मार्ग में आगे बढ़ता जाता है। बल ही साहस का जनक है। बल साहस दोनों परस्पर साथी हैं एक दूसरे के बिना नहीं रह सकता। जिस में बल होगा, उसी में साहस होगा। जिस में साहस होगा, उसी में बल होगा एतदर्थ मानव जीवन तरणी को संसार सागर से समुचित खेने के लिये शारीरिक शक्ति की विशेष आवश्यकता है। शारीरिक बल को बढ़ाने का मुख्यसाधन व्यायाम है शारीरिकबलको बढ़ाने के लिये इच्छा पूर्वक अंगों के परिचालन क्रिया को हम लोग व्यायाम या कसरत कहा करते हैं।

सबल स्वास्थ्य एवम् शरीर की भलाई के लिये तथा शारीरिक यन्त्रों को ठीक रखने के लिये प्रत्येक व्यक्ति को नित प्रति किसी न किसी प्रकार का थोड़ा सा व्यायाम अवश्य करना चाहिये। बल बढ़ाने वाले उपायों में व्यायाम सर्वोपरि है। अतः व्यायाम से शरीर का अंग-प्रत्यंग विचित्र शक्ति से भरजाता है। हृदय में साहस तथा वीरोचित भावों की लहर लहराती है। शरीर के सभी अंग प्रत्यंग तथा मुख अद्भुत सौन्दर्य्य से चमक उठते हैं। मन सद्-इच्छाओं का भण्डार बन जाता है। सुश्रुत संहिता में लिखा है—

शरीरोपचयः कान्तिर्गात्राणां सुविभक्तता।
दीप्ताग्नित्व मनालस्यं, स्थिरत्वं लाघवं मृजा॥
श्रम क्लम पिपासोष्ण शीतादीनां सहिष्णुता।
आरोग्याश्चापिपरमं, व्यायामा दुपजायते॥

अर्थात्—व्यायाम से शरीर की कान्ति बढ़ती है। अंग प्रत्यंगों का गठन भला सा मालूम होता है। अग्निदीप्तता, स्थिरता, निरालस्यता स्फूर्ति, परिश्रम, सर्दी गर्मीआदि के सहने की शक्ति और उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त होता है। उचित मात्रा में प्रति दिन व्यायाम करने से घी दूध आदि तर व पुष्ट पदार्थ यथार्थ रूप से पच कर बल बढ़ाते हैं। कसरतसे शरीर मज़बूत व सुन्दर होजाता है। व्यायाम करतेसमय श्वास जल्द २ चलतीहै, इस लिये फेफड़ों में अधिक हवा जाती है और उस को अमृत भाग के (oxygen) ज्यादा मिलने से खून खूब साफ़ और निरोग होजाता है। हृदय भी बहुत अधिक धड़कता है, जिस से शरीर में खून का दौरा खूब होता है, इससे शरीर के हर अंग को ज्यादा खून मिलता है। इसलिये सब अंग प्रत्यंग पुष्ट हो चमकने लग जाते हैं। कसरत से शरीर का विष, पसीने द्वारा बाहर चला जाता है

कसरती को एका एक बुढ़ापा नहीं घेरता, एवं उसके शरीर में ढीलापन (हड्डी से मांस का अलग हो लटक जाना) तथा चेहरे पर झुर्रियां आदि जल्द नहीं होती। स्थूलता यानी मुटापा नाश करने के लिये कसरत से बढ़ कर दूसरा उपाय नहीं है। प्रत्येक मनुष्य को प्रति दिन समयानुकूल परिमित व्यायाम अवश्य करना चाहिये। परिमित तथा नियमित व्यायामसे यकृत और पाकयंत्रकी क्रिया भलि भांति सम्पादित होती है, भूख बढ़ती है फेफड़ों में वायु ग्रहण करने की शक्ति बढ़ जाती है। जिससे श्वासन पेशी समूह पुष्ट होकर छाती की परिधि बढ़ जाती है। व्यायाम से पेट के अंगों का संचालन होने से कोठे का कड़ापन, कोष्टबद्धता, और अजीर्ण आदि उदर व्याधियां शमन होती हैं। शरीर की मांस पेशियां पुष्ट होती हैं।

व्यायाम करने से परिश्रम होता है। परिश्रम शरीर को सबल बनाने की पुष्टई है। परिश्रम करने से शरीर का प्रत्येक अवयव निरन्तर नया होता जाता है। व्यायाम का प्रभाव शरीर के अतिरिक्त मस्तिष्क और चरित्र पर भी पड़ता है। व्यायाममें बहुत गुण है अतःप्रत्येक स्त्री-पुरुष को स्वस्थ रहने के निमित्त व्यायाम करना अति आवश्कीय है।

कसरत करने वालों को सदा निम्न लिखित नियमों पर ध्यान रखना चाहिये।

१ जहां तक हो कसरत खुली और साफ़

हवा में की जाये। भोजन करने के पीछे या खाली पेट कसरत नहीं करना चाहिये।

२ व्यायाम के समय मुख बंद रहना चाहिये, श्वास प्रश्वास की क्रिया नाक द्वारा पूरी की जाय। श्वास धीरे २ छोड़ना तथा ग्रहण करना चाहिये।

३ व्यायाम इस प्रकार का होना चाहिए जिसमें आपके शरीर के सब अङ्गों का परिश्रम समान रूप में हो।

४ कसरत करते समय लंगोट, जांघिया या रूमाली अवश्य बांध लेनी चाहिए अन्यथा अंड कोषों के लटक आने तथा नामर्द हो जाने का भय है।

५ कसरत (विशेषरूपेण) उन्हीं लोगों को करनी चाहिये जिन्हें घी-दूध आदि चिकना ताकतवर भोजन मिलता है।

६ कसरत करते समय थकान अनुभव हो, मुख सूखने लगे, दम फूलने लगे, शरीरके जोड़ों तथा सारे शरीर में पसीना आने लगे तब कसरत करना बन्द कर देना चाहिये।

७ कसरत करने के बाद धीरे २ टहलना चाहिये तब तक जब तक पसीना सूख न जाय। कसरत के बाद शक्त्यनुसार १०-१५ बादाम, १० काली मिर्च, दो छोटी इलायची के दाने, धनियां १ माशा और मिश्री की ठढाई पीना चाहिये।

८ नवयुवकों को वृद्धों की अपेक्षा व्यायाम की अधिक आवश्यकता है। अतः वृद्धों को ऐसी कोई कसरत नहीं करनी चाहिये जिसमें विशेष बल लगाने की आवश्यकता है। वृद्धों के लिये टहलना ही कसरत है।

यहां पर एक बात विवादास्पद है। वह यह कि "व्यायाम" स्नान के बाद, या प्रथम ही कर लेना चाहिये। मेरे विचार में तथा आयुर्वेद शास्त्रानुसार "व्यायाम" प्रातःकाल शौच दन्त धावण आदि आवश्यकीय कार्यों से निबट जाने के बाद और स्नान से प्रथम ही करना चाहिये। परन्तु व्यायाम या किसी प्रकार का शारीरिक परिश्रम करने के १-२ घंटे पश्चात्, जब शरीरकी उष्णता पूर्णरूपेण शांत होजाय, श्वास व नाड़ी की गति ठीक हो जाय, शरीर का पसीना सूख जाय, यानी शरीर की दशा व्यायाम से पूर्व की अवस्था में आजाये तब स्नान करना चाहिये अन्यथा बड़ी भयंकर व्याधियों के शिकार होजाने की संभावना है। स्नान के बाद उन्हीं लोगों को व्यायाम करना चाहिये, जिनको व्यायाम के सिवा कुछ दूसरा काम न हो।

आहार:--

शरीर को क़ायम रखने के लिये जो कुछ खाया जाता है, उसी का नाम आहार है। आहार और शरीर का बड़ा गुरुतर सम्बन्ध है। आहार ही शरीर का जीवन है। एतदर्थ शरीरको कायम रखने के लिये भोजन की नितान्त आवश्यकता है। सुश्रुत तथा भावप्रकाश में लिखा है कि:—

आहारः प्रीणनः सद्यो, बलकृद्देह धारकः।
आयुस्तेजः समुत्साह स्मृत्यो जोग्नि विवर्द्धनः॥

आहार ! प्राणियों को तृप्ति करने वाला, तत्काल बल प्रदान करने वाला और शरीर को धारण करने वाला है। आहार से आयु, कान्ति, शक्ति स्मरण शक्ति, उत्साह तथा जठराग्नि की वृद्धि होती है।

(शेष अगले अंक में)

अनुभूत प्रयोग

श्वेत कुष्ठ के लिये लेप—

जंगली अँजीर की छाल १ तोले ८ माशे, आमला ३ तोले ४ माशे, बावची १ तोले ८ माशे, कूट छान कर रखलें फिर ढाक के फूल मय स्याही के ३ तोले ४माशे लेकर सवा दो सेर पानीमें जोश देवें जब पानी सवा पाव ƺ।– रह जावे तो पानी को ठंडा करके फूलों को हाथ से खूब मललें और छान कर उसका पानी हासिल करलें। फिर ऊपर के सफ़ूफ़ को इसमें खूब घोट कर जँगली बेर के बराबर गोलियां बना कर रखलें। फिर १ गोली को सिर्के में पीस कर सफ़ेद दागों पर लगायें बहुत जल्द फायदा होता है।

जवारिश जालीनूस—

बालछड़, इलायची बड़ी, सलीखा, दालचीनी कुलीजन, लौंग, नागरमोथा, सोंठ, काली मिर्च कूठ, ऊदे विलसां, तगर, तुख़्ममोरद, मीठा चिरायता, जाफ़रान, हर एक ७-७ माशे मस्तगी रूमी असली १७½ माशे कन्द सफ़ेद बराबर सब दवाओं के कूट छान कर शहद खालिस दुगने में मिलावें। मात्रा ७ माशे से १३॥ माशे तक भोजन से पहले और पीछे भी खा सकते हैं।

गुण

इस जवारिश के बड़े २ गुण हैं। सब शरीर को बल देती है मुँह को सुगन्धित करती है, वायु को निकालती है, मूत्र की अधिकता को दूर करती है, दिमागी कमज़ोरी, खांसी बलगमी बवासीर, दाद, सीप, पथरी, गुर्दे, मसाने के रोगों में फायदे मन्द है। बालों को स्याह करती है। दृष्टि बर्धक है। इस लिये जो कोई लगातार इसको २० दिन भी खालेवे उपरोक्त सब रोगों से अच्छा होकर आरोग्यता प्राप्त करे।

पुराने कब्ज़के लिये अक्सीर

एक्सट्रैक्ट ऑफ़ केस करास केड	
लिक्विड्	२० बूंद
टिंचर ऑफ़ बेलाडोना	५बूँद
टिंचर नक्सवोमिका	५बूँद
स्प्रिट अमोनियम एरोमैटिक	१५बूँद
स्प्रिट क्लोरोफ़ार्म	१५बूँद
जल	१ औंस (२॥तोले)

ऐसी १ मात्रा बड़े आदमी को रातको सोते समय देवें। इससे पाखाना खूब साफ होकर भूख खूब लगती है।

माजून मुकव्वी

बादाम की गिरी, चिलगोजे की गिरी, शुद्ध भिलावा, असगन्ध नागौरी, कुलिञ्जन, अकरकरा प्रत्येक ३–३ तोले। सालब मिश्री, सकाकुल मिश्री, बहमन सुर्ख व सफ़ेद, तोदरी सफ़ेद सुर्ख दोनों, ज़ंजबील, हर एक २–२ तोले जाफ़रान,

तुख्म जरिष्क, तुख्म अँजरूद, कौंच के बीज हर एक १-१ तोले, फिलफिलदराज़ (पीपल) मस्तगी तुख्म हलयन हर एक १॥ तोले, कुंजद मुकश्शर (धोये तिल) समुद्र शोष, मुश्क बढ़िया हर एक माशे ६, कन्द सफेद ५ तोले, उस्ल (मधु बढ़िया) १५ तोले। सब को खूब बारीक पीस कर बाद में कन्द और शहद मिला कर माजून तैय्यार करें।

मात्रा ३-३ माशे सुबह शाम दूध के साथ लेवें और बढ़ा कर ६ माशे तक दे सकते हैं। यह माजून बड़ी पौष्टिक, स्तम्भन (रुकावट) करने वाली है, इसका ४ दिन तक लगातार सेवन करने से मनुष्य में अपूर्व बल और तेज की वृद्धि होती है।

आधा शीशी के दर्द पर —

नौसादर १ माशा, लौंग १ नग इन दोनों को करेले के पानी में घोल कर थोड़ा सा स्त्री का दूध मिलाकर २-३ बून्द नाक में टपकाने से फौरन आराम होता है।

सिर दर्द पर—

कबाब चीनी को अर्क गुलाब में पीसकर लेप करना दर्द सर को आराम करता है।

क्रिमि जन्य शिरोरोगमें—

आडू के पत्ते के रस में एलुवा को घिसकर लेप करने से, नाक में टपकाने से शीघ्र आराम होता है। क्रिमि मर जाते हैं।

मृगी के लिये—

नीली सोसन की जड़ ६ माशे अर्क गुलाब में पीस कर पीने से मृगी को आराम शीघ्र होता है

आँख की सोजिश और दर्द को दूर करने में अक्सीर है—

एलुवा, शयाफ़ मामीसा, रसौत, जाफ़रान, अफ़ीम, गेरु, लालचन्दन सब को बराबर मात्रा में लेकर अर्क गुलाब में पीस कर लेप करें।

बहरे पन को दूर करता है

कड़वे बादाम की गिरी, कड़ुवे घिया की गिरी हर एक १ तोले ८ माशे, तज २ छटांक, अदरक का रस ४ छटांक, तिल का तेल आध सेर, अकाकिया सब को मिलाकर मन्दाग्नि अग्निपर पकावें जब पानी जल जावे तेल रह जावे छानकर रखलें। जरा गरम करके २-२ बून्द कान में डालें

नकसीर बन्द करने के लिये अकसीर है

हरड़ का बक्कल, कसूम, कच्चे अनार के छिलके सब को बराबर मात्रा में पीस कर नाक में टपकावें।

कबूतर की बीटें नाक में सुंघाने से नक्सीर तुरन्त बन्द हो जाती है।

गधे का पेशाब नाकमें टपकाने से नाक की बदबू को दूर करता है।

सुगन्धित दन्त मंजन

(दाँतों के सब रोगों के लिये)

हरड़ का बक्कल	एक	तोले
बहेड़े का बक्कल	,,	तोले
आमले का बक्कल	,,	तोले
सौंठ	,,	तोले

पीपल	,,	तोले
माजूफल	,,	तोले
नागरमोथा	,,	तोले
नमक सैंधा	,,	तोले
बालछड़	,,	तोले
कबाबचीनी	,,	तोले
वंशलोचन	,,	तोले
बड़ी माँई	,,	तोले
समुद्र झाग	,,	तोले
अकरकरा	,,	तोले
फिटकरी	,,	तोले
मस्तगीरूमी	,,	तोले
कपूरकचरी	,,	तोले
लौंग	,,	तोले
पीपरमेंट	१/१६	तोले
सत अजवायन	,,	तोले
काफूर	३/४	तोले

नीला तूतिया देसी भुना हुआ एक तोले

शर्बत बजूरी बारिद—

खबूजे के बीज, खीरे के बीज हरएक १७ सत्रह माशे, तरबूज के बीज ६ माशे, कासनी के बीज २ तोले, शक्कर सफेद १ सेर, इन सब दवाओं को सेर भर जल में उबाल कर शक्कर मिलाकर शर्बत तैयार करें।

फायदे

जिगर के वरम को दूर करता है, पेशाब की जलन और मसाने और गुर्दे की तमाम बीमारियों को दूर करता है।

मात्रा ४ तोले अर्क गाजुबां १२ तोले से लेवें

शर्बत पाव सात आतशक और चर्म रोगों के लिये अक्सीर है।

बुरादा शीशम पाव भर, बुरादा चोबचीनी २ छटांक, उन्नाव २५. सन्दल सफ़ेद, सन्दल सुर्ख हर एक ३-३ तोले, स्याहतरा, हरड़ का बक्कल, अफ़तीमून, बिस्फायज, गुलनीलोफर, हरएक २-२ तोले, गुल सुर्ख, गुलबनफ़शा, हर एक ३-३ तोले, सनायकी पत्ती १० तोले, सुरन्जानशीरी दो तोलें, शकर सफेद १॥ सेर।

ऊपर के दोनों बुरादों को एक दिन रात गर्म जल में भिगो देवें फिर उबाल मलकर छान लें इस पानी में और दवाइयों को एक दिन रात तर रक्खें (भिगोदें) फिर उबाल कर छानकर शकर मिलाकर शर्बत तैयार करें।

मात्रा ३ तोले १२ तोले अर्क मुण्डीके साथ। यह आतशक और फोड़े फुन्सी में श्रेष्ठ है।

इत्रिफल जवानी—गुण—

दिमाग और मेदे की गन्दी रतूबत को साफ़ करता है, आन्त्रिक शूल को दूर करता है। नजला पुराना, सिर के दर्द के लिये अत्यन्त लाभकारी है। मात्रा ६ माशे अर्क गाजुबां १२ तोले के साथ लें।

नुसखा—

ज़ीरा सफेद, धनिया खुश्क हर एक सात तोले, हैड़ का बक्कल, सकमूनियां मसवी, गुलबनफशा, हर एक ४—४ तोले, पोस्त बलेला, (बहेड़े का बक्कल) आमला खुश्क, तबाशीर (वँशलोचन) गुलाब के फूल असली, गुलनीलो-

कर हर एक २—२ तोले, सन्दल सफेद, कतीरा हर एक १॥—१॥ तोले।

बिधि—

अव्वल दवाइयोंको कूटछानकर रोगन बादाम १५ तोले में मिलाकर अलग रखदें, और उन्नाव सपिस्तां १००—१०० दाने, गुलबनफशा ५ तोले को पानी में जोश दें और साफ करके हैड़ के मुरब्बे का शीरा १॥ गुना मिला करके तीन गुना शहद के किवाम में इत्रिफल तैयार करें।

शर्बत दीनार

कासनी के बीज, असली गुलाब के फूल हर एक ६-६ माशे बीज कासनी एक तोले, गुल नीलोफर, गाजुवां हर एक ३-३ तोले कसूसके बीज पोटली में बँधे हुवे ८ तोले शक्कर सफेद १ सेर रेवन चीनी ४ तोले।

कसूस के अलावा इन दवाओं को दरदरा करके आठ गुने पानी में पहले भिगो कर उबाल कर छान लें फिर चीनी मिला कर शर्बत तैयार कर लें बाद में रेवन चीनी खूब बारीक पीसकर मिला लेवें।

फायदे—

जिगर की सोजिश. और कब्ज़ को दूर करने वाला, गर्भाशय व मसाने की खराबी को दूर करता है।

मात्रा ४ तोले शर्बत को १२ तोले अर्क सौंफ में मिला कर देवें।

मलेरिया पर अनुभूत सिद्ध योग

(लेखक वैद्य भूषण लाला देवकीनंदन जायसवाल गोंदिया सी. पी.)

१ मलेरिया टेबलेट—प्रवाल भस्म २ तोला सत गिलोय दो तोला, क्विनाइन सल्फ दो तोला सब को नीबू के रस में घोट १—१ रत्ती की गोलियां बांधले, ज्वर न रहे ऐसे समय में प्रति दिन ३—३ घंटे के अन्तर से ३—३ गोलियां ३ दिन तक जल योग से रोगी को दें अवश्य ज्वर रुक जायगा। यह योग एलोपेथी और आयुर्वेद के सम्मिश्रण से बना हुआ है। इसलिये क्विनाइन से कोई हानि की संभावना नहीं रह जाती। ज्वर छुटजाने पर भी दो तीन दिन तक दोनों काल एक एक गोली जल योग से लेने पर अवशिष्ट ज्वरांश नष्ट होकर रोगी स्वास्थ्य लाभ के साथ शक्ति संपादन करता है।

२ गोपाल वटी—आकड़े का जड़ एक तोला (जड़ के ऊपरकी छाल लेना चाहिये) निम्ब सत्व एक तोला, सत्व गुडूची १ तोला, गोल सफेद मिर्च १ तोला, शुद्ध पारद एक तोला शुद्ध गंधक १ तोला, अभ्रक भस्म १ तोला सब को अदरक के रस में घोट १—१ रत्ती की गोलियां बना लेवे, और ज्वर न रहे ऐसे समय में चार २ घण्टे के अन्तर से १—१ गोली नीबू के गूदे के साथ अदरक रस और मधु के साथ रोगी को तीन दिन तक देवें खासकर इस औषधी का अनुपान विषम ज्वर के लिये नीबू का गूदा ही होता है। वात कफ ज्वर और कफ ज्वर में अदरक के रस और मधु के साथ देने से लाभ होता है।

मलेरिया वटी—शुद्ध श्वेत संखिया १ तोला कालीमिर्च १० माशा, शुद्ध हिंगुल ३ माशा। इन औषधियों को लेकर करेले के पत्तों के रस में घोटकर सरसों के प्रमाण गोलियां बना लो।

उपयोग—रोगीको साधारण कोष्ठ शुद्धि करा कर ज्वर चढ़ने के चार घंटे प्रथम १ एक गोली तुलसी के पत्तों में रख कर खिला देवें फिर गोली देने के ३ घण्टे बाद १ गोली दें। और ज्वर चढ़ने का जब एक घण्टा शेष रहे उस समय भी एक गोली उसी अनुपान के साथ खिला देवें इससे पुराने से पुराना मलेरिया ज्वर तीन ही गोलियों में साफ हो जाता है।

इसके अतिरिक्त ज्वर रोकने के लिये निम्न लिखित योग अचूक गुणकारी है। अपामार्गके पत्ते और काली मिर्च को घोट कर चणक प्रमाण गोलियां बांध ले और ज्वर न रहे ऐसे समय में प्रति तीन घण्टे के हिसाब से एक दिनमें तीन गोली इस क्रम से तीन दिन तक जल योग से रोगीको दो। गोली देनेसे एकाहिक, द्वाहिक, तृतीयक, चातुर्थिक, ज्वर रुक जाता है इसी प्रकार समभाग अतीस, गोलमिर्च को जल योग से बांधी हुई गोलियां अचूक काम करती है।

प्रिय पाठक गण !

हम को आयुर्वेदाचार्य सुरेन्द्र मोहन जी बी. ए., प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज लाहौर का एक विस्तृत समालोचनात्मक निबन्ध—**क्या हम आर्ष ग्रंथोंमें पाठ परिवर्तन कर सकते हैं?** इस शीर्षक के साथ प्रकाशनार्थ ता० २३-८-३५ को प्राप्त हुआ और जिसे कि अविकल रूप में हम जीवन सुधा में सुधा के पाठकों की ज्ञान वृद्धि के लिये प्रकाशित कर रहे हैं। प्रस्तुत निबंध में पाठ परिवर्तन का पूर्णतया उत्तर दायित्व श्री पं० मस्तराम जी शास्त्री को ही दिया गया है चाहे वह उनके शिष्यगणों में से किसी ने किया हो या स्वयं उनके द्वारा हुआ हो। परन्तु इस प्रकार पाठपरिवर्तन करने से ऋषि प्रणीत ग्रन्थों का अस्तित्व बड़े खतरे में पड़ जायेगा और महान् अनर्थ होने की सम्भावना है। हम इसके लिये श्री कविराज सुरेन्द्र मोहन जी बी० ए० आयुर्वेदाचार्य महोदय की प्रशंसा करते हैं जो कि उन्होंने स्वयं अपनी सम्मति को स्पष्ट करते हुये परिवर्तित पाठ के साथ २ श्लोकों के उद्धरण भी वैद्य समाज के सामने रक्खे हैं। और साथ ही वैद्य बन्धुओं को सम्बोधित करते हुवे इस प्रकार के कृत्यों की घोर निन्दा की है। इन आक्षेपों का यदि कोई उत्तर श्री पं० मस्तराम जी शास्त्री अथवा श्री पं० हरिदत्त जी शास्त्री महोदय की तरफ से आया तो हम पाठकों की जानकारी के लिये उसे अवश्य प्रकाशित करेंगे।

भवदीय—सम्पादक

प्रिया मनमोहिनी गुटिका

इसका नाम ही इसके गुणों को प्रकट करने के लिए काफी है, विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं, इसलिए यदि आप अपनी प्रिया को अपने ऊपर मुग्ध करना चाहते हैं, तो अवश्य ही इन गोलियों को मंगा कर इन का चमत्कार देखिए। आपको हृदय समुद्र की तरह लहर मारने लगेगा आप मस्त हो जायेंगे। मूल्य ८ गोली शीशी १), ३ तीन शीशी २॥) डाक व्यय पृथक्।

दन्त मुक्ताकर मंजन

इस मंजन के सेवन से दांतों की सब प्रकार की तकलीफें दूर होती हैं. बत्तीसी मोती की तरह चमकने लगती है. दांत या मसूड़ों में कैसा ही सख्त दर्द हो, दांत हिलते हों, मसूड़े फूल गए हों, पीप व खून आता हो, बदबू आती हो इत्यादि बीमारियों को यह मंजन लगाते ही फायदा करता है, इसकी । मज़ेदार खुशबू बड़ी ही उत्तम है। कीमत ।)

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ करने के लिए सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिए केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि इस की मालिश से लिङ्गेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता छोटापन टेढ़ापन व पतलापन दूर होकर इन्द्रिय में दृढ़ता, स्थूलता, और दीर्घता आजाती है जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वंचित (महरूम) हुए अनेक पुरुषों ने आशातीत लाभ प्राप्त कर के इस दिव्य औषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०), ३ माशे की शीशी २॥)

सिद्ध अर्शोहरि रसायन

(बवासीर की अक्सीर गोलियां)

यह गोलियां बवासीर के इलाज में हुकमी असर रखती हैं बवासीर कितनी ही पुरानी हो, ख़ूनी हो या बादी, कब्ज़ की शिकायत, मस्सों में चीस चबक दर्द आदि इन सब को रफ़ा कर के बहुत जल्द बवासीर को जड़ से नष्ट कर देती हैं। मूल्य २४ गोली मरहम की १ डिबिया २)।

बृहत् प्लीह नाशक वटी

(तिल्ली दूर करने की अक्सीर दवा)

यह गोलियां तिल्ली के लिए अमृत समान गुणकारी हैं वर्षों की बढ़ी हुई तिल्ली और पेट का बेडौलपना बहुत जल्द दूर होकर भूख बढ़ने लगती है, और शरीर में नवीन रक्त उत्पन्न करके शक्ति देती है।

मूल्य ४८ गो० का १॥)

श्रीकामदेव रसायनकी सुनहरी गोलियाँ

ये गोलियां अत्यन्त पौष्टिक और स्नायविक दुर्बलता तथा बाल्यावस्था में किए गये अनुचित कार्यों से अथवा युवावस्था में की गई असावधानियों से उत्पन्न हुई नपुंसकता को दूर करने में जादू का असर रखती हैं। इनके थोड़े ही दिन के सेवन से शक्ति अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त हो जाती है, भूख खूब लगती है, जो भोजन खाया जाता है उस का आहार रस बनकर शरीर को मोटा, ताज़ा, सुन्दर, सुडौल और ताक़तवर बना देता है। मुख सुन्दर और तेजस्वी हो जाता है, और खासकर दिमाग़ी काम करने वालों के लिए तो गोलियां निहायत अक्सीर हैं, हर मौसम में इस्तेमाल की जा सकती हैं।

कीमत ४८ गोलियों की शीशी २)। तीन शीशियों के ५)

डाक व्यय पृथक।

बृहत् समीर पन्नगवटी रसायन

रजिस्टर्ड

इसका सेवन एड़ी से चोटी तक के सर्व प्रकार के शारीरिक दर्द चाहे वह वात पित्तादि किसी भी दोष व किसी कारण से कैसे ही सख़्त क्यों न हों उन्हें दूर करने में बिजली की भांति असर दिखाता है। दर्द से बेचैन मनुष्य तुरन्त हँसने लगता है। इसके अतिरिक्त यह गोलियां माहवारी को साफ़ लाने व नलों के दर्द में अपना तुरन्त असर दिखाती हैं।

मूल्य ३२ गोलियों की एक शीशी का १)

डाक व्यय पृथक।

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार, देहली।

वैद्यराज पं० महावीरप्रसादजी के लिये चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, कूचा घासीराम, देहली में छपा।

जीवन-सुधा

राजवैद्य श्री पं० महावीरप्रसाद जी रसायन-शास्त्री

अध्यक्ष—

जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—

प्रोफ़ेसर पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क ≡)

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज ।

अध्यक्ष—

श्री प० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य ।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये ।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी ॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः । पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ॥

वर्ष ५ श्रावण, वीरनिर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९९२, सितम्बर सन् १९३५ अङ्क ६

सत्यमेवजयतेनानृतम्

(ले०—श्री पं० मस्तराम जी शास्त्री वैद्य,
चरक फार्मेसी रावल पिन्डी)

प्रिय पाठक महोदय ?

आज मैं वैद्य समुदाय के सन्देह निवृत्यर्थ उसपत्र का उत्तर लिखने के लिये विवश हो गया हूँ जोकि उन्होंने 'जीवनसुधा' में छपवाकर वैद्य समुदाय को अपने पक्ष में करने के लिये कुटिल चाल से काम लिया है। जिसमें अधिकतर असत्य का आश्रय लिया गया है।

प्रथम तो मैंने चरक के पाठ को बदलवाने में कोई-अनधिकार चेष्टा नहीं की। क्योंकि इस विषय में इनका ज्ञान परिमित है। वृथा ही यह आयुर्वेद के विद्वानों पर आक्षेप कर के उच्च स्थानपर बैठना चाहते हैं। मुझे शोक से लिखना पड़ता है कि ये थोड़ा सा ज्ञान पाकर अपने आपे से बाहर हो रहे हैं। दूसरों की उन्नति तथा मानको न सहन कर सकना ही इनके लिखे लेखों से झलकता है। आप को मालूम होना चाहिये कि मेरी फार्मेसी का नाम 'चरक फार्मेसी' है, इस नाम रखने से ही आपको परिचय उपलब्ध हो सकता है कि मेरा चरक नाम से कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। और मैं उसे कितनी उच्च और पूज्य दृष्टि से देखता हूँ और इसीकारण चरक संहिता पर प्राचीन अमुद्रित भट्टार हरिचन्द्र की व्याख्या को

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज ।

अध्यक्ष—

श्री प० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य ।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये ।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी ।।

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः । पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ।।

वर्ष ५ श्रावण, वीरनिर्वाण सं० २४५९, वि० सं० १९९२, सितम्बर सन् १९३५ अङ्क ९

सत्यमेवजयतेनानृतम्

(ले०—श्री० पं० मस्तराम जी शास्त्री वैद्य,
चरक फार्मेसी रावलपिन्डी)

प्रिय पाठक महोदय ?

आज मैं वैद्य समुदाय के सन्देह निवृत्यर्थ उसपत्र का उत्तर लिखने के लिये विवश हो गया हूँ जोकि उन्होंने 'जीवनसुधा' में छपवाकर वैद्य समुदाय को अपने पक्ष में करने के लिये कुटिल चाल से काम लिया है। जिसमें अधिकतर असत्य का आश्रय लिया गया है।

प्रथम तो मैंने चरक के पाठ को बदलवाने में कोई-अनधिकार चेष्टा नहीं की। क्योंकि इस विषय में इनका ज्ञान परिमित है। वृथा ही यह आयुर्वेद के विद्वानों पर आक्षेप कर के उच्च स्थानपर बैठना चाहते हैं। मुझे शोक से लिखना पड़ता है कि ये थोड़ा सा ज्ञान पाकर अपने आपे से बाहर हो रहे हैं। दूसरों की उन्नति तथा मानको न सहन कर सकना ही इनके लिखे लेखों से झलकता है। आप को मालूम होना चाहिये कि मेरी फार्मेसी का नाम 'चरक फार्मेसी' है, इस नाम रखने से ही आपको परिचय उपलब्ध हो सकता है कि मेरा चरक नाम से कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। और मैं उसे कितनी उच्च और पूज्य दृष्टि से देखता हूँ और इसीकारण चरक संहिता पर प्राचीन अमुद्रित भट्टार हरिचन्द्र की व्याख्या का

सम्पादन कर रहा हूँ और दूसरी व्याख्या जेज्जटाचार्य की जोकि चिकित्सास्थान पर त्रुटित अपूर्ण मिली है उसको भी सम्पादन कर रहा हूँ। इसी टीका की उपलब्धि के लिये मैं बीकानेर मद्रास पूना और बडौदा वगैरह के पुस्तकालयों में अन्वेषण करता रहा। जिसका प्रथमपुष्प "तन्त्रयुक्ति" विचार बीकानेर सम्मेलन पर विद्वानों की सेवा में अर्पण कर चुका हूं। दूसरा पुष्प चरक प्रथम अध्याय की विस्तृत व्याख्या नवम्बर में बनारस में होने वाली वैद्य सम्भाषा परिषद् में समर्पित करूंगा। ऐसे मनुष्य पर क्या आप यह सम्भावना कर सकते हैं कि चरक के पाठों को बदल दे? परन्तु मैंने तो 'अश्विनी कुमार' पत्र के प्रथमाङ्क में 'उत्तमांग शिरः' लेख में यह लिखदिया था कि चरक विषयक कठिन समस्याओंको हल करने के लिये और चरक पर किए गये आक्षेपों को का उत्तर देने के लिये अपनी लेखनी को काम में लाएगें। हाँ यह होसकता है, कि संस्कारोत्तर संस्कारों के कारण वा लेखकों के प्रमाद के कारण कोई पाठ अशुद्ध होगया हो या कोई अशुद्धि रह गई हो उस अशुद्धि से प्रकरण-विरोधी पाठ बनगया हो जो उस प्रकरण के साथ संगति न रखता हो अथवा उस अशुद्ध पाठ से अमंगल होने की सभावना हो उसे ठीककर सम्पादन करदेने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार है। वह अधिकार भी उसे वहां तक ही आज्ञा देता है कि जहां तक उसे पुराने आचार्योंका प्रमाण रूप पाठ उसके अनुरूप मिलता हो। जिस पाठ के ऊपर बात चल रही है नवीज्यैश्च लोमहर्षः स्यात्, इस तृतीयान्त पाठ को बदल कर आचार्यों ने न वीज्यश्च लोम हर्षः स्यात्, ऐसे प्रथमान्त पाठको बहुत समयसे किया हुवा है। "वीज्यैश्च" का अर्थ हम यह करते हैं वीजयितुं योग्यैः, अर्थात् वीजन करने योग्य साधनों से और प्रथमान्त पाठ 'वीज्यश्च' का अर्थ हम यह करते हैं "वीजयितुं योग्यः वीज्यः। अब तनिक चरक के इस पाठ को देखो—

शीतै र्निवर्तयेत्तात्र वीज्यश्च लोमहर्षः स्यात्

अर्थात् उनको (मद मूर्च्छा आदि विष वेगों को) शीत उपचारों से हटावे, लोमहर्ष नहो, क्योंकि जिन आचार्यों के प्रमाणों से लोमहर्ष करना पायाजाताहै, वे आचार्य यह हैं–

चरक-सुश्रुत-वाग्भट्ट, इन्दुकर और अरुणदत्त। जिन्होंने यह लिखा है कि शीतोपचार से लोमहर्ष करो यदि लोमहर्ष हो तो चिकित्सा करो अन्यथा त्याग दो। इसके आधार पर 'न' को न रख कर जो लेखक के प्रमाद से वा मुद्रणदोष से आगया है ऐसा प्रतीत होता है-- 'वीज्यश्चा-लोमहर्षात् स्यात्' ऐसा पाठ लिख दिया है। इस पाठ से रोगी की जीवन रक्षा हो सकती है, और इसी के अनुकूल अष्टांग-संग्रह, वागभट्ट-अष्टांग-हृदय, और उनके टीकाकार इन्दुकर वा अरुणदत्त आदि आचार्यों ने भी 'वीजेच्चालोमहर्षतः' ऐसा लिखा है।

अब इन महाशयजी की कहानी सुनें जिसने पहिले तो इस पाठ पर यह लिखा है कि पंखा नहीं करना चाहिये क्योंकि विष का उपद्रव लोमहर्ष खड़ा हो जायगा। और यह पाठ

वागभट्ट के किसी प्रूफ़ देखने वाले की ग़लती से ऐसा छप गया है—

इस पर हमारे विचार सुनिये कि वागभट्ट का मूलपाठ प्रूफ देखने वाले की ग़लती से छपा है वा अरुणदत्त की टीका में भी ग़लत छप गया है बम्बई के दूसरे प्रेसों में भी ? मद्रास के छपे अष्टांग संग्रह में भी ? और वही प्रूफ़ संशोधक लाहौर में भी पहुँचकर यहाँ के छपे पुस्तक में भी गलती कर गया। आप इनके आयुर्वेद सन्देश में छपे लेख को पढ़ें और देखें अब इन्हें कई महीनों के बाद होश आया कि अब इस पत्र में जो कि विद्वानों को धोका देने के लिये भेजा जा रहा है इसमें यह बात नहीं लिखी क्योंकि इनकी बुद्धि का दिवाला निकलता था। अब इनको पता चला कि सब देशों में सब पुस्तकों में प्रूफ संशोधकों की ग़लती नहीं हो सकती इसलिये अब यह चरक और वागभट्ट का मतभेद बताने लग पड़े हैं। इन्हें यह पता नहीं कि यह दार्शनिक ग्रन्थ नहीं कि मतभेद होने से कार्य चल जायगा। यह आयुर्वेद शास्त्र है। यहां जीवन मरण का सम्बन्ध है थोड़ा सा भी विपरीतकार्य होजानेसे रोगीके प्राणनाश का भय है। साथ ही दूसरा कारण यह है कि चरक वागभट्ट का मतभेद नहीं होना चाहिये क्योंकि चरक वागभट का सम्बन्ध उपजीव्य उपजीवक सम्बन्ध है। व्याकरण में इसे सन्निपातपरिभाषा विरोध कहते हैं। "यो यमाश्रित्योत्पद्यते स तँ प्रति सन्निपातः" चरक सुश्रुत को ही लेकर वागभट्ट ने अपनी संहिता लिखी है। जिसे वागभट्ट स्वयं स्वीकृत करते हैं। आयुर्वेद विद्वान् भी यही मानते हैं। उसका मत चरक के मत से भिन्न नहीं होना चाहिये।

अब लीजिये इनके दूसरे पहलू को जिसमें यह लिखते हैं कि श्लोक कितना कुरूप कराल होगया है। और अर्थ भी बदल गया है। प्रथम तो हमने चरक के उसी पाठ को रखने के विचार से "वीज्यश्चालोमहर्षात् स्यात्" ऐसे रखदिया है। केवल वागभट्ट के पाठ को ही हमने नहीं उठाया। अपनी अकल शकल सब को अच्छी लगती है। व्याकरण वा छन्द की ग़लती न निकाल कर कुरूप वा कराल ही कह डाला। जिन्हें यह पता ही नहीं कि कुरूप वा कराल का अर्थ क्या होता है। वे व्याकरण वा छन्द को क्या जानें। क्योंकि बम्बई के निर्णयसागर प्रेस जो कि सुन्दरता में प्रसिद्ध है उसमें छपा श्लोक इन्हें कुरूप दीखता है तथा जान पड़ता है कि कराल से भयभीत होकर ये अपने पैतरे बदल रहे हैं। इसका प्रमाण सुनिये—

आगे जाकर आप लिखते हैं कि—"यदि यही भाव अर्थात् वीजन करना चाहिये संशोधक को अभिमत था तो भी चरक के पूर्वपाठ से सिद्ध हो सकता है। और यह इस नवीन पाठ से अच्छा है। इस लेख से यह ज्ञात होता है कि ये हमारे पाठ से अब कुछ कुछ सहमत होते जाते हैं। परन्तु इन्हें यह पता नहीं कि यथा तथा यावत् तावत् को लुप्त निर्देश कहते हुए यह अर्थ करते हैं "तथा न वीजयेत् यथा रोमाञ्चो-भवेत्" 'न वीज्यश्चा लोमहर्षः स्यात्" इस

पाठ में से अपनी बेघड़बुद्धि से इन्होंने 'बीजयेत्' कहां से निकाल लिया यह भी विचारणीय है। क्योंकि "बीज्य" का अर्थ ऊपर दिखा चुके हैं। 'बीजयितु' योभ्यः पुरुषो बीज्यः' आगे चलकर यह लिखते हैं कि यह विकल्प टिप्पणी में दे सकते थे। तनिक देखो —इन्हें तो इतना भी पता पता नहीं कि विकल्प का क्या अर्थ होता है। यह तो उसका असली स्वरूप है। अब पाठ बदलने का प्रमाण सुनिये ! "श्री यादवजी ने वा पं० दत्तराम ने यह पाठ न केवल अष्टांगहृदय के आधार पर अपितु चरक सुश्रुत के आधार पर किया है। आगे जाकर आप महाशय जी लिखते हैं कि ग्रन्थकारों में मतभेद है। किन्तु मतभेद है ही नहीं यह हम पहिले बता चुके हैं कि महाशय जी कहते हैं "कि चरकीय श्लोक के दूसरे अर्थ कर लिये जावें। (क्योंकि आपकी समझ में यह नानार्थक है) तो दोनों में अन्तर कम रह जाता है। जैसे वागभट्टः—रोमाञ्च होने तक पंखा करो। और चरकः—जिसमें रोमाञ्च न हो इतना पंखा करो, हमें यह दूसरा मत अच्छा प्रतीत होता है कि लोमहर्ष उत्पन्न करना अभीष्ट नहीं।" इत्यादि—

अब हमारी ओरसे सुनिये—

"जादू वह जो सिर चढ़ बोले"

१ पहले वागभट के पाठको प्रूफ शोधकों की गलती मानते थे। अब उसे मतभेद मानने लगे हैं। अब उस पाठ को ठीक मान कर जब रोमाञ्च हो पंखा हिलाओ। जहां चरक पाठ में पंखा हिलाना नहीं मानते थे कि रोमाञ्च हो जायगा। अब लिखते हैं कि जिसमें रोमाञ्च न हो इतना पंखा हिलाओ। और कहते हैं कि हमें दूसरा मत अच्छा लगता है। क्यों न लगे यह आपके दिमाग की उपज है। आपको इतना पता नहीं रोमाञ्च तो शीतोपचार से भी हो जायगा जैसे सुश्रुत कहता है "शीताभिरद्भिश्च न लोमहर्षो विपाभि भूतपरिवर्जयेत्तम्॥ फिर न मालूम यह कैसे लिखा कि इतना पंखा हिलाओ जिससे रोमहर्ष न हो।

२ आयुर्वेद के धुरन्धर विद्वान् जिन्होंने अनेकों पुस्तकों का सम्पादन किया और टीका करके आयुर्वेद संसार को अनुगृहीत किया व्यर्थ ही उन पर कलङ्क लगाया है कि उन्हों ने अपनी भूल मान ली है यह लिख कर वैद्यों मे धोखा किया जा रहा है कि उन्होंने भूल मानली है। उनका पत्र मुझे मिला है जिस पर उन्होंने महाशय की अनोखी सूझ पर खेद प्रकट करते हुए लिखा है कि " मैंने स्वयं विचार पूर्वक पं० मस्तराम के संकेतानुसार वाग्भट्ट के आधार पर पाठ ठीक किया है। तथा यह बिलकुल भूल है कि चरक के प्रूफ पं० मस्त राम जी या पं० हरिदत्त जी ने शोधे हैं।' इत्यादि। यह ध्रुव सत्य है कि-यादव जी ने मुझसे वा पं० हरिदत्त जी से कभी चरक का प्रूफ संशोधित नहीं करवाया, यादव जी ही इस विषय में मान्य हैं। महाशयजी कोरा झूँठ लिखकर मेरे विरुद्ध वैद्य समुदायको उभारने के लिये लेख लिख रहे हैं। क्या सुरेन्द्रमोहन जी इस विषयको साबित न कर सकने पर न्यायानुसार कोर्टसे दण्डनीय नहीं ! अब रही विश्वा-

सघात की बात- सो मैंने तो कोई पाठ बदला ही नहीं जिससेविश्वासघात किया हो। हां बल्कि मैं गंगाधर वा दूसरे विद्वानों के मत दिखा सकता हूँ जो उन्होंने चरक में जगह २ पाठ बदले हैं। तबतो उन पर ही विश्वासघात का दोष आना चाहिये। क्योंकि उन्होंने अर्थानुसार विचार कर पाठ बदला है। अस्तु आज आठ नौ महिनों से महाशय जी मेरे विरुद्ध लेख लिख कर विद्वान् वैद्यों को उभार रहे हैं इसलिये मैं यह लेख लिखकर भेज रहा हूं। अन्त में आयुर्वेद के विद्वानों से मेरी प्रार्थना है कि वे हंस की तरह दूध वा पानी को अलग कर निर्णय दें मैं उस निर्णय के आगे झुकने को तैयार हूं—

ज्ञान लवदुर्दिग्धं ब्रह्मापितं नरं न रञ्जयति।

प्रिय पाठक महोदय! आज मैं विद्वत्समाज के समक्ष एक विवादग्रस्त विषय को उपस्थित करता हूँ और आशा रखता हूँ, कि इस विषय को विचारपूर्वक हृदय में स्थान देकर जनता की भलाई के उद्देश्य से वा आयुर्वेद के गौरव को लोगों की दृष्टि में पूज्य व उपादेय बनाने के विचार से निष्पक्ष होकर अपने विचारों से मुझे अनुगृहीत करेंगे। नहीं नहीं वैद्य समुदाय को अनुगृहीत कर यश के भागी बनेंगे; वा विषातुर रोगी के प्राण रक्षा के फलजन्य धर्म का फल सञ्चय कर अन्यत्र प्राणाचार्य कहलाने के योग्य बनेंगे।

वह विषय यह है, जिसका आपको पहले भी परिचय मिल गया होगा। 'अश्विनीकुमार पत्रिका' में चरक के एक विष प्रकरण का पाठ शुद्ध करके नमूने के तौरपर विद्वान् वैद्य समुदाय के समक्ष विचारार्थ पेश किया गया था। परंच ईर्ष्यावश कुछ वैद्यों का व्यक्तिगत वैमनस्य होने के कारण एक स्वर्णकार को आगे करके इस लेख के विरुद्ध लेख लिखाया गया था और साथ ही वैद्यों पर नीचातिनीच हमले भी किये गये थे और पीछे पता लगने पर स्वयं भी प्रकट हो गये। अब परदे की ओट में आकर वृथा ही हमारे प्रतिष्ठित मिश्र वैद्य यादवजी त्रिकमजी के नाम को समक्ष रखकर, "कि उन्होंने अपनी भूल सुधार ली है" ऐसा पत्र में लिखकर दूसरे विद्वानों को अपने पक्ष में करने के लिये कूटचाल चली जा रही है और यादवजी त्रिकमजी ने कोई अपनी गलती स्वीकार नहीं की इसलिये मैं विद्वानों के समक्ष निर्णयार्थ इस विषय को खोल कर रख देना अपना कर्तव्य समझता हूँ। जैसे चरक संहिता विषाध्याय २३ में लिखा है—

'घर्षणा मति प्रवृत्ते वटादिभिः शीतलः प्रलेपः।
रक्तं हि विषाधानं वायुरिवाग्नेः प्रदेहसेकैस्तत्।
शीतैः स्कन्दति तस्मिन् स्कन्ने व्ययं याति विषवेगः।
विष वेगान् मदमूर्च्छा विषाद हृदय द्रवाःप्रवर्तन्ते॥
शीतैर्निवर्तयेत्तान् न बीज्यश्च (बीज्यैश्च) लोमहर्षः स्यात्॥

घर्षण से रक्त के अति प्रवृत्त होने पर वटादिकों से शीतल प्रलेप करना चाहिये क्योंकि विष का आधान (आश्रय) रक्त है। इसलिये शीत प्रदेहसेकों से रक्तस्कन्द अर्थात् रक्त जम जाता है उसके स्कन्दन हो जाने पर विष वेग नहीं रह जाता है। विषके वेगसे मद, मूर्च्छा, विषाद और

हृदयावसाद होने लग जाता है अतः इनको शीतोपचार द्वारा दूर करना चाहिए । अर्थात विष के वेगको रोक देना चाहिए कि मद मूर्च्छादि न हों । यह श्लोक के प्रथम तीन पादों का अर्थ ही है । अब अवशिष्ट रहा चतुर्थ पाद । ज़रा इसके पाठ वा अर्थ पर विशेष विचार कीजिए । चरक की पुरानी पुस्तकों में "न वीज्यैश्च रोम हर्षःस्यात्" अर्थात् न—नहीं-वीज्यैः-वीजयितुं योग्यैः वीज ने योग्य वस्तुओं से (अर्थात् पंखा करने से) रोमहर्षः—रोंगटों का खड़ा होना होगा—अतएव पंखा नहीं करना चाहिए । गङ्गाधर ने पाठ बदलकर 'न वीज्यश्च रोमहर्षःस्यात्' ऐसा कर दिया है । यह ध्यान रहे कि अन्वय परस्पर साकांक्ष पदों का ही होता है—यह नियम है । अस्तु—इसके अनुसार अन्वय होगा कि 'न वीज्यैश्चतान् निर्वत येत्' उन उपद्रवों को वीज ने योग्य वस्तुओं से वा पंखे से न हटावे क्योंकि रोमहर्षःस्यात् अर्थात् रोंगटे खड़े हो जावेंगे । अब यहां पर यह सोचना चाहिए कि रोमहर्ष होजाने से क्या रोगी के प्राणनाश हो जाने का भय है ? यदि रोमहर्ष से प्राण नाश का भय है तो शीतोपचार किस लिये किया गया । यदि आप कहें कि विषाश्रय रक्त को एकत्र करने के लिए तो स्कन्दतावस्था में क्या रोमहर्ष नहीं होगा जोकि शीतोपचार के विशेष प्रभाव का और रोग की साध्यावस्था का द्योतक है । यदि आप कहें कि शीतोपचार वा शीत वायु से वा पंखे से रोमहर्ष नहीं होता तो यह बात ठीक नहीं है क्योंकि यह बात प्रत्यक्ष विरुद्ध और शास्त्र विरुद्ध है । सुश्रुत और चरकादिकों के इन वचनों का आप क्या अर्थ करेंगे ।

शिशिरैर्न लोमहर्षो नाभिहते दण्ड राजी स्यात् ।
क्षतजं क्षताच्च न यात्ये तानि भवन्ति मरणलिंगानि ।

च० चि० अ० २३ श्लो० २४

इस पर गंगाधरजी व्याख्या में लिखते हैं कि 'शिशिरैः-अतिहिमजलैः-लोमहर्षो न स्यात्' इस श्लोक से जाना जाता है कि रोमहर्ष रोगी के मरण का लक्षण नहीं । अपितु रोमहर्ष जीवन का लक्षण है । अब सुश्रुत का प्रमाण लीजिए—

'शस्त्रक्षते यस्य न रक्त मेति । राज्यो लताभिश्च न सम्भवन्ति ।

शीताभिरद्भिश्च न रोमहर्षो विषाभिभूतं परिवर्जयेत्तम् ॥ सु० कल्पस्था० ३ अध्याय ।

अब अष्टांग संग्रह का भी प्रमाण लीजिए—

जाम्बव प्रतिमो दंशः कूर्मपृष्ठ वदुन्नतः ।
रक्तं खेभ्यः समस्तेभ्यो वर्तते ननु दंशतः ॥
रोम्णां न शीतलैर्हर्षः श्वयथुर्लोहितासितः ।
हृष्टमन्दमना वक्रं वक्त्रत्वं यस्यतं त्यजेत् ॥

अ० हृ० उत्तरस्था० ४१ अध्या० ।

इन आचार्यों ने तो ऊपर दिखलाये हुए प्रमाणों में शीतोपचार करके रोमहर्ष करके देखना लिखा है । आप इतना घबराते क्यों हैं कि रोमहर्ष न हो जावे । क्या पंखा न करने से रोमहर्ष रुक जावेगा— वा केवल पंखे से ही रोमहर्ष होना था—यह इनकी विचित्र बुद्धि की उपज हमारी समझ में नहीं आती है । हम तो पंखे को शीतोपचार में सहायक मानते हैं । और ठण्डे जल

वा ठण्डी वायु से पशुओं तक को रोमहर्ष होते हुए प्रति दिन देखते हैं। अब हमने यहां पर 'बीज्यश्चाऽऽलोमहर्षात् स्यात्' ऐसा कर दिया है। जो इन लोगों को कुरूप मालूम होता है। हमने अष्टांग संग्रह वा वाग्भट्ट के निर्णीत पाठ को ही उठा कर नहीं रख दिया है क्योंकि उस पाठ को तो यह बुद्धि के ठेकेदार वा प्रूफसंशोधक की, किसी ब्राह्मण की गलती से ऐसा छप गया है ऐसा कह रहे हैं। इन्हें यह मालूम नहीं कि वह ब्राह्मण कौन था जिसे सिन्धु का चरक कहते हैं। वह वाग्भट्ट हैं, जिनको आज मद्रास प्रांत के वैद्य बड़े आदर की दृष्टि से देखते हैं। दूसरे देशवासी वैद्य भी इसे कम पूज्य नहीं समझते। यदि इस एक ब्राह्मण की गलती से ऐसा पाठ छप गया है तो भी हम इसको मानने के लिए तैयार हैं क्योंकि व्याख्याकार इन्दुकर ने भी इसी पाठ को माना है। और अरुणदत्त ने भी इसी पाठ को सुसंगत समझा है। चक्रपाणि की तो इस पर व्याख्या मिलती ही नहीं। गंगाधर ने भी मूल पाठ के सिवाय अपनी विशेष व्याख्या कुछ नहीं की। यदि प्रूफ संशोधक की गलती है तो सब प्रेसों में और सब शहरों में कैसे हो गई। अब उपरि निर्दिष्ट आचार्योंके पाठ उद्धृत करता हूँ।

अष्टांग संग्रह में इसी प्रकरण और इसी श्लोक पर यह पाठ मिलता है—

अस्कन्ने विषवेगाद्धि मूर्च्छायमदहृद्द्रवाः
भवन्ति तान् जयेच्छीतैर्वीजेच्चारोम हर्षतः।

इसकी व्याख्या इन्दुकराचार्य्य लिखता है—

आरोमहर्षतः-यावद् रोमाञ्चोत्पत्तिस्तावद् वीजेत् वीजनञ्च कुर्यात्' इस श्लोक की व्याख्या में वाग्भट्ट में अरुणदत्त लिखता है कि तथा रोमञ्चो यावच्छीतेन स्यात्" तावद् वीजेच्च ॥

उसका पाठ यह है—

"शोणितं स्रुतशेषं च प्रविलीनं विषोष्मणा।
लेपसेकैस्तु बहुशः स्तम्भयेद्भृशशीतलैः॥
अस्कन्ने विषवेगाद्धि" इत्यादि।

अब आप ही विचार करके देखें कि तीन आचार्य्यों के मत से सम्मत पाठ और शास्त्र प्रकरणानुमोदित ठीक है—वा लकीर के फकीर बन कर उस असङ्गत और अशुद्ध पाठको रखकर उससे होने वाले विषरोगी के प्राणघात को करा कर अपयश के भागी बनना ठीक है। अब रहा रोमहर्षोपद्रव।

"निद्रां तन्द्रां क्लमं दाहमपाकं लोमहर्षणम्।
शोथश्चैवातिसारञ्च कुरुते जङ्गमं विषम्॥

गंगाधर जी इस पर कहते हैं कि यह तो "जङ्गमविषस्य निद्रादिकं सामान्यं लिङ्गम्" यह उनका निर्दिष्टश्लोक है जिससे रोमहर्ष को लेकर वावेला मचा रहे हैं।

अब हम आपको और प्रमाण देते हैं कि यहां पर रोमहर्ष होता है—किस अवस्था में होता है और क्यों होता है। वह अवस्था साध्य है या असाध्य।

चरके—राजिमद्विषेण शुक्लत्वं त्वगादीनां शीत ज्वरो रोमहर्षः स्तब्धत्वं गात्राणामित्यादीनिकफज वेदनालिङ्गानि भवन्ति। सुश्रुते राजिमतां प्रथमे वेगे विषं शोणितं दूषयति, तत्प्रदुष्टं पाण्डुता

मुपैति तेन लोमहर्षः शुक्लावभासश्च पुरुषो भवति। गंगाधरः—आदंशाच्छोणितं पाण्डुमण्डलानि ज्वरोऽरुचि रोमहर्षश्च दाहश्च आखुदूषी विषार्दिते। हृष्टरोमोच्चटिंगेन। अष्टांगसंग्रहे—शरीरं दूषिते रक्तेसर्वविमिचिमायते। कोठःसमण्डलः स्वेदो-रोमहर्षश्च जायते॥ दंशो राजिमतो रोमहर्षस्तमः श्वासो रोगाश्चान्ये कफोद्भवाः।

लूताविषे——तृतीये सज्वरो रोमहर्ष-कृद्रक्तमण्डलः।शरावरूपस्तोदाढ्यो रोमकूपेषु सास्रवः

मूषिकविषे रोमहर्षः स्रुतिमूर्च्छादीर्घकालानु-बन्धनम्।

यह लोमहर्ष है। जिसपर बड़ा हाहा कार मचा हुआ है मालूम होता है कि हमारे गवेषणात्मक लेख को पढ़ आपको भी लोमहर्ष उपद्रव उत्पन्न होगया है-जो कि आपकी विद्वत्ता का अरिष्ट लक्षण प्रतीत पड़ता है। किंतु हम आपको आशा दिलाते हैं कि लोमहर्ष सामान्य उपद्रव है विशेष उपद्रव नहीं है—सुनिये, विशेष उपद्रव १६ होते हैं। जो नीचे लिखे जाते हैं।

"ज्वरकासवमिश्वासहिध्मातृष्णार्तिमूर्च्छनम्।
विड्भेदोऽतिवाहित्वमानोहो वस्तिमूद्धर्वरुक्॥
श्वयथुः पूतिदंशत्वं रक्तस्रावो विषानिलः।
इति षोडश निर्दिष्टा विषार्तानामुपद्रवाः।
गच्छन्त्युपेक्षिता नाशं यैर्जुष्टा विषरोगिणः॥

अब आपको पता लग गया होगा कि उपद्रव कौन से हैं और रोमहर्ष किस अवस्था में होता है। सिवाय राजिमान् सर्प के तीसरे वेग में वा प्राथमिक अवस्था में और आखुदूषी विष लूता, उच्चिटिंग आदि विषों के और कहीं नहीं पाया जाता है और यह असाध्य नहीं है—नाही असाध्यावस्था का चिन्ह है प्रत्युत समस्त सर्प चिकित्सा तथा स्थावर विष चिकित्सा में शीतोपचार वीजन आदि क्रियाओं से रोमहर्ष पैदा करके साध्यासाध्य अवस्था का ज्ञान उपलब्ध किया जाता है।

जैसे मैं ऊपर सब आचार्यों का मत प्रदर्शित कर आया हूँ। स्थावर—जंगम विष चिकित्सा में कहीं भी रोम हर्ष को उपद्रव रूप से स्वीकृत करके असाध्य कहदेने का निर्णय नहीं किया गया। रोमहर्ष कफाधिक्य वा सामान्य विष के कारण है जिसे असाध्य या मारक नहीं कहा जा सकता। अष्टांगहृदय में राजिल सर्प के दष्ट के वेग में भी रोमहर्ष नहीं पाया जाता है—

"दष्टस्य राजिलैर्दुष्टं पाण्डुतां याति शोणितम्"
पाण्डुता तेन गात्राणां द्वितीये गुरुताऽति च।

क्या विड़ौजा की आज्ञा बिना ही शिवजी (गंगाधर) चरक मूलपाठ में परिवर्तन कर गये। क्या गंगाधर जी ने बिड़ौजा के आदेश को नहीं माना। इसका हमें भी हार्दिक दुःख है।

ग्रहणी अधिकार में गंगाधर जी वा अन्य-चरक के पाठों में भेद क्यों?

गंगाधर	अन्ये
अग्निरुदीर्यः	अग्निरुद्दर्यः
प्राणादीनीन्द्रियाणिच	प्राणादीनीन्द्रियाणि च
प्रसाद किट्टौधातूनाम्	प्रसाद किट्टे धातूनाम्

गंगाधर	अन्ये
पाकादेवाविगर्हितः	पाकादेवंविधःस्मृतः
रसाद्रक्तं प्रविशतः	रसाद्रक्तं विसदृशात्

प्राचीन मुद्रितामुद्रित पुस्तकों में "स्थिरतां प्राप्य शौक्ल्यंच मेदोदेहेऽभि जायते" यह पाठ मिलता है, परन्तु "मांस" का उत्तर बीच में नहीं पाया जाता अब नवीन छपी पुस्तकों में यह पाठ मिलता है। "स्थिरतां प्राप्य मांसं स्यात् सोष्मणा पक्वमेवतत् स्वतेजोऽम्बुगुणस्निग्धोद्रिक्तं मेदोऽभिजायते" यह पाठ कहां से लेकर कैसे ठीक किया गया और यह क्यों ? क्या यहां पर भी वह सम्पादक के कर्तव्य से च्युत हो गए? प्रतीत होता है कि उन्होंने लालाजी का "सम्पादक परिभाषा प्रदीप" नहीं पढ़ा था, यदि पढ़ा होता तो इतना अनर्थ न करते।

> तृतीये दंश विक्लेदो नासिकाक्षिमुखस्रवाः॥
> चतुर्थे गरिमा मूर्ध्निमन्यास्तम्भश्च पञ्चमे।
> गात्रभंगो ज्वरः शीतः शेषयोः पूर्ववद् भवेत्॥

यह सब कुछ मैंने शास्त्रीय विचार आपके समक्ष रख दिया है। यदि लोमहर्ष विषोपद्रव है तो क्या पंखा चलाने के बिना नहीं हो सकता। यदि हो सकता है तो पंखा उसे कैसे हटा सकता है। यदि पंखा हटा नहीं सकता तो पंखे का होना न होना बराबर है। यदि पंखे से ही लोमहर्ष होता है तो वह उपद्रव कैसे रहा। हमारे विचार में तो शीतोपचार से रोमहर्ष करना ही विष वेग से उसकी रक्षा करना है। अब रही यह बात कि कितने विषके परिमाण में और कब क्यों किस अवस्था में रोमहर्ष होगा। यह आप बता सकते हैं। इसलिये यह निर्णय आप पर ही छोड़ा जाता है। "न वीज्यैश्च लोमहर्षः" या "न वीज्यश्च लोमहर्षः" इस पर चक्रपाणिजी की की व्याख्या नहीं। हां पुरातन पुस्तकों मे तृतीयान्त पाठ है।

अब हम यहां सम्पादक का लक्षण करने वाले लाला साहिब जी से पूछते हैं कि यहां पर गंगाधर ने प्रथमान्त पाठ क्यों लिखा जब कि आपकी निर्दिष्ट परिभाषानुसार सम्पादक मूलपाठ में परिवर्तन नहीं कर सकता। फिर गंगाधरजी ने किस प्रकार मूल पाठों में बहुत स्थानों पर परिवर्तन किया।

नोट—हमारे विचार में यह पाठ अष्टांगहृदय शरीर स्थान अध्याय ३ 'रसाद्रक्तंततोमासं' इस श्लोक की व्याख्या में अरुण दत्त ने लिखा है "चरकसंहितायां दृढ़बलोऽप्याह रसाद्रक्तं ततोमांसमिति" इसमें ही चरक का वह पाठ शुद्ध कर लिखा गया है अन्यथा प्राचीन मुद्रित पुस्तकों में यह अशुद्ध पाठ क्यों है। अर्थात् मांस की बनावट का उत्तर ही लुप्त है।

सम्पादक वही होता है जो अशुद्ध असंगत पाठ को ठीक कर सम्पादन करता है। यदि ऐसा नहीं करता है तो वह अज्ञता का दोष सम्पादक पर आजाता है। हस्त लिखित पुस्तकें प्रायः अपूर्ण खण्डित तथा अशुद्ध प्रायः होती हैं। इसका अनुभव सम्पादकों को ही है कि किस प्रकार विचारपूर्वक पाठों को ठीक कर मुद्रित कराते हैं। अन्यथा सम्पादकत्व ही क्या रहा।

यदि सम्पादक का लक्षण आप वाला मानें

क्या ये आर्ष ग्रंथ पुरातन हैं ?

[ले०—कविराज श्री पं० शशिकान्त मिश्र–आयुर्वेद भवन, हरिद्वार भिषगाचार्य, वैद्यवाचस्पति]

आर्ष ग्रंथों में पाठ परिवर्तन करने से पहले यह बात विचारणीय है कि आज कल प्राप्त होने वाले आर्षग्रंथ वे ही ग्रन्थ हैं या उन में कुछ परिवर्तन भी हुवे हैं।

चरक और सुश्रुतादि आयुर्वेद के आर्षग्रंथ जो हमें आज कल मिलते हैं। वे न तो आयुर्वेद के आदिम ग्रन्थ हैं और न वे आयुर्वेद के सम्पूर्ण अंगों का ही जिक्र करते हैं परन्तु आयुर्वेद की एक शाखा का उल्लेख करते हैं। इसको स्वयम् सुश्रुत ने स्वीकार किया है—चरक काय चिकित्सा और सुश्रुत शल्य चिकित्सा का ग्रंथ है।

हमारी प्राचीन संस्कृति को एक ऐसे कठिन काल में गुज़रना पड़ा है उस समय नये ग्रन्थ का निर्माण होना अलग और रहे सहे ग्रन्थों को जला कर नष्ट भ्रष्ट कर डाला उस समय अच्छे और उपयोगी ग्रन्थों से भारत को हाथ धोना पड़ा बहुत से ग्रन्थों के अब तो नाम ही नाम केवल यादगार के लिये रह गये---उनके अस्तित्व का पता तक नहीं, यह यवनकालीन समय कहलाता है।

इतिहासवेत्ता इस बात से भलीप्रकार परिचित हैं। इस काल से पूर्व एक समय और इतिहास में मिलता है वह है बौद्धकाल। आप इस नाम को देखकर ज़रा चौंकेंगे यह समय बहुत उन्नत काल माना जाता है वास्तवमें भारत को पतन की ओर इसने ढकेल दिया उस समयका ही नतीज़ा हम आज कल भुगत रहे हैं इसने अकर्मन्य और बल हीन बना दिया दूसरों की क्या अपनी ही रक्षा करने में असमर्थ होगये आप इन सब बातो को देखकर भय करेंगे इस की गहराई सब इतिहास के विद्यार्थी जानते हैं—इस समय आयुर्वेद के प्रत्येक ग्रन्थको तोड़ मरोड़ कर कुछ का कुछ रूप दे डाला गया—ग्रन्थकार की कौनसी कृति है बीच में और क्या घुसेड़ दिया गया इसको जानने की आपके पास क्या कसौटी है ? कुछ भी नहीं फिर डंके की चोट से किस आधार पर आचार्य सुरेन्द्रमोहन जी कह सकते हैं यही ग्रंथ आर्ष हैं *जोइस समय मिलते हैं। यह सब जानते हैं यवन* काल के बचे बचाये ग्रंथों को क्रमबद्ध कर इन

जिसको विद्वान् कभी भी ठीक नहीं कह सकते तो सम्पादक की विशेषता कौनसी रही।

हमारे विचार से सम्पादक को अधिकार है कि शुद्धाशुद्ध का विवेचन करके ही पुस्तक का प्रकाशन करे।

चरक के संस्कारोत्तर संस्कार का ही यह परिणाम है कि ऐसी समस्या दृष्टिगोचर हुई है। मैं ऊपर लिख आया हूँ कि मूर्ख विद्वान् को समझाना कठिन नहीं किन्तु ज्ञानलव दुर्विदग्ध को *ब्रह्मा भी नहीं समझा सकता। हमारे जैसों का* तो काम ही क्या है। शुभम्

पुस्तकों का रूप दिया गया है। जब कि शुद्ध मूल रूप पुस्तक नहीं मिलती और इनमें भेद आता है तब समयानुकूल परिवर्तन करने में कोई हानि नहीं यदि लेख लिखने से पूर्व सुरेन्द्रमोहनजी इस नुकते पर विचार करलेते तो अच्छा होता जिस बात को आचार्य महोदय ने पकड़ा है वह कोई सैद्धान्तिक बात नहीं—हो सकता है वह गलती ज्यों की त्यों आरही हो अब उसे ठीक कर दिया गया।

हम इस विवाद में तब तक नहीं पड़ना चाहते जब तक इन बातों का निर्णय न होजाय कि वर्तमान समय में उपलब्ध चरकादिक ग्रन्थ आदिम ग्रन्थ ही हैं और इनमें किसी प्रकार की मिलावट नहीं। इस को निर्णय करने के बाद फिर इसका निश्चय किया जाये इन पाठ भेदों में क्या होना चाहिये तब स्वतन्त्र रूप से एक निबन्ध लिख कर उसमें इन सब विषयों पर प्रकाश डालेंगे। (इति)

स्वास्थ्य और भोजन

[ले० पं० दयाशंकर जी द्विवेदी-मोखा शाहबाद]

(गतांक से आगे)

"आहार" ही जीव का जीवन है। आहार शारीरिक 'मानसिक, तथा आध्यात्मिक शक्ति के विकास का जनक है। आहार जीवन तथा शारीरिक शक्ति को बनाये रखने के हेतु एक अति आवश्कीय पदार्थ है। किन्तु सखेद लिखना पड़ता है कि आजकल अधिकांश मनुष्य भोजन सम्बन्धी ज्ञान से एकदम अनभिज्ञ हैं। यही कारण है कि हमारा गृहस्थ समाज आज अपने को नाना प्रकार के भयानक रोगरूपी शत्रुओं के जाल में फंसा हुआ पा रहा है। अतः ऐसी अवस्था में हमारा सर्व प्रथम कर्त्तव्य यह है कि हम सदा अपने आहार के योग्य चुनाव में सतर्क रहें, कारण कि आहार मनुष्य के जीवन को बनाता और बिगाड़ता है, आहार ही उसका विकास और विनाश करता है। ऐसी अवस्था में प्रत्येक स्वास्थ्य-प्रेमी मनुष्य का कर्त्तव्य होना चाहिये कि वह अपने भोजन के सम्बन्ध में विशेष सतर्क रहे। हमें सदा सोचते रहना चाहिये कि हमारे शरीर को कब किस प्रकार के भोजन की आवश्यकता है। इसके लिये आपको (प्रत्येक व्यक्ति को) अपने आहार के पदार्थों के गुण अवगुण का विशेष ज्ञान रखना होगा, अन्यथा मन इच्छित लाभ की सम्भावना नहीं। यों तो सभी प्रकार के आहार से रस, रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेद, मेद से अस्थि अस्थि से मज्जा, मज्जा से शुक्र बनता है। रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, और शुक्र-वीर्य ये सप्त धातु हैं। इन सप्त धातुओं से ही हमारी देह टिकी हुई है। सब प्रकार के आहार में न्यूनाधिक रूपेण यही तत्व विद्यमान हैं। इससे यह नहीं समझ लेना चाहिये कि सबको सदा एक ही प्रकार का भोजन अनुकूल होगा सब को अपनी प्रकृति समय और शारीरिक अवस्थानुसार अपने उचित आहारका प्रबन्ध करना चाहिये। मनुष्य के लिये सर्वोत्तम प्राकृतिक भोजन फल और अन्न है। गेहूँ जौ,

चना, तथा अरवा चावल, अरहर, मूंग चने की दाल, परवल, लौकी, आलू, केतुआ, सूरण, भिंडी सब प्रकार की गोभी चौलाई, बथुआ और पालक का शाक, ताजे फल, अभावे सूखा मेवा, दूध, दही, मक्खन, घी, और चीनी, मिश्री, आदि ये सब भोजन के पौष्टिक पदार्थ हैं। मैशीन के कूटे चावल व पीसे आटे से सदा बचना चाहिये। मैदा घी, मावा, आदि वस्तुओं से बना पदार्थ सदा नहीं खाना चाहिये। हमेशा सादा व ताजा भोजन शरीर के लिये श्रेयस्कर है। दाल अरहर, मूंग, चना मसूर, उरद की भूसी सहीत खाना चाहिये। तरकारी खूब खाना चाहिये। कारण कि तरकारी पेट व खून को शुद्ध रखने की विशेष शक्ति रखती है। कब्ज़ रहने वालों को मोटा आटा बथुआ, पालिक, और चौलाई का शाक विशेष उपयोगी है। तरकारी और दाल में अधिक मसाला नहीं डालना चाहिये। भांति २ के मसाले, आचार, सिरका, चटनी मिठाई और मांस मछली आदि उत्तेजक तथा चटोरी पदार्थों को बराबर प्रयोग में लाने से पाचन शक्ति घट कर हाजमा बिगड़ जाता है। कब्ज़ रहने लग जाता है, जिससे रक्त बनने में कमी होने लगती है। वीर्य पतला पड़ दस्त व मूत्र के साथ बाहर आने लगता है। कुछ दिन तक बराबर कब्ज़ रहने से वृहत् पाकस्थली में परिपाक क्रियाद्वारा बहिष्कृत खाद्य पदार्थ का अनावश्यक अंश जिसे 'मल' कहा जाता है, जमा होने लगता है। यदि यह जमा हुआ मल कोष्ट बद्धता के कारण २४ घंटे में शरीर से बाहर न निकल सका तो, इसका परिणाम यह होता है कि इसमें सड़ान (Patrification) प्रारम्भ हो जाती है, और इसके सड़ते ही अगणित ज़हरीले जीवाणु उत्पन्न हो, शरीर के सारे रक्त में फैल, शरीर में नाना-प्रकार के भयंकर रोग पैदा कर देते हैं। जिनसे जान बचाना मुश्किल होजाता है। इसलिये आप सदैव इस बात का ध्यान रखिये कि आपकाभोजन साधारणतः सादा हलका और समय के अनुसार बना हुआ है। भोजन सदा भूख लगने पर ही करना चाहिये, पर भोजन करने का समय निर्धारित कर देना उचित है। दिन का भोजन १० बजे तक और रात्रि काल का भोजन अधिक से अधिक ६ बजे रात तक अवश्य कर लिया जाय। अन्यथा शारीरिक यन्त्रों की प्रगति में बाधा उत्पन्न होकर शरीर अस्वस्थ हो जाता है। काश नियत समय पर किसी कारण वशात् भूख न लगे अथवा शरीर में किसी प्रकार की अस्वस्थता ज्ञात हो तो भोजन नहीं करना चाहिये। स्नान के उपरांत तत्क्षण भोजन नहीं करना चाहिये, ऐसा करने से रस रक्तादि समस्त धातुयें विकृत हो जाती हैं। भोजन करने के पहिले हाथ पैर शीतल जल से धो लेना चाहिये। इसके उपरांत एकाग्रचित्त हो स्वच्छ स्थान व स्वच्छ आसन पर बैठ कर स्वच्छतापूर्वक बनाया हुआ सुस्वादु भोजन शुद्ध पात्र में रखकर खाना चाहिये भोजन करते समय मन को शांत, शुद्ध, एवं ईर्षा द्वेष, क्रोध, तथा चिन्ता आदि विकार रहित तथा प्रसन्न युक्त होना सम्यक प्रकारेण अनिवार्य है। अन्यथा भोजन अच्छी तरह नहीं पचेगा और भोजन न पचने से कई प्रकार के पाचन शक्ति के विकार अजीर्ण आदि उत्पन्न हो जांयगे। मतलब

को भोजन शांत चित्त होकर करना चाहिये। भोजन के पूर्व और अन्त में जल पीना अत्यन्त हानिकर है भोजन के बीच में थोड़ा २ पानी पीना हितकर है। हमेशा एक ही तरह की चीजें न खानी चाहिये। अपने भोजन के पदार्थों को हमेशा बदलते रहना चाहिये कारण कि ऐलोपैथी चिकित्सानुसार शरीर विज्ञान के डाक्टरों ने हमारे शरीर में निम्न लिखित पांच पदार्थों का होना सिद्ध किया है :—

(१) मांस कारक वस्तु (Proteids) (२) अग्निकारक वस्तु (Carbo hydrates) (३) धातु वस्तु (Minerals) नमक आदि; (४) मज्जा कारक या चरबी (Fat); (५) पानी (Water)। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि शरीर की स्थिरता भोजन पर निर्भर है इसलिये आपके भोजन में उपरोक्त पांच पदार्थों का होना अति आवश्यकीय है, परन्तु हमारे शरीर में इन पांचों वस्तुओं का भाग बराबर नहीं है न हमारे शरीर को इन पांच पदार्थों के बराबर भाग की ज़रूरत ही है। सिवाय इसके हमारे भोजन पदार्थों में ये चीजें कम बेश मात्रा में रहा करती हैं। यदि हम एक ही चीज़ सदा खाते रहें तो जो भाग उसमें अधिक है वह भाग हमारे शरीर के काम में ज्यादे हो शरीर को लाभ के बजाय हानि पहुँचा शरीर से बाहर निकल जाता है और जो भाग कम है उसकी ज़रूरत हमारे शरीर को बनी ही रहती है। इसलिये शरीर को ठीक रखने के लिये कई तरह के खाद्य पदार्थों को एक में मिला कर या अलग २ खाने की आवश्यकता है। ऐसा करने से शरीर को सब प्रकार की चीजें आवश्यकतानुसार सदा पहुँचती रहती हैं।

वैद्यक मतानुसार भी सदा एकही प्रकार की भोज्य वस्तुओं का सेवन शरीर के लिये लाभदायक नहीं है। यथा—बहुत मीठे व चिकने पदार्थों के खाने से प्रमेह, स्थूलता, व मन्दाग्नि आदि रोग हो जाते हैं। बहुत खट्टे व नमकीन पदार्थों के सेवन से खुजली, पीलिया, रक्त विकार कुष्ठ, नेत्ररोग तथा रक्त पित्त आदि रोग हो जाते हैं, शरीर की चमड़ी में शिकन पड़ने लगती है, तथा असमय में ही बाल सफेद होने लगते हैं। तीती वस्तुओं के सेवन से मुख, तालू, कण्ठ, और ओठ मारे गर्मी के सूखने लगते हैं, प्यास अधिक लगती है, बल वीर्य्य तथा कांति का नाश होता है। इसलिये आप अपने भोजन के पदार्थों में किसी एक ही प्रकार की वस्तुओं की अधिकता न रख, षट्रस भोजन की व्यवस्था रखें। भोजन के साथ दही या मट्ठा का प्रयोग, विशेष कर मट्ठा का विशेष लाभदायक है, इस से पाचन शक्ति को बड़ी सहायता मिलती है, भोजन के कुछ देर बाद गाय का अधौटा मिश्री युक्त दूध विशेष आरोग्यदायक है। भूख से ज्यादा या कम न खाया जाय। जहां तक होसके शुद्ध सात्विक आहार यथा—फल, शाक, गेहूँ, जौ, चावल, मूंग, दूध, घी, चीनी और हरी शाक भाजी का उपयोग विशेष रूप से किया जाय। वीर्य्य को दूषित करने वाला, अपवित्र, तथा उत्तेजक तामसिक आहार यथा—बासी

सड़ा-गला, माँस, मछली, मद्य तैल मध्यमा से बनी हुई रूखी, सूखी चीजें तथा अचार चटनी आदि से सदा परहेज रखा जाय। गर्म मसालादार, चटपटा, कड़ुवा, उष्ण, खट्टा, तीता, तैल युक्त घृत मक्खन, बाज़ार की बनी हुई मिठाईयाँ, लहसन, प्याज, चाय, कुलफ़ा, भांग, गांजा, चरस, पान, तमाखू, आदि राजसिक आहार से अपने को बचाया जाय। पाठक! मैं पहले कह चुका हूँ कि भोजन मनुष्य को बनाता तथा बिगाड़ता है, यही मनुष्य के हृदय में सदाचार की सृष्टि करता है और यही उसे कुपथ की ओर भी ले जाता है। हो सकता है कि आप हमारी इस बात पर भी आश्चर्य करें—पर बात सोलह आना ठीक है। यह पहले बताया जा चुका है कि "आहार ही जीव का जीवन" है। अतः आप जैसा भोजन करेंगे, आपके हृदय में स्वभावतः वैसे ही विचार भी उदय होंगे, और आप इन्हीं विचारों के सहारे जीवनमार्ग में आगे बढ़ेंगे। उपरोक्त ये तीनों सात्विक, राजसिक, तथा तामसिक भोजनों में सात्विक आहार ही श्रेष्ठ भोजन है, सात्विक आहार से मानव शरीर में शुद्ध वीर्य्य की शक्ति बढ़ती है, ब्रह्मचारी बनने में सहायता मिलती है। बुद्धिका विकास होता है। काम क्रोध, मद और लोभ आदि दुर्गुणों का नाश होता है। शरीर स्वस्थ होकर बल और पुष्ट हो जाता है। मनुष्य की बुद्धि तथा मन सत्वगुण प्रधान हो जाता है। सत्वगुण युक्त मनुष्य, धर्माचारी आस्तिक, ज्ञान तथा विचार शक्तिसम्पन्न बुद्धिमान्, योगी आदि गुणों तथा भूषणों से भूषित हो जाता है। एक जगह लिखा है :—

आहार शुद्धौ सत्वशुद्धिः,
सत्व शुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः।
स्मृतिलब्धौ सर्वग्रन्थीनां,
विप्रमोक्षः प्रवर्तते॥

अर्थात्—भोजन की पवित्रता से सत्व की पवित्रता होती है। सत्व की पवित्रता से बुद्धि निर्मल तथा दृढ़ विचारवाली बन जाती है। फिर बुद्धि की पवित्रता से मुक्ति भी सरलता से प्राप्त होजाती है। यह है सात्विक भोजन का प्रभाव इसके विपरीत आप जैसा भोजन करेंगे, आप की बुद्धि वैसी ही अवश्य होगी—आप ऊपर के उदाहरण से यह बात भली भाँति समझ गये होंगे।

क्या! आप अत्यंत उष्ण, चरपरा, चटपटा, मांस मछली, शराब, लहसुन, प्याज, पान, तथा अण्डा आदि राजसिक तथा तामसिक भोजनों का व्यवहार कर अपने को ब्रह्मचारी रख सकेंगे? क्या! आप ऐसी कामोत्तेजक वस्तुओं का सेवन कर अपनेको कण्ट्रोलमें रख सकेंगे? क्या आप ऐसे उत्तेजक कर पदार्थों का सेवन कर अपने को विलासिता की ओर जानेसे बचा सकेंगे? माँस, मछली, शराब, अण्डा, तथा इसी प्रकार की विदूषित तथा कामोत्तेजक पदार्थों का सेवन करने वाला कभी सदाचारी हो सकता है? न हुआ है, न होगा। बस! इतने ही उदाहरण यथेष्ट हैं। आप सदा यह बात याद रक्खें कि भोजन का प्रभाव मनपर पड़े बिना कभी भी

नहीं रह सकता, जैसा भोजन होगा, मन भी उसी प्रकार का अवश्य होगा अतः आप को सदा शुद्ध सात्विक आहार करना चाहिये, अगर सात्विक आहार से आपका काम किसी प्रकार चलता न नज़र आये, तो आप राजसिक आहार के कुछ लाभजनक पदार्थों का उपयोग कर सकते हैं, पर कभी भूल कर भी तामसिक अर्थात् आसुरी भोजन का व्यवहार न करें। सिवाय इस के निम्नलिखित प्रकार के संयोग विरुद्ध, मान-विरुद्ध, (मात्रा-विरुद्ध), कर्म-विरुद्ध, धातु विरुद्ध, स्वभाव-विरुद्ध, देश-विरुद्ध, तथा ऋतु-विरुद्ध, पदार्थों से सदा परहेज़ रखें—अन्यथा इन में ज़रा भी भूल या उलट फेर होजाने से अस्वस्थता आघेरती है। यही नहीं कभी २ इसका बड़ा विकट परिणाम यह होता है कि मनुष्य को असमय में ही दुर्लभ मानव देह को छोड़ देने के लिये विवश होना पड़ता है।

संयोग विरुद्ध पदार्थ—दूध के साथ निम्न वस्तुयें खाने से संयोगविरुद्ध होजाता है। केला, कायफल, बड़हल, कुलथी, नमक, मूली, मछली, आंवला, लौकी, परवर, खीरा, खट्टी वस्तुएँ, जामुन, लहसुन, तेल, तिलपुट, नीबू, दही, सूखासाग, सत्तू, और निम्नलिखित वस्तुएँ एक में मिल कर संयोग विरुद्ध होजाती हैं—दही और बड़हल, दही और गर्म पदार्थ, शहद-गर्म जल, शहद मछली, शहद-गर्म पदार्थ, शहद-बड़हल, शहद-वर्षा का पानी, शहद और मूली, बड़हल-केला, बड़हल-उड़द की दाल, बड़हल और घी। मछली-गुड़, छाछ और केला ये संयोग विरुद्ध एक दूसरे से मिलकर विष के समान होजाते हैं।

मान-मात्रा-विरुद्ध—शहद-घी, शहद और जल। घी-तेल, घी-चर्बी, जल और चिकनी चीजें एक में मिलाकर खाने से मान विरुद्ध हो कर विष तुल्य होजाती हैं।

स्वमान-विरुद्ध—फली वाले अनाजों में उड़द ऋतुओं में गर्मी की ऋतु, बड़हल, सरसों का साग, भेड़ का दूध, कुसुम का तेल, और गुड़ का राब। ये सब चीजें मनुष्य को स्वभाव से ही नुक़सानमन्द होती है।

प्रकृति-विरुद्ध—वात, प्रकृतिवाले मनुष्य को वायु कारक वस्तुओं का खाना। पित्त प्रकृति वाले को पित्त वर्द्धक वस्तुओं को खाना। कफ़ प्रकृति, वाले को कफ़ कारक पदार्थों का खाना. प्रकृति विरुद्ध है।

धातु-विरुद्धः—जिस धातु के बर्त्तन में जो पदार्थ खाना चाहिये, उसे उसी धातु के वर्त्तन में रख कर न खाने से वह वस्तु धातु के धातु-विरुद्ध प्रभाव से बिगड़ जाती है और लाभ के स्थान पर हानि पहुँचाती है। यथा--पीतल और कांस के वर्त्तन में खटाई तथा खटाई मिश्रित पदार्थ और दही, मट्ठा रखने से (धातु के प्रभाव से) यह पदार्थ बिगड़ जाते हैं।

देश-विरुद्धः—यथा जिस देश के जल वायु में जो मनुष्य पला है उस देश का पदार्थ न खा दूसरे देश का पदार्थ खाय तो वह पदार्थ उसके लिये देश विरुद्ध समझा जायगा।—उष्ण प्रदेश में गर्म तथा शीत में सर्द चीज़ खाना देश विरुद्ध है।

ऋतु-विरुद्ध—किस ऋतु में किस प्रकार का आहार विहार पथ्य है, इसके विपरीत आहार विहार करना ऋतु विरुद्ध है।

मैं पहले कह चुका हूँ कि विरुद्ध भोजन सेवन करने से नाना प्रकार की व्याधियां उत्पन्न हो शरीर को निकम्मा बना देती हैं। एतदर्थ विरुद्ध भोजन से अपने को सदा बचाना चाहिये आहार के विषय में निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

१ किसी प्रकार का भोजन हो कोमल या कठिन, उसे धीरे २ भली भांति खूब चबाकर खाइये जिससे भोजन अच्छी तरह महीन हो, राल के साथ मिल गले के नीचे उतर जाय। दांत का काम पेट से न लिया जाय।

२ जब खूब भूख लगे तभी खाया जाय। भूख से अधिक कभी न खाया जाय, हरी शाक भाजी और फलों का खूब उपयोग किया जाय। भोजन करते समय पेटका दो भाग भोज्य पदार्थों से एक भाग जल से, और एक भाग वायु संचार के लिये छोड़ दिया जाय, न कि अधिक खाकर पेट को फुटबाल का ब्लाडर (Bladder) ही बनाया जाय न भिस्ती की मशक ही।

३ जो कुछ खाया जाय स्वास्थ्य के लिये, न कि स्वाद व खाने के लिये। अच्छा हो कि इस अंग्रेजी कहावत का पालन किया जाय "Do not live to eat,but eat to live" अर्थात् खाने के लिये मत जीवो, बल्कि जीने के लिये खाओ।

४ भोजन प्रिय तथा भलीभांति पका हुआ होना चाहिये न आवश्यकता से अधिक गला न कच्चा। यदि भोजन मनोनुकूल न हुआ तो, भोजन करते समय पाचक रस (digestive juices) आवश्यक परिमाण में न उत्पन्न होंगे।

५ भोजन से कुछ देर पूर्व सैंधव लवण और अदरख का सेवन सदा पथ्य है। इससे अग्नि की दीप्ति, रुचि, जिह्वा और कंठ की शुद्धि होती है।

६ प्यासा भोजन न करे. भूखा जल न पीवे अन्यथा प्यास में भोजन करने से गुल्म रोग, और भूख में जल पीने से जलोदर रोग की उत्पत्ति होती है।

७ यह सदा स्मरण रहे कि शारीरिक शक्ति खाये हुए भोजन की मात्रा पर नहीं, किन्तु पचे हुए भोजन की मात्रा पर निर्भर है।

८ प्रत्येक मनुष्य को प्रति दिन शुद्ध गाय का दूध (अधऔटा मिश्री युक्त) अवश्य पीना चाहिये। जो नित्य प्रति गाय का दूध निमित्त रूपेण सेवन करता है, उसे वृद्धावस्था शीघ्र नहीं आती। दूध इस लोक का अमृत है। दूध शरीरको सदा सुदृढ़ व बलवान बनाये रखता है।

प्रति दिन के भोजन के २ घंटे बाद, अंगूर दाख, मेवा, नाशपाती, आम, केला, किशमिश, अमरूद, आदि फलों में से जो मिल सके, अवश्य खाइये। फलाहार मनुष्य का सर्वोत्तम भोजन है। फल में शरीर के सभी पोषक अंश उचित मात्रा में उपस्थित रहते हैं, जिनसे स्वतः जीवन शक्तियों का विकास होता है। फल, मनुष्य शरीर को स्वस्थ बलवान् बनाता है। सब प्रकार के

फल और मेवों में एक प्रकार की विटामीन भरी हुई है जिससे शरीर का पूर्णरूपेण पोषण हो, शरीर फुर्तीला होजाता है। फलाहार कोष्ठ-बद्धता का नाश कर शुद्ध रक्त बनाता है। फलाहार से बुद्धि निर्मल हो वासनाओं का नाश होता है। शरीर में ओज की वृद्धि हो, शरीर कांति व तेज का भण्डार बन जाता है।

भोजनोपरान्तः—

भोजन करने के बाद शुद्ध जल से हाथ मुंह धोने के पश्चात् मूत्र विसर्जन कर धीरे २ कम से कम १०० कदम टहल कर बाईं करवट सोकर कुछ देर तक आराम करना चाहिये–अंग्रेजी कहावत "After diner rest a while. After supper walk a mile" अर्थात् दिन के भोजनोपरांत कुछ देर आराम करना चाहिये और रात्रि के भोजन के पश्चात् १ मील टहलना चाहिये" के अनुसार आचरण करने से विशेष लाभ की सम्भावना है। भोजन के बाद तत्क्षण चलना और दौड़ना अपनी मौत को बुलाना है। भोजन के बाद मानसिक और शारीरिक परिश्रम करना उचित नहीं है इससे पाचक यन्त्रोंमें खराबी आ, भोजन का पचाव ठीक नहो अजीर्ण होजाता है, एतदर्थ १ भोजनोपरान्त सदा प्रसन्न चित्त रहना चाहिये। जब तक आपका भोजन भली भांति पच न जाय, तब तक आप क्रोध, चिन्ता, भय और लोभ आदि विकारों को पास न आने दें।

२ भोजन करने के पश्चात् कसरत करना, मैथुन करना, रास्ता चलना, घोड़े की सवारी करना और सोना आदि कार्य्य, कम से कम १ घंटे तक नहीं करना चाहिये।

३ भोजन के बाद कुल्ला करने के पश्चात् अपने हाथ की दोनों हथेलियों को रगड़ २ कर आँखों को सेंकने से, नेत्ररोग नहीं होते।

४ भोजन बनाने की एक अद्भुत विधि, जो वैद्यक शास्त्र के निम्न श्लोक से प्रकट होती है को, काम में ला इसकी विचित्र शक्ति की परीक्षा कीजिये। मेरा परीक्षित है।

अंगारकमगस्ति च पावकं सूर्य्यमश्विनौ।
पंचैतान् संस्मरेन्नित्यं भुक्तं तस्याशु जीर्य्यति॥

अर्थात्—'मंगल, अगस्त, सूर्य्य, अश्विनी-कुमार और अग्नि, इन पांचों को स्मरण करते हुए, जो ५ बार अपना हाथ पेट पर (भोजनोपरान्त) फेरता है, उसका खाया हुआ अन्न जल्दी पच जाता है।—

थोड़ा और :—

रात में जागना, खेल तमाशा देखना, नाटक सिनेमा सर्कस और मुजरों में जहां तक हो सके बचना चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि मनोरंजन के ये साधन स्वास्थ्य के लिये उपयोगी अवश्य हैं; परन्तु जब ये रोजकी दिन-चर्या में शामिल होकर आवश्यकता का रूप धारण कर लेते हैं, और बिना इनके तबीयत नहीं मानती, तभी ये स्वास्थ्य का श्राद्ध करते हैं भोजन से (रात के) पहले खतम होने वाले मनोरंजनों से स्वास्थ्य की विशेष क्षति नहीं होती। रात्रिजागरण से ही स्नायुप्रणाली में खराबी आती है; जिससे सर दर्द, मितली, ज्वर,

आलस्य, अजीर्णता, कोष्ठबद्धता, आदि रोग या उनके उपसर्ग प्रकट होने लगते हैं। इसके सिवाय बहुत ज्यादा सनसनी पैदा करने वाले मनोरंजन भी, चाहे वे शाम को ही उपयोग किये जांय, स्नायु प्रणाली पर बुरा प्रभाव डालते हैं। आधुनिक सभ्यता में गिनी जाने वाली आदर सत्कार की चीजों का यथा—पान, तमाखू गांजा, भांग, बीड़ी-पान सिगरेट, चुरट, चाय, काफ़ी, शराब और कोको आदि ज़हरीली और नशीली चीजों का पूर्ण बहिष्कार करना चाहिये। इन में से सब या अधिकांश स्वास्थ्य नष्ट करने वाली हैं। वैज्ञानिकों तथा मनोवैज्ञानिकों ने इन ऊपर कही हुई वस्तुओं में पपेरिन (Piprine), निकोटिन (Nicotine), थैनोकोटिन (Tieni cotine), पायरीडिन (Pyridine), पायकोलिन (Pycoline), कोलोडिन (Collodine) मार्श गैस (Marsh gas), साइनोजोन (Cynogon), हायड्रोसायनिक (Hy drocyonic) आर्कडीन (Aredine) कैकिन (Cacine), आदि घातक विष पाये जाते हैं, जो अजीर्ण उदरामय, बालों का असमय पकना, ज्ञान-तन्तुओं का नष्ट करना, हृदय की गति बन्द कर देना, स्वरभंग, लकवा, मृगी, अपस्मार, धनुर्वात, नामर्दी, बन्ध्यत्व आदि नाना प्रकार के रोग पैदा करते हैं। इनका बहुत दिनों तक लगातार प्रयोग होने से स्मरण-शक्ति, भोजनात्मक शक्ति तथा व्यक्ति विशेष के गुणों का नाश होता है। *शरीर के रक्त में प्रवेश पालेने पर ये विष रक्त* में रहने वाले रोगनाशक जीवाणुओं को नष्ट कर डालते हैं जिससे अनेक रोग सरलता से शरीर में प्रवेश कर आश्रय पा पनपते रहते हैं, जो स्वास्थ्य के नाश का कारण बनते हैं। इन्हीं चीज़ों से हमारे गृहस्थों तथा नवयुवाओं को—खासकर विद्यार्थियों को विशेष प्रेम है, फिर स्वास्थ्य ऐसी नाज़ुक चीज़ उनके पास किस तरह रहे। पेय पदार्थों में सोडा, लेमनेड, बर्फ़ और तरह २ के शर्बत (स्वाद, रंग, और सेकरिन मिश्रित) काम में लाये जाते हैं जो हमारे स्वास्थ्य को सिवा खराब करने के कोई लाभ नहीं पहुँचाते। इन्हीं पेयों का परिणाम है जो हम आज सर्दी, ज़ुकाम, नज़ला, गलगण्ड तथा गले की ग्रन्थियों में प्रदाह (Tonnicilist) के शिकार बन रहे हैं।

—विशाल भारत से

पाठक ! अब आपने अच्छी तरह समझ लिया कि हम लोगों को अपना स्वास्थ्य ठीक रखने के लिए किन २ भोज्य पदार्थों को अपने आहार में स्थान देना चाहिए। अतः आप मेरे बताये उपर्युक्त नियमों को, जो दिनचर्या के प्रधान अङ्ग हैं, (आनन्द और निश्चिन्तता-पूर्वक अपनी स्थिति में सदा सन्तुष्ट रह) ६ महीने तक अवश्य पालन कीजिये, इतने ही समय में आपको अपूर्व लाभ न दीख पड़े तो मुझे तुच्छ बुरा भला कह सन्तोष करें।

बस—इत्यलम् ! शेष फिर !!

—x—

संयोग विरुद्ध आहार विहार

[ले०—पं० कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी बी० ए० आयुर्वेदाचार्य चाँदा (सी० पी०)]

आधुनिक काल में, जिह्वा के वश होकर, हम मनसोक्त आहार विहार करते हैं। जिसका अवश्यम्भावी अनिष्ट परिणाम हमारे शरीर पर होकर नाना प्रकार की व्याधियों के हम शिकार हो रहे हैं। शास्त्र में पुकार कर कहा हुआ है कि—

"विरुद्धम पि चाहारं विद्याद्विषगरोपमम्"

अर्थात् जिस प्रकार विष या गर, व्याधि तथा मृत्यु को उत्पन्न करते हैं; उसी प्रकार विरुद्ध द्रव्यों का आहार (तथा विरुद्धाचरण भी) व्याधि और मृत्यु को उत्पन्न करता है। आधुनिक रसायन शास्त्र से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि दो या अधिक वस्तुयें एकत्र मिलने पर, उनके आभ्यन्तरिक रासायनिक गुणों के कारण एक तीसरी ही वस्तु निर्माण हो जाती है, जो गुणों में, सम्मिलित द्रव्यों के गुणों से एकदम भिन्न होती है। पाकशास्त्र में प्रवीण एवं बुद्धिमान् मनुष्य अच्छी तरह जानते हैं कि अमुक द्रव्यों का योग करने से रसोई स्वादिष्ट एवं गुणदायक होती है तथा अमुक द्रव्यों के योग से खराब एवं अपायकारक हो जाती है।

एक वस्तु के साथ में मिलाकर दूसरी वस्तु के सेवन से यदि अनिष्ट परिणाम होवे तो उसे विरुद्धाहार करते हैं। किन्तु एक पदार्थ का योग दूसरे के साथ होने से उसमें उदर में क्या और कैसी रासायनिक क्रिया होती है, इस विषय पर अभी तक पूर्ण प्रकाश नहीं पड़ा है। मालूम होता है हमारे प्राचीन आचार्यों ने इस विषय का पूर्ण खोज एवं अन्वेषण किया था, यत्र तत्र ग्रन्थों में, विरुद्ध द्रव्यों के विषय में निषेधाज्ञा देखी जाती है तथा कई वृद्ध पुरुष कहा करते हैं कि अमुक पदार्थ के साथ अमुक पदार्थ मत खाओ इत्यादि। किन्तु इन निषेधाज्ञाओं को समाधानपूर्वक कारण वे नहीं बतला सकते। खेद है! हमारा प्राचीन वैद्यक साहित्य परचक्र के कारण उध्वस्त हो जाने के कारण हम कई उपयोगी विषयों के ज्ञान से वंचित है, तथा हम नवयुवकों की कौतुहलपूर्ण जिज्ञासा की परितृप्ति नहीं कर पाते। अस्तु—

अब हम यहां अपने अनुभवानुसार, विरुद्ध पदार्थों के संयोग का अनिष्ट परिणाम एवं उस के निवारणोपाय का दिग्दर्शन कराते हैं—

विरुद्ध द्रव्य	परिणाम	उपाय
दूध + कटहल =	आध्मान (अफारा)—	हिंग्वष्टक चूर्ण सोड़ामिश्रित
दूध + बेर, इमली, खटाई, =	अम्लपित्त, अतिसार;	—त्रिफलाचूर्ण, कुटकी चूर्णकेसाथ
दूध + नारियल, =	शीतपित्त, उदर्द	—गिलोय का क्वाथ।

दूध + खरबूजा, = अजीर्ण, हैजा —संजीवनीगुटिका, कर्पूरासव

,, + आमला, अनार = कफ प्रकोप —आनन्द भैरव का सेवन करें

,, + नमक = कृशताकारक —त्रिफलादिघृत।

,, + कुलथी = पित्तप्रकोप, रक्त विकार —अनन्तमूल क्वाथ

,, + लहसन = विसर्प कुष्ठ —रक्तशोधक, शमनोपाय।

,, + मूली = वीर्यविकृति, विस्फोटकादि, —सितोपलादि-चूर्ण।

,, + केला + विष्टम्भकारक —सौम्यविरेचन,

,, + मद्य, (शराब) = अग्निमांद्य मेदवृद्धि, —लोहारिष्ट का सेवन।

,, + मछली = विषवत्, भगन्दर कुष्ठादि, —वमन, विरेचन करावे।

शहद + घी = पित्त विकृति, अपस्मारादि —इलायची और सोंठ दोनों को भूनकर शहद के साथ।

,, + गुड़ = मदकारक, उन्मादादि — शीतोपचार

,, + तैल = मद, मूर्च्छा, नक्तांध —कांजीपिल वे

,, + खिचड़ी = अजीर्ण, अफारा विरेचन करावे।

,, + मछली या मांस = मदकारक, उदररोग —वमन विरेचन करावे।

,, + गर्म पदार्थ = रक्तविकृति, विस्फोटकादि —वमन, शीतोपचार।

मूली + दही = अम्लपित्त शोथादि —सौंफका अर्क त्रिफलाचूर्ण के साथ देवे

,, + पनीर ,, ,,

मूली + उर्द की दाल = अजीर्ण, अतिसारादि —विरेचन देवे।

,, + मुर्गमांस = दाह शूल, मृत्यु —तीव्र रेचन देवे।

,, + शहद = वीर्यनाशक —शतावरी चूर्ण शहद के साथ।

दही + गर्मपदार्थ = रक्तशोधक शमनोपचार करें

,, + पक्षियों का मांस = भगन्दरादि उत्पादक —वमन, रेचन देवे।

प्याज + कबूतर का मांस = मृत्यु कारक मूर्च्छादि — ,, ,,

सिरका + मांस = दाहकारक, शूलादि कैन्सरव्रण —शमनोपचार तथा विरेचन।

केला + दही या मठा = अजीर्ण अफ़ारा शोथादिकारक —विरेचन।

केला + ताड़ी = मद, मूर्च्छा, कफ प्रकोप —वमन करावे।

चावल + सत्तू = अजीर्ण, शूलादि —सौम्य रेचन करावे।

,, + सिरका = कृशता कारक —घृत का विशेष सेवन करें।

,, + तरबूज = अजीर्ण जलोदरादि —विरेचन करें

चावल दूधखीर + दही = संग्रहणी आदि —लवण भास्करचूर्ण

अदरक + मकोयका = रक्त विकार—शीतोपचार, लाग

घृत + तेल = पित्तविकार, कामला.—सितोपला- पांडु इ० दिचूर्ण।

खीर + खिचड़ी = अजीर्ण संग्रहणी इ.—गंगाधर चूर्ण।

जल(शीत) + घृत या तैल = कफ प्रकोपक—वमन करावे।

बड़हल(लकुच) + उड़द = आध्मान त्रिदोष-विरेचन कीदाल कारक

बड़हल+दूध या शहद = अतिसार, संग्र—लवण हणी इत्यादि भास्करादि।

तेल पक्व पदार्थ+कांजी=विस्फोटकादि—अनन्त रक्तविकार मूल का शर्बत।

चनेकी दाल+मटरकीदाल=अफ़ारा, शूल—विरेचन इत्यादि

जुवारका आटा+गेहूँका=आमाजीर्ण—दाड़िमाष्टक आटा शूल इ० चूर्णया यवानी खांडव इत्यादि

गेहूंकाआटा+नवीन चावलों = अजीर्ण—लवणभा- का आटा आमाशय स्कर,हिंगा- के रोग ष्टकादि।

मक्का + जल = कफ, पित्तकारक,—विरेचनकरावें ज्वरोत्पादक

मक्का + दही = ,, आध्मान ,, ,,

केला + जल = ,, ,, ,, ,,

नारियलका दूध + कपूर = गलग्रह,—गरम जल के ज्वरादि साथ हींगदेना

मेघ का जल + शहद = कृशता—सतावरी चूर्ण कारक शहद के साथ।

मछलीका तेल+पीपल=दाह, अति—शीतोपचार सार,पांडु इ० करें।

उर्द + गुड़ खांड,मिश्री = अजीर्ण,अफ़ारा—विरेचन

हल्दी+निमक+हारीत पक्षी का मांस = विषतुल्य—वमन, मारक विरेचन

शहद + तिल + गुड़ + उड़द + दूध + दही = आध्मानकारक, विषतुल्यमारक—वमन विरेचन करावे।

कांसा, पीतल, या ताम्रपात्र में रक्खा हुआ घृत=पित्त विकृतिकारक वमनोत्पादक है–नीबू चूसावे, तथा विरेचन देवे।

ऊपर हमने संक्षेप में, संयोग विरुद्ध पदार्थों का वर्णन किया है। आगे किसी दूसरे लेख में, प्रत्येक संयोग विरोधी पदार्थ या पदार्थों का उदर में रासायनिक सम्मिश्रण किस प्रकार होता है तथा वे किस प्रकार उक्त विकारों को, या अन्यान्य विकारों को प्रकट करते हैं, इसका सविस्तर हाल दिया जावेगा।

ध्यान रहे प्रकृति विरुद्ध ऋतु विरुद्ध, एवं रोग विरुद्ध खान पान भी विष तुल्य है। उदाहरणार्थ—यदि प्रकृति पित्त की हो तो अधिक खारा, खट्टा, तीखा, नवीन गुड़, शराब, शहद, खट्टा दही, लाल मिर्च, गरम मसाला, लहसुन, इत्यादि पदार्थों का आहार नाना प्रकार के विकारों को पैदा करेगा। शरद ऋतु पित की है, इसमें पित्त कारी पदार्थ खट्टा दही, खीरा ककड़ी आदि खाने से ज्वरादि नाना प्रकार के पित्तजन्य विकार

उत्पन्न होजाते हैं। ऐसे ही नवीन (तरुण) ज्वर में घृत तथा गुल्म प्रभृति रोगों में उद्भिद आदि पदार्थ विरुद्ध हैं।

इसी प्रकार, नये और जूने, अथवा कच्चे पक्के द्रव्यों का सम्मिश्रण भी अहितकर परिणाम कारी होता है। उष्ण और शीत का योग जैसे गरमी में तपा हुआ व्यक्ति यदि तत्काल शीत जल में स्नान करे तो कफ, पित, ज्वर की उत्पत्ति होती है। त्वचा और नेत्र को हानि होती है। तृष्णा रोग की वृद्धि होती है। यदि वही गरमी में तपा हुआ व्यक्ति, बग़ैर विश्राम किये, एकदम शीत जलका पान करलेवे तो उसे रक्त पित्त रोग होजाना सम्भव है। किसी मेहनत या परिश्रम का कार्य करने के बाद तुरंत ही भोजन करने से वमन होने का संभव है, या गुल्म रोग होजाता है। स्त्रीसंग (मैथुन) करने के बाद तुरंत ही शीत जल पान करने से वीर्य पतला होकर, कुछ दिनों में नपुंसकता प्राप्त हो जाती है। व्याख्यान आदि या अधिक ज़ोर २ से बोलने के बाद तुरंत ही खान पान करने से, स्वरभंग, कंठध्वंस आदि रोग हो जाते हैं।

यहां इस विषय की केवल रूप रेखा बतलाई गई है। विस्तार से लिखने पर एक बड़ा ग्रन्थ तैयार हो सकता है। आज कल स्वास्थ्य रक्षा विषय में, उक्त विषय को समाविष्ट करने की अत्यंत आवश्यकता है। प्रत्येक माता पिता एवं शिक्षक का धर्म है कि इस विषय का सम्यक् ज्ञान बालकों को करावे।

अनुभूतप्रयोग

शर्बत आबरेशम—वास्ते फालिज, लकवा, और मृगी को बहुत फायदे मन्द है।

नुसख़ा—साफ़ किये हुये आबरेशम को आध-सेर पानी जो कि लोहे को तपाकर बुझाया गया हो उसमें तीन रात दिन तर करके जोश करें और साफ़ करके उस्तखुद्दूस ४छ० गुलेगाजुबां४ तोले वर्गगाजुबां २छ० बादरंजबोया २छ०अलग भिगोकर जोश करके बाद में शहद ख़ालिस, और असली मिश्री दोनों आध २ सेर में किवाम करें फिर ये दवाईया पिसी हुई मिलावें—अगरखाम, मस्तगी, छोटी इलायची, दालचीनी, ऊदसलीब, तेजपात,बिसफायज, कुलींजन,वचतुर्की, बालछड़ लौंग प्रत्येक एक एक तोले जाविती, जायफल, जाफ़ान, हर एक ६—६ माशे अम्बरअशब ६ माशे शर्बत के तरीके पर तैयार करें।

दर्दगुर्दे के लिये—गाजुबां ६ माशे मकोय ६ माशे, हंसराज ६ माशे गुल... ...ला ६ माशे, गोखरू ६ माशे, हब्बेकिलकिलं ६ माशे, बिसफायज ६ माशे, खीरे के बीज १ तोला, कैरके बीज एक तोला सनाय मकी १। तोले, इसको उबाल कर छानकर अमलताश ६ तोले, तुरंजबीन ६ तोले, शर्बत कसूस ४ तोले इनको घोलकर दुबारा छान कर ६ माशे रोगन बादाम मिलाकर पीयें।

सब प्रकार को खाँसी के लिये अक्सीर—लौंग १ भाग, पीपल छोटी २ भाग, हरड़ का बकल ३ भाग बांसे के जड़ की छाल ४ भाग,

भारंगी ६ भाग सब के बराबर कत्था लेकर मिला कर कपड़छन करके बबूल के काढ़े की २१ भावनादेकर सुखाकर रखलें इसमें से ४ रत्ती लेकर सहतमें मिलाकर दिनमें तीन बार चाटे तोपांचो प्रकार की खांसी, दमा, क्षय, हिचकी इनको अवश्य नष्ट करे।

खांसी के लिये बीड़ी—धतूरे की जड़, सोंठ, मिरच, पीपल, मैनसिल शुद्ध, इनको जल में पीस कर कपड़े पर लेप कर धूप में सुखा कर उसकी बीड़ी (वर्ति) बनाकर धुआं पीने से अथवा हुक्के में रख कर पीने से तीन दिन में खांसी अवश्य दूर होवे।

दूसरी बत्ती—जावित्री, मेनसिल, राल और गूगल, सब को कूट पीस कर बकरी के मूत्र में खरल करके बत्ती बनाकर हुक्के में धरके धूआं पीवे तो खांसी अवश्य नष्ट होवे।

मुख के सफेद दाग पर—गन्धक, कसीस, हरिताल, चीते की जड़ की छाल, त्रिफले का चूर्ण इन सब चीजों को सममात्रा में खूब बारीक कपड़ छन कराकर जलसे गोली बनाकर रखलें जल में घिस कर लेप करें।

रक्त प्रदर के लिये—कठूमर, (गूलर का भेद) के फलों का रस ६ माशे, मिश्री २ तोले और बकरी या गौ का दूध पाव भर मिलाकर सुबह व शाम पीने से रक्त प्रदर शान्त होता है।

सब प्रकार के प्रदर के लिये—कैथ और बांस के पत्ते सम मात्रा में लेकर कूट कर १ तोले भर रस में ६ माशे मधु मिला कर पीने से असाध्य-प्रदर भी नष्ट होता है।

अत्यन्त महत्त्व की सूचना

मैं 'बृहदासवारिष्ट रत्नमाला' नामक ग्रन्थ की रचना कर रहा हूँ। प्राचीन एवं अर्वाचीन आसवारिष्टों के लगभग ५०० प्रयोगों का सुचारु संग्रह हो चुका है! जिन वैद्यवरों ने कृपापूर्वक अपने अपने अनुभूत प्रयोगों को भेज कर कृतार्थ किया और करेंगे, उनके शुभनाम सधन्यवाद प्रकाशित किये जावेंगे। जिन्होंने अभीतक कोई प्रयोग नहीं भेजा है। उनसे प्रार्थना है कि वे अपने अनुभूत आसवारिष्ट सम्बन्धी प्रयोगों को तथा किसी प्रयोग के सम्बन्ध में अपने खास अनुभवों को, विधिपूर्वक, विस्तार सहित लिख कर, शीघ्र ही निम्नपते पर भेजने की कृपा करेंगे। यह उनकी आयुर्वेद की एक महान् सेवा होगी।

आयुर्वेद सूरिः कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी० ए०
आयुर्वेदाचार्य, चांदा सी० पी०
Chanda. C. P.

स्कालर्स यूनियन ऋषिकुल आयुर्वैदिक कालिज हरिद्वार की

१२—९—३५ को एक शोक सभा हुई जिसमें स्वर्गीय कविराजधर्मदासजी प्रिंसिपल आयुर्वेदिक कालेज बनारस यूनिवर्सिटी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया और ईश्वर से प्रार्थना की कि श्री मान् जी की स्वर्गीय आत्मा को तथा उनके शोक ग्रस्त परिवार, सम्बन्धियों, देश बन्धुओं और वैद्य भ्राताओं को शान्ति प्रदान करे। उस महान् शोक के कारण १२—९—३५ को स्कालर्स यूनियन का वाचनालय भी बन्द रहा।

मन्त्री शान्ति प्रकाश दुबे।

सम्पादकीय

प्रिय पाठकगण इससे पूर्व सुधा के गतांक में आप महानुभावों ने सर्प चिकित्सा विषयक चरक चिकित्सास्थान अध्याय २३ के श्लोकों के उदाहरण के साथ २ उसमें परिवर्तित तथा अपरिवर्तित पाठ के ऊपर प्रिन्सिपल सुरेन्द्र मोहन जी बी० ए महोदय के विचार पढ़े होंगे, उसी प्रकार अब इस अंक में श्री० विद्वद्वर्य वैद्यराज पं० मंस्तराम जी शास्त्री (रावलपिंडी) महोदय के गम्भीर गवेषणा युक्त तर्क पूर्ण विचारों के साथ २ गंगाधरादि पूर्वाचार्यों के मतों का भी दिग्दर्शन करते हुए प्रस्तुत विषय को अच्छी प्रकार समझ सकेंगे यद्यपि इस प्रकार योग्य विद्वानों के पारस्परिक विचारों के सँघर्षसे अथवा सँधाय सम्भाषा या विगृह्य-सँभाषासे गम्भीर और दुरुह विषय के समझने में पाठकों को बड़ी सुगमता हो जाती है, और इससे महान् उपकार होता है तथापि

वादि प्रतिवादिभ्यां निर्णीतोऽर्थः सिद्धान्तः

इस चरकीय वचनानुसार उभय पक्ष ही जिस निर्णय को स्वीकार नहीं करलेते तब तक वह विषय सन्देहास्पद ही समझना चाहिए। साथ ही मुझे इस बात का भी खेद है कि दोनों ही महानुभावों के लेख में न्यूनाधिक व्यक्ति गत वैमनस्य की आभा वर्तमान है, जोकि लेखों के आद्योपान्त पढ़ने से स्पष्ट प्रतीत होती है। आज इस भौतिक विज्ञानके वर्तमान युग में जब कि प्रत्येक देश उन्नति की दौड़ में एक दूसरे से आगे बढ़ने की पूरी २ कोशिश कर रहे हैं। हम भारतीयों का उन्नतिपथ कण्टकाकीर्ण है. और साथ ही हमारी दृष्टि भी नव्यविज्ञानालोकसे चुँधया गई हैं। जिसमे कि हम दूसरोंके मुकाबले अपने सिद्धान्तों की रक्षा अच्छी प्रकार नहीं कर सकते हैं, इसलिऐ हमें किसी शास्त्रीय विषय में विचार करते समय पारस्परिक प्रेम व सद्भावना का ही परिचय देना चाहिए, और किसी पक्ष का दुराग्रह न होना चाहिए इसमे किसी बात का निर्णय नहीं होता जैसे कि चरक का कथन है "वाद्यन् सप्रतिवादाण् हि वदन्तो निश्चितानिव। पक्षान्तं नैव गच्छन्ति तिलपीडक वद् गती॥ इसलिए-नैवं वोचन्ति तत्वं हि दुष्प्राप्यं पक्षसँश्रयात्॥ अर्थात् अपने २ पक्ष को निश्चित सिद्धान्त की तरह मण्डन करते हुऐ वे किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सकते। इसलिए मैं अन्य योग्य विद्वान् लेखकों से साग्रह सविनय निवेदन करता हूँ कि वे इस उपरोक्त विषय पर अपने अमूल्य विचारों को प्रकट करने की कृपा करें।

प्रिया मनमोहिनी गुटिका

इसका नाम ही इसके गुणों को प्रकट करने के लिए काफी है, विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं, इसलिए यदि आप अपनी प्रिया को अपने ऊपर मुग्ध करना चाहते हैं, तो अवश्य ही इन गोलियों को मंगा कर इन का चमत्कार देखिए। आपको हृदय समुद्र की तरह लहर मारने लगेगा आप मस्त हो जायेंगे। मूल्य ८ गोली शीशी १), ३ तीन शीशी २॥) डाक व्यय पृथक्।

दन्त मुक्ताकर मंजन

इस मंजन के सेवन से दांतों की सब प्रकार की तकलीफें दूर होती हैं, बत्तीसी मोती की तरह चमकने लगती है, दांत या मसूड़ों में कैसा ही सख्त दर्द हो, दांत हिलते हों, मसूड़े फूल गए हों, पीप व खून आता हो, बदबू आती हो इत्यादि बीमारियों को यह मंजन लगाते ही फायदा करता है, इसकी। मज़ेदार खुशबू बड़ी ही उत्तम है। कीमत।)

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ करने के लिए सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिए केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि इस की मालिश से लिङ्गेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता छोटापन टेढ़ापन व पतलापन दूर होकर इन्द्रिय में दृढ़ता, स्थूलता, और दीर्घता आजाती है जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वंचित (महरूम) हुए अनेक पुरुषों ने आशातीत लाभ प्राप्त कर के इस दिव्य औषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०), ३ माशे की शीशी २॥)

सिद्ध अर्शोहरि रसायन

(बवासीर की अक्सीर गोलियां)

यह गोलियां बवासीर के इलाज में हुक्मी असर रखती हैं बवासीर कितनी ही पुरानी हो, खूनी हो या बादी, कब्ज़ की शिकायत, मस्सों में चीस चबक दर्द आदि इन सब को रफ़ा कर के बहुत जल्द बवासीर को जड़ से नष्ट कर देती हैं। मूल्य २४ गोली मय डब्बा की १ डिबिया २)।

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार, देहली।

बृहत् प्लीह नाशक वटी

(तिल्ली दूर करने की अक्सीर दवा)

यह गोलियां तिल्ली के लिए अमृत समान गुणकारी हैं बच्चों की बढ़ी हुई तिल्ली और पेट का बेडौलपना बहुत जल्द दूर होकर भूख बढ़ने लगती है, और शरीर में नवीन रक्त उत्पन्न करके शक्ति देती है।

मूल्य ४८ गो० का १॥)

श्रीकामदेव रसायनकी सुनहरी गोलियाँ

ये गोलियां अत्यन्त पौष्टिक और स्नायविक दुर्बलता तथा बाल्यावस्था में किए गये अनुचित कार्यों से अथवा युवावस्था में की गई असावधानियों से उत्पन्न हुई नपुंसकता को दूर करने में जादू का असर रखती हैं। इनके थोड़े ही दिन के सेवन से शक्ति अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त हो जाती है, भूख खूब लगती है, जो भोजन खाया जाता है उस का आहार रस बनकर शरीर को मोटा, ताज़ा, सुन्दर, सुडौल और ताक़तवर बना देता है। मुख सुन्दर और तेजस्वी हो जाता है, और खासकर दिमाग़ी काम करने वालों के लिए तो गोलियां निहायत अक्सीर हैं, हर मौसम में इस्तेमाल की जा सकती हैं।

क़ीमत ४८ गोलियों की शीशी २)। तीन शीशियों के ५)

डाक व्यय पृथक।

बृहत् समीर पन्नगवटी रसायन

रजिस्टर्ड

इसका सेवन एड़ी से चोटी तक के सर्व प्रकार के शारीरिक दर्द चाहे वह वात पित्तादि किसी भी दोष व किसी कारण से कैसे ही सख्त क्यों न हों उन्हें दूर करने में बिजली की भांति असर दिखाता है। दर्द से बेचैन मनुष्य तुरन्त हँसने लगता है। इसके अतिरिक्त यह गोलियां माहवारी को साफ़ लाने व सलों के दर्द में अपना तुरन्त असर दिखाती हैं।

मूल्य ३२ गोलियों की एक शीशी का १)

डाक व्यय पृथक।

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार, देहली।

जावित्री पाक

काम-शक्ति व मैथुनेच्छा को इतना प्रबल करता है कि वर्णन से बाहर है वीर्य की वृद्धि करता है हाजमा-शक्ति को बढ़ाता है, भूख खूब लगाता है बादी और बलगम की बीमारियों में बड़ा लाभदायक है, कमर का दर्द गठिया, बार बार पेशाब आने की बीमारी को दूर करता है, चेहरे के रंग को निखारता और मुख सुगन्धित करता है। मूल्य प्रति सेर ४) रु०।

डाक-व्यय पृथक।

गाजर पाक

शरीर को मोटा ताज़ा और बलवान बनाता है वीर्य को बढ़ाता और गाढ़ा करता है दिल-दिमाग को ताकत देता है कमर का दर्द और कमज़ोरी को दूर करता है।

मूल्य प्रति सेर २) रु०। डाक-व्यय पृथक।

मदन मोदक

काम-शक्ति को बहुत बढ़ाता है भोग के समय घोड़े के समान ताकत देता है। वीर्य की पुष्टि तथा वृद्धि और स्तम्भन करता है। इसका सेवन करनेवाला बहुत स्त्रियों को प्रसन्न कर सकता है पुष्टिकर योगों में इसके समान दूसरा नहीं है। यह शास्त्रीय प्रसिद्ध आश्चर्यजनक योग है। स्वादिष्ट इतना है कि खाने से मन नहीं भरता। मूल्य प्रति सेर ८) रु०।

डाक-व्यय पृथक।

रति वल्लभ पूंगी पाक

इसके सेवन से वृद्ध पुरुष भी तरुण के समान सामर्थ्यवान तथा बलवान हो जाता है। शरीर सुगठित व फुर्तीला बन जाता है। नेत्र ज्योतिष्मान मुख कांतिवान हो जाता है। शरीर पर गुलझट नहीं रहता तथा कुन्दन सा दमकने लगता है। आयु की वृद्धि करता है।

मूल्य प्रति सेर ८) रु०। डाक-व्यय पृथक।

बृहत्-कूष्माण्ड-पाक

दिल, जिगर, फेफड़े तथा मेदे को ताकत देता है दिमाग़ को पुष्ट करता है शरीर की कमज़ोरी और दुबलेपन को दूर करता है पुरानी खांसी यक्ष्मा अम्लपित्त जीर्णज्वर में लाभदायक है शरीर को लाल बनाता है मू० प्रति सेर ४) रु०।

डाक-व्यय पृथक।

कामाग्नि-सन्दीपन-मोदक

काम-शक्ति व भोगेच्छा की वृद्धि करने वाला इसके समान दूसरा योग नहीं है पाँच स्त्रियों से तृप्ति तथा थकन नहीं होती, शरीर की सम्पूर्ण शक्तियों को प्रबल करता है हाथी का सा बल, घोड़े का सा चंचलता, मोर का सा शब्द,

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, जौहरी बाज़ार, देहली।

गिद्ध की सी दृष्टि हो जाती है, पूरी उमर तक सुख भोगता और निरोग रहता है इसके गुण अपार हैं। मूल्य प्रति तोला।) डाक-व्यय पृथक।

अश्वगन्धा-पाक

इसको ४० दिन सेवन करने से बूढ़ा भी जवान के तुल्य पराक्रमी और नामर्द मर्द हो जाता है शरीर लाल और मज़बूत बन जाता है वीर्य गाढ़ा हाज़मा तेज़ हो जाता है गठिया, फालिज लकवे में लाभदायक है स्त्रियों का श्वेत प्रदर, कमर का दर्द स्तनों का ढीलापन तथा बुढ़ापे की कमज़ोरी जाती रहती है खाने में स्वादु है। मूल्य प्रति सेर ४) रु०। डाक-व्यय पृथक।

निशास्ता-पाक

पुरुषों में सुस्ती नामर्दी थकावट आदि में बहुत लाभदायक है। सर कमर का दर्द दिमाग का खालीपन शरीर का दुबलापन निर्बलता जंघा की टटरी का दर्द जुचगी की कमज़ोरी दूध की कमी में फ़ायदेमन्द है।

मूल्य प्रति सेर ४) रु० । डाक-व्यय पृथक।

घृतकुमारी-पाक

काम-शक्ति को बढ़ाता है, कोष्ठ बद्धता तथा सिर के दर्द में लाभ-दायक है, गठिया में बहुत मुफीद है हाज़मा शक्ति को तेज़ करता है भूख की वृद्धि करता है, बलग़मी और बादी की बीमारियों में बहुत गुण करता है, स्त्रियों के मासिक-धर्म सम्बन्धी रोगों को दूर करता है। कमर का दर्द, निर्बलतामें लाभ देता है, बहुत स्वादिष्ट है। मूल्य प्रति सेर ४) रु०। डाक-व्यय पृथक।

बादाम पाक

इसके सेवन करने से शरीर मोटा ताज़ा सुन्दर और पुष्ट हो जाता है, सिर दर्द, पुरानी खाँसी, दिल और दिमाग़ की कमज़ोरी दूर करता है, नेत्रों की ज्योति और मुख की कान्ति को बढ़ाता है वीर्य की वृद्धि और पुष्टि करता है इसके गुण अपार हैं खाने में बहुत ही स्वादु है। मूल्य प्रति सेर ६) रु०। डाक-व्यय पृथक।

पिस्ता-पाक

शरीर को पुष्ट और मोटा करता है, बुद्धि व स्मृति को बढ़ाता है दिल दिमाग़ और कमर को बड़ी ताक़त देता है। पुरुषत्व शक्ति की अत्यन्त वृद्धि करता है, मुख कमल के समान प्रफुल्लित व सुन्दर कान्तिवान् बनाता है।

मूल्य प्रति सेर ६) रु०। डाक-व्यय पृथक।

JIWANSUDHA.] [अक्टूबर १९३५

जीवन-सुधा

राजवैद्य श्री पं० महावीरप्रसाद जी रसायन-शास्त्री

अध्यक्ष—

जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—

प्रोफ़ेसर पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क =)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ≡), सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वैदिक, यूनानी, एलोपैथिक, होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्ता

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री प० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी।।

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्।।

वर्ष ५ { आश्विन, वीरनिर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९९२, अक्टूबर सन् १९३५ } अङ्क १०

दीपमालिका

(१)

परिपूर्ण प्रकाश से मानव के, मद मोह का मान मिटा रही हो।
मणि-मन्दिर से मन-मन्दिर में, निज सौम्य छटा दिखला रही हो।
धनी और गरीब की झोंपड़ी में, तुम एकसा गौरव पारही हो।
कमले! निज ज्योति दिखा कर, यों जन-जीवन ज्योति जलारही हो।

(२)

जिसको एकबार निहारा कभी, क्षण में वह दीन निहाल हुआ।
डरता था सदा तनुधारियों से, पल में वह काल का काल हुआ।
धनहीन था किन्तु धनेश बना, यह तेरा प्रताप विशाल हुआ।
कमले! जिसपै किया तूने कृपा, नर नाम से वो नरपाल हुआ।

—चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि' काव्यसूरि।

होमियोपैथी (या सदृश विधान)

(लेखक—श्री महेशचन्द्र भट्टाचार्य, कलकत्ता)

(होम्योपैथिक शारीरिक चिकित्सा से उद्धृत)

चिकित्सा या इलाज का काम शुरू करनेसे पहिले होमियोपैथी के सम्बन्ध में कम से कम कुछ मोटी बातें जान लेना बहुत ही जरूरी है इस लिये पाठकों से निवेदन है कि वे इस उपक्रमणिका अंश को बहुत ध्यानसे जी लगा कर पढ़ें।

औषध किसे कहते हैं

जो पदार्थ अच्छे भले स्वस्थ शरीर को बिगाड़ सकता है और बिगड़े हुए को ठीक कर सकता है उसे "औषध" कहते हैं। जैसे सँखिया, क्विनाइन, अफीम इत्यादि।

होमियोपैथी क्या है —

अच्छी भली स्वस्थ्य अवस्था में कोई दवा खाने पर शरीर में जो लक्षण प्रकट होने लगते हैं, वैसे ही लक्षणों वाली बीमारी उसी दवा की बहुत थोड़ी मात्रा के प्रयोग से दब जाने या आराम होजाने का नाम "होमियोपैथी या सम विधान है। जैसे—स्वस्थ्य शरीर वाले को थोड़ी सँखिया (आर्सेनिक) खिला देने पर हैजे की भांति दस्त, कै, प्यास वगैरह लक्षण दिखाई देने लगते हैं, उसी तरह दस्त, कै, प्यास, जैसे हैजा में दिखाई देवें उस में बहुत थोड़ी मात्रा में आर्सेनिक का प्रयोग करने से ही वह अच्छा होजाता है। स्वस्थ्य शरीर वाला थोड़ी क्विनाइन खाले तो मलेरिया या जाड़ा बुखार के लक्षण उसके शरीर में बहुत कुछ पैदा हो जाते है, इसी लिये क्विनाइन की एक छोटी मात्रा

मलेरिया या कम्प ज्वर (जाड़ा बुखार) नाश कर सकती है। शरीर भला चंगा रहने पर अफ़ीम ज्यादा खा लेने से क़ब्ज़ियत, नींद न आना, यहां तक कि बेहोशी भी हो जाती है, इस लिये अफ़ीम बहुत थोड़ी मात्रा में क़ब्ज़ियत, अनिद्रा, बेहोशी, वगैरह रोगों में फ़ायदा पहुँचाती है, इस लिये "सम शुद्ध-सूत्रम" औषध विधान को ही होमियोपैथी का मूल सूत्र या जड़ समझना चाहिये।

होमियोपैथी कितने दिनों से है—

कम से कम दोहज़ार वर्ष पहिले सम सम होमियोपैथी मत का यह बीजमन्त्र पहले आर्यावर्त और प्राचीन ग्रीस में जपा गया था, इसके बाद लग भग एक सौ बरस हुये हैनेमैन नाम के एक महात्मा ने जी जान से कोशिश कर इस की कायदे से साधना और अच्छी तरह प्रचार किया जिस से चिकित्सा जगत् में एक भयानक हलचल और उलट फेर सा हो गया, साथ ही उनका नाम भी अमर होगया।

हैनेमैन कौन थे—

नयायुग लाने वाले, पुण्य चरित श्रीमान् क्रिष्टियान फ्रेडरिक सेमुएल हैनमैन ने १० वीं एप्रिल १७५५ ईसवी में जर्मनी के अन्तर्गत सैकसन राज्य के माईसेन नगर में एक मिट्टी का बरतन रंगने वाले दरिद्र के घर में जन्म लिया था। बड़े कष्ट से इन्हों ने लिखना पढ़ना सीखा यहाँ तक कि अपने हाथ का बनाया मिट्टी का दिया जलाकर उसी की रोशनी के सहारे वे रात में पढ़ा करते थे। वे ग्रीक, हिब्रू, अरबी, लैटिन, इटैलियन, स्पेनिश, सीरियन फ्रेंञ्च, जर्मन अंग्रेज़ी प्रभृति भाषाओं के, और चिकित्सा शास्त्र तथा रसायन विद्या के पूरे पण्डित थे। बात यह थी कि उन में बहुत से विषयों की विद्या और सर्वतोमुखी प्रतिभा इन दोनों का इतना सुन्दर समावेश होगया था कि सुपरिचित रसग्राही रिक्टर साहेब उन्हें एक अलौकिक दो रसका जीव कहा करते थे। २४ वर्ष की उम्र में ही उन्हों ने एम० डी० की उपाधि प्राप्त करली थी। १७८२ ईसवी में कुमारी हेनरीएटा-कूक्कर नाम की एक रूपवती और गुणवती जर्मन रमणी से विवाह किया। इस के बाद कुछ दिनों तक वे ड्रेसडेन अस्पताल के प्रधान अस्त्र चिकित्सक के पद पर काम करते रहे। फिर उन्हों ने यह काम छोड़ कर लीपज़िग नगर के पास एक छोटे गांवमें रहकर इलाज करना आरम्भ किया। इस तरह बड़ी प्रतिष्ठा के साथ दश वर्षतक डाक्टरी करने के बाद, उस समय जो इलाज करने का ढंग वहां चल रहा था, उस में कोई सार न देख तथा उससे हानि होती हुई समझ कर इस धर्म भीरु पुरुष सिंह ने वह काम छोड़ दिया और एकांत में बैठ कर रसायन शास्त्र की खोज और कितनी ही वैज्ञानिक पुस्तकों का अनुवाद कर बड़े कष्ट से अपने परिवार का पालन करने लगे। इसी समय में बहुतसे प्राच्य (पूर्व देश के) और प्रतीच्य (पश्चिमी) देशों के कितने ही चिकित्सा शास्त्रों को पढ़ कर सत्य निष्ट हनेमैन ने हताश होकर कहा कि सब तरह की चिकित्सा प्रथा एक काल्पनिक सामग्री है।

रोग को हटाने की सच्ची दवा नहीं है या हो नहीं सकती। परन्तु जिसके भाग्य में चिकित्सा जगत् में एक नयायुग लाना बदा था।

उसके मन में यह सन्देह भरी बात कितने दिन टिक सकती थी। थोड़े ही दिन बाद उनके घर रोग आ पहुँचा। उनका प्राण से प्यारा बच्चा बीमार पड़ा, रोगी बच्चे के मर्मभेदी आर्तस्वर को सुनना, इधर दवाओं पर उनकी आस्था नहीं, दरिद्र घर में अखाड़ा जमाये खड़ा, परन्तु ऐसी अवस्था में भी सन्तानवत्सल शान्तचित्त हनेमैन परम पिता ईश्वर पर भरोसा किये रोगी की खाट के पास बैठा था। यह अपूर्व दृश्य था। उसी शुभ मुहूर्त में विश्वपिता परम करुणामय ने अपनी प्रियतम सन्तानों के रोग दूर करने का कोई सच्चा उपाय अवश्यही कर रक्खा है" यह धारणा, यह मूक आश्वासन वाणी एकाएक उन के हृदय में बोल उठी। उन्हों ने चिकित्सा का संस्कार या इलाज की रीति में सुधार करने का बीड़ा उठाया। सन् १७६० ईसवी में कालेन साहब का लिखा "मैटीरियामेडिका" ग्रन्थ अंग्रेजी से जर्मन भाषा में अनुवाद करते समय उस ग्रन्थ में सिनकोना नाम की एक दवा का बुखार हटाने वाला जो गुण उस में लिखा था और उसकी जो व्याख्या की गई उस से वे सन्तुष्ट न हुये। इसके बाद इस दवा की आपस में विरुद्ध भाव से भरी गुणावली पर गहरे भाव से विचार करते २ उनके मन में एक यह भाव पैदा हो गया कि भले चंगे शरीर वाले को सिनकोना खिलाने से जाड़ा बुखार जैसा रोग पैदा हो जाता है इसीलिये शायद सिनकोना जाड़ा बुखार को लाभ भी पहुँचाता है। उन्हों ने स्वयम् ही तुरन्त सिनकोना खाकर परीक्षा कर ली, कि वह सचमुच ही मैलेरिया (या जाड़ा बुखार जैसा ज्वर) पैदा करता है। अब उन्हों ने यह सोचा कि दूसरी दवाओं में भी सिनकोना की तरह ही बीमारी पैदा करने वाली और बीमारी नष्ट करने वाली शक्ति रह सकती है। उनके मन में इस भाव के ही उन्हें धीरे धीरे "समः समं शमयति" की राह परखा कर खड़ा कर दिया। इस के बाद लगातार ६ वर्ष तक खोज, सब तरह की जांच, गरल विज्ञान (विषविज्ञान) का अध्ययन और खुद कितने ही विष खाकर वह पुरुष इस सिद्धान्त पर आ पहुँचे, कि होमियोपैथी सच्चाई के अटल पर्वत पर बहुत मज़बूती से बैठी है। अनुमान या कल्पना इसकी जड़ नहीं है डाल से गिरा हुवा फल ऊपर न जाकर नीचे ज़मीन परही क्यों गिर पड़ता है? इसके उत्तर की खोज करते - जिस तरह बुद्धिमान् न्यूटनने मध्या कर्षणी शक्ति का पता लगा कर जड़ विज्ञान की राह तैयार करली थी उसी तरह "सिनकोना" क्यों कम्प ज्वर को नाश करता है इस सवाल को हल करते २ महानुभाव हैनेमैनने उसी तरह "सममत" खोज निकालकर चिकित्साशास्त्र विज्ञान की भित्तिपर स्थापन किया है। छ वर्ष तक लगातार खोज करने और अनुभव प्राप्त करने के बाद सन् १७६६ ईसवी में "हुफैलेन्डस जर्नल" नामक एक ऐसी पत्रिका में एक लेख प्रकाशित हुआ जो उस समय चिकित्सा जगत् में सबसे बढ़िया पत्रिका मानी

जाती थी। उनके इस बिलकुल ही नये मत का प्रचार होते ही चारों ओर एक प्रकार की हल चल मच गई। सत्यपर प्रेम और अनुराग रखने वाले कितने ही ज्ञानी चिकित्सक उनके शिष्य हुवे। लेकिन साथ ही साथ कितने ही ऐसे दवा करने वाले जो उदार नहीं थे तथा नीच बुद्धि वाले स्वार्थी डाक्टर उनके घोर विरोधी भी हो गये। परन्तु जो महापुरुष अग्निमन्त्र की दीक्षा ले चुका है वह इस तरह की निन्दा या स्तुति के फेर में पड़कर क्या अपनी साधना त्याग सकता है? १८०५ ईस्वी में उन्होंने Fragmente deviribus नाम की एक किताब लैटिन भाषा में छपाई इसमें इन्हीं बातों का वे वर्णन करगये हैं कि भले चँगे शरीर में सत्ताईस दवाओं के सेवन करने पर कौन कौन से लक्षण प्रकट हुवे थे। यही सबसे पहली होमियोपैथिक मैटेरिया मेडिका याभेषज लक्षण सँग्रह है। १८१० ईस्वी में उनका अर्गनन (या आरोग्यसाधन) नामक एक महाग्रन्थ प्रकाशित हुवा इस अमूल्य पुस्तक में जिस तरह विलक्षण पाण्डित्य और न कटने वाली अकाट्य युक्तियों के साथ सदृशविधान तत्वका वर्णन और समर्थन किया गया है उसीतरह खून निकालना आदि उस समय की चली हुई चिकित्सा करने की ऊँगली रीति की भी तीव्र भाषा में समालोचना कीगई है। यही कारण हुवा कि उनके शत्रु क्रोध से पागल हो उठे। इसके बाद १८१२ ईसवी में जब आपने गुणों की बदौलत वे लीपजिक विश्वविद्यालय के समशास्त्र के अध्यापक (Teacher of homoeopathy) के पद पर जा पहुँचे और नवयुवक विद्यार्थी तथा प्रवीण चिकित्सकों को अपने नये मन्त्र की दीक्षा देने लगे, (१८१२-१८२१ ईसवी) उस समय उनके विपक्षी नाना प्रकार के षड्यन्त्र कर उन्हें हानि पहुँचाने की चेष्टा करने लगे।

अन्त में उन्होंने ऐसा फंदा रचा कि १८२१ ईसवी में इस जर्मन कुल-तिलक को लीपज़िक से निर्वासित ही करा छोड़ा। परंतु वीरों के हृदय की उद्यमरूपी आग सहज में दबने वाली नहीं होती, बुझती भी नहीं है। उन्होंने कोटेन नगर में चौदह वर्ष का समय बिताया। यहां के किसी सामन्त राजा का ऐसा रोग उन्हीं ने अच्छा किया, जिसके अच्छे होने की आशा ही नहीं थी, और इसी का यह फल हुआ कि वे बड़े सम्मान के साथ राजवैद्य के पद पर बिठाये गये। इसी कोटेन नगर में उनके जीवन का मध्य भाग बीता, हज़ारों रोगी भयानक रोगों से आराम हुवे, और सब रोगों का प्रकृत निदान (या मूल कारण तत्व) खोजकर १८२८ ईसवी में क्रानिक डिज़ीज़ या पुरानी बीमारियों का निराकरण नामक पुस्तक तैयार करने के कारण उनका यश समस्त जगत् में फैल गया।

उससमय की प्रचलित मात्रा के हिसाब से हनेमैन भी पहले होमियोपैथिक दवा को अधिक परिमाण में (जैसे फी खुराक नक्सवमि का ४ ग्रेन, इपिकाक ५ ग्रेन, सिनकोना २ ड्राम तक) देते थे इससे रोगतो अच्छा हो जाता था पर दवा पेट में जातेही रोग कुछ बढ़ जाता था।

(continuing from previous article, left column lower part)

इस बुराई को हटाने के लिये उन्होंने दवा की मात्रा घटाना शुरू किया। अन्त में बहुत सूक्ष्म अँग में उसको बाँट कर जब उन्होंने दवा का प्रभाव और फल देखा तो आश्चर्य में आ गये उस समय से उन्हों ने अपना यह सिद्धान्त बनाया कि मर्दन आदि किया द्वारा कोई पदार्थ सूक्ष्म से सूक्ष्म अंश में बांट देने पर वह स्थूलभाग (या जड़ अंश) छोड़ कर बिजली के बल से सचल भाव धारण करता है—सारांश यह है कि उस समय वह पदार्थ अपना रूप या शक्ति रूप प्राप्त कर लेता है, और यही शक्ति समस्त शरीर में बिजली की तरह प्रवेश कर जल्दी रोग को आराम करदेती है।

अपूर्ण (क्रमशः)

प्रसव काल की सावधानी

(डा० श्री० गोपाल शरण, एम० डी०)

प्रसव काल में सावधानता पूर्वक न रहने के कारण अनेक स्त्रियों को बड़ा ही कष्ट भोगना पड़ता है। यहां तक कि कितनों को तो प्राणान्त होने के जैसा दुःख होता है। किसी २ के पेट से तो शिशु को काट कर निकाला जाता है। इसी कारण, मैं यहां इस विषय पर कुछ लिख-कर उन्हें सावधान कर देना चाहता हूँ।

प्रसव काल के निकट आजाने से बालक गर्भ से नीचे उतर आता है। और उस समय गर्भ का सारा बोझा मूत्राशय के ही ऊपर पड़ता है, जिससे उस स्त्री को पेशाब करने की बार २ इच्छा होती रहती है। अज्ञानता वश उसे कितनी तो बीमारी समझती हैं। किसी प्रसूता का चित्र देखने से यह प्रत्यक्ष मालूम हो जाता है कि प्रसव के समय बालक किस प्रकार ऊपर से उतरता-घूमता हुआ आता है। गर्भ के नीचे उतर आने पर ही तो प्रसव भी शीघ्र होता है। प्रसव का समय १२ घंटे का होता है। प्रकृति के नियमानुसार प्रसव की पीड़ा १२ घंटे पहिले आरम्भ होती है। इसमें पूर्व के छः घंटों में थोड़ी थोड़ी पीड़ा होना आरम्भ होती है और पिछले ६ घंटों में पीड़ा बढ़ती ही जाती है। प्रसव-वेदना पीठ में उत्पन्न होती है और फिर पीठ से होकर वह पेट में आती है। बीस-बीस पचीस-पचीस मिनट पर यह वेदना उत्पन्न होती है और पुनः शान्त हो जाती है। कभी कभी चार-चार, पांच-पांच मिनट पर वेदना उत्पन्न होती है और वह शीघ्र शान्त भी नहीं होती। पर वास्तव में वह प्रसव-वेदना नहीं है। असली प्रसव-वेदना के साथ २ जरायु का मुँह कुछ २ खुलता मालूम पड़े और जल निकले। वास्तविक प्रसव-वेदना जितनी ही शीघ्रता से हो, प्रसव काल उतना ही समीप समझना चाहिये। आज कल के नई-नई चालों से स्वेच्छाचारिता और विलासिता के कारण प्रसूति को कभी २

स्वाभाविक प्रसव नहीं होता। इस समय हाथ पैर से काम लेने पर शीघ्रता से प्रसव हो जाता है। किसी प्रकार की यन्त्रणा भी नहीं होती। साधारणतः, गृहस्थों के घर में प्रसव स्वाभाविक ही होता है। देहातों में तो प्रसव मामूली सी बात समझी जाती है। गर्भवती स्त्रियाँ अन्त तक अपना काम किये जाती हैं। बच्चा पैदा होते समय उन्हें कोई विशेष कष्ट नहीं होता। ऐसे भी उदाहरण देखे गये हैं, कि मज़दूरी करनेवाली स्त्रियाँ शिशु प्रसव के बाद ही काम में लग जाती हैं। दूसरे जीवों में भी हम देखते हैं कि वे प्रसव काल में दुःख नहीं भोगते; तब शहर के विलासी बड़े आदमी कहलाने वालों के यहाँ स्त्रियाँ क्यों दुःख भोगती हैं? प्रसव होते समय उन्हें क्यों असह्य वेदना होती है? बच्चा उत्पन्न होने के पूर्व और बाद में, क्यों उन्हें विशेष संभलना पड़ता है? इन सब बातों पर विचार करने से मालूम होगा कि ऐसी स्त्रियों का सदा विलासिता में रहना ही, और उनका आहार तथा उनका पहनावा प्रकृति के सर्वथा विपरीत होना ही मुख्य कारण है। ऐसी विलास-प्रिय-स्त्रियाँ गर्भावस्था के समय और प्रसव होने के बाद, प्रसूतिका गृह से निकलने पर, शीघ्र ही पुरुष के साथ सहवास करती हैं। तो भला कहिए, ये दुःख क्यों न भोगें? ऐसी ही ऐसी स्त्रियों को कभी २ १२ घंटे की जगह १२ दिन तक प्रसव का कष्ट भोगना पड़ता है। प्रसव कभी स्वाभाविक रूप से न होकर, बालक के हाथ या पैर ही बाहर निकल आते हैं। इस बात से सब सहमत हैं कि गर्भिणी की असावधानी तथा नियम विरुद्ध आचरण करने से, प्रसव के समय किस प्रकार बालक टेढ़ा हो जाता है, और बालक को हाथ निकल आता है। ऐसे समय में अनुभवी डाक्टरों अथवा दाइयों की ज़रूरत पड़ती है। सुख में दुःख हो जाता है। कभी-कभी, प्रसूति के उठने-बैठने में ग़लती करने से उसकी शोचनीय अवस्था हो जाती है। यदि प्रसव न होता हो अथवा शिशु का कोई अंग न निकलता हो या इसी प्रकार के अन्य किसी उपद्रव में सुयोग्य डाक्टर की राय लेना आवश्यक है। जहाँ डाक्टर न हो, वहाँ होमियोपैथिक चिकित्सा ही करनी चाहिये। होमियोपैथिक की <u>पलसिटिला</u> (Pulstila) नाम की औषध दो तीन बार देने से प्रसव सहज ही में हो जाता है। गर्भिणी को प्रसव के समय चुपचाप एक ही जगह बैठना चाहिए; ज्यादा इधर उधर छटपटाना अच्छा नहीं। इससे प्रसव में तकलीफ़ होती है। प्रसव काल में गर्भिणी को बायें करवट सोना चाहिए, हाथ को सिर के नीचे रखना चाहिये। यदि व्यथा धीरे २ बन्द हो जाय, तो मुँह में अँगुली लगाकर कै कर देना चाहिये। जिन स्त्रियों को गर्भावस्था में उल्टी होती है, बालक उत्पन्न होने के समय उनको विशेष कष्ट नहीं होता। अतः गर्भवती स्त्री को उल्टी होती हो तो उसे किसी प्रकार का रोग नहीं समझना चाहिए और इलाज करके उसे बन्द नहीं करना चाहिए। कारण, उल्टी बन्द कराने से गर्भ और गर्भिणी, दोनों को हानि

पहुँचती है। यदि गर्भिणी को उल्टी अधिक हो तो उल्टी को शान्त रखने वाले खाने पीने के पदार्थों में हेर फेर करते रहना चाहिए। गरिष्ठ, देरी से पचने वाले, बासी, बादी, और अधिक पित्त-कारक पदार्थ नहीं खाने चाहिए। जब बच्चा उत्पन्न होने का समय निकट आ जाता है, तो प्रसूति का गृह का प्रबन्ध किया जाता है। पर यह खेद का विषय है, कि आज कल अधिक-तर लोग प्रसूतिका गृह पर विशेष ध्यान नहीं देते! घर ही में कोने, या दरवाज़े ही पर ठहर कर या पुराने कपड़ों से घेर कर ही प्रसूतिका-गृह बना लिये जाते हैं। जगह कम है, अथवा दुर्गन्धि आती है, इसका कुछ भी विचार नहीं किया जाता। किसी प्रकार बच्चा भर पैदा हो जाना चाहिए। पर ऐसा ठीक नहीं। प्रसूतिका-गृह ऐसी जगह में होना चाहिए, जहाँ ज़्यादा सर्दी, गर्मी या गन्दगी न हो। पर ऐसा प्रबन्ध शिक्षित और समझदार लोग ही कर सकते हैं; और लोग तो सब घर बराबर ही समझते हैं। इस प्रकार कितने ही बच्चे इन्हीं गड़बड़ी के कारण बिना मृत्यु के ही मर जाते हैं। प्रसूता-स्त्री को अँधेरी और बन्द कोठरी में गन्दे बिछौने पर और बन्द मकान में रखने से बड़ी हानि होती है। इसकी हवा बन्द रहने के कारण प्रसूति को स्वांस लेने में बड़ा ही कष्ट होता है। प्रसूता-स्त्री के चारपाईके नीचे अंगीठी रखने की कई जगह रिवाज है पर यह भी अनावश्यक और हानि कारक है। सर्दी के दिनों में प्रसूता-स्त्री के लिये विशेष गर्मी की ज़रूरत रहती है। इसके लिये उसे अधिक ओढ़ने की ज़रूरत है। यदि कोठरी में अधिक सर्दी हो तो उसको गर्म्म रखने के लिये आग रखी जा सकती है; पर बाहर सुलगाई जानी चाहिये। जब बिलकुल धुआँ न रहे तभी अन्दर लाकर रखी जाय। चारपाई के नीचे अंगीठी रखने की ज़रा भी ज़रूरत नहीं। प्रसूता-स्त्री के बिस्तर पर गर्म पानी की बोतलें रखने से भी गर्म्मी आ सकती है। प्रसूता-स्त्री को मैले कुचैले और गंदे कपड़ों में लिटाने की रीति भी बहुत ही घातक और भ्रम पूर्ण है।

प्रसव का समय निकट आने पर धाय को बड़ी सावधानी से रहने की ज़रूरत है। प्रसव का समय निकट आजाने पर आज कल स्त्रियां व्याकुल होजाती हैं। यह बुलाओ, वह बुलाओ, हाय, कैसे होगा, भगवान् रक्षा करो, आदि चिल्ला कर घर भर को व्याकुल कर देती हैं। उन की ऐसी दशा देख कर पुरुषों का व्याकुल होना स्वाभाविक है। ऐसे समय में हृदय को दृढ़ रखना चाहिये। इस प्रकार का कोई उपाय नहीं करना चाहिये कि शिशु जल्दी उत्पन्न हो जाए। कितनी मूर्खा धाय प्रसव के समय गर्भवती को काँखने का आदेश करती हैं जिससे प्रसव शीघ्र होजाय। इस प्रकार करने से कभी-कभी, जच्चा और बच्चा दोनों ही को बड़ी भारी हानि पहुँचती है। बच्चा पैदा होना मनुष्य, तथा पशु, पक्षी सब के लिये एक सा है। अतः दाइयों को निश्चित समय के पहले अपने किसी उपाय से शिशु जल्द पैदा करने का उद्योग नहीं करना

करना चाहिये। प्रकृति के नियमानुसार, बिना किसी उद्योग के जिन्हें प्रसव होता है, वे किसी प्रकार के रोग में नहीं फँसतीं। प्रसव के समय पीड़ा होना तो प्रकृति का नियम है। अतः प्रसव समय की पीड़ा शांत करने का ही कुछ उपाय करना चाहिये। प्रसव होने के समय धाय को सावधान रहना चाहिये; यह मैं पहले भी कह चुका हूँ। इस समय धाय की अज्ञता से स्त्रियों को प्रायः प्रसूत रोग होजाता है और फिर पीछे वही प्रसूत रोग इतना असाध्य होजाता है कि स्त्री का खाना पीना बिल्कुल ही छूट जाता है और खाने में अरुचि सी होजाती है। रात दिन प्रदर बहता रहता है, शरीर में मांस रहता ही नहीं। रक्त सूख जाता है। बोलने तक की शक्ति नहीं रह जाती। स्त्री रात दिन बेचैन रहती है और उठ बैठ नहीं सकती। प्रसूत रोग से ही जीर्ण-ज्वर और क्षय, जिसे तपेदिक भी कहते हैं, हो जाता है। फिर जब यह अधिक बढ़ जाता है, तब आराम होना कठिन हो जाता है। स्त्रियों का प्रसव-काल बड़ा ही कठिन समय है। इसमें जीवन-मरण का प्रश्न सम्मुख आ जाता है। तनिक भी असावधानी हुई, कि जीवन पर्यन्त के लिये एक न एक रोग उसे घेर लेते हैं। प्रसूत का भयानक रोग जीवन सुख को नष्ट कर देता है। प्रसव के बाद, कई दिनों तक पेट में पीड़ा हुआ करती है, यह स्वाभाविक है। क्योंकि बालक उत्पन्न होने के बाद, गर्भाशय सिकुड़ता है और अपने पहले की दशा पर आता है। इस लिये सिकुड़ते समय उसमें पीड़ा स्वाभाविक हुआ करती है। इसी समय जब गर्भाशय की नसें सिकुड़ कर अपनी असली हालत में आने लगती हैं उस समय भी यदि आहार-विहार का नियम ठीक न रक्खा गया तो उस स्त्री को अवश्य प्रसूत रोग हो जाता है। कारण, जब बालक उत्पन्न होता है तब गर्भाशय की समस्त नसों के मुँह खुले रहते हैं और गर्भाशय का मुख खुला रहता है। शरीर की सम्पूर्ण नसें तथा अन्य अवयव निर्बल पड़ जाते हैं। यदि प्रसव होने के समय स्त्री को ठीक न सँभाला गया, आहार-विहार में असावधानी की गई तो प्रसूत ज्वर उत्पन्न हो जाता है। ठंडे, बादी पदार्थों के सेवन करने से नसों के मुँह एक साथ ही बन्द हो जाते हैं। इस कारण मल ठीक २, साफ़ नहीं होता; यहाँ तक कि कभी २ तो मल निकलता ही नहीं। नसों में वायु रुक जाने से तथा मल के रुक जाने से शरीर में हर समय ज्वर की सी हरारत रहने लगती है और प्रायः ज्वर ज़ोर से भी आने लगता है। मन्दाग्नि हो जाती है, और समस्त शरीर में पीड़ा होती रहती है। शिर में चक्कर, पसलियों में पीड़ा, खाँसी आदि अनेकों प्रकार के उपद्रव उत्पन्न होते हैं। इस लिये स्त्री को गर्भवती होने के समय से शिशु उत्पन्न होने के समय तथा प्रसूतिका-गृह से निकलने के समय तक बहुत सावधानी और पथ्य से रहना चाहिये।

(मनोरमा से)

आयुर्वेद में प्राकृतिक चिकित्सा

(ले०—वैद्यराज पण्डित विश्वनाथ जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य प्रिन्सिपल ललितहरि कालेज (पीलीभीत)

(५—६ अङ्क के बाद)

(भ्रमण)

यह मनुष्य का सर्व प्रधान कर्त्तव्य है कि वह जीवन को सफल बनावे। सफल यह तब ही हो सकता है जब इसमें स्वास्थ्य हो। बिना स्वास्थ्य के जीवन एक मिट्टी के बने हुये कच्चे खिलौने की तरह है जो जब चाहे तब टूट फूट सकता है।

अतः इसके सुधारने के निमित्त प्राकृतिक मार्गों का अवलम्बन करना नितान्त आवश्यक है इसके पहले कुछ इस विषय पर प्रकाश डाला जा चुका है अब शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त होकर भ्रमणार्थ चलना चाहिये। भ्रमण मनुष्य का जीवन है। जो इसके महत्व को नहीं समझते वे आलस्य के दुर्विपाक के घोर परिणाम की शरणागति को प्राप्त होते हैं।

विधि—बहुत से मनुष्य भ्रमणार्थ नित्य जाते हैं किन्तु उन्हें पर्याप्त फल नहीं प्राप्त होता। वे लाचार होकर इसका परित्याग कर देते हैं। इसमें उनका दोष नहीं है किन्तु वे वास्तव में भ्रमण के नियमों का पूर्णपालन नहीं करते न वे यही जानते हैं कि किस तरह भ्रमण करना उचित है। अस्तु पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि इसकी विधि को जान कर उसके अनुसार चला जाय।

१—शरीर को ढीला न रख करके दृढ़ता लाते हुये वक्षस्थल को आगे निकाल लो। शिर ठीक मेरु दंड (रीढ़) के सीध में रहे। पैरों में प्रसार आकुंचन सब पर्याप्त हों। इस तरह होकर द्रुत वेग से चलो। धीरे २ टहलना शरीर का दुरुपयोग करना है।

परिणाम—१—इससे शरीर में एक प्रकार की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। संधि संस्थान जो रात भर निश्चेष्ट पड़ा हुआ था वह अवश्य भ्रमण से सचेष्ट होगा। इस प्रक्रिया के द्वारा शरीर में एक प्रकार की बिजली (जो स्वाभाविक मेरु दण्ड में चला करती है) उत्पन्न होती है। वह चैतन्य होगी व अस्वस्थ प्रान्त में भी प्रविष्ट होकर उस निष्क्रिय प्रदेश को सक्रिय बना देगी। मस्तिष्क परिष्कृत व निर्मल होगा, स्नायु संबंधी, वात सम्बन्धी रोगों में विशेष लाभ अनुभव होगा

२—पाचन संस्थान में एक नई स्फूर्ति पैदा होगी। अतः इस संस्थान विधि की विकृतियां दूर होंगी। आमाशय, पक्वाशय, यकृत्, प्लीहा, क्षुद्र व बृहदंत्र के कार्य सुचारु रूप से होने प्रारंभ हो जायेंगे। अतः लगातार उसे अपने नियम का पालन करना पड़ेगा।

३—इस समय (प्रातः काल में) एक प्रकार की अल्टावायलेट रेज़ जिनका वर्णन पूर्व किया

जा चुका है शरीर पर पड़ती हैं इसके पूर्ण लाभ उसे प्राप्त होते हैं।

४— प्रातः कालीन वायु का संपर्क शरीर को दुःखद बाधाओं से दूर करके ओजस्वीपन लाता है। नेत्र स्फूर्तिमान, दृष्टि शक्ति तीव्र हो जाती है इसके कारण शरीर में दार्ढ्य (दृढ़ता) प्राप्त होकर कष्ट सहने की शक्ति प्राप्त होती है।

(२) नित्य दूरी (भ्रमण) को बढ़ाओ। इस नियम में दृढ़ता रखनी पड़ेगी।

(३) भ्रमण के वक्त इस स्वच्छन्दता व स्फूर्ति के साथ चलो कि मालूम हो तुम हवा पर तैर रहे हो।

परिणाम—दूरी नित्य बढ़ते रहने पर पैरों में सहन शीलता व दृढ़ता प्राप्त होती है। एक बड़ा काम जो पहले असाध्य मालूम होता था अब सरलता से पूरा होता दिखलाई पड़ेगा। जो कार्य देखते ही कापुरुषता, मनः खिन्नता प्राप्त होती थी वह अब दूर होकर प्रसन्नता और शौर्यता के रूप में प्रकट होगी।

(४) जिस तरफ हरियाली अधिक हो उस तरफ ही अधिक भ्रमण करो।

(५) नंगे पांव जहाँ तक हो द्रुत गति से प्रारम्भ करो।

परिणाम—हरियाली मन को संतुष्ट करने वाली व नेत्रों को हितकारी है। इस पर दृष्टि फेरने से नेत्रों में ज्योति भर जाती है। नेत्र दीर्घ कालतक शक्ति सम्पन्न रहते हैं। नंगे पांव चलने से पादतल (तलवा) में सहन शीलता प्राप्त होती है। अंगूठे के साथ नेत्र व वृषण सम्बन्धी स्नायु व नाड़ियों का अभिन्न सम्बन्ध है। अतः इस से (तीव्र भ्रमण) से नेत्र पुष्ट व बलिष्ट तथा शुक्र विशुद्ध व पुष्ट होता है। जिन्हें चश्मा लगाने की आदत पड़ रही हो व जिन्हे प्रमेह होने की संभावना हो या कुछ काल तक का हो गया हो इस क्रिया के द्वारा कुछ ही काल में नष्ट किया जा सकता है। जो नंगे हमेशा चलने में (भ्रमण काल में) असमर्थ हों वह कुछ काल का अंतर देकर चल सकते हैं। अन्त में क्रम से नंगे पैर की आदत पूर्ण कर सकते हैं।

(६) किसी सुन्दर विषय का चिन्तन या मनन यदि किसी सदाचारी मित्र के साथ हो सके करना चाहिये। अकेले भी। इससे दूरतक चलने पर भी थकान का ज्ञान या दूरी का ज्ञान जनित कष्ट न होगा।

(७) स्थान, नदी प्रान्त, खुला हुआ स्थान, पार्वतीय प्रान्त या शान्त भूमि का, भ्रमणार्थ होना चाहिये।

परिणाम—मस्तिष्क की शक्ति वृद्ध होती है। कुछ दिन के अभ्यास से जितना पाठ दो दिनों में याद होता था अब शीघ्र ही याद होने लगेगा। मन प्रसन्न व स्वास्थ्य सुधरता जायेगा।

आयुर्वेद ने भ्रमण के लिये सब समय तो बतलाया हो है किन्तु हर एक के लिये विशेषकर 'बसन्त ऋतु में भ्रमण करना आवश्यक कहा है। 'बसन्ते भ्रमणं शस्तम्' इस ऋतु में संचित कफ की वृद्धि से श्लेष्म जन्य विकार होने लगते हैं। भ्रमण से इनके होने की सम्भावना नष्ट हो जाती है। जो मनुष्य कम से कम एक वर्ष भी

स्वस्थ रहना चाहे भ्रमण के नियमों के अनुसार यदि बसंत ऋतु भर नियम पूर्वक भ्रमण करे तो १ वर्ष तक श्लेष्म जन्य रोगों से त्राण पा सकता है।

आयुर्वेदने दंतधावन (दातून करना) क्रिया—पर विशेष ज़ोर दिया है। इससे युक्त रहने पर पाचन संबन्धी रोग तो होते ही नहीं अतिरिक्त कई प्रकार के दन्त रोगों से मुक्ति मिल जाती है। देखिये—

शरीर चिन्तां निर्वर्त्य कृत शौच विधिस्ततः।
अर्क न्यग्रोध खदिर करंज ककुभादिकम ॥
भक्षयेद्दन्त पवनं, दंत मांसान्यबाधयन्।
कनीन्यग्र सम स्थौल्य.................वाग्भट्ट

शारीरिक क्रियाओं से निपट कर तब दातून से दांतों को परिष्कार करे। इसके लिये कोई कृत्रिम सामग्री की आवश्यकता नहीं है जैसा कि वर्तमान समय में ब्रुश व मंजनों का प्रयोग करना प्रारम्भ हो गया है। बहुत से लोग कोयले के द्वारा किसी तरह इस क्रिया से निपट लेते हैं। मैंने एक सुयोग्य वैद्य जी के मुख से सुना है—"साहब, हम तो कोयले का ही उपयोग करते हैं किन्तु हमारे दांत ठीक हैं" किन्तु यह बहुत भारी भूल है। प्रकृति ने यद्यपि किसी चीज़ की उत्पत्ति व्यर्थ नहीं की है किन्तु उनका उपयोग, दुरुपयोग की तरह न होना चाहिये, आयुर्वेद कहीं भी ऐसी आज्ञा नहीं देता। उसका तो कथन है—

आक, बड़, खदिर, करंज, अर्जुन, क्षीरावृक्ष पंच पल्लव इत्यादि की डालों को जो कनिष्ठ अंगुली के बराबर मोटी व कम से कम एक बालिश्त लम्बी हों उपयोग में लाया जावे। क्योंकि—

दांत मनुष्य के जीवन के सर्व प्रथम आधार हैं। उनका विकृत रखना अपने उदर संस्थान को रुग्ण बनाने का साधन इकट्ठा करना है। कई प्रकार के मस्तिष्क व नेत्र को दुर्बल करने वाले रोग पाचन को नष्ट कर अजीर्ण मंदाग्नि इत्यादि की नींव दृढ़ करने वाले रोग दांतों के रुग्ण व अपरिष्कार रहने पर ही फैलते हैं। यदि इसका पालन किया गया तो मनुष्य स्वस्थ व दीर्घायु लाभ कर सकता है क्योंकि ब्रुश का प्रयोग न बतला कर आयुर्वेद ताज़ी हरी वनस्पतियों के द्वारा दन्त धावन की आज्ञा देता है?

१—वनस्पतियां सूर्य की रोशनी लेकर मनुष्यों के लिये प्राण ग्राहक शक्ति देती हैं।

२—इनमें जीवनीय गण की Vitamins प्राप्ति होता है जो जीवन के लिये आवश्यक हैं

३—इनमें तीव्र रोग संहारक शक्ति होती है

४—यह दांत साफ करने के अतिरिक्त दांतों में दृढ़ता देती है।

५—मुख की दुर्गन्ध को नष्ट करती व उनकी जड़ पुष्ट करती है।

६—नेत्र की शक्ति स्थापित रहती है।

किस के लिये किस प्रकार की दन्तधावन की आवश्यकता है

१—स्वस्थ पुरुष के लिये कषाय व कटु रस युक्त वनस्पतियों की दांतून उपयुक्त है।

जैसे—मधूक (महुवा) वट. पीपल, पाखर, सिहोर, बबूल निम्ब, करंज, अर्जुन इत्यादि।

२—जिनके दांत अत्यधिक मैले व दुर्गन्धित रहते हों उनके लिये अम्लरसयुक्त बनौषधियोंकी दांतुन प्रशस्त हैं जैसे—आम,इमली,निजौरा इ०। इनके विश्लेषण करने पर गौलिक एसिड, टैनिक एसिड इत्यादि वस्तुएं पाई जाती हैं जो दांतों पर के मैल को शीघ्र दूर करती व पिघला देती हैं। इन एसिड (अम्लरसों) में मैल खुरचने की तीव्र शक्ति होती है अतः दांत शीघ्र ही साफ़ दुर्गन्ध रहित होजाते हैं रुचि वर्द्धन होता है।

३. जिसके मसूढ़ों से खून निकलता रहता है, सूज रहते हैं दंत पूय (पायोरिया) हो चुका है, पीप निकलती रहती है उनके लिए, क्षीरी वृक्ष व कषाय रस वाली बनस्पतियों की जैसे—बरगद, पीपल पाखर महुआ, गूलर इत्यादि की दांतून प्रशस्त है। यह (कषाय रस) मांस पेशियों को संकुचित करते हैं। व दृढ़ता लाते हैं। व्रणों का रोपण करते हैं। रुधिर स्राव को दूर करते हैं। मसूढ़े दृढ़ व मज़बूत होजाते हैं। व्रण भर जाने से दन्त रोग रहित व शुद्ध हो जाते हैं।

४. मुख का विरस रहना व अरुचि युक्त पुरुष के लिये कटुरस-युक्त दांतून का सेवन उपयुक्त है। यह दांतोंका मैल दूर करके स्वादको अपने स्वाद में परिवर्तित कर देते हैं अतः भोजन में रुचि-वृद्धि होकर अरोचकादि दूर हो जाते हैं। इस तरह की दातूनों में निम्ब, करंज सिहार, (साखोट) चिरौंजी इत्यादि का स्थान है।

५—जिनको दिन रात थूकने की आदत पड़ गई हो व कृश होते जा रहे हों उन्हें मधुर-रस युक्त, महुवा शहतूत इत्यादि की दातूनों को करना चाहिये। इसमें दंताश्रित ग्रंथियों (कर्णाग्रवर्ती,हन्व धोवर्ती व जिह्वा धोवर्ती लसीका ग्रथियों) की कार्य-शीलता प्राप्त हो करके उनका क्षय रुक जाता है व रसकी उद्रेचनी शक्ति स्वस्थ हो जाती है और पुनः रुचि वर्धित होती है। यदि थूक अधिक पैदा होता है तो यह भी रुक जाता है। यह परिणाम एक सप्ताह के ही प्रयोग में देखे जा सकते हैं आयुर्वेद का विचार इस तरह उपयुक्त है। इनमें (ताजी दातूनों में) जीवक विटामिन वस्तु व खनिज पदार्थ उचित मात्रा में रहते हैं वह जितना कार्य कर सकते हैं उतना कोई पाउडर या ब्रुश नहीं कर सकता—

वर्तमान काल में जो चलते फिरते हुये मुख धोने की प्रथा है यह भी निर्यचित है क्योंकि दांतून का प्रयोग वहां तक ही उपयुक्त है जहां तक कि मसूढ़ों को बाधा न पहुंचे।

कोई पाठक इसका अर्थ यों न कर बैठें कि इस रोग में यह दांतून उपयुक्त है तो खूब करो दांतों को खूब रगड़ो किन्तु दन्त मांसान्यबाधयन्, मसूढ़ों को कोई बाधा न पहुँचाते हुवे।

बाधा शांत होकर दातून करने में ही यह क्रिया प्राप्त हो सकती किन्तु पदों की विषम गति में कहीं (शांत समय जैसा) मसूढ़ों पर क्रिया हो सकेगी इसकी सम्भावना ही नहि है अतः इस लिए सब शौचादि क्रियाओं से निवृत्त होने पर शान्ति के साथ यह क्रिया अपेक्षित है अतएव

इन प्राकृतिक नियमों का सामंजस्य जितना आयुर्वेद में दृढ़ता के साथ है आज तक की वैसा वर्तमान समुन्नत किसी भी पैथी में नहीं है। बहुत से चिकित्सक जो आज आयुर्वेद को अवैज्ञानिक कहते हैं उन्हें आयुर्वेद के अध्ययन करने पर पता चलेगा कि उनका गर्व व्यर्थ है। इस आयुर्वेद के 'भग्नसंधान' काल में भी इससे वे अभी पिछड़े हुये हैं।

किसी जगह एलोपैथिक पद्धति, ऐसी प्राकृतिक चिकित्सा की सरणी अपनी वैज्ञानिक पद्धति में दिखलायेगी? क्या कोई पाश्चात्य चिकित्सक इस की तरफ़ ध्यान देगा? क्या कोई नेचरोपैथ इस तरह की सरणी पेश करेगा?

अतः आयुर्वेद प्राकृतिक चिकित्सा का भण्डार व जन्म-दाता है। आगे चलकर समय मिलने पर आहार विधि व उनका क्रमाभिनिवेश के ऊपर विचार किया जायगा। (अपूर्ण)

क्रमशः

चरकरक्षाङ्क से निद्रा भङ्ग

(ले०—प्रिंसीपल सुरेन्द्र मोहनजी बी० ए०, द० आ० कालेज, लाहौर)

धन्य हैं पं० मस्तराम जी जो चरक रक्षांक के प्रभाव से ६ मास के अनन्तर घोर निद्रा से 'निरुपाधि' जाग उठे हैं। यदि वह चिरंजीवी के पत्र प्रकाशन के शीघ्र पश्चात् अपने भावों को प्रथित कर देते तो, इतना विग्रह न होता। पं० मस्तराम जी ने अपने लेख "सत्यमेव जयते नानृतम्' में कई मिथ्या बातें लिखकर वैद्य जगत् को भ्रांति में डालने का यत्न किया है। उनका प्रतिवाद करना हमारा कर्तव्य है।

विग्रह का आरंभ

इस झगड़े का आरंभ महाशय मस्तरामजी के शिष्य पं० हरिदत्त सम्पादक "अश्विनीकुमार" के लेख 'अनर्थ-पाठ-ध्वान्त-ध्वंसः" से हुआ। यह लेख उक्त पत्रिका के प्रथमांक (नवम्बर ३४) में छपा। उस लेखमें हरिदत्त जी ने लिखा कि चरक अपपाठों से पूर्ण है, उनके गुरु पं० मस्तराम जी ने ऐसे स्थलों की देख रेख की है और जिन पाठों को हरिदत्त जी ने ठीक किया है, गुरु जी ने उनका प्रोत्साहन किया है। हरिदत्त जी के यह वचन ध्यान से पढ़िये:—

"हमने गुरु जी के समीप अध्ययन करते समय वाग्भट्टादि अन्य संहिताओं से सहायता लेकर जिस पाठ की यहाँ कल्पना की है, उसे हम आपकी सेवा में हाज़िर करते हैं। " (अ० कु०, पृष्ठ ८, अंक नवम्बर १९३४)

आर्ष ग्रन्थों में यह व्यक्तिगत कल्पना करना ठीक नहीं। यदि सब विद्वान् २-२, ४-४ श्लोक बदल दें, तो चरकादि ग्रन्थों का कलेवर थोड़े समय में बदल जावेगा।

हरिदत्तजी के उक्त लेख को पढ़ कर होश्यार पुर निवासी किसी चिरंजीवी वैद्य ने इस पर आक्षेप करते हुए एक पत्र प्रकाशित किया और वैद्यों को नवम्बर १९३४ के अन्त में भेज दिया। हमने दो मास उत्तर की प्रतीक्षा करके अनन्तर 'आयुर्वेद संदेश' के १५ फरवरी के अंक में छाप दिया। जिस पर पं० मस्तराम जी ने उत्तर न देकर हमें वकील द्वारा नोटिस भिजवाया और कई प्रकार के प्रस्ताव पत्रादि प्रकाशित कराये यह उल्टा मार्ग था जो महाशयजीने ग्रहण किया। हमने उन सब पत्रों का उत्तर विस्तार से चरक रक्षांक में दिया, जिसे पढ़ कर महाशय जी भड़क उठे हैं और उत्तर देने लगे हैं।

यह है संक्षिप्त इतिहास इस विग्रह का, जो सुधा के पाठकों के लिए देना आवश्यक था।

आक्षेपों का उत्तर

पं० मस्तरामजी ने हम पर कुछ आक्षेप किए हैं, उनका उत्तर नीचे दिया जाता है:—

(१) प्रूफ संशोधन —

मैंने अपने पत्र में लिखा था कि हमें पता

चला है कि प्रूफ़ संशोधनादि के लिये पं० मस्त राम जी वा उनके शिष्य श्री हरिदत्त जी के पास आते थे (चरक रक्षांक पृष्ट २७)—महाशय मस्तराम जी 'सुधा' में लिखते हैं कि यह झूठ है। भगवन्! इस में कुछ सचाई है। मैंने यह बात अपनी ओर से नहीं लिखी। पं० भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कालर से बात चीत करते समय विदित हुआ कि चरक की भूमिका के प्रूफ पं० यादव जी से पं० मस्तराम जी के पास आए थे और संभव है कि विचार वा संशोधन के लिये अन्य प्रूफ भी आये हों। भूमिका के प्रूफ देख कर क्या यह अनुमान नहीं हो सकता? मैंने यह बात पं० यादव जी को लिखी, वह नितान्त चुप रहे। मेरा अनुमान दृढ़ हो गया। क्या भूमिका के प्रूफ पं० मस्तराम जी के पास आये वा न? वह उत्तर दें।

(२) स्वर्णकार से पत्र लिखवाना—

म० मस्तराम जी सुधा पृष्ठ ४ पर लिखते हैं कि चिरंजीवी से पत्र मैंने लिखवाया है। यह सर्वथा मिथ्या है, क्या वह अपनी प्रतिज्ञा को सिद्ध कर सकते हैं? मैंने चरक रक्षांक में पृष्ठ ५८ से ६३ तक इसी आक्षेप का उत्तर दिया है। महाशय जी को प्रतिवाद प्रमाण पूर्वक करना चाहिये, नहीं तो झूठे आक्षेप के लिये वह भी कोर्ट से दण्डनीय हो सकते हैं।

(३) भूल स्वीकार की—

मैंने चरकरक्षांक पृष्ठ २८ पर पं० यादव जी के पत्र से कुछ वाक्य उद्धृत करके सिद्ध किया था कि पं० यादव जी ने अपनी भूल स्वीकार करली है। अब श्री पं० यादव जी अपने वाक्य का अर्थान्तर करके उसका प्रतिवाद करना चाहते हैं। हम इसका सम्पूर्ण उत्तर चरक रक्षांक नं० २ में देंगे।

(४) विश्वासघात क्यों नहीं?

जो सम्पादक चरकादि आर्ष ग्रन्थों को हस्त लेखों के आधार पर ठीक न करके स्वेच्छा से ठीक करता है। वह अवश्यमेव जनता का विश्वासघात करता है और अपने अधिकार का उल्लंघन करता है। मेरा लेख "क्या हम आर्ष ग्रन्थों में पाठपरिवर्तन कर सकते हैं" पुनः पढ़िये।

(५) विकल्प का अर्थ—

सुधा पृष्ठ ४ पर म० मस्तराम जी लिखते हैं कि मुझे 'विकल्प' के अर्थ नहीं आते। संभवतः आप शास्त्री होकर भी इसके अर्थ नहीं जानते। मैंने उसे 'अर्थान्तर' वा 'भेद' के अर्थ में प्रयोग किया है। मैंने अर्थान्तर करके यह भाव प्रकट किया है कि ऋषि वाक्यों के कहीं २ भिन्न २ अर्थ हो सकते हैं, अतः हमें विशेषार्थ निकालने के लिए पाठ नहीं बदलना चाहिए। भिन्न अर्थ करने का प्रयोजन पं० मस्तराम को गुरु बनाना न था। जो अर्थ मैंने किये थे, पं० रामप्रसाद जी ने अपनी भाषा टीका में १९११ ई० में वही किये थे अर्थात् पंखा न हिलाना ताकि रोमहर्ष न हो यदि मैं भूला हूं तो वह भी भूले हैं।

क० अविनाश चन्द्र कृत चरक के अंग्रेज़ी अनुवाद में जो १९०४ में छपा था पृष्ठ १६३२ पर उसी श्लोक के अर्थ देखिये—

Through the energy of poison, intoxication, swoons, langour or stupefaction, and palpitation of the heart set in.

These should be stopped by applying cooling plasters and sprinkling cool water.

The patient should not be fanned, for by fanning horribilation takes place. 42.

अब देखिये ! क्या यह अर्थ भी मैंने चरक के अनुवादक को १९०४ में समझाये थे ? भगवन् ! पूर्व प्रचलित पाठ ही (न वीऽयश्च लोमहर्षः स्यात्) प्रायः लोग मानते थे।

लेख वृद्धि के भय से मैं इसे यहीं छोड़ता हूँ। चरक रत्नांक नं० २ में इस पर पूर्ण विचार होगा।

असली संशोधक कौन है ?

उक्त पाठ को 'वीऽयश्चलोमहर्षास्स्यात्'-इस प्रकार किसने बदला है ? हमें इस पर विचार करना चाहिए।

जैसा कि मैं पहले लिख चुका हूँ, श्री हरिदत्त जी कहते हैं कि इस पाठ की हमने कल्पना की है। पुनः वह जून १९३५ के 'अश्विनीकुमार' में पृष्ठ ३० पर लिखते हैं कि "हमारे शोधित पाठ को ही (पं० यादव जी ने) अपने शोधित संस्करण में स्थान दे दिया"—

इससे स्पष्ट है कि पं० यादव जी ने यह नव पाठ पं० हरिदत्त से लिया और चरक में डाला।

पुनः पं० मस्तराम जी 'सुधा' में पृष्ठ ४ पर लिखते हैं कि पं० यादव जी ने उन को लिखा है कि मैंने स्वयं विचार पूर्वक पं० मस्तराम के सकेतानुसार वाग्भट्ट के आधार पर पाठ ठीक किया है—लीजिये ! अब हम किसको ठीक मानें ? एक श्लोक को ठीक करने के २ या ३ दावेदार हैं, (१) हरिदत्त जी, (२) श्री पं० यादव जी, (३) पं० मस्तराम जी (संकेतकर्त्ता)।

व्यक्तिगत हस्तक्षेप का परिणाम

यह है परिणाम आर्ष ग्रन्थों में व्यक्तिगत हस्तक्षेप का। यदि पं० यादव जी हस्तलिखित ग्रन्थों के आधार पर पाठ ठीक करते, और किसी का संकेत न मानते, तो आज यह विग्रह उपस्थित न होता। पं० मस्तराम के 'संकेत' से विदित होता है कि उन्हों ने यह पाठ अपने शिष्य हरिदत्त से सीखा। क्या वह इस बात को मानते हैं? यदि वह अपने शिष्य से यह पाठ न सीखते, तो वह पं० यादव जी को कैसे संकेत करते ? पं० हरिदत्त ही इस पाठ के असली संशोधक हैं—हमें ऐसा प्रतीत होता है, क्यों कि पं० मस्तराम जी ने वा पं० यादव जी ने हरिदत्त के दावे का खण्डन कहीं नहीं किया। पं० यादव जी का कथन भी माननीय है, परन्तु इस विपर्यास में हम किसको ठीक मानें—यह हमारे लिये कठिन समस्या है। दोनों वा तीनों मान्य व्यक्तियां हैं। उन को परस्पर समझौता करना चाहिए कि असली संशोधक कौन है ?

लाला मस्तराम जी की शेष बातों का उत्तर मैं सुधा के किसी अगले अंक में दूंगा। पहले

इन्फ्ल्यूएन्जा (Influenza)

ले० पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य (संपादक)

यह एक प्रबल बवा के रूप में फैलने वाला जनपदध्वँसी छूतदार रोग है, यह प्रायः १० या २० अथवा ३० वर्ष बाद एक बार विश्व-व्यापी रूप मे फैल कर फिर कहीं कहीं किसी २ प्रदेश में थोड़ा २ फैलता रहता है। यह सन् १६१८ के एप्रिल मास में स्पेन में प्रारम्भ होकर कुछ सप्ताहों में सब महाद्वीपों में फैल गया। भारत में यह पहले बम्बई मे जून मास में प्रकट हुआ फिर सम्पूर्ण देश मे शहरों, कसबों, गाँवों, तक में उग्र रूप से फैल गया जिसमें कि देश में ६०००००० साठ लाख तक मृत्यु संख्या पहुँच कर भारी जनहानि हुई। यह स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों और उनमें भी बलवान् पुरुषों को अकसर होता है।

यद्यपि इस रोग का किसी विशेष देश, जल-वायु अथवा भूमि के साथ विशेष सम्बन्ध नहीं है, तो भी यह गर्मियों की अपेक्षा सर्दियों में अधिक होता है। इसी प्रकार नीचे के सीलवाले स्थान में बहुत आदमियों के इकट्ठा मिल कर रहने मे, जिस मकान में खिड़कियाँ दरवाज़े वगैरा बन्द कर लिये गये हों यह रोग होता है।

रोगोत्पत्ति प्रकार—

यह रोग प्रायः वायु द्वारा फैलता है। इस

वह जनता को यह निर्णय पूर्वक बतावें कि पाठ का असली संशोधक कौन है और सिद्ध करें कि किन वैद्यों ने उन के प्रति चिरंजीवी में पत्र लिखवाये ?

'न वीज्यश्च लोमहर्षः स्यात्' इति पा०।

चरक के नवीन संस्करण के पृष्ठ ५७३ पर उक्त नोट नीचे टिप्पणी में मिलता है। इसका तात्पर्य है कि यह पाठान्तर 'वीज्यश्चा लोमहर्षा-त्स्यात्' (दो के मूल पाठ पृष्ठ ५७३ पर) का है, अर्थात् ये दोनों पाठ हस्त लेखों में मिलते हैं, परन्तु पं० यादव जी वा हरिदत्त जी कहते हैं, कि हमने उसे ठीक किया है। यदि ऐसा है, तो श्री यादव जी को 'पाठान्तर' न लिख कर 'मया शोधितमिति' कुछ ऐसा संकेत करना चाहिये था क्योंकि उन तीनों महोदयों के किसी लेख मे यह स्पष्ट नहीं होता कि संशोधित पाठ किसी हस्त लिखित ग्रन्थ में मिलता है। यदि मिलता है, तो फिर संशोधन वा कल्पना का क्या अर्थ ?

क्या यह आर्ष ग्रन्थ पुरातन है ?

उक्त शीर्षक देकर क० शशिकान्त मिश्र ने एक लेख 'सुधा' में संक्षेपरूप लिखा है, उसका उत्तर भी हम अगले अंक में देंगे। तदर्थ कुछ विस्तार की आवश्यकता है।

का विष रोगी की नासिका, गला तथा श्वास मार्ग से निकले श्लेष्म में अर्थात् सिनक, थूक, बलगम वगैरा में पाया जाता है, इसी लिये रोगी के खांसते समय छींकते समय तथा बात चीत करते समय और मनुष्यों को हो जाता है।

लक्षण—

विष के प्रविष्ट होते ही रोगी को ज्वर आता है, आलस्य, हड़फूटन; आरम्भ में जुकाम, खांसी शरीर में दर्द, श्वास नलियों तथा फुप्फुस प्रदाह (न्युमोनिया) हो जाता है। हाथ, पैरों, पीठ, में विशेष दर्द होता है। कभी २ आमाशयिक प्रदाह के कारण वमन और अतिसार हो जाते हैं। मस्तिष्कपर विष का असर होने के कारण रोगी बहकी २ बातें करता है। सिरदर्द, नाक बहना, कभी नकसीर छूटना तालु और मुहमें दर्द होना, कभी २ हलककी सोज़िशके कारण आवाज भारी हो जाती है। थूक निगलने में भी दर्द होता है। भूख कम और प्यास अधिक लगती है, कभी २ नाक और गले की सोजिश की वृद्धि के कारण यह रोग और भी भयंकर हो जाता है। रोगी अत्यन्त कमजोर और निढाल होता जाता है। एक बार इस रोग के उत्पन्न होने के बाद मनुष्य में इस रोग के प्रति क्षमता पैदा नहीं होती बल्कि दुबारा फिर रोगी होने का डर रहता है।

रोग से बचने के उपाय—

इस रोगसे बचनेका कोई उपाय अत्यन्त शीघ्रही नहीं हो सकता। क्योंकि इस रोग की उत्पत्ति एक दम होने से दूसरे प्रारम्भ में ही संक्रामक होने के कारण इसका शीघ्र ही पता भी नहीं लगता। इसलिये इसके जनपद व्यापी होने के समय किसी मनुष्य को जुकाम, खांसी ज्वर इत्यादि पूर्वोक्त लक्षणों के उत्पन्न होने पर अलग खुले स्वच्छ वायु वाले कमरे में रखना चाहिये। और रोगी को खांसी से छींकते बोलते समय अपने मुंह के सामने रूमाल रख लेना उचित है। इस बीमारीकी बलगमको एक निष्कीटित (शुद्ध) पात्र में लेकर जला देना चाहिये। और बलगम से सने हुये कपड़ों को किसी भी जीवाणु नाशक घोल में उबाल कर शुद्ध कर लेना चाहिये।

इस बीमारी के समय लोगों को अपने नाक और मुख को मृदु कीटाणु नाशक द्रव्य जैसे पोटाशियम परमैंगनेट १ रत्ती, जल १ बोतल बनाकर धीरे २ श्वांस द्वारा खींच कर शुद्ध कर लेना चाहिये।

इसी प्रकार कोई २ चिकित्सक ६ माशे सेंधा नमक १० छटांक पानी में घोलकर नासिका और गले को साफ करना इसी प्रकार यूक्लेप्टिस औइल की १० बून्दे तौलिये या रूमाल वगैरा पर डाल कर सूंघना भी अत्यन्त लाभदायक बताते हैं।

वमन रोग पर

करंजुवे की गिरी को भूनकर टुकड़े २ करके थोड़ा २ बार २ खाने से असाध्य वमन का भी नाश होता है और विशेष कर मलेरिया ज्वर में अत्यन्त लाभकारी है।

दूसरा प्रयोग

पीपल की सूखी २ बकली लेकर जला कर जब उनके धूम-रहित अँगारे हो जावें तब पाव-भर के क़रीब सरभर जल में उनको बुझा कर ठंडा कर छानकर थोड़ा-थोड़ा जल मे पिलाने से उल्टी और प्यास उबकाई अवश्य ही शान्त होती है बहुत बार का अनुभूत है।

अनङ्ग मेखला मोदक

अफ़ीम ४ तोले लेकर आठ सेर गौ के दूध में औटा कर खोवा कर लें फिर ६४ तोले मिश्री की चासनी करके उसमें जायफल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, जावित्री, लौंग, त्रिकुटा, अकरकरा, अजमोद, पतंग लकड़ी, कंकोलमिर्च चन्दन, जाफ़रान प्रत्येक २—२ तोले। इनका चूर्ण करके इन दवाइयों को और पहले खोये को जो कि थोड़े घी में भून लिया गया हो लेकर दोनों को उपरोक्त चासनी में मिला दो फिर इसमें कस्तूरी, कपूर २—२ माशे मिलाकर और बादाम, पिस्ता इत्यादि इच्छानुसार मेवायें डालकर १—१ तोले के मोदक बनाकर सुबह शाम दूध मे लेवें। ये मोदक अत्यन्त कामोद्दीपक, वीर्यस्तम्भक, बलवर्धक, पाण्डु, कामला, खाँसी, क्षय, शूल, प्रमेह नाशक और अग्नि सँदीपक हैं।

बाल उड़ाने की टिकियां

बेरियम सल्फाइड—१६ भाग,

जिंक औक्साइड—४० भाग,

सफ़ेद वैसलीन—१२ भाग,

विधि—जिंक औक्साइड को खूब सुर्मे की मानिन्द पीस लें उसमें मोटा टुकड़ा बाक़ी न रहे फिर बैरियम सल्फाइड सूखा ही खूब अच्छी तरह से मिला कर हिला दें फिर वैसलीन मिला कर एक जान करलें फिर तोल २ कर साँचे में ढाल कर टिकियां बना लें।

लागत—बेरियम सल्फाइड १६ औंस १)
जिंक औक्साइड ४० ,, १॥-)
सफ़ेद वैसलीन १२ ,, ॥-)

इस तरह कुल ३।=) लागत आयेगी १३५ टिकियां सवा २ तोले की तैयार होंगी जोकि कम से कम)॥ टिकिया खूब अच्छी तरह बेचकर

नोट—हर प्रकार के पौष्टिक व वीर्यवर्धक पाकों के लिये हमारी 'पाक मंजरी' नामक पुस्तक मुफ्त मंगाकर देखें।

काफ़ी फ़ायदा उठाया जा सकता है।

सब प्रकार की बवासीर के लिये

शुद्ध गूगल, लहसुन, निबौली, भुना हुआ हींग, सौंठ इनको सम मात्रा में लेकर पानी मे पीस गोलियां बनालें इसकी एक मांष मात्रा पानी के साथ लेवें उससे शीघ्र बवासीर दूर होती है।

दूसरा प्रयोग

सेंधा नमक, चीते की जड़ की छाल का चूर्ण, इन्द्र जौ, करंजुवे की गिरी, बकायन की गिरी, इनको बराबर भाग में लेकर चूर्ण करले इसकी ३, ३ मांष की मात्रा गौ की छाछ के साथ लेने से बवासीर सात दिन में ही नष्ट हो जाती है। इसमें सात दिन तक छाछ ही लेनी चाहिए और कुछ सेवन न करें।

पथरी के लिये

कचरे की जड़ को बासी जल में पीस कर तीन दिन तक पीने से पथरी एक दम निकल जाती है।

गर्भस्तम्भन रोग

कुम्हार की कमा कर तैयार की हुई मिट्टी ३-३ मांष सुबह शाम बकरी के कच्चे दूध ऽ॥ आधसेर में ६-६ मांष असली मधु मिला कर पिलाने से गिरते हुवे गर्भ को रोक देती है।

स्मरणशक्ति व दिमागी कमज़ोरी के लिये

गिलोय, अपामार्ग (चिरचिटा), बायविडँग, शंखपुष्पी, वच, हरड़ का बक्कल, सौंठ, शतावर इन सब को सम मात्रा में चूर्ण करें इसमें से ६ मांष लेकर घृत मिला कर चाटने मे ३ दिन में ही स्मरण शक्ति बहुत तीव्र हो जाती है। और भूलजाने की बीमारी जाती रहती है इसको सेवन करते हुए ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य करना चाहिये।

योनिसँकोचक

नीलोफ़र, धाय के फूल, पीली हड़ का बक्कल, फिटकरी की खील, माजूफल, हाउबेर, लोध, अनारकी छाल इनको बराबर भागमें लेकर कपड़ छन कर जल में पीस कर वती पर लेप कर धारण करने से योनि की शिथिलता जाती रहती है।

पेशाब बन्द होने पर

कपूर को पानी के साथ पीसकर कपड़े या रुई पर लगा बत्ती बना कर लिंगेन्द्रिय के छिद्र में रखनें से रुका हुआ पेशाब तुरन्त हो आ जाता है।—

स्त्रियों के रक्तप्रदर के लिये

सफेद चन्दन का बुरादा, खस पतंग मुलैठी, नीलोफर, खीरे और ककड़ी के बीज, धाय के फूल, बेरकी गिरी, बड़ की नयी २ कोंपल, पठ- मोक, कमल केसर, लोध पठानी, रसौत, मोचरस इनका चूर्ण करके रखलें शहद ३ मांष चावलों का पानी २॥ तो० दोनों को मिला कर चूर्ण की ३ मांष की फँकी लगा कर ऊपर से इस जल को पीलें। भोजन में केला, चौलाई, भिस (कमल ककड़ी) परवल घीया का शाक भोजन के साथ लेवें।

मुक्ताज्वर (मोतीझाला)

लाल चन्दन, खस, धनियां, नेत्रवाला, पित्त पापड़ा, नागर मोथा, सोंठ इन को तीन २ माषे लेकर ज़रा दरदरा करके पावभर जल में उबाल कर १ छटांक शेष रहने पर उतार लें फिर २-२ माषे खमीरा मोती दिन में ३ बार चटा कर उपरोक्त काढ़े को तीन बार पिला दिया करें, इससे ज्वर, बेचैनी, तथा पेट का अफ़ारा इत्यादि उपद्रव दूर होकर दाने आसानी से निकल आते हैं।

शीतला (माता) के निकलने के प्रारम्भ में

इमली के पत्ते और हल्दी, इनको १॥-१॥ माषे लेकर आधी छटांक जल में पीस कर थोड़ा २ दिन में तीन बार पिलाने से माता (चेचक) निकलने का डर नहीं रहता, यदि निकल भी आवे तो भी प्रारम्भ में इस नुसखे को देना चाहिए।

शीतपित्त पर

गिलोय, हल्दी, नीम की छाल, धमासा इन को एक २ तोले लेकर आधसेर जल का आधपाव रहने पर उसमें शर्बत उन्नाब २ तोले डाल कर पीने से शीतपित्त शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

पथरी पर

आक के फूल ३ माषे गौ के कच्चे ऽ॥ ताज़े दूध में पीस कर प्रातः काल पीने से अश्मरी (पथरी) का शीघ्र नाश हो जाता है।

गर्भधारक योग

५ तोले असगन्ध गौ-दूध ऽ॥ जल २ सेर पकावें २ दूध शेष रहने पर उसे छान लें फिर १ तो० घृत मिलाकर ऋतुस्नान के पश्चात् प्रातः काल स्त्री को पिलावे तो गर्भ धारण होता है।

स्वादिष्ट व अग्निदीपक गोलियां

शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, सोंठ, सेंधा नमक, जवाखार सबको बराबर मात्रा में ले कर नीबू के अर्क की तीन भावनायें देकर चने बराबर गोलियां बना कर सेवन करें।

विचित्र वार्तायें

एक मनुष्य के पेट में पांच सौ चीज़ें—

आमतौर पर दिमाग़ी बीमारियों वाले मरीज़ों की यह आदत होती है कि वे चमचे-पेन्सिलें और कीलें वग़ैरा निगल लेते हैं। इन्हीं दिनों विलायत के एक रिसाले ब्रिटिश मैडिकल जनरल डाक्टर आरस्टैटो कनैडी ने एक मरीज़ का अजीब व गरीब हाल दर्ज किया है। उसकी यह आदत थी कि जो चीज़ उसके हाथ आती निगल लेता, इस आदमी की उम्र ३२ साल की थी, खेती बाड़ी करता था। शादी अभी हुई न थी पिछले चार साल से वह कुछ सुस्त सा रहने लगा, काम में उसका जी न लगता था। दो साल हुये उसे यह शिकायत हो गई कि हर रोज़ खाने के बाद मिचली होने लगती उसे हर वक़्त प्यास लगी रहती अक्सर वह कभी कभी सिर्का पी जाया करता, उसे खास चाय जिसे हैन्डेलीन टी कहते हैं बहुत पसन्द थी, जिस समय उसे अस्पताल में दाख़िल किया गया तो उसकी माँ और बहन ने बयान किया कि घर में आये दिन छुरियां काटने और दूसरी किस्म की चीज़ें गुम हो जाया करती थीं हमें हमेशा यह शुबा होता था कि यह उनको निगल लेता है। मगर यह हमेशा इनकार कर देता रहा। पहले पहल जब डाक्टर ने इसका मुआयना किया तो इसके दिल में यह बात बैठी हुई थी कि उसे किसी थाने में लाया गया है। और डाक्टर ज़मीन का मालिक है। बहुत मुश्किल के बाद उसे यकीन दिलाया गया कि तुम बीमार हो और यहां अस्पताल में तुम्हारा इलाज होगा, फिर डाक्टर ने इससे पूछा कि तुम छुरियां चमचे वग़ैरा निगल लिया करते हो क्या? इसका उसने कुछ जवाब नहीं दिया। आख़ीर जब डाक्टर ने एक्सरेज़ के ज़रिये इसके पेट का मुआयना किया तो पेट के अन्दर एक गोला सा नज़र आया जिसमें से शुआयें (किरणें) गुज़र नहीं सकतीं थीं। इस गोले को पेट में से निकालने के लिये कोशिश की गई तो मालूम हुआ कि यह गोला नहीं है बल्कि बीसों मुख़्तलिफ़ चीज़ों का मजमुआ है जिसने गोले की शकल अख़्तयार करली है, इन चीज़ों को पेट में से निकालना बेहद मुश्किल काम था। चुनांचे मरीज़ जिन्दा न बच सका, उसके पेट में से जो चीज़ें निकलीं इनको लन्दन के रायल कालिज ऑफ़सर्जन्स में नुमायश के लिये रक्खा गया है।

जिनकी फ़हरिस्त यह है—२१८ पेच और ५ कीलें जिनमें से बहुत सी चार चार इंच की हैं, ३६ कुलाबे, जिनमें से बहुत से १॥ इंच साइज़ के हैं, पाँच चाय पीने के चमचे जिनमें से तीन टूटे हुए हैं, एक अण्डे खाने का चमचा, ८ दस्ते चमचों के ३ कांटे हर एक के दो २ टुकड़े हैं ३ जेबी चाकू हैं एक बटन हुक ३५० ग्राफ़ फ़ोन की सुईयां एक दर्वाज़े की चाबी, और दो बक्स की चाबी, ४५ सुईयां और सेफ्टी-पिन्स और बाहर धात के बकलसे चन्द अंगूठियां एक शिलिंग और ६ तांबे के सिक्के एक नल की हत्थी, पीतल की एक कारआमद कारतूस रिवालवर का, और एक उस्तरा और मुख़्तलिफ़

चीजें इस फ़हरिश्त के अलावा हैं इन चीजों की कुल तादाद पांच सौ है और वज़न साढ़े तीन ३॥ पौण्ड है यह वाक़ा नहीं है बल्कि इससे पहले भी कई मरीज़ोंके पेट से मुख्तलिफ़ चीजें निकाली गई हैं एक शख्स के पेट से दो हज़ार पांच सौ तेतीस चीजें निकाली गईं मैलोज़ नामी एक डाक्टर ने १९१३ में एक औरत के पेट से ११४९ हेयर पिन्स और कीलें वगैरा निकालीं। १९१७ में दोबारा इसी औरत के पेट से ६२१ चीजें और निकलीं। इस औरत पर औपरेशन निहायत कामयाब रहा और वह ज़िन्दा बच रही।

वह औरत जिसके दिलसे रोशनी निकलती है

शहर पीरानू की एक औरत एना मीरे जो जब सो रही हो तो उसके जिस्म से रोशनी पैदा होती है वीनस के डाक्टर जी० प्रोटी ने हाल ही में इसका तिब्बी मुआयना किया है। और अपनी रिपोर्ट में इन सब बातों की तसदीक की है कि जो इस औरत के रिश्तेदारों और पड़ोसियों से सुनी गई हैं। यह रोशनी हमेशा दिल की जगह से निकलती है। यह बात प्रसिद्ध है कि हिंदू धर्म के शास्त्रों के मुताबिक जीवात्मा जो एक परमाणु के बराबर होता है इस के रहने की जगह दिल ही है।

रोशनी हरारत और बू से खाली है

इस रोशनी का रंग कभी सब्ज़ व कभी सुर्ख होता है और अमूमन बदलता रहता है आमतौर पर यह रोशनी रात के पहले हिस्से में निकलती है। जबकि एना (औरत) बड़ी गहरी नींद में सोई हुई होती है, दिन के वक्त यह रोशनी कभी नज़र नहीं आती। यह रोशनी तीन चार सैकिंड से ज्यादा नहीं रहती, और जब खतम होजाती है तो अपने पीछे किसी क़िस्म की बू, हरारत और रंग नहीं छोड़ जाती, यह लुत्फ़ की बात है कि डाक्टरों की राय के मुताबिक एना (औरत) हर वक्त नारमल है, और इसे रोशनी का कोई एहसास नहीं होता।

दमे की बीमारी

एना (औरत) को दमे की बीमारी है, और इस के खून में हल्का सा दबाव पाया जाता है, वह एक गरीब औरत है,और मामूली खूराक खाती है, लैन्ट के त्यौहार के मौके पर वह बरत रखती है, और सिर्फ दूध तथा गोश्त की तरी पीती है। इस मौसिम में जब इसने व्रत रक्खा होता है तो अक्सर इसके शरीरसे रोशनी होती है, और खास तौर पर होली वीक के दौरान में जब वह कोई चीज़ नहीं खाती, और सख्त व्रत रखती है, तो ज्यादा बार रोशनी दिखाई देती है, इस हफ्ते के दौरान में एक रात में २५ बार यह जारी हुई, इस रोशनी का निकलना हिन्दुओं के लिये खासतौर पर दिलचस्पी का कारण है। और किसी हद तक इस बयान की तसदीक करती है, कि योगाभ्यास से एक आदमी के शरीर में एक ज्योती पैदा होजाती है जिसे दूसरे लोग भी देख सकते हैं। मुमकिन है यह करश्मा कुदरत का ही हो एक दिन साइन्स वेत्ता इस की असलियत को मालूम करने के काबिल हो सकें।

प्रिया मनमोहिनी गुटिका

इसका नाम ही इसके गुणों को प्रकट करने के लिये काफी है, विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं इसलिये यदि आप अपनी प्रिया को अपने ऊपर मुग्ध करना चाहते हैं, तो अवश्य ही इन गोलियों को मंगाकर इनका चमत्कार देखिये आपका हृदय समुद्र की तरह लहर मारने लगेगा आप मस्त होजायेंगे मूल्य ८ गोली शीशी १), ३ शीशी २॥) डाक व्यय पृथक।

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तैयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ करने के लिये सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिये केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि इसकी मालिश से लिङ्गेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता, छोटापन, टेढ़ापन व पतलापन दूर होकर, इन्द्रिय में दृढ़ता, स्थूलता, और दीर्घता आ जाती है, जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वंचित (महरूम) हुवे अनेक पुरुषों ने इससे आशातीत लाभ प्राप्त करके इस दिव्यौषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०) ३ माशे की शीशी २॥)

श्रीकामदेव रसायनकी सुनहरी गोलियां

ये गोलियां अत्यन्त पौष्टिक और स्नायविक दुर्बलता तथा बाल्यावस्था में किये गये अनुचित कार्यों से, अथवा युवावस्था में की गई असावधानियों से उत्पन्न हुई नपुंसकता को दूर करने में जादू का असर रखती हैं। इनके थोड़े ही दिन के सेवन से शक्ति अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त हो जाती है, भूख खूब लगती है जो भोजन खाया जाता है उसका आहार रस बना कर शरीर को मोटा, ताज़ा, सुन्दर सुडौल, और ताकतवर बना देती है। मुख सुन्दर, तेजस्वी हो जाता है, और खास कर दिमागी काम करने वालों के लिये ये गोलियां निहायत अक्सीर हैं, हर मौसिम में इस्तेमाल की जा सकती हैं। कीमत ४८ गोलियों की शीशी २) दो रुपया। तीन शीशियों के ५) डाक व्यय पृथक।

नस ढीली की पोटलियाँ

(नामर्दी की अजीब दवा)

जिन पुरुषों ने हस्त मैथुन, प्रकृति विरुद्ध मैथुन, अकाल मैथुन, और अति मैथुन से लिङ्गेन्द्रिय को बेकार कर लिया है, उन मनुष्यों को इन पोटलियों की एक हफ्ते तक सेक करने से लिङ्ग में कैसा ही ढीलापन और सुस्ती व कमजोरी हो निहायत ताक़त आजाती है। बूढ़े को मानिन्द जवान के कर देती हैं। मूल्य १४ पोटलियों की जो एक सप्ताह के लिये काफी हैं सिर्फ ३) है। डाक व्यय आदि पृथक।

आनन्द वर्धक तैल

यह एक अद्भुत तैल बड़ी बड़ी क़ीमती दवाओं के मिश्रण से खास तौर पर बनाया जाता है। इसको अपनी प्रिया से आलिंगन करने के ५-७ मिनट पहिले लिङ्गेन्द्रिय पर लगाया जाता है जिससे बिल्कुल बेकार मुर्दा लिंगेन्द्रिय में भी चैतन्यता (तेज़ी) और दृढ़ता आजाती है। और परस्पर में इतना प्रेम होजाता है कि जिस को बयान नहीं किया जासकता: बस इसके सेवन से ही इसकी खूबियां मालूम हो सकती हैं। यह चीज़ बड़े २ रईसों राजाओं के सेवन करने योग्य है। प्रति शी० ५)

कृच्छ्र नाशक

(रजिस्टर्ड)

(सूज़ाक व क़ुरहा का अचूक इलाज)

रजस्वला स्त्री के साथ विषय करनेसे, गर्म चीज़ों के इस्तेमाल से, अथवा चूने की तपी हुई छत पर गरमी में पेशाब करने से, और धूप में अधिक देर तक काम करने से, अक्सर यह रोग हो जाता है। जिससे लिङ्गेन्द्रिय के मुख पर वरम हो जाता है, पेशाब में जलन, खून और पीप का आना शुरू हो जाता है। फिर धीरे २ उसमें क़ुरहा पड़ जाता है। हमारा कृच्छ्र नाशक इन सब दर्दनाक हालतों को एक सप्ताह ही में पूर्णतया आराम कर देता है। चीस, चबक, जलन तो २४ घण्टे में ही जाती रहती है मूल्य फ़ी शीशी १।) तीन शीशी एक बार लेने पर ३) डाक व्यय पृथक।

प्रमेह नाशक वटी

प्रमेह (जरियान) २० प्रकार का होता है, जिसमें सब से भयंकर मधुमेह है, इस रोग में पेशाब में शक्कर मिलकर आती है, इसलिये पेशाब में चीटियां लगने लगती हैं, प्यास ज्यादा लगती है। कमज़ोरी दिनों दिन बढ़ती जाती है। हमारे यहां इस बीमारी के लिये खास तौर पर गोलियां तैयार की जाती हैं कुछ दिनों के सेवन करने से पेशाब में शक्कर आना बन्द हो जाता है और गई शक्ति फिर आ जाती है।

मूल्य ४८ गोलियों का ४)।

वृहत् समीर पन्नग वटी रसायन

(रजिस्टर्ड)

इस के सेवन से एड़ी से चोटी तक के सर्व प्रकार के शारीरिक दर्द चाहे यह वातपित्तादि किसी भी दोष व किसी कारण से कैसा ही सख्त क्यों न हो उसे दूर करनेमें बिजली की भांति असर दिखाती है। दर्द से बेचैन मनुष्य तुरन्त हँसने लगता है। इसके अतिरिक्त यह गोलियां माहवारी को साफ़ लाने व गलों के दर्द में अपना तुरन्त असर दिखाती हैं। मूल्य ३२ गोलियों की एक शीशी का १) डाक व्यय पृथक।

कुच कठिन

स्त्रियों की कुचाओं का सुडौल व संगठित रहना भी सौन्दर्य वृद्धि का एक प्रधान साधन है। जब ये किसी रोग या आलिंगनादि के दुरुपयोग से अथवा दुर्बलता के कारण समय से पूर्व ही ढलक जाती हैं, अर्थात् यौवनावस्था में ही वृद्धा का सा रूप बना देती हैं, ऐसी अवस्था में हमारी यह औषधि लेप मात्र से ही स्तनों के पट्ठों को संकुचित दृढ़ और सुडौल बनाकर उन्हें सुन्दराकार बनाती है। मू० १)

योनि संकोचक

श्वेत प्रदर, अति मैथुन व अति सन्तानोत्पत्ति या अन्य किसी रोग के कारण योनि ढीली या शिथिल पड़ गई हो, जिससे कि रति (भोग) समय में आनन्द न आने के कारण स्त्री पुरुष में परस्पर प्रेम की मात्रा भी कम हो जाती है। ऐसे समय में इस दवा के लगाने मात्र से ही योनि की दुर्गन्धि व प्रदरादि रोग दूर होकर स्वाभाविक अवस्था जैसी दृढ़ व संकुचित हो जाती है, जिस से कि दम्पति में पहले से भी अधिक प्रेम उत्पन्न होकर आनन्द और सुख से जीवन व्यतीत होने लगता है। मूल्य १) रु०

च्यवनप्राश रसायन

अस्य प्रयोगा च्यवनः सुवृद्धोऽभूत्पुनर्युवा ॥

यह परमौषध च्यवनप्राश नाम से इस लिये प्रसिद्ध है कि च्यवन ऋषि ने इस के प्रसाद से तरुणत्व प्राप्त किया था। वीर्य वर्धक औषधियों में इसके समान दूसरी औषध नहीं है। यह रसायन, स्त्री, पुरुष दोनों के रज वीर्य को शुद्ध करके सुन्दर और बलवान् पैदा करने योग्य बना देती है। यह दवा निर्बल पुरुषों स्त्रियों, बालकों एवं वृद्धों के लिये अत्यन्त शक्तिवर्धक सुखदायक एवं स्वादिष्ट मधुर पदार्थ है। इसको दूध के साथ सेवन करनेसे क्षय, क्षीणता, यक्ष्मा, उरःक्षत खांसी, गले का बैठना, दमा, हृदय रोग, रक्तपित्त अम्लपित्त, प्यास, वमन पाण्डु पुराने दस्तों का रोग, मूत्र दोष, वीर्य दोष, वातरक्त दिमाग की कमज़ोरी, पुरुषत्व हानि, आदि अनेक बीमारियां नष्ट होती हैं। हमारी सहस्रों रोगियों पर आज़माई हुई शास्त्रीय दवा है। मूल्य प्रति सेर ४) रुपया।

कामिनी मान मर्दन

यह एक अत्यन्त रुकावट करने वाली, उत्तेजक, अपूर्व शक्तिवर्धक एक खास चीज़ है, जिस के चमत्कारिक गुणों का वर्णन करने की सभ्यता आज्ञा नहीं देती। बस इसी लिये पत्र व्यवहार से ही इसकी अजीब गुणों को मालूम करें। मूल्य १ मात्रा १) रु०।

जीवन-सुधा

राजवैद्य श्री पं० महावीरप्रसाद जी रसायन-शास्त्री

अध्यक्ष—

जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—

प्रोफ़ेसर पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क ≡)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख़ को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ≈), सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ़्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ़्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वैदिक, यूनानी, एलोपैथिक, होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वग़ैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख़ तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्ता

[illegible] प्रेस, कत्रा घासीराम [illegible]

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री प० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ५ } मार्गशीर्ष, वीरनिर्वाण सं० २४७६, वि० सं० १९९२, नवम्बर-दिसम्बर १९३५ } २१.२१

सद्वैद्य

(ले०— श्री० यो० च० शुक्ल)

शुभ भैषज हो जेहि के कछु पास,
सुदीनन त्रास विनास करै जो।
बुधि वैभव खान सुधीर जवान
ज्वरादि कृपान दयाकर खान जो।
गुणवान् सुशील सुधाकर ज्ञान,
निदान उपक्रम आदि निधान जो।
गतमोह धनादिक लोभ विहीन,
सुवैद्य सराह 'योगि' समाज सो।

१ पीयूष पाणि।

'जुकाम, प्रतिश्याय, CATARRH सर्दी'

(ले०—द्विवेदी दयाशंकर शर्म्मा वैद्यरत्न, नोखा-शाहाबाद, बिहार)

पाठक ! और बहुत से आवश्यकीय "विषयों" के रहते हुए भी हमें इस विषय विशेष "प्रतिश्याय" पर अपना तुच्छ विचार प्रकट करने की आवश्यकता क्यों हुई ? यह प्रश्न विचारणीय है । अतः इस प्रश्न का उत्तर इस विषय पर कुछ लिखने के पहले दे देना आवश्यक प्रतीत हो रहा है ।

कलकत्ते से प्रकाशित होनेवाले प्रसिद्ध मासिक पत्र 'विश्वमित्र' के दिसम्बर सन् १९३४ के अंक में—इस पत्र के श्रद्धेय सम्पादक महोदय ने एक नोट इस आशय का प्रकाशित किया है कि—'यूरोपीय वैज्ञानिक' चिकित्सकों ने एक स्वर से स्पष्ट रूपेण घोषित कर दिया कि अब तक 'प्रतिश्याय' (जुकाम) की अनुभूत-औषधि, तथा चिकित्सा-पद्धति का सफल आविष्कार नहीं किया जा सका, न निकट भविष्य में इसकी सफल चिकित्सा-पद्धति तथा अनुभूत औषधि के आविष्कार की आशा ही है ।' अतः तभी से मैं इस विषय विशेष 'प्रतिश्याय' पर अपनी कुछ जानकारी हिन्दी संसार के पाठकों के सम्मुख उपस्थित करने का विचार कर रहा था, वह भी इसलिये कि शायद हिन्दी संसार के पाठक सचमुच अपने मन में गलत (Wrong) धारणा न बना लें कि प्रतिश्याय ऐसा भयंकर कष्ट साध्य तथा अचिकित्स्य महा व्याधि है, जिसकी अनुभूत औषधि तथा चिकित्सा-पद्धति का आज तक आविष्कार ही नहीं हो सका । पाठक ! आप पूर्ण विश्वास रखें पश्चिमीय एलोपैथी चिकित्सकों के लिये 'जुकाम' भले ही अन-क्यूर-एबल (Un-cure-able) डिजीज रहे, परन्तु भारतीय आयुर्वेदीय-पैथी चिकित्सकों के लिये यह मर्ज अचिकित्स्य नहीं है ।

प्रतिश्याय, जुकाम तथा सर्दी—जिसे बोलचाल की घरेलू भाषा में "नाक बहना" कहा जाता है, एक घर-घर (सर्व) व्यापी रोग विशेष है । संसार के प्रायः सभी देश तथा सभी सभ्य-असभ्य जातियों के अधिकांश व्यक्तियों को प्रतिदिन इस (जुकाम) से काम पड़ा ही रहता है । तात्पर्य यह कि सभी लोग इस रोग विशेषसे न्यूनाधिक रूपेण परिचित अवश्य हैं । मैं अपने अनुभव के बल पर यह निःसंकोच कह सकता हूँ कि संसार में कोई शायद ही ऐसा बिरला भाग्यवान् धनी, गरीब, शिक्षित-अशिक्षित, आबाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष होगा जिसे इस रोग विशेष के दर्शन तथा परिचय का सौभाग्य न प्राप्त हुआ हो ।

भारत वर्ष में तो आज कल ऐसे लोग (इस रोग विशेष के रोगी) प्रायः प्रान्त के नगर-नगर, ग्राम-ग्राम, गली-गली, वरन् घर-घर मिलेंगे। निष्कर्ष की आजकल अधिकांश लोगों को नित्य-प्रति जुकाम हुआ ही रहता है। इतना ही नहीं, सचमुच आजकल की साधारण जनता, जुकाम को साधारण रोग समझ इसकी चिकित्सा की उपेक्षा कर, नाना प्रकार के कष्ट-साध्य व्याधियों के शिकार बन असमय में ही काल कवलित हो जाने का सौभाग्य प्राप्त कर रही है। अतः मैं आज अपने इस तुच्छ निबन्ध द्वारा सर्व-साधारण को यह समझाने का प्रयत्न कर रहा हूँ कि यह साधारण सा रोग इतना विकराल रूप क्यों धारण कर लेता है? लोग इससे आक्रान्त होते ही इतर कठिन उपसर्गज महा व्याधियों के शिकार क्यों होते हैं? अच्छा होता कि कोई अन्य वैद्य महोदय जो इस विषय के विशेषज्ञ हों, इस विषय विशेष "प्रतिश्याय" पर विशेष रूपेण अपनी लेखनी उठा एक सर्व तो भावेन परिपूर्ण निबन्ध लिख, कलकत्ते से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र 'विश्वमित्र' में छपाने की कृपा कर विश्वमित्र के पाठकों का भ्रम दूर कर देते।

आजकल की साधारण जनता, जुकाम होते ही (जुकाम प्रारम्भिक अवस्था में ही) क्षणिक लाभ की आशा में पड़, बिना किसी प्रकार का सोच-विचार किये, जुकाम से त्राण पाने के निमित्त गरम पदार्थों (चाय, गुड़, घी आदि मांस, प्रभृति) का सेवन प्रारम्भ कर देते है। जिसका फल यह होता है कि जुकाम का बहना बन्द हो जाता है। जुकाम का बहना बन्द होते ही (कफ के शुष्क होने से) श्वास-नलिका में खराबी आ श्वास-प्रश्वास की क्रिया में बाधा उत्पन्न हो जाती है, श्वास लेने में कष्ट होने लगता है, नाक के नथने कफ के सूख जाने से बन्द हो जाते हैं, जिससे नाक के बजाय मुँह से श्वास लेना पड़ जाता है। शिर तथा सारे शरीर में दर्द शुरू हो जाता है। गले में कई चीज सटी हुई मालूम होती है, जिससे सदा एक प्रकार की बेचैनी मालूम होती रहती है। इन सब व्यतिक्रमों का काम यह होता है कि जुकाम बिगड़-कर शुष्क कास का रूप धारण कर लेता है जो क्रमशः क्षय रूप में परिवर्तित हो जाता है।

इसी लिये तो आचार्य आत्रेय ने भी "एक रोग की उपेक्षा अन्यान्य भयंकर रोगों का कारण बन जाती है" इसके प्रसंग में निम्न लिखित श्लोक लिखते हुए इसी प्रतिश्याय की ओर विशेष रूपेण संकेत किया है। यथा:—

> प्रतिश्यायाद्यथो कासः [illegible]सात संजायते क्षयः।
> क्षयो रोगस्य हेतुत्वे, शोषश्चाप्युप जायते॥

परम ब्रह्म परमेश्वर की अद्भुत स्वभाविक शक्ति, जीव तथा प्रकृति (आकाश, पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि अर्थात् पंच महाभूत) के संयोग से जिस समय अलभ्य मानव शरीर की रचना करती है, उसी समय उसमें आयुर्वेद के सिद्धान्तानुसार वात (रजोगुण) पित्त (सतोगुण) और कफ (तमोगुण) ये तीन दोष (गुण) भी उत्पन्न होते हैं, जो मनुष्य के मरण पर्यन्त मनुष्य शरीर में विद्यमान रहते हैं। अर्थात उन्हीं आठ तत्वों पर यह मानव शरीर टिका हुआ है, जिनमें दोषत्रय (वात, पित और कफ) प्रधान हैं, और यहाँ दोष-

त्रय आयुर्वेदीय चिकित्सा के प्रधान स्तम्भ हैं। जब तक ये तीनों दोष शरीर में ठीक २ नाप तोल तथा परिमाण में बने रहते हैं तबतक मनुष्य शरीर आरोग्य बना रहता है। जब इन दोष त्रयों में से किसी एक में भी विषमता अर्थात् न्यूनता तथा अधिकता उत्पन्न हो जाती है, तब मनुष्य रोगी हो जाता है। प्रसिद्ध आयुर्वेदकार वाग्भट्ट ने भी लिखा है कि:—

"रोगस्तु दोष वैषम्यं दोष साम्यम रोगता"

अर्थात्—दोषों की विषमता का नाम रोग है, और दोषों (कफ, वात और पित्त) की समता का नाम आरोग्य है। जब मनुष्य अपनी अज्ञानता तथा अजानकारी से प्रकृति-विरुद्ध मिथ्याहार-विहार (इन्द्रियों से विषयों का अनुचित) उपभोग करता है, तब दोषों में विषमता उत्पन्न हो, मनुष्य शरीर रोगी हो जाता है।

वैद्यक मतानुसार प्रत्येक रोग के उत्पत्ति के और २ हेतुओं के सिवा "बाहरी तथा भीतरी" दो प्रधान हेतु (कारण) और होते हैं। उसी प्रकार प्रतिश्याय भी बाहरी सद्योजनक (तत्काल उत्पन्न करने वाले कारणों) तथा भीतरी संचयादि क्रम जनक (कुछ समय में दोषों के संचय आदि क्रम करके उत्पन्न होने वाले) कारणों से उत्पन्न होता है।

१-जुकाम होने का बाहरी-सद्योजनक, कारण—

मल मूत्रादिक वेगों का रोकना, अजीर्ण या बदहज़मी होना, स्वभाव के विरुद्ध अत्यन्त शीतल जल पीना, शीतल जल से स्नान करना, शीतल वायु और शीतल पदार्थों का अधिकता से सेवन करना, परिश्रम, शयन, तथा व्यायाम के पीछे बिना शांत हुए शीतल जल पीना, या शीतल पानी से स्नान करना, रात में बहुत जागना, बहुत सोना, बहुत बोलना, बहुत क्रोध करना, बहुत शोक या रंज करना, अत्यन्त रोना, नासिका में बहुत धुँआ और सूक्ष्म रूई, रज तथा धूल का प्रविष्ट होना, धुँएं इत्यादि से शिरको बहुत कष्ट पहुंचना, अत्यन्त स्त्री-प्रसंग और दिनचर्य्या तथा रात्रिचर्य्या के नियमों का उलंघन करना, सहसा ऋतु-परिवर्तन इत्यादि कारणों से मस्तक में एक साथ कफ जम जाता है, तब वृद्धि को प्राप्त हुई वायु, जल, प्रतिश्याय, जुकाम पैदा करती है।

२-जुकाम होनेका भीतरी-चयादि क्रम जनक कारण—

वात, पित और कफ अलग २ अथवा तीनों मिले हुए और खून का कुपित होना है। जब ये दोष आप के असयम से, अथवा अपने कुपित होने वाले कारणों से, कुपित हो मस्तिष्क में संचय हो प्रतिश्याय रोग के उत्पत्ति के कारण बनते हैं। ऋतु परिवर्तन काल में तथा गर्मी सर्दी के प्रभाव से और दिन चर्य्या के नियमित नियमों में थोड़ा भी परिवर्तन होने से प्रायः तनिक से कारणों के आधार पर जुकाम हो जाता है। वैद्यक मतानुसार दोषत्रय (वात, पित और कफ) में वात (वायु) दोष प्रधान है। बिना वायु के प्राणी क्षण भर भी जीवित नहीं रह सकता। देह धारियों में मानव प्राणी के लिये बाहरी तथा भीतरी दोनों वायु की आवश्यकता है। बाहरी वायु प्राणियों को जीवित तथा चैतन्य रखती है, और भीतरी वायु शरीर को उचित अवस्था में रखने के लिये, शरीर के भीतर

काम कर शरीर के प्राय: सभी आवश्यक अंगों को सहायता पहुंचाया करता है। जिस प्रकार आकाश में घटा 'घिरे हुए बादलों' को वायु अपने मनमाने ढंग पर इधर से उधर और उधर से इधर, यत्र तत्र नचाता फिरता है, उसी प्रकार शरीर का दोषाधिपति भीतरी वायु (वात दोष) भी प्राय: शरीर के सब दोष और धातुओं को अपनी इच्छानुसार नचाता रहता है। कारण कि शरीर में जितने दोष और धातु तथा भाग हैं, सब लंगड़े हैं। बिना वायु की सहायता के ये अपने आप कुछ करने में सर्वथा असमर्थ हैं। वैद्यक शास्त्र के निम्न वचनानुसार:—

पित्तं पंगु कफ: पंगु, पंगवो मल धातव: ।
वायुना यत्र नीयन्ते, तत्र गच्छन्ति मेघवत् ॥

वायु इन्हें जहां चाहता है वहां ले जाता है और ये बिचारे दोष द्रव, मल तथा धातु बिना किसी भी चीं-चपड़ के चुपचाप उसके साथ चले जाते हैं। कहने का तात्पर्य्य यह है कि शरीर के आधार भूत दोष त्रय में वात (वायु) ही प्रधान है। जब वायु उपरकथित प्रतिश्याय-जनक कारणों से कुपित हो कर मस्तिष्क में जा पहुंचती है तब शरीर के समस्त धातुओं को द्रव कर के (नासिका के द्वारा जल रूप में) बहाना प्रारम्भ करती है।

प्रतिश्याय होने से पहले निम्नलिखित लक्षण शरीर में दृष्टिगोचर हो, प्रतिश्याय होने की सूचना देते हैं।

छींक बहुत आने लगती हैं। शिर में बोझ सा मालूम होता है। मुंह का स्वाद बिगड़ जाता है। शरीर के अंग जकड़ जाते हैं, तथा अंग प्रत्यंग टूटने लगते हैं। रोंगटे खड़े होते हैं। नाक से गर्म श्वास निकलती है और एक प्रकार की विचित्र बेचैनी सी मालूम होने लगती है। उपरोक्त लक्षणों के नजर आते ही जान लेना चाहिए कि अब 'जुकाम' हुए बिना रुक नहीं सकता।

जुकाम का साधारण लक्षण—

जुकाम होते ही गन्ध ग्रहण करने की शक्ति का लोप हो जाता है, नाक तथा आंख से पानी बहना प्रारम्भ हो जाता है, तबियत सुस्त हो जाती है, शरीर टूटता है, माथा और कनपटी कफ से जकड़े प्रतीत होते हैं, शिर तथा सारे शरीर में पीड़ा होती है, आवाज भारी या बैठ जाती है, गला, तालु और होंठ सूखने लगते हैं, प्यास विशेष मालूम होती है, मुंह का स्वाद बिगड़ कर मुंह फीका हो जाता है, नाड़ी की चाल तेज हो जाती है, थोड़ा बहुत ज्वर सदा बना रहता है, अरुचि उत्पन्न हो जाती है, भूख मारी जाती है, जीभ मैली हो जाती है, और नाक से गर्म हवा (आगसी) तथा रतूबत निकलती रहती है। पथ्य एवम् चिकित्सा की उपेक्षा करने से प्रतिश्याय समय पाकर असाध्य हो जाता है। जल्दी आराम नहीं होता। जो लोग जुकाम की परवाह न कर इस की समुचित चिकित्सा की उपेक्षा कर आलस्य-वश विलम्ब करते हैं, वे बड़ी भारी भयानक भूल करते हैं। यदि प्रतिश्याय, समुचित चिकित्सा की उपेक्षा के कारण शीघ्र पक कर नहीं बहता, जल्दी आराम नहीं होता तो बिगड़कर निम्नलिखित बीमारियों के रूप में परिणत हो जाता है—

१ गले की गिल्टियों में प्रदाह, २ ब्रोंकाइटिस (Bronchitis), ३ न्यूमोनिया (Pneumonia) ४ प्लियूरिसी, ५ दर्द सिर, खासकर आधाशीशी

६ अपस्मार, ७ वुलंग ८ सकता, ९ माली-खोलिया १० मानिया (Mania), सिर घूमना, १२ आंखों के सामने अन्धेरा होना, १३ कृशता, और क्रमशः थायसिस (अन्तिमावस्था में) इत्यादि।

अनुभूत सरल चिकित्सा विधि—

मैं पहले कह चुका हूँ कि दोषों की विषमता का नाम रोग है। ये दोष तभी विषमावस्था को प्राप्त होते हैं, जब प्रकृति-विरुद्ध मिथ्या आहार विहार उपभोग किया जाता है। प्रायः कोई भी रोग बिना मिथ्या आहार विहार के नहीं होता, यह आप सदा याद रखें। यदि रोग की प्रारम्भिक अवस्था में ही रोग के उत्पादक हेतु (कारणों) को हटा दिया जाय तो चिकित्सा की आवश्यक्ता ही न रह जाय।

यह आप निश्चय विश्वास रखें कि उचित आहार विहार का पालन करते ही प्रकृति आपके शरीर को क्रमशः आरोग्य करने में स्वयं सहायक बन आपको शीघ्र प्राकृतावस्थामें ला देगी, अर्थात् निरोग बना देगी।

जगदाधार जगदीश के लीलामय संसार में प्रकृति अपनी विशेष दया से जीव मात्र की शरीर रचना का उस समय तक, बड़ी तत्परता से, बिना विश्राम, बिना किसी श्रमिक के सुचारू रूपेण पालन करती है, तथा असमय में (बिना पूर्णायु भोगे) काल वलित नहीं होने देती, जब तक आपकी ओर से आपके मिथ्या आहार विहार आदि असंयमों से उसके स्वाभाविक कार्य्य में बाधा नहीं पहुंचायी जाती। हमारा शरीर तभी अस्वस्थ्य होता है, जब हम आरोग्य रहने वाले प्राकृतिक नियमों की अवहेलना कर; प्रकृति के स्वभाविक कार्य्य संचालन क्रिया में बाधा पहुंचा, उसे अपना स्वाभाविक कार्य्य भली भांति सम्पादन नहीं करने देते। प्रकृति अपनी कार्य्य संचालन क्रिया में बाधा उपस्थित होते ही अपना स्वाभाविक गुण त्याग विकृत हो जाती है। और आपको अपने विकृतावस्था की सूचना रोगों के "पूर्व रूप" रूपी दूतों द्वारा देकर सावधान करती है कि आपकी स्वास्थोपयोगी प्राकृतिक नियमों की अवहेलना से, आपके शरीर तथा शरीर का अमुक भाग रोगी हुआ चाहता है, अतः आप उचित उपाय कीजिये। पाठक! आपने देखी प्रकृति की अनुपम दया!

मैं पहले कह चुका हूं कि प्रकृति अपना कोई काम चुपचाप नहीं करती। रोगों की प्रारम्भिक दशा (पूर्व रूप) द्वारा ही, वह हमें भावी रोग रूपी आपत्तियों की सूचना दे देने की कृपा कर देती है। यदि हम फिर भी उसकी सूचना पर ध्यान न दे उसकी समुचित चिकित्सा की उपेक्षा कर देते हैं, तब प्रकृति के वैकृतावस्था के कारण रोग बढ़ जाता है, और प्रकृति धीरे धीरे बिगड़ कर अपना कार्य्य बन्द कर देती है, जिसे हम लोग "मृत्यु" कहते हैं।

अधिकांश लोगों का विचार है (विशेषकर उन लोगों का जिनका आयुर्वेद विषय से थोड़ा भी सम्बन्ध नहीं है) कि रोग हमारे शरीर के विनाशक हैं। परन्तु मेरे विचार से उन लोगों का यह विचार सर्वथा भ्रमपूर्ण है। यदि ध्यान पूर्वक देखा तथा विचारा जाय तो निश्चय रूपेण यह निःसंकोच

कहा जा सकता है कि रोग हमारी रक्षा करते हैं। रोग ही हमारे शरीर को नष्ट होने से बचाने के लिये प्रकृति-प्रदत्त अपूर्व साधन हैं। प्रकृति हमें इन्हीं रोग रूपी दूतों द्वारा भावी रोग रूपी-भीषण विपत्ति की सूचना दे, सावधान कर असमय की मृत्यु से बचाती है।

मेरे अब तक के उपरोक्त विवेचन से पाठक यह न अनुमान लगालें कि नियमित प्राकृतिक संयम के सामने "औषधि विज्ञान" का कुछ महत्व ही नहीं है। पाठक ! आप ऐसा न समझें। मेरे अब तक के विवेचन का आशय सिर्फ यही है कि यदि प्रति दिन, सदा प्रत्येक मानव प्राणी से आहार विहार, आचार-व्यवहार तथा अन्य स्वास्थोपयोगी नियमों का जो दिनचर्या तथा रात्रिचर्या के प्रधान अंग हैं, कड़ाई के साथ पालन कराया जाये तो निःसंदेह आधुनिक कालीन रोगों की गणना, बिना किसी चिकित्सा के ही सिर्फ प्राकृतिक संयम के आधार पर ही कम होकर, मानव जाति का रोग जनित कष्ट विशेष रूपेण बहुत कुछ अंशों में दूर हो सकता है। यों तो औषधि विज्ञान का महत्व उस समय भी था, तथा औषधोपचार की आवश्यकता उस समय भी, जिस समय भारत उन्नति के उच्च शिखर पर सुखासीन था, जिस समय भारत जगद्गुरु की पदवी से विभूषित था, जिस समय देवता स्वरूप ऋषि-मुनि भारत वसुन्धरा को, अपने अलौकिक आत्म-बल से सुजला, सुफला तथा शस्य-श्यामला बनाये हुये थे, जिस समय सारा भारत तपस्वी भारत के नाम से पुकारा जाता था, जिस समय भारत अलौकिक तत्वों के जानने वाले तपस्वी-ब्रह्मचारियों तथा महानतिमहान् जितेन्द्रिय व्यक्ति-विशेषों से परिपूर्ण था, जिस समय भारत की जनता, आत्मबल, चरित्र-बल, वीरता, सहृदयता, एकता, शुद्धता, तथा पवित्रता में संसार की सभी जातियों में अग्रगण्य थी, जिनकी विद्वता, सर्वगुण सम्पन्नता, तथा सार्वभौमिकता के विपक्ष में, भूमण्डल के लिए किसी सभ्य तथा असभ्य मानव प्राणी ने आज तक अंगुली उठाने का साहस नहीं किया, जिस समय भारत के लोग, मन और इच्छा को कौन कहे, जनाब ! प्रकृति पर भी शासन करने की असाधारण योग्यता तथा क्षमता रखते थे। तब, भला आधुनिक कालीन व्यक्तियों को जो मन-इच्छा तथा नाना प्रकार के दुर्व्यसनों के गुलाम बने हुए हैं, जो पद पद पर प्राकृतिक नियमों की अवहेलना कर, पशुवत् आचरण कर, अपने दुर्लभ मानव शरीर को व्याधि-मन्दिर बना अकाल काल-कवलित होने का सौभाग्य प्राप्त कर रहे हैं, कब औषधियों के बिना केवल प्राकृतिक संयम पर अपनी जीवन यात्रा निर्विघ्न बिता सकेंगे ?

(शेष अगले अंक में)

स्वास्थ्य शक्ति व सौन्दर्य

नींबू

नीबू भारत का एक प्रसिद्ध फल है। यह थोड़ा या बहुत मात्रा में भारत के समस्त प्रान्तों में पाया जाता है। परन्तु साधारण जनता इसके गुणों से प्रायः अपरिचित रहती है। इसका उपयोग करने पर यह मनुष्य के शरीर की आश्चर्य प्रद सहायता करता है। नीबू ही एक ऐसा फल है जिसका प्रयोग करने में किसी प्रकार के अनिष्ट की आशंका नहीं होती बशर्ते कि यह ताजा हो। किसी भी रूप में प्रयोग कीजिये, चाहे पानी में निचोड़ कर चाहे चूसकर चाहे शाक दाल में डालकर, सभी रीति से फ़ायदा करेगा।

वैज्ञानिक विश्लेषण से पता चला है कि नीबू में विटामिन 'सी' की प्रधानता होती है। इसलिए वह पाचकयंत्र को व्यवस्थित करने में असाधारण शक्ति रखता है। जो महाशय कब्ज के मरीज हैं वे एक कांच या चीनी के प्याले में थोड़ा सा नीबू का रस निचोड़ और एक चुटकी सेंधा नमक डालकर पी जावें। यह कार्य प्रातः उठते समय और शाम को सोते समय करें, फिर देखें कि थोड़े ही दिन में इसका कैसा आश्चर्य प्रद लाभ होता है।

यदि गठिया रोग के शिकार नियमित रूप से नींबू का रस पीवें तो उन्हें निश्चय स्वास्थ्य लाभ होगा। सिर दर्द और पित्त की शिकायत दूर करने का भी यह एक सरल तरीका है। प्रातःकाल नींबू का रस पानी के साथ पी लेने पर वह शिकायत जाती रहती है।

दांत के रोगियों को चाहिए कि वे पानी में नीबू निचोड़ कर कुल्ला करें और दांत मलें, यदि उसमें सोडा बाईकार्बोनेट भी मिला लिया जाय तो दांतों का हिलना दुखना भी बन्द हो जायेगा।

पानी में यदि थोड़ा सा नींबू का रस और नमक डाल कर स्नान किया जाय तो रंग निखरेगा; और त्वचा साफ़ और सुन्दर होवेगी।

शाक दाल में नींबू निचोड़ कर खाने से भोजन का जो स्वाद बन जाता है उससे तो सब परिचित ही हैं।

जिस समय शहर में कोई संक्रामक रोग फैल रहा हो उस समय रोजाना दिन में दो तीन बार नींबू का शर्बत पी लेने से रोग के आक्रमण का भय नहीं होता क्योंकि नींबू में रोग के कीटाणुओं को मारने की अद्भुत शक्ति है।

बहुत से लोग इसका प्रयोग इस भय से नहीं करते कि कहीं उन्हें सर्दी या जुकाम न अकड़ ले परन्तु यह उनकी धारणा गलत है। इसके प्रयोग में ऐसी कोई भय की बात नहीं है।

क्या आयुर्वेद अवैज्ञानिक (Unscientific) है ?

आज कल अनेक ऐलोपैथ, 'अवैज्ञानिक' कहकर आयुर्वेद का अपमान किया करते हैं। अभी उस दिन बनारस के मारवाड़ी अस्पताल में आयुर्वेद विभाग का निरीक्षण करते हुए किसी साहब बहादुर शायद कर्नल बकले (I. G) ने यहां तक लिख मारा कि आयुर्वेदिक पद्धति अवैज्ञानिक है, अतः उस पर खर्च करना धन का दुरुपयोग करना है। आज हम इसी प्रकार के लोगों से दो बातें करना चाहते हैं।

सत्यं विज्ञानमानन्दं ब्रह्म

उपनिषद् में लिखा है कि सत्य, विज्ञान और आनन्द ये ब्रह्म के स्वरूप हैं। सत्यविज्ञानात्मक होता है और विज्ञान सत्यस्वरूप होता है, जो सत्य नहीं, वह कभी विज्ञानात्मक नहीं हो सकता और जो विज्ञानात्मक नहीं, वह कभी सत्यात्मक नहीं हो सकता। सत्य विज्ञान है और विज्ञान सत्य है। जब हम किसी को असत्य कहते हैं तब उसके विज्ञानस्वरूप होने को अस्वीकार करते हैं और जब किसी को अवैज्ञानिक कहते हैं, तब उसके सत्यस्वरूपत्व या सत्यात्मकत्व का तिरस्कार करते हैं। सत्य से विज्ञान और विज्ञान से सत्य को कभी भिन्न नहीं किया जा सकता। ये सत्यविज्ञान आनन्दमय और ब्रह्मस्वरूप होते हैं।

साधारण ज्ञान जब हेतु हेतुमद्भाव, प्रयोज्य प्रयोजक भाव और कार्य-कारणभाव आदि के रूप में विशिष्टज्ञान के रूप को प्राप्त होता है तब विज्ञान का रूप धारण करता है और जब यह विज्ञान दस, बीस, पचास या अधिक बार अबाध्य सिद्ध होता है तब यह सत्य विज्ञान आनन्दमय और ब्रह्म के समान लोक कल्याण का हेतु होता है (बृहत्वाद् बृंहणत्वाच्च ब्रह्म)

किसी को यह ज्ञात हुआ कि अमुक वनस्पति की पत्ती पीने से मूत्र अधिक मात्रा में होता है, और जलोदर के रोगी का फूला हुआ पेट पटक जाता है अथवा अमुक लता के मूल का क्वाथ पीने से पसीना अधिक आता है और उससे पक्षाघात के रोगी के हाथ पैरों में क्रिया होने लगती है यह एक साधारण ज्ञान हुआ।

अब इस साधारण ज्ञान में यदि कार्यकारण आदि की विशेषताओं का विशिष्ट ज्ञान हो जाय अर्थात् मूत्रल औषधि में उदरस्थ जल किस प्रकार रुधिर में मिलकर वृक्क (Kidny) में पहुँचता है और वहां से किस प्रकार छन कर मूत्राशय में सञ्चित होकर बाहर निकलता है, फलतः पेट पटक जाता है अथवा प्रस्वेद कर औषधि का पसीना बनाने वाली ग्रन्थियों पर कैसा प्रभाव होता है और प्रस्वेद अधिक आने के परिणाम स्वरूप शरीर के ज्ञान-तन्तुओं और क्रियातन्तुओं पर क्या प्रभाव पड़ता है जिससे उनमें कर्मण्यता आती है, इन बातों का प्रयोज्य-प्रयोजकभाव और हेतु हेतुमद्भाव आदि के रूप में निर्णय करना विज्ञान कहाता है।

फिर दस, बीस, पचास रोगियों पर उक्त औषधि का प्रयोग करके यदि उसमें अबाध्यता सिद्ध हुई तो यह सत्य विज्ञान कहाता है। इस सत्य विज्ञान के अनुभव में उत्पन्न होने वाला आनन्द अद्वितीय होता है। संसार के सब आनन्द उसके आगे तुच्छ हैं। राज्य-प्राप्ति का सुख भी हेच है। इसलिए श्रुति ने सत्य विज्ञान के आनन्द को ब्रह्मस्वरूप या ब्रह्मानन्दस्वरूप कहा है। इसका अनुभव किसी भुक्तभोगी को ही हो सकता है। यह सत्य विज्ञान ज्ञाता के अतिरिक्त औरों का भी कल्याण करता है।

यह सत्य विज्ञान आनन्दमय और ब्रह्मस्वरूप है जिस प्रकार ब्रह्म अनादि अनन्त और असीम है उसी प्रकार इस सत्य विज्ञान का न आदि है, न अन्त और न कोई सीमा। देश काल, जाति, वर्ण आदि की सीमायें इस सत्य विज्ञान को सीमाबद्ध नहीं कर सकतीं। समस्त देशों, सम्पूर्ण समयों, सभी जातियों और सब वर्गों में इस सत्य विज्ञान का प्रकाश हो सकता है, भारत के ऋषियों में अमरीका के हेनीमैन में (होम्योपैथी के आविष्कारक) जर्मनी के लुईकून में (जल चिकित्सा के प्रकाशक) तथा अन्य लोगों में यहां तक कि कोल, भील, शबर, संथाल आदि जंगली जातियों में भी यह ज्ञान-सूर्य चमक सकता है। आयुर्वेद के ऋषियों को इस तथ्य का पूरा पता था, अतएव उन्होंने लिखा है कि गौ चराने वाले, भेड़ चराने वाले तथा अन्य वनचारी लोग विविध वनस्पतियों में परिचित होते हैं। उनकी शिक्षा भी ले लेनी चाहिए।

गोपालस्तापसा व्याधा ये चान्ये वनचारिणः
मूलाहाराश्च ये तेभ्यो भेषजव्यक्तिरिष्यते ॥

(सुश्रुत)

सत्य विज्ञान न तो अंग्रेज़ों की बपौती है, न योरुप वालों की मीरास है। वस्तुतः सत्य विज्ञान अनादि अनन्त और असीम है। इस विज्ञान की शाखायें भी अनन्त हैं। रोग-विज्ञान ओषधि-विज्ञान, औषध-विज्ञान, शरीर-विज्ञान, शारीर-विज्ञान, प्राणि-विज्ञान भूगर्भ-विज्ञान, लोक-विज्ञान, परलोक-विज्ञान, प्रेत विज्ञान, मन्त्र-विज्ञान, तन्त्र-विज्ञान, यन्त्र-विज्ञान, रेखा विज्ञान कहाँ तक गिनियेगा? ये ज्ञान, विज्ञान और इन की शाखा-प्रशाखाओं का कहीं अन्त नहीं।

जिस प्रकार सत्य विज्ञान अनादि, अनन्त और असीम है उसी प्रकार उसके अनुभव करने के साधन नहीं। वे उसके ठीक विपरीत हैं। विज्ञान यदि अनादि अनन्त है तो उसके जानने के उपाय सादि और सान्त हैं। सत्य विज्ञान असीम है तो उसके ज्ञानोपाय सब सीमाबद्ध हैं। ये साधन चाहे प्राकृतिक हों चाहे कृत्रिम हों, सब एक से होते हैं अर्थात् विज्ञान के ठीक विपरीत। चक्षु सत्य विज्ञान का साधन है, इस से रूप और रूपवान् द्रव्यों का यथार्थ ज्ञान होता है, परन्तु जिस प्रकार रूपवान् द्रव्य अनन्त हैं उसी प्रकार चक्षु या उसकी शक्ति अनन्त नहीं।

यह ठीक है कि चक्षु से सत्य ज्ञान होता है, परन्तु यह ठीक नहीं कि जो ज्ञान चक्षु से होता है वही सत्य है। अथवा यह कि जितना सत्य

विज्ञान है वह सब चक्षु में हो जाता है। ये दोनों बातें नहीं। विज्ञान अनन्त है और चक्षु सान्त है। रूप और रूपवान् द्रव्यों के अतिरिक्त भी सत्य विज्ञान है, जहाँ चक्षु की कोई गति नहीं। गन्ध, रस, शब्द, स्पर्श आदि के विषय में चक्षु असमर्थ है। इसी प्रकार अन्य इन्द्रियाँ (जो ज्ञान के साधन हैं) भी सीमाबद्ध हैं। मन भी असीम ज्ञान का साधन नहीं। अनुमेय पदार्थ भी हैं, और केवल शब्दप्रमाणगम्य भी हैं जहाँ प्रत्यक्ष तथा अनुमान इन दोनों की गति नहीं। सारांश यह कि सत्य विज्ञान ब्रह्म की तरह अनादि अनन्त और असीम है परन्तु उसके अनुभव करने के साधन आदि मान्, अन्तवान् और सीमाबद्ध हैं।

जिस प्रकार चक्षु, श्रोत आदि ज्ञान के साधन हैं, उसी प्रकार होम्योपैथ ऐलोपैथी आदि भी रोग-विज्ञान के साधन हैं। जो बात और साधनों के संबन्ध में सत्य है वही इनके सम्बन्ध में भी है। यह कहना अज्ञता है कि समस्त रोग विज्ञान ऐलोपैथी के ही अन्तर्गत है अथवा यह कि ऐलोपैथी के अतिरिक्त और कहीं रोग विज्ञान है ही नहीं। न तो यही संभव है कि समस्त सत्यविज्ञान चक्षु (या चाक्षुप ज्ञान) के अंतर्गत हो जाय और न यही संभव है कि चक्षु के सिवाय और कहीं (घ्राण रसना आदि में) सत्य विज्ञान है ही नहीं। ये दोनों बातें नहीं जो बात अन्य साधनों के संबन्ध में है वही रोग-विज्ञान के साधनों के सम्बन्ध में भी है।

सत्य-विज्ञान की एक यह भी विशेषता है कि उसका अनुभव हो जाने के बाद फिर उसके विरुद्ध की गई बगावत का कोई असर नहीं होता। सत्य विज्ञान के विरोधी की अज्ञता भी प्रमाणित होती है और उसके साधनों की अयोग्यता, अपूर्णता तथा दोषयुक्तता भी प्रमाणित होती है परन्तु जो सत्य विज्ञान अनुभव के द्वारा किसी के हृदय में स्थान पा चुका है, वह हटाये नहीं हटता। जिसने अपने किसी कुटुम्बी या रिश्तेदार को साँप के काटने के बाद मन्त्रशक्ति से अच्छा होते देखा है उसे आप हजार बार समझाइये कि मन्त्रशक्ति अवैज्ञानिक और मिथ्या है उसके सर्पदष्ट पर कोई प्रभाव नहीं हो सकता, परन्तु आप के इस कथन का, आप की इस बगावत का उस पर कोई असर नहीं हो सकता जिसने मंत्रशक्ति के चमत्कार का प्रत्यक्ष अनुभव किया है। वह तो यही समझेगा कि मन्त्रशक्ति के विषय में आप अभी अज्ञ या मूर्ख हैं और आपके साधन जिसके बल पर आप मन्त्रशक्ति को मिथ्या बताते हैं, अपूर्ण अयोग्य और दोषपूर्ण हैं जो मन्त्रशक्ति के सत्य विज्ञान को समझने में असमर्थ हैं।

अभी उस दिन करांची में किसी ने श्री पं० जवाहरलाल जी नेहरू की हस्तरेखा देखकर बताया था कि आप की स्त्री रोग मुक्त हो जायेंगी। उसके दो दिन बाद ही जर्मनी का तार मिला कि डाक्टर लोग श्री मती कमला नेहरू के आरोग्य होने की आशा प्रकट करते हैं। अब कोई हजार सिर पटका करे कि हस्त रेखा अवैज्ञानिक और मिथ्या है, परन्तु उसकी इस

बकवास का प्रत्यक्ष अनुभवी पर क्या प्रभाव पड़ सकता है ?

लखनऊ के डाक्टर हीरालाल पाठक के कान में मवाद आता था। विज्ञान या वैज्ञानिकता के ठेकेदार ऐलोपैथ लोगों ने एक या दो बार आपरेशन भी किया, कान के ऊपर की हड्डी तक काट डाली, परन्तु पीब आना बन्द न हुआ। अन्त में वह कलकत्ते के प्रसिद्ध होम्योपैथ यूनन साहब के पास गए। उन्होंने कोई दवा एक मात्रा (बल्कि १ बूँद) दे दी। कान में से बहुत सा पानी निकला और बहना बन्द हो गया। अब कोई हज़ार भख मारा करे कि होम्योपैथी अवैज्ञानिक है और उसमें कुछ लाभ नहीं हो सकता, परन्तु इस मूर्खतापूर्ण बकवास का प्रत्यक्षदर्शी पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

जिसने दूध पीने से कफ खांसी के बढ़ने और पेट में वायु (रिआह) बढ़ने का स्वयं अनुभव किया है उससे कोई यदि यूनानी और आयुर्वेद को अवैज्ञानिक बताता हुआ कहे कि दूध से न कफ बढ़ सकता है, न खांसी तो वह कब विश्वास करेगा ?

एक लड़की को बड़ी-बड़ी चेचक निकली। दाने सब एक गए, ज्वर बहुत बढ़ा। जलन, बेचैनी, अनिद्रा, मूर्छा, प्रलाप आदि उपद्रव भी हुए। उसी समय एक जंगली अपढ़ ने सरसों के समान दो दाने पानी में घिसकर लड़की के भाई से अपनी उँगलियाँ भिगोकर रोगी के ऊपर छिड़कने को कहा। भीगी उँगलियां रोगी की जिह्वा से सिर्फ छुआ दी गयीं। १० मिनट में ही बेचैनी, घबराहट, मूर्छा और दाह शांत हो गए; ज्वर भी कम हुआ। सब से बड़ा आश्चर्य तो यह कि इतनी ही देर में व्रणों के गड्ढे भी भरते दिखाई दिए। अब कोई विज्ञान का ठेकेदार घमंडी ऐलोपैथ सिद्धवैद्यक (कोटा राज्य में प्रसिद्ध पद्धति) को अवैज्ञानिक बताकर यदि उक्त बातों के विरुद्ध बग़ावत करना चाहे तो प्रत्यक्षदर्शियों को कैसे बहका सकेगा ? वह तो यही समझेंगे कि विरोधी मूर्ख है और इसकी (ऐलोपैथी) अभी इतनी अयोग्य, अपूर्ण और दोषयुक्त है कि इस सत्य विज्ञान के समझने में असमर्थ है। विज्ञान के समान विज्ञान के साधन तो अनादि, अनन्त और असीम होते नहीं।

बनारस के मारवाड़ी-अस्पताल के आयुर्वेद-विभाग में प्रायः ७०-८० हज़ार रोगी प्रतिवर्ष आते हैं। बकले साहब (अंग्रेज़ इन्सपेक्टर) के आयुर्वेद को अवैज्ञानिक लिखने के बाद भी वहां रोगी उसी प्रकार आ रहे हैं। फलतः यह सिद्ध है कि लोगों पर साहब बहादुर की आयुर्वेद के विरुद्ध की गई इस बग़ावत का कोई असर नहीं हुआ। जिन्होंने स्वयं आयुर्वेद के सत्य विज्ञान से लाभ उठाकर उसके ब्रह्मानन्द का अनुभव किया है उन पर होता भी कैसे ? उन्होंने तो उक्त साहब बहादुर के कथन को बेसमझी, साहब को अज्ञ, और उनकी पद्धति (एलोपैथी) को अयोग्य, अपूर्ण और दोषपूर्ण ही समझा जो अभी आयुर्वेद के सत्यविज्ञान को समझने में असमर्थ हैं।

लखनऊ के मेडिकल कालेज में सुना है,

देशी दवाओं की परीक्षा का भी कोई विभाग है जहाँ कोई एलोपैथ डाक्टर 'साइंटिफिक ढंग' से परीक्षा किया करते हैं। उन्होंने घोषणा की है कि गुलबनफ़शे में जुकाम को दूर करने वाला कोई तत्व नहीं है और न इन्द्रजौ में दस्त रोकने वाली कोई चीज़ है।

अब न तो यह संभव है कि जुकाम के लिए लोग बनफ़शा पीना बन्द करदें और न यही संभव है कि पिया हुआ गुलबनफ़शा जुकाम में लाभ करना बन्द करदे। यह कुछ भी न होगा होगी सिर्फ उक्त वक्ता की बेसमझी की घोषणा और साथ ही उसकी पद्धति की अयोग्यता, अपूर्णता और दोषपूर्णता भी घोषित होगी।

यदि विज्ञान के चारों ओर कोई दीवार बनाई जा सके और यह कहा जा सके कि इसके भीतर की सब वस्तुएं वैज्ञानिक हैं और बाहर की अवैज्ञानिक, तब इन घमंडी ऐलोपैथों की बात का कुछ मूल्य हो सकता है परन्तु संसार में आज इस प्रकार विज्ञान की सीमा निर्धारित करने में कोई भी समर्थ नहीं है और न कभी होगा, क्योंकि विज्ञान तो ब्रह्म की तरह अनादि अनन्त और असीम है। इस दशा में जो आयुर्वेद को अवैज्ञानिक बताता है वह अपनी अज्ञता की घोषणा करता है और करता है अपनी पद्धति (ऐलोपैथी) की अयोग्यता, अपूर्णता और दोषपूर्णता की घोषणा।

साइंस-साइंस का व्यर्थ ढोंग बनाकर शोर मचाने वाले इन घमंडी ऐलोपैथों के पास प्रथम तो दवायें हैं ही नहीं, और जो इनी-गिनी-ऐस्पिरीन, ऐराटीफ़ेवरीन मारफ़ीया, क्वीनीन आदि हैं वह भी लाभ की अपेक्षा सौगुनी हानि करती हैं। सच्चे और ईमानदार एलोपैथ इन बातों को स्वयं स्वीकार करते हैं। कलकत्ते आदि बड़े शहरों में आधे से अधिक ऐलोपैथ डाक्टर होम्योपैथी दवायें बर्तते दीखेंगे, पर होम्योपैथ ऐसा एक भी न मिलेगा जो एक भी ऐलोपैथिक दवा देता हो। यह एक ही प्रमाण इतना प्रबल और पर्याप्त है कि एलोपैथी की अपेक्षा होम्योपैथी में दवाएं अधिक और अच्छी हैं। होम्योपथी में एक भी दस्तावर (विरेचक) दवा नहीं है, परन्तु आयुर्वेद में एक ही जगह चरक ने छः सौ रेचक दवाएं लिखी हैं। यदि इनमें से २-३-४ मिला के प्रयोग बनाये जाएं तो कई लाख नुसखे होंगे। इस प्रकार आयुर्वेद में दवाओं का अटूट भंडार मौजूद है। सिर्फ ज्वर के ऊपर यहाँ पांच हज़ार से ऊँची दवाएं मिलती हैं। कर्नल बकले जैसे घमण्डी निन्दकों को इनके समझने सोचने के लिए भी समय और दिमाग़ चाहिए।

यदि आयुर्वेदिक साहित्य अंग्रेज़ी में हो जाय और दवाएं होम्योपैथी की तरह सुलभ हो जाएं तो यह झूठे घमण्डी ढोंगी ऐलोपैथ निश्चय ही उनको भी बर्तने लगें और आयुर्वेद को अवैज्ञानिक बताने का सब दम्भ हवा हो जाय।

हम कर्नल बकले को चैलेंज करते हैं कि वह आयुर्वेद के समान भिन्न २ प्रकृति के रोगियों के लिए भिन्न-भिन्न दवायें ऐलोपैथी में दिखाएं तो सही—साइंटिफ़िक होने की कोरी डींग मारने

से चिकित्सा के मैदान में काम नहीं चल सकता।

ऐलोपैथ लोग विदेशी सरकार के सहारे ही यहां (भारत में) फल-फूल रहे हैं। यदि इन लोगों को मिलने वाली सरकारी सहायता बन्द हो जाय तो ये व्यर्थ ही साइन्स के घमंडी चिकित्सा के मैदान में अन्य चिकित्साओं के मुकाबले एक दिन भी नहीं टिक सकते।

कुछ लोग राजनीतिक कारणों से भी आयुर्वेद को अवैज्ञानिक कहा करते हैं। भारत परतंत्र है। उस पर अंग्रेज़ों का प्रभुत्व है, अतः भारत को सदा दास बनाए रहने, वहां अपना व्यापार बराबर क़ायम रखने और भारतीयों के मन पर अंग्रेज़ों की उच्चता, महत्ता की छाप क़ायम रखने की इच्छा का अंग्रेज़ों में होना स्वाभाविक है। ये सब काम ऐलोपैथी के द्वारा ख़ूब होते हैं। अंग्रेज़ों में बड़े बड़े वैज्ञानिक हैं। उन्होंने ऐलोपैथीमें बड़े-बड़े आविष्कार किए हैं। अंग्रेज़ों की ही कृपा से भारत को ऐलोपैथी जैसी वैज्ञानिक चिकित्सा का तोहफ़ा मिला है। यदि अंग्रेज़ भारत से चले जायें तो वह इस स्वर्ण सुयोग से वञ्चित हो जायगा, इत्यादि बातों का प्रचार ऐलोपैथी के द्वारा मज़े में होता है और साथ ही विलायती व्यापारियों की तोंद में भारत का करोड़ों रुपये भी अनायास ही चला जाता है। ऐलोपैथी में एक सुई भी देशी नहीं उपयुक्त होती। पट्टियां और ज़ख्मों पर लगने वाली रुई तक विदेश से आती है। इसके बहाने कर्नल बकले-जैसे अनेक अंग्रेज़ पलते भी हैं।

अब इधर वैद्यों को देखिए तो इनका सब ठाठ स्वदेशी। सोंठ, मिर्च, पीपल से लेकर खरल, हावन-दस्ता और सिल-बट्टा तक ठेठ स्वदेशी। न इनसे विदेशियों को एक छदाम भी मिलता है, न उनकी प्रतिष्ठा ही बढ़ती है, प्रत्युत जब कभी धुरन्धर ऐलोपैथों के सिर तोड़ कोशिश करने पर भी निराश रोगी इन वैद्यों द्वारा नीरोग किए जाते हैं तब ये विज्ञान के ठेकेदार घमण्डी ऐलोपैथ आयुर्वेद को अवैज्ञानिक कहकर ही दिल का बुख़ार उतारा करते हैं। ('आयुर्वेद-महत्त्व' और उसके परिशिष्ट में इस प्रकार के अनेक उदाहरण संगृहीत हैं!)

इस दशा में विदेशी सरकार यदि ऐलोपैथी की सहायता न करे तो और किसकी करे? वह इतना ही नहीं करती, बल्कि कभी-कभी अन्य चिकित्सा-पद्धतियों को अवैज्ञानिक कहकर अपमानित भी करती है और इस प्रकार ऐलोपैथी को अप्रत्यक्ष उत्तेजन देती है।

वस्तुतः ऐलोपैथी का भारतमें कोई उपयोग नहीं। ग़रीब और ग्रामवासी किसानों को इससे कोई सहायता नहीं मिलती, और न मिलने की कोई सम्भावना ही है। यह चिकित्सापद्धति इतनी ख़र्चीली है कि उन तक पहुँच ही नहीं सकती। जो इतना रुपया इन ग़रीब किसानों से छीनकर ऐलोपैथी में व्यर्थ नष्ट किया जाता है, यदि वह सब बन्द करके केवल आयुर्वेद के प्रचार में लगाया जाय तो जनता का असीम उपकार हो, परन्तु विदेशी शासन में इसकी आशा करना व्यर्थ है।

आयुर्वेद की प्राचीन पुस्तकों (चरक, सुश्रुत)

का प्रति संस्करण (Re-edition) हुए आज ३-३ हज़ार वर्ष हो चुके जिस समय आज के घमण्डी ऐलोपैथों के परबाबाओं को भी लँगोटी लगाने का शऊर नहीं था उस समय जिस आयुर्वेद ने मूढ़गर्भ-जैसे कठिन आपरेशनों मे सफलता प्राप्त की और बाल की लम्बाई में ८-८ जगह से चीरने के योग्य शस्त्र बनाये। उसे ये कल के छोकरे वैज्ञानिकता के ठेकेदार अवैज्ञानिक कहते हैं !!!

साइन्स ने अब तक संसार को जो कुछ दिया है उसमें पिस्तौल रिवालवर, बन्दूक, तोप गोली, बारूद, ज़हरीली गैस, बीमारी के कीड़ों से भरे बमगोले, हवाई जहाज आदि संहारकारी और प्राण घातक समान ही हैं। मनुष्यों को अपनी प्राणरक्षा के लिये आज भी उन्हीं पद्धतियों की शरण मे जाना पड़ता है जिन्हें ये घमंडी ऐलोपैथ, अवैज्ञानिक या अनसाइंटिफ़िक कहते हैं। होम्योपैथी, यूनानी और सब से बढ़कर आयुर्वेद से ही मनुष्य की प्राण-रक्षा होती है और ये सब अवैज्ञानिक बताये जाते हैं।

वैज्ञानिक चिकित्सकों (ऐलोपैथों) के हाथ में आज भी सिर्फ छुरो है। यदि किसी के सिर में दर्द हुआ तो खोपड़ी फाड़ दी, कान में दर्द हुआ तो कनपटी फोड़ दी. आंख दुखी तो आंख का गुल्ला निकाल फेंका और यदि पेट में विकार दीखा तो सब दाँत उखाड़ फेंके। बस, यही इनकी साइंटिफिक चिकित्सा है। इसी से एक जगह लिखा है कि—

ऐलोपैथिक लोगों के पास बस छुरा है। ये लोग व्यर्थ ही साइन्स के ठेकेदार बनते हैं और झूठे घमंड से अकड़ते फिरते हैं। अपनी तारीफ के पुल बांधते हैं और संसार में ऐलोपैथी के सिवा कहीं कुछ नहीं है ऐसी डींग मारा करते हैं। भारत में ये लोग सिर्फ विदेशी सरकार के सहारे जी रहे हैं।

क़रीब पांच हजार वर्ष पूर्व महाभारत के युद्ध में जब भीष्म पितामह घायल हुए थे तब उनके व्रणों की चिकित्सा के लिए वैद्य लोग ही बुलाये गये थे, डाक्टर नहीं (देखो म० भा० भीष्मपर्व)*

कम से कम दस हजार वर्षों से भारत में आयुर्वेद ने सत्यविज्ञान का स्वरूप प्राप्त कर रक्खा है और उसके अनुभव से करोड़ों पुरुषों ने आनन्द प्राप्त किया है और कर रहे हैं। जो पुरुष सत्यविज्ञान के विरुद्ध आवाज उठाता है उसके प्रमाण और साधन पर अविश्वसनीयता की संभावना रहती है। शर्करा का मिठास प्रमाण सिद्ध है। यदि कोई उसे कड़वी बताये तो उसकी जीभ को रोग युक्त होने की संभावना होती है। शंख को पीला बताने वाले की आंख पर संदेह होने लगता है। गुलबनफ़शे को जो प्रतिश्याय प्रतीकारक तत्त्व से रहित बताता है उसके साधन और प्रणाली पर संदेह होना स्वभाविक है। इसी प्रकार जो आयुर्वेद को अवैज्ञानिक कहता है वह अपनी मूर्खता की घोषणा करता है और अपनी पद्धति (ऐलोपैथी) की अयोग्यता, अपूर्णता, और सदोषता भी घोषित करता है।

कर्नल बकले को आयुर्वेद का कितना ज्ञान

*एवं गतेऽमपिराजन् वैद्यैःकार्यं मिहास्तिकिम्। (संपादक)

है ? उन्होंने इसका कितना अनुशीलन किया है ? यदि कुछ नहीं तो इसे अवैज्ञानिक बताने का उन्हें क्या अधिकार है ? जिसका उन्हें कुछ ज्ञान ही नहीं उसके वैज्ञानिक या अवैज्ञानिक होने का पता उन्हें कैसे चला ?

कर्नल बकले ने भारतके प्राचीनतम विज्ञान का अपमान करके फिर भारतीयों को यह याद दिलाई है कि परतन्त्रता कैसी घृणित वस्तु है। हम जानना चाहते हैं कि क्या विदेशी सरकार का सहारा न होने पर भी कर्नल बकले आयुर्वेद के सम्बन्ध में ऐसी अपमानजनक, घमण्डभरी और ओछी बात कहने की हिम्मत करते ?

कर्नल बकले से हमें कुछ कहना नहीं है। उनके और भारतीयों के दृष्टिकोण में पूर्व पश्चिम का अन्तर है। वह जिसे धन का दुरुपयोग समझते हैं, हमारी दृष्टि में उससे बढ़कर कोई सदुपयोग हो ही नहीं सकता और जिसे वह धन का सदुपयोग समझते हैं हम उसे वासना की छाप तथा घोर दुरुपयोग समझते हैं। अपना-अपना दृष्टि-कोण ही तो है।

आयुर्वेद को अवैज्ञानिक बताकर भारतीयों को बरगलाने का इरादा रखनेवालों को नीचे लिखा पद्य याद रखना चाहियेः -

होइ उजारो गँवारो न है य जो,
प्यारो लगै तुम ताहि निहारो।
दीने न नैन तिहारे से मेरे हू,
कीजै कहा कर तामों न चारो॥
आय कही तुम कान में बात,

रक्त

लेखक पं० भगवद्देव शर्मा (संपादक)

शरीर में किसी स्थान के छिदने या कटने पर जो एक गहरे लालरंग का तरल (पनीला) पदार्थ निकलता है। उसको रक्त या रुधिर अथवा खून कहते हैं। यह रक्त ही सब अंग प्रत्यँगों में सूक्ष्म २ धमनियां तथा उनकी शाखा प्रशाखाओं के द्वारा पहुंच कर उनको पुष्ट करता है। शरीर के सब पदार्थों में रक्त ही एक बड़ी अद्भुत वस्तु है। यह जल की अपेक्षा भारी होता है अर्थात् जल का गुरुत्व यदि १०.० माना जाये तो रक्त का गुरुत्व १०५५ होगा यह अपार दर्शक होता है अर्थात् इसमें से प्रकाश की किरण पानी की तरह गुजर नहीं सकती यह कुछ नमकीन होता है। आयुर्वेद में शुद्ध रक्त का वर्णन इस प्रकार है—मधुरं, लवणं किञ्चित्। अशी तोष्णमसंहतम्। पद्मेन्द्रगोप हेमाभं शश लोहित लोहितम्॥ वाग्भट्ट॥ अर्थात् रक्त मधुर रस वाला, कुछ नमकीन, बीर बहूटी के समान तथा खरगोश के रक्त के समान, और स्वर्ण के समान शुद्ध रक्त का रंग होता है यह हृदय के द्वारा सब अंगों में पहुंचता है। हृदय एक बार में लगभग १ से १॥ छटांक तक रक्त

'न कौनहु काम को कान्हर म्हारो
माहि तो वा मुख देखे बिना,
रवि हू को प्रकाश लगै अँधियारो।

को धमनियों में फेंकता है। अनुमानतः रक्त एक वर्ष में ३६५ मील की यात्रा करता है। यह प्रत्येक शरीर में लगभग शरीर के भार का २० वां हिस्सा होता है। अर्थात् जिस मनुष्य का शारीरिक वजन २ मन है उसमें रक्त ४ सेर होगा, चरक के कथनानुसार प्रत्येक शरीर में अपनी अपनी अंजलि के अनुसार आठ अंजली रक्त होता है जो कि लगभग इसी परिमाण के बराबर होता है। यह औक्सिजन द्वारा अन्य अंगों को पोषक द्रव्य देता है। और अत्यन्त विषैले पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने के लिये अंगों से ले जाता है।

रचना

यदि रक्त की परीक्षा की जाय, तो हमें मालूम होगा कि उसमें दो प्रकार के संयोगी तत्व हैं। (१) एक तो हलका पीले रंग का तरल भाग जिसको प्लाज़मा कहते हैं। (२) और दूसरे इस प्लाज़मा में रहने वाले छोटे गोल आकार के सुर्ख रंग वाले कण, जिनको रक्तकण कहते हैं। इन्हीं के कारण रक्त लाल वर्ण का होता है। इन रक्त कणों के अतिरिक्त रक्त में एक दूसरे प्रकार के भी कण होते हैं। जिनको श्वेताणु कहते हैं।

यदि रक्त को कांच के किसी छोटे बर्तन में भरकर रख दें, तो थोड़े समयके बाद वह जमने लगेगा। अन्तमें एक जमा हुआ थक्का अलग हो जाएगा और पीले रंगका तरल पदार्थ अलग रहेगा। यह तरल पदार्थ प्लाज़मा है। और थक्का रक्त के कण और एक दूसरा वस्तु, जिसको फाईब्रिन (Feibrin) कहते हैं, दोनोंके मिलने से बना है।

१०० भाग रक्त में ६०-६५ भाग प्लाज़्मा के होते हैं और ३५ से ४० रक्तकणों के। रक्त कण—दो प्रकार के होते हैं एक लाल और दूसरे श्वेत। रक्त में यह असंख्य कण रहते हैं, रक्त की प्रत्येक बिन्दु में ५०००००० पचास लाख लाल कण और ६००० से १२००० तक श्वेत कण होते हैं।

लाल कण

लाल कणों की संख्या श्वेत कणों से बहुत अधिक होती है। ये रुपये पैसे के समान आकार में गोल होते हैं, किंतु दोनों ओर बीच में कुछ गहरे और किनारों की तरफ उठे हुए होते हैं। दोनों ओर इनकी ऐसीही बनावट होती है, ऐसी बनावट को युगल नतोदर कहते हैं। परिधि में यह $\frac{१}{३२००}$ इंच के लगभग होते हैं, और इससे चौथाई मोटे होते हैं। यदि एक कण को लेकर देखा जाय तो वह पीला दिखाई देगा, जब बहुत से कण आपस में मिले रहते हैं, तब अधिक संख्या के कारण लाल दिखाई देते हैं। इन सेलों में कोई केन्द्र नहीं होता। इन सेलों की उपयोगिता इनके रंग पर निर्भर है। लाल कणों का मुख्य कार्य यही है कि वे वायु से औक्सिजन ग्रहण करें और शरीर के अंगों को दे दें। शरीर में जो भिन्न २ रासायनिक क्रियायें होती हैं, उनके लिये औक्सिजन की अधिक आवश्यकता होती है। इसी औक्सिजन को प्राप्त करना लाल कणों का काम है।

फुफ्फुस केवल इसीलिए बनाए गये हैं कि वहां रक्त के कण औक्सीजन प्राप्त कर सकें और हृदय व नलिकाओं का प्रयोजन केवल यह है कि वह औक्सीजन युक्त रक्त को पोषक पदार्थों के साथ भिन्न २ स्थानों पर पहुंचा सके, ये छोटे २ लाल कण औक्सीजन वाहक हैं।

रक्त में लाल कणों का इतनी अधिक संख्या में होने का कारण उनके कार्य से स्पष्ट हो जाता है। एक बून्द रक्त में ५ लाख सेल सब जीवन के दीप को प्रदीप्त रखने का काम करते हैं। वे उसको बुझने नहीं देते। जितने अधिक कण होंगे उतनी ही अधिक औक्सीजन शरीर के तन्तुओंको मिलेगी। इतनी अधिक संख्याका यही प्रयोजन है कि शरीर के प्रत्येक कोने २ को, प्रत्येक सेल को पर्याप्त औक्सीजन पहुँच सके। सेलों की आकृति ही ऐसी है कि वे औक्सीजन को अधिक सोख सकते हैं। वह दोनों ओर से चपटे हैं, इसी कारण उनके आकार की अपेक्षा उनमें शोषण शक्ति अधिक है। क्योंकि शोषण सदा ऊपरी तल में होता है। इन लाल कणों का बराबर नाश हुआ करता है। एक सेल एक पक्षमें अधिक कदाचित् ही जीवित रहता हो इस प्रकार सदा सेलों का नाश भी होता रहता है और नये सेल भी बनते रहते हैं। इन सेलों का नाश विशेषकर यकृत् में होता है। इनके नाश से जो लोह उत्पन्न होता है। उसको यकृत् पित्त के रंग बनाने के काम में लाता है। पित्त का हरा रंग इसी लोह से बनता है।

श्वेत कण

दूसरे सेल श्वेत सेल होते हैं, इनका कोई निश्चित् आकार नहीं होता। ये क्षण २ में प्राचीन समय के राक्षसों की तरह अपना आकार बदला करते हैं, जिन्हों ने अमीबा देखा है, वह इसका अनुमान कर सकते हैं। यह उसी श्रेणी का जीव है, अमीबाकी भांति ज्यों २ यह सेल आगे बढ़ता है, त्यों २ उसके आकारों में नये परिवर्तन होते हैं, किसी दो स्थानों में इसका एकसा आकार नहीं दिखाई पड़ता, ये लाल कण से बड़े होते हैं, और इन में केन्द्र होता है, ये कई प्रकार के होते हैं। विशेष भिन्नता उन के केन्द्र के स्वरूप और आकार में होती है। इनमें लों में धमनीव केशिका के दीवारों के सेलों के बीच में होकर निकल जाने की शक्ति होती है।

(अपूर्ण) क्रमशः

अनुभूत प्रयोग

चम्बल (एग्ज़िमा) के लिये अक्सीर मर्हम

चौलमूँगरे का तेल	१० भाग
हार्डपैरेफीन	४० भाग
सौफ्ट ह्वाइट पैरेफीन	५० भाग

बनाने की विधिः—पहले हार्डपैरेफीन को हलकी आंच पर गरम करो, फिर ऊपर की दोनों चीज़ों को मिला लो यह मर्हम कुष्ठ (leprosy) लैप्रेसी एकज़िमा के वास्ते अक्सीर है।

पुंग के लिये अक्सीर गोलियाँ

जदवार खताई, जहरमोहरा खताई, सत गिलोय, मिर्चस्याह, नरकचूर समभाग लेकर गुलाबमें पीसकर मिर्चस्याह के बराबर गोलियां बनावे खुराक एक गोला से ७ गोली तक किसी मुनासिब अर्क से।

सब प्रकार के प्रमेह, धातु दुर्बलता के लिये अक्सीर

मग़्ज़ तुख्म इमली	५ तोले
वड़या बर्गद	५ तोले
मोचरस	५ तोले
त्रिवंग भस्म	२ तोले

बनाने की विधि:—इमली के चीओं को दो चार दिन पानी में भिगो कर गिरी निकाल लें बारीक सफ़ूफ़ बना लें, इसी तरह मोचरस का भी सफ़ूफ़ करलें पहले चारों चीज़ों को खूब मिला कर अच्छी तरह से खरल करके एक हफ्ते सत बर्गद, में खरल करें जब गोली बनाने के लायक़ हो जावे तो चनेके बराबर गोलियां बनालें बस तैयार है।

अनुपान—एक गोली को पाव भर मीठे दूध में ६ माशे ईसबगोल को घोल कर इस्तैमाल करें इसका सेवन ४० दिन करें।

परहेज—ज्यादा मिर्च खटाई तेल

तरकीब—सत बरगद बहुफली मुरक्कब बड़ के ताज़ा और नरम पत्ते एक भाग, बहुफली १ भाग दोनोंको समान भाग कूँडी सोटेमें थोड़ा सा पानी डाल कर खूब घोटें, फिर किसी कढ़ाई में मन्द २ अग्नि से पकावें, जब नरम, स्याह क़िवाम होजावे शीशी में हिफ़ाजत से रखलें यही सत है।

पनाचुनी

पनाचुनी, चिड़ी पंच, पाना बूँटी, खतूरी यह बूटी हिन्दुस्तान में इन ही नामों से मशहूर है इसका पेड़ ज़मीन से एक बालिश्त ऊँचा इधर उधर फैला हुआ, पत्ते चिड़िया के मानिन्द होते हैं। चबाने से इसका पोक रंगदार सा निकलता है शाखें सब्ज़, एक ज्वार के दाने के मानिन्द सफ़ेद बहुत कसरत से निकलते हैं, जो निहायत रौनकदार मालूम होते हैं। मौसम बरसात में अकसर उन ज़मीनों में ज्वार बाजरा के खेतों में बहुत हो होती है। इस को तासीर सर्द,खुश्क है काबिज़ हैं। अत्यन्त लाभदायक बूँटी है।

सफूफ सूज़ाक और जरियान के लिये

उपरोक्त पनाचुनी बूँटो	१ तोले
मिर्चस्याह	१३ तोले
जीरा सफ़ेद	३ माशे
बताशे	११

डालकरपीने से १ सप्ताह में आराम हो जायगा। अनुभूत है।

सुजाक के लिए

छोटी दुधी ३ तोले, काली मिर्च ८ अदद घोट छान कर आध सेर जल में मिलाकर पीवें ७ दिन में शर्तिया आराम करती है। खासकर

सुजाक, आतशक, हौलदिली, रक्तविकार में अत्यन्त मुफीद है।

अत्यन्त पौष्टिक व प्रमेह नाशक वटी

एक बड़ा गोला लेकर उसमें पैसे के बराबर छेद करके उसमें ताल मखाने के बीज भर लें, सिर्फ करीब दो या तीन अंगुल खाली रहे। फिर उसमें बड़का दूध भरलें। जब ताल मखाना उसे सोख लें फिर दुबारा तालमखानो भर कर बड़ का दूध भर लें इस तरह तीन वार करने के बाद फिर उसे कुण्डी सोटे से खूब घोंटकर बारीक पीस कर उसमें ४० चांदी के वर्क मिला-कर झड़बेरी के बराबर गोली बनाकर रखलें सुबह शाम १-१ गोली ४० दिन तक दूध के साथ लेवें। यह नुसखा अनुभूत है इसके सेवन से शरीर मोटा, ताजा, बलिष्ट हो जाता है। अत्यन्त वीर्य वर्धक तथा स्तम्भन है।

खाँसी, नजला, लकवे और हैजे केलिए अक्सीर

मीठा तेलिया शुद्ध, सफेद जीरा, पीपल, काली मिर्च, सुहागा, सिंगरफ़ शुद्ध सब को बराबर भाग लेकर कपड़ छन करके कागजी नीबू के अर्क में घोटकर चने बराबर गोलियां तय्यार करें। एक गोली अदरक या पान के अर्क के साथ दें।

हब्बे रसोत

रसोत, गूगल, गेरू, नीम की गिरी, बकायन की गिरी, गेंदना के पानी में घोटकर चने बराबर गोली बनावे, रोजाना २—२ गोली चांवलों के मांड या शर्बत अँजवार २ तोले को पानी में घोलकर उसके साथ देने से बवासीर खूनी, और वाड़ी में अक्सीर आज़म है।

हब्बे खिज़ाब

बालों को स्याह व मुलायम करती है एक गोली आंवले के अर्क में घिसकर बालों पर लगावें।

माजूसब्ज़ २० तोले, फिटकरी, नौसादर हर एक २१ माशे, तांबे का बुरादा ४२ माशे, आंवला २० तोले। विधिः—माजू को कूटने के बाद और सब दवाओं को मिलाकर कूट छान लें आंवले को रात भर तर रक्खें और सुबह उसको मसल छान कर उसके लुआब में गोली तैयार करें।

हब्बे रेगमाँही

रेगमाही, लौंग, माजूफल, सिंगरफ, हरएक ४ माशे, ज़ाफ़रान मुश्क, अफ़ीम हरएक १-१ माशे नकछिकिनी, सोने के वर्क हरएक ३-३ माशे कायफल, दारचीनी, सोने के वर्क हरएक सात माशे सब को पानी में घोंटकर चने बराबर गोलियां बनावें। गोलियां अत्यन्त रुकावट करने वाली, कामोद्दीपक हैं कुव्वत बाह के लिए अक्सीर है। मिलने से दो घण्टे पूर्व गाय के दूध के साथ लेवें।

परीक्षा फल प्रकाशक पत्र

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामण्डल विद्यापीठ पूना से सम्बद्ध नं० २०
तथा भारत गवर्नमैण्ट से सन् १८६० को २१ वीं धारा के अनुसार
रजिस्टर्ड

इन्दौर रा० विश्वविद्यालय निखिल भारत वर्षीय संस्कृत साहित्य विद्यापीठ
जालन्धर (पंजाब) की जौलाई १६३५ की परीक्षाओं का परिणाम—

श्री आयुर्वेद विशारद रा०

देहरादून केन्द्र

१. विद्यादत्त शर्मा ३

बागेश्वर के०

२ कृष्णदत्त ३

३. जयदत्त जोशी ३

लाहौर के०

४. सन्ध्यादत्त शर्मा ३

५. रामप्रकाश वर्मा २

रुड़की के

६. छोटनलाल शर्मा ३

परीक्षितगढ़

७. मुरारी लाल ३

८. रेवतीशरण शर्मा ३

हरद्वार

९. विश्वम्भरदत्त शर्मा ३

१०. शिवचरन ३

११. गोपीचन्द शर्मा ३

१२. सूर्य भानु गौड़ ३

१३. कृष्णकान्त शर्मा २

१४. बाबूराम शर्मा २

कोटा सहारनपुर के०

१५. तारादत्त शर्मा उपा० ३

१६. राजाराम शर्मा ३

१७. जवाहरलाल शर्मा ३

१८. जीवनसिंह ३

माछरा (मेरठ) के०

१९. गोपीचन्द शर्मा ३

२०. रामस्वरूप शर्मा ३

२१. चन्द्रभान शर्मा ३

भिवानी के०

२२. बन्सीलाल वर्मा ३

२३. जालुराम शर्मा ३

पौटा बबूलपुर

२४. बन्सीधर शर्मा ३

श्री ज्योतिर्विशारद

दल्मोड़ी

१ बचीराम उपाध्याय ३

हिंदी साहित्य विशारद

हैदराबाद सिंध के०

१. गौरीशंकर शर्मा ३

सुराणा के०

२. रामसिंह ३

३. वेगराज शर्मा ३

दल्मोड़ी (अल्मोड़ा) के०

४. बालादत्त मठपाल ३

५. भोलादत्त मठपाल ३

६ मथुरादत्त मठपाल ३

हिंदी वैद्य कविराज

नकोदर के०

१. अयुध्या प्रकाश २

लाहौर के०

२. लछमणदास २

३ बृजलाल २

हैदराबाद सिंध के०

४. जेठानन्द शर्मा ३

इन्दौर के०

५. खुशीराम ३

गोंदिया के०

६. नवलकिशोर वर्मा ३

७. केशव भाऊपवार ३

८. बलवन्तराव २

९. चन्दुलाल पटेल ३

१०. श्रावणनाना जी पवार ३

सुराणा
११. ब्रह्माजीत ३
दल्मोड़ी (अल्मोड़ा) के०
१२. लिलाधर मठपाल ३
१३. प्रेमवल्लभ मठपाल ३
१४. केशवदत्त शर्मा ३
१५. नागेन्द्रदत्त उनियाल ३

श्री आयुर्वेद भूषण राष्ट्रीय
नकोदर के०
१. दौलतराम शर्मा २
लाहौर के०
२. युगल किशोर B.A.LL.B.
सर्व प्रथम
खहरपुर के०
३. प्यारेलाल २
वागेश्वर
४. चन्द्रदत्त शर्मा ३

हिन्दी साहित्य भूषण
गया के०
१ राघवशरणसिंह २

आयुर्वेद शास्त्री
माछरा
१. भवानी शंकर श० २

हिंदी वैद्यशास्त्री
कोदिकापुर
१. श्री गोविन्द शर्मा ३
परीर के०
२. बलदेव प्रसाद मिश्र ३
३. रामगोपाल मिश्र ३
गोंदिया
४. श्यामसुन्दरलाल वा० ३
पीटा कबूलपुर
५. रुद्रदेव मिश्र ३
६. रामाश्रम शर्मा कौस ३
७ मिठनलालशर्मा ३

संस्कृत साहित्य शास्त्री
लाहौर के०
१. मथुरा प्रसाद शर्मा २

हिंदी साहित्य शास्त्री
गया के०
१. सुरेश नारायणसिंह २

हिंदी साहित्य रत्न
सुराणा के०
१. बसन्तलाल पाठक ३

श्री वैद्यवाचस्पति राष्ट्रीय
लाहौर के०
१. रामचन्द्र शर्मा ३

हिंदी साहित्याचार्य
सुराणा के०
१. परमानन्द त्यागी ३

—

कम्पार्ट मैण्ट

निम्नस्थ छात्रों को पूरी २ फीस पुनः देकर परीक्षा एक प्रश्न-पत्र में देनी होगी। परीक्षा १५ नवम्बर १९३५ को होगी। फीस ५-११-१९३५ को कार्यालय में आजानी चाहिए। लेट होने पर लेट फीस साथ में भेजनी होगी।

श्री आयुर्वेद विशारद—कृष्णानन्द जोशी
वागेश्वर प्रथम पत्र
प्यारेलाल गुप्त माछरा दूसरा पत्र
हिंदी वैद्यकविराज—चूनीलाल इन्दौर प्रथम पत्र
व्याकरण भूषण—कृष्णानन्द वागेश्वर प्रथम पत्र
साहित्याचार्य (सं०)—भवानीदत्त शर्मा लाहौर
तृतीय पत्र
आयुर्वेदाचार्य राष्ट्रीय—शिवचन्द्र कोश्यप
लाहौर चतुर्थ पत्र

नोट—आगामी परीक्षायें पहली नियमावली के पाठ्क्रमानुसार २७, २८, २९, ३०, ३१ जनवरी १९३६ को होगी। इसलिए आवेदन पत्र मय परीक्षा शुल्क तथा परीक्षा प्रकाशक-पत्र की फीस ≈) प्रति छात्र के हिसाब से २५ दिसम्बर १९३५ तक कार्यालय में पहुँच जाने चाहिए।

सन् १६३५ ई० नवम्बर २ से ५ तक

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय म सम्मिलित पंचमहाभूत परिषद् के निर्णय

काशी,

ता० ७—११—३५

तीन दिन पर्यन्त पञ्चमहाभूत परिषद् में पञ्च-महाभूत सिद्धान्त के सम्बन्ध में प्राच्य प्रतीच्य विज्ञान की दृष्टि से जहां तक विचार विनिमय हुआ है उससे हम लोग जिस निर्णय पर पहुंचे हैं वह यह है कि:—

(क) प्रतीच्य वैज्ञानिकों के पदार्थ वर्गीकरण का दृष्टिकोण एवं मुख्य लक्ष्य प्राचीन ऋषियों के दृष्टिकोण एवं मुख्य ध्येय से अत्यन्त भिन्न है। ऐसा होते हुए भी परिषद् में होने वाले वादविवाद से हम लोग एक ऐसी भूमिका का अनुभव कर रहे हैं, कि आगे चलकर हम लोग ऐसे सम्मेलन के द्वारा किसी एक उपादेय निर्णय को प्राप्त कर सकेंगे, जो कि प्रत्यक्ष तथा अनुभवात्मक तर्क पर स्थित हो सकेगा।

(ख) इस समय तक प्रतीच्य वैज्ञानिकों के द्वारा किये हुये बानवे ९२ मूलतत्त्वों एवं तन्मूलभूत विद्युतकणों के वर्गीकरण की दृष्टि से पञ्चमहाभूत वर्गीकरण सिद्धान्त का विचार करने से परिषद् इस निश्चित मत पर पहुँच चुकी है कि इन वर्गीकरणों का परस्पर कोई विरोध नहीं है।

श्री प्रमथनाथ शर्मा (महामहोपाध्याय)
फणिभूषणतर्कवागीश (महामहोपाध्याय)
सत्यनारायण शास्त्री वैद्य
श्री शङ्कर तर्करत्न
जि० श्रीनिवासमूर्ति (कप्टन)
बालकृष्ण अमरजी पाठक (डाक्टर)
श्री मधुसूदन विद्यावाचस्पति
श्री गणनाथ सेन शर्मा (महामहोपाध्याय)
लक्ष्मीराम स्वामी
श्रीधर सर्वोत्तम जोशी (प्रोफेसर)
श्री राजेश्वर शास्त्री द्रविड
श्री देवनायक आचार्य

——

इस के पश्चात् १ रुपया प्रति छात्र लेट फीस का देना होगा। जवाब के लिए टिकट या जवाबी पोस्ट कार्ड आना चाहिए। नियमावली -)। सवा आने का टिकट आने से भेजी जाती है। नया पाठ्य-क्रम जौलाई १६३६ की परीक्षाओं के लिए नियत किया गया है।

नारायण प्रसाद गोप।	वेदव्यासदत्त शर्मा	टीकाराम उनियाल
B. A. LL. B. वकील		D. Sc. A वैद्यशास्त्री
सभापति	प्रधानमन्त्री	रजिस्ट्रार

१९३५ तमेशवीय वर्षे नवम्बर मासे ५ तः ८ दिन पर्यन्तं

काशीहिन्दुविश्वविद्यालये सम्मिलितायाः त्रिदोषचर्चापरिषदो निर्णयाः

१ सर्वायुर्वेदकार्यमूलभूतत्वात् त्रिदोषज्ञानं सप्रयोजनम्।

२ वातादीनां धातुत्वं दोषत्वं मलत्वं च अवस्थाविशेषेणाभिव्यज्यते। तच्च परस्पराविरुद्धम्।

३-४ सर्वप्राकृतकर्मसु सकर्तृत्वनियामकत्वे मति स्वातन्त्र्येण दूषणशीलत्वं दोषत्वम्। तच्च वातादिष्वेव नान्यत्र। तस्मात् त्रय एव दोषाः।

५ शक्तेर्द्रव्याधिष्ठितत्वेन स्वतन्त्रावस्थित्यभावात् वातादीनां न शक्तित्वं किन्तु द्रव्यत्वमेव।

६ पित्तकफयोरवस्थाभेदेन स्थूलत्वं (चक्षुरिन्द्रियग्राह्यत्वम्) सूक्ष्मत्वं (चक्षुरिन्द्रियाग्राह्यत्वम्) वायोस्तु पित्तकफापेक्षया सूक्ष्मत्वम्। अव्यक्तो व्यक्तकर्मा च इत्यभिधानात्। उपाधिनिष्ठस्य तु वायोर्बहिरिन्द्रियग्राह्यत्वमपि नीलं नभ इतिवत्

७ अन्त्यप्रोपगृहीतानि पञ्चमहाभूतान्येव वातादीनामुपादानानि। तदुत्पत्तिक्रमस्तु चरके शारीरस्थाने ४ अध्याये निर्दिष्टः। यथा 'तत्र पूर्वं चेतनाधातुः सत्वकरणो गुणग्रहणाय प्रवर्तते।... स गुणोपादानकाले अन्तरिक्षं पूर्वतरमन्येभ्यो गुणेभ्य उपादत्ते; प्रलयात्यये सिसृक्षुर्भूतान्यक्षरभूतसत्वोपादानः पूर्वतरमाकाशं सृजति; ततः क्रमेण अव्यक्तान् धातून् वाय्वादिकांश्चतुरः, तथा देहग्रहणेऽपि प्रवर्तमानः पूर्वतरमाकाशमेवोपादत्ते, ततः क्रमेण व्यक्ततरगुणान् धातून् वाय्वादिकांश्चतुरः, सर्वमपि तु खल्वेतद् गुणोपादानमणुना कालेन भवति।"

८ वातादीनां स्वरूपं (तन्मात्रविषयकधीविषयः) चरकोक्तं वायोः "रौक्ष्यं लाघवं वैशद्यं शैत्यं गतिः अमूर्तत्वं चेति वायोरात्मरूपाणि।" पित्तस्य "औष्ण्यं तैक्ष्ण्यं लाघवं अनतिस्नेहो वर्णश्च शुक्लारुणवर्ज्यो गन्धश्च विस्रो रसौच कटुकाम्लौ पित्तस्यात्मरूपाणि।" श्लेष्मणस्तु "स्नेहशैत्यशौक्ल्यगौरवमाधुर्यमात्स्न्यानि श्लेष्मण आत्मरूपाणि भवन्ति।" गुणाः कर्माणि च ग्रन्थोक्तान्ये।

९ वातादीनां प्रत्येकं पञ्चविधत्वं वास्तविकम्, तच्च स्थानकार्यभेदोत्पन्नं, कार्यस्वरूपभेदस्तु तन्निबन्धन एव।

१० रोगान् प्रति सदूष्याणां वातादीनां समवायिकारणत्वं सूक्ष्मरूपाणान्तु निमित्तकारणत्वम्। दोषदूष्यसम्मूर्छनायाश्च असमवायिकारणत्वम्। रोगविशेषान् प्रति कीटादीनान्तु निमित्तकारणत्वम्।

श्री मधुसूदन विद्यावाचस्पतिः जयपुरम्
बालकृष्ण अमरजी पाठकः (डाक्टर
लक्ष्मीराम स्वामी
गणनाथ सेन शर्मा
जि० श्रीनिवासमूर्तिः (कैप्टन)
सत्यनारायण शास्त्री वैद्य
श्री राजेश्वर शास्त्री द्राविडः
श्री देवनायक आचार्यः

सभाया विस्तृततिवृत्तविवरणं तु शीघ्रमेव पृथक् संमुद्रय प्रकाशयिष्यते।

यादवजी त्रिकमजी आचार्य
मन्त्री

साहित्य समालोचना

त्रिधातुवाद

इस पुस्तक की पृष्ठ संख्या लगभग १७५ है छपाई, सफ़ाई,कागज सब ही उत्तम व प्रशंसनीय हैं। मूल्य १)

यह आयुर्वेद के आधारभूत त्रिदोष पर दार्शनिक, वैज्ञानिक सिद्धान्तानुसार विद्वत्तापूर्ण एक विस्तृत निबन्ध है। इसके लेखक भारत के माननीय प्रसिद्ध विद्वान् वैद्यों में से एक श्री शालिग्राम शास्त्री साहित्याचार्य महोदय हैं। आप हिन्दी और संस्कृत के बड़े ओजस्वी लेखक हैं। किसी भी कठिन से कठिन शास्त्रीय विषय को क्रमशः अकाट्य युक्ति व तर्क तथा प्रमाण सहित प्रतिपादन करना आपकी लेखनी का नैसर्गिक गुण है, आपने इस पुस्तक के प्रारम्भ में तन्त्रान्तरीय पदार्थों का आयुर्वैदिक पदार्थों के साथ समन्वय तथा वात, पित्तादि का सत्व, रज, तमादि से विरुद्धत्व प्रतिपादन इत्यादि आप के विद्वतापूर्ण लेख मनन करने योग्य हैं। इसी प्रकार आगे चलकर ऋग्वेदादि वैदिक प्रमाणों के साथ आधुनिक विज्ञान सम्मत पदार्थों की तुलना करते हुए, यूनानी, एलोपैथीक, होम्योपैथिक इत्यादि चिकित्साओं की अपूर्णता को दिखाते हुए इस पुस्तक को अत्यन्त उपयोगी बनाया है।

हम शास्त्री महोदय की इस कृति का हृदय से स्वागत करते हैं तथा वैद्य बन्धुओं से हमारा निवेदन है कि वे इस पुस्तक से अवश्य लाभ उठावें।

प्रति संस्कृत निदान चिकित्सा का फिरंगोष्णवात व्याख्यान

लेखक श्री पं० घनानन्द जी पन्त विद्यार्णव साहित्याचार्य, देहली। पृष्ठ संख्या ३४

यह एक अल्प कलेवर वाला संस्कृत भाषा में आतशक, सूज़ाक विषयक उत्तम निबन्ध हैं, इस में आयुर्वेदोक्त उपदंश के साथ २ आतशक (फिरंग रोग) की भिन्नता सूज़ाक (गनोरिया) उष्ण वातादि के लक्षण, निदान चिकित्सा बड़ी उत्तमता के साथ लिखी गई है पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है।

दिगम्बर जैन का कहानी अंक

पृष्ट १२२ मूल्य ॥)

यह जैन समाज का गुजरात से निकलने वाले दिगम्बर जैन का बड़ी सज धज के साथ प्रकाशित हुआ एक विशेषांक है, जो कि हिंदी और गुजराती दोनों भाषाओं में है। इस की छपाई कागज वग़ैरह सभी चित्ताकर्षक हैं, इस में अनेक सुन्दर शिक्षा प्रद कहानियों के साथ २ लेखक महोदयों के चित्र भी मौजूद हैं। अंक मनन करने योग्य है। इसमें जैन समाज का अत्यन्त उपकार हो सकता है।

———

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तैयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ़ करने के लिए सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिए केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि इसकी मालिश से लिंगेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता; छोटापन, टेढ़ापन, व पतलापन दूर होकर, इन्द्रियों में दृढ़ता, स्थूलता और दीर्घता आ जाती है, जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वंचित (महरूम) हुवे अनेक पुरुषों ने इससे आशातीत लाभ प्राप्त करके इस दिव्यौषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०) ३ माशे की शीशी २॥)

श्री कामदेव रसायन की सुनहरी गोलियां

ये गोलियां अत्यन्त पौष्टिक और स्नायविक दुर्बलता तथा बाल्यावस्था में किये गये अनुचित कार्यों से अथवा युवावस्था में की गई असावधानियों से उत्पन्न हुई नपुंसकता को दूर करने में जादू का असर रखती हैं। इनके थोड़े ही दिन के सेवन से शक्ति अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त हो जाती है, भूख खूब लगती है, जो भोजन खाया जाता है, उसका आहार रस बना कर शरीर को मोटा, ताजा, सुन्दर सुडौल और ताकतवर बना देती हैं। मुख सुन्दर, तेजस्वी हो जाता है, और खास कर दिमाग़ी काम करने वालों के लिए ये गोलियां निहायत अकसीर हैं, हर मौसिम में इस्तेमाल की जा सकती हैं। कीमत ४८ गोलियों की शीशी २) दो रुपया। तीन शीशियों के ५) डाक व्यय पृथक।

नस ढीली की पोटलियां

(नामर्दी की अजीब दवा)

जिस पुरुष ने हस्त मैथुन, प्रकृति विरुद्ध मैथुन, अकाल मैथुन, और अति मैथुन से लिंगेन्द्रिय को बेकार कर लिया है, उन मनुष्यों को इन पोटलियों की एक हफ्ते तक सेक करने से लिंग में कैसा ही ढीलापन और सुस्ती व कमज़ोरी हो निहायत ताक़त आ जाती है। बूढ़े को मानिन्द जवान के कर देती हैं। मूल्य १४ पोटलियों का जो एक सप्ताह के लिए काफ़ी है सिर्फ़ ३) हैं, डाक व्यय आदि पृथक।

अजीब व ग़रीब तिला

बचपन की खराब आदतों व युवावस्था की अत्यन्त विषय वासना, हस्त मैथुन इत्यादि से जो इन्द्रिय छोटी, पतली, टेढ़ी और दुर्बल हो जाती है इसके थोड़े ही दिन लगाने से ये सब शिकायतें बहुत जल्द दूर होकर लिंगेन्द्रिय स्थूल और दृढ़ हो जाती है, और मैथुन शक्ति प्रबल होकर पुरुष सन्तानोत्पत्ति के योग्य हो जाता है, और इससे किसी प्रकार की हानि नहीं होती, और न छाला वग़ैरा ही पड़ता है मूल्य ! शीशी २) छोटी शीशी १।) बड़ी तीन शीशियां ५) डाक व्यय आदि पृथक।

शेरनी के दूध का सुरमा

(रजिस्टर्ड)

यह हमारे औषधालय का तैयार किया हुआ अजीबो ग़रीब सुविख्यात सुरमा है। इसमें शेरनी के दूध के लिये जो मुल्क आसाम के भीलों में मिलता है बड़ी मेहनत करनी पड़ती है। मोती, मूंगा, फीरोज़ा,लाल बदखशानी,ज़मर्रुद;याकूत,अक़ीक यमनी, लाजवर्द मगासल चांदी,सोना मक्खी, दहना फरंग, जाफ़रान, मुश्क, अम्बर, मामीरान चीनी, भीमसैनी कपूर, संगबसरी, सुर्मा अस्फहानी वग़ैरा ४० क़ीमती अदवियात में सबज़ हरड़ के पानी में ६ माह तक कांसे के सिलवट्टे पर पीसा जाता है, बाद अर्से दराज़ तक नीम की जड़ को खोखला करके उसमें रखते हैं, इसके बाद दो बार पीस कर काम में लाया जाता है, इसके इस्तेमाल से बहुत दिनों का अन्धापन बशर्तेकि आंख की बनावट में बिगाड़ न आया हो अच्छा हो सकता है। इसके सेवन करने वाले को आंख का कोई रोग नहीं हो सकता, दृष्टि को साफ़, तेज़ और रौशन करता है, ऐनक लगाने की आदत छुड़ा देता है आंखों की कमजोरी, शुरू मोतियाबिन्द, आंखों की धुन्ध, जाला, फूला, खारिश, ढलका ना,खूना वग़ैरा आंख की बीमारियों में मुजर्रब है। मूल्य फ़ी तोले ४) नमूने की शीशी ॥)।

मोतियों का सफ़ेद सुरमा

यह सुर्मा हमने उन साहिबानों के लिये तैयार किया है कि जो काला सुरमा लगाना पसन्द नहीं करते, इसके तमाम गुण शेरनी के दूध वाले सुर्मे के मानिन्द ही हैं।

मूल्य फी तोले ४) नमूने की शीशी ॥)

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार, देहली।

जीवनसुधा
की
पुरानी फाइलें समाप्त हो चलीं
शीघ्रता कीजिए नहीं तो पछताना पड़ेगा ।
क्योंकि ?
यह आप को पीयूषपाणी कुशल चिकित्सक बनाएँगी ।
इनके अन्दर देखिए—
बड़े बड़े कविराजों, डाक्टरों, हकीमों के सिद्ध अनुभवी
खानदानी नुसखों को ।
इसके अलावा
सारगर्भित अच्छे २ लेखों को जिन को पढ़ कर
आप वैद्यक के विद्वान बन जायेंगे ।
पीछे के चारों वर्ष का फाइलें विशेषांकों सहित सिर्फ ८) मात्र
मैनेजर—
जीवनसुधा कार्यालय,
चांदनी चौक, देहली ।

REGD. NO L. 2701.

JIWANSUDHA.

जीवन-सुधा

स्वर्गीय रसायन शास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज

संस्थापक—जीवनसुधा और बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, देहली।

सम्पादक—प्रोफ़ेसर प० महादेव शर्मा आयुर्वेदाचार्य

वार्षिक मूल्य २)   प्रति अङ्क ।)

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ।)। सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वैदिक, यूनानी, एलोपैथिक होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख कविता अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर बृहत् आयुर्वैदीय औषध भाण्डार देहली के नाम भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुँचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्ता

विज्ञापन छपाई का रेट

संस्थापक—

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीरप्रसाद जी राजवैद्य।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः। पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्॥

वर्ष ६ { फाल्गुन, वीरनिर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९९२, जनवरी-फरवरी १९३६ } अङ्क १

बक और कोयल

तीर में बिठाते जो बिचारे जल जीव तुम्हें,
सहते वहीं तो फिर घात के कसाले हैं।
कैसी है तुम्हारी यह कपट कुटिल नीति,
आश्रित उन्हीं के हो, उन्हीं के घर घाले हैं॥
फिर भी बने हो तुम साधु मौनधारी खूब,
रहते यद्यपि पर-घात ही के लाले हैं।
आले हैं तथापि आप बक से निराले कहीं,
यदि कहे जाते हम कोयल से काले हैं॥

(अखिकेश-माधुरी)

पंचमहाभूत व त्रिदोष सम्बन्ध

लेखक—श्री० पं० विश्व नाथ जी शास्त्री, प्रिन्सिपल ललित हरि कालेज 'पीलीभीत'

आयुर्वैदिक चिकित्सा का मूल स्थान शरीर है जो कि पांच महाभूतों का संयोग स्वरूप माना गया है।

खादयश्चेतना षष्ठा धातवः पुरुषः स्मृतः

च० शा० १ अ०

पंच महाभूत व आत्म संयोग का नाम पुरुष है यही पुरुष चिकित्सा में अधिकृत है। यदि इन के अनुकूल चिकित्सा सामंजस्य स्थिर न हो तो नैरोग्य रह ही नहीं सकता अतः इस शरीर रक्षा के निमित्त जिन पदार्थों को काम में लाया जाता है वह भी पंचमहाभूतात्मक है

सर्वं द्रव्यं खलु पाँचभौतिकम्

अतः हीनातिरिक्त मात्रा को समावस्था में परिणत करना चिकित्सा का मूल माना गया है।

'पंच महाभूत' इस शब्द का संयोग शरीर (पुरुष) व द्रव्य दोनोंमें ही है। अब इनके विकास क्रम को देखा जावे कि वास्तव में पंच महाभूत, शरीर व द्रव्य की भित्ति हैं या नहीं?

महाभूतों का प्राचीन इतिहास

प्राचीन काल से ही षड् दर्शनों का प्राधान्य एतद्विषयक रहा है जिन में दो दर्शनों (न्याय व सांख्य) ने भौतिक परमाणुओंका जिन से धरातल पर दृष्टि गोचर होने वाले प्रत्येक द्रव्य निर्मित है प्रत्यक्ष क्रिया विज्ञानों के साथ, गंभीर विवेचन व विश्लेषण पूर्वक निरूपण किया है। वर्तमान वैज्ञानिक केवल मानसिक उत्थान को ही विज्ञान समझकर धरातलस्थ द्रव्यो के साथ उन दर्शनों के सम्बन्ध को नहीं समझ पाते हैं।

न्याय व सांख्य दर्शन द्रव्य सिद्धान्त को जितनी सरलता व प्रत्यक्ष क्रिया विज्ञान द्वारा समझाता है वह आधुनिक विश्व रचना सिद्धांत से बिल्कुल मिलता जुलता है।

उदाहरणार्थ—

न्याय दर्शन

को जो सर्व प्राचीन है लीजिए। आचार्य 'कणाद' इसके आविष्कर्ता हैं। जिनका विचार यह है कि—

सम्पूर्ण विश्व परमाणुओं (Atoms) से बना है। परमाणु किसी द्रव्य के विभाग की अंतिम चरम सीमा का नाम है जिसके कि पुनः टुकड़े नहीं किये जा सकते। इनका जब एक दूसरे के साथ संयोग होता है तो एक नूतन गुण पैदा होता है। जैसे शरीर व मन के परमाणुओं का योग जीवन है। यह अत्यन्त सूक्ष्म व नित्य हैं। यह आपस में मिल कर के सृष्टि को पैदा करना आरम्भ कर देते हैं। यही

आरम्भवाद

कहलाता है।

पाश्चात्य वैज्ञानिक डाल्टन का परमाणुवाद (Atomic Theory) भी ठीक यही है। किंतु कुछ दिनों के बाद भारत भूमि ने पुनः एक नवीन वैज्ञानिक पैदा किया जिस को 'कपिल मुनि' के नाम से पुकारा गया जो कि

साँख्य दर्शन

के आविष्कर्त्ता हुए। वह जिस तरह डर्विन ने डाल्टन की ऐटॉमिक थ्योरी का खण्डन किया व अपना विकासवाद (Evolution Theory) प्रकट किया था उससे ६००० वर्ष पहले ही कपिल ने कणाद के परमाणुवाद को सांख्य दर्शन के द्वारा खण्डित कर दिया था।

क्योंकि कणाद का सिद्धान्त परमाणुओं में एक दूसरे के मिलने में गति को नहीं स्पष्ट कर पाया था। न जड़ द्रव्य से ही चैतन्य की उत्पत्ति कैसे हुई, अर्थात् वनस्पति, प्राणि व मनुष्य की उत्पत्ति इन परमाणुओं के द्वारा किस प्रकार हुई थी यह ही सिद्ध कर सका।

इन महर्षि का यही सिद्धान्त था कि "विश्व की सृष्टि केवल मात्र द्रव्य के द्वारा ही हुई है जो विश्व रचना के पूर्व यहाँ मौजूद था। यही डार्विन व लामार्क नामक पाश्चात्य वैज्ञानिक भी मानते हैं।

वाष्प-मय-पिण्ड-पद्धति

इन लोगों का भी यही सिद्धाँत है कि सृष्टि सर्व प्रथम एक वाष्पमय जाज्वल्यमान पिण्ड से हुई है जो इसके गुरुत्वाकर्षण द्वारा भिन्न २ टुकड़ों में विभाजित हो गया व जिससे ग्रह उपग्रह सब बने। पृथ्वी भी उन में से ही एक है, जो धीरे धीरे बड़ी हो करके इस रूप में हो गई। इसमें सब वस्तुएं उपस्थित थीं और सृष्टि इससे ही उत्पन्न हुई है।

उस समय यह सब पदार्थ जिन्हें परमाणु के नाम से पुकारते हैं हर एक तत्व के रूप में संगृहीत थे। सृष्टि विकास के समय की ही उन सबों की उपस्थिति आज भी पाई जाती है। उन्हीं के परमाणु अब तक पारस्परिक संयोग से सृष्टि उत्पन्न करते हैं और ये वे ही पदार्थ हैं जो सृष्टि के पूर्व में मौजूद थे।

इस तरह प्राचीन व अर्वाचीन सब विद्वानों की सम्मति स्पष्ट कहती है कि विश्व की सृष्टि केवल एक मात्र द्रव्य से हुई है जो सृष्टि के पूर्व में मौजूद था।

कपिल मुनि का मत

महर्षि कपिल का कथन है कोई वस्तु सृष्टि में नवीन नहीं है और न हो सकती है। यदि मान लिया जावे कि शून्य सर्व प्रथम वर्तमान था तो शून्य, शून्य के सिवाय किसी अन्य वस्तु की उत्पत्ति नहीं कर सकेगा। अतः जो कुछ भी वस्तु सृष्टि में हैं उनके गुण व कार्य उस वस्तु में सूक्ष्म रूप में वर्तमान होते हैं। और होना ही चाहिए। जैसे वट वृक्ष व बीज अर्थात् बीज में वृक्ष की उपस्थिति है जो कुछ काल में सम्पूर्ण वृक्ष का आकार धारण करता है, चाहे वह कितने ही सूक्ष्म रूप में हो और वैज्ञानिक भले ही वृहत् से वृहत् अणुवीक्षण यन्त्र के द्वारा उसे अनुभव न कर सकें, किंतु कोई इस बात को मानने पर कभी तैयार नहीं हो सकेगा कि वट वृक्ष वट बीज के अन्दर नहीं है। इस सिद्धान्त को "सत्कार्यवाद या आधुनिक विद्वानों द्वारा प्रिंसिपल आफ कंनजर्वेशन आफ इनर्जी (Principle of conservation of Energy) कहते हैं। यह दोनों प्रायः एक ही सिद्धान्त हैं।

उत्पत्ति

जब सत्कार्यवाद का आश्रय लिया जाता है तब शून्य से उत्पत्ति कोई नहीं मान सकता। अतः जिस पदार्थ से उत्पत्ति होनी है उसे प्रकृति का स्वरूप दिया गया है। प्रकृतिही उत्पादक शक्ति है जिसके ८ भेद व १६ षोडश विकार होते हैं, जिनके अंतर्गत पंचमहाभूत भी हैं। आज हम उन सूक्ष्म पदार्थों का विवेचन न करके पंचमहाभूत के ही ऊपर कुछ विचार प्रकट करते हैं। बाकी का वर्णन अच्छी तरह संहिताओं, दर्शन, व सांख्य में लिखा है।

पंचमहाभूत संज्ञा का हेतु

विराट विश्व के पदार्थों के ज्ञानार्थ हमें प्रकृति के तरफ से पाँच ज्ञानेन्द्रियां प्राप्त हैं, कर्ण, चक्षु, जिह्वा, नासिका व त्वचा। उष्ण व शीत का ज्ञान हम त्वचा से, षड्रसों का ज्ञान जिह्वा से हरएक पदार्थों का दर्शन नेत्र से, बुरा अच्छा गंध घ्राणेन्द्रिय से, हर प्रकार के मधुर व कटु शब्द कर्ण के द्वारा ज्ञान लाभ करते हैं। इन पाँच इन्द्रियों के अतिरिक्त कोई भी ऐसा साधन नहीं है जिसके द्वारा हम किसी पदार्थ का अनुभव कर सकें। इन प्रत्येक इन्द्रियों में आकाश, अग्नि जल, पृथ्वी व समीर की उपस्थिति क्रम से अधिक है। यद्यपि सर्व शरीर पंच तत्व मय है किंतु उनकी उपस्थिति इन पाँच स्थानोंमें अधिक है जिनसे तज्जन्य वस्तुओं का ज्ञान करने का साधन भूत यह यन्त्र हैं। चाहे वैज्ञानिक लाख सिर पटका करें किंतु वे वस्तु ज्ञान के निमित्त किसी नई इन्द्रिय की प्राप्ति नहीं दिखला सकते। चाहे बड़े से बड़े, सूक्ष्म से सूक्ष्मतम यन्त्र निर्मित हो जाएं मगर वैज्ञानिक इन पंच ज्ञानेन्द्रियों के अतिरिक्त किसी षष्ठेन्द्रिय द्वारा नहीं कर सकते इस क्रांति की उत्पत्ति हम उस प्राचीन काल में भी पाते हैं। जब कि इस सांख्य दर्शन का प्रथम प्रारम्भ था। बहुत वाद विवाद के बाद यही तय हुआ जो सब जानते हैं। अतः पंचतन्मात्राओं से पंचभूत की ही उत्पत्ति हुई।

यह स्थूल व सूक्ष्म दो प्रकारके हैं। वर्तमान वैज्ञानिक जिस स्थान से इस विचार का श्री गणेश करते हैं व ९२ तत्व मानते हैं स्थूल भूत उनके लक्ष्य होते हैं। उनकी यन्त्र योजना सूक्ष्म तक तो पहुँच ही नहीं पाती। वे इस स्थूल पृथ्वी को पृथ्वी, द्रव जल को जल, इसी तरह वायु, अग्नि और आकाशका जो सूक्ष्म तत्वोंके संयोगसे बने हैं पंच तत्व कह कर के अपने यंत्र परिचालित करते हैं। जल को हाइड्रोजन आक्सिजन का संयोग (Cmpound) व हवा को आक्सिजन नाइट्रोजन व कार्बन का योगज बतलाते हैं, महान् भूल पर हैं। उन्होंने सांख्यके पंच तत्व का परिशीलन, बुद्धितत्व व आनुभविक पद्धतियों से करके यांत्रिक पद्धति से करना चाहा है। यांत्रिक गति स्थूल से शुरू होता है सूक्ष्म वायु का विवेचन भला वे निरीह यंत्र क्या जाने ? जो कुछ जानते हैं वे भी पंच ज्ञानेन्द्रियों के संयोग का द्वारा।

अस्तु वे वैज्ञानिक जो पृथ्वी तत्व का अर्थ मिट्टी या कीचड़ लगाते हैं अधूरे पथ के पथिक हैं। यहां पर हम पाश्चात्य वैज्ञानिक प्राउट का मत आप के सम्मुख रखेंगे जिसमे हर एक तत्व में आक्सिजन का योग (परमाणु) मिश्रित है ज्ञान कराता है। पहले हम सूक्ष्म व स्थूलभूतों का परिचय कपिल मुनि के वचनों में इस तरह पाते हैं।

सूक्ष्मा माता पितृजा, सह प्रभूतैस्त्रिधा विशेषाः स्युः। सूक्ष्मा स्तेषां नियता, माता पितृजा निवर्त्तन्ते ॥

सां० का० ३९

अर्थात् पंच तन्मात्राओं से जो पंच महाभूत उत्पन्न होते हैं वह सूक्ष्म व स्थूल दो प्रकार के हैं। सूक्ष्म व स्थूल का उदाहरण-जैसे माता पिता के सूक्ष्मांश, रज व धातु के संयोग से माता के अन्दर उसके भुक्त पदार्थों द्वारा परिवर्द्धित हो कर शरीर का रूपधारण करता है अन्त में नष्ट होता है। यही स्थूल शरीर नाश वान होता है व लिंग शरीर द्वारा सूक्ष्म रह कर के पुनर्जन्मादि का कारण बनता है। और वही सूक्ष्म शरीर पूर्वजन्मादि कृत पुण्य या पापों का उपभोग करने के निमित्त अन्य शरीर में प्रविष्ट होता है। ये पंचमहाभूत अत्यंत सूक्ष्म हैं। इन सूक्ष्म पंचमहाभूतों के पारस्परिक संयोग से स्थूल महाभूत (योगज) बनते हैं जिन को हम दृष्टि द्वारा प्रत्यक्ष करते हैं या जिन को मिट्टी या कीचड़ कह कर के क्षुद्र अल्प कुछ वैज्ञानिक पृथ्वी तत्व कहते हैं। महर्षि चरक ने तो स्पष्ट इस बात को लिखा है कि हर एक भूत संयोजक हैं केवल आकाश योगज (Oxygen) नहीं है (इसी को शार्ङ्गधर ने विष्णु पदामृत या अम्बर पीयूष कहा है। वही आकाश तत्व केवल विशुद्ध होता है। यथा—

एकैकाधिक युक्तानि, खादीनां इन्द्रियाणि तु। पञ्चकर्मानु मेयानि, येभ्यो बुद्धिः प्रवर्तते ॥

च० शा० १ अ० २२ श्लोक

स्पष्ट शब्दों में शब्द गुण वाला आकाश, शब्द और स्पर्श गुण वाला वायु, शब्द स्पर्श रूप गुण वाला अग्नि और शब्द, स्पर्श, रूप, रस गुण वाला जल, तथा शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध,

गुण वाली पृथ्वी होती है। इस प्रकार एक महा-भूत एक एक गुण, पूर्व महाभूत वाले का लेता जाता है इन से निर्मित इन्द्रियाँ हैं जिन से ज्ञान होता है। तथा—

एकैकाधिक युक्तानि, खादीनां इन्द्रियाणि तु।

इत्यादि स्पष्ट निर्देश हैं।

गुण व गुणी एक साथ ही रहते हैं। जब गुण मौजूद है गुणी अवश्य उसी के साथ होगा। प्रैक्टिकल भी जैसे कि आकाश का गुण या आकाश हर एक में मौजूद है वैसे ही १९ वीं शताब्दी का प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्राउट भी ठीक यही शब्द कहता है। जिस का अनुवाद अधो लिखित है—

"प्रत्येक मौलिक पदार्थ का परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु का समष्टि है"। इस को प्राउट का मतवाद (Prout's Hypothesis) कहते हैं, ठीक यही शब्द किन्तु इससे अस्पष्ट शब्द डाल्टन (Dalton) नामक प्रमुख रासायनिक विद्वान् कहते हैं।

"प्रत्येक पदार्थ कुछ अणु (Molecule) या परमाणु (Atom) का समष्टि है"।

वास्तव में जो कुछ मौलिक पदार्थ पाये जाते हैं प्रत्येक मौलिक पदार्थ (Element) का अणु (परमाणु समष्टि) विभिन्न तरह का है जिन की संख्या पर द्रव्य के गुणागुण निश्चित हैं। वर्तमान परमाणुवादियों का जन्म दाता 'लार्ड रूथरफोर्ड' है जो कि अपने आविष्कार के अंत में जा कर प्राउट के इस मत को स्वीकार करता है। बिजली के प्रयोगों द्वारा रासायनिक जिस परिणाम पर पहुंचे हैं वह एलेक्ट्रोण, प्रोटोन और न्यूट्रोण का आविष्कार है जिसको रेडियम के आविष्कार ने और भी सरल बना दिया है। प्रोटोन-हाइड्रोजन के लघुतम परमाणु के केन्द्र में योगात्मक वैद्युतिक शक्ति सम्पन्नता को कहते हैं। उसके चारों तरफ एक वियोगात्मक वैद्युतिक शक्ति सम्पन्न एलेक्ट्रोण घूम रहा है यही एलेक्ट्रोण है। इस तरह के सूक्ष्म परमाणुओं में भी योगात्मक वियोगात्मक शक्तियों की क्रियाशीलता प्राउट के मत को पुष्ट करती है। रूथरफोर्ड भी इसी निश्चय पर पहुंचा है।

इस तरह प्रत्येक प्राच्य व पाश्चात्य वैज्ञानिक व रासायनिक विद्वानों के दृष्टिकोण इस विषय में एक हैं। इस में जो कुछ अपक्व बुद्धि अपने को वैज्ञानिक कह कर पंच महाभूत में दोषारोपण करते हैं घोर अन्धकार में हैं। सूक्ष्म पदार्थ का विवेचन रासायनिक नहीं कर सकते वह स्थूल द्रव्य को ही सूक्ष्म से सूक्ष्म भाग में विभाजित कर सके हैं अतः उन्हें सूक्ष्म महाभूत का ज्ञान होना असंभव है। आजकल के वैज्ञानिक भविष्य के विज्ञान अन्धकार का अनुभव कर के चुपचाप हैं उन्हें कोई नया मार्ग नहीं मिलता जिस से वे अपनी क्रियात्मक शक्ति को अग्रसर कर सकें। वे क्या सूक्ष्म तत्व का निर्णय कर सकते हैं। बुद्धि पूर्वक विचार करने के बाद ही इस का अनुभव किया जा सकता है।

अतः पंच महाभूत ही हो सकते हैं और हैं। ९२ भूत तो संयोगज हैं। इनके प्रत्येक परमाणु आक्सिजन अणु से युक्त हैं हर एक में

जुकाम, प्रतिश्याय (Catarrh सर्दी)

ले० द्विवेदी पं० दयाशंकर शर्मा वैद्यरत्न नोवा, शाहबाद (बिहार)

(गताङ्क से आगे)

पाठक ! मेरे अब तक विवेचन से आपने भली-भाँति समझ लिया होगा कि प्रकृति हमारी रक्षा करती है, तथा रक्षार्थ सदा कमर कसे तैयार रहती है। प्रकृति, हमारे शरीर के अन्दर एकत्रित हुए दोषों (मल विशेष) को बाहर निकाल, हमें सदा आरोग्य रखने में प्रयत्न शील रहा करती है।-छोटा सा उदाहरण जो इसी विषय "प्रतिश्याय" से सम्बन्ध रखता है। आपके समक्ष उपस्थित कर रहा हूँ, कृपया गौर कीजिए प्रतिश्यायावस्था में नाक के द्वारा जो पतला पानी सा पदार्थ (कफ-स्वरूप में) निकला करता है, वो पकने पर पीला हो जाता है, यह क्या है ? जनाब ! यह प्रकृति देवी की कृपा का ही सुन्दर परिणाम है उसे आप प्रकृति देवी की कृपा ही समझिए जो अपने स्वभाविक नियम द्वारा आपके मस्तिष्क में संचय हुए दूषित मल (दोष) तथा दिमाग की खराब और तकलीफ़ देने वाली वस्तुओं को मस्तिष्क से

संयोगात्मक व वियोगात्मक शक्ति सम्पन्न एले-क्ट्रोन व प्रोटोन घुसे हैं फिर किस प्रकार इन्हें भूत या तत्व या मौलिक पदार्थ कह सकते हैं ? इस का खण्डन तो उनके मौलिक तत्व के परि-भाषा से भिन्न होने से खण्डित हो जाता है। पंच महाभूत को हमारे महर्षियों ने दिव्य ज्ञान चक्षुओं से ही नहीं देखा था। वे प्रैक्टिकली इसी निर्णय पर पहुंचे थे। वह विधि सर्वमान्य हुई और पीछे से यही पंचभूत आगे भी आविष्कृत व परिचालित प्रैक्टिस में वैसे ही भिन्न भिन्न भेदों को बतलाते हैं। अन्त में जा कर उससे त्रिदोष की उत्पत्ति हुई और यही शरीर के रक्षक, विधायक व पोषक सिद्ध हुए। और अब तक भी हम बराबर उसे मान रहे हैं।

पंच महाभूत का खण्डन अतिक्रमण नहीं कर गई, त्रिदोष असिद्ध नहीं हुवे, बल्कि कुछ दिनों के बाद वही समय दिखलाई देने वाला है जिस पर पंच महाभूत की थ्योरी सिद्ध होगी और रोग व शरीर पोषण के मूल त्रिदोष ही समझे जायगे। अस्तु इस विषयको यहीं छोड़ कर आगे के लेख में त्रिदोष व पंच महाभूत के सूक्ष्म सम्बन्ध को विस्तार स्वरूप से सबों के सामने रखेंगे। आशा है विद्वान् पाठक इसे आदर की दृष्टि से देखेंगे व कुछ त्रुटि रहने पर उसका निर्देश भी करेंगे।

द्रव रूप में निकाल कर आपको आरोग्य प्रदान करती है। प्रकृति का कोई काम मतलब से खाली नहीं है, प्रतिश्याय अवस्था में 'छींक' का आना भी इसी बात (प्रकृति के कार्य शीलता) का द्योतक है। कारण कि छींकों का आना तन्दुरुस्ती की निशानी है। साधारण तौर से छींक आने पर दिमाग साफ़ रहता है। छींक दिमाग की खराबी तथा मस्तिष्क को कष्ट पहुँचाने वाली वस्तुओं को निकालता है। यदि प्रकृति के नियमानुसार सदा नियमित रूपेण छींक न आया करें तो मनुष्य का मस्तिष्क खराब हो जाता है, मनुष्य की बुद्धि, वैकृतावस्था को पहुँचा, मनुष्य को उन्मादावस्था में पहुँचा देती है। अतः छींक से शरीर के सर्वे-सर्वा दिमाग की रक्षा होती है। बस,

जुकाम होने पर पहले तीन दिन तक किसी प्रकार की औषधि का प्रयोग न कर उचित पथ्य का सेवन करते हुए जुकाम को अपने आप बहने देना चाहिये, जुकाम का बहना या पक कर निकल जाना ही स्वास्थ्य के लिए उत्तम है। जुकाम को, (उसकी प्रारम्भिक अवस्था में) किसी भी गरम औषधि अथवा पथ्यादि गम सर्द वस्तुओं का सेवन कर बहने न दे कर, बन्द कर देना अच्छा नहीं है। यदि रोगी निर्बल हो, अशक्त हो तथा उसके शरीर में कफ़ और शीताधिक्य हो, तो पहले ही (जुकाम की प्रारम्भिक अवस्था में ही) जुकाम को पका कर बहाने के लिये १० १५ दाने गोल मिर्च को कुचल कर आध पाव पानी में पकावें, और चतुर्थांश जल शेष रहजाने पर दो तोला मिश्री मिला छान कर रोगी को पिला दें। इस प्रकार से ३ ४ दिन तक इस दवा को सेवन करने से जुकाम सूखने नहीं पाता, बल्कि द्रव होकर बहने लगता है, तथा पक कर शीघ्र आराम होने लगता है अथवा गुलबनफ़शा ६ माशा और गाजुवा ६ माशा दोनों को एक पाव पानी में पकावे, जब आधा पानी शेष रहे तब १ तोला मिश्री मिला मल छान कर गरमा गरम चाय की भांति रोगी को पिलावे। इस प्रकार दो तीन मात्रा प्रति दिन पीने से ३-४ दिन में जुकाम पक कर निकल जाता है।

जुकाम की प्रारम्भिक अवस्था में पसीना लाने वाली औषधियों का प्रयोग कर शरीर के स्रोतों छेदों को साफ़ करदेना, प्रतिश्याय की उत्तम चिकित्सा विधि है। जिस प्रकार यूनानी औषधियों में 'गुलबनफ़शा' पसीना लाकर प्रतिश्याय को आराम करने में प्रसिद्ध विशेष है, उसी प्रकार आयुर्वेदीय औषधियों में "तुलसी" इस काम (पसीना लाकर प्रतिश्याय को आराम करने) के लिये विशेष फल प्रद तथा अद्वितीय आशुगुण कारी महौषधि विशेष है। यदि तुलसी की पत्ती की चाय, चाय विधि से प्रस्तुतकर सैन्धव लवण मिला सेवन किया जाय तो जुकाम सर्दी तथा सर्दी से पैदा हुआ हृदय का दर्द आराम हो जाता है। अथवा तुलसी की चाय निम्न विधि से प्रस्तुत कर सेवन किया जाय तो जुकाम, खाँसी, छाती का जकड़ना, शरीर की की पीड़ा, जुकाम जनित ज्वर, शीत तथा

कफ़ के सभी विकार आनन-फ़ानन दूर हो जायें। सुखाई हुई काली तुलसी की पत्ती ३ माशा, मिश्री २॥ तोला, गाय का गर्म शुद्ध दूध आधा पाव प्रथम ऽ॥ छटांक पानी मिट्टी के बर्तन तथा चाय बनाने वाली पतेली में गर्म करे, जब पानी खूब खौलने लग जाय, तब तुलसी की पत्ती खौलते हुए पानी में डाल कर, बर्तन का मुंह ३-४ मिनट के लिये बन्द करदें। तत्पश्चात मिश्री चूर्ण और गाय का दूध मिला छान कर काम में लावें। यदि इसी प्रकार चाय की बजाय तुलसी की चाय बनाकर सेवन की जाय तो, जुकाम जनित सभी प्रकार के विकार दूर हो, शरीर शुद्ध हो जाय।

आज कल चाय का उपयोग शहर एवं गावो में बहुत बढ़ गया है, और अधिकाँश लोग इसे आरोग्य जनक वस्तु विशेष समझकर, जुकाम की अवस्था में भी इसका प्रयोग कर बैठते हैं। इसका कारण यह है कि चायमें 'टेनिन' नाम का एक प्रकार का ओजक विष होता है जो शरीरको कुछ देर के लिये अपने गुण प्रभाव से उत्तेजित अवश्य कर देता है। परन्तु आगे चलकर इस का कैसा भीषण प्रभाव शरीर पर पड़ता है, यह विचारणीय है। यह बात ठीक है कि चाय अपने उत्तेजक गुण प्रभावसे शरीर के स्रोतों से पसीना बहा, शरीर में फुर्ती-कुछ समय के लिये अवश्य लाती है। परन्तु चाय का यह उत्तेजक गुण ही शरीर के लिये महा हानिकर होता है। जो कुछ दिन तक चाय सेवन करने के बाद मालूम होता है। चाय के सेवन से अग्नि मन्दता, धातु-क्षीणता मूत्र की अधिकता (बहुमूत्रता, प्रमेह) नींद की न्यूनता, रक्त शोषकता, रक्त स्वल्पता, रक्त पीतता, कृशता, कफ़, वीर्य्य विकार एवम् हृदय-रोगादि उत्पन्न होने की विशेष सम्भावना रहती है। अतः चाय पान से सदा अपने को बचाना चाहिए। जिन को प्रतिदिन चाय पीने का अभ्यास है, वा जो चाय पीने के आदी हो गये हैं। उनको चाय के एवज में निम्न लिखित प्रकार की तुलसी की पत्ती तथा अन्य पत्तियों योग से बनी तुलसी की चाय काम में लानी चाहिये।

तुलसी की शुष्क पत्ती, आम की शुष्क पत्ती, पीपल की शुष्क पत्ती, मजीठ, उपलसरी, काली मिर्च, इलायची, इन सबों को समान भाग लेकर मोटी २ कूट कर चाय की भांति दूध तथा शक्कर मिला गर्म पानी पीना चाहिये। यह चाय स्वाद में अत्यन्त स्वादिष्ट तथा सुस्वादु है। इससे चाय से कई गुणा बढ़कर लाभ होता है। शरीर सदा स्वस्थ तथा सुदृढ़ बना रहता है। इसे पीते ही पसीना आकर शरीर हलका हो जाता है। रक्त विकार एवं कफ़ पित्त तथा वात जनित त्रिदोषज, व्याधियां दूर हो जाती हैं। भूख भी बेहद बढ़ जाती है।

प्रतिश्याय रोग में दस्त कब्ज (आमावरोध) की शिकायत प्रायः जुकाम के प्रारम्भ काल में ही रहती है, अतः ऐसी अवस्था में (कब्ज होने पर या पेट भारी रहने पर) कोई साधारण सा रेचक औषधि खाकर कोष्ट शुद्ध (पेट साफ़) कर लेना अति आवश्यकीय है। सनाय की

पत्ती ४ माशा, मुनक्का के बीज ४ माशा, गुलकन्द गुलाब ८ माशा, में मिला चूर्ण तथा माजून बना कर सेवन कर ऊपर से ड़ गर्म पानी या गाय का गर्म दूध पी लेने से कोठे की शुद्धि हो जाती है। अथवा सौंफ़ ४ माशे, मुनक्का के बीज दाने अंजीर २ दाने गुलबनफ़सा ४ माशे, बीज हीन उन्नाव ५ दाने, स्वर्ण पत्री ४ माशे, और शुष्क गुलाब पुष्प ४ माशे इन सब को कुचल कर ड़॥ पानी अथवा पाव भर गुलाब जल में मिलाकर पकाओ और चौथाई जल शेष रहने पर मिश्री मिला थोड़ा मसल कर कर छानने के बाद गरमागर्म पीलिया जाय तो इस से दो तीन दस्त आकर कोठा साफ हो जाता है, जिससे जुकाम ग्रसित रोगीको विशेष लाभ पहुंचता है। जिस जुकाम पीड़ित रोगी को जुकाम के साथ कोष्ठ बद्धता की शिकायत हो उसे इस काढ़े का सेवन कर आशातीत यथोचित लाभ उठाना चाहिये। यह प्रयोग करो परीक्षित है।

साधारण नये प्रतिश्याय में २ तोले अडूसे की पत्ती को १ एक माव पानी में औटावे, जब ड़– जल रह जाय तब शीतल होने पर छानकर ४ माशे मिश्री २ माशे मधु मात्रा कर पीने से जुकाम पककर शीघ्र ही शुद्ध हो जाता है।

काली मिर्च चूर्ण ३ माशे, पुराना शुद्ध गुड़ १ तो० मीठा गायका दही ५ तो० तीनों को एक में मिला कर ३-४ दिन तक प्रातः काल चाटने से सूखा हुआ कफ और मस्तिष्क का संचित दूषित मल पिघल कर बाहर निकल आता है तथा बिगड़ा हुआ जुकाम पककर शीघ्र ही आराम हो जाता है।

मात्रा—मिश्रित गायके अध औटे गर्म उबलते हुये दूध में १५, २० काली मिर्चे (अर्धकुट्टित) और मिश्री २ तोला मिलाकर चाय की भांति पिओ। इससे जुकाम अवश्य आराम हो जाता है। परीक्षित है।

स्नान की गड़बड़ी से उत्पन्न होने वाले प्रतिश्याय में २ मा० काली मिर्च का चूर्ण मधु में मिला कर प्रति दिन सुबह शाम चाटनी चाहिये।

यदि प्रतिश्यायावस्था में किसी कारण वशात् छींक न आती हो, नाक से पका हुआ गाढ़ा कफ़ न निकलता हो तथा आप के असंयम से जुकाम का बहना बन्द हो गया हो, या कफ के सूख जाने की सम्भावना हो तो, आप शीघ्र जुकाम को पकाने वाली उपर कथित औषधि का प्रयोग करें। जुकाम के पक जाने पर शिरो-विरेचन (नस्य) का प्रयोग कर जुकाम के पके हुये मवाद को निकाल दें। सिर साफ़ करने वाले नस्य के प्रयोग से कफ़ ढीला होकर शीघ्रता के साथ बहने लगता है। काली मिर्च और सुखाही हुई नकछिकनी (औषधि विशेष), समान भाग कपड़ छान चूर्ण कर नस्य लेने से तत्काल छींकें आने लगती हैं। और कफ़ द्रवी-भूत होकर नासिका द्वारा बहने लगता है। अथवा सिरस के बीज १ माशा, कायफल १ माशा, भट कटैया बीज ३ माशा, सब को कपड़छान चूर्ण बना नस्य लेने से छींक आकर कफ ढीला होकर नाक से बहने लगता है, शिर की पीड़ा नष्ट होती है और जुकाम पककर शीघ्र आराम

हो जाता है। "म० प्र० मा० वीर"

कभी २ प्रतिश्यायावस्था में प्रतिश्यायोचित आहार विहारका परित्याग कर गरमपदार्थों का सेवन करने से जुकाम सूख कर शुष्क कास का रूप धारण कर लेता है। भीतरी नाड़ियों और छाती पर कफ जम जाने के कारण खाँसते खाँसते हाँफनी आने लगती है, गले में हर समय खस-खस लगी रहती है। खाँसी उठने पर जब तक थोड़ा बहुत श्वेत कफ तथा उजला थूक सा लहसेदार बलगम वमनरूप में नहीं निकल जाता सोभी बड़ कष्ट तथा कठिनता से तब तक रोगी खाँसते २ व्याकुल रहा करता है। श्वास लेने में दुःसह पीड़ा अनुभव होती है, छाती सिर तथा पसली में भयानक दर्द हो जाता है गले में सूखा कफ लिहसा सा प्रतीत होता है। खाँसते २ गला बैठ जाता है, आवाज भारी होजाती है मुंह सूखा रहता है, मारे खों खों के अपना कौन कहे पड़ौसियों तक की नींद हराम हो जाती है। यह बड़ा ही हठी मर्ज है। जल्दी ही इसका उचित उपाय न करने से फैफड़े बेतरह आक्रांत हो जाते हैं, जिसमे फैफड़े में क्षत या घाव हो जाते हैं। खाँसने पर खून-मिश्रित कफ आने लगता है। शरीर में हर समय धीमा २ (मन्द-मन्द) ज्वर बना रहता है, भूख बन्द होकर शरीर क्रमशः दुबला होता जाता है। तपेदिक तथा क्षय के चिह्न क्रमशः नजर आने लगते हैं। अतः ऐसी अवस्था में विशेष सतर्कता के साथ औषधि तथा पथ्य का प्रबन्ध करना, अति आवश्यकीय होजाता है। इस अवस्था की प्रारम्भिक अवस्था में निम्न लिखित औषधि-उपचार, विशेष लाभदायक सिद्ध हुआ है। गाय का शुद्ध दूध आध पाव, गाय का ताजा घी २ तोला, पानी आधा पाव, सब को एक में मिला कर मिट्टी के नये बर्तन में पकाइये। एक उफान आजाने पर जब पानी जल कर दूध शेष रह जाय, तब २ तो० मिश्री मिला कर गरमागर्म पीजिये।

इसी प्रकार बनाकर सुबह शाम पीने से कफ तुरन्त ढीला होकर निकलना प्रारम्भ होजाता है, जिससे शुष्क कास तथा श्वास की पीड़ा तत्काल कम होकर क्रमशः निर्मूल हो जाती है। यदि खाँसी विशेष रूपेण सूख कर श्वास के रूप में परिवर्तित होगई हो, और मारे खाँसीके खाँसते २ दम निकला जाता हो, श्वास का वेग अत्यन्त बढ़गया हो, तो आप इस औषधि को सुबह शाम पीने के सिवा दिन रात में ३-४ बार और थोड़ा २ पीवें। साथ ही इसके अपने सारे बदन को कपड़े से ढक कर अपने पैरों को घुटने तक सहने योग्य गर्म पानी में १०, १५ मिनट तक डुबाये रखे पश्चात पैरों को गर्म पानी से निकाल पोंछ कपड़े से ढक लें। इस क्रिया से श्वास की पीड़ा में तत्क्षण विशेष लाभ होता है। अथवा—गाय का दूध एक पाव, मिश्री एक छटांक, गेहूँ का चोकर २॥ तो०, कमल गट्टा की गिरी, छोटी इलायची के दाने, प्रत्येक ३ माशा, दाना पोस्त, गोंद बबूल, बादामकी गिरी लाल छिलका हटाया हुआ, और मुलहटी प्रत्येक ६ माशो। प्रथम गेहूँ के चोकर को एक सेर पानी में आध घन्टे तक भिगोने के बाद, अच्छी तरह हाथ से

मसल कर मोटे वस्त्र में छान कर पानी अलग कर लें, बादाम की गिरी, और पोस्ता के दाने, को पानी में सिल बट्टे पर खूब महीन पीस कर धोकर वाले पानी में मिलादें पश्चात् कमल गट्टे की गिरी, छोटी इलायची का दाना, मेथी मधु, और गोंद बबूल का भी अर्ध कुट्टित कर उपरोक्त धोकर वाले पानी में मिला कर शुद्ध, मिट्टी के बर्तन में आग पर पकाओ। एक चौथाई जल, जलकर तीन पाव शेष रहने पर, मिश्री तथा गाय का दूध मिला कर एक उफान आने तक आग पर रहने दें। पश्चात आग से नीचे उतार वस्त्र से छानलें। इसमें से दश १० मिनट के अंतर पर ५ से १० तोला तक गरमा गर्म, पाँच सात मात्रा रोगी को सेवन करने से कफ तुरंत ढीला होकर, बिना किसी कष्ट के बाहर आने लगता है, खाँसी तथा श्वास की दुसह पीड़ा क्रमशः कम होकर निर्मूलावस्था को प्राप्त होजाता है। यदि ये सब औषधियां समय पर उपलब्ध न हो सकें तो, बबूल का गोंद, दाना पोस्ता, बादाम की गिरी, और मुलहटी के धोकर वाले पानी में पीस कर उपरोक्त प्रकारेण तैयार कर रोगी को पिलावें। इससे भी लाभ होता है। इसके साथ ही यदि ३ माशा सैन्धव लवण खूब बारीक पीस कर गाय के १ छ० पुराने घीमें मिलाकर थोड़ा २ रोगी की छाती पीठ तथा गले में मला जाय तो छाती में जमा हुआ कफ पिघल कर आसानी से बाहर आने लगता है। इससे छाती पीठ तथा कफ जनित पार्श्व शूल में लाभ होता है। यदि पसलीमें दर्द हो तो नारायण तैलमें बारीक सैन्धव लवण मिला कर, थोड़ा गरम कर पसली पर धीरे २ मलो। अभावे शुद्ध सरसों का तैल नमक मिला काम में लाओ।

यदि जुकाम से गला बैठ गया हो या गले में दर्द हो तो निम्न लिखित उपचार कीजिये— छोटी इलायची, तज और पत्रज छै २ माशे अमल बैत, इमली की छाल, काली मिर्च, चव, चीता तालीस पत्र, पीपल, श्वेत जीरा, और सोंठ प्रत्येक डेढ़ २ तोला पुराना शुद्ध गुड़ डेढ पाव काष्ठ औषधियों को कपड़ छन चूर्ण बना गुड़ के साथ मिला कर जंगली बेर के बराबर गोली बना लें। १ से ४ गोली तक बला-बल अनुसार दिन में दो तीन बार गर्म जलके साथ सेवन करने से प्रतिश्याम जनित स्वर भंग दूर होता है। कफ़ में दुर्गन्धि का आना, नाक तथा मुंह से रक्त स्राव होना, खाँसी, दाह, जलन, नजला, दुर्गन्ध तथा सुगन्ध का ज्ञान नष्ट हो जाना, मस्तक, आँख तथा गले का विकार और सम्पूर्ण उपद्रव युक्त प्रतिश्याम शीघ्र दूर हो जाता है।

अथवा—पानों के रसके साथ सरसोंका तैल पका कर गले में मलने से जुकाम जनित स्वर भंग तथा गले का दर्द मिट जाता है। अरहर की पत्ती शहतूत की पत्ती, पोसते का फल, बेर की पत्ती, प्रत्येक दो तोला, लेकर आध सेर जल में पकावें। आध पाव पानी शेष रहने पर आग से नीचे उतार छान लें। यदि इस गरम काढ़े से बार २ कुल्ली किया जावे तो जुकाम जनित गले की पीड़ा तथा स्वर भंग दूर होजाता है। नये जुकाम में कफ के अधिक गाढ़ा होने

या सूख जाने से जुकाम जनित शिर पीड़ा असह्य हो उठती है। ऐसी अवस्था में यदि सिर में भारी पन और सरदी विशेष हो तो भूने हुए गरम चने को महीन वस्त्र में बांध कर पोटली बना सिर तथा ललाट को सेंको। अथवा नौसादर और चूना दोनों सम भाग में मिला शीशी में रख कुछ अन्तर पर सूंघो। अथवा युकलिपटस आयल सूंघनेसे नवीन प्रतिश्यावस्था का सिर दर्द मिट जाता है। अथवा प्रथम कथित गुलबनफ़शा, तुलसी आदि पसीना लाने वाली औषधियों के काढ़े से जुकाम जनित सिर दर्द अवश्य मिट जाता है। अथवा महा भृंगराज तैल में थोड़ा सा पिपरमेंट (Piperment) आयल मिला कर ललाट पर धीरे २ मलने से अचानक सिर दर्द घट जाता है।

प्रतिश्यायावस्था में जो साधारण सा ज्वर हो जाता है उसके लिये विशेष चिंचित न हो साधारण उपचार करना चाहिये। जुकाम जनित ज्वर में विशेष प्रकार के इलाज से किसी प्रकार के लाभ की सम्भावना नहीं कारण कि जुकाम जनित ज्वर का सम्बंध जुकाम से रहता है, जब तक जुकाम आराम न होगा तब तक ज्वर आराम नहीं होगा। अतः ऐसी चिकित्सा विधि को अपनाना चाहिये, जिससे ज्वर और जुकाम दोनों को लाभ हो। अन्यथा अलग २ चिकित्सा से हानि होने की सम्भावना है।

प्रतिश्यायावस्था में सदा याद रखने योग्य बातें

१—जुकाम को तुम जितना साधारण रोग समझते, इसकी चिकित्सा की उपेक्षा करते हो वस्तुतः वह उतना सहज नहीं है, बल्कि बड़ा ही भयंकर परिणामदर्शी रोग है, कारण कि यही प्रतिश्याय तुम्हारे अनुचित आहार विहार तथा उचित चिकित्सा के अभाव से बिगड़कर क्रमशः कास, श्वास, हिक तथा क्षय रूप में परिवर्तित हो जाता है। आज कल अधिकांश लोगों को जो क्षय हो रहा है, उसका प्रधान कारण जुकाम का बिगड़ना ही है। अतः भूल कर भी इसकी समुचित आहार विहार तथा औषधि, चिकित्सा का उपेक्षा मत करो।

२—प्रतिश्यायावस्था में भूल कर भी स्त्री सहवास तथा ऊष्ण विदाही (मांस, मदिरा, आदि गर्म तथा रूक्ष) पदार्थों का सेवन मत करो। अन्यथा भीषण विपत्ति में फंसने की सम्भावना है।

३—जब तक जुकाम आराम न हो जाय तब तक गरम पानी पीने के काम में लाओ, आचार्य वागभट्ट महोदय ने लिखा है कि—

"त्यजेत् स्नानं शुचं क्रोधं, भृशं शय्यां हिमं जलम्"

अर्थात् प्रतिश्याय रोग के रोगी को स्नान शोक क्रोध, अतिशय शय्या सेवन, और शीतल जल का सेवन त्याग देना चाहिये।

४—जहां तक हो सके जुकाम को अपने आप बहने दो, क्षणिक लाभ की आशा में पड़ किसी प्रकार का गरम उपचार या रूक्ष पदार्थ सेवन कर जुकाम को सुखाओ मत।

५—जुकाम की प्रारम्भिक अवस्था में चिकित्सा न करो। जुकाम को नाक मुंह से अपने आप बहकर आराम हो जाने दो, यदि कष्ट बर्दा-

श्त न हो तो ऊपर बताये जुकाम की प्रारम्भिक चिकित्सा विधि से अपनी चिकित्सा करलो।

६—नया अन्न, भारी और देर में पचने वाला तथा शीत कारक पदार्थ, तेल तथा घी के बने विदाही पदार्थ, दूध (प्रारम्भिक अवस्था में) दही, मट्ठा, तैल, घी और मीठापदार्थ न खाओ?

७—जिन को सदा जुकाम होता हो, उन्हें नाक से (प्रातः काल) जल पीने का अभ्यास करना चाहिये। इससे आधे सिर का दर्द, जो मस्तिष्क में कफ तथा रक्त के सूख तथा रुक जाने पर उत्पन्न होता है, जो किसी प्रकार जल्दी आराम नहीं होतो, सदैव के लिए दूर हो जाता है।

८—जिनको बार २ जुकाम होने के कारण गले में सदा कफ चिपटा जान पड़े, बिना थूके चैन न मिले, खखारने पर थोड़ा कफ उजला सा निकलकर कुछ देर के लिये आराम मिल जाय, उन्हें नमक मिश्रित जल से बारबार गरारा करना चाहिये तथा नाक से उपरोक्त नमक मिश्रित जल को पीकर गले से नीचे उतार देना चाहिये। प्रारम्भ में यह क्रिया कुछ समय के लिये कष्ट साध्य जरूर मालूम होती है, परन्तु पीछे विशेष लाभ जनक हो जाती है।

९—गरम जल पीना, धुली हुई अरहर मूंग तथा उड़द की दाल, गेहूं व जौ की रोटी परवल, लौकी, व केले की तरकारी हलका सादा नमकीन भोजन, अनार अंगूर सेवन तथा अंजीर का खाना विशेष लाभ दायक है।

रक्त

(ले० पं० भगवद्देव शर्मा)

❀❀❀

(गतांक से आगे)

जीवाणु भक्षण—

ये रक्तगत श्वेताणु हमारे शरीर की सेना विभाग के सिपाही हैं, इनका कार्य बाहर के आक्रमणों से शरीर की रक्षा करना है। जहां कोई भी बाहरी वस्तु शरीर के भीतर पहुंचती है, तुरन्त ही ये कण उसका नाश करने को पहुंच जाते हैं, जहां शरीर में कोई रोगोत्पादक जीवाणु व कृमि प्रवेश करते हैं, तुरन्त श्वेतकणों की सेना का कूच हो जाता है। इनको किसी प्रकार की तैयारी की आवश्यकता नहीं होती ये श्वेताणु रातदिन तैयार ही रहते हैं। जीवाणु के प्रवेश करते देर नहीं होती कि ये सिपाही गण तुरन्त उससे युद्ध ठान देते हैं युद्ध में यदि ये श्वेताणु (सिपाही) जीत जाते हैं, तो किसी प्रकार का रोग नहीं होता, क्योंकि ये जीवाणुओं को खा जाते हैं यदि जीवाणु अधिक प्रबल होते हैं व उनकी संख्या अधिक होती है तो ये श्वेताणु हार जाते हैं, और रोग उत्पन्न हो जाते हैं। तिस पर भी वह बराबर अपना काम करते

१—प्रतिश्यायावस्था में अपने आप को सर्द पानी, सर्दी, तेज तथा शीतल बाहरी वायु से अवश्य बचना चाहिये।

रहते हैं, अन्त तक जीवाणुओं का नाश करने के उद्योग में लगे रहते हैं, यह क्रिया जीवाणु भक्षण (Phagocytosis) कहलाती है।

इन श्वेताणुओं की यह क्रिया ठीक प्रकार से मालूम हुये बहुत दिन नहीं हुये ६० साल के लगभग हुये जब कि एक प्रोफेसर हैकल (Haeckel) ने एक मॉलस्क (Malluse) श्रेणी के जन्तु के शरीर के भीतर कुछ औषधि के कण प्रविष्ट किये उन्होंने देखा कि यह श्वेत कण औषधि के कणों के चारों ओर इकट्ठे हो गये और उन सबों को खा गये, इसके पश्चात् कुछ वैज्ञानिकों को कितने ही सेल के शरीर के भीतर कुछ जीवाणु मिले। इससे लोगों ने यह अनुमान किया कि कदाचित् इन सेलों में जीवाणुओं को भक्षण करने का सामर्थ्य है। इस विचार की परीक्षा प्रसिद्ध विज्ञानवेत्ता मेचनीकाफ़ (Metchnikoff) ने की और उसने इस बात का पता लगाया कि शरीर को रोग के जीवाणुओं से मुक्त करने की इनमें शक्ति है। यह शरीर में रोग क्षमता उत्पन्न कर देते हैं।

मेचनी काफ़ की खोज की भी एक बड़ी रोचक कथा है। उसने सबसे पहले एक मछली के डिंभ के शरीर में कुछ गुलाब के कांटे चुभाये। ज्योंही उसने कांटों को शरीर के भीतर प्रविष्ट किया, त्यों ही इन श्वेताणुओं ने चारों ओर से आकर उसको घेर लिया और उसको खाने का उद्योग करने लगे। अपने दूसरे प्रयोग में मेचनी काफ़ ने एक जन्तु, जिसको डेफ़निया (Daphnia) कहते हैं, के शरीर में थोड़े से जीवाणुओं को प्रविष्ट किया। उसको देखते २ श्वेत कण चारों ओर से आकर एकत्रित हो गये और जीवाणुओं को खा गये।

इस प्रकार ये श्वेताणु हमारे शरीर को बाहर के अशुभ आगन्तुकों से रक्षा करने वाले हैं ज्यों ही शरीर में किसी भी स्थान में कोई जीवाणु या कोई ऐसी ही दूसरी वस्तु प्रवेश करती है, त्योंही ये सब उसी ओर को कूच कर देते हैं। समझ में नहीं आता कि यह ज्ञान इनको कैसे हो जाता है, इनका नाड़ी मण्डल (ज्ञान तन्तुओं) से कोई सम्बन्ध नहीं रहता। ये रक्त में बहते फिरते हैं, फिर उन जीवाणुओं के प्रवेश की सूचना इनको किस भांति मिल जाती है, जिससे ये उसी स्थान पर पहुँच कर उसके भक्षण व नाश का उद्योग करते हैं, यह विचित्र क्रिया है, वैज्ञानिक इस क्रिया को रासायनिक आकर्षण (Chaemeo. taxis) के द्वारा होती बतलाते हैं, किन्तु रसायनिक आकर्षण कहने से समस्या कुछ सरल नहीं होती। यह उस क्रिया का एक दूसरा नाम है। जहां भी इस प्रकार की दो वस्तुएं उपस्थित होती हैं वह तुरन्त ही आपस में मिल जाती हैं, इन दोनों वस्तुओं में श्वेताणु और जीवाणुओं में भी उसी प्रकार की प्रीति बताई जाती है, यह प्रीति व आकर्षण किसी वस्तु के परिमाणुओं व अणुओं में हो सकती है जिनको हम देख नहीं सकते, किन्तु इन दो वस्तुओं का जिनको देखा जा सकता है और जो जीवित हैं, इस शक्ति के आधीन होना ठीक नहीं मालूम होता, यह

कह देना कि इस घटना का कारण रासायनिक आकर्षण है समस्या का कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं है।

रक्त द्रावक—

श्वेताणुओं के जीवाणु भक्षण के अतिरिक्त रक्त में जीवाणुओं का नाश करने व उनको बेकाम करने की भी शक्ति है। बाहर से जो शत्रु नाशक शक्ति को पूर्णतया परिपक्व कर रक्खा है। यदि एक जन्तु के शरीर से सीरम निकाल कर किसी दूसरे जन्तु के शरीर के रक्त में प्रविष्ट करदें तो उस प्राणी के रक्त गत लाल कणोंका नाश होने लगता है,वह घुलने लगते हैं, रक्त की वह वस्तु जिनके कारण यह क्रिया होती है, रक्त द्रावक (Haemolysins) कहलाती है। इन वस्तुओं का स्वरूप क्या है, व उनकी रासायनिक रचना क्या है, इसका अभी तक कुछ ज्ञान नहीं है।

रक्त में स्वयं जीवाणुओं को नष्ट करने की शक्ति अवश्य है, पर यह नहीं मालूम कि रक्त की वह वस्तु क्या है, जिससे ये जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। इतना हम अवश्य जानते हैं कि रक्त इस शक्ति से सम्पन्न है। इसके अतिरिक्त रक्त में एक अद्भुत शक्ति यह है कि वह जीवाणुओं को गुच्छे के रूप में एकत्रित कर देता है, और फिर व चलने योग्य नहीं रहते उनकी गति की शक्ति जाती रहती है इन वस्तुओंको सँग्राहक कहते हैं। टाईफाइड (Tpphoid) व आन्त्रिक ज्वर में जो रक्त की परीक्षा की जाती है, वह इसी क्रिया पर निर्भर है।

इन सब विचित्र साधनों द्वारा रक्त शरीर को बहुत सी आपदाओं से बचाने का प्रयत्न करता है। उसने अपने को इस शक्ति से सम्पन्न कर रक्खा है। शत्रुओं के नाश करने के अनेकों यन्त्र उसने बनाये हैं। यदि एक अस्त्र विफल हो तो दूसरा अस्त्र प्रयोग किया जाये, यदि दूसरा भी काम न देवे, तो तीसरे अस्त्र से वार किया जावे इन सब उपायों से रक्त शरीर को रोग क्षम बनाने का उद्योग करता है। रक्त केवल रंगदार एक तरल पदार्थ है, जिसमें कुछ कण मिले हुए हैं। उसमें इतनी अद्भुत शक्तियों का भँडार हो, सारे शरीर को वह भोजन पहुँचाये, औषि र-जन को पहले स्वयं ग्रहण करे और फि उसको शरीर की सब क्रियायें होने के लिये भिन्न २ स्थान पर पहुँचाये, शरीर को अनेक शत्रुओं से बचाने का विधान करे, सेनाको प्रत्येक समय तैयार रक्खे, इससे अधिक आश्चर्य और क्या हो सकता है। सारे शरीर का जीवन इसी तरल पदार्थ पर निर्भर है। यदि यह पदार्थ कुछ सैकण्ड को भी मस्तिष्क में जाना बन्द हो जाय तो वह विचार शक्ति का भँडार, मानव यन्त्र का संचालन, बिलकुल बन्द हो जाय। प्रकृति ने यह क्या ही अद्भुत वस्तु बनाई है, और उसे क्या क्या अद्भुत शक्ति दी है। आश्चर्य यह है कि केवल कुछ जड़ मौलिकों के मिलने से यह पदार्थ बना है। यदि उन्हीं सब वस्तुओं को लेकर रासायनिक प्रयोग शालाओं में इस वस्तु के तैयार करने का प्रयत्न किया जाये, तो इस प्रयत्न के सफल होने में सन्देह है।

रक्त कुछ और भी काम करता है। वह जिस भांति भी होता है, शरीर की रक्षा करता है। यह एक साधारण बात है कि यदि उंगली कट जाती है, तो उस मे रक्त निकलने लगता है। यह रक्त कुछ समय के पश्चात् जम जाता हैं, और उस कटे हुए स्थान के मुंह को बन्द कर देता है। इस मे फिर अधिक रक्त नहीं निकल सकता। जब तक रक्त शरीर के भीतर रहता है वह तरल रहता है, और सारे शरीर में भ्रमण करता रहता है। जीवित शरीर में वह कभी जमता हुआ दिखाई नहीं देता जब किसी स्थान के कटने से रक्त बाहर निकलता है तब वह जमता है। यदि रक्त शरीर के भीतर जम जाया करता, तो रात दिन मृत्यु होती रहती, क्योंकि जमा हुआ रक्त तो भ्रमण कर नहीं सकता, और रक्त भ्रमण के बिना जीवित रहना असम्भव है। किन्तु यदि शरीर के कटने से बाहर निकल कर भी रक्त न जमता तो भी उतनी ही कठिनाई होती। रक्त का प्रवाह ही बन्द न होता, और मनुष्य की शीघ्र मृत्यु हो जाती। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं, जिन के रक्त में जमने की शक्ति नहीं होती, यह एक रोग होता है, जिस को (Haemophilia) कहते हैं। यह रोग बहुधा पारिवारिक होता है, जिन मनुष्यों को यह रोग होता है, उनमें रक्त प्रवाह होना बहुत भयंकर होता है, क्योंकि रक्त निकलना बन्द नहीं होता।

(शेष अगले अङ्क में)

प्रदर

(ले०—पं० भगवद्देव शर्मा)

जिस प्रकार मनुष्य को धातु क्षीणता, अथवा प्रमेह रोग होता है, उसी तरह अनेक प्रकार के मिथ्या आहार विहार से स्त्रियों को भी प्रदर रोग हो जाता है, अर्थात् योनि से लाल, पीला, नीला, काला सफेद पानी सा निकला करता है, जिसकी वजह से शरीर दुबला, पतला और कमजोर हो जाता है खून की कमी से चेहरे का रङ्ग पीला, कमर, पीठ, सिर में दर्द भूख कम लगना, बदहजमी, नलो में दर्द, सिर का घूमना, मासिक धर्म का कम या ज्यादा होना गर्भ का न रहना, या गर्भ रहकर गिर जाना, इत्यादि अनेक प्रकार की बीमारियां पैदा हो जाना और लज्जा के कारण बेचारी किसी से कह भी नहीं सकती ऐसा हालत पर उनके प्राणों पर आ बनती है उनके लिए हमने एक सद्यफल दायक अचूक रामबाण नुसखा तजवीज किया है। जो कि हमारा सैकड़ों बार का अनुभूत है। बहुत जल्द फायदा करता है, आप भी जिसे इस्तेमाल कराकर अपने पारिवारिक जीवन को सुखमय बना सकेंगे।

नुसखा—मोचरस १ छटांक, असगन्ध १ छ०, लक्ष्मणा बूंटी १ छ०, बंशलोचन १ छ०, बबूल की फली १ छ०, जो छाया में शुष्क की गई हों, सनाय की पत्ती, १ छ०, त्रिफला ३ छ० भूसी ईसबगोल, गोंद कतीरा, इन्द्र जौ, शतावर कौंच के बीज, उटंगन के बीज, बहमन सफेद बहमन सुर्ख, सफेद मूसली, काली मूसली, पंजेदार सालब मिश्री, सकाकुल, तालमखाना बीजबन्द, समुद्र शोष, तादरी सफेद, गोखरू दारचीनी, विदारी कन्द, गंगेरन की छाल, इन सब चीजों को १-१ छटांक लेकर ईसबगोल की भूसी के सिवाय और सब को कपड़छन कर शुद्ध शिलाजीत आधी छ०, बंगभस्म १ तो०, लोहभस्म १ तोले, रससिन्दूर ३ माशे, अभ्रक भस्म ६ माशे मिलाकर उत्तम पात्र में रखलें और सुबह शाम ३-३ माशे पाव भर गौ के दूध के साथ लेंवे, इसके इस्तैमाल से अवश्य ही उनकी तमाम शिकायतें दूर होंगी। परन्तु इसमें भस्म उत्तम व शुद्ध किसी अच्छे दवाखाने से लेनी चाहिये। जो इस नुसखे को न बना सके वे हमारे औषधालय का

सिद्ध सुपारी पाक रसायन (रजिस्टर्ड)

जो कि स्त्रियोंके ऊपर कहे हुये तमाम रोगोंके लिए अमृत समान गुणकारी हैं। एक बार अवश्य मँगाकर परीक्षा करें। इसके सिर्फ ४० दिन के सेवन से ही स्त्रियों की प्रदर सम्बन्धी तमाम खराबियां जड़ से दूर हो जाती हैं।

वटवृक्ष का महत्व

(ले०—डा० गोपालशरण एम० डी० ऐण्ड एच० एस०)

वटवृक्ष

हिन्दूधर्म में प्रायः जितने वृक्षों का आदर और सन्मान है, वे सभी मनुष्यों के लिये एक से एक बढ़ कर उपयोगी होते हैं, और वे सब मनुष्यों के स्वास्थ्य रक्षा के लिए रामवाण औषधियाँ हैं, जिस प्रकार तुलसी का वृक्ष हम लोगों के स्वास्थ्य रक्षा के लिये अत्यन्त उपयोगी है, उसी प्रकार वटवृक्ष हमारे स्वास्थ्य के लिए कितना उपयोगी है। यह आज हमें पाठकों को बताना है।

(१) वट वृक्ष की डाली और पत्तों को तोड़ने से जो सफ़ेद रंग का पतला पदार्थ निकलता है वह वट का दूध कहलाता है। यह बड़ा ही उपयोगी होता है, यह संकोचक, स्तम्भक, बलकारक, रुधिर बर्धक, पाचक शक्ति को बढ़ाने वाला, स्नायुओं में उत्तेजना पैदा करने वाला और वीर्यादि धातु पोषण करने वाला होता है, यह आंतों की और उदर की दुर्बलता को दूर करके उन्हें बलिष्ठ करता है। पक्वाशयिक रोगों की यह उत्तम औषधि है। यह संकोचक होने के कारण आमाशय के रोगों में अतीव हितकारक है जब अनेक प्रकार की अत्यन्त तीक्ष्ण और विषैली औषधियों के सेवन से आंतों में अत्यन्त रूक्षता और विषैला असर पैदा हो जाने के कारण आंतों की धारण शक्ति नष्ट हो जाती है उस समय वट के दूध के प्रयोग करने से विशेष लाभ होता है। आमाशी सार, रक्त-

तीसारादि रोगों में इसका अच्छा उपयोग होता है। आंतों के या पेट के जिन रोगों में दूध पचता न हो, उन में वट (वड़) का दूध बड़ा अच्छा काम करता है। अजीर्ण रोगों में जब आहार का कोई पदार्थ पक्वाशय में हज़म नहीं हो सकता अथवा वमन के द्वारा तत्काल निकल जाता है, ऐसी अवस्थामें बड़ का अति पुष्टिकर दूध पथ्य रूप से दिया जासकता है, यह रक्तार्श रोग की पीड़ा में जब रक्त किसी प्रकार बन्द नहीं होता उस समय बड़ के दूध की ४-५ बूंदें दिन में २-३ बार खाने से रुधिर का गिरना तत्काल बन्द हो जाता है, इस के सिवाय आंतों में जख्म हो जाने से जब रुधिर आता है उस समय इसको देने से खून का गिरना बन्द हो जाता है। अधोगतरक्त पित्त और स्त्रियों के रक्त स्राव युक्त रक्त प्रदर में बड़ का दूध विशेष गुण करता है।

(२) नाना प्रकार के कुत्सित कर्म करने से जिन पुरुषों का वीर्य क्षीण और अत्यन्त पतला हो गया हो उनके लिये यह परम उपयोगी है, शरीर की साधारण दुर्बलता में भी इसको सेवन करने से शरीर पुष्ट होता है।

(३) पुरानी खाँसी, विशेषकर दमे की खांसी में इसकी ५-७ बूँदें नित्य खाने से बहुत लाभ होता है।

(४) जब शरीर में रुधिर की कमी के कारण अजीर्ण, मन्दाग्नि, आदि रोगों की शिकायत निरन्तर बनी रहती है उस समय इसको सेवन करने से शरीर में रुधिर और लावण्यता की वृद्धि होती है।

(५) बड़ का दूध स्नायुओं की दुर्बलता को दूर करता है। इस कारण यह नपुंसकता को विशेष उपकारक है, धातुदौर्बल्य और स्वप्न-दोष में अधिक हितकारक है।

(६) बड़ के दूध के साथ कपूर को घिसकर अंजन लगाने से नेत्र का धुंधलापन और जाला, फूला जाता रहता है।

(७) हाथ पैर की त्वचा के फटने पर अर्थात् बिमाइयों की घावों में वड़ के दूध को लगाने से बहुत जल्द आराम होता है।

(८) बड़ का दूध, हल्दी का चूर्ण मिला कर थोड़े से बेसन के साथ मुख पर लगाने से झांई मुहासे वगैरा शीघ्र शान्त होते हैं।

(९) दांत की पीड़ा में बड़ का दूध रुई की फुरैरी द्वारा लगाने से शीघ्र फायदा होता है। मस्तगी का चूर्ण मिलाकर दांतों में लगाने से पीड़ा तत्काल दूर होकर दांत दृढ़ होते हैं।

(१०) नेत्र के दुखने में जब लाली और पीड़ा अधिक होती है उस समय इसके दूध में भिगाया हुआ फोया आंख के पलकों के ऊपर रखने से पीड़ा कम हो जाती है और कनपटियों पर दूधका लेप करने से भी पीड़ा कम होती है।

(११) वड़ का पत्ता, सांभर नमक, वड़ दूध, कूठ इन सब को पीसकर लेप करने से रसौली बैठ जाती है।

(१२) पुराने जख्मों में बड़ के दूध का भीगा कपड़ा रखने से वे जल्दी भरने लगते हैं।

अलसी के चमत्कारी प्रयोग

[लेखक—श्री पं० कृष्ण प्रसाद जी त्रिवेदी बी० ए० आयुर्वेदाचार्य चाँदा (सी० पी०)]

संस्कृत में इसे 'अतसी' कहते हैं। यह तिलहन द्रव्य सर्व प्रसिद्ध है। जिस तरह उत्तर हिंदुस्तान में सरसों, और मारवाड़ में तिल तैल का प्रचार है, उसी प्रकार इधर मध्य प्रान्त में अलसी के तैल का प्रचार है। इधर इसे जवस कहते हैं। इसके तैल का रोगन जो रंगाई के कार्य के लिये बनाया जाता है, वह सर्वोत्कृष्ट होता है। इसके वार्निश के सामने अन्य तैलों की वार्निश कच्ची और हीन दर्जे की होती है। इधर के महाराष्ट्र लोग अलसी को भूनकर उसमें निमक, मिर्च मिला और पीस कर चटनी बना बड़ी लज्जत के के साथ खाते हैं। अलसी से हरे ताजे पत्तों की भाजी भी बनाकर खाते हैं। यह भाजी कास, श्वास एवं बात ग्रस्त रोगियों को विशेष लाभप्रद है। हमारे प्राचीन आचार्यों ने भी इसके विषय में लिखा है—

"पर्णमस्याः कासकफवातनुच्छ्वासहृत्तथा"

(निघंटुरत्नाकर)

धन्य है, हमारे पूर्वज ऋषिवरों के द्रव्य ज्ञान को जो उनके द्रव्य ज्ञान में दूषण लगाते हैं, वे स्वयं दूषित एवं बुद्धिभ्रष्ट हैं। अस्तु, हमें यहां इस घरेलु द्रव्य के कुछ स्वानुभूत चमत्कारी प्रयोगों को दर्शाना है—

(१) जुकाम पर

अलसी को साफ कर, तवे पर रख मंदाग्नि से भूँन लेवे। फिर उसको महीन पीसकर सम भाग मिश्री का चूर्ण मिला डिब्बे में भर रखें। जुकाम वाले रोगी को २ से ४ तोला तक, उष्ण जल के साथ प्रातः सायं सेवन करावें। ७ दिन के अन्दर ही सब कफ परिपक्व होकर सरलता से बाहर निकल जाता है। इससे कास (खांसी) भी दमन हो जाती है।

(२) श्वास पर

बड़ा ही चमत्कारी, सरल प्रयोग है—

अलसी (चूर्ण वगैरः करने की कुछ आवश्यकता नहीं) आध तोला लेकर, उसमें ४ तोला जल मिला चांदी की कटोरी (अभाव में कांच की कटोरी ले सकते हैं, किन्तु जो उत्तम गुण चांदी की कटोरी में होता है वह अन्य पात्र में नहीं होता) में भिगो कर ढांक कर रख देवे। १२ घन्टे बाद केवल जल को छान कर पी लिजिये। प्रातःकाल का भिगोया हुआ शाम को तथा शाम का भिगोया हुआ सवेरे, इस प्रकार दोनों वक्त इस अलसी जल के सेवन से श्वास ग्रस्त रोगी को बहुत कुछ शांति प्राप्त होती है, उसकी श्वास पीड़ा कुछ दिनों में स्वयं दूर हो जाती है। किंतु पथ्य परहेज का पूर्ण ज्ञान रखना चाहिये। हम इसी जल के साथ रोगी को समझाने के लिये मृगश्रृंग भस्म की योजना किया करते हैं, जिससे और भी शीघ्र लाभ होता है।

(ब) यह योग भी श्वास कास पर श्रेष्ठ है

अलसी ६ माशा, और मिश्री २ तोले लेकर। प्रथम अलसी को कूट छान कर जल में उबाले, पश्चात् उसमें मिश्री मिला (यदि सर्दी के दिन हों तो मिश्री के स्थान में शहद मिलावे) पिलावें। शीघ्र लाभ होता है।

(३) सुजाक, मूत्रकृच्छादि पर

(अ) अलसी ५ तोले और मुलेठी ३ माशे, एकत्र जो कुट कर, मिट्टी के पात्र में डाल, उसमें डेढ़ पाव जल मिला मंदाग्नि से पकावें। ५ तोला जल शेष रहने पर छान कर, उसमें २ माशे कलमी शोरा मिला, प्रति दो घन्टे से दो २ तोला पिलावे। इसे कुछ ज्यादा प्रमाण में बना और मिश्र मिला बोतलों में भर रख दीजिये। १०।१५ दिन तक काम दे सकता है। बहुत उत्तम योग है।

(ब) इस रोग पर अलसी फांट भी उत्तम कार्य करता है—अलसी और मुलैठी दोनों समभाग लेकर जौ कूट कर रक्खें। फिर ४ या ५ तोला चूर्ण को मटकी में डाल, उसमें १ सेर तक उबलता हुआ गर्म जल मिला, पात्र का मुख ढंक देवें। १ घन्टा पश्चात् छान कर उसमें २॥ से ३ तोले तक शोरा मिला बोतल में भर दीजिये। प्रति ३ घन्टे के बाद २॥ तोला या ३ तोले सेवन करें। २४ घन्टा बराबर सेवन करते रहने से, उसी दिन लाभ प्रतीत होता है। पेशाब का जलन करते हुये रुक रुक कर आना, रक्त मूत्रता, मूत्र के साथ राध आदि बहना, सुरसुराहट होना आदि शिकायतें शीघ्र दूर होती हैं, सुजाक की बहुत कुछ शिकायतें रफा हो जाती हैं।

(क) अथवा—अलसी १ तोला और मुलैठी ६ माशे दोनों को खूब कुचल कर, १ सेर जल

मिला अष्टमांश क्वाथ सिद्ध करे। इसमें से २॥-२॥ तोला की मात्रा, प्रत्येक मात्रा में १-१ तोला मिश्री मिला, प्रति ३ घण्टे से सेवन कराने से मूत्र की जलन तत्काल कम होकर मूत्र साफ होने लगता है।

(ङ) अथवा—२ तोला अलसी को आध सेर जल में, रात्रि के समय भिगो देवें। प्रातःकाल उसे खूब मल कर उसका लुआब निकाल, २ तोला मिश्री मिला सेवन करे। इससे स्वप्नदोष तथा तज्जन्य सूजाक शीघ्र ही शमन हो जाता है।

(४) वातकफजन्य विकारों के शमनार्थ

यह प्रयोग हमारा अनुभूत, बहुत उत्तम है

५ तोला अलसी को नवे पर, मंदाग्नि से भून कर, महीन चूर्ण करे, तथा उसमें समभाग मिश्री एवं १ तोला काली मिर्च का चूर्ण मिला, शहद के साथ घोट कर, ३ से ६ माशे तक की गोलियाँ बना रक्खें। बच्चों को ३ माशा या उससे भी कम मात्रा, और बड़ों को ६ माशा की मात्रा, प्रातः सायं सेवन करावें। इस पर १ घंटा तक जल नहीं पीना चाहिये।

(५) मूत्रकृच्छ्र पर

यह प्रयोग शीघ्र लाभकारी है।

अलसी ५ तोला खीरा, ककड़ी के बीज ४ तोला, धनियाँ, गोखरू, बिहीदाना, ईसबगोल और बबूल का गोंद प्रत्येक ३-३ तोले, आँवला सूखा २ तो० और शीतलचीनी १ तोला लेकर, सबको एकत्र जौ कुट कर, शीशी में भर कर रक्खें। मात्रा १ से ३ तोला लेकर, २० तोला जल में, रात्रि के समय भिगो देवें। सवेरे मल छान कर, उसकी ३ मात्रा बनावें, प्रत्येक मात्रा में २॥ तोला मिश्री मिला, दिन में ३ बार सेवन करावें।

(६) हैजा पर

अलसी का चूर्ण ३ से ७ माशे तक लेकर उसमें ५ तोला उष्ण जल मिला, ठंडा कर ३ बार पिलावे। इसी प्रकार बार २ पिलाने से हैजा में लाभ होते देखा गया है।

(७) पुष्टि पर

सरल चिकित्सा का अतसीमोदक नामक यह प्रयोग श्रेष्ठ लाभ प्रद है।

उत्तम अलसी १ पाव (२० तोला) तथा सफेद मूसली, असगंध, शतावर, केवांच बीज, सेमर का मुसला, बिदारीकंद और अकरकरा प्रत्येक २-२ तोले, काली मिर्च और छोटी इलायची १-१ तोला, तज, पत्रज और जायफल प्रत्येक ६-६ माशे, केशर (असली) ३ मासे। इन सब द्रव्यों को महीन पीस कर आध सेर घृत में भून लेवें। १ सेर उत्तम खोया को भी घी में भून कर, और बादाम, पिस्ता, छुहारा, किशमिश, चिलगोजा, अखरोट आदि मेवा के बारीक टुकड़े कर तथा मिश्री २ सेर चूर्ण कर सब को एकत्र मिला १—१ छटाँक के मोदक बना रक्खें।

मात्रा—१ या २ मोदक, गरम दूध के साथ, प्रातः सायं सेवन करने से मूत्र विकार, वातविकार कमजोरी दूर होकर, बल वीर्य की खूब वृद्धि होती है।

वाह्य उपयोग

(१) निद्रा नाश पर अंजन

अलसी तथा रेंडी का शुद्ध तैल सम भाग एकत्र कर, काँसी की थाली में कांस्य पात्र से ही खूब घोट कर, आँख में अंजन लगावे, उत्तम निद्रा आती है।

छाती की पीड़ा, शोथ आदि पर

अलसी ५ तो० को जल में पीस, उसमें सुहागा १ तो० और पोहकरमूल १ तोला महीन चूर्ण कर मिलावे और आग पर चढ़ावे, उसी में १ तोला मोम भी डाल देवे, जब मोम गल कर सब एक जीव हो जाय, तब किसी साफ कपड़े की पट्टी पर उसे फैला कर, सुहाता २ छाती पर बाँध कर ऊपर थोड़ी रुई बाँध देवे। जब यह ठंडा हो जाय तब इसी प्रकार दूसरी गरम पट्टी बाँधनी चाहिये। दिन रात में रोग की प्रबलता के अनुसार ४। ५ बार इस प्रकार बाँधने से फुप्फुस सन्निपात जन्य या अन्य कोई भी छाती की पीड़ा एवं शोथ नष्ट हो कर रोगी का घोर कष्ट शीघ्र दूर हो जाता है। फेफड़े में जमा हुआ कफ इस से विलीन होकर सरलता से निकल जाता है। ऐण्टीफ्लोजिस्टिन से भी यह बढ़िया प्रयोग है।

(३) पसली चलना या डब्बा रोग पर

उक्त प्रयोग श्रेष्ठ है। अथवा अलसी का चूर्ण २० तोला, तिली का तेल २ तोला और जल १ तोला, सब को एकत्र मिला आग पर पकावे। जब लेई सी हो जाय तब उक्त प्रकार से वस्त्र की पट्टी पर फैला कर ३।४ बार सुहाता २ बांध लेने से पसली में जमा हुआ कफ पिघल कर, पीड़ा दूर हो जाती है।

(४) बद या व्रणों को पकाने के लिये पुल्टीस

अलसी के चूर्ण को दूध या जल में मिला, उसमें थोड़ा हल्दी का चूर्ण डालकर, खूब पकावे। और जहाँ तक सहन हो सके गरम २ ही बद या या कच्चे व्रणों पर जाड़ा लेप कर बाँध दो और ऊपर से खाने का पान बाँध देवे। इसी प्रकार ६ बार बाँधने से बद या व्रण परिपक्व हो फूट जाता है। अन्दर की जलन, चीस, पीड़ा दूर होती है। बड़ी २ अन्तर विद्रधि भी इस उपाय से ऊपर को उभर कर फूट जाती हैं, किन्तु अन्तर विद्रधि पर यह पुल्टीस कई दिनों तक लगातार बांधना होगा।

(५) अग्निदग्ध व्रणों पर परम हितकारी यह प्रयोग तो सर्व प्रसिद्ध ही है—अलसी का शुद्ध तेल और चूने का स्वस्छ जल समभाग एकत्र कर, खूब घोटने से वह श्वेत मलहम जैसा हो जाता है, बस इसी मलहम का प्रलेप करने से, आग से जले हुये स्थान पर शान्ति शीघ्र ही प्राप्त होकर, व्रण की पीड़ा दूर हो जाती है, और नित्य १ या २ बार इसका प्रलेप करते रहने से शीघ्र ही लाभ हो जाता है।

अनुभूत प्रयोग

(लेखक—पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य)

नेत्राभिष्यन्द
आंख दुखना

बड़ी हरड़ का बक्कल, सफेद चन्दन, नीलोफर, मुलैठी, दारुहल्दी, रसौत, गेरू, भुनी हुई सफेद फिटकरी, डली का कपूर, इन सब चीज़ोंको १-१ माषे लेकर बारीक पीस कपड़छन कर ४ रत्ती अफीम मिलाकर सब को बारीक मलमल के कपड़े में रखकर पोटली बनालें इस पोटली को बकरी का दूध, स्त्री का दूध, ग्वीग्वार के पट्ठे का रस, गुलाब का अर्क, इनमें से किसी एक में अथवा चारों को मिलाने पर उसमें डुबो २ कर आंख के ऊपर लगाने से बहुत शीघ्र आराम हो जाता है, सुर्खी कड़क, सूजन वगैरा एक दिन में जाती रहती हैं।

भीमसेनी कपूर

कपूर ८ तोले, छोटी इलायची के दाने २ तोले, समुद्रफेन १ तोले, केसर काशमीरी माषे ६ नागर मोथा, १ तोले, निर्मली का बीज १ तोले, अगर १ तोले, कस्तूरी बढ़िया ३ माषे, सफेद चन्दन ३ माषे इन सब चीजों को खूब बारीक कपड़छन करके गुलाब के अर्क में घोंटकर गोल टिकिया बनालें सूखने पर इनको एक हँडिया या फूल के कटोरे में रखकर ऊपर से दूसरी सराई या फूल (कांसी) की कटोरी रखकर दोनों की संधि को आटे से अच्छी तरह बन्द कर दें फिर नीचे दीवे में मोटी बत्ती जलाकर धीमी २ अग्नि से उड़ाले ऊपर की कटोरी पर पानी में भिगोया हुआ कपड़ा रखता रहे जिसमें वह गरम न होने पावे एक प्रहर की आंच देने के बाद फिर बन्द कर दे ठण्डा होने पर ऊपर लगे पदार्थ को खुरच कर निकाल ले इसको प्रतिदिन नेत्रों में डालने से अत्यन्त लाभ होता है नेत्रों की ज्योति के लिये अत्यन्त लाभ प्रद है।

सूज़ाक
के लिये अकसीर पिचकारी

फिटकरी सफ़ेद ३ माषे
तूतिया भुना हुआ ३ माषे
सफ़ेदा काशग़री ३ माषे
माज़फल ३ माषे
पपड़िया कत्था ३ माषे
संगजराहत ३ माषे
पोटासियम परमैंगिनेट २ रत्ती
दम्मुल अख़वैयन ३ माषे
गिले अरमनी ३ माषे

विधि—इन सब चीज़ों को लेकर बारीक कपड़ छन करके ६ माषे इस दवाई को बबूल की छाल का काढ़ा ४ तोले में मिलाकर पिचकारी करें। यह पिचकारी नये और पुराने सूज़ाक को जड़ से दूर कर पेशाब की नली को बिलकुल साफ करती है। और खानेकी दवाइयों में हमारे यहां का कृच्छ्रनाशक सेवन करें, जिसके इस्तेमाल से पेशाब की जलन चिनक वग़ैरा तो २४ घंटे में ही जाती रहती है सिर्फ ७ दिनके सेवन से सूज़ाक को पूरा फ़ायदा

पहुंचता है।

श्वास के दौरे के लिए

हरिताल तबकी, नरकचूर दोनों को गौ के घी में घिसकर गोली बनाकर चिलम में रखकर दौरे के वक्त हुक्का पीवें दमा तुरन्त दब जायेगा।

\+ \+ \+

नामर्दी के लिए लेप

दारचीनी असली ३ माशे, पारा ३ माशे, अकरकरा ३ माशे, सफेद चिरमिटी ४ माशे जायफल ३ माशे लौंग १॥ तोले तेजपात ३ माशे आक का दूध ३ माशे, सफेद कनेर की जड़ की छाल ३ माशे सब को पान के रसमें पीसकर गर्म करके लेप करें और पान गरम करके बांधें।

\+ \+ \+

धातुपौष्टिक चूर्ण

अलसी १ छटांक
मूसली स्याह "
मूसली सफेद "
सैमल की मूसली ,,
तालमखाना आधी छटांक
तज कलमी "

इन सब को पीस कर चूर्ण करके १-१ तोले सुबह शाम पाव पाव भर दूध में लेवें। मिर्च खटाई वगैरा से परहेज़ करें।

\+ \+ \+

नए सूजाक के लिए

ढाक के फूल रात को गरम जल में भिगोकर सवेरे मल, छान कर शर्बत बजूरी मिलाकर या फोका भी ले सकते हैं।

\+ \+ \+

पुराने सूज़ाक के लिए

शकरी फ़ालसे की जड़की छाल रातको गरम जल में भिगोकर मलकर छानकर शर्बत बजूरी मिला कर पी लेवें।

\+ \+ \+

पुराने क़ब्ज़ के लिए

सौंफ की गिरी ५ तोले, १५ तोले घीग्वार के गूदे में घोटकर चने बराबर गोलियां बनावें १-१ गोली सुबह शाम पानी के साथ लेवें।

\+ \+ \+

क्षुधावर्धक चटनी

सब से पहले कागज़ी नींबू का स्वरस ऽ१ सेर निकाल कर उसमें काली, मुनक्का बीज निकाली हुई आधा पाव ऽ= इमली बीज निकाली हुई आध पाव ऽ= गूदा अमलतास ऽ। पाव भर इन तीनों चीज़ोंको ख़ूब अच्छी तरह से सिलबट्टे पर चटनी की तरह पीस कर उपरोक्त नीबू के अर्क में मिलाकर २४ घण्टे भीगा रहने दो उसके बाद ख़ूब मलकर साफ कपड़े में छानकर रखलो। फिर नीचे लिखी चीजों को कूटपीस बारीक छलनी में छानकर ऊपर के छने अर्क में डाल दो।

अजवायन, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, छोटी इलायची, तेजपात, दाल चीनी इन सब चीजों को २-३ तोले लेकर पीसलें फिर भुना हुआ सुहागा, नौसादर एक एक तोले और काला नमक, भुना हुआ सफेद ज़ीरा, काला ज़ीरा सैंधा नमक इनको ६-६ तोले लेकर बारीक पीस कर इनको और ऊपर के चूर्ण को दोनों को लेकर उपरोक्त नीबू के अर्क में मिलाकर चटनी सी बनावें। इस चटनी को चीनी या शीशे के मर्तबान में रक्खें। रोज़ रात को सोते

लण्डन की सबसे बूढ़ी स्त्री का देहान्त

११० वर्ष में भी उसकी भूख युवकों जैसी थी

इंलैंड की सबसे बूढ़ी स्त्री श्रीमती केरोलिन मेरियटका, जिसकी उम्र ११० वर्ष की थी, स्लोटन हीथ सर्रे के हस्पताल में देहान्त हो गया।

श्रीमती मेरियट ने अक्टूबर में हस्पताल में ११० वीं वर्षगांठ मनायी थी और मित्रों को चाय की दावत दी थी।

उसको क्रीमियन युद्ध तथा रानी विक्टोरिया के राज्याभिषेक के दिन अच्छी तरह याद थे।

उसने दो बार विवाह किया था। उसके दूसरे पति की मृत्यु १८०६ में हुई थी। ८५ वर्ष की आयु तक वह एक धोबी-घर में काम करती रही।

समय ६ माषे चाट लेने से पाखाना खूब साफ़ आता है, भूख खूब लगती है। जी का मिचलना, वमन, खट्टी डकारों का आना, पेट का अफारा, कब्ज ये शिकायतें बहुत जल्द दूर होती हैं। अत्यन्त स्वादिष्ट और पाचक है हमारी अनुभूत है।

पैदा होने के समय वह इतनी दुर्बल थी कि उसे कपड़े नहीं पहिनाये जा सकते थे। इतनी उम्र में भी उसकी भूख पर नर्सों को आश्चर्य होता था। अर्जुन ४ जनवरी

—:※:—

१६३ वर्ष का बूढ़ा अभी तक काफी चुस्त है

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आंखों देखे हालात बताता है

कहते हैं कि बशीनगांव (पबना) का रहने वाला मुहम्मद आखिरुद्दीन सरकार, १६३ वर्ष की आयु का है। वह ११७६ बंगाली सम्वत् में पैदा हुआ था उसकी दृष्टिशक्ति लुप्त हो गई है और वह इतना बूढ़ा हो गया है कि चल-फिर भी नहीं सकता। वह केवल दूध और केलों पर निर्वाह करता है। उसके लड़के, पोते और पड़पोते भी हैं। वह ईस्टइण्डिया कम्पनी के हालात खूब अच्छी तरह बयान कर सकता है। वह अशिक्षित है इसलिए वह विस्तार से कुछ नहीं बता सकता। अर्जुन ४ जनवरी

—:(*):—

ईश्वर की विचित्र लीला

गाय का अजीब बच्चा

दूध और लहू की अद्भुत कहानी

मुरादाबाद ३ जनवरी

मौजे चन्दनपुर गत सप्ताह में एक गाय ने अन्धा बछड़ा जना। उसकी आंखों के चिन्ह कुतिया के बच्चे की तरह थे। उसका मुँह थनों में दे देते तो वह ख़ूब दूध पीता था। दो दिन बाद वह मर गया।

अब उसकी खाल में भूसा भर कर दूध दुहते समय मां के सामने रख देते हैं तो दो थनों से दूध और दो से लोहू निकलता है। पश्चात् दूध तो लोहू बन जाता है और लोहू दूध बन जाता है। इस कारण गाय को दुहना छोड़ दिया है, किन्तु दूध व लोहू स्वयं टपकते और बदलते रहते हैं।

इस सम्वाद से गांव में हर समय मेला-सा लगा रहता है। कोई इसे भूतों का प्रकोप बताता है तो कोई नज़र बताता है। अर्जुन ५ जनवरी

—:o:—

संसार का सबसे बड़ा मक्खियों का छत्ता

सन् १९११ में कुछ मधुमक्षिकाओं ने अमेरिका के एक किसान के यहाँ खिड़की में छता बनाया। इसके बाद और भी मक्षिकाएं वहां आईं और छत्ता दिन ब दिन बढ़ता गया। इस समय सब घर एक छत्ताही होगया है। अभी एक कोना दीवार का तोड़ा गया था, जिसमें क़रीब साढ़े सात मन शहद निकला था। अनुमान है कि उस घर में अंदाज़न २०० मन शहद है। घर में बच्चे इत्यादि सब रहते हैं, लेकिन मक्खियां किसी को भी नहीं काटती।

—:o:—

बदला लेने वाला वृक्ष

मध्यभारत में एक प्रकार का अद्भुत वृक्ष कहीं २ पाया जाता है, जिसमें बिजली होती है। इसकी पत्तियों में इतनी विद्युत शक्ति होती है कि यदि आप उन्हें छुएं तो आपको ज़ोर का धक्का लगेगा और आप थर थर कांप जाएंगे। इस वृक्ष की बिजली का प्रभाव ५० फीट की दूरी पर रक्खे हुए चुम्बक पर पड़ता है। दोपहर के समय विद्युत शक्ति तेज होती है और आधी रात को सबसे कम। वर्षा के समय विद्युत शक्ति गायब हो जाती है, पक्षी तथा कीड़े मकौड़े इस वृक्ष से दूर ही दूर रहते हैं। नैपाल में सेमल का ऐसा वृक्ष पाया जाता है जो दूसरे वृक्षों को खा जाता है। इसके बीजों को पक्षी अन्य वृक्षों के खोखले में डाल देते हैं। यह वहां जड़ पकड़ लेता है और धीरे २ उसकी जड़ें फैलना शुरू हो जाती हैं। यहां तक कि वे अपने शिकार को पूर्ण रूप से परिवेष्टत कर हज़म कर जाता है। और पुराने वृक्ष के बजाय वहां पर एक नया हरा-भरा सेमल का वृक्ष खड़ा हो जाता है।

—:o:— नवयुग

कलियुगि कुम्भकर्ण

लोग कुम्भकर्ण की ६ महीने सोने की बात पर ताज्जुब करते हैं पर आज भी संसार में ऐसे व्यक्ति जीवित हैं जो सोने के विषयमें कुम्भकर्ण के भी चचा हैं। हेम्पशायर (इंगलैंड) के एक गांव में एक स्त्री है जिसे २५ वर्ष पूर्व एक दिन ज़ुकाम हो गया था तब से वह बिस्तर पर ही लेटी हुई है। उसे यह विश्वास ही नहीं होता कि उसका ज़ुकाम जाता रहा है। संयुक्तराष्ट्र अमेरिका में जोज़फ प्लमर नामक एक व्यक्ति; इस कारण रोने-धोने के लिए बिस्तर में मुंह छिपाकर जा बैठा कि उसके माता पिता उसकी मन चाही लड़कीसे उसका विवाह करने पर राज़ी नहीं हुए। ४० वर्ष तक वह बिस्तर में ही पड़ा

समालोचना

रसायनसार

श्रीयुत शास्त्री जी आप की भेजी हुई रसायनसार पुस्तक प्राप्त हुई इस पुस्तक को आद्योपान्त देखने से मालूम होता है, कि ग्रन्थ-कर्त्ता ने शास्त्रीय सिद्ध प्रयोगों को तथा अनेक कष्ट साध्य रस क्रियाओं को बड़ी सुगम तथा सरल रीति से स्वयं अनुभव करके लिखा है, सब से श्रेष्ठ बात यह है कि आप ने मूल ग्रन्थ की श्लोक रचना करके फिर उसका स्वयं भाषानुवाद भी कर दिया है, जिससे प्रत्येक विषय में किसी प्रकार की शंका भी नहीं रह सकती। इसके देखने से यह भी पता लगता है कि ग्रन्थकार को विचार इसे पांच भागों में पूर्ण करने का था फिर भी इस प्रथम भाग में रसायन शाला वालुका यन्त्र, गजपुट दोला-यन्त्रादि विचित्र सुन्दर २१ चित्रों द्वारा इस पुस्तक को अलंकृत करते हुये इनके बनाने की विधि परिभाषा, पारद शुद्धि, पारद बुभुक्षा, गन्धक जारणादि प्रक्रिया बड़ा उत्तम स्वानुभूत विधि से लिखकर, ताल चन्द्रोदय, मल्ल चन्द्रोदयादि की बहिर्धूम, अन्तर्धूम विधियां लिखते हुये अन्त में ज्वर, रक्तपित्त, क्षयादि रोगों पर अनेक अनुभूत प्रयोग लिखे हैं तथा रसायनाचार्य जी से हुये अनेक वैद्यों के शास्त्रार्थ को भी इस पुस्तक के अन्तिम भाग में लिखकर इस ग्रन्थ की उपयोगता को अत्यधिक बढ़ा दिया है। रचना बड़ी सरल सुबोध, चित्ताकर्षक है। कागज की छपाई, सफाई आदि भी प्रशंसनीय हैं। सचमुच रसायन शास्त्री जी ने इस अपूर्व ग्रन्थ को लिखकर आयुर्वेद की बड़ी सेवा की है। इससे वैद्य बन्धुओं का विशेष उपकार होगा। ग्रन्थ प्रत्येक भारतीय चिकित्सक एवं रसायन प्रेमियों के लिये अत्यन्त उपादेय, तथा संग्रहणीय है। मूल्य ५) रुपये।

तैल संग्रह

इस पुस्तक के लेखक ललितहर कालेज के प्रिन्सिपल श्री विश्वनाथ जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य महोदय हैं। आपने इस पुस्तक में तैल विषयक सभी ज्ञातव्य विषयों का नवीन और प्राचीन ढंग से जैसे कि तेलों का गन्ध रहित करना, पतला करना, रंगना सुगन्धित करना, कस्तूरी केशरादि चीजों का विशेष विधि से मिलाना, तथा बाज़ारू तेलों के गुण और दोषों का वर्णन और साथ ही शास्त्रीय प्रसिद्ध २ तेलों के बनाने की विधि और प्रचलित तैल आँवला, गुलाब, शब्बरा, चमेली, नीबू इत्र वगैरा आदि के अनेक उत्तमोत्तम नुसखे बड़ी खूबी के साथ लिख दिये हैं जिनके द्वारा चिकित्सकों के अतिरिक्त साधारण मनुष्य भी अपनी जीविकोपार्जन कर सकते हैं। पृष्ठ संख्या १५० से ज़्यादह होते हुये भी सर्वसाधारण के लिये मूल्य सिर्फ ॥।) बारह आने मात्र रक्खा है। मैं निवेदन करता हूँ कि पाठक गण इसे एक बार अवश्य मंगाकर पढ़ेंगे और लाभ उठावेंगे।

(सम्पादक)

रहा। मज़ा यह कि उसका स्वास्थ्य भी बड़ा अच्छा था। लोगों ने दूसरी लड़की से विवाह करने को बहुत समझाया पर वह टस से मस न हुआ और उसी हालत में मर गया परन्तु अब एक ऐसे व्यक्ति का पता चला है जिसने इन सबको मात कर दिया है यह व्यक्ति जर्मन है और म्युनिच का रहने वाला है इसका नाम फ्रिजट वेबर है। ६० वर्ष तक वह इस भय से बिस्तर से निकला ही नहीं कि कहीं उसे कोई छूत की बीमारी न लग जाय। लन्दन के अस्पताल में ४ साल हुये एक व्यक्ति आराम लेने के लिये गया। वह अब तक वहीं पड़ा हुआ है।

जीवन-सुधा

मान्यवर महोदय !

आप की सेवा में जीवनसुधा की एक कापी नमूनार्थ भेजी जाती है। इसे आद्योपान्त पढ़कर आप अच्छी प्रकार समझ जायेंगे कि स्वयं तथा अपनी भावी सन्तान को स्वस्थ, हृष्ट, पुष्ट एवं नीरोग होने के लिए इस प्रकार के पत्र की कितनी आवश्यकता है, इसका बच्चोंके रोगों पर सुन्दर एक बृहद्विशेषांक बड़ी सजधज के साथ अनेक सुन्दर रंगीन चित्रों से अलंकृत लगभग दो सौ २०० पृष्ठों से अधिक में पूर्ण होकर १ मई को प्रकाशित होगा। जिसमें बच्चों को सुन्दर, स्वस्थ, मोटा ताजा बनाने के अनेक अनुभूत नुसखे, उनके पालन पोषण सम्बन्धी विविध विषय, बड़े २ योग्य विद्वान् डाक्टर, वैद्य, हकीमों की लेखनी द्वारा प्रकाशित होंगे, आप यह भी अच्छे प्रकार समझते हैं कि आप का सुन्दर, स्वस्थ, हृष्ट, पुष्ट, हँसता हुआ प्रसन्न बच्चा ही आप की सब से मूल्यवान सम्पत्ति है। और यह सब कुछ आप पर ही निर्भर है, इसी लिए यदि आप अपने गृहस्थ को सुख मय बनाना चाहते हैं तो आज ही वापिसी डाक से सिर्फ दो २) रुपये कार्यालय को भेजकर जो कि आप के लिए विशेष व्यय की बात नहीं है साल भर के लिए सम्पूर्ण अंक और विशेषांक भी मुफ्त में लीजिए। इस अंक के भेजने पर यदि आप की तरफ से कोई निषेध का उत्तर हमें अप्रैल की २५ ता० तक प्राप्त नहीं हुआ तो हम आप को अपना स्थायी ग्राहक समझकर १ मई को शिशुरोग विज्ञान विशेषांक वी० पी० द्वारा भेज देंगे। यदि ग्राहक होना स्वीकार न हो तो कृपया शीघ्र ही पत्र द्वारा सूचित कर दें जिससे कि व्यर्थ में कार्यालय को डाक व्यय खर्च न करना पड़े। जो महानुभाव हम पाँच ग्राहक नवीन बना देंगे उनको भी यह विशेषांक मुफ्त भेजा जायगा। स्त्री रोगों पर स्वर्ण पदक प्राप्त महिला रोग विज्ञान, सूजाक-आतशक विशेषांक जिनका मूल्य प्रत्येक का २) है मंगाकर देखें।

—मैनेजर

सम्पादक- -

वार्षिक मूल्य २) प्रति अङ्क ।)

जीवन सुधा के सर्वाङ्ग पूर्ण
बृहत्काय बालरोग विज्ञान विशेषाङ्क के लिये
आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् व सुलेखकों से लेखयाचना

मान्यवर महोदय—

आजकल हमारे अभागे देश में शिशुओं के रोग और उनकी मृत्यु संख्या प्रति वर्ष किस तेज़ी के साथ बढ़ती जा रही है यह आप से छिपा नहीं है। हमारी और हमारे देश की भावी आशायें शिशुओं पर ही निर्भर हैं फिर उनका अकाल में काल कवलित हो जाना देश का दुर्भाग्य नहीं तो क्या है ? क्योंकि ये नन्हीं सी जान वाले अबोध प्राणी सिवाय रोने के और कुछ कहना ही नहीं जानते, ऐसी हालत में चिकित्सक को रोग ज्ञान करने में बड़ी कठिनता का सामना करना पड़ता है। इस आवश्यकता को लक्ष्य कर सुधा के सँचालक महोदयों ने बालरोगों पर एक सर्वाङ्ग पूर्ण विशेषांक निकालने का निश्चय किया है। जिसका सम्पूर्ण कार्य-भार आप जैसे विद्वान् ओजस्वी लेखकों के सहयोग एवं सहायता पर ही निर्भर है। आप आयुर्वेद के प्रकाण्ड पण्डित तथा अनुभवी चिकित्सक हैं और साथ २ आप की लेखन शैली भी प्रशँसनीय है। विशेषकर सुधा पर तो आप की सदैव से कृपा रही है। विषय निर्धारण के लिए एक संक्षिप्त सूची नीचे लिखी गई है, यदि इसमें कोई विषय आप आवश्यक समझें जो कि लिखने से रह गया हो तो उसे आप और बढ़ा सकते हैं। इसी लिये मैं आप से निवेदन करता हूँ कि सूचना पाते ही निम्नलिखित किसी भी विषय पर अपने गम्भीर गवेषणा पूर्ण लेख अपने श्लोक सहित अधिक से अधिक १० अप्रैल तक कार्यालय में भेजने की कृपा करें। अतएव आशा ही नहीं किन्तु पूर्ण विश्वास है कि कार्य की अधिकता होते हुए भी अपने अमूल्य समय का कुछ भाग प्रदान कर इस महत्कार्य भार में हमारी सहायता करेंगे। और साथ ही यह भी निवेदन है कि आप जिन २ विषयों पर लेख भेजना पसन्द करें वे विषय शीघ्र ही कार्यालय को लिख दें ताकि अन्य विषयों की पूर्ति भी शीघ्र की जासकें। कविता और प्रहसन इनमें से भी कोई अवश्य भेजें।

(सम्पादक)

विषय निर्धारण सूची

१—शिशु की प्रसव के बाद स्वास्थ्य परीक्षा।

२—स्वस्थ शिशु की प्रसव के बाद उपचर्या, कृत्रिम श्वासक्रिया, स्नान,

क—नालच्छेदन।

३—बच्चे का स्नान, शिशु का आकार व उसका वज़न, विरेचन।

क—मातृ दुग्ध और शिशु स्वास्थ्य, दूध पिलाने की रीतियां, दूध पिलाने वाली माता का रहन सहन व पथ्यापथ्य। दिन रात में कितना दूध पिलाना चाहिए।
ख—अधिक समय तक दूध पिलाने से जच्चा और बच्चा दोनों को कठिनाइयां।
ग—दुग्ध वर्धक उपाय।
घ—माता के दूध के न होने पर गौ, बकरी, धाय का दूध, योग्य धाय व उसका कर्त्तव्य।
ङ—दूध का छुड़ाना, किस अवस्था में माता को दूध नहीं पिलाना चाहिए।
४—बालोपयोगी क्रत्रिम भोजन, शिशु पालन विधि, शिशुशयन, वस्त्र, आभूषण, वासस्थान, दांतनिकलना, बच्चों की खराब आदतें मिट्टी खाना वगैरा।

बालकों के रोग और उनकी चिकित्सा

५—**बच्चों के पेट की बीमारियाँ** बदहज़मी (डिस्पैप्सिया Dyspepsia कमलवाय (जैन्डिस Jaundice), अतीसार (डायरिया Diarrhœa) पेचिश डिसेन्ट्री (Dysentary), पेट में केंचुए व चुनचुने। दुग्ध वमन, दुग्धदोष ज्ञानोपाय, शुद्ध दुग्ध परीक्षा,
६—पारगर्भिक, बालशोष (बच्चों का सूखना) व उसकी चिकित्सा।
क—यकृत, जलोदर तिल्ली, उदरशूल, मृत्तिकाभक्षण व उसकी चिकित्सा।
ख—नाभिपाक, नाभिशोथ।
७—बच्चों के दूध के दांत व पक्के दांत निकलने का समय, उनके रोग और चिकित्सा। बच्चों को अफीम खिलाना और उससे हानि व लाभ। आयु के अनुसार औषधमात्रा की व्यवस्था। शिशु रोग ज्ञानोपाय व चिकित्सा तथा रोगोत्पत्ति के कारण।

बच्चों की दिमागी बीमारी

८—बच्चों का कन्वल्शन (Convulsion) कमेड़े बच्चों का आक्षेप।
दिमाग में खून का जमना (कँजश्चन ऑफ दी ब्रेन Congestion of the brain)
क—हाइड्रो कफ़लज़ (Hydro Cephalus) मस्तिष्क जल सँचय।
ख—मृगी (एपिलिपसी Epilepsy)
ग—बच्चों का कम्पवायु (कोरिया Chorea)
घ—बच्चों का फ़ालिज़ (पैरालेसिज़ Paralysis)
ङ—बच्चों का अचानक चौंकना, रात्रि त्रास (नाइट टेरर्ज़), धनुर्वात (ट्रस मसनी सैंशियम Trusmusnicentiom)

बच्चों के फुप्फुसीय रोग

९—उत्फुल्लिका रोग कैपेलेरीब्रोंकाइटिस (Capiliarybronchitis) हब्बा डब्बा या पसली चलना और उसकी अनुभूत चिकित्सा। खांसी (ब्रोंकाइटिस न्युमोनिया Pneumonia), पसलीशूल, जुकाम, काली खांसी (हूपिंग कफ whooping cough) यक्ष्मा (थाइसिस) (phthisis)

दाने वाली बीमारियां

१०—स्मालपौक्स (Small-pox) छोटी माता, वेरी सिल्ला (Varicella) (बड़ी माता), रोवियोला (Roliola) (खसरा), मसूरिका, स्कारलाटेना (Scarletina) (बच्चों का लाल बुखार), मन्थर ज्वर, म्यादी बुखार।

क—टीका लगाने का तरीका (विकसाइना-Vaccina)

ख—टीका लगाने के नियम, टीके के अच्छी तरह लगने के लक्षण,

ग—टीका लगाने के पश्चात् चिकित्सा, टीका और उनसे हानि व लाभ पर भिन्न २ मतों का निरूपण, शीतला में चिकित्सा की उपेक्षा।

बच्चों के गले की बीमारियां (क्रूप CROUP)

११—डिफ्थीरिया (Diphtheria) (बबाई खुर्नाक), टांसलाइटिस, (Tonsillitis) (खुर्नाक) स्टोमाटाइटिस, (Stomatitis) मुँह हलक का आ जाना। सफ़ेद मुँह का आना,

भिन्न २ व्याधियां

१२—शिशुपदंश, रिकैट्स (अस्थि का टेढ़ा व नरम होना), बच्चों की इन्द्रियां वरण चर्म का न खुलना, सदन्त बालक का जन्म, कर्ण वेधन, अनामक, पथरी, शय्या मूत्र त्याग, तालुपात, मुखपाक, अहितुण्डिका, बच्चों का तशन्नुज (ऐंठन) टिटेनस नैनाटोरम Tetanus neonotorum)

१३—विरुद्ध मस्तक बालक का जन्म, हिचकी, तृषा, बच्चे का बन्द गुदा वाला पैदा होना। कांच निकलना (प्रोलैप्ससएनी Prolapsusani), होंट कटा बच्चा-(हयरलिप Pair-lip) प्रराइगो (Brurigo) बच्चों का गंज, हरपीज (दाद), स्कैबीज़ (Scabies) गीली खारिश, अर्टीकेरिया urticaria पित्ती उछलना।

१४—नेत्र रोग, त्वचारोग, हकलाना व तुतलाना, गुदापाक, पथरी, पेशाब का जमना, ग्रहबाधा, लू लगना, कण्ठमाला।

१५—जन्मघुटी, शिशुरोगों पर अनुभूत प्रयोग, सूखियामसान की अनुभूत चिकित्सा, कुकूणक, अजगल्लिका, शयनावस्था में दांतों का काटना।

ग्राहकों से निवेदन

'सुधा' के प्रेमी पाठकों से निवेदन है कि अप्रैल का अंक जो कि सर्वाङ्गपूर्ण बालरोग विज्ञान विशेषाङ्क के रूप में निकलेगा, जिसमें अनेक सुन्दर २ चित्र, बच्चों के पालन-पोषण सम्बन्धी विविध विषयों पर बड़े २ डाक्टर, हकीम, वैद्यों के गम्भीर गवेषणा पूर्ण लेख, गृहस्थोपयोगी अनुभूत नुसखे प्रकाशित होंगे। १ मई को वी० पी० किया जायगा, यह विशेषाङ्क ग्राहकों को मुफ्त भेंट किया जायगा। इसलिये नवीन ग्राहकों को ऐसा सुअवसर हाथ से न खोना चाहिये। जो महाशय हमें पांच ग्राहक नवीन बना कर भेजेंगे उनका नाम धन्यवाद सहित प्रकाशित कर विशेषाङ्क भी मुफ्त भेजा जायगा।

आशा है आप सदैव की तरह विशेष कृपा करेंगे।

—सम्पादक

स्वर्गीय रसायनशास्त्री श्री शीतलप्रसाद जी वैद्यराज ।

अध्यक्ष—

श्री पं० महावीर प्रसाद जी राजवैद्य ।

संसार से त्रय ताप के सन्ताप को हर लीजिये, विस्तार घर घर में प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये ।
शास्त्र सम्मत, ज्ञान निर्मित, योग शुभ बतलायगी, राष्ट्र की हितकामनायुत, स्वास्थ्य को फैलायगी ॥

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः । पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ॥

वर्ष ६ { फालगुण, वीरनिर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९९२ फरवरी सन १९३६ } अङ्क [illegible]

फूल !

अहो फूल ! क्यों आज यहाँ पर फूले नहीं समाते हो,
रूप रंग हो अजब दिखाते मनहीमन मुसकाते हो ।
शीतल मन्द सुगन्ध वायु की झोंकों से इतराते हो,
सुठि सुन्दरता देख देख कर निजमनमें सुख पाते हो ॥
भौंरे कबसे आश तुम्हारी देख रहे हैं खड़े खड़े,
पर तुम नेक न थिर होते हो करते हो अभिमान बड़े ।
किस भ्रम में तुम भूल रहे हो इसे निराश न होने दो,
संध्या होते गिर जाओगे अतः न अवसर खोने दो ॥

रक्त

(गताङ्क से आगे)

रोगक्षमता (Immunity)

शरीर की रोगको रोकने अथवा रोग निवारण की शक्ति इसका अर्थ है। रोगके कीटाणु वायु, जल तथा हमारे भोजनीय पदार्थों में विद्यमान रहते हैं, इसलिए हम सदैव ही 'कीटावेश के आक्रमणों के भय में रहते हैं, परन्तु इसका क्या कारण है कि हम में से थोड़े मनुष्य कीटाविष्ट रोगों से ग्रसित होते हैं और बहुत से मनुष्य इसके आक्रमणों से बचे रहते हैं। इसका कारण यही है कि उन मनुष्यों का शरीर उस रोग के प्रति अग्राही है या उनमें इस रोग के प्रति क्षमता है। शरीर में यह अद्भुत शक्ति है कि वह साधारणतया अपने को रोग से मुक्त रखता है जैसा कि पहले अंक में बतला दिया गया है। रक्त बहुत से साधनों से रोग के जीवाणुओं का नाश करता है। पहले तो शरीर के रासायनिक साधन ही जीवाणुओं का नाश करते हैं। आमाशय का अम्ल इन जीवाणुओं का नाश करता है तथा अन्त्रियों में कुछ ऐसे जीवाणु रहते हैं, जिनसे शरीर को लाभ होता है वे कुछ ऐसी वस्तुएं बनाते हैं जिनसे रोगोत्पादक जीवाणुओं का नाश होता रहता है। मैचिन काफ वैज्ञानिक के मतानुसार क्षमता ऐसी अवस्था का नाम है कि जिसमें शरीर के कई जीवित कीटाणुओं के अन्दर रोगोत्पादक कीटाणुओं के आक्रमण को रोकने की शक्ति आ जाती है। यदि हमारे शरीर के सब अवयवों की सूक्ष्म दर्शक यन्त्र द्वारा परीक्षा की जाय तो प्रत्येक अंग में बहुत से रोगों के जीवाणु पाये जायेंगे। हमारे गले में ही कम से कम ६ प्रकार के जीवाणु मिलते हैं। यदि यन्त्र द्वारा फुफ्फुस और गले से निकले

हुये मल की भली भाँति परीक्षा की जावे तो हममें से बहुतों के शरीर में—जिनका स्वास्थ्य बहुत उत्तम है, और सब प्रकार के रोगों से मुक्त हैं, उनके अन्दर भी—राज यक्ष्मा (Tuberculosis) के जीवाणु मिलेंगे।

इस प्रकार यह रोगोत्पादक जीवाणु सर्वत्र विद्यमान हैं, फिर यह कितने आश्चर्य की बात है कि हम इतने भयंकर जीवाणुओं के बीच में रहते हुवे भी इन सबों से बचे रहते हैं और अपने स्वास्थ्य को ठीक रखते हैं तथा इसका क्या कारण है कि दो मनुष्यों में से, जो कि समान दशाओं में रह रहे हैं, एक रोग-ग्रस्त हो जाता है और दूसरा नहीं होता। इसका यही उत्तर है कि एक मनुष्य के शरीर में दूसरे की अपेक्षा अधिक रोग-क्षमता है, उसमें रोग को निवारण करने की शक्ति अधिक है, अथवा यों कहिये कि उसके शरीर में ऐसी वस्तुएं बहुत हैं जो रोग के जीवों को बेकाम कर सकती हैं। यह एक साधारण अनुभव है कि जिस मनुष्य को टाइफाइड (आँत्र ज्वर) एक बार आचुका हो, उसे दूसरी बार नहीं होता यदि होता भी है तो हलका संभव है इस सिद्धांत के विरुद्ध कुछ उदाहरण मिल जायें परन्तु वे अधिक नहीं होंगे, साधारणतया यही देखा जाता है कि इस टाइफाइड ज्वर का एक आक्रमण मनु॰ को फिर से रोग ग्रस्त नहीं होने देता। जब चेचकका टीका लगाते हैं। तब उसमें भी यही होता है कि टीके से रोग का हलका आक्रमण होता है क्योंकि इससे मनुष्य के शरीर में कुछ ऐसी वस्तुएं उत्पन्न हो जाती हैं, कि यदि रोग के जीवाणु फिर से शरीर में प्रविष्ट करें तो वे उनको नष्ट करदें।

जीवाणुओं से उत्पन्न होने वाले जितने भी रोग हैं उन सब के संबन्ध में यही सिद्धान्त है। उनके लिए जो नाना भांति के इञ्जैक्शन दिए जाते हैं, उन सब का प्रयोजन शरीर में क्षमता स्थापित करना होता है। प्रत्येक रोग का निवारण करने के लिए विशेष वस्तुएं होती हैं, जो केवल उसी रोग को दूर कर सकती है। रोग को रोकने के लिए जो इञ्जैक्शन दिए जाते हैं, उनमें रोगोत्पादक जीवाणु ही, जिनका विष विशेष क्रियाओं व रासायनिक वस्तुओं द्वारा कम कर दिया जाता है, शरीर में प्रविष्ट किये जाते हैं।

इससे शरीर इन जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए कुछ वस्तुएं उत्पन्न करता है, वास्तव में इन वस्तुओं को उत्पन्न करने वाला रक्त ही होता है। इन वस्तुओं का स्वभाव कैसा होता है, इसका अभी तक पता नहीं चला है, परन्तु इन का गुण इन जीवाणुओं और इनके विष को दूर करना होता है। इस प्रकार शरीर में रोग क्षमता उत्पन्न होती है।

यह रोग क्षमता शरीर में चाहे जितनी बढ़ाई जा सकती है। प्रथम बार जीवाणु व विष की थोड़ी ही मात्रा शरीर में प्रविष्ट करने से कुछ खलबली सी पड़ जाती है, जिससे ज्वर हो जाता है। जीवाणु प्रविष्ट किये स्थान पर कुछ दर्द भी होता है। ज्वर का कारण यह है कि

शरीर के भीतर एक प्रकार की बाहरी विजातीय वस्तु भेजी गई है जो स्वभाविकतया शरीर के भीतर नहीं रहती, अतएव शरीर उनको एक बाह्य विजातीय वस्तु समझकर बाहर निकालने की या उसे नष्ट करने की कोशिश करता है जिसके परिणाम स्वरूप ज्वर की उत्पत्ति होती है। ऐसा करने से शरीर ऐसी वस्तुओं को उत्पन्न करता है कि जिससे उस प्रविष्ट की गई बाह्य वस्तु का प्रभाव न बढ़े और अन्त में ऐसा ही होता है अर्थात् ज्वर इत्यादि लक्षणों के दूर हो जाने के बाद उस बाह्य वस्तु के प्रति क्षमता पैदा हो जाती है। इसी प्रकार धीरे २ उस वस्तु की मात्रा को जो पहिले प्रविष्ट की गई थी बढ़ाते जायें, तो अन्तमें हम बहुत अधिक मात्रा प्रविष्ट कर सकेंगे। रोग को अच्छा करने के लिए जिस वस्तु का इंजैक्शन दिया जाता है, वह ऐसे जन्तुओं के रक्त से प्राप्त किया जाता है जिनमें बहुत अधिक क्षमता स्थापित कर दी गई है। धनुर्वात (टिटेनस Tetanus) इत्यादि रोगों में ऐसे पशुओं के रक्त का सीरम इन्जैक्शन दिया जाता है जिनके शरीर में टिटेनस या धनुर्वात के विरुद्ध क्षमता प्राप्त की जाचुकी है।

सीरम (Serum)

यदि साधारणतया इन रोगों के जीवाणुओं को किसी पशु के शरीर में प्रविष्ट करदें तो वह मर जायगा, किन्तु पहले यदि जीवाणुओं की बहुत थोड़ी मात्रा प्रविष्ट करें फिर उसे धीरे २ बढ़ाते जायें तो पशु की मृत्यु न होगी। बल्कि उसके शरीर में असीम क्षमता उत्पन्न हो जायेगी। इन वस्तुओं को , जिनको सीरम कहते हैं, इस प्रकार बनाते हैं कि पहले उस विष की व जीवाणुओं की जिनका सीरम बनाना है घातक मात्रा मालूम करते हैं। घातक मात्रा वह है कि जिससे कोई पशु मर जाये। इस-लिये यह भी स्पष्ट है कि प्रत्येक पशु के लिये भी घातक मात्रा भिन्न होगी। जिस मात्रा को एक घोड़ा सहन कर सकता है, उसको मनुष्य सहन नहीं कर सकता है जिस मात्रा को मनुष्य सहन कर सकता है उसे खरगोश सहन नहीं कर सकता। इसलिये प्रत्येक पशु के लिये घातक मात्र भिन्न होती है। जिस पशु से सीरम बनाना है, उसके शरीर में पहले जीवाणुओं को घातक मात्रा से बहुत कम प्रविष्ट करते हैं इस से ज्वर इत्यादि आता है परन्तु पशु उसे सहन कर लेता है। कुछ समय के पश्चात् उस मात्रा को और बढ़ाते हैं अर्थात् पहले से अधिक मात्रा प्रविष्ट करते हैं। धीरे धीरे पशु इसको भी सहन कर लेता है। इसी प्रकार प्रत्येक बार जीवाणुओं की मात्रा बढ़ाते जाते हैं, यहां तक कि कई सौ घातक मात्रा यें एक बार में प्रविष्ट करने पर भी पशु पर कोई विशेष प्रभाव नहीं होता। इस प्रकार पशु के शरीरमें इतनी क्षमता उत्पन्न करदी जाती है। कि वह विष की बहुत अधिक मात्रा को सहन कर सकता है। ऐसे पशु के शरीर से कुछ रक्त निकाल लिया जाता है। और उससे सीरम अलग करलेते हैं। रोगों में इस सीरम का इंजैकशन दिया जाता है।

वैक्सीन (Vaccine)

वैक्सीन और सीरम की क्षमता दो प्रकार की होती है। वैक्सीन केवल जीवाणुओं का एमल्शन होता है, जिसकी तीव्रता व विष भिन्न भिन्न साधनों द्वारा कम कर दिया गया है इसको शरीर में प्रविष्ट करने पर इनसे युद्ध करने के लिए शरीर स्वयं अपनी सेना तैयार कर लेता है। ज्यों २ वैक्सीन की मात्रा बढ़ाते हैं, त्यों २ सेना भी अधिक बनाती है। इस प्रकार क्षमता उत्पन्न हो जाती है। ऐसी क्षमता को सक्रिय क्षमता (Active immunity) कहते हैं। सीरम की क्षमता निष्क्रिय (Passive immunity) है।

यह क्षमता का उत्पन्न करना, व उन वस्तुओं को बनाना जो शरीर को रोग से मुक्त रक्खें रक्त ही का काम है। हम देखते हैं कि कितने भिन्न २ और विचित्र साधनों द्वारा रक्त शरीर की रक्षा करता है। किसी भी अंग में कुछ ही विकार होने से तुरन्त अपनी सेना दौड़ा देता है, फूस के ढेर में से गिरी हुई एक सुई का निकालना कदाचित सरल है किन्तु शरीर में किस स्थान पर जीवाणुओं ने आक्रमण किया है यह जानना अति कठिन है किन्तु रक्त के लिये यह एक साधारण सी बात है, उसे इस बात के जानने के लिए कुछ भी देर नहीं लगती।

पहले बताया जा चुका है कि यह प्रकृति का नियम है कि वह अपनी बनाई हुई सब वस्तुओं की रक्षा करती है, उनका नाश होना उसे देखा नहीं जाता इस मनुष्य शरीर के निर्माण में प्रकृति ने कैसा कष्ट उठाया है, और बनाकर उसकी रक्षा के लिए क्या २ साधन किये हैं, इन सब को भली भांति जानने और प्रकृति के कौशल को देखने से अत्यन्त आश्चर्य होता है। संसार भर में इतनी आश्चर्यजनक वस्तु कौन सी है जैसा कि यह मानव शरीर है। इस यन्त्र का छोटे से छोटा पुर्ज़ा अपने स्थान से नहीं हटाया जा सकता, किसी का स्थान परिवर्तन नहीं किया जा सकता, जो जिस स्थान पर है वह वहीं के लिये उपयुक्त है, वह किसी स्थान पर नहीं रक्खा जा सकता. प्रत्येक अंग अपने छोटे मोटे विकारों को ठीक कर सकता है जिसके लिये उसे किसी दूसरे की आवश्यक्ता नहीं होती। प्रकृति ने इस अद्भुत असीम, अगाध, यन्त्र को बड़े परिश्रम के पश्चात् बनाया है। असंख्य प्रयोगों के पश्चात् यह यन्त्र बन सका है। इन प्रयोगोंकी कथा बड़ी लम्बी चौड़ी है, क्योंकि समुद्र के जल में, पृथ्वी की प्राचीन चट्टानों में, वायु मण्डल में, पर्वतों में, नाना भांति के स्वरूपों में इन प्रयोगों की कथा लिखी हुई है। इतिशम्
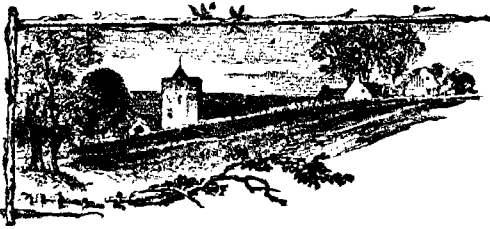
हल्दी का महत्व

हल्दी को हिन्दू धर्म में अत्यन्त मांगलिक समझा जाता है कोई भी मँगल का कार्य क्यों न हो उसमें हल्दी का व्यवहार अधिकता से किया जाता है, प्रायः देखा जाता है कि विवाह के अवसर पर इसी का उबटन शरीर में मला जाता है जिस से शरीर का वर्ण उज्ज्वल व कांतिमान् हो जाता है, त्वचा की शुष्कता व दुर्गन्ध जाती रहती है, इसीलिए इसका नाम प्राचीन आचार्यों ने वरवर्णिनी लिखा है और उबटन से शारीरिक विशेष कर त्वचा के बहुत रोग नष्ट होते हैं, त्वचा के राम कूप अच्छी तरह स्वच्छ होकर उनके मुख खुल जाते हैं, मैल साफ हो जाता है, जिस से शरीर की विकृत वायु नष्ट होकर पुष्टि होती है। आचार्य वाग्भट ने भी इस प्रकार गुण वर्णन किए हैं—

उद्वर्तनं कफहरं मेदसः प्रविलापनम् ।
स्थिरी करणमंगानां त्वक् प्रसाद करंपरम् ॥

अर्थात् उबटन से बढ़ी हुई चर्बी (मेद) कफ ये दूर हो जाते हैं और अँगों की पुष्टता त्वचा की स्वच्छता प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त हल्दी से और भी अनेक कठिन रोग दूर होते हैं, जिनसे साधारण आदमी अपरिचित हैं पहले लोग यह जानते थे कि हल्दी में कृमिनाशक गुण वर्तमान है इसलिए पहले समय की स्त्रियां अपने बच्चों को कच्ची हल्दी और गुड़ खिलाती थीं। भाव प्रकाश में इसके गुण इस प्रकार वर्णन किये हैं कि यह चरपरी कुछ कड़वी, खुश्क गरम, कफ और वायु नाशक, रंग को निखारने वाली जिल्द के रोग, प्रमेह, रक्तविकार, सूजन, पाण्डुरोग, व्रण इनको नष्ट करती है। इसका सब से श्रेष्ठ प्रयोग प्रमेह में देखा गया है जिस प्रकार खैर कुष्ठ को, सिरस विष को नष्ट करता है इसी प्रकार यह भी अनुपान भेद से सब प्रकार के प्रमेहों को

जड़ से दूर करती है।

प्रमेह में

आमले का स्वरस २ तोले हल्दी का चूर्ण २ माशे मधु ६ माशे इनको मिलाकर सुबह शाम दिन में दो बार चाटना चाहिये।

दूसरा प्रयोग

गिलोय का अर्क १ तोले हल्दी १ माशे मधु ६ माशे इनको मिलाकर सुबह शाम लेवें। इसी प्रकार शोथ रोग में कोई २ डाक्टर भी इसका व्यवहार बतलाते हैं, नाक के जख्म पर हल्दी जलाकर लगाने से आराम होते देखा गया है।

रतौंधे पर अंजन

रसौत, हल्दी, दारुहल्दी नीमके पत्ते, चमेली के पत्ते, इनको पीसकर गौ के रस में घोटकर गोलियां बनाकर दिन में दो बार लगावें।

शिरोरोगपर

हल्दी, दारु हल्दी, त्रिफला, नीम की छाल, नागर मोथा, पटोलपत्र, चिरायता, गिलोय, बनफ़शा इनको ६-६ माशे लेकर आध सेर जल में उबाल कर आधपाव रहने पर छानकर पिलावें इसके पिलाने से नेत्र विकार भी शीघ्र ही शान्त होते हैं।

शोथ रोग पर

हरड़ का बक्कल, हल्दी भारंगी, गिलोय हरी, चीते की छाल, दारु हल्दी सोंठी देवदार सौंठ इन सब को मिलाकर २ तोले जल ३२ तोले काढ़ा पकाकर ८ तोले अवशेष रहने पर ऐसी २ मात्रा सुबह शाम पिलाने से सार्वांगिक सूजन शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

व्रण शोधक लेप

कुठ, निशोथ, कालेतिल, दन्ती, पीपल, सैंधा नमक, शहद, हल्दी त्रिफला, नीलाथोथा इन को पीसकर बत्ती बना कर रखने से या लेप करने से जख्मों की पीप दूर होकर वे शीघ्र भरने लगते हैं

बवासीर पर लेप

सरसों के तेलमें हल्दी, कड़वी तोरईके चूर्ण, इनको मिलाकर लेप करनेसे मस्से नष्ट होजाते हैं।

दूसरा प्रयोग

हल्दी के चूर्ण को थोहर के दूध में मिलाकर फिर एक बारीक मजबूत तागे को उसमें भिगोकर सुखाकर इस प्रकार तीन बार भावना देकर मस्सों की जड़ें बांध ने से वे कट जाते हैं। इसी प्रकार हल्दी के सैंकड़ों प्रयोग सद्य फलदायक हैं हल्दी शाक तरकारी दाल वगैरा में भी प्रतिदिन इस्तेमाल की जाती है जो कि भोजन को अत्यन्त सुन्दर व गुणवान् बनाती है। हम ऊपर लिख चुके हैं कि इसका उबटन शरीर की त्वचा को अत्यन्त हितकारी है. इसी विषय पर पाश्चात्य वैज्ञानिक अध्यापक सिपले कहते हैं कि मच्छर हल्दी के रंग व उसकी गन्धसे बहुत डरते हैं, हल्दी में रंगे हुए कपड़ों पर वह कभी नहीं बैठते कच्ची व पकी हुई हल्दी के घर में रहने से मच्छर अन्दर आ भी नहीं सकते, मच्छरों का यह स्वभाव देखकर अध्यापक सिपले कहते हैं मालूम होता है कि इसी कारण से प्राचीन हिन्दू बंगाली, उड़िया आदि समुद्रद्वीप निवासी लोग शरीर में हल्दी मला करते थे और उसमें रंगे हुए कपड़े पहनते थे और अधिक हल्दी खाया करते थे। अध्यापक सिपले का यह भी कहना है कि मलेरिया की प्रारम्भिक अवस्था में यदि हल्दी का व्यवहार किया जाय तो अवश्यही फ़ायदा होता है।

स्वास्थ्य-सुधार

[श्री० डा० गोपाल शरण, एम० डी० 'प्रेम प्यासा']

जो स्थान जनता पूर्ण है वहाँ का वायु अवश्य दूषित हो जाता है। क्योंकि उसमें मनुष्यों के स्वांस प्रस्वांस की विकृत वायु प्रविष्ट हो जाता है। ऐसा वायु मनुष्य के शरीर में घुस कर रक्त को दूषित कर देता है। अतएव खुले मैदान में या नदीतट पर जाकर शुद्ध-वायु का सेवन स्वास्थ्य के लिये परमावश्यक है। शुद्ध वायु तथा स्थान विशेष की वायु से बड़े बड़े रोग, जो सब प्रकार असाध्य हो, दूर होजाते हैं। उसीसे डाक्टरी पुस्तकों में हवा पानी बदलने की आवश्यकता बतलाई गई हैं। प्रातः कालीन वायु विशेषतः विकार शून्य होती है, इसमें प्रातः काल नित्य वायु सेवन करना स्वास्थ्य के लिये बड़ा ही लाभदायक है। इससे नित्य खुले मैदान में या नदीतट पर वायु सेवन अवश्य करना चाहिये। प्रातः काल नित्य कर्म (पखाना पेशाब) के समय जल्दी बाजी (शीघ्रता) न करनी चाहिये और पानी में किफायत भी न करनी चाहिये। मूहं धोने, कुल्ला करने और नाक छिड़कने आदि में भी शीघ्रता न करना चाहिये। मूंह खूब सावधानी से धोना चाहिये। आजकल मूंह धोने के लिए कई तरह के मंजन बाज़ार में बेचे जाते हैं। सफ़ेद मिट्टी तथा कुछ सुगन्धि मिलाकर दन्तमंजन वज्रदन्ती आदि नाम से चार आने आठ आने डिब्बा के भाव से बाजार में खूब बिकते हैं। किन्तु इन दन्तमंजनों से केवल पैसा बरबाद होने के और कुछ नहीं होता। यह भलीभांति स्मरण रखना चाहिए कि दांत मैला रहने से नानाप्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं अतएव स्वास्थ्य रक्षा के लिए नित्य नीम, बट इत्यादि के दातौन से भलीभांति मूंह धोना बड़ा लाभदायक है। प्रति दिन कड़वा तेल और सैंधा नमक से मूंह धोने से भी दांत को बड़ा फ़ायदा पहुंचता है। यदि मंजन का ही कोई व्यवहार करना चाहें तो घरमें यह निम्नलिखित विधि से तैयार किया जा सकता है। बादाम का छिलका (जलाकर) काली मिर्च, सैंधा नमक और फिटकीरी इन सब को पीस कर एक साथ मिला देने से अच्छा दन्तमंजन तैयार होता है और इससे दांत साफ़ होते हैं तथा अनेक प्रकार की दांत की बीमारियाँ दूर होती हैं। केवल तेजबल ही पीस कर रख दिया जाए और उससे

दांत धोया जाए तो दांत साफ़ होते हैं मुंह सुगन्धित होता है, तथा चित्त प्रसन्न होता है। इसी प्रकार दांत को प्रतिदिन स्वच्छ करना चाहिए नहीं तो कीटाणु बैठ जाने से उनमें बड़ी पीड़ा होती है और नाना प्रकार के कष्ट भोगने पड़ते हैं। मुंह धोने के पश्चात् मनुष्यों को उचित है कि प्रति दिन स्नान करें और अपनी देह को खूब मल मल कर साफ़ करें। इससे रोमकूप में किसी प्रकार का विकार न होगा और उनसे पसीना वगैरह निकला करेगा आजकल साबुन लगाना ही बहुत लोग पसन्द करते हैं। साबुन लगाने से शरीर का चमड़ा कड़ा हो जाता है। और साबुनों में प्रायः चर्बी मिली रहती है। साबुन, चूना, चर्बी-मज्जी-मिट्टी सोडा आदि से तैयार होते हैं। बाज़ बाज़ साबुन से तो शरीर फट जाता है। लोग कहते हैं कि साबुन से शरीर मुलायम होता है, पर मैं देखता हूँ कि इससे प्रायः अनेक बीमारियां पैदा होती हैं। इस कारण यदि साबुन लगाना ही हो तो भली भांति परीक्षा कर लेनी चाहिए।

कच्चा दूध, घी, और मैदा मिलाकर शरीर में लगाया जाता है। इसके लगाने के थोड़ी देर बाद स्नान करना चाहिए। इससे शरीर सुन्दर हो जाता है, चेहरा चमचम चमकने लगता है। पद्मपत्र, लोध और अर्जुन का फूल इन तीनों को पीस कर शरीर में लगाने से दुर्गन्धि जाती रहती है। तिल, सरसों, दारू हल्दी दूब, गोरोचन और कूठ बराबर भाग में इनको पीस कर शरीर में लगाने से शरीर स्वच्छ और सुगन्धित होता है। हल्दी बड़ी उपकारी वस्तु है इस से नाना प्रकार के चर्म रोग दूर होते हैं और कान्ति की वृद्धि होती है। उड़ीसा और बङ्गाल की स्त्रियां हल्दी बहुत लगाती हैं। बहुत लोगों के पसीने में बदबू होती है, उसके लिए हर्रे, मोथा, चन्दन, नागकेशर, बेल की जड़, लोध कूठ और हल्दी इन सब को जल से पीस कर दिन में कई बार लगाने से बदबू का आना दूर हो जाता है। हर्रे और मोथा समान भाग, कूट चौथाई भाग, इनको पीसकर शरीर में लगाने से शरीर सुगन्धित हो जाता है और वह सुगंध देर तक रहती है जवानी में अकसर लोगों के मुंह से मुहासे निकल आते हैं उसके लिए उन्हीं चीज़ों में मिर्च और गोरोचन मिलाकर मुंह लेप करना चाहिए। इससे सब दाग़ छूट जाते हैं। सफ़ेद सरसों और तिल दूध के साथ पीसकर मुंह पर सात आठ दिनों तक लगाने से मुंह की कान्ति बढ़ती है। यदि किसी के मुँह पर काले काले दाग़ हों तो उसके लिए मैनसिल पठानी लोध, हल्दी, दालचीनी समान भाग में लेकर जल में पीसकर लगावे, इससे सब प्रकार के काले दाग़ छूट जाते हैं, चेहरा खिल जाता है। ऐसी अच्छी अच्छी चीज़ों के रहते भी यदि बाज़ार के खराब खराब साबुनों के उपयोग से शरीर खराब किया जाय तो इसे (बेवकूफ़ी) मूर्खता ही समझना चाहिये। स्नान के पश्चात् खान पान की व्यवस्था पर ध्यान देने की विशेष आवश्यकता है, क्योंकि शरीर के भीतर बैठकर दुर्गुण पैदा करने वाले विशेषतः ये ही दो पदार्थ हैं इन दोनों में किसी प्रकार की अशुद्धि या

विकार नहीं आना चाहिये। बाज़ार के खाने की चीज़ें भी बहुत ख़राब होती हैं, उनके खाने से भी स्वास्थ्य में बाधा पहुंचती है। इससे जहां तक हो सके बाज़ार के खाने की चीज़ें नहीं खाना ही अच्छा है। ऐसे ही, दूषित जल का पान करना कर्तव्य नहीं है। क्योंकि संक्रामक रोग के कीटाणु इसी में रहते हैं। जो जल दूषित हो उसे औटा और छान कर पीने में कोई हर्ज नहीं। रात्रि जागरण तथा असमय भोजन और बहु विलास से स्वास्थ्य में हानि पहुंचती है। खाना, पीना सोना, टहलना, जितने प्रकार के आवश्यकीय कार्य हैं उनमें एक प्रकार का नियम रहना उचित है। डाक्टरी पुस्तकों में बहुत प्रकार के रोग उत्पन्न होने के जितने कारण हैं उनमें मिथ्याहार विहार ही प्रधान है। अतएव स्वास्थ्य रक्षा के लिये इन सब पर ध्यान देना परमावश्यक है।

कस्तूरी १ माशा, कपूर १ तोला, रतनजोत २ तोला—इन सब को कुचल कर दो सेर सरसों के तेल में डाल कर छः दिन धूप में रख दे बाद में थोड़ा सा आंच लगाकर उसे छान कर बोतल में भर दे। यह तेल साधारण इस्तेमाल के साथ ही साथ अत्यन्त लाभ दायक है।

दूसरा केशरंजन तेल यह उपर्युक्त तेल से भी लाभकारी तेल है। छार छबीला, नागरमोथा कपूर कचरी, पानड़ी गुलाब के फूल, सफेद चन्दन, छोटा इलायची, लौंग, बड़ी इलायची, बावची, धनियां, खस, कंकोल हाऊबेर, दाल चीनी, बालछड़, सुगन्धशाला, सुगन्ध कोकिला, नरक चूर, —सब को एक एक तोला लेकर अधकुचला करलो। फिर किसी कांच या टीन के बर्तन में काली तिल्ली या नारियल के तेल सवा सेर में इन दवाओं को डाल दो और बरतन का मुंह बन्द करदो जिससे उसमें हवा न जा सके। इस बतन को एक हफ्ते तक दिन की धूप में और रात को ओस में रक्खे। फिर उसे छान ले। इस तेल के सिर में लगाने से दिमाग शीतल रहता है, बाल चिकने होते हैं, श्वेत नहीं रहते। सुगन्धि में भी यह सर्वोपरि है।

स्त्रियां सीधे बालों की अपेक्षा घुंघराले बाल बहुत पसन्द करती हैं। जिनके बाल स्वयं ही घुंघराले होते हैं वे बड़े सुहावने प्रतीत होते हैं। बालों को घुंघराले बनाये भी जाते हैं। बड़े शहरों में घुंघराले बाल बनाने की पचासों दुकाने रहती हैं। दुकानदारों के पास घुंघराले बाल बनाने की मशीनें भी मिलती हैं लोहे के तारों और धागों में लपेट कर बाल बांध दिये जाते हैं। जिनसे बालों में शल हो जाते हैं और प्रतिदिन के अभ्यास से वे मुड़े ही रहने लगते हैं। औषधियों से भी बाल घुंघराले बनाये जाते हैं। सोहागा २ औंस, गोंद कीकर १ ड्राम को लेकर १० छटांक गरम पानी में रख दो। जब ठंडा हो जाय तब १॥ औंस कपूर मिला कर छोटे स्पंज से या उंगलियों से बालों में लगाओ। बाल घुंघराले हो जायगे। मेथी का चूर्ण, मेथी का तेल, बेरी की पत्तियां, बोल, माजू, मुर्दासंग और जरा सा चूना लेकर सब को कूट पीस कर बालों में लेप करें। बाल घुंघराले हो जायगे।

कभी कभी सिर में अधिक रोगों के गर्मी बढ़ जाता है। इससे सिर के बाल छूते या चकत्ते पड़ जाते हैं। कभी भी हो जाता है। ऐसी सूरत में लोब क, जैतून के तेल में मिला कर लि उत्तम है। इससे चकत्ते मिट जा लिये हाथी दांत सुरमा के समान री के दूध में घोल ले। उस से गंज दूर हो जाता है।

कई स्त्रियों के कपोलों बारीक फैल जाते हैं कि वे संभाले, पर कपोल बुरा बालों का उगना ही ब इसके लिये कली का च बारीक पीस कर सा एरंड के बीज छिलके

पीस कर सात दिन लगाने से बाल फिर नहीं जमते। पहले केश निकाल कर उसी जगह कुच-ले के बीज पानी में घिस कर सात दिन लगायें तो बाल उस स्थान पर नहीं जमते।

बालों का सादृश्य बिल्कुल शरीर से है। जिस प्रकार शरीर को अन्न पोषणके लिये आवश्यक है उसी प्रकार बालों को खूराक या व्यायाम मिलने से बालों का पोषण होता है। जिस प्रकार अस्वस्थ शरीर हमेशा निर्बल रहता है उसी प्रकार असावधानी से पाले पोसे बाल भी निर्बलता के कारण जवानी ही में गिरने लगते हैं। लड़कपन से ही संभालने वाले बच्चों के बाल कभी जवानी में श्वेत नहीं होंगे। जो असावधानी से काम लेते हैं, उनके बालों का गिरना स्वाभाविक ही है। बालों को तेल की मालिश आवश्यक खूराक है। तेल केवल ऊपर पोत लेने से काम नहीं चलता। तेल बालों की जड़ों तक जाना चाहिए। इसके लिए तेल हथेली में लेकर हाथों में मलकर ही दोनों हाथों को सिर पर काफी रगड़ना चाहिए। बालों को अपने शरीर की भाँति आन्तरिक भोजन भी मिलता है। जिन स्त्रियों का स्वास्थ्य सुन्दर है उनका रक्त भी शुद्ध और स्वच्छ होना चाहिए। शुद्ध रक्त ही बालों की असली आत्मा है। रक्त से ही बाल बढ़ते पनपते हैं। जवानों और बुड्ढों के बालों की अपेक्षा बच्चों के बाल इसी कारण सुन्दर होते हैं।

बाल

बालों के रोग और उनका इलाज

(ले०—श्री दीनानाथ व्यास)

लों को असावधानी से संभालने के कारण तथा किसी रोग के कारण अक्सर स्त्रियों के बाल झड़ने लगते हैं। रोग से बाल निर्बल होकर अपनी जड़ छोड़ देते हैं और झड़ने लगते हैं। असावधानी का परिणाम यह होता है कि बालों की जड़ों में मैल जाता है और खोपड़ी निर्बल पड़ जाती है। खुश्की पैदा होकर बाल मर जाते हैं। मरे हुये बाल झड़ने लगते हैं। असावधानी से यदि बाल झड़ते हों तो बालों को खूब साफ रखना चाहिए। सिर के निर्बल बालों को निकाल कर बालों का व्यायाम करना आवश्यक है। यदि रोग से ऐसा हो तो रोग का इलाज परमावश्यक है। बालों के झड़ने के डर से सिर में कंघी न करना मूर्खता है। मरे हुये बालों को तो निकाल देना ही श्रेष्ट है। बालों को झड़ने से बचाने के लिए बालों का व्यायाम, कंघी करना, तेल की मालिश करना तथा उन्हें खूब स्वच्छ रखना परमावश्यक है। बालों का टूटना भी अक्सर इन्हीं कारणों पर निर्भर रहता है। बाल टूट टूट कर छोटे होजाते हैं अतएव यदि बाल रोग के कारण टूटते हों तो रोग का इलाज करना चाहिए इसके लिये बालों की असावधानी के कारण ऐसा हो तो उनकी ठीक ठीक सफाई की आवश्यकता है। इस पर भी यदि टूटना जारी रहे तो उनका इलाज कराना चाहिए। शुद्ध गन्धक, सीप, लाल रंगकी बकरी के बालोंकी राख—इन तीनों को लेकर ज़ैतून के तेल में मिलाकर जहां के बाल झड़ते हों या टूटते हों उस स्थान पर मलना चाहिए। इस मालिश से बाल फिर उगने लगते हैं किन्तु तेलकी मालिश के पूर्व बालों को प्याज के पानी से धो डालना चाहिए। लादन, रसौत, तेजपात, और हमामा बराबर लेकर कूट पीस कर छान ले। बीस गुना पानी लेकर उसमें उस चूर्ण को पकावे। जब पानी आधा रह जावे तो कुल दवाइयों का आठ गुना तिलका तेल मिला दे और धीमी आंचसे पकावे। जब केवल तेल ही रह जाय तो उतार ले और ठण्डा होने पर बोतल में भर दे। इसको बालों में लगाने के पूर्व बालों को चुकन्दर और तिल

के पत्तों के काढ़े में धो डालना चाहिए। यह तेल बालों का झड़ना, गिरना, और टूटना क़तई बन्द करके बालों को काले और मुलायम करता है। मेंहदी के पत्तों का रस और रोग़न ज़ैतून बराबर लेकर औटावे। जब पकते-पकते केवल रोग़न ही रह जाय तब उसमें थोड़ा सा लादन मिलावे। लादन के पिघल जाने पर ठण्डा करके रोग़न को शीशी में भर ले। यह बालों को झड़ने और टूटने से बचाने की अकसीर दवा है। लादन को शराब के साथ खरल करके उसमें बराबर का रोग़न और मिला कर बालों की जड़ों में रात को मल देना चाहिये। सुबह गरम पानी से धो डालना चाहिये। इसके लगाने से नये बाल आते और गिरने बन्द हो जाते हैं।

अकसर स्त्रियों के बालों में से भूसी की तरह सफेद रेशे निकलते रहते हैं। यह खुश्की है। खुश्की के बढ़ जाने पर खुजली का आरम्भ होता है और भूसी विशेष रूप से निकलने लगती है। भूसी के विशेष हो जाने से बाल झड़ने लगते और सफेद हो जाते हैं। अकसर बालों की खुश्की दिमाग़ी खुश्की का भी परिणाम होता है। इसके लिए नमक के पानी में सिर का धोना लाभदायक है। दस भाग पानी के साथ छः भाग नमक ठीक होता है। आंवले के पानी से बालों का धोना भी श्रेष्ठ है। ग्लिसरिन के साबुन से बालों को नित्य सफाई करना भी खुश्की में लाभ पहुंचाता है। पानी में कपूर सुहागा मिलाकर सिर धोना भी लाभकारक है। खुश्की वाली स्त्री को सिर के शीतल रखने की हमेशा चेष्टा करनी चाहिए।

अकसर रोग के कारण या बालों की सफ़ाई की ओर से असावधान रहने के कारण बाल बुढ़ापे के पूर्व ही पक जाते हैं श्वेत हो जाते हैं।

जवानी में बालों का सफ़ेद होना कुरूपता का द्योतक है। नज़ला और कफ की शिकायत वाली स्त्रियों के बाल छोटी सी उम्र में पक जाते हैं। असावधानी के कारण बालों का प्राकृतिक तेल नष्ट होकर बालोंको पोषण करनेमें सहायता नहीं देता इसलिए बाल जल्दी श्वेत हो जाते हैं कभी-कभी बाल चिन्ता, मानसिक क्लेश या किसी भयंकर बीमारी के कारण भी सफेद हो जाते हैं। बाल यदि किसी मानसिक या शारीरिक रोग के कारण हुए हों तो वह रोग पहले दूर करना चाहिए। फिर श्वेत बालों को काला करना उचित होगा। हरड़ का मुरब्बा हमेशा खाने से बाल श्याम हो जाते हैं। गुठली निकला हुआ आंवला तीन तोला, हरड़ २ तोला, बहेड़े का बकला १ तोला, आम की गुठली की मिगी ५ तोला, लोह चूर्ण १ तोला सब को लेकर इमामदस्ते में आंवले के रस के साथ घोंटकर रात भर रक्खा रहने दे। सबेरे बालों पर लेप करे। इससे श्वेत बाल काले हो जाते हैं।

बालों को हमेशा मुलायम तथा काले रखने के लिए यहां दो नुसखे अनुभूत लिखे जाते हैं—नागर मोथा १ छटांक, पानड़ी १ छटांक, छबीला २ छटांक, लौंग १ तोला, कपूर कचरी ३ तोला,

श्वास की सुपरीक्षित औषधि

(ले० —श्री घनानन्द पन्त साहित्याचार्य देहली)

सोम Ephedra vulganis (No. Gnefaceaae) and Allied varieties पंजाब में अमसानिया, बुटसर, तिब्बतमें, सोम-कश्मीर में अस्मानी बूटा व मोमा, ईरान में हुम-होम चकरौता व टूटगन्था नामों से यह प्रसिद्ध है।

यह सात हजार से दस हजार फीट ऊंचे खश्क पत्थरवाले हिमालय के पहाड़ों पर होती है। इसकी कुछ जातियां मैदानों पर भी होती हैं, परन्तु उनमें गुण बहुत कम या नहीं के बराबर होता है। इसका सत् Ephedrine नाम से है। सौरुपये पौंड तक बिकता है, जिसका नाम Pseudo Ephedrine है।

कहा जाता है यह औषधि पांच हजार वर्ष से चीन में 'माहांग' नाम से श्वास रोगमें वर्ती जाती है आज कल भी इस पर बहुत अन्वेषण हो चुका है। इस औषधि की अनेक जाति हैं। सिंध और राजपूताना में भी कुछ जातियां हैं। इसकी उत्पत्ति अफ़गानिस्तान से शिमला, गढ़वाल, कमाऊं, शिकिम तक होती है। कुर्रमघाटी में १ हजार फीट ऊंचाई तक यह मिलती है। इसका पौधा गुच्छाकार एक फीट से दो फीट तक ऊंचा होता है। ग्रन्थियुत सीधी रेखायुत हरे रंग की शाखायें प्रायः जड़ से ही निकलती हैं। पत्ते इसमें नहीं लगते। मंजरी के पत्र मध्य में मिले रहते हैं। खूब पतले लम्बे शिर ½ से ¾ इंच तक लम्बे गुच्छाकार आवर्त्त शोभित फल बहुत छोटे छिलके युत लाल रंग के सिरस मंजरीवत, बीज एक तरफ या दोनों तरफ उन्नतोदर वाननतोदर इसका संग्रह शरद ऋतु में किया जाता है। इसके ऊपर के हरे डण्ठल में ही गुण होता है। छाया में सुखाकर रखना चाहिए।

गुण—रेशाव, पाखाना खोलकर लाती है, यकृत् को उत्तेजित करती है, श्वास के लिए अत्युत्तम है।

मात्रा—४ रत्ती से ८ रत्ती तक, सुबह शाम उष्णजल से श्वास के वेग में जब कि प्राणान्तकर कष्ट, हो बेचैनी हो, इसके प्रयोग से १५ मिनट से ३० मिनट के भीतर उत्तम लाभ होता है। चूर्ण के अधिक दिनों तक प्रयोग से श्वास जाता रहता है। इसके एक तोला पंचांग को ३ पाव पानी में पकाकर जब आधा शेष रहे तब ढाई तोले की मात्रा से दिन भर में तीन बार पिलावे।

वात कास 'बच्चों के श्वास, श्वसनक (Pneumonia) में लाभ देता है। जहाँ यकृत् के विकार से मन्दाग्नि हो वहां इसके प्रयोग से लाभ होता है। श्वास यन्त्र के अन्य रोगों में भी जहां सहज में सर्दी कास, छाती में कफ़ का बोलना घर घर आदि में नियमपूर्वक सेवन से अच्छा लाभ होता है। चूंकि इसका नाम तिब्बत और कश्मीर में अब भी सोम या सोमा प्रचलित है, अतएव इसे सुश्रुत (चि० अ० २९) में वर्णित सोम ही कुछ लोग समझते हैं—एक एव खलु भगवान् सोमः स्थाननामाकृति वीर्य विशेषैश्चतुर्विंशतिधा भिद्यते……… सर्वेषामेव चैतेषामेव सोमानां पत्राणि दशपंच च। तानि शुक्ले च कृष्णे च जायन्ते निपतन्ति च। अर्थात् सब प्रकार के सोमों को १५ पत्ते पौर्णमासी के दिन पूर्ण हो जाते हैं, और कृष्ण पक्ष में प्रति दिन एक पत्ता गिरते २ अमावश्या के दिन एक भी पत्ता नहीं रहता। इस वर्णन से आधुनिक सोम का मेल नहीं होता, परन्तु यह भी पांच हज़ार वर्षसे प्रचलित श्वास की दवा है, इसके सेवन से शरीर में चैतन्य भी होता है, अतः इसको सोम न कहकर सोमकल्प कह सकते हैं। इसका गुणश्वास में तत्काल होने से कुछ लोग इसके सत को बराबर सेवन करते रहते हैं, इससे हानि होने की संभावना है। दिल का बैठना दवा की अधिक मात्रा से होता है। प्राकृतिक कोष्ठ बद्धता होती है, भूख कम हो जाती है, आमाशय दूषित हो जाता है। प्रायः इसका प्रभाव चिरस्थायी नहीं होता, अतएव रोगी इसका सेवन अधिक दिन तक करना चाहता है। श्वास का निश्चित निदान समझे बिना इसका लगातार प्रयोग करना बहुत हानिकारक होता है। यह सब उपद्रव इसके सत एफेड्राईन के हैं, चूर्ण रूप में सेवन के नहीं।

क्या पृथ्वी मनुष्य शून्य हो जायगी

हमारी आंखों के सामने किन्तु अज्ञान भाव मे विविध प्रकार के कीड़ों के साथ हमारी लड़ाई चलती रहती है। यह लड़ाई योरोपियन महासमर से भी अत्यन्त भयानक है, और इसी की हार जीत पर ही हमारा विनाश व अस्तित्व निर्भर है। भाँति २ के कीड़े चारों ओर से मनुष्य के साम्राज्य पर अपना अधिकार जमा रहे हैं, वे हमारे खेतों पर चढ़ाई कर अन्नों को नष्ट कर हमारा आहार छीन रहे हैं। और जंगलों के पेड़ों को नष्ट कर हमारे घरों को बिना छत का करना चाहते हैं, अन्न और रूई को नष्ट करके हमारे शरीर के ढकने के वस्त्र को छीन रहे हैं। यहीं तक ही होता तो भी गनीमत थी वे तो हमारे शरीर में नाना प्रकार के रोग के विषों को प्रवेश कराकर हमारी हत्या करने पर उद्यत हो रहे हैं, वे हमें पृथ्वी से खदेड़ कर सारा आधिपत्य अपने हाथ में करना चाहते हैं।

उदाहरणार्थ—एक प्रकार के कीड़े-जो रूई पर अपना जीवन बिताते हैं, अमेरिका के प्रत्येक मनुष्य, स्त्री, और लड़के से प्रति वर्ष प्रायः ४०) रु० वसूल करलेते हैं। हिसाब लगाने से पता लगा है कि ये कीड़े करोड़ों रुपये की रुई प्रति वर्ष नष्ट कर डालते हैं। एक दूसरे प्रकार का कीड़ा जो आलू का कीड़ा है, प्रत्येक अमेरिकन पीछे एक रुपये का आलू नष्ट कर डालता है अर्थात् यह प्रति वर्ष १०००००००० दस करोड़ रु० का आलू खाजाता है। हमारे ये निष्ठुर शत्रु असँख्य हैं। वे दया करना तक नहीं जानते। हमारे विरुद्ध काम करने में वे कभी थकते नहीं, वे हमपर जो टैक्स लादते हैं उसे प्रत्येक मनुष्य से सख्ती के साथ वसूल करते हैं फिर भी सन्तुष्ट नहीं होते। वे समस्त पृथ्वी का आधिपत्य चाहते हैं। इधर विज्ञान जगत् भी उनका पूर्ण रूप से सामना करने को उद्यत हो गया हैं। वह वैज्ञानिक उपायों से कीड़ों का नाश करने पर उतारु हो गया है।

देखें अन्तमें जय किसकी होती है, विज्ञान की ओर से सेना का पहला दल डाक्टर एल० ओ० हावर्ड के सेनापतित्व में निकला है। डाक्टर साहब बहुत से वैज्ञानिकों को साथ लेकर कीड़ों को खेत से भगाने की चेष्टा में लगे हुए हैं। अमेरिकन सरकार भी इस विषय में उनकी सहायता कर रही है, यद्यपि डाक्टर साहब का इन कीड़ों से भयंकर युद्ध छिड़गया है परन्तु फिर भी उन्हें सफलता की कोई आशा प्रतीत नहीं होती। उसमें उनकी हार ही देख पड़ती है। कीड़े बड़ी तेज़ी के साथ सँख्या में बढ़ रहे हैं, सहज ही अपने शत्रुओं से छिपकर बच भी जाते हैं। और भी ऐसे अनेक कारण हैं, जिनको देख कर कहना पड़ता है कि पृथ्वी पर उनका अस्तित्व मनुष्य जाति की अपेक्षा अधिक स्थायी है।

हम लोग कीड़ों को छोटा जीव समझ कर अब तकउनकी पर्वाह नहीं करतेथे, किन्तु वह धीरे २ शक्तिशाली होते गये, और एक साथ मिलकर हम पर आक्रमण करने लगे। अब ऐसी हालत हो गई है कि पृथ्वी पर अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए हमें कीड़ों को नष्ट करना अत्यावश्यक हो गया है। उन्हें नष्ट करने के लिए वैज्ञानिक उपायों का अवलम्बन करना पड़ेगा, खेत के कीड़ों को भले ही नहीं पहचानें परन्तु मच्छर, मक्खी आदि तो हर समय हमारे साथ बने रहते हैं। वे क्या कम अनिष्ट कारक हैं? प्रायः सभी जानते हैं कि मक्खियां बीमारी फैलाती हैं। इस बात को प्रमाणित हुये कई वर्ष होगये, हम प्रतिवर्ष उनसे बचने के लिए यद्यपि विष आदि खरीदने में बहुतसा समय खर्च करते हैं, किन्तु मक्खियों की सँख्या कम होने की जगह बढ़ती ही जाती है। ज्वर फैलाने वाले मच्छर वर्षों युद्ध करने के बाद भी हार का नाम तक नहीं लेते।

कीड़े असँख्य हैं, और मनुष्य की जीत एक ही दो स्थानों में होती है। कोचीन चीन से टैक्सस बहुत दूर है, फिर भी आलू नष्ट करने वाले कीड़े वहाँ पहुँच गये, यही एक दृष्टान्त यह साबित करने के लिए काफी है कि कीड़े एक स्थान से केवल दूर दूर देश की यात्रा ही नहीं कर सकते, वहाँ अपना वासस्थान भी बना लेते हैं। वे मनुष्य के निकाले हुए या तायात के नये साधनों का पूरा उपयोग करते हैं।, रेल, जहाज़ मोटर आदि पर चढ़कर वे पृथ्वी के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँच जाते हैं, आज कल भी एक सँस्था ७१६ प्रकार के हानिकारक कीड़ों की सेना से लड़ाई लड़ रही है। उनमें एक प्रकार की चींटी भी ऐसी है जो मनुष्यों को खाजाती है। यह अफ्रीका में पाई जाती है। ये चींटियाँ एक बड़ी संख्या में यात्रा करती हैं। रास्ते में जो कुछ पाती हैं, खाजाती हैं। इनसे मनुष्य की भी रक्षा नहीं होती। इसी प्रकार की कुछ छोटी चींटियाँ होती हैं, जो पलनों में सोये हुए बच्चों को भी चटकर जाती हैं। इस जाति की चींटियाँ आर्जेनटाइन प्रदेश में होती है, किन्तु सफलता पूर्वक समुद्र की यात्रा तय करके वे इंगलैंड पहुँच गई हैं। कौन कह सकता है कि वे भारत वर्ष तथा अन्य देशों में भी नहीं पहुँचेगीं।

इसीलिए वैज्ञानिक पूछने लगे हैं कि क्या पृथ्वी मनुष्य शून्य हो जायगी?

(माधुरी)
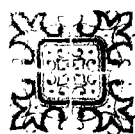
त्रिदोष सिद्धांत शंका पत्रम्

(ले०—वैद्यचूडामणि राजवैद्य गोपालशास्त्री राजवाड़े, प्रिन्सिपाल, वैद्यक महाविद्यालय, नागपुर)

श्रीवाराणस्यां त्रिदोषपरिषदासीत् । तस्यां "रोगान् प्रति दोषदूष्याणांसमवायः । सूक्ष्मरूपेण निमित्तसम्बन्ध" इति निश्चितमासीत् । अपरञ्च नूतनमतं स्वीकृत्य "कीटाणूनां निमित्तसंबंधः" एतदपि प्रमाणीकृतम् ॥ १ ॥

१ परंच । एकस्मिन्नेव कार्ये एकस्यैव वस्तुनः कारणद्वयं कथं संगच्छते ॥ २ ॥

२ रोगान्प्रति दोषदूष्याणां समवाय इति यदुक्तं तन्न समीचीनं प्रतिभाति कुत इति चेत् । कफेवमन' मिति आचार्यैरुक्तम् । कफनिबर्हणेव मतमेव प्रधानतमम् । परंच "दृष्ट: कफोमूर्तिगतः पद्मिनीजलबिंदुवत्" इति । अग्निगोलकेप्रत्यक्षतयाकफोदृश्यते "कफेवमन" मितिविधायकशास्त्रेणासमीचीनतयावामितेऽपिअग्निगोलके स्थितकफस्य अभावो नैवदृश्यते अतएव कफस्य समवायित्वे वामितेऽपिरोगस्य अभावो नैवजायते तथैव कफोदरं अतः दोषदूष्याणां समवायित्वंनैवसंगच्छते । तथाच निमित्तकारणमपि कुतश्चेत् "पित्तेविरेचन" मितिविधायक वचनेन पित्तजनितरोगरुग्णस्यविरेचने दत्तेसतिपित्तह्रासोभवतितद्ह्रासात् पित्तजनितरोगाणामपिह्रासोभवति । अत उच्यते निमित्तनाशे कार्यनाशः कथंभवति । नहिकुलालाद्युच्छेदेघटविनाशोभवति । अतः निमित्तकारणमपि न समीचीनम् । अतः समवायनिमित्ते हित्वा अन्यत्किमपि कारणं भवितुमर्हतीतिमांप्रतिभाति ॥ ३ ॥

३अपरंच "कीटाणवोनिमित्तकारण" मिति-उक्तमतद्रोगोत्पत्तौ कीटाणवः कथंकारणं । प्रथमंतु तावत् एतत्पतःअमूलमेवेति मां प्रतिभाति । कुतःइतिचेत्अस्मिन् जगतीतले यत् वस्तुजातं वर्तते तत् सर्वं प्रथमंक्लेदभावमापद्यन पश्चात् कीटाणवः भवंति यथा आम्रवृंताककदलीलवल्यादीनांफलेषु पूर्वं क्लेदभावआपद्यते समीचानतया क्लिन्नेषु तेषु कीटाः प्रादुर्भवन्ति । अतः क्लेदस्य पूर्वभावित्वात्कीटाणूनांपरभावित्वात् क्लेदस्य जनकत्वं भवितुमर्हति । अपरंच, यस्मिन्नृणे ज्वरकालयाः प्रादुर्भावोभवति तस्मिन्नृणे रुधिरं रुधिरपरीक्षकाणांसमापे परीक्षार्थं प्रेषितं चेत् नैरुच्यते अस्मिन् रुधिरे ज्वरकीटाणूनां संशयोपि नास्ति पश्चात् कतिपयैर्मासैःतस्यैव रुग्णस्य रुधिरं प्रेषितं चेत्अस्मिन् रुधिरे बहवः ज्वरकीटाणवो दृश्यन्ते । एतत्सदृशमेव लालाकणेः । अतएव ज्वरकालेन रुधिरं क्लिन्नं सतिज्वरकीटाणवोभवन्ति तथैव मशकै रुद्ध्यमानस्य जन्तोः प्रथमं तावत् मुखसूचिकाविशेषा तस्य रुधिरं क्लिन्नं सति तज्जातीयोज्वर कीटाणव उत्पद्यन्ते नतु स्वमुखसूचिकायां तज्जातीयज्वरस्य कीटाणून् प्रवेश्य रुग्णस्य रुधिरं प्रवेशयन्ति । अतएव प्रथमं कीटाणूनासंभवस्यासंभवएव । अतएव मयोच्यते कीटाणवः रोगोत्पत्तौ निमित्तकारणं अन्यद्वा किमपि कारणं भवितुं नार्हन्ति किंतु कीटाणूनां

दर्शनेनरोगाधिक्यं स्पष्टी भवति । साध्यश्चेत्कष्टसाध्यः । कष्टसाध्यश्चेदसाध्यइति लक्षणं कर्तुं पार्यतेअतएव कीटाणवोरोगाधिकस्य लक्षणं नतु कारणमस्तीतिशम् ।

सांजलिबन्धं सर्वान्विद्वद्वर्यान् उत्तरयाचयिता

भवदीय

वैद्यचूड़ामणि राजवैद्य गोपालशास्त्री

राजवाड़े, प्रिन्सिपाल वैद्यक

महाविद्यालय, नागपुर ।

भाषानुवाद

गत दिनों में काशी क्षेत्रमें त्रिदोष परिषद् हुई उसमें ऐसा निर्णय हुआ कि दोष दृष्य रोगों के [स्थूल रूप से] "समवाय" कारण व सूक्ष्म रूप से निमित्त कारण हैं, और नये मत के अनुसार कीटाणु भी रोगों के निमित्त कारण हैं, इस सिद्धांत को प्रमाणमाना गया है।

(१) परन्तु एक ही कार्य के लिए एक ही वस्तु दो तरह से कारणहोना कैसा सम्भवनीय है?

(२) फिर से 'दोष दृष्य यह रोग के समवाय कारण' यह भी निर्णय योग्य नहीं हो सकता, आचार्यों के 'कफेवमनम्' इस युक्ति के अनुसार कफनाश के लिए वमन ही मुख्य है। और फिर कभी कभी यह कफ आंखों के अन्दर स्पष्ट रूप से दीखने लगता है 'कफः दृष्टः मूर्ति गतः पद्मिनीजल बिंदुवत्' 'परन्तु कफे वमनम्' इस वचनानुसार वमन के बाद भी आंखों के अन्दर से कफ नष्ट हुआ दीखता नहीं इस रीति से जिस का समवाय कारण कफ है ऐसे रोग का वमन होने के बाद भी नाश होता नहीं यह स्पष्ट है। यही स्थिति कफोदर की है। इसलिये दोष दृष्य यह रोग के समवाय कारण नहीं हैं ऐसा निश्चय होता है। उसी तरह दोष दृष्य यह रोग का निमित्त कारण नहीं हो सकता क्योंकि निमित्त कारण के नाश के साथ कार्य का नाश होना कभी भी सम्भवनीय नहीं है। कुंभार नष्ट हो जाने पर घट नष्ट कभी नहीं होता परन्तु 'पित्तविरेचनम्' इस शास्त्र वचनानुसार रोगी को विरेचन देने पर रोगी का पित्त नाश होता है और उस पित्त नाश होने पर पित्त जनित रोग नाश हो जाते हैं इसलिये दोषदृष्य यह रोग का निमित्त कारण हो नहीं सकता। मेरे मतानुसार दोषदृष्य यह रोग का समवाय व निमित्तकारण इन दोनों कारणों के अलावा दूसरा कोई कारण ही होना चाहिये।

(३) फिर 'कीटाणु यह रोग के निमित्तकारण किस प्रकार से बतलाये गये हैं?

पहिले तो यह पत्त बिलकुल निर्मूल व निराधार हैं क्योंकि इस संसार में जो पदार्थ पैदा होते हैं वह पहिले × क्लेद रूप से अस्तित्व में आते हैं। इसके बाद कीटाणु उत्पन्न होते हैं, आम, बैंगन कैसे कुमड़ा इन फलों में पहले सड़ने की क्रिया प्रगट होती है और योग्य स्थिति प्राप्त होने पर उस सड़ने की क्रिया से कीड़े उत्पन्न होते हैं। इस रीति से सड़ने की क्रिया पहिले होती है और कीड़े बाद में पैदा होते हैं। इस लिये क्लेद कीड़ों का मुख्य कारण हैं।

और जिस वक्त बुखार और खांसी उत्पन्न

×क्लेद भावो नाम स्थिति स्थापने असामर्थ्यम्

होती है उसी वक्त रोगी का रक्त रुधिर परीक्षक के पास परीक्षा के लिए भेजने पर वह स्पष्ट बतलाता है कि इस रक्त में क्षय के जन्तु तो क्या लेकिन उनका संशय भी नहीं है। परन्तु फिर कुछ दिनों के बाद उस रोगी का रक्त भेजने पर उसी रक्त में क्षय जन्तु बहुत से दीखते हैं। यही बात लाल कफ के लिए लागू है। [लाल कफ की इस रीति से बुखार खांसी से रक्त दूषित होने पर उसमें क्षय के जन्तु पैदा हो जाते हैं। वैसा ही जिसको जहरीले मच्छर काटते हैं उस प्राणी का रक्त उस जहर से दूषित होकर तदनुरूप बुखार आता है और कीड़े निर्माण होते हैं। मच्छर कभी इस जाति के बुखार के कीड़े अपने मुख के ऊपर रखकर दाद में रोगी के रक्त में प्रविष्ट नहीं करता और इस रीति से कीड़ों का सम्भव पहिले ही असम्भव है इसलिये कीटाणु ये रोग का निमित्त कारण या दूसरा भी कोई कारण नहीं है ऐसा मेरा मत है। कीड़े के देखने से रोग वृद्धि होती है यह स्पष्ट दीखता है और उस पर से साध्य रोग कष्ट साध्य रोग है और कष्ट साध्य रोग असाध्य है ऐसा रोग के स्थिति का निदान होता है।

सिर्फ इस पर से यह मालूम होता है कि कीटाणु रोग वृद्धि के दर्शक हैं वरना रोग के ये किसी भी प्रकार के कारण नहीं हैं यह स्पष्ट है।

—भवदीय

वैद्य चूड़ामणी राजवैद्य गोपालशास्त्री राजवाड़े,
वैद्यक महाविद्यालय प्रिन्सिपल नागपुर
'हिमालय वैद्य' नागपुर सिटी.

सौन्दर्य

[ले०—चन्द्रशेखर पाण्डेय "चन्द्र मणि"]

परमात्मा ने सौन्दर्य की अनेक प्रकार से सृष्टि की है। संसार-क्षेत्र में प्रकृति सौन्दर्यमयी हो कर सामयिक परिवर्तन करती हुई अपना अखंड नाट्य दिखाया करती है। अपनी प्रत्येक झलक से प्रत्येक स्थावर, जंगम सामग्री पर नवजीवन-संचार करती है। कवि के शब्दों में इसे ही हम—

"सुन्दरता कहँ सुन्दर करही।"

कह सकते हैं। प्रकृति के रँग में रँगे हुए को ही 'सुन्दर' की उपाधि प्रदान करनेकी उत्कंठा होती है।

ईश्वरीय सृष्टि में जिसको सहायक मूल-प्रकृति है मनुष्य का सौन्दर्य अद्भुत रचना है। ईश्वर स्वयं सुन्दर है, इसीलिए सुन्दरता की इतनी अच्छी सृष्टि कर सका। मानव-जीवन की रचना उन परमाणुओं से हुई है, जो वास्तव में सुन्दर हैं। यही कारण है, कि मनुष्य की सुन्दरता सबसे अधिक प्रिय है। सभी अपने को सुन्दर कहलाने की इच्छा रखते हैं। स्त्रियों में इस बात का शौक अधिक देखा जाता है। कोई उन्हें कुरूपा कहता है, तो अधिक दुःख होता है। पुरुषों के लिए भी यही बात लागू हो सकती है। एक पुरुष भले ही दूसरे को कुरूप कहले, किन्तु किसी स्त्री के मुख से अपने को कुरूप सुनते ही वे लज्जा से गड़ जाते हैं। यह क्यों? ······इसीलिए न, कि सुन्दरता ईश्वर की देन है, जिस पर प्रकृति नित्य अपना चमकीला मुलम्मा चढ़ाया करती है।

खेद है, हम उसी ईश्वर की देन का दुरुपयोग

करते हैं। जिस प्रकार सुन्दरता अकारण ही हमारा उपकार करती है, उसी तरह हम उसका आदर नहीं करते, वरन् इच्छुक होते हुए भी उसके निर्वासन के हेतु नित्य नूतन षड्यन्त्र रचा करते हैं परिणाम यह होता है, कि हम जगह जगह अपमानित होते हैं। सुन्दरता के बिना कोई टके को भी नहीं पूछता। धीरे धीरे रोगों की वृद्धि होती है और अकाल ही काल-कवलित हो जाते हैं।

उफ़ ! कितना भयंकर परिणाम भोगना पड़ता है। वह इस लिए कि हम कृतघ्न हैं। प्रकृति की नेकियों को नहीं मानते उसका आदर नहीं करते उसके रचे हुए स्वर्णिम श्रृंगार पर—नहीं, नहीं—अपने आप पर कुठाराघात करते हैं।

हम यह नहीं समझते कि जलने-कुढ़ने से स्वास्थ्य की कितनी क्षति होती है। मामूली से मामूली बात पर आग बबूला हो जाना, ईर्षा, द्वेष की प्रचण्ड अग्नि में जलना और दंभ, अहंकार आदि दुर्व्यसनों की उपासना करना हमारा नित्य का कार्य हो रहा है। अपने कुत्सित आचरणों से हम दूसरों को भी बिगाड़ रहे हैं। हमारे इस कृत्य से छोटे छोटे बालक भी शिक्षा लेते हैं। क्यों नहीं, जब उनके अभिभावक एक पथ का अवलम्बन कर रहे हैं, तो वे उनके चार हाथ आगे चलकर अपने साथियों को भी क्यों न ले बहें। कहा भी है—

यद्यदाचरति श्रेयानितरस्तत्तदीहते।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तमनु वर्तते॥

[गीता]

आज प्रायः देखा जाता है, कि छोटे से छोटे बच्चे भी बात बात में रूठना और कुढ़ना जानते हैं यह सब हमारे ही आचरणों का प्रभाव है।

चिन्ता और क्रोध भी कम अनिष्ट कारी नहीं। मनुष्य जीवन की अन्यान्य ख़राबियों के साथ साथ चिन्ता और क्रोध की ख़राबी कुछ कम हानि नहीं पहुंचाती। सैकड़ों ऐसे उदाहरण हैं। जो व्यक्ति अधिक चिन्ता और क्रोध करते हैं, उनके शरीर निर्बल, सूखे और पीले हो जाते हैं। जब शरीर की यह दशा होती है, तो रूप और सौन्दर्य के लिए कहना ही क्या है।

तीसरा कारण 'बाल-विवाह' है, जिसने समस्त देश को चौपट कर डाला है। इस प्रथा के कारण लड़के और लड़कियों को समान रूप से क्षति पहुँचती है। जिस समाज में बाल विवाह की रिवाज हो, वहां के नर नारियों का रूपवान होना वास्तव में आश्चर्य का विषय है।

ब्रह्मचर्य और संयम, ये दोनों स्वास्थ्य और सुन्दरता के प्रधान कारण हैं। इनका प्रत्येक दृष्टि में प्रधानत्व है। इन्हीं की बदौलत विद्याध्ययन में सहायता मिलती है। कदाचित् इन्हीं दोनों—ब्रह्मचर्य और संयम को नष्ट करने के लिए विवाह किया जाता है। यद्यपि किसी समय विवाह सदाचार-पालन के लिए किया जाता था। "आश्रमादाश्रमं गच्छेत" के अनुसार दूसरा आश्रम कहा जाता था। यह एक दुर्ग था, जिसकी सहायता से इन्द्रिय अरातियों पर विजय की जाती थी, जो फूला फला बाग़ कहा जाता था, किन्तु आज वासनापूर्ति का स्थल हो गया है। उस प्रफुल्लित बाग की कच्ची कलियाँ आज बड़ी निर्दयता से मसली जाती हैं। यह बात सभी जानते हैं कि बाल विवाह का परिणाम अच्छा नहीं होता, तो भी जान बूझकर इसी लकीर के फ़कीर बने हैं।

चौथा कारण गरीबी है। फिर भी सौन्दर्य के विषय में इसे अधिक अपराधी ठहराना अनुचित होगा क्योंकि स्त्री हो या पुरुष यदि वह सौंदर्य का उपासक है, तो अवश्य ही उसे प्राप्त कर सकता है। गरीबी इसमें तनिक भी बाधा नहीं दे सकती।

पांचवां कारण है रोग। यों तो कोई भी बीमारी, जब शरीर में उत्पन्न होती है, तो शरीर की दशा बिगड़ जाती है, परन्तु यदि दुर्भाग्य से प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, उपदंश, प्रदर, योनि आदि रोगों से पाला पड़ जाता है, तो सौंदर्य की हानि अवश्यम्भावी है।

सौंदर्य-उपासक को उपरोक्त कारणों से भली प्रकार सावधान होने की आवश्यकता है और सौन्दर्य प्राप्ति के लिये नित्य-प्रति प्रसन्न-चित्त रहना, अपने में सुन्दरता का अनुभव करना और विश्व-प्रेम आवश्यक है। प्रेम भयानक से भयानक मनुष्य को भी सुन्दर बना देता है। आप समस्त जीवों से दया का बर्ताव करेंगे यथा समय उन के उपकार के लिये कटिबद्ध रहेंगे, तो याद रखिये—आप कितने भी कुरूप हैं किन्तु दूसरे आप को सुन्दर ही देख सकेंगे। उस के विपरीत सुन्दर से भी सुन्दर मनुष्य यदि अन्याचारी, असंयमी कृतघ्न, और घातक होगा तो प्राणी उसे यमदूत ही समझेंगे।

सुन्दरता अपने में उत्पन्न होती है, किन्तु दूसरों के द्वारा उसका विकास होता है। दूसरे वही—जो आपमें सौन्दर्य का अनुभव करें और यह अनुभव तभी हो सकता है, जब आप में विश्व प्रेम हो।

संक्षिप्त शरीर मीमांसा

ले०—श्री डा० वेद व्यासदत्त शर्मा शास्त्री वैद्यवाचस्पति

नवीन पाश्चात्य सभ्यता के पुजारी और नवलता के रसिक लोग स्वशास्त्र के अध्ययन में अनभिज्ञ होते हुये भी प्रायः यह कहते हुये सुने जाते हैं कि आयुर्वेद चिकित्सा का प्रतिपादन तो करता है परन्तु शरीर के अवयव विषयक ज्ञान की इस में त्रुटि है। यदि ये वाह्याडम्बर में आकर्षित होने वाले महानुभाव सुश्रुतसंहिता के शारीर स्थल को आद्योपान्त पढ़ जायें तो उन्हें सानुरोध स्वीकार करना होगा कि आयुर्वेद में Anatymo शरीर शास्त्र का सम्पूर्ण वर्णन प्राप्त होता है। इसी मत का अनुमोदन Dr Hails अपनी पुस्तक practice of medicine in India में जिन शब्दों में करता है इसका संक्षिप्त भाषान्तर यह है—

"जब मैं उस सहस्त्रों वर्ष पूर्व के लिखित इस सम्पूर्ण विज्ञान को पढ़ता हूं तो आश्चर्य से विमूढ़ हो जाता हूं पुरातन भारत में वर्तमान के समान शरीर विषयक सम्पूर्ण ज्ञान प्रचलित था"।

परन्तु आज हमें आयुर्वेद के महत्त्व नहीं वरन् उसमें वर्णित शारीरक भावों का परिचय करा देना अभीष्ट है अस्तु अपने निर्दिष्ट विषयकी की ओर अग्रसर होते हुये हम शरीर की उत्पत्ति अंग प्रत्यंग वर्णन तथा आरोग्य विधि और पंचतत्व का संक्षिप्त दिग्दर्शन मात्र निम्न शब्दों में अंकित करने का प्रयत्न करेंगे—

उत्पत्ति:—

प्रकृति, महान, अहंकार, पंच ज्ञानेन्द्रियां पंच कर्मेन्द्रियां मन, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश पंच महाभूत तथा पंच विषय तन्मात्रा (शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध) और पुरुष (आत्मा) इनके समवाय सम्बन्ध को शरीर कहा जाता है इसे ही कर्म पुरुष कहकर आयुर्वेद तंत्र में अधिकृत आदेश किया गया है। इनमें भी प्रकृति महान् तथा अहंकार और पंचतन्मात्रा को मूल प्रकृति और घ्राण जिह्वा दृष्टि कर्णादि पंच कर्मेन्द्रिय तथा हस्त पादपायु लिंगादि पंचकर्मेन्द्रिय तथा मन और पृथ्व्यादि पंच महाभूत को सोलह विकार कहा है। अभिप्राय यह हैकि शरीर शब्दकी निरुक्ति के लिये इन चौबीस तत्वों तथा पच्चीसवें चेतनावन्त आत्मा का सम्मिश्रण होना अनिवार्य है। गर्भ में भी जब शुक्र शोणित का परस्पर संघात होता है तो यह सब भाव सूक्ष्म रूप से उसमें विद्यमान रहकर शरीर निर्माण का कारण होता है। माता पिता के संयोग से जब शुक्र शोणित (निरोग) का सम्मिश्रण होता है तो गर्भाशय में गर्भ प्रगट होता है—

सौम्यं शुक्रं आर्तवमाग्नेयमितरेषामप्यत्र भूतानं

साम्निध्यं परस्परानुप्रवेशात्परस्परानु संघातात् ॥
सु० शा० ३

इस प्रकार शुक्र आर्त्तव के प्राकृतिक योग मे गर्भ का विकास निर्माणादि होता है। गर्भ माता के गर्भाशय में नव मास पर्य्यन्त रहकर अपने क्रमानुसार माता की रसवाहिनी नाड़ी मे आहार प्राप्त कर तथा तिलप्रमाण अग्नि और प्राणवायु के निरन्तर परिश्रम द्वारा वृद्धि को प्राप्त होता रहता है और नौ मास व्यतीत होने पर योनिद्वार मे इस जगत् में सोम सूर्य की रश्मियों का प्रथम बार अवलोकन करता है।

यहां शरीर के मातृज पितृज आत्मज सत्वज रसज अंशों का विवर्ण युक्ति संगत होगा –

मात मे होने वाले अंश मृदु मांसक होते हैं यथा हृदय, अंत्र, आशय, क्लोम, वृक्क यकृत, पिता से वीर्य अस्थि नख लोम तथा दूसरे कठिन अवयव रस से होने वाले रक्त मांस मेदादि धातु।

इस प्रकार इन अंशों से युक्त द्विगुण वीर्य द्वारा शरीर सं..त को प्राप्त होता है—

अग्नि सोमो वायु सत्वं पंचेन्द्रियाणिभूतानिति प्राणम् सु० शा० ४

यथा नमाध्याय सुश्रुत में वर्णन है शरीर में ३०० अस्थियां होती है ७०० शिरायें २४ धमनियां, ५०० पेशियां २१० संधियां, २२ स्रोत, नवद्वार सप्तधातु वायु आदि तीन दोष, सप्तमल, सप्तोपधातु १०७ मर्म तथा हाथ पैर इत्यादि अवयव होते हैं। सप्त त्वचा सप्तकला। उनमें से रस रक्त, मांस मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, यह सप्त धातुएं जिनकी स्थिति से शरीर में प्राण रहते हैं—

प्रीणनं जीवनं बलयं स्नेह धारण पूरण

गर्भोत्पत्ति—ये क्रमशः इन सात धातुओं के कर्म हैं। ७०० शिराओं को मूल शिरायें नाभि मे उत्पन्न होकर दोष धातुओं तथा मलों और छर्दि उच्छ्वास शुक्र अधोवायु मूत्रादि का वाहन करती हैं।

२४ शिरायें जिन मे शब्द स्पर्श रूप रस गंध का प्रकार होता है तथा इन में ४ तिर्यग्गामिनी धमनियों के असंख्य भेद रोम कूपों मे समाप्त होकर पालन करती हैं।

३०० अस्थियां (मतभेद) धारण करके शरीर की आकृति को स्थिर रखती हैं।

७०० स्नायु ६०० शाखा में २३० उदर भाग में तथा ७० ऊर्ध्व जत्रु में प्रसारित होकर शरीर को बांधे हुए हैं।

पांचसौ पेशियां शरीर में, शाखा ४०० तथा में शेष १०० इस प्रकार विभक्त हुई बृहंण करती हैं।

सप्त, त्वचा-अवभासनी,लोहिता श्वेता ताम्रा, वेदनी, रोहनी, मांस धरा।

सप्त कला—मांसधरा, रक्तधरा मेदधरा श्लेष्मधरा मलधरा पित्तधरा ग्रहणी तथा सप्तमी शुक्रधरा।

सप्त आशय—कफाशय, रक्ताशय, पित्ताशय, पक्वाशय, मलाशय आमाशय, मूत्राशय तथा स्त्रियों में अष्टम गर्भाशय।

त्रिदोष—वात, पित्त, कफ.

इसी प्रकार १६ कंडरा, ४ रिज्जु, ६ कूर्च ७ सेवनियां तथा शंख हृदय शिरवस्ति आदि मर्म यह सब अपनी २ स्वस्थ दशा मे स्थित होते हुए शरीर के भाव कहे जाते हैं।

अनुभूत-प्रयोग

बच्चों के दांत पर—

मुलहटी बारीक पीस कपड़ छन कर शहद में मिला कर दिन में २-३ बार मसूढ़ों पर मसलने से दाँत आराम से निकलने लगते हैं।

नकसीर के लिए—

बेरी के पत्ते, कपूर, मुलतानी मिट्टी तीनों को पीस कर माथे पर लेप करने से खून गिरना बन्द हो जाता है।

प्रदरान्तकावलेह—

चिकनी सुपारी एक पाव का चूर्ण करके १ सेर गौ के दूध में पकाकर खोया बनाओ, फिर ३॥ आध सेर खान्ड की चासनी तैयार करके उसमें सुपारी का फूल ५ तोले, ढाक का गोंद आधी छटांक, छोटी इलायची के दाने ४ तोले, जाफ्रान १ तोला सब का चूर्ण करके इस चूर्ण को और ऊपर के खोवे को दोनों को मिला कर अवलेह तैयार करें, इसमें से ६-६ माशे से एक एक तोले तक मात्रा बढ़ाते हुए सुबह-शाम गौ के दूधसे इस्तेमाल करें इसके सेवनसे सफेद, सुर्ख प्रदर बहुमूत्र आदि रोग, कमर, घुटने, जोड़ों का दर्द दूर होता है कमजोर स्त्रियों के लिए यह एक खास दवा है सब ही ऋतुओं में सेवन कर सकते हैं।

चमत्कारी व्रणनाशक मरहम—

वैद्यराज पं० देवकरणजी बाजपेयीका अनुभूत —नीम की कोमल पत्तियों का रस, भँगरे का रस, सेम की पत्तियों का रस ये तीनों १-१ छटांक, बबूल की पत्ती का रस १॥ छटाँक, मैंहदी की पत्ती का रस १॥ छटांक, पुरानी और खालिस पीली सरसों का असली तेल आध सेर ३॥ और दो सेर जल डालकर मन्दाग्नि से पका कर तेल

लेख विस्तृत हो जाने के भय से इस विषय की व्याख्या पूर्वक उल्लेखना करने में असमर्थ हूँ अस्तु यह सूत्र रूप ज्ञान द्वारा शरीर के अवयवों भावों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है इस शरीर संज्ञक पुरुष को दोष साम्य से आरोग्यता प्राप्त होती है अतः स्वस्थ रखने के लिए ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या के नियमों का प्रतिपालन करना अति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त चरक महर्षिराजके आदेशानुसार योग त्रयसे बचना (असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग प्रज्ञापराध काल इनके हीन मिथ्या और अतियोग से बचे रहने से शरीर निरोग रहते हैं अन्यथा घोर व्याधियों द्वारा पीड़ित हो जीर्ण शीर्ण अवस्था को प्राप्त होता है। धर्मानुकूल आचरण करता हुआ पुरुष सदा सर्वदा अपने इस शरीर की सम्यक् आरोग्यता का निरन्तर यत्न करे क्योंकि—

"धर्मार्थ काम मोक्षानामारोग्य मूलमुत्तमम्"

च० सू० १०

मात्र शेष रह जाने पर उसे गरम २ छान कर फिर देशी मोम १ छटांक मिला कर घोटें बस तैयार हो गया। पहले जख्म को नीम के औटाये पानी से धोवें, फिर जख्म के बराबर फोया बना कर मर्हम लगा कर चिपका दिया करें। यह बड़ा अद्भुत मर्हम है इसके लगने से कठिन से कठिन जख्म बहुत जल्द अच्छे हो जाते हैं।

वैद्यभूषण भिषक्केसरी श्री गोवर्धन शर्मा जी छांगाणी महोदय (नागपुर) (सभापति वैद्य सम्मेलन) का श्वास कास पर अनुभूत प्रयोग—

बहेड़े का बक्कल एक पाव ऽ। लेकर कपड़छान कर चूर्ण करलें फिर नौसादर फुलाया हुआ एक तोले, सोना गेरू ६ माशे इन दोनोंको भी पीस कर उसमें मिलालें बस दवाई तैयार है। इसमें से तीन २ माशे सुबह शाम मधु में लगातार कुछ दिन चाटने से श्वास रोगी अवश्य अच्छा हो जाता है। यदि प्रथम एक बार रोगी को वमन कराकर फिर उपरोक्त औषध सेवन करावें तो अच्छा है और बीच २ में कभी २ विरेचन भी देते रहें।

रसायनाचार्य कविराज प्रतापसिंह जी भिषक् मणि का—अर्धाङ्ग वात पर अनुभूत प्रयोग—

पीलासँख्या २ तोले, शुद्धसिंगरफ २ तोले, शुद्ध गन्धक २ तोले, शुद्धपारद २ तोले, गोदन्ती भस्म २ तोले शुद्धतूतिया २ तोले, शुद्ध मैनसिल २ तोले, शुद्ध खर्परभस्म २ तोले

बनाने की विधि:—सब चीजों को करेले के पत्ते के स्वरस मे घोट कर सुखालें, और इस चूर्ण को कपड़ौटी की हुई आतसी शीशी में भर कर वालुकायन्त्र में मन्दाग्नि पर चार पहर तक पाक करें, स्वांग शीतल होने पर द्रव्य को सावधानी पर निकाल लें, और फिर करेले के पत्ते के स्वरस की एक भावना देकर सुखाकर चूर्ण करलें। इसका पाक पीत वर्ण हो तो अच्छा है यह सब प्रकार के अर्द्धांग वात पर लाभ करता है। मात्रा एक चावल से चार चावल तक

भारत-भैषज्य-रत्नाकर-कर्त्ता

रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह.

मालिकः-ऊंझा आयुर्वेदिक फार्मसी.

ऊंझा [अहमदाबाद].

भारत-भैषज्य-रत्नाकर-कर्त्ता

स्वर्गस्थ नगीनदास छगनलाल शाह.

मालिक - ऊंझा आयुर्वेदिक फार्मेसी.

उंझा (अहमदाबाद).

अभिनन्दन पत्र

अहमदाबाद.
ता. ३१-१२-३५

सेवामें:

श्रीमान् रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह

मालिक:—ऊंझा आयुर्वेदिक फार्मसी
ऊंझा (अहमदाबाद)

आपने 'भारत-भैषज्य-रत्नाकर' पांचों भागोंका सङ्कलन करके जो आयुर्वेद समाजकी सेवा सफलतापूर्वक की है उसके लिये हम हार्दिक धन्यवाद देते हुए आपका विशेष रूपसे अभिनंदन करते हैं।

सभापति २५ वाँ निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामंडल	भिषक्केशरी श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणी
भूतपूर्व सभापति निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामंडल	रसायनाचार्य कविराज श्री प्रतापसिंहजी भिषङ्मणि

इसके उपरांत
इस वर्ष वैद्य सम्मेलनमे भी भारत भैषज्य रत्नाकरके लिए धन्यवादका प्रस्ताव हुआ था।

ઇન્ડીઅન આર્ટ પ્રીન્ટરી, ગાંધી રોડ, અમદાવાદ.

वैद्योंकी भारी कठिनाई

चिकित्सामें निपुणता प्राप्त करने, यश मान और धन प्राप्त करनेके लिये हरेक वैद्य के पास आयुर्वेदीय ग्रन्थोंका एक विशाल भंडार होना आवश्यक है परंतु बहुत थोड़े वैद्य हैं जो ग्रन्थों के संग्रहमें यथेष्ट व्यय कर सकते हैं। जो वैद्य सैकड़ों रुपया लगाकर बहुतसे ग्रन्थोंका संग्रह करते हैं उन्हें भी यह देखकर अवश्य खेद होता है कि जो प्रयोग एक ग्रन्थमें हैं वही दूसरे में, तीसरेमें और चौथे में भी हैं। हरेक ग्रन्थमें थोड़े से प्रयोग ही नवीन मिलते हैं, शेष प्रयोग सबमें समान ही होते हैं। इन थोड़ेसे प्रयोगोंके लिये ही इतने ग्रन्थ एकत्रित करने पड़ते हैं और सैंकड़ों रुपया व्यय करना पड़ता है।

इतना रुपया व्यय करने पर भी जब किसी प्रयोगको देखना होता है तो उसे उन ग्रन्थोंके भारी भंडारमें से खोज निकालनेमें बड़ी ही कठिनाईका सामना करना पड़ता है। वह प्रयोग किस ग्रन्थका है और कौन अधिकारका है, यह याद न हो तो उसका हाथ आना असम्भव हो जाता है। घण्टों सिर मारने पर भी प्रयोग हाथ नहीं आता। तब तो अनायास ही मुंह से निकल जाता है कि इन ग्रन्थों पर व्यय किया हुवा सैंकड़ों रुपया पानी में ही डूब गया।!!

यह कठिनाई और भी बढ़ जाती है जब देखते हैं कि एक ही प्रयोग सब ग्रन्थोंमें एकही अधिकारमें नहीं मिलता।

जब किसी रोगीकी विषम और जटिल अवस्थाके लिये कोई उत्तम प्रयोग तलाश करना होता है तो उस रोगका वर्णन बहुतसे ग्रन्थोंमें पढ़ना पड़ता है, घण्टों मेहनत करनेके पश्चात् उचित प्रयोग हाथ आता है और कभी कभी नहीं भी मिलता। उस समय जितना झुंझलाट आता है उसे भुक्तभोगी ही जानते हैं।

एक ही प्रयोगके सब ग्रन्थोंमें समान पाठ नहीं मिलते। सबमें थोड़ा थोड़ा अन्तर पाया जाता है। अब जब तक आप एक ही प्रयोगको बहुतसे ग्रन्थोंमें न देखें और सबका पूरी तरह से परस्पर मीलान न करें यह निश्चय नहीं हो सकता कि कौन पाठ अधिक उत्तम है। इसी प्रकारकी और भी बहुत सी कठिनाइयोंका पहाड़ वैद्योंके सामने सदैव उपस्थित रहता है जो सैकड़ों रुपया व्यय करने पर भी दूर नहीं होता।

इन महान कठिनाइयोंको दूर करनेके लिये 'ऊंझा आयुर्वैदिक फार्मेसी, अहमदाबाद' ने "**भारत-भैषज्य रत्नाकर**" नामक एक बृहद् ग्रन्थ प्रकाशित कराया है। यह ग्रन्थ २० वर्षमें पूरा हुवा है और इस पर **२२ हजार रुपया** व्यय हो चुका है। भारतके सभी बड़े बड़े वैद्योंने इसे अपूर्व और अवश्य–संग्राह्य ग्रन्थ बतलाया है। इस पुस्तकको यदि वैद्योंकी कामधेनु या कल्पवृक्ष कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

भारत भैषज्य रत्नाकर के विषयमें
वैद्य सम्मेलन के सभापतियों

इस वर्षके नि. भा. व. वैद्य सम्मेलन, अहमदाबाद के
सभापति

श्रीमान् वैद्यभूषण पं. श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणी, भिषक्केसरीका भाषण में से—

"ऊंझा फार्मेसी एवं 'आरोग्यदर्पण,' हिंदी मासिक पत्रके अधिपति रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह भी निस्सन्देह सम्मानके पात्र हैं। **सहस्रों रुपये खर्चकर "भारत-भैषज्य रत्नाकर"** जैसे बृहदाकार संग्रह ग्रन्थको आपने मूल एवं विस्तृत हिन्दी **टीकासह** छपाकर आपकी भेंट किया है। इसके पांच खण्ड हैं। रस, भस्म, चूर्ण, क्वाथ, गुटी, अवलेह, घृत, तलादि ऐसा **शायद ही कोई प्रयोग होगा जो इसमें न आया हो। अकेले ही इस ग्रन्थसे वैद्य बहुत कुछ लाभ उठा सकता है।** श्रद्धेय स्वामी लक्ष्मीरामजी, आचार्य यादवजी, महामहोपाध्याय कविराज श्री गणनाथसेनजी प्रभृति कई आयुर्वेदके महारथियोंने इस ग्रन्थकी प्रशंसा की है। अनेक पुस्तकों के सिद्ध लेखक इस ग्रन्थके सम्पादक हल्दौरनिवासी भिषग्रत्न श्री गोपीनाथजी गुप्त भी कम प्रशंसाके पात्र नहीं हैं। २८-१२-३५.

नि. भा. व. वैद्य सम्मेलन इलाहाबाद और इन्दौर और मैसूर के सभापति,

महामहोपाध्याय कविराज श्री गणनाथ सेन सरस्वती M. A. L. M. & S.

"**भारत भैषज्य रत्नाकर, एक अमूल्य संग्रह है।** इसकी रचनाशैली बड़ी ही उत्तम है। और अत्यन्त बुद्धिमानी से की गई है। मैं हरेक व्यक्तिसे इसे खरीदनेके लिए सुफारिश करता हूं क्यों कि यह एक अत्यन्त गौरवपूर्ण ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ के तैयार करने में बहुत परिश्रम किया गया है।

नि. भा. व. ६ वैद्य सम्मेलन कलकत्ता के सभापति

श्रीयुत् पं. लक्ष्मीरामजी स्वामी आचार्य, आयुर्वेदमार्त्तण्ड, जयपुर स्टेट—

नवीन शैलीसे सुन्दररूपेण संगृहीत, जिसे पहिले कभी न देखा हो ऐसा ग्रन्थरत्न "भारत भैषज्य रत्नाकर" का सूक्ष्मावलोकन करनेसे प्रतीत होता है कि चिकित्सकों के लिए उपयोगी इस ग्रन्थको संग्रहीत करके कर्ताने सचमुच वैद्य-जगतको उपकृत किया है। भिन्न भिन्न ग्रन्थोमें पाठभेद होनेके कारण प्रयोगों में जो विभेद देखा जाता था वह इसके द्वारा दूर हो गया है। मेरी दृष्टिमें इस ग्रन्थ के संग्रहकार अत्यन्त प्रशंसा के पात्र हैं।

निखिल भारतवर्षीय पञ्चदश वैद्य सम्मेलन हरिद्वारके अध्यक्ष.

आयुर्वेद मार्तण्ड श्री पं. यादवजी त्रीकमजी आचार्य,

भारत भैषज्य रत्नाकरमें प्रयोगोंका अकारादि क्रमसे उत्तमरूपेण संग्रह किया गया है। संस्कृत पाठके साथ सरल हिन्दी भाषामें टीका भी दी गई है। इस एक ही ग्रन्थको पास रखनेसे शास्त्रीय प्रयोगोंको देखनेके लिये अन्य ग्रन्थकी आवश्यकता नहीं रहती।

नि. भा. व. २४ वैद्य सम्मेलन शिकारपुर के सभापति

श्रीमान कविराज श्री प्रतापसिंह रसायनाचार्य भिषङ्मणि, लिखते हैं।

यह लिखते अत्यन्त हर्ष होता है कि रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह (उंझा) गुजरातवाले आयुर्वेदकी अत्यन्त सेवा कर रहे हैं। इनकी रसशाला तथा मासिक पत्र तो काम करही रहे थे, किन्तु अब आपने यह भारत भैषज्य रत्नाकर नामक ग्रन्थ सम्पादन कर परम उपयोगी कार्य किया हैं। ऐसे ग्रंथ के प्रकाशन और प्रचार की वैद्यसमाजमें बहुत आवश्यक्ता थी वह इसके सम्पूर्ण होनेसे पूरी हो जायगी। पुस्तक बहुत उपयोगी और उपादेय है। आशा है कि वैद्यसमाज इसे अपनाकर सम्पादकका उत्साह वर्धन करेगा।

नि. भा. २० वैद्य संम्मेलन कराची और पंजाब प्रान्तीय प्रथम वैद्य सम्मेलन लाहोरके सभापति,

वैद्यरत्न, राजवैद्य श्रीमान् पं. रामप्रसादजी पटियाला,

पुस्तकका संग्रहक्रम बहुत अच्छा है। विद्वानोंके अतिरिक्त सुन्दर भाषा टीका होनेके कारण सर्व साधारण के लिये भी हितकारी है। चिकित्सकों के लिए यह पुस्तक विशेष रूपसे संग्रह करने योग्य है।

गुजरात प्रांतीय सम्मेलनके इस वर्षके सभापति

श्रीमान् वैद्यराज अमृतलाल माणशंकर पटणी

भारत भैषज्य रत्नाकर में आयुर्वेद की औषधियों के पाठ का संग्रह बहुत विशाल दृष्टि से किया गया है। पाठोंका संग्रह अकारादि क्रम से किया गया है। इस लिये किसी भी पाठ को देखना अतिशय सुलभ है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक पाठ के ऊपर स्वतंत्र रूपमें क्रमशः संख्या दी गई है। प्रत्येक भाग के अन्त में अकारादि क्रमसे रोगों की अनुक्रमणिका भी दे दी गई है। प्रस्तुत पुस्तक में दिया गया पाठ आयुर्वेद के अन्य किन किन ग्रन्थो में हैं यहभी लिखा है। मूल संस्कृत पाठ के साथ शुद्ध हिन्दी भाषान्तर भी दिया गया है।

यही एक विशाल संग्रह पासमें रखने से किसी भी प्रकार का धंधा करने वाले वैद्यको अन्य बहुत सी पुस्तकों क पास में रखने की जरूरत नहीं होगी।

हमारी औषधियों के लिये

वैद्य सम्मेलन और प्रदर्शनोद्वारा प्राप्त पदकादि

११ निखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन मैसूर १९३० सभापति श्री कविराज गणनाथसेन सरस्वती M. A. L. M. & S.	सुवर्णपदक
श्री गुर्जर कच्छ काठीयावाड वैद्य सम्मेलन चतुर्थ अधिवेशन बडोदा १९८५	,,
श्री अखिल भारतवर्षीय स्वदेशी प्रदर्शन नागपुर १९८९	,,
धी इन्डीयन इन्डस्ट्रीयल एक्झीबीशन नवसारी	,,
७ आल इन्डीया आयुर्वेदिक कोन्फरन्स एन्ड एक्झीबीशन मद्रास १९१५	रौप्यपदक
८ निखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन पूना	,,
९ आल इन्डीआ आयुर्वेदिक कोन्फरन्स लाहोर	,,
१९ निखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन नासिक	,,
२० निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद सम्मेलन करांची	,,

इसके उपरांत बहुतसे प्रदर्शनोंसे पदक और सरटीफीकेट मिले है

विद्वान वैद्यों डाक्टरों, और जनता के आये हुए अभिप्रायोमें से कुछ.

Ayurveda Vistar Samiti, Calcutta. 2—12 14

I have examined 1000 brunt Abhrak and found it correct

Janaranjan Sen Kaviraj.

Sir Suba : Baroda State. Unjha 11—2—17

I have been using in my family the Ayurvedic preparations of Shah Nagindas Chhaganlal Vaidya of Unjha for the last ten years. I have much pleasure in recommending them to the public. During my tour in Sidhpur Taluka I was encamped at Unjha for a week. I was satisfid to inspect his Pharmacy.

G. R, Nimbalkar.

अखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलनके प्रधान तथा इंडियन मेडिसन बोर्ड ओफ यु. पी गवर्नमेन्टके मेम्बर—

श्रीयुत वैद्यराज जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल दारागंज अलाहाबाद. ता. १५-११-३२ के पत्रमें दवाइयोंका ओर्डर देते हुए लिखते हैं.

आपके यहांकी औषधियां १ वर्षसे बरतता हूं । औषधियां अच्छी तरह बनायी जाती है । और उचित अनुपानके साथ देनेसे लाभदायक होती है ।

Ayurvedic Sub Committee. D. L. B. Eest Khandesh

I here by certify that Ayurvedic Medicines of your company purchased by our Sub Committee last year were found effective and I am of opinion that it will be benificial & profitable to all other local Bodies etc. to purchase your medicines.

Jalgoan.
13—8—30

V. S. Patil
Chairman,

प्रवाही-सत्व (सार) Liquid Extract

आजकल अधिकमात्रामें दवा खाना लोग पसंद नहीं करते इस लिये हमने ताजी बनस्पतियोंके तरल-सत्व तैयार किये हैं जो थोड़ी मात्रामें ही बहुत गुण करते हैं। आशा है चिकित्सक इनसे लाभ उठावेंगे।

औषध नाम	मुख्य गुण.	४० तोलेका मू०
अपामार्ग	—कफ, मूत्ररोग, जलोदर, सूजन, उदररोग	१—८
अतिविष	—बच्चोंके ज्वर, वमन, शूल, कृमि, अजीर्ण	४—०
अनंतमूल	—उपदंश, रक्तविकार, त्वकदोष, गरमी, मूत्ररोग	१—०
अर्जुन	—हृदयरोग, क्षय, जीर्णज्वर, उरःक्षत, अस्थीभंग	१—८
अर्कमूल	—रक्तविकार, कुष्ट, वातरक्त, उपदंश उदररोग, कफ, वमन	१—८
अश्वगंधा	—धातुक्षीणता, कृशता, क्षय, संधिवात, निर्बलता	१—८
अशोक	—प्रदर, गर्भाशयके रोग, ऋतुदोष, निर्बलता, अत्यार्तव.	१—८
इन्द्रवारुणी	—कब्ज, उदररोग, कृमि, कामला, यकृत, पित्त निकलनेके लिए।	१—८
अंकोल	—रक्त विकार, वातरोग, चूहेका विष और इसके उपद्रवके लिए	१—८
कुष्ठ	—(उपलेट) उन्माद, अपस्मार, पक्षाघात, वातव्याधि, दम, कृमी	६—०
कुटज	—मरोड़ ज्वरातिसार, अतिसार, प्रदर, कृमी, रक्तस्राव, विषमज्वर.	१—८
कटुकी	—विषमज्वर, उदररोग, बच्चोंके ज्वर	१—८
कम्पिल्लक	—कृमिरोग, कृमिरोगसे उत्पन्न हुए रोग	१—८
किरात	—(चिरायता) सब तरहके बुखार, और बुखारसे हुई निर्बलता, जीर्णज्वर	१—८
कालमेघ	— ,, जीर्णज्वर	१—८
ककड़शृंगी	—बच्चोंकी खांसी, ज्वर, धराध (डब्बा) क्षयकी खांसी	१—८
कांचनार	—कंठमाला, गलगंड, जीर्णज्वर, रक्तविकार, जीर्णज्वर,	१—८
पाठा	—(कालीपाट) ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, विषमज्वर, अतिसार, यकृत, रक्तदोष	१—८
करमाणी	—(खुरासानी) कृमिरोग और उनके उपद्रवोंमें उपयोगी है	१—८
पर्पट	—(पित्तपापड़ा) सब तरहके ज्वर और पित्तमें उपयोगी है	१—८
खदिरत्वक	—त्वकदोष, व्रण, कुष्ट, रक्तदोष, गुल्म, कृमिरोग,	१—८
अपराजिता	—(गरणी) उदररोग, जलंदर, यकृत, प्लीहा	१—८
आरग्वध	—(गरमाळा) कब्ज, बच्चोंकी कब्ज, पित्तका स्राव करनेके लिए	१—८
गांजिरुद्रक	—(गळजीमी)—वातरक्त, उपदंश, संधिवा, गरमी	१—८
गुडूची	—(गळो) ज्वर, विषमज्वर, रक्त, और त्वक दोष, प्रमेह	१—८
गोक्षुर	—(गोखरु) वीर्यस्राव, वीर्यविकार, मूत्ररोग, प्रमेह, अश्मरी, प्रदर	१—८
गोरख मुंडी	—रक्तविकार, कृमिविकार, वीर्यविकार	१—८
चित्रकमूल	—अजीर्ण, अफारा, मंदाग्नि, आम विकार, अतिसार, अर्श	१—८
चोपचीनी	—उपदंश, गरमी, त्वकदोष, रक्तदोष, पौष्टिक	१—८
जम्बुत्वक	—अतिसार, मरोड, रक्तस्राव	१—८
तुलसी	—खांसी, कफ, ज्वर, शूल, अजीर्ण, वायु, तन्द्रा	१—८
दारुहरिद्रा	—यकृत, कामला, ज्वर, ज्वरातिसार	१—८
धमासो	—मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, पित्तज्वर, तृषा, वमन	१—८

औषध नाम	मुख्य गुण	४० तोलेका मू०
धातकी—अतिसार, मरोड, संग्रहणी, अत्यार्तव, रक्तपित्त, बहुमूत्र		१—८
निसोत—कब्ज, अफारा, जलंधर, यकृत, पितविकृति		१—८
मुस्तक—सब तरहके ज्वर, खांसी, ससणी, फेफडेका जीर्ण वरम, मूत्रकृच्छ्र		१—८
पटोल—विषमज्वर, कब्ज, कृमिरोग, यकृत, उदररोग, कामला, जीर्णज्वर		१—८
प्रसारणी—वातव्याधि, संधिवात पक्षाघात, गृध्रसी, लकवा		१—८
पुनर्नवा—(साटोडी) कामला, यकृत, सूजन, उदररोग, कब्ज, त्वकदोष		१—८
बहुफली—वीर्यविकार, मूत्रविकार, निर्बलता, जीर्ण प्रमेह		१—८
बिल्व—मरोड, अतिसार, अर्श, रक्तपित्त, आमविकार, मंदाग्नि		१—८
ब्राह्मी—मगजके रोग, उन्माद, अपस्मार, वातव्याधि, त्वकदोष		१—८
भृंगराज—पित्तरोग, यकृत, खांसी, पीनस		१—८
भारंगी—ससणी, कफ, ज्वर, खांसी, दम		१—८
कण्टकारी—कफरोग, जीर्णज्वर, कफ, ज्वर, श्वास, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह		१—८
मंजिष्ठा—रक्तविकार, गरमी, कुष्ठ, रक्तपित्त, प्रमेह, अनार्तव, प्रदर		१—८
रोहितक—रक्तविकार, रक्तका जमजाना, यकृत, जीर्णज्वर, निर्बलता		१—८
रास्ना—वातव्याधि, मज्जातंतुके रोग पक्षाघात, लकवा, उरुस्तंभ		१—८
निम्ब—सब तरहके ज्वर, रक्तविकार, त्वकदोष, कृमी, उपदंश		१—८
लोध्र—अतिसार, मरोड, रक्तस्राव, अत्यार्तव		१—८
वज (वच)—ज्ञान तंतुके रोग और उनके उपद्रव, अपस्मार, कृमि, ऋतुदोष		१—८
वरुण—मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरी, मूत्ररोग, गर्भाशयके रोग		१—८
वासा—(अरडूशी) कफ, खांसी, श्वास, उरःक्षत, रक्तस्राव, क्षय		१—८
वृद्धदारु—वीर्यविकार, वातव्याधि, खांसी, दम, अनिद्रा, ज्ञानतंतुकी निर्बलता		१—८
विदारी—वीर्यविकार, धातुक्षीणता, कृशता, प्रमेह, प्रदर, वीर्यस्राव		१—८
शतावरी—ज्ञानतंतु और वीर्यके रोग, वातव्याधि, वीर्यस्राव, प्रदर प्रमेह		१—८
शरपुंख—प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, निर्बलता, उपदंश		१—८
शेमल—प्रमेह, प्रदर, रक्तस्राव, अतिसार, वीर्यविकार		१—८
शंख पुष्पी—(शंखावली) ज्ञानतंतु की निर्बलता, अपस्मार, उन्माद,		१—८
शिग्रुमूल—यकृत, प्लीहा, जलंधर, उदररोग, वायु, अफारा,		१—८

इनके अतिरिक्त चरकोक्त महाकषायों और सुश्रुतोक्त 'गणों' के **तरल सत्व** भी तैयार किये गये हैं जिनका मूल्य ४० तोलेका १॥ रु. है।

प्रवाही क्वाथों और सत्वोंकी मात्रा (Dose)

एकसे तीन बरस तकके बच्चेको	१० बूंद	९ से १६ बरस तक	३० बूंद
तीनसे नौ ,, ,, ,,	२० बूंद	१६ बरसके ऊपर	४० बूंद

सुबह शाम पानीके साथ दें।

सूचना—प्रवाही औषधें तथा थोकसे माल मंगाने वालोंको आधा मूल्य पेशगी भेजना चाहिये।

पता—ऊंझा फार्मसी. ऊंझा UNJHA
(गुजरात) N. Gujarat

विद्वानों की कुछ सम्मतियां–

विशेषांकों पर, जिनका संपादन देशके सर्वोच्च प्रतिष्ठित विद्वान करते हैं–

प्रसिद्ध "क्षयरोग" के विद्वान लेखक–
डा० शंकरलालजी गुप्त *M. B. B. S.* महोदय
सुपरिन्टेंडेंट यू० पी० जेल सैनीटोरियम
लिखते हैं :–

"धन्वन्तरि का चिकित्साऽनुभवांक मैं अब पढ़चुका हूं। यह विशेषांक अत्युत्तम है, इस सुयोग्य और सफल प्रकाशन के लिये मैं आपको और कविराज प्रतापसिंहजी को बधाई देता हूं। मेरा विचार है, ऐसे ही प्रयत्नों से वैद्य समाज और आयुर्वेद का कल्याण, और उत्थान हो सकता है। अधिकांश लेख ऐसे हैं जिनसे प्रत्यक्ष व्यवहार में वैद्यों को बहुत लाभ होगा। (सुल्तानपुर २६-११-३४)

विख्यात "रूपनिघण्टु" के रचयिता–
श्रद्धेय लाला रूपलालजी वैश्य बूटी प्रचारक
संपादक बूटीचित्रांक और बूटीदर्पण
लिखते हैं :–

"वास्तव में आप जिस तन मन धन से आयुर्वेदकी उन्नतिकी ओर अग्रसर होरहे हैं उसीके फल स्वरूप यह अनुभवांक है, इसमें स्वयं आयुर्वेदज्ञ विद्वानों के हृदयरत्न का खुला हुआ प्रकाश झलकता है। इसकी तारीफ जितनी भी कीजाय, थोड़ी है देखते २ धन्वन्तरि ने जितनी तरक्की की है उतनी कोई वैद्यकपत्र नहीं करपाया है, मैं प्रत्येक पाठक से १–२ ग्राहक बनाने की सिफारिश करता हूं।

विशाल "सर्पदंश" "औषध गुणधर्म विवेचन" आदि के प्रसिद्ध लेखक–
आयुर्वेदसूरि: प० श्री कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी आयुर्वेदाचार्य लिखते हैं–

"आपने धन्वन्तरि चिकित्साऽनुभवांक प्रकाशित कर आयुर्वेदजगत पर महान उपकार किया है। इस मनोहर पत्रको देखकर जिस वैद्य का मन बांसों न उछले, परम हर्ष न हो, तो मानना पड़ेगा कि उसमें सहृदयता ही नहीं है।... इसका एकांक ही नहीं सर्वाङ्ग उपादेय तथा ज्ञानपूर्ण है इसके लिये संपादकों तथा प्रकाशक को जितनी बधाई दीजावे थोड़ी है।"

आप स्वयं देखकर यही कहियेगा, चाहें नमूना मुफ्त मंगा देखें अथवा

अभी ३) भेजकर ग्राहक बन जाइये तो इस वर्ष का विशाल बूटीचित्रांक भी पाजाओगे। जिसमें ३०४ पृष्ट, सैकड़ों बूटियों के पूर्ण वर्णन, १५०० से ऊपर प्रयोग, ५० रङ्गीन मनोहारी चित्र हैं और जो अकेलाही अङ्क २) का है; दूसरा गुप्तरोगांक भी पावेंगे जो सचित्र छपरहा है, अन्य अङ्क मुनाफे में।

धन्वन्तरि के विख्यात विशेषांक–

मलावरोधांक

हमारादावा है कि कब्ज (आनाह) पर इतना बड़ा सचित्र साहित्य अबतक छपा ही नहीं। ऐसा पूर्ण विवेचन है कि आप देखकर दंग रह जायंगे देशभर के विद्वानों का अनुभव जिससे सैकड़ों रोगी लाभ उठाचुके, इसमें देखिये। रङ्गीन और सादे चित्रों से सुसज्जित, मूल्य १।।) मात्र

हिस्टेरियांक

हिस्टेरिया (योषापस्मार) आयुर्वेदिक ग्रंथों में बहुत कम वर्णित है। पर आजकल स्त्रियोंमें इसका बहुत ही प्रकोप बढ़रहा है। इसपर भारत के बड़े से बड़े वैद्यराजों औरडाक्टरोंके विवेचन तथा अनुभव पूर्ण इलाज इस पोथे में संग्रहीत हैं, कई रंगीन और सादे चित्र तथा सारगर्भित प्रहसन भी हैं. मू० १।।)

अनुभूतचिकित्सांक

वैद्य सम्मेलन पत्रिका के प्रधान संपादक और आजकल नि० भा० वैद्यसम्मेलन के सभापति श्री०प०गोवर्धनजी शर्मा छांगाणी ने इसे विशेषरूपसे संपादित किया है। ज्वर-मंथर-विस्फोटक आदि समस्त रोगों, पुरुषों स्त्रियों और बालकों के विशेष विकारों तथा पशु रोगों परभी भारत के अनेक माननीय विद्वानों के चुनेहुए अनुभव विस्तार से लिखे हैं १२५ लेख और ५० चित्रोंसे सुसज्जित, मूल्य २) मात्र

चिकित्साऽनुभवांक

अनुभूत चिकित्सांक की भारी उपयोगिता और मांग देख यह उत्तरार्ध निकाला सम्भाक्य इसके संपादक हैं नि० भा० आयुर्वेद महामण्डल के सभापति और हिन्दू विश्वविद्यालय के आयुर्वेद विभागाध्यक्ष कविराज श्री० प्रतापसिंहजी रसायनाचार्य। क्षय श्लीपद जैसे भयंकर अनेकों रोगोंपर भी इसमें अनेक अनुभूत प्रयोग और पूरी पूरी चिकित्साएँ तथा चित्र भी दिये गये हैं। मू० २) मात्र

परीक्षित प्रयोगांक

इसमें इधर उधर के नुसखे नहीं, माननीय कविराज श्री गणनाथ सेनजी, आचार्य यादवजी,जैसे प्रमुख १२५ वैद्यराजोंके अनेकोंबार सुपरीक्षित प्रयोग संग्रहीत हैं, और सबकी रोगानुसार सूची दी है,लगभग ५० पेटेंट औषधों के भी योग हैं, ४०–५० चित्रों से सुसज्जित प्रतिदिन काम देनेवाला थोड़ाही बचा है १००० से भी अधिक अनमोल नित्य काम देने वाले प्रयोगों का भण्डार। मूल्य २) मात्र

बूटीचित्रांक

इसीवर्ष २००० प्रकाशित हुआ और केवल ४-५ सौ बचा है इसमें नित्योपयोगी और दुर्लभ तथा संदिग्ध सैकड़ों बूटियों पर उनके विशेषज्ञों द्वारा ही पूर्ण वर्णन और परीक्षित १५०० प्रयोग छपे हैं तथा अनेकों चित्रभी सुंदर रङ्गीन दिए गए हैं इसके सम्पादक हैं बूटी जगत के सुप्रसिद्ध लाला रूपलाल जी वैश्य, काशी। सजिल्द मू० २) मात्र

अभी मंगालें या धन्वन्तरि के ग्राहक बनकर लेलें।

नियम

(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य २) रु०, ६ मास का १॥), एक अङ्क का ।) सुलेखकों को पत्रिका बिना मूल्य भेंट की जाती है। नमूना मुफ्त भेजा जाता है।

(३) पत्रिका के ग्राहकों को रोग विषयक प्रश्न मुफ्त छपवाने का अधिकार है, जो बारी पर छपेगा। यदि तुरन्त छपवाने की आवश्यकता हो या जो व्यक्ति ग्राहक न होते हुए छपवाना चाहें तो ।) प्रति प्रश्न देना होगा।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वैदिक, यूनानी, एलोपैथिक होम्योपैथिक सम्बन्धी लेख कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख कविता अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक, औषधि, पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रतियां आनी चाहियें।

(८) रुपया, चैक वगैरह मैनेजर जीवन सुधा कार्य्यालय जौहरी बाज़ार देहली के नाम से भेजने चाहियें।

(९) प्रकाशन सम्बन्धी सामग्री सम्पादक 'जीवन सुधा' के नाम से भेजनी चाहिये।

(१०) पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिए। और उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अथवा -)। का टिकट भेजना चाहिए अन्यथा उत्तर का भरोसा नहीं रखना चाहिए।

(११) यदि पत्र १० तारीख तक न पहुंचे तो फौरन स्थानीय डाकखाने से मालूम करें। यदि फिर भी न मिले तो मैनेजर 'जीवन सुधा' को लिखें।

प्रबन्धकर्ता

विज्ञापन छपाई रेट

	एक वर्ष	६ मास	३ मास	एकबार
टाईटिल समस्त	८०)	४५)	२४)	६)
,, आधा	४५)	२५)	१०)	६)
रीडिंग मेटर समस्त	७०)	३६)	२०)	८)
,, ,, आधा	३६)	२०)	१२)	५)
,, ,, चौथाई	२०)	१२)	७)	३)
साधारण पेज पूरा	६०)	३४)	१८)	७)
,, आधा	३५)	१८)	१०)	४)
,, चौथाई	१८)	१०)	६)	२॥)

REGD. NO. L. 2701

वैद्यराज पं० महावीरप्रसाद जी के लिये चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस. फतेहपुरी. देहली में छपा।

प्रवेशांक—अप्रैल १९३० · For review Tele. No 5174

वर्ष १ चैत्र, सम्वत् १९८७ विक्रम, वीरनिर्वाण सम्वत् २४५६ अङ्क १

जीवन-सुधा

सचित्र-मासिक-पत्रिका

A Monthly Ayurvedic Magazine.

सम्पादकः—

आयुर्वेदाचार्य—प्रो० पं० लोकमणि मिश्र शास्त्री

प्रकाशक—

वृहत् आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाजार, देहली।

संसारसे त्रय तापके सन्तापको हर लीजिये, विस्तार घर-घरमें प्रभो "जीवनसुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत-ज्ञान निर्मित-योग-शुभ बतलायगी, राष्ट्रकी हित-कामना युत स्वास्थ्यको फैलायगी॥

शी० प्र०

वार्षिक मूल्य ३)

नमूना प्रति ।)

प्रिंटर तथा पब्लिशर—पं० महाबीरप्रसाद त्रिपाठी वैद्यराज।

निवेदन

प्रिय पाठक !

जैसा कुछ बन सका, सेवा-स्वरूप "जीवनसुधा" का प्रथम अंक आपके सामने हैं, भले ही साहित्यिक-दृष्टि से साहित्य-महारथियों के लिए पत्रिकागत रचनाएँ रुचिकर ललित एवं समुचित-वाक्य-विन्यास पूर्ण नहीं हो, परन्तु इनको सार्थक बनाने में अविरत प्रयत्न किया गया है, और भविष्य में भी सार्थकता पर ही विशेष दृष्टिपात किया जायगा।

पत्रिका का एक मात्र लक्ष्य प्राच्य-चिकित्सा-कला की उन्नति सार्वदेशिकता, पुरातन-अप्राप्त-साहित्य की खोज, एवं तत्तद्विषय विशेषज्ञों से उत्तमोत्तम साहित्य लिखाकर प्रकाशित करना है, तत्स्वरूप हमारे समीप पत्रिका के संस्थापक राजवैद्य श्रीयुत पं० शीतलप्रसादजी जैन रसायन-शास्त्री के परम्परागत २२ पुश्त से संग्रहीत अप्रकाशित कुछ साहित्य मौजूद है, और कुछ हमारे दयालु वैद्यों ने भविष्य में देने, देते रहने का वायदा किया है। समस्त साहित्य क्रमशः प्रकाशित किया जायगा, ऐसा करने से ग्राहकोंके पास पुस्तक संग्रह तथा उसके विषय में उचित सम्मति पाकर उसका भावी संस्करण सर्वांग पूर्ण बन सकेगा।

सर्व प्रथम "माधवकर (माधव निदान रचयिता)" रचित "माधव चिकित्सा" का सम्पादकजी की लेखनीसे सर्वबोध हिन्दी व्याख्या सहित प्रकाशन किया गया है, इसकी उपयोगिता के विषय में हमें कुछ नहीं कहना है। आचार्य माधवकर ने चरक सुश्रुत प्रभृति संहिताओं में प्रसरित "रोग विज्ञान" को संग्रह कर अचिन्त्य-चातुरी का परिचय दिया है। एवं चिकित्सा भाग को उपयोगी बनाने में उन्होंने कोई कोर कसर नहीं छोड़ी है। तिस पर हिन्दी व्याख्या ने सजे को सजा दिया है।

इसके अनन्तर गोविन्दाचार्य रचित "रस सार" का हिन्दी व्याख्या-सहित प्रकाशन किया जायगा। इसमें पारे के ४८ संस्कारों का विशद-वर्णन धातु उपधातुओं का सत्व द्रुति अर्क का निर्माण आदि विषय वर्णित हैं, "रस रत्नसमुच्चय" "रस-प्रकाश-सुधाकर" "रस हृदयतन्त्र" आदि रस ग्रन्थों में पारे के १८ संस्कारों से अधिक नहीं पाये जाते। अस्तु;

अन्त में—यह अंक निमन्त्रण-स्वरूप आपके पास भेजा गया है आशा है, इस निमन्त्रण को स्वीकार करेंगे, और इस महत्कार्य में योग देकर इसके संचालकों को प्रोत्साहित करेंगे। कारण वश—यदि आप ग्राहक नहीं बन सकें, तो कृपाकर शीघ्र ही हमारे पास निषेधात्मक-सूचना भेज दें। आपकी तरफ से कोई सूचना नहीं मिलने पर "मौनं स्वीकृति लक्षणम्" के अनुसार आपकी स्वीकृति पाई जायगी, अतएव दूसरा अंक प्रकाशित होते ही आपके पास वी.पी. द्वारा भेज दिया जायगा।

निवेदक—
प्रबन्धकर्ता अध्यक्ष
बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार
जौहरी बाजार, देहली।

ॐ

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः ।
पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ॥

वर्ष १ | चैत्र—वीर निर्वाण संवत् २४५६, वि० सम्वत् १९८७, सन् १९३० अप्रैल १ | अङ्क १

वसन्त

शिशिर गता-ऋतुराज-पधारे—प्रसृत भुवि मुद मंगल सारे ।
प्रकृति ने श्रृंगार रचा है—मदनोत्सव का शोर मचा है ॥

वृक्ष-बल्लरी-हरित हुए हैं—पुष्पित अरु पल्लवित हुए हैं ।
नचत समीर त्रिविधि सुखकारी—निखरी-खरी-दिशाएँ सारी ॥

विहग वृन्द यश गान करे हैं—मधुप मधुर सुरतान भरे हैं ।
जीवन सुधा सुजन्म लियो है—नव सम्वत् अवलम्ब दियो है ॥

शी० प्र०

पत्रिका की आवश्यकता और विवेचनात्मक-दृष्टि

संसार कर्म क्षेत्र है, प्रत्येक मनुष्य को इसमें पदार्पण करते ही, कुछ न कुछ करने के लिए उद्देश्य स्थिर करना पड़ता है, उद्देश्य स्थिर किये बिना सर्वगुण-सम्पन्न होते हुए भी मनुष्य अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुंच सकता। प्रत्येक कार्य करने से पहले उद्देश्य स्थिर करना, सफलता मार्ग में आने वाले विघ्नास्त्रों से रक्षा करने वाला कवच है। अपनी२ प्रकृतिके अनुसार प्रत्येक मनुष्य उद्देश्य-विधेय को स्थिर करता है। स्वार्थी के लिए स्वार्थ-साधन, और परोपकार-प्रिय के लिए उपकार-जीवन सुख-कर प्रतीत होता है। स्वार्थी स्वार्थ-साधन के सम्मुख मान-मर्यादा ऊंच-नीच धर्माधर्म की गणना नहीं करता, उसके लिए ममत्व सर्वेसर्वा स्वार्थ है। स्वार्थ के लिए उसका जीवन और मरण है। वर्बर-साम्राज्यवाद या स्वार्थ दोनों ही एक परिभाषा के शब्द हैं, उपकारी के लिए ब्राह्मण-शूद्र छूत-छात मतमतान्तर का काल्पनिक-भेद नहीं होता, वह अपने जीवन, तन की विद्यमानता-स्थिरता उपकार के लिए ही समझता है।

संसार के इतिहास में दोनों तरह के पुरुषों के पर्याप्त उदाहरण पाये जाते हैं, नादिरशाह, मुहम्मद-गौरी, जार आदि मनुष्य, ब्रिटेन फ्रांस आदि देश स्वार्थ श्रेणी के उदाहरण हैं। इन्हों ने अपने स्वार्थ के लिए निरीह-जनता का भीषण-रक्तपात किया था, नादिरशाह की नादिर शाही, मुहम्मद गौरी की लूट, और रूस के सर्वेसर्वा जार का कृषकों पर अत्याचार से इतिहास के पृष्ठ रंगे हुए हैं। ब्रिटेन ने अपने स्वार्थ उर्फ साम्राज्य स्थापन के लिए हस्तगत देशों पर किये और करते हुए अत्याचार, फ्रांस व अमेरिका का हबशियों पर वर्ताव, से शिक्षित समुदाय अपरिचित नहीं है। महावीर स्वामी, महात्मा बुद्ध, महाराणा प्रताप, गुरु गोविंदसिंह, स्वामी दयानन्द, वर्तमान महात्मा गान्धी, जवाहरलाल नेहरू आदि द्वितीय श्रेणी के पुरुष हैं जिन्हों ने उपकार के लिए सुखसाधनों का त्याग किया, अनेक कठिनाइयां सहीं, और अन्त में... उपकार के लिए ही मर-मिटे। इन २ महा पुरुषों ने अपनी संसार-पदार्पण की प्रारम्भिक-अवस्था से ही अपने २ उद्देश्य स्थिर किये थे।

उद्देश्य स्थिर करने के बाद उस की पूर्ति के लिए दृढ़ता एकाग्रता संयम एवं अध्यवसाय की परमावश्यकता है। संसार के महापुरुषों की जीवन-घटनाओं पर विचार करने से उन में एकाग्रता तथा दृढ़निश्चयता का परिचय मिलता है। बहुत से कार्यों में हाथ न लगा कर एक कार्य को ही योग्यता अध्यवसाय पूर्वक

सम्पादन करते रहने से उस में सफलता प्राप्त करने में कोई संदेह नहीं रह जाता, सु-चतुर-सेनानायक समरांगण में शत्रु-पक्ष की कमजोरी को देख कर उसमें अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को लगा कर विजय प्राप्त कर लेता है। गुरु द्रोणाचार्य ने पाण्डवों की दुर्बलता को जान कर ही चक्रव्यूह का निर्माण किया था।

क,ख,ग, सम्पादन वणिज व खेती का कार्य करते हैं। यदि क, ख और ग की सफलता को देख कर एवं ख,ग क की सफलता को देखकर अपने अधिकृत-कार्य की अवहेलना कर उन २ कार्यों में हाथ लगाता है तो वह अपनी अल्प-सफलता से भी वञ्चित रह जाता है विफल-मनुष्यों में अधिकांश ऐसे मनुष्य मिलेंगे जिन्होंने अपने लिए नित-नये-कार्य चुने और आज एक, कल दो करके छोड़ दिये " मेरे एक मित्र, जो एक समय वकालत करते थे। दैववश बाजार से गुजरते हुए मिल गये, कुशलमंगल पूछने पर मालूम हुआ, आप ने वकालत छोड़ कर दूकानदारी की, अनभिज्ञ होने के कारण उस में सब कुछ जमा देकर अब नौकरी की तलाश में आये हुए हैं " भारत में ऐसे बहुत-से मनुष्य मिलेंगे जिन्होंने एक २ दो २ वर्ष कार्य किये और छोड़ दिये इसी उलट-फेर में उनका जीवन समय व्यतीत हो गया।

कोई भी देश, जाति या व्यक्ति अपने स्वार्थों की बलि देकर इतर-देश जाति की उन्नति में सहायक नहीं बन सकता, चतुर कोठीवाल एकदम मुनीमों पर ही अपना कार-व्यवहार नहीं छोड़ देता, अपने कार्य की स्वयं भी देख रेख करता रहता है। इसका उल्लंघन करने वाला शीघ्र ही अवनति के गहरे-गर्त में गिर जाता है। मुझे उन वैद्यों की बुद्धि पर दया आती है जो गोरी-गवर्नमैन्ट के संसर्ग से आयुर्वेद की उन्नति के पक्षपाती हैं। लगभग [illegible] वर्ष के शासन से वैद्य-समाज को मालूम हो गया होगा, कि आयुर्वेद की उन्नति के लिए हमारी सरकार ने क्या २ किया है, परंच इन दिनों में डाक्टरी औषधियों की प्रचुरता प्रचार-बाहुल्यता को देख कर सन्देह होता है कि कुछ दिनों के और शासन से सम्प्रति नष्ट-प्रायः देशी चिकित्सा-पद्धति का दर्शन भी नहीं होसके।

कुछ वैद्य-महानुभाव एक दो प्रान्तों में इण्डियन मैडिसिन बोर्ड के स्थापित हो जाने एवं उसमें एक दो वैद्य के मैम्बर होजाने से वर्तमान-शासन को आयुर्वेदोन्नति का पक्षपातित्व स्वीकार करने लगे हैं। यदि वे व्यवस्थापिका सभा की कार्यवाही पर ध्यान देंगे तो मालूम होगा, कि किस तरह हमारे अच्छे से अच्छे प्रस्ताव को बजट में गुञ्जाइश नहीं, का बहाना बना कर रद्दी की टोकरी के हवाले कर दिया जाता है, देश की सर्वांगीण-उन्नति के लिए स्वराज्य की आवश्यकता होती है। स्वराज्य की प्राप्ति स्वराज्यसे ही मिल सकती है। राष्ट्रीय गवर्नमेन्ट स्वदेश-साहित्य-कला इतिहास की उन्नति के लिए उन २ विषय-विशेषज्ञों को समस्त-सुविधायें देकर आविष्करण तथा अनुसन्धान के लिए नियोजित करती है। पाश्चात्य चिकित्सा की विशेषोन्नति का कारण तत्तद्विशेषज्ञों को पर्याप्त-सहायता, समस्त सुविधा है। जर्मन अमेरिका आदि स्वतन्त्र-राष्ट्र स्व २ अनुसन्धानकों के लिए पर्याप्त-व्यय करते रहते हैं।

यद्यपि इण्डियन मैडिसिन बोर्ड ने कुछ आयुर्वेद विद्यालयों, वैद्यों की प्रशंसनीय-सहायता अवश्य की है। परंतु वह स्वतन्त्र देशों की अपेक्षा शतमांश या सहस्रांश भी नहीं है। बल्कि उसमें वैद्यों की इस माग को स्वीकार कर जनता के एक विश्वस्त-समाज को

स्वगुणानुगायक बना कर स्वराज्य के राष्ट्रीय आन्दोलन को विफल बनाने की नीति निर्दशित है। प्रति वर्ष वैद्य-सम्मेलनों में रजिष्ट्रेशन का प्रस्ताव दुहराया जाता है। आसव परिस्रुत करने की प्रार्थना की जाती है, परंतु परिणाम, जो विदेशी गवर्नमैन्ट के होने पर होता है, वही दिखाई देता है।

वस्तुतः न हम को गवर्नमैन्ट से आशा है, और न सम्प्रति कांग्रेस से, कांग्रेस तब तक कुछ करने में असमर्थ है, जब तक वह राष्ट्रीय-गवर्नमैन्ट में परिणत नहीं हो जाती है। अपनी उन्नति के लिए हमको स्वयं उठना पड़ेगा। कहावत है—"God helps those who help themselves' अपनी सहायता करने वाले को ईश्वरीय सहायता भी मिलती है, प्रसंगवश पाठकों के मनोरञ्जन के लिए एक देश की शिक्षादायक ऐतिहासिक घटना "माधुरी" से उद्धृत करते हैं। किस तरह इस देश ने अपने पुरातन जातीय इतिहास-साहित्य-कला की खोज कर उसको सर्वसाधारण के गृह-मंदिर तक पहुँचाया था, तत्स्वरूप यह देश आज बड़े २ राष्ट्रों में सम्मान की निगाह से देखा जाता है।

× × ×

रूस के बाल्टिक-प्रदेशों में एस्टोनिया (Estonea) एक छोटासा प्रदेश है। जिसका क्षेत्र-फल २३१६० वर्ग मील तथा जनसंख्या १७,५०,००० है। सन १९१९ से पूर्व यह प्रदेश कितनी ही शताब्दियों से जर्मन जागीरदारों तथा रूस के शासन-गर्भ में विलीन था, जो यहाँ की मूक-जनता पर मन-माना अत्याचार करते थे, शासनविभाग में उनको कुछ दखल देने का अधिकार नहीं था, जर्मन जागीरदारों की ३ प्रतिशत संख्या होते हुए भी ७५ प्रतिशत उर्वरा-भूमि उनके अधिकार में थी, कृषकों का भूमि तथा स्व शरीर तक पर अधिकार नहीं था, भूमि विक्रय के साथ पशुओं की भांति उनको भी परिवार-सहित बेच दिया जाता था, यद्यपि समय२ पर अत्याचारों से ऊब कर जनता ने विद्रोह किया, १७ वीं शताब्दी के विद्रोह में "कार्यं साधयामि शरीरं पातयामिवा" का ज्वलन्त उदाहरण मिलता है इस विद्रोह में अत्याचार पीड़ित-जनता ने जागीरदारों की हत्या तथा अग्निकाण्डों का प्रयोग किया था परंतु संगठन नहीं होने के कारण उनका विद्रोह निर्दयता पूर्वक कुचल दिया गया।

सन १८१६—१८१९ में रूस के सर्वे-सर्वा जार ने दासता की प्रथा को उठा दिया, तथा सन् १८६० में भूमि खरीदने व धन किराये में देकर अधिकार करने का अधिकार मिल गया इन अधिकारों ने एस्टोनियन जाति की मानसिक तथा आर्थिक उन्नति में पर्याप्त सहायता की, और द्विगुण उत्साह से उन्नति करने लगी। यद्यपि जर्मन-जागीरदार तथा रूसी-शासक इनकी उन्नति से सर्वथा क्षुब्ध थे और समय २ पर कुचलने में प्रयत्नशील रहते थे। परन्तु जनता इसकी परवा न कर बराबर उन्नति पथ पर बढ़ती चली गई।

सन १८८९ में 'एस्टोनिया' की जातीय भाषा प्रारम्भिक शिक्षा तक से वहिष्कृत कर दी गई, और उसके स्थान में रूसी भाषा का पठन-पाठन प्रारम्भ किया गया। यद्यपि शताब्दियों से शासन विभाग में सर्वतो भावेन रूसी भाषा का प्रयोग होता था परन्तु इस तरह प्रारम्भिक-शिक्षा तक से स्वभाषा के निरादर से नेता लोग क्षुब्ध हो उठे और अधिकाधिक तत्परता से जातीय-जागृति का कार्य करने लगे। जातीय चन्दे से स्वभाषा-पाठशाला खोली गई दन्त-कथाओं, पुरातन-गीतों के आधार पर स्वसाहित्य इतिहास की खोज की गई, और उन का संग्रह कर एक से दूसरे छोर तक प्रचार-प्रसार किया गया।

इसी तरह यथेष्ट परिमाण में जागृति संगठन हो जाने पर नेता शासन-विभाग में भी दखल देने लगे, तथा सर्व-सम्मति से स्वराज्य की मांग पेश की गई, परिणाम स्वरूप सन् १९१७ जुलाई मास में उन की मांग को स्वीकार कर स्वराज्य की घोषणा करदी गई, परन्तु इसी समय रूसी-शासन की बाग-डोर लेनिन तथा ट्रौटस्की के हाथ में आजाने से इस घोषणा को ठुकरा दिया गया।

स्वराज्य घोषणा के ठुकराये जाने पर जनता की प्रतिहिंसा वन्हि प्रज्वलित हो उठी, जो नेताओं के शान्त करने पर भी नहीं दब सकी, राष्ट्रीय सरकार से जर्मन सेना तथा रूसी सेना का युद्ध छिड़ गया। सर्वास्त्र-सज्जित-शिक्षित-जर्मन रूसी-सेना का मुक़ाबला किसान सेना नहीं कर सकी, इस संकटापन्न अवस्था में इंग्लैंड तथा फिनलैंड ने राष्ट्रीय-सरकार को अस्त्र शस्त्रादि की सहायता देकर दूरदर्शिता का परिचय दिया, एस्टोनिया स्वतंत्र प्रजातंत्र राज्य बन गया। जिस में आज शत प्रतिशत व्यक्ति शिक्षित हैं

× × ×

हमारी चिरकाल से अभिलाषा थी, कि प्राचीन आयुर्वेदीय-साहित्य की खोज, आर्ष-चिकित्सा-पद्धति की खूबियाँ, नवीन २ डाक्टरी अनुसन्धानों से वैद्य-डाक्टरों का परस्पर परिचय कराया जाए जिस में सर्वसम्मति से चिकित्सा ग्रन्थों में सामयिक-परिवर्तन सम्वर्द्धन किया जा सके, और एक ऐसे साहित्यगृह का निर्माण किया जाए, जो यथा-साध्य-सर्वांगपूर्ण हो, जनता के मनोरंजन के साथ २ शिक्षादायक, देशी-चिकित्सा-पद्धति में रुचि-उत्पादक तथा आर्ष-चिकित्सा का प्रचारक हो।

हम देखते हैं, कि वर्तमान-क्रान्ति युगोत्पन्न-अधिकांश-युवा आर्ष-चिकित्सा पर अपूर्णता का लांछन लगाया करते हैं,—क्या हम उनके इस कथन को यथावत् मानलें, मेरी सम्मति में प्रत्येक वैद्य, जिसने श्री गणेश से इति श्री तक चरक सुश्रुत प्रभृति ग्रन्थों का साधु अध्ययन किया है। उनके इस कथन को कभी स्वीकार नहीं कर सकता, वह भलीभांति जानता है कि आयुर्वेद में सर्जरी डैन्टिस्टरी नेत्र चिकित्सा का पर्याप्त-विवरण मिलता है, उस विवरण को हमें घर २ पहुँचाना होगा उस को सामयिक परिस्थिति के अनुसार युवाओं के मनोऽनुकूल बना कर दर्शाना होगा तब कहीं उनकी कुरुचि दूर कर विपथ को पथ पर ला सकेंगे।

इसी उद्देश्य को लेकर "जीवन सुधा" का अवतरण हुआ है। हम नहीं जानते, कि भविष्य में क्या होना है, परन्तु जिस परम-पिता-परमात्मा ने हम को यह शुभ-दिन देखने का अवसर दिया है उन्हीं की कृपा पर इसका उज्ज्वल-भविष्य निर्भर है

अन्त में ... विनम्र-शब्दों में ... प्रत्येक वैद्य बन्धु से निवेदन है, कि यह सार्वजनिक-कार्य है। सार्वजनिक कार्यों में सब की सहायता की आवश्यकता होती है। एक व्यक्ति इच्छा रखते हुए भी सार्वजनिक-हित-सम्पादन नहीं कर सकता। अतएव देशप्रेम आयुर्वेद-हित तथा पूर्व ऋषियों की तरह भावि-वैद्य-सन्तति की हित कामना से पारस्परिक-भेद-भाव द्वेष-मात्सर्य को त्याग कर यथाशक्ति लेख, अप्रकाशित-साहित्य, उत्तमोत्तम योग, निबन्धादि भेज कर सहायता करते रहें जिस से हम इच्छित कार्य को यथा-साध्य उपयोगी बनाकर आप की सेवा कर सकें।

लोकमणि मिश्र

शिरो-रोग या सिर-दर्द

लेखक—आयुर्वेदाचार्य प्रो० लोकमणि मिश्र शास्त्री ।

वर्तमान-भारतमें एक छोर से दूसरे छोर तक अकाल, दरिद्रता एवं व्याधियों का भीषण-संग्राम होता दिखाई देता है प्रत्येक-दिन या वर्ष में भारतके किसी-न-किसी भागमें रोग-विशेष के फैलनेके समाचार सुने जाते हैं। बंगाल में यदि प्लेग का आतंक छाया हुआ है, तो पंजाब में हैजा और यू० पी० मलेरिया का आखेट हो रहा है। विगत-जन-संख्या की रिपोर्ट से ज्ञात होता है, कि भारत में रोग और अकाल मृत्युओं की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। देखना है, भविष्य किसके अनुकूल, प्रतिकूल होता है।

यद्यपि भारत में सभी रोगों के रोगी अधिकता से पाये जाते हैं। परन्तु हमारा चरित-नायक सिर-दर्द युवाओं पर विशेष-कृपा रखता है। इस को गांव से शहर, पुरुषों स्त्रियां, बलवानों से निर्बल, लेखकों से सम्पादक, मवक्किलोंसे वकील, गरीबोंसे अमीर, कोमल नाजुक, व बड़े मनुष्यों से परिचय रखना विशेष पसन्द है। पाठकों के परिचय के लिए छिपे-शत्रु की पहचान तथा उसके प्रतीकारोपाय लिखते हैं।

वैद्यक-शास्त्र में शिरो-रोग ११ तरह का बताया गया है। (१) वायु, (२) पित्त, (३) कफ, (४) सन्निपात (वात पित कफ मिलकर) (५) रक्त, (६) क्षय, (७) क्रिमि (सिर में कीड़े) (८) सूर्यावर्त (सूर्यके साथ २ घटने बढ़ने वाला दर्द) (९) अनन्तवात (१०) अर्धावभेदक (आधा सीसी) (११) शंखक (कनपटियों का दर्द)

कारण—इस के कारणों तथा व्यापकता पर विचार करने से अनेक-कारण तथा अनेक-रोगों में सिर-दर्द का होना साबित होगा। प्रायः प्रत्येक-रोगके प्रादुर्भवन के समय सर्व-प्रथम मस्तिष्क को उसकी उत्पत्ति की सूचना मिलती है, ज्वर (बुखार) की प्रथम-अवस्था में सिरमें कमोबेश-दर्द मनुष्य-मात्रके होता है। "व्याधि-र्व्याधेश्च कारणम्" रोग भी रोग को उत्पन्न करता है, जुकाम के कारण खाँसी की उत्पत्ति देखी गई है, रोग से उत्पन्न रोग में पृथक्-चिकित्सा की बहुत कम आवश्यकता पड़ती है। इन्हीं बातों को लक्ष्य कर स्वतन्त्र-सिर-दर्द को ११ जगह विभाजित किया गया है।

कारण—मल-मूत्र की हाजत को रोकना, कब्ज, ज्यादा व्याख्यान देना, क्रोध, ऋतु-बदल, दिन में सोना, रात्रि में जागना, अधिक-मैथुन (स्त्री प्रसंग) करना, मानसिक-कार्यकी अधिकता, आदि कारण विशेष देखे जाते हैं।

वायु के सिर-दर्द की पहचान—अचानक सिर में तेज दर्द हो जाता है, रात्रि में बढ़ता है, रूमाल बांधने, तथा गरम-जलसे सेक करने से शान्ति मालूम होती है।

पित्त के सिर-दर्द की पहचान—मस्तक (माथा) तपता है, नाक से गरम-वाष्प (भाप) निकलती मालूम होती है, शीतल-जल या शीतल-द्रव्य-चन्दन, खस, आदि के लेप से कुछ शान्ति मालूम होती है, उलटी होती है, सोने पर शान्त हो जाता है।

कफ के सिर दर्द की पहचान—इसमें मस्तक भारी मालूम होता है, मस्तक तथा भौं पर कुछ वरम हो जाता है, मस्तक-शीतल तथा जकड़ा हुआ प्रतीत होता है।

सन्निपात के सिर-दर्द की पहचान—इस सिर-दर्द में उपरोक्त तीनों दोषों के १-१ २-२ लक्षण पाये जाते हैं—यानी रात्रि में शान्त हो जाना, मध्यम-पीड़ा मस्तक, भौं, पर वरम इत्यादि।...

रक्तज सिर दर्द की पहचान—यह सिर-दर्द रक्त की अधिकता से होता है। इसमें पके-फोड़े की तरह छूते ही पीड़ा होती है, नेत्र, नासिका से उष्ण भाप निकलती हुई, प्रतीत होती है, शीतल-वस्तु के लेप से कुछ शान्ति होती है।

क्षय के सिर-दर्द की पहचान—मस्तिष्क (दिमाग) में रुधिर (खून) निकल जाने, चर्बी, मज्जा, वीर्य आदि धातुओं की कमी हो जाने, अधिक मानसिक-श्रम करते हुए पौष्टिक आहार नहीं मिलने, से क्षयज-शूल होता है। इसमें तीव्र पीड़ा होती है, माथा तपता है, छींकें आती हैं, स्वेद या स्वेद निकालने वाली दवा, जैसे Aspirine Phanastine देना, उलटी कराना, धूम्र-पान तथा नसवार से अधिकाधिक-शूल बढ़ता है।

क्रिमिज सिर-दर्द की पहचान—आतशक, जुकाम बिगड़ना, आदि-कारणों से मस्तिष्क में कीड़े हो जाते हैं, और वे मस्तिष्क-पिण्ड (ब्रेन-भेजा) को खाते हैं, जिससे मस्तक में चुभन-कतरन की तरह पीड़ा होती है, मस्तक के अन्दर फड़कन होती है, मस्तक तपता है, कभी २ नाक से मवाद, रक्त, तथा कोई २ कीड़ा भी गिर जाता है।

सूर्यावर्त-सूर्य के साथ घटने बढ़ने वाले सिरदर्द की पहचान—मल-मूत्र की हाजत को रोकने, तथा अजीर्ण प्रभृति कारणों से रक्त व वायु मस्तक की रक्त-वाही शिराओं (नसों) में संचित हो जाते हैं, प्रातः काल सूर्य की गर्मी से पिघलते हैं, जैसे २ सूर्य की गर्मी बढ़ती जाती है, तैसे २ अधिकाधिक पिघलने के कारण सिर-दर्द भी बढ़ता जाता है, और घटने से दर्द भी घटता जाता है, सूर्य के अस्त हो जाने पर—सायंकाल ७-८ बजे के लगभग दर्द बिलकुल शान्त हो जाता है।

अनन्त-वात सिर-दर्द की पहचान—वात, पित्त, दोष—मन्या (गले के दांये बांये वाली) नाड़ी में पीड़ा कर नेत्र, भौं कनपटी में असह्य-शूल करते हैं, गण्ड (गाल) के इधर-उधर पीड़ा तथा कम्पन (फड़कन) होती है, हनु (ठोड़ी) जकड़ जाती है, नेत्र-रोग हो जाते हैं।

अर्धावभेदक (आधासीसी) सिर-दर्द की पहचान

रूक्ष-अन्न-पान, अधिक-भोजन, भोजन के ऊपर भोजन, पूर्वी-तीव्र-वायु का सेवन, अधिक-मैथुन, मल-मूत्र की हाजत का रोकना, अधिक-मानसिक-परिश्रम, आदि विपरीत-आचार से कफ सहित वायु दुष्ट होकर आधे मस्तक में दर्द करता है। दर्द के हिस्से की तरफ की भौं, कान, कनपटी, मन्या, इन में भी तीव्र-वेदना होती है, इस के अधिक बढ़ जाने से नेत्र तथा कान की शक्ति का नाश तक देखा जाता है।

शंखक सिर-दर्द की पहचान—रक्त, पित्त, कफ, वायु, दुष्ट होकर शंखास्थि (कनपटियां—कनौती के पास का हिस्सा) में दर्द, जलन, सुर्खी, सोजिश करते हैं, यह विष की तरह शीघ्र बढ़ कर गले में जाकर गले को रोक देता है, इस रोग की चिकित्सा शीघ्र करनी चाहिए। इसका रोगी ३ दिन तक मुश्किल से जीवित रहता है।

शिरःपीड़ा पर डाक्टरी मत

Caphalulgia of Headache—कैफेलुलजिया—शिरःपीडा-कठिन और दुःखदायी रोग है। युवाओं, मानसिक-श्रम करने वालों, कोमल, नाज़ुक स्त्री-पुरुषों में विशेष पाया जाता है—स्वतन्त्र-रूपेण यह रोग आर्गेनिक (Argame) प्लैथोरिक (Plethoric) बिलियस (Bilious) नर्वस (Nervous) हेमीक्रेनिया (Hemicrania) भेद से ५ प्रकार का होता है।

कारण— उपवास करना, अधिक-भोजन करना, विबन्ध (कब्ज) मानसिक-परिश्रम की अधिकता, मस्तिष्क में रक्त की अधिकता, कुपथ्य, कञ्जैशन आफ दी ब्रेन-मोटर रेल आदि की टक्कर से दिमाग़ हिल जाना, उपदंश, बायगोला, रक्तगुल्म आदि कारणों से इस की उत्पत्ति होती है।

सामान्य-लक्षण— बहुधा प्रातःकाल सोकर उठने के पश्चात् आलस्य, थकान, बेचैनी, हाथ पैरों का शीतल होना, जम्भाई की अधिकता, मुख-चिपचिपा, नेत्रों में बार २ पानी आना, कनपटी की नसों का फड़कना, पुतलियां-सिकुड़ी हुई, मस्तक (माथे) में दर्द नब्ज़ (नाड़ी) मन्द२ चलना, मितली, उलटी (वमन) स्वभाव-चिड़चिड़ा, अन्धेरे में पड़े रहने की इच्छा, दर्द की अधिकता से नींद (निद्रा) आकर दर्द शान्त हो जाना इत्यादि—

आर्गेनिक सिर-दर्द की पहचान—यह अधिकतर मस्तिष्क-रोगोंके कारण होता है इसमें दर्द निश्चल, स्थिर, तथा एक-समान रहता है, गरम-वस्तु गरम-स्थान, शोर-गुल व सिर को ऊपर को उठाने से पीड़ा अधिक होती है, पाखाना साफ नहीं होता है।

प्लैथोरिक सिर दर्द की पहचान—यह दर्द मस्तिष्क में रक्त की अधिकता से होता है, इसमें आर्गेनिक की तरह दर्द की अधिकता नहीं होती, मस्तक भारी—किसी वस्तु से भरा हुआ-सा मालूम होता है, कानों में शब्द होता है, सिर नीचा करनेसे विशेष-भारीपन-बोध होता है।

बिलियस (Bilious) सिर-दर्द की पहचान—यह दर्द—अजीर्ण तथा कुपथ्य आदि के कारण होता है, रात्रि में निद्रा नहीं आती, प्रायः प्रातः-काल दर्द की अधिकता होती है. जो स्त्रियाँ बच्चों को अधिक-दिन तक दूध पिलाती रहती हैं, दुर्बल हो जाने से उनको इस दर्द के होने पर नेत्रों के सामने चिनगारी—तिल-मिले-से मालूम होते हैं, एक या दोनों भौं तथा नेत्र में दर्द होता है, आलस्य, थकान, भ्रम (चक्कर) होता है, उलटी होकर निद्रा आजाने से पीड़ा शांत हो जाती है।

नर्वस (Nervous) सिर-दर्द की पहचान—यह दर्द स्नायवीय-दुर्बलता, रक्तदोष (खूनकी खराबी) रक्त का अधिक निकल जाना, दांतों में क्रिमि लगना, प्रभृति कारणों से होता है, शिर पर रूमाल बांधने या हिलाने से पीड़ा अधिक नहीं होती, यह बहुधा एक भाग में होता है।

हेमीक्रेनिया— कुपथ्य-पौष्टिक-अन्नपान न मिलने से आधे सिर में दर्द होता है, यह बारी से होता है।

अपर्ण—

मेरी दिन-चर्या

लेखक—श्रीयुत पं० लक्ष्मीनारायण शास्त्री
तत्त्व-चिकित्सक, वैद्यराज.
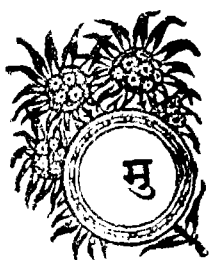
मुझे यह देख कर आश्चर्य होता है, कि मैं ८५ वर्ष की अवस्था में भी तरुणों की भांति हृष्ट-पुष्ट बलवान् बना हुआ हूँ। युवा-वस्था का जोश, नित-नये-कार्य करने का उल्लास, तथा उत्साह सब पूर्ववत् है। मेरी स्मृतिमें आजतक मुझे कभी किसी वैद्य या डाक्टर की शरण में जाने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। जब मैं तुम्हारी अवस्था का था तुम्हारे चेहरे की तरह झाईयों तथा झुर्रियों की रेखा नहीं थी. मेरे शरीरका गठन मुख की कान्ति दर्शनीय थी.. प्रायः मेरे सभी बालसखा छोटी२ अवस्था में धीरे २ चल बसे, एक...रामप्रसाद... सो भी दो चार मास का......

दादा जी क्या कारण है, किआप अबतक ऐसे बने हुए हैं, मेरे पिताजी आप की गोद खिलाये हो कर भी आप से पहले ही वृद्ध हो गये हैं। उन की कमर झुक गई है, हाथ पैर काँपते हैं, शौच जाना आना भी उनके लिये मुश्किल है। गरज यह है, कि हर समय खटिया पर पड़े रहते हैं।......

हाँ, मुझे उस पर दया आती है! बेचारा मेरे सामनेका पैदा हुआ, मेरे देखते २ ही इस अवस्था को प्राप्त हो गया, बेटा दिनेश! मैं तुम को अपनी दिन-चर्या सुनाता हूँ, जिस की बदौलत मैं आज तक भी युवा-तुल्य बना हुआ हूँ। मुझे आशा है, प्रत्येक-मनुष्य इस पर चलने से कभी रोगी न होकर वृद्धावस्थामें भी मेरे समान-बलवान् बना रह सकता है।

× × ×

मैं प्रतिदिन प्रत्येक-ऋतुमें ब्राह्म-मुहूर्त—यानी प्रातः-काल ४ बजे उठता हूँ, उठते ही ग्रीष्म (गरमी) में सुराही में रखा हुआ, शीतकालमें ताजा १-१॥ छटांक पानी पीकर जंगलकी तरफ चल देता हूँ, प्रातःकालका जल-पान नेत्रों की ज्योति को तेज तथा मल को साफ लाता है। नदी पर जाकर खुले-स्वच्छ-मैदान में मल विसर्जन (पाखाना) के लिए लग-भग सेर १॥ सेर पानी ले जाता हूँ। मलविसर्जन के बाद शुद्ध मिट्टी से गुदा को मल २ कर धोता हूँ. जो लोग गुद-प्रक्षालन (आबदस्त) के लिए पाव, १॥ पाव जल उपयोगी समझते हैं, वे सर्वदा बवासीर गुदा-पाक आदि रोगों से पीड़ित देखे गये हैं। इतने कम जलसे गुदा अच्छी तरह साफ नहीं होती, गुदामें मल का लगा रहना ही बवासीर का कारण है।

अधिकांश-मनुष्य अधिक-कार्य में व्यस्त होने के कारण मल-वेग (पाखाने की हाजत) तथा अपान-वायु

(रीह खारजा) को रोक लेते हैं। जिस का भयंकर-परिणाम होता है, ऐसे मनुष्यों के उदर (पेट) में गुड़गुड़ाहट, दर्द, गुदा में चुभन, मुख में बदबू, दुर्गन्ध डकार का आना, अफारा, बन्द (मल-मूत्र का रुकाव) हृदय, छाती में दर्द प्रभृति रोग उत्पन्न हो जाते हैं। मल-वेग के समान ही मूत्र का रोकना भी हानिकारक है। मूत्र के रोकने से मसाना, इन्द्रिय में दर्द चुभन, सोजाक, सिर-दर्द, वंक्षण-सन्धि (जंघासों) में दर्द प्रभृति रोग हो जाते हैं।

शौच के लिए जल्दी करना या ज्यादा ज़ोर लगाना भी अच्छा नहीं, यदि बहुत देर बैठे रहने पर भी मल साफ नहीं हो तो उस दिन उपवास करना अथवा ३ माशा छोटी हरड़ को घी में भून कर बराबर सोंठ चूर्ण के सहित गरम जल से सेवन करना चाहिए। अजीर्ण सब रोगों का मूल कारण है, अतएव इस पर ध्यान रखना नितान्त-आवश्यकीय है। जब उदर हल्का हो जाए, मल आना बन्द जाए तब उठना चाहिए, लगभग प्रातःकाल के मल से सायंकालका मल आधा होता है। शौच के पश्चात् जल पान करने से उदर शूल हो जाता है।

शौच से निवृत्त हो जाने पर हाथ, पैर, मुख, नासिका आदि को अच्छी तरह धोता हूँ। महुआ करंज, बरगद, नीम, बबूल, मौलसिरी की १२ अंगुल लम्बी कनकी अंगुलि (कनिष्ठ) के बराबर कमोबेश मोटी, कोमल-स्वच्छ-दन्तधावन (दतुअन) को धीरे २ चबा कर कूंची—ब्रुश-समान बना कर "त्रिफला ३ तो०, सौंठ, मिरच स्याह, पीपल सैन्धा-नमक, तेजबल, १-१ तो., खड़िया मिट्टी (चाक Chalk) ४ तो., पीपरमैन्ट का तैल (Oil Menth) १ माशा, लौंग का तैल (Oil Cloves) ½ माशा इस मंजन को कूची पर शनै २ हर-एक दान्त पर मलता हूँ।

दान्तों के भली भांति साफ करने के पश्चात् दन्त-धावन को मध्य से चीर कर अथवा सोना, चाँदी, या तांबे के पत्र की १० अंगुल लम्बी १ इंच चौड़ी जीभी से जिह्वा (जीभ) को साफ करता हूँ। तदन्तर ताजा जल से अच्छी तरह गरगरे (कुरले-गण्डूष) करना मेरा आवश्यकीय कर्तव्य है—

जो मनुष्य प्रतिदिन ताजी-दन्त-धावन करते हैं। उन के मुख से बदबू आना, दान्तों का हिलना, पायरिया (पूतिपूय) मसूढों का फूलना, तथा अन्यान्य मुख-रोग नहीं होते—गला, तालु; होठ (ओष्ठ) जीभ मुखपाक (मुँह में छाले) शोथ, खाँसी, दमा, उलटी हिचकी, कान, तथा नेत्र की बीमारियों में दतुअन नहीं करना अच्छा है।

दन्त-धावन के लिए बबूल, नीम, खैर का प्रयोग करना अधिक-लाभदायक है।

* व्यायाम—शक्ति के अनुसार प्रत्येक-मनुष्य व्यायाम—दण्ड, बैठक, दौड़, आदि कर सकता है। व्यायाम से शरीर हलका तथा मजबूत होता है। क्षुधा, कान्ति, फुर्ति, शक्ति बढती है—भोजन के बाद, खांसी दमा, उरः-क्षत तथा सूखा रोग, दिक् (राजयक्ष्मा) व दुर्बल को व्यायाम नहीं करना चाहिए। अधिक-व्यायाम से ज्वर, थकान, खाँसी, क्षय, प्यास, दमा, रक्त-पित्त प्रभृति रोग उत्पन्न होते हैं।

व्यायाम के पश्चात् सरसों का तैल समस्त-शरीर पर मलता हूँ। विशेषतया, सिर, हाथ पैर के तलुवे,

* व्यायाम पर सचित्र विस्तृत-लेख आगामी संख्या में प्रकाशित होगा। —सम्पादक

कान में तेल का प्रयोग करना अच्छा है, भोजन में तैल का सेवन मालिश से कम हितकारी है। यथा:—

पिष्टा-द्दशगुणं मांसं मासाद्दशगुणं पयः।
पयसोऽष्टगुणं तैलं खादयेन्नतु मर्दयेत् ॥ १ ॥

पिष्ट (पिट्ठी के पदार्थ) से दश-गुणा-मांस, मांस से दशगुणा दूध, दूध से ८ गुणा तैल बलकारी होता है, इसको खाना नहीं किन्तु मालिश करना चाहिए।

सिर में तैल को मलने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है, सिर की खारिश, बालों का गिरना खुश्की, सिर-दर्द, दिमागी-दुर्बलता नष्ट होती है। पैर हाथ की मालिश, फटना, जकड़ना, नेत्र, तथा निद्रा के लिए हितकारी हैं।

तैल के स्नेह को दूर करने के लिए उबटन (उद्वर्तन लगाना आवश्यकीय है। उबटन त्वचा का फटना, मुहांसे, झुर्रिया, झाईयां, आदि को दूर कर त्वचा को कान्ति-युक्त, कोमल तथा सुन्दर बनाता है।

शाही उटवन—(क) बेसन या बाकले का चूर्ण २ तो०, चिरौंजी-चूर्ण २ तो०, पीली सरसों चूर्ण २ तो०

(ख) मजीठ चूर्ण १तो०.सुर्ख-चन्दन चूर्ण ६ मा., हल्दी चूर्ण १ मा०, सुफेद-चन्दन चूर्ण १ तो०, इन को १॥ छंटाक जल में भिगो कर रात्रि भर रख प्रातः मसल कर छान ले—

(ग) रोगन काहू १ तोला, आटा जल रोग-सबको एकत्र कर उबटन करता हूँ। उबटन के पश्चात् शीतल-जल से स्नान करता हूँ।

भोजन—मनुष्य को प्रातः तथा सायं—दो वक्त भोजन करना चाहिए, भोजन हल्का, ताजा, शीघ्र पचने वाला शुद्ध स्वच्छता से बनाया हुआ, ऋतु तथा प्रकृति-अनुकूल होना चाहिए।

...वर्षाऋतु में—काविज, मधुर-पदार्थ, घी की अधिकता, पिट्ठी-निर्मित खाद्य, नदी का जल नहीं सेवन करना चाहिए।

विशेषतया—नींबू, अनार, सैन्धा नमक, गरम-किया जल, अथवा पाइप का जल, जौ चना का प्रयोग करना चाहिए।

शीतकालमें—घी दूध, मलाई, मक्खन, मोदक (लड्डू) उतमोतम-पौष्टिक-पाक, गरम मधुर द्रव्य, सन्तरा, सेब गन्ना, आदि विशेषतया सेवन करने चाहिएँ। शीतल अम्ल (तुर्श) रुक्ष, खुश्क, तथा वायुवर्धक-अन्न-पान त्याग देना चाहिए।

ग्रीष्म ऋतुमें—शीतल, तृप्ति-कारक, स्निग्ध, प्रवाही (पतले) पदार्थ, धारोष्ण (तत्काल दुहा) मिश्री मिला दूध, अनेकानेक शर्बत, ठण्डाई, घी, मक्खन, दूध भात, मधुर-दही, तक्र (छाछ-मठा) गेहूं, जौ, आम, खरबजा, तरबूज, दिनमें सोना, हितकारी है। शराब, आसव, तुर्श, गरम-पदार्थ, दाहकारक-द्रव्य, व्यायाम, धूपमें पर्यटन त्याग देना चाहिए।

भोजन करते समय हँसना, रञ्ज, चिन्ता, करना तथा वार्तालाप करना, अच्छा नहीं, ये दुर्गुण भोजन के परिपाक में बाधक हैं। कभी - अधिक हँसने से भोजन-कण के श्वास-स्रोत (सांस की नाली) में जाने से फन्दा लगने के कारण मृत्यु तक होनी देखी गई है। भोजन को अधिक—कम से कम ४ ग्रास को ४० बार चबा कर खाना, तथा कम खाना दोनों स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हैं।

भोजन में यथा-साध्य सर्व-रस (षड् रस) होने चाहिएँ। मधुर पदार्थ भोजन के पहले, अम्ल तथा नमकीन भोजन के मध्य में, कटु—चरपरा, कषैला, पदार्थ भोजन के अन्त में, खाना चाहिए। अनार-अमरूद (सपरी) सेव, शन्तरा, अङ्गूर, ईख, भसीडा, प्रभृति भोजन के पहले, केला, ककड़ी, भोजन के बाद सेवन करने चाहिएँ।

सुविधानुसार भोजन का समय निश्चित रखना तथा प्रथम भोजन से द्वितीय भोजन में लगभग ६ घण्टे का अन्तर होना अच्छा है।

जल—भोजन-निर्माण तथा पान के लिए जल की स्वच्छता आवश्यकीय है। जल का बिल्कुल नहीं पीना, या अधिक पान करना, भोजन के परिपाक में वाधा पहुँचाता है।

समस्थूलकृशा भक्त-मध्यान्त-प्रथमाम्बुपाः ॥

भोजनके पूर्व-जलपान करने से कृशता, भोजन के मध्य में जलपान करने सम-शरीर (न मोटा न कृश) भोजनांत में स्थूलता होती है। भोजनका कार्य जलसे, और जल का कार्य भोजन से लेना, जलोदर (जलंधर रोग) गुल्म (वायगोला) रोगों को आह्वान करना है।

भोजन में विष प्रयोग—यदि भोजन-पदार्थों में विष मिला होता है तो वह अग्नि पर गेरनेसे चट चट शब्द करता है। उसकी वाष्प से नेत्र, नासिका, से पानी बहने लगता है, भोजन पर बैठते ही मक्षिका (मक्खी) मर जाती है।

भुक्त्वा शतपदं गच्छेच्छनै स्तेनतु जायते।
अन्नसंघात-शैथिल्यं ग्रीवाजानुकटी-सुखम् ॥
भुक्त्वोपविशत स्तुन्दं शयानस्य तु पुष्टता।
आयुश्चंक्रममाणस्य मृत्युर्धावति धावतः ॥

भोजन करने के बाद शनैः २ सौ कदम चलना चाहिए। इस से उदरस्थ-अन्न-शिथिल हो जाता है तथा ग्रीवा, जानु, कमर को सुख प्राप्त होता है। भोजन करते ही बैठ जानेसे चर्बी की वढ़ती, तथा शयन करने से पुष्टि, व दौड़ने से मृत्यु होती है।

भोजन करते ही—अग्नि से तापना, धूपमें बैठना उछलना, कूदना, सवारी पर चढ़ना, व्यायाम, मैथुन, (स्त्री प्रसंग) दौड़ना, तथा गाना,—हानि-कारक है। इन से भोजन-परिपाक नहीं होता,

अत्यम्बु-पाना द्विषमाशनाच्च संधारणात्स्वप्नवि-पर्ययाच्च। कालेऽपि सात्म्यं लघु चापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥

अधिक-जल-पान, भोजन के ऊपर भोजन, मल, मूत्रादि का वेग रोकना, रात्रि में जागना, दिन में सोना आदि—विपरीत-आचार से अन्न का परिपाक नहीं होता.....

भोजन का समय प्रातःकाल १० बजे, सायंकाल ५ बजे अच्छा है, रात को सोने से लग भग २ घण्टा पूर्व दूध पान करना चाहिए..... इति...
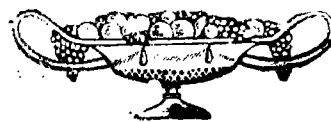
ल-वायु भोजन-वस्त्र शारीरिक व मानसिक जीवन-उपयोगी उपादेयों में, स्वच्छ-वायु का पर्याप्त प्राप्त होना, जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यकीय है प्रमाणों से सिद्ध किया जा चुका है। कि भोजन के बिना मनुष्य एक दिन ही नहीं, किंतु महीनों तक जिंदा रह सकता है। आयर्लैण्ड के मान्य-मनस्वी-मैकस्विनी ७० दिन का, व भारतीय-हृदय-सम्राट जतीन बाबू २०-२५ दिन का उपवास कर स्वर्ग सिधारे थे, परन्तु वायु के बिना १०—५ मिनट से अधिक-जीवित नहीं रह सकता है। कलकत्ते का ब्लैक हाल (Black Hall) प्रसिद्ध-ऐतिहासिक-घटना है। बच्चे के भूमिस्थ होते ही उसको श्वास लेने की आवश्यकता प्रतीत होती है। उसके लिए पर्याप्त-स्वच्छ-वायु नहीं मिलने पर उसका जीवन संकट-पूर्ण हो जाता है भारतीय-बच्चों की मृत्यु-संख्या अधिक होने का प्रधान-कारण उन को शुद्ध-वायु का नहीं मिलना है। भारतीय जच्चाओं के लिए जो घर चुना जाता है, वह तंग मैला अन्धेरा, जिसके आस पास कूड़े करकट तथा गन्दगी का ढेर जमा रहता है। जिस में शुद्ध वायु आने के लिए रोशनदान तक नहीं होते, यदि होते हैं, तो इस अवस्था में बन्द कर दिये जाते हैं। तिस पर नजर, परछाया बचाने के ख़याल से दर्वाजे पर पर्दा डाल दिया जाता है, कहीं तो भूत-प्रेत की बाधा के ध्यान से जच्चा-गृह के रोशन-दानों को बन्द कर नीम की खली तथा सूअर के मल की धूनी दी जाती है। जिसका परिणाम भयङ्कर होता देखा गया है। मुझे ऐसे कितने ही केस स्मरण हैं, जो इस दुष्क्रिया से मृत्यु के आखेट हुए थे।

शीतांशुः क्लेदयत्युर्वी विवस्वान शोषयत्यपि ।
तावुभावपि संश्रित्य वायुः पालयति प्रजाः ॥ सुश्रुत

वायु की सहायता से चन्द्र और सूर्य्य दृष्ट-प्राय-सांसारिक-पदार्थ को सरस तथा पाचन करते हैं। जिस से प्राणिमात्र की पुष्टि-परिवृद्धि होती है—

वायु रायु र्बलं वायु र्वायु र्धाता शरीरिणाम् ।
वायु र्विश्वमिदं सर्व प्रभु र्वायुश्च कीर्तितः। चरक

प्राणिमात्र की आयु, बल, वायु ही है, वायु ही धारण-पोषण एवं वर्द्धन करने वाला है, विश्व के प्रत्येक-द्रव्य का अस्तित्व, जीवन, वायु पर ही निर्भर है।

शुद्ध वायु में ओषजन (Oxygen) नत्रजन (Nitragen) दो मुख्य पदार्थ पाये जाते हैं, इसके

अतिरिक्त जलीय-कण कार्बोनिक एसिड गैस (Carbone Acid Gas) तथा अन्यान्य-जीव व वनस्पतियों के सूक्ष्मतर-अंश भी पाये जाते हैं।

वायुदोष

वायु में जब ये पदार्थ मात्रा से अधिक हो जाते हैं, अथवा वायु का किसी अस्वाभाविक-पदार्थ से संसर्ग हो जाता है, तब वायु दूषित मानी जाती है—वायु-दूषण में ५ प्रधान-कारण हैं, (१) श्वास, (२) मुर्दार-पशु व बनस्पतियों का सड़ना, (३) जलना (४) दुर्गन्धित भाप (५) अनेक-वायुरूप-वायु में उड़ने वाले पदार्थ।

(१) श्वास की वायु—जिसे फेफड़े बाहर को फैंकते हैं,—में १००० भाग में ४० भाग कार्बोनिक एसिड है, जो एक स्वस्थ-युवा-मनुष्य के फेफड़ों से २४ घंटों में १२ से १६ घन फीट तक निकलता रहता है। इस के अतिरिक्त इसमें कुछ सूक्ष्म-जलीय-कण भी पाये जाते हैं। एक तंग कमरेमें १०० मनुष्योंको यदि १ घंटे के लिए बन्द कर दिया जाय, और उस कमरेके रोशनदान, वायु आने के मार्ग भी बन्द कर दिये जायँ, तो एक घण्टेमें उन के श्वास से लग-भग ५० घन फीट कार्बोनिक एसिड खारिज होगा, जिससे कार्बोनिक एसिड की तादाद बढ़ जाने से कमरे की जीवनीय-वायु (Oxygen) नष्ट होकर उनका जीवन संकट-पूर्ण हो जायगा, अधिक-भीड़, तंग मकान में रहना जीवन तथा स्वास्थ्य के लिए हानि-कारक है।

(२) मुर्दार-पशु व वनस्पतियों का सड़ना—सड़ी हुई जीव व वनस्पतियों से एक तरहका विष वायुरूप हो कर निकलता रहता है जो श्वास द्वारा मनुष्य के शरीर के अन्दर जा कर अनेक रोगोंको उत्पन्न करता है।

विषौषधिपुष्पगन्धेन वायुनोपनीतेन आक्रम्यते यो देश स्तत्र दोषप्रकृत्य-विशेषेण कास-श्वास-वमथुप्रतिश्याय-शिरोरुग्ज्वरै रुपतप्यन्ते जनपदाः। सुश्रुत॥

अनेक प्रकार का विष व वनस्पतियों की उग्र-गन्ध, वायु में मिल कर श्वास-द्वारा मनुष्य के शरीर के अन्दर जाकर दोष, तासीर की विभिन्नता होते हुए भी खाँसी, दमा, जुक़ाम, सिरदर्द, ज्वर प्रभृति रोग उत्पन्न कर देती है।

पुष्पेभ्यो गन्धरजसी तेजस्विभ्यो यदानिलः।
उपादाय मनुष्यस्य प्राणापानौ नियच्छति॥
सौक्ष्म्या-दनुमतो धातून् मर्माण्यपि च तेजसा।
कर्म चित्तं बलं ज्ञानं तदा शाम्यति मारुतः॥
कर्मादिषु निरुद्धेषु स्वपितीति सुहृज्जनः।
मन्यते हृत-चित्तत्वादोजस्युपरते सति॥
तस्यादितः शिरोरोगः सम्भ्रमस्यैव जायते।
विगन्धं च सुगन्धं च दृष्ट्वाकस्मात्स मूर्च्छति।
तृणपुष्पक-मित्येवं ज्वरंविद्याद्विचक्षणः॥ सुश्रुत।

अर्थात्—विषैले पुष्पों की गन्ध व रजःकण से मिश्रित—दूषित-वायु शरीरांतस्थ-धातुओं में मिल कर ज्ञान, अंगप्रत्यंगादि-संचालन-क्रिया को शान्त कर मूर्च्छा, ज्वर उत्पन्न कर देता है। इसकी प्रथमावस्था में सिर-दर्द हुआ करता है। इस को "तृण-पुष्पक-ज्वर" कहते हैं।

चिकित्सा—इस के लिए सुश्रुतके शब्दों में सर्वोत्तम-उपाय स्थान-परित्याग अर्थात् दूषित वायु प्रदेश

को छोड़ देना है, अथवा सड़न के कारणों को दूर करना, हवन आदि से वायु-शुद्ध करना चाहिए।

(३) जलना—लकड़ी का कोयला, दीपक आदि जलाने से जो धूआँ निकलता है, उस से वायु-दूषित हो जाती है, पत्थर का कोयला जलाने से कार्बन (Carbon) कार्बोनिक डाई औक्साइड (Carbonic die Oxide) सल्फ्यूरेटिड हाईड्रोजन गैस (Salphurated Hydrogen Gas) एमोनियम सल्फाइड व जलीयकण निकलकर वायु में मिल जाते हैं। लकड़ी के जलाने से कार्बोनिक डाई औक्साइड निकलता है। समस्त तैल, विशेषतया मिट्टी का तैल जलाने से कार्बन अधिक तादाद में निकलता है। इन कारणों से वायु-दूषित होकर वायु का जीवनीय-अंश नष्ट हो जाता है। अधिकांश-मनुष्य शीत-काल में, विशेषतया शीतल-प्रदेशों में कोयलों की अँगीठी जला कर शयनागार में रख कर सोजाते हैं। कभी २ अग्नि की अधिकता एवं वायु आने के मार्गों के बन्द हो जाने पर भयङ्कर-परिणाम होते देखे गये हैं। गत जनवरी-मास में इसी नासमझी से एक जच्चा व धाया की मृत्यु का समाचार सुना गया था। आयुर्वेद में इस से उत्पन्न रोग को "धूमोहत" उल्लिखित किया है।

अत उर्ध्वं प्रवक्ष्यामि धूमोपहत-लक्षणम्।
श्वसिति क्षौति चात्यर्थमत्याधमति कासते॥
चक्षुषोः परिदाहश्च राग-श्चैवोपजायते।
सधूमकं निश्वसिति घ्रेयमन्यन्न वेत्ति च॥
तथैव च रसान् सर्वान् श्रुति-श्चास्योपहन्यते।
तृष्णादाहज्वरयुतः सीदत्यथ च मूर्च्छति॥
धूमोपहत इत्येवम्...... ..

धूंए के श्वास-द्वारा शरीर में प्रवेश करने से धूमोपहत-रोग होता है इस में श्वास जल्दी २ आता है। छींके अधिक आती हैं उदर पर अफारा हो जाता है खांसी नेत्रों में जलन तथा सुर्खी हो जाती है। धूंए की गन्ध के अतिरिक्त किसी वस्तु की गन्ध नहीं मालूम होती, कानों की श्रवण-शक्ति नष्ट हो जाती है। प्यास की अधिकता, भवकी ज्वर एवं बेहोशी हो जाती है।

चिकित्सा—रोगी को शुद्ध-हवादार-मकान में रखना चाहिए, तदन्तर वमन कराना चाहिए, वमन के लिए— (१) घी और गन्ने का रस (२) दूध दाख (३) मिश्री का शर्बत (४) मधुर तथा तुर्श-द्रव्यों का रस—इनमें से किसी एक को गले तक पिलाना चाहिए, वमन हो जाने से कोठा शुद्ध हो कर धूंए की गंध, बेकली, छींक, दाह, ज्वर, मूर्च्छा प्यास, अफारा, तथा कास, श्वास, शान्त हो जाते हैं इसके अनन्तर हृदय स्वस्थता के लिए मधुर—दाख शन्तरा प्रभृति नमकीन, अनारदाना आमला तथा चरपरे द्रव्योंकी चटनी बना कर चटानी चाहिए, नेत्रों की जलन सुर्खी तथा मस्तिष्क की शुद्धता के लिए नसवार (हुलास) का प्रयोग करना चाहिए।

सुलभ उत्तम योग।

एक सीसी में एमोनिया × कार्ब × तो० लेकर उसमें तैल इलायची ½ मा० इतर खस ½

× एमोनिया कार्ब प्रत्येक डाक्टर के पास हो सकता है। पीपरमैन्ट कापूर को प्रथम एकत्र कर रखदें जब परस्पर द्रव हो जाय तब मिलाना चाहिए—एमोनिया-कार्ब उड़ने वाली चीज़ है, अतएव सुँघाते ही कार्क बन्द कर देना चाहिए।

पुस्तक के विषय में

जिस समय वैद्यक-विद्यार्थी गुरु मुखसे चरककी जनपदोद्ध्वंसनीय-अध्याय में ऋषियों की खोज, रसायन-प्रकरण की रसायनिक-क्रिया और उसके गुण एवं दक्षके सिर कटनेपर अश्विनी-वैद्य की सन्धान-चातुरीके पाठ को पढ़ता है, तो उसके हृदय बीच अपूर्व वीचि आन्दोलित होने लगती है, क्षण२ में उसके चेहरे पर हर्ष और विषाद की रेखा अदल-बदलती नजर पड़ने लगती है, क्षण में ही उस का कार्य-क्षेत्र विस्तृत और क्षण में ही सीमित व कण्टकाकीर्ण हो जाता है, इस हेर-फेर में पड़ कर अल्पज्ञ होने के कारण कुछ निर्णय नहीं करके अनुसन्धान-कार्य से विमुख निस्पृह निश्चेष्ट हो जाता है।

एवमेव मेरे हृदय में भी संकल्प-विकल्प का उठना स्वभावोचित था, मेरे हृदय में जिस बीज का वपन हुआ था... वह था—प्राच्य-साहित्य की खोज रूपी... मुझे प्राच्य साहित्य की झाँकी में आयुर्वेद का उज्ज्वल-भविष्य हृदय प्लेट पर मूर्तिमान नजर पड़ता था, स्वर्गीय लाला लाजपतरायके शब्द—"जीवित-जातीय-साहित्य जाति का जीवन और मरण...मरण है" प्रतिदिन मेरे कर्ण-गह्वर में गूंजते रहते थे। सचमुच इन्हों ने मुझे दिशा-सूचक यन्त्र का काम दिया और मैं इसके लिये सन्नद्ध होगया।

मैं अपने विद्यार्थी जीवन से ही "माधव निदान" को पाकेट-वैद्य मानता रहा हूं, माधवनिदान-रचयिता "माधवकर" ने निदान का सम्पादन कर वैद्यों के बहुत कुछ भार को हल्का कर दिया था। माधवकर समय का मूल्य जानते थे, उन्हों ने रोगी के निदान में कम से कम समय खर्च करने की सुविधा-स्वरूप चरक सुश्रुत प्रभृति वृहत् संहिताओं में प्रसरित निदान-भाग को संग्रह कर संक्षिप्त-रूप देकर पाकेट-वैद्य का सम्पादन किया, इसमें शक नहीं वैद्य-समाज ने इसका यथोचित-बल्कि संहिताओंसे अधिक-आदर किया यहाँतक प्रत्येक वैद्यक-विद्यार्थी के लिये सर्वप्रथम इसका पढ़ना अनिवार्य समझा गया। इसके पढ़ने के समय मेरे हृदय में एक बात खटकी, कि माधवकर ने निदान-भाग का उत्तरार्ध चिकित्सा खण्ड भी अवश्य सम्पादित किया होगा, कहां है... इसके लिये बहुत कुछ लिखा-पढ़ी छानबीन की गई, अन्तमें स्थानीय प्रसिद्ध वृद्धवैद्य श्रीयुत पं० शीतलप्रसाद जैन रसायनशास्त्री जी से मेरी यह इच्छा पूर्ण हुई और आपने इसको प्रकाशित करने के लिये मुझे ही नियोजित किया...

मैं और क्या आप इस बात को अवश्य स्वीकार करेंगे, कि जिस महापुरुष ने निदान का सम्पादन कर अचिन्त्य-चातुरी व वैद्यहितैषिता का परिचय दिया है... क्या वह इतना करके ही सन्तोष करलेता...नहीं...उस ने एक बड़ी कमी जिसकी रोग का निदान करने के बाद अनिवार्य आवश्यकता होती है, यानी चिकित्साभाग" को भी पूरा किया। इसमें क्या है—यह कहना शक्तिके बाहर है जिन्हों ने माधवकर की पूर्वार्ध-कृति "माधव निदान" का अध्ययन किया है, वे चिकित्सा खण्ड की श्रेष्ठता का अनुमान स्वयं कर सकेंगे, चतुर-वैद्य बनने के लिये दोनों कृतियों का पढ़लेना ही पर्याप्त है।

अन्त में—यदि आप इसको देखनेके इच्छुक हैं। इसका संग्रह करना चाहते हैं। तो आपको पत्रिकाके प्रथम अंकसे ही ग्राहक होना चाहिये क्योंकि इसी अंक से इसका प्रकाशन शुरू किया गया है और समाप्ति तक क्रमशः प्रकाशित होता रहेगा......

विनीत—

लोकमणि मिश्र

पुस्तक के विषय में

जिस समय वैद्यक-विद्यार्थी गुरु मुखसे चरककी जनपदोद्ध्वंसनीय-अध्याय में ऋषियों की खोज, रसायन-प्रकरण की रसायनिक-क्रिया और उसके गुण एवं दक्षके सिर कटनेपर अश्विनी-वैद्य की सन्धान-चातुरीके पाठ को पढ़ता है, तो उसके हृदय बीच अपूर्व बीचि आन्दोलित होने लगती है, साथ र में उसके चेहरे पर हर्ष और विषाद की रेखा अदल-बदलती नजर पड़ने लगती है, क्षण में ही उस का कार्य-क्षेत्र विस्तृत और क्षण में ही सीमित व कण्टकाकीर्ण हो जाता है, इस हेर-फेर मे पड़ कर अल्पज्ञ होने के कारण कुछ निर्णय नहीं करके अनुसन्धान-कार्य से विमुख निस्पृह निश्चेष्ट हो जाता है।

एवमेव मेरे हृदय में भी संकल्प-विकल्प का उठना स्वभावोचित था, मेरे हृदय में जिस बीज का वपन हुआ था... वह था—प्राच्य-साहित्य की खोज रूपी... मुझे प्राच्य साहित्य की झाँकी में आयुर्वेद का उज्ज्वल-भविष्य हृदय प्लेट पर मूर्तिमान् नजर पड़ता था, स्वर्गीय लाला लाजपतरायके शब्द—"जीवित-जातीय-साहित्य जाति का जीवन और मरण...मरण है" प्रतिदिन मेरे कर्ण-गह्वर में गूंजते रहते थे। सचमुच इन्हों ने मुझे दिशा-सूचक यन्त्र का काम दिया और मैं इसके लिये सन्नद्ध होगया।

मैं अपने विद्यार्थी जीवन से ही "माधव निदान" को पाकेट-वैद्य मानता रहा हूं, माधवनिदान-रचयिता "माधवकर" ने निदान का सम्पादन कर वैद्यों के बहुत कुछ भार को हल्का कर दिया था। माधवकर समय का मूल्य जानते थे, उन्हों ने रोगी के निदान में कम से कम समय खर्च करने की सुविधा-स्वरूप चरक सुश्रुत प्रभृति बृहत् संहिताओं में प्रसरित निदान-भाग को संग्रह कर संक्षिप्त-रूप देकर पाकेट-वैद्य का सम्पादन किया, इसमें शक नहीं वैद्य-समाज ने इसका यथोचित-बल्कि संहिताओंसे अधिक-आदर किया यहाँतक प्रत्येक वैद्यक-विद्यार्थी के लिये सर्वप्रथम इसका पढ़ना अनिवार्य समझा गया। इसके पढ़ने के समय मेरे हृदय में एक बात खटकी, कि माधवकर ने निदान-भाग का उत्तरार्ध चिकित्सा खण्ड भी अवश्य सम्पादित किया होगा, कहां है... इसके लिये बहुत कुछ लिखा-पढ़ी छानबीन की गई, अन्तमें स्थानीय प्रसिद्ध वृद्धवैद्य श्रीयुत पं० शीतलप्रसाद जैन रसायनशास्त्री जी से मेरी वह इच्छा पूर्ण हुई और आपने इसको प्रकाशित करने के लिये मुझे ही नियोजित किया...

मैं और क्या आप इस बात को अवश्य स्वीकार करेंगे, कि जिस महापुरुष ने निदान का सम्पादन कर अचिंत्य-चातुरी व वैद्यहितैषिता का परिचय दिया है... क्या वह इतना करके ही सन्तोष करलेता...नहीं...उस ने एक बड़ी कमी जिसकी रोग का निदान करने के बाद अनिवार्य आवश्यकता होती है, यानी "चिकित्साभाग" को भी पूरा किया। इसमें क्या है—यह कहना शक्तिके बाहर है जिन्हों ने माधवकर की पूर्वार्ध-कृति "माधव निदान" का अध्ययन किया है, वे चिकित्सा खण्ड की श्रेष्ठता का अनुमान स्वयं कर सकेंगे, चतुर-वैद्य बनने के लिये दोनों कृतियों का पढ़लेना ही पर्याप्त है।

अन्त में—यदि आप इसको देखने के इच्छुक हैं। इसका संग्रह करना चाहते हैं। तो आपको पत्रिका के प्रथम अंक से ही ग्राहक होना चाहिये क्योंकि इसी अंक से इसका प्रकाशन शुरू किया गया है और समाप्ति तक क्रमशः प्रकाशित होता रहेगा......

विनीत—
लोकमणि मिश्र

निदान-चिकित्सा

अनुवादक—आयुर्वेदाचार्य प्रो० लोकमणि मिश्र शास्त्री।

अस्मिन् ग्रंथे रोग-संग्रह-चिकित्सामाह

॥ मंगलम् ॥

वक्र तुण्ड महाकाय सूर्य-कोटि सम-प्रभ ।
निर्विघ्नं सर्व-रोगेषु, औषधममृतं कुरु ॥

वृहत्-शरीर कोटि सूर्य-समान-कान्ति अयि गिरिजा-नन्दन? औषधियों को समस्त-रोग-नाश-कारी अचूक-शक्ति प्रदान कीजिए ॥ १ ॥

जहां की उपज, वायु, है सात्म्य' प्राणी।
कहें, अर्थ-लोलुप जिसे स्वर्ण-खानी।
जहाँ, जन्म लेने को सुर हैं तरसते।
उसी "आर्य-भूमि" को "मणि" का नमस्ते ;

ज्वरोतीसारो ग्रहणी, अर्शोऽजीर्णविसूचिकाः ।
अलस श्चविलम्बी च क्रिमिरुक् पाण्डुकामलाः ॥२
हलीमकं रक्तपित्तं राजयक्ष्मा उरःक्षतम् ।
कासो हिक्का सह श्वासैः स्वरभेदस्त्वरोचकः ॥ ३
छर्दि स्तृष्णा च मूर्च्छा च रोगाः पानात्ययादयः ।
दाहाख्य-स्त्वपरोन्मादो ऽपस्मार श्चानिलामयः ॥४
वातरक्त-मुरुस्तम्भ आमवातो ऽथ शूलरुक् ।
पक्तिजं-शूलमानाह उदावर्तो ऽथ गुल्मरुक् ॥ ५
हृद्रोगो मूत्रकृच्छ्र श्च मूत्राघात स्तथाश्मरी ।
प्रमेहो मधुमेह श्च पिडिका श्च प्रमेहजाः ॥ ६ ॥
मेदोदोषोदरे शोथो वृद्धि श्च गलगण्डकः ।
गण्डमालापची ग्रन्थि-रर्बुदं श्लीपदं तथा ॥ ७॥
विद्रधिर्व्रणशोथ श्च द्वौ व्रणौ भग्न-नाडिकौ ।
भगन्दरोपदंशौ च शूकदोष-स्त्वगामयः ॥ ८ ॥
शीत-पित्त-मुदर्द श्च कुष्ठं चैवाम्लपित्तकः ।
विसर्प श्च स-विस्फोटः स-रोमान्ती-मसूरिका ॥९
क्षुद्रास्य-कर्ण-नासा-क्षि-शिरः-स्त्री-बालकामयाः।
विषं चेतरमुद्दिश्य रुग्-विनिश्चय संग्रहः ॥१०॥

पुस्तक प्रकाशित होने के बाद प्रत्येक-रोग का हिन्दी डाक्टरी व यूनानी नाम क्रमानुसार-अंकन-सहित प्रकाशित किया जायगा ।
—सम्पादक

ज्वराधिकारः

अथातो ज्वर-चिकित्सां व्याख्यास्यामः —
रोगानीकस्य सर्वस्य ज्वरो राजा यतः स्मृतः ।
तस्मात्प्रथमत स्तस्य प्रवक्ष्यामि चिकित्सितम् ॥१

रोग-समूह में ज्वर को प्रधान मान लेने के कारण सर्व-प्रथम ज्वर-चिकित्सा कहते हैं ॥ १ ॥

पाक्यं *शीत-कषायं वा मुस्तं पर्पटकं पिबेत् ।
सनागरं पर्पटकं पिबेद्वा सदुरालभम् ॥ २
किराततिक्तकं मुस्तं गुडूची विश्वभेषजम् ।
पाठा मुशीरं सोदीच्यं पिबेद्वा ज्वरशान्तये ॥३

* ४ तो० औषधि चूर्ण को २४ तो० स्वच्छ जल में मिला कर रात्रि को रख कर प्रातःकाल मसल छान कर सेवन करना चाहिए इस को शीतकषाय कहते हैं:—

जिस योग में औषधियों की तोल नहीं बतलाई हो वहां समस्त औषधियां समान-भाग लेनी चाहिए ।

क्वाथ की लिखित औषधियां बलवान् पुरुष के लिए ४ तो० मध्यम पुरुष के लिए ३ तो० निर्बल के लिए २ तो० लेनी चाहिए, सर्वत्र इसी नियम का अनुसरण करना चाहिए ।

ज्वरघ्ना दीपना श्चैते कषाया दोषपाचनाः ।
तृष्णारुचि-प्रशमना मुखवैरस्य-नाशनाः ॥ ४ ॥

(१) नागरमोथा पित्तपापड़ा (शाहतरा) (२) सौंठ, पित्तपापड़ा धमासा (३) चिरायता नागरमोथा गिलोय सौंठ पाठामूल खस सुगन्धवाला (नेत्रबाला) इन औषधियों का क्वाथ अथवा शीतकषाय बना कर सेवन करना चाहिए, ये क्वाथ ज्वर, प्यास, अरुचि, मुख का बदज़ायका, को नष्ट करते हैं, दीपन तथा दोषों का पाचन करते हैं । २-३-४

पटोलादिक्वाथः

पटोलं चन्दनं मूर्वा पाठा तिक्तामृता गणः ।
पित्त-श्लेष्मारुचि च्छर्दि ज्वरकण्डूविषापहः ॥ ५

परवल की पत्तियाँ सुर्ख चन्दन मूर्वा कुटकी पाठा गिलोय इन का क्वाथ कफ, पित्त, अरुचि, उलटी (वमन) ज्वर, खारिश, विष को नष्ट करता है ॥ ५ ॥

षडंगपानीयम्*

मुस्त-पर्पटकोशीर-चन्दनोदीच्य-नागरैः ।
शृत-शीतं जलं दद्यात्तृड्दाह-ज्वर-शान्तये ॥६॥

नागरमोथा पित्तपापड़ा खस सुर्ख-चन्दन सुगन्ध-वाला सौंठ इन औषधियों से साधित-जल प्यास, दाह, ज्वर, को शान्त करता है ॥ ६ ॥

तृषिते सलिलं चोष्णं दद्याद्वातकफज्वरे ।
मद्योत्थे पैत्तिके वाथ तिक्तकैः शीतलं शृतम् ॥७

वात-कफ-जनित-ज्वर में गरम-जल तथा मद्य-पान-जनित अथवा पित्त-जनित-ज्वर में तिक्त(कड़वी) औषधियों से साधित-जल देना चाहिए ॥७॥

* प्यास को शान्त करने के लिए जहां औषधियों का जल पिलाना अभीष्ट हो वहां पर सम्मिलित औषधियां १ तो० ६४ तो० पानी में पकानी चाहिए, आधा शेष रहने पर शीतल कर सेवन करावें ।

। वातज्वरे पाचन-कषायः ।

नागरं देवकाष्ठं च धान्यकं बृहतीद्वयम् ।
कणामूलयुतं दद्यात् पाचनं पवनज्वरे ॥ ८ ॥

सौंठ देवदार धनिया, छोटी कटेली बड़ी कटेली पिपलामूल इन का क्वाथ वात-ज्वर में पाचन के लिए प्रयुक्त करना चाहिए ॥ ८ ॥

। पित्तज्वरे पाचन-कषायः ।

सक्षौद्रं पैत्तिके मुस्त-कुटजेन्द्रयवैः शृतम् ।
कलिंगं कट्फलं मुस्तं तथा कटुकरोहिणी ॥९॥
पक्वं सशर्करं पीतं पाचनं पैत्तिके ज्वरे ।
किराततिक्तं सक्षौद्रं ह्रीबेरामलकीफलम् ॥१०
ज्वरघ्नं तत्पिबेच्छीतं पाचनं पैत्तिके ज्वरे ।

(१) नागरमोथा कुड़े की छाल इन्द्रजौ (२) इंद्रजौ कायफल नागरमोथा कुटकी (३) चिरायता सुगन्धबाला (नेत्रवाला) आमला इन औषधियों के क्वाथों में क्रमशः शहद, चीनी, शहद मिला कर पित्तज्वर में पाचन के लिए देना चाहिए । ९-१०

। कफज्वरे पाचनकषायः ।

मूलानि मातुलुङ्गस्य पिप्पलीशृंगवेरयोः ॥ ११ ॥
अजमोदस्य हि क्वाथः सक्षारः पाचनः कफे ॥

बिजौरा नींबू की जड़, पीपल, अद्रक, अजमोद इन का क्वाथ जवाखार मिला कर कफज्वर में पाचन के लिए देना चाहिए । ११ ॥

। नवज्वरे त्याज्यानि ।

नवज्वरे दिवास्वप्न-स्नानाभ्यंगान्नमैथुनम् ॥ १२
क्रोध-प्रवात-व्यायाम-कषायांश्च विवर्जयेत् ।

दिनमें सोना, स्नान करना, तैल मलना, अन्न-भोजन, मैथुन, क्रोध, तेज-वायुमें बैठना, कसरत तथा कषैला-रस-प्रधान क्वाथ नये ज्वरमें त्याग देना चाहिए। १२

। लंघनम् ।

ज्वरे लंघनमेवादावुपदिष्टमृते ज्वरात् । १३ ॥
मनः-पीडा-भय-क्रोध-काम-शोक-श्रमोद्भवात् ।

ज्वर की प्रथमावस्था में लंघन कराना श्रेष्ठ है, परन्तु हृदय-पीडा, भय, क्रोध, काम, शोक, परिश्रम, जनित ज्वरमें लंघन नहीं कराना चाहिए ॥१३॥

। * लंघनानिवार्यता ।

आमाशयस्थोहत्वाग्निंसामोमार्गान्पिधापयन्।१४
विदधाति ज्वरं दोषस्तस्मा-ल्लंघन-माचरेत् ।

आम (कच्चारस) सहित-दोष आमाशय में पहुंच कर अग्नि को नष्ट कर रसवाही-स्रोतों को अवरुद्ध करता हुआ ज्वर उत्पन्न करता है, अतएव आम-पाचन के लिए लंघन कराना आवश्यकीय है । १४ ।

। ×लंघन-मात्रा ।

प्राणाविरोधिना चैनं लंघनेनोपपादयेत् । १५
बलाधिष्ठानमारोग्यं यदर्थोऽयं क्रियाक्रमः ।

लंघन इतना कराना चाहिए, जिसमें रोगी का बल बना रहे, क्यों कि आरोग्यता बल के आश्रय है और आरोग्यता के लिए चिकित्सा की जाती है । १५ ॥

। अलंघ्याः ।

तच्च मारुत-क्षुत्तृष्णा-मुख-शोष-भ्रमान्विते ॥ १६ ॥
कार्यं न बाले वृद्धे वा न गर्भिण्यां न दुर्बले ।

भूख, प्यास, मुख-सूखना, भ्रम तथा बात-ज्वर-पीडित, बाल, वृद्ध, गर्भिणी-स्त्री, तथा दुर्बल-रोगी को लंघन नहीं कराना चाहिये । १६ ॥

। औषध-दान-कालः ।

मृदौ ज्वरे लघौ देहे प्रचलेषु मलेषु च ॥ १७
पक्वं दोषं विजानीयात्तदा देयं हितौषधम् ।

ज्वर व शरीर का हल्का होजाने तथा मलमूत्र के साफ होने पर पक्वदोष समझ कर रोगोपयुक्त-औषधि देनी चाहिये । १७ ॥

। कफ-ज्वरे निम्बादि-क्वाथः ।

निम्ब-विश्वा-मृता-दारु-शठी-भूनिम्ब-पौष्करम् १८
पिप्पल्यो बृहती चेति क्वाथो हन्ति कफ-ज्वरम् ।

नीम की छाल, सौंठ, गिलोय, देवदारु कचूर चिरायता पुहकरमूल पीपल बड़ी कटेरी इन औषधियों का क्वाथ कफ-ज्वर को नष्ट करता है १८ ।

। त्रिफलादि-क्वाथः ।

त्रिफलापटोलवासाछिन्नरुहा तिक्तरोहिणीनपद्ग्रन्था ॥ १९
मधुना-श्लेष्म प्रकोपे दशमूल-वासकस्य वा क्वाथः

(१) त्रिफला परवल की पत्तियां अडूसा गिलोय कुट-की बच । (२) दशमूल अडूसा इनके क्वाथ में शहद

साधुलंघन के लक्षण—

वातमूत्रपुरीषाणां विसर्गे गात्रलाघवे ।
हृदयोद्गार-कण्ठास्य-शुद्धौ तन्द्राक्लमे गते ॥ १
स्वेदे जाते रुचौ चापि क्षुत्पिपासा-सहोदये ।
कृतं लंघनमादेश्यं निर्व्यथे चान्तरात्मनि ॥ २

अपान-वायु (पाद-अपशब्द) मल-मूत्र साफ हो, शरीर हल्का, हृदय स्वस्थ हो, डकारें साफ आवें, गला मुंह का जायका ठीक हो, तन्द्रा ग्लानि अरुचि नहीं हो, भूख प्यास मालूम हो, तो उचित-लंघन हुआ समझना चाहिए । १-२ ।

× अधिक-लंघन से हानि—

पर्व-भेदोऽङ्गमर्दश्च कासः शोषो मुखस्य च ।
क्षुत्प्रणाशोऽरुचिस्तृष्णा दौर्बल्यं कर्णनेत्रयोः ॥
मनसः संभ्रमोऽभीक्ष्णं मूर्ध्ववातस्तमो हृदि ।
देहाग्नि-बलहानिश्च लंघनेऽतिकृते भवेत् ॥

जोड़ों में दर्द, हड़फूटन, खांसी, मुख-सूखना, भूख नष्ट होना, अरुचि, प्यास, कम सुनना, कम देखना, स्वभाव चिड़चिड़ा, आंखों के सामने अन्धेरा आना, अग्निमान्द्य बल-नाश तथा शरीर का क्षीण होना ये लक्षण अधिक-लंघन कराने से होते हैं । १-२ ।

मिला कर कफ-ज्वर में देना चाहिए । १९ ॥

। यवादि-क्वाथः ।

यव-पर्पटकं धान्यं पटोलारिष्ट साधितम् ॥२०॥
पिबेत्सशर्करं क्षौद्रं पित्त श्लेष्म ज्वरापहम् ॥

इन्द्रजौ पित्तपापड़ा धनिया परवल की पत्तियां नीम की छाल इन औषधियों के क्वाथ में चीनी तथा शहद मिलाकर पित्त-कफ-ज्वर में सेवन करना चाहिये । २० ॥

उष्मा पित्तादृतेनास्तिज्वरोनास्त्युष्मणाविना।२१
तस्मात्पित्त-विरुद्धानि [1]पिबेत्पित्ताधिकेऽधिकम् ॥

उष्मा (गर्माई) होना ज्वर का प्रधान-लक्षण है, और गर्माई का कारण पित्त होता है, अतः विशेप-तया पित्त-ज्वर में पित्त के विरुद्ध-गुण अर्थात् पित्त नाशक-कषाय सेवन करने चाहिए ॥ २१ ॥

। गुडूच्यादि क्वाथः ।

गुडूची निम्ब-धान्याकं पद्मकं चन्दनान्वितः ॥२२
तृष्णा-दाहारुचिच्छर्दि-सर्वज्वरहरो गणः॥

गिलोय नीम की छाल धनिया पद्माख सुर्ख चन्दन इन औषधियों का क्वाथ प्यास भवकी अरुचि उलटी तथा समस्त-ज्वरों को नष्ट करता है । २२ ॥

। मुस्तादि-क्वाथः ।

मुस्तंपर्पटकं धान्यं शुण्ठी पाठेन्द्र-वासकम् ॥ २३
भूनिम्बं चन्दनं *मुस्ता सबिल्वं कटुरोहिणी ॥

[1] किसी२ आचार्य ने "पिबेत्" के स्थान पर "त्यजेत" लिखा है वहां पित्तको विरुद्ध करनेवाले द्रव्य कषाय पित्त-प्रधान-ज्वरमें त्याग देने चाहिए। पाठ-भेद होने पर भी समास-सरणी में भावसाम्य है।

* एकमप्यौषधं योगे यस्मिन् यत्पुनरुच्यते ।
मानतो द्विगुणं प्रोक्तं तद् द्रव्यं तत्त्वदर्शिभिः ॥१
एक योग (नुसखे)में एक औषधि दो बार लिखित हो तो उस *औषधि को द्विगुण लेना चाहिए ॥ १ ॥*

कषायं पाययेदेषां श्लेष्मपित्त-ज्वरापहम् ॥ २४
दाहतृष्णा रुचिच्छर्दिकासहृत् पाण्डुशूलनुत् ।

नागरमोथा पित्तपापड़ा धनिया सौंठ पाठामूल इन्द्रजौ, अडूसा चिरायता सुर्ख-चन्दन नागरमोथा वेल का गूदा कुटकी इन औषधियोंका क्वाथ बनाना चाहिए। इसके प्रयोग से कफ-पित्त-ज्वर दाह (भवकी) प्यास अरुचि उलटी खांसी पाण्डु तथा शूल नष्ट होता है । २३—२४ ।

पित्तज्वर-नाशक क्वाथः ।

एकः पर्पटकः श्रेष्ठः पित्तज्वर-नाशने ।
किम्पुन यदि युज्येत *चन्दनोदीच्य नागरैः॥२५

अकेला पित्तपापड़ा ही पित्तज्वर को शान्त करता है, यदि उस के साथ सुर्ख चन्दन सुगन्धवाला (नेत्र-वाला) तथा सौंठ का भी उपयोग किया जाय तो सोने में सुगन्ध है—अर्थात् अवश्य पित्तज्वर को शान्त करता है ॥ २५ ॥

पर्पटामृतधात्रीणां क्वाथः पित्तज्वरापहः ।

पित्तपापड़ा गिलोय-सत्व आमला इन औषधियों का क्वाथ पित्तज्वर को नष्ट करता है ।

अन्तर्दाह-चिकित्सा ।

व्युषितं धान्याकजलं प्रातःपीतं सशर्करं पुंसाम्॥२६
अन्तर्दाहं शमयत्यचिराद् दूरप्ररूढमपि ॥

१ पल (४ तो०) धनिये के चूर्ण को २४ तोले जल में भिगो कर सायंकाल को रख देना चाहिए, प्रातः मसल छान कर चीनी (देशी) मिला कर सेवन करने से पुरानी अन्तर्दाह शीघ्र शान्त हो जाती है ॥ २६

* स्नेह तैल-घृत आसव अवलेह—चटनी के योगों में चन्दन के कथन से सुफेद-चन्दन तथा क्वाथ व लेप के योगों में चन्दन *कहने पर प्रायः सुर्ख चन्दन लेना चाहिए ।*

पित्त-ज्वरेण तप्तस्य क्रियां शीतां समाचरेत् ॥२७

पित्तज्वरसे जलते हुए रोगी की शीतल-चिकित्सा करनी चाहिए ॥ २७ ॥

विदार्यादि-लेपः।

विदारी दाडिमं लोध्रं दधित्थं बीजपूरकम्।
एभिः प्रदिह्यान्मूर्धानं तृड् दाहार्तस्य देहिनः॥२८

विदारीकन्द अनार पठानीलोध कैथ का फल, बिजौरा नींबू का गूदा (रेशा) इन का सिर पर लेप करना चाहिए, इसके प्रयोग से प्यास, दाह शान्त हो जाती है ॥ २८॥

दुरालभादि क्वाथः।

दुरालभा-पर्पटकप्रियंगु-
भूनिम्बवासाकटुरोहिणीनाम्।
जलं पिबेच्छर्करयावगाढं।
तृष्णास्रपित्तज्वरदाह-युक्तः॥ २९ ॥

धमासा पित्तपापड़ा प्रियंगु (फूलप्रियंगु) चिरायता अडूसा कुटकी इन औषधियों के क्वाथ में देशी चीनी मिला कर सेवन करना चाहिए, इसके प्रयोग से प्यास रक्त-पित्तज्वर तथा दाह नष्ट होती है ॥ २९ ॥

द्राक्षादि-क्वाथः।

द्राक्षाभया पर्पटकाब्दतिक्ता-
क्वाथं सशम्याकफलं विदध्यात्।
प्रलापमूर्च्छाभ्रमदाहशोष-
तृष्णान्विते पित्तभवे ज्वरे च॥ ३० ॥

दाख (मुनक्का) बड़ी हरड़ का छिल्का पित्तपापड़ा नागरमोथा कुटकी अमलतास का गूदा इन औषधियों का क्वाथ प्रलाप (बक) बेहोशी भ्रम दाह मुख का सूखना प्यास-सहित पित्तज्वर को शान्त करता है ॥३०॥

पटोलादि-क्वाथः।

पटोलेन्द्रयवक्काथो मधुना मधुरीकृतः।
तीव्रपित्तज्वरामर्दी पानात्तृड्दाहनाशनः॥ ३१

परवल की पत्तियां इन्द्रजौ इन के क्वाथ को शीतल कर शहद मिलाकर सेवन करने से तीव्र पित्त का ज्वर प्यास तथा दाह का नाश होता है ॥ ३१ ॥

धान्यादि-क्वाथः।

दीपनं कफविच्छेदि पित्तवातानुलोमनम्।
ज्वरघ्नं पाचनं भेदि शृतं धान्यपटोलयोः॥३२

धनिया परवल की पत्तियां, इनका क्वाथ पित्त तथा वायु का अनुलोमन करने वाला ज्वर कफ-नाशक तथा पाचन है ॥ ३२ ॥

पित्तकफज्वर-चिकित्सा।

सपत्रपुष्पवासाया रसः क्षौद्रसितायुतः।
कफपित्तज्वरं हन्ति सास्रपित्तं सकामलम्॥३३

अडूसे के स्वरस में शहद तथा मिश्री मिला कर सेवन करने से कफ पित्तज्वर रक्तपित्त तथा कामला (कमल वाय) नष्ट होती है ॥ ३३ ॥

त्रायमाणादि-क्वाथः।

त्रायमाणा च मृद्वीका त्रिफला कटुरोहिणी।
पित्तश्लेष्महरस्त्वेषां कषायो ह्यनुलोमनः॥३४

त्रायमाणा—बनप्सा, दाख त्रिफला कुटकी इन औषधियों का क्वाथ कफ-पित्त-नाशक तथा अनुलोमन करने वाला है ॥ ३४ ॥

। कटुकाचूर्ण-प्रयोगः।

सशर्करामक्षमात्रां कटुकामुष्णवारिणा।
पीत्वा ज्वरं जयेज्जन्तुः कफपित्तसमुद्भवम्॥३५

कुटकी का चूर्ण ६ मा० देशी चीनी ६ मा० मिला

कर गरम जल से सेवन करने से कफपित्तज्वर नष्ट हो जाता है ॥ ३५ ॥

वातपित्तज्वर-चिकित्सा ।

किराततिक्तममृतां द्राक्षामामलकीं शठीम् ।
निष्क्वाथ्य पित्तानिलजे तत्क्वाथं सगुडं पिबेत् ॥ ३६

चिरायता गिलोय सब्ज दाख आमला तथा कचूर इन के क्वाथ में गुड मिला कर सेवन करने से वातपित्तज्वर नष्ट हो जाता है ॥ ३६ ॥

निदिग्धिकादिक्वाथः ।

निदिग्धिकाबलारास्नात्रायमाणामृतायुतैः ।
मसूरविदलैः क्वाथो वातपित्तज्वरं जयेत् ॥ ३७

छोटी कटेरी खरैंठी रासन त्रायमाणा—बनप्सा गिलोय मसूर की दाल इन औषधियों का क्वाथ-वातपित्तज्वर को जीतता है ॥ ३७ ॥

वातकफज्वर-चिकित्सा ।

किराततिक्तकं मुस्तं गुडूची विश्वभेषजम् ।
चातुर्भद्रक मित्याहु र्वातश्लेष्मज्वरापहम् ॥ ३८

चिरायता नागरमोथा गिलोय सौंठ इनका क्वाथ वातकफज्वर को नष्ट करता है इसको "चातुर्भद्रक" का क्वाथ कहते हैं ॥ ३८ ॥

आरग्वधादि-क्वाथः ।

आरग्वधग्रन्थिक मुस्ततिक्ता-
हरीतकीभिः क्वथितः कषायः ।
सामे सशूले कफवातयुक्ते-
ज्वरे हितो दीपनपाचन श्च ॥ ३९ ॥

अमलतास का गूदा पीपलामूल नागरमोथा कुटकी बड़ी हरड़ के छिल्कों से बनाया क्वाथ आम तथा शूल सहित कफवात ज्वर में हितकारी है । अग्नि दीपन करने वाला तथा पाचन है ॥ ३८ ॥

द्राक्षादि-क्वाथः ।

द्राक्षामृतानागरपुष्कराह्वयैः-
कृतः कषायः कफ-मारुतोत्तरे ।
सश्वासकासारुचिपार्श्वरुक्-करे-
ज्वरे त्रिदोषप्रभवेऽपि शस्यते ॥ ४० ॥

दाख गिलोय सौंठ पुहकरमूल इन औषधियों का क्वाथ श्वास खाँसी अरुचि पार्श्व शूल (पसली का दर्द) सहित कफवात ज्वर तथा त्रिदोष ज्वर को नष्ट करता है ॥ ४० ॥

चिरज्वरे वातकफोल्बणे वा-
त्रिदोषजे वा दशमूलमिश्रः ।
किराततिक्तादिगणः प्रयोज्यः-
शुद्ध्यर्थिने वा त्रिवृताविमिश्रः ॥ ४१ ॥

दशमूल तथा किराताादि-गण (चिरायता नागरमोथा गिलोय सौंठ) का क्वाथ वात-कफ प्रधान-जीर्ण-ज्वर व त्रिदोष ज्वर में प्रयुक्त करना चाहिए । यदि रोगी को कब्ज हो तो विरेचन के लिए इस के साथ निसौथ का चूर्ण सेवन कराना चाहिए ॥ ४१ ॥

सन्निपात-ज्वरचिकित्सा ×

लंघनं बालुकास्वेदो नस्यं निष्ठीवनं तथा ।
अवलेहो ऽञ्जनं चैव प्राक् प्रयोज्यं त्रिदोषजे ।४२

सर्व प्रथम सन्निपात ज्वर में लंघन बालुका-स्वेद (बालू की पोटली बना कर स्वेदन करना) नसवार गरगरे—कफ निकालना चटनी चटाना तथा अञ्जन लगाना चाहिए ॥ ४२ ॥

× सन्निपात ज्वर में मांस भात, भोजन देना दाह होने पर शीतल-जल से परिषेक—स्नान-तरेड़ आदि करना, खुश्की में घी पिलाना, प्यास-पसलीदर्द तालुशोष में शीतल-जल देना रोगी की मृत्यु बुलाना है ।

सन्निपातज्वरे पूर्वं कुर्यादामकफापहम् ।×
पश्चाच्छ्लेष्मणि संक्षीणे शमयेत्पित्तमारुतौ ॥ ४३

सन्निपात-ज्वर में पहले आम और कफ-नाशक चिकित्सा करनी चाहिए, तदनन्तर—क्षीण होने पर पित्त व वायु के शमन का उपाय करना चाहिए ॥४३॥

लंघनम् ।

त्रिरात्रं पंचरात्रं वा दशरात्रमथापि वा ।
लंघनं सन्निपातेषु कुर्यादारोग्यहेतवे ॥४४॥

सन्निपात-ज्वर में ३–५–१० दिन अथवा आरोग्य होने तक लंघन कराना चाहिए ॥ ४४ ॥

दोषाणा-मेव सा शक्ति लंघने या सहिष्णुता ।
न तु दोषक्षये कश्चित्सहते लंघनादिकम् ॥ ४५

दोषों की शक्ति से ही मनुष्य लंघन सह सकता है, दोषों के क्षीण हो जाने पर लंघन असह्य है ॥ ४५

मुखवैरस्य-नाशक-योगः ।

मातुलुंगफलकेशरो धृतः-
सिन्धु-जन्म-मरिचान्वितो मुखे ।
हन्ति वातकफरोगमास्यगम्-
शोषमास्यजडता-मरोचकम् ॥ ४६ ॥

बिजौरा नींबू के रेशों में सैन्धानमक तथा स्याह-मिर्च का चूर्ण मिला कर मुख में रखने से वातकफ-जनित मुख-रोग, मुख का सूखना, जड़ता तथा अरुचि नष्ट हो जाती है ॥ ४६ ॥

वालुकास्वेदः ।

खर्पर-भृष्ट-पट-स्थितकाञ्जिक-
सिक्तो हि वालुकास्वेदः ।
शमयति वातकफामय-
मस्तक-शूलाङ्गभङ्गादीन ॥ ४७ ॥

खपरे में गरम की हुई वालु की पोटली बना कर काञ्जी में भिगो कर दर्द-स्थान पर सेक करनेसे वात-कफ-जनित-रोग मस्तक-शूल अंग-भंग (चोट आदि) का शमन हो जाता है ॥ ४० ॥

दशमूलकाथः ।

दशमूलकषायं तु सपौष्कर-कणान्वितम् ।
सन्निपातज्वरे देयं श्वास-कास-तृषान्विते ॥ ४८

दशमूल के क्वाथ में पुहकरमूल-पीपल चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे श्वास-कास-प्यास-सहित-सन्निपात-ज्वर नष्ट होता है ॥ ४८ ॥

पंचमूलादिकाथः ।

पंचमूली किरातादिगणो योज्यस्त्रिदोषजे ।
पित्तोत्कटे च मधुना कणया वा कफोत्कटे ॥४९

लघुपंचमूल चिरायता नागरमोथा गिलोय सोंठ इन औषधियों का काथ त्रिदोष-जनित-ज्वर में प्रयुक्त करना चाहिए । पित्त-प्रधान-त्रिदोप-ज्वर में शहद मिला कर कफ प्रधान में पीपल चूर्ण मिला कर प्रयुक्त करना चाहिए ॥ ४९ ॥

दार्वादिकाथः ।

दारुनागरभूनिम्बधान्यतिक्ताकालगकः ।
गजाह्वा दशमूलाब्दै मृत्युकल्पं ज्वरं जयेत ॥ ५०

× सन्निपात में सर्व-प्रथम कफ-नाशक उपाय करना चाहिए कफ के क्षीण होने पर शरीर हल्का तथा प्यास शान्त हो जाती है ।

सन्निपाते प्रकम्पन्तं प्रलपन्त न्नबृंहयेन् ।
तृष्णादाहाभिभूतेषु न दद्याच्छीतलंजलम् ॥१॥

सन्निपात-ज्वर में कांपते तथा प्रलाप करते हुए रोगी को बृंहण-द्रव्य—घृत मांस आदि नहीं देना चाहिए और प्यास व दाह पीड़ित को शीतल-जल नहीं देना चाहिए ॥ १ ॥

देवदारु सौंठ चिरायता धनिया कुटकी इन्द्रजौ गजपीपल दशमूल नागरमोथा इन औषधियोंका काथ मृत्युरूप ज्वर को नष्ट करता है ॥ ५० ॥

बृहत्यादि-गणः

बृहत्यौ पौष्करं भार्ङ्गी शठी शृंगी दुरालभा ।
वत्सकस्य च बीजानि पटोलं कटुरोहिणी ॥५१
बृहत्यादिगणः प्रोक्तः सन्निपातज्वरापहः ।
कासादिषु च सर्वेषु देयः सोपद्रवेषु च ॥५१ ॥

छोटी कटेरी बड़ी कटेरी पुहकरमूल भारंगी कचूर काकड़ासिंगी धमासा इन्द्रजौ परवल की पत्तियाँ कुटकी इन औषधियों के काथ को सन्निपात-ज्वर, उपद्रव-सहित समस्त कास रोगों में देना चाहिए। "सन्निपात के उपद्रव खाँसी श्वास पसली-दर्द पर अनुभूत है" ५१—५२ ॥

कट्फलाद्यवलेहः

कट्फलं पौष्करं शृंगी व्योषं यास श्च कारवी।
श्लक्ष्ण-चूर्णीकृतं चैतन्मधुना सह लेहयेत् ॥५३
एषावलेहिका हन्ति सन्निपातं सुदारुणम् ।
हिक्कां श्वासं च कासं च कण्ठरोगं नियच्छति ॥ ५४

कायफल पुहकरमूल काकड़ासिंगी सौंठ, मिर्चस्याह पीपल यवासा (जवासा) कलौंजी इन के कपड़-छन चूर्ण में शहद मिला कर चटाने से दारुण-सन्निपात हिचकी श्वास खाँसी तथा कण्ठ के रोग नष्ट हो जाते हैं। ५३—५४ ॥

अञ्जनम्

शिरीषबीजं मरिचं वस्तमूत्रेण तत्समम् ।
अञ्जनं तदभिन्यासे संज्ञा-बोधनमिष्यते ॥ ५५

सिरस के बीज स्याहमिर्च को बकरे के मूत्र में पीस कर नेत्रों में आञ्जने से—बेहोशी दूर हो कर संज्ञा-लाभ होता है ॥ ५५ ॥

शिरीषबीज-गोमूत्र-कृष्णामरिच-सैन्धवैः ।
अञ्जनं स्यात्प्रबोधाय सरसोन-शिलावचैः॥५६

सिरस के बीज पीपल स्याहमिर्च सैन्धानमक लहसुन मनसिल वच इन औषधियों को गोमूत्र में पीस कर आञ्जना चाहिए, इस के प्रयोग से तंद्रा बेहोशी दूर हो कर ज्ञान-लाभ होता है ॥ ५६ ॥

अपरः कट्फलाद्यवलेहः

कट्फलं पौष्करं कृष्णां भार्ङ्गी च मधुना सह ।
श्वासकासज्वरहरः श्रेष्ठो लेहः कफान्तकृत् ॥५७

कायफल पुहकरमूल पीपल भारंगी—को शहद के साथ चाटने से श्वास कास-ज्वर तथा कफ नष्ट होता है ॥ ५७ ॥

अभिन्यासज्वर चिकित्सा

कारवीपुष्करैरण्ड-त्रायन्ती-नागरामृताः ।
दशमूली शठी शृंगी यास भार्ङ्गी पुनर्नवा ॥५८
तुल्या मूत्रेण निष्क्वाथ्य पीताःस्रोतो विशोधनाः।
अभिन्यासज्वरं घोरमाशु घ्नन्ति समुद्धतम् ॥५९

कलौंजी पुहकरमूल एरण्ड की जड़ त्रायमाणा सौंठ गिलोय दशमूल कचूर काकड़ासिंगी जवासा भारंगी सांठ इन औषधियों का गोमूत्र में काथ बनाना चाहिए, इस के प्रयोग से भयङ्कर अभिन्यास-ज्वर नष्ट हो कर संज्ञा-लाभ होता है। ५८—५९

त्रिवृतादिक्वाथः

त्रिवृद्विशालाकटुका त्रिफलारग्वधैः कृतः ।
सक्षारो भेदनः क्वाथः पेयः सर्वज्वरापहः ॥ ६०

निसोथ इन्द्रायण की जड़ कुटकी त्रिफला अमलतास का गूदा इन औषधियों के काथ में जवाखार मिला कर पान करने से समस्त-ज्वर नष्ट हो जाते हैं रेचक है ॥ ६० ॥

तिक्तादि-क्वाथः

तिक्ताभया त्रिवृद्दन्तीत्रायन्ती राजवृक्षकः ।
क्षाराढ्यः सैन्धवोपेतः क्वाथो भेदीज्वरापहः॥ ६१

कुटकी बड़ी हैड़ का छिलका निसोथ दन्ती की जड़ त्रायमाण अमलतास का गूदा इन औषधियों के क्वाथ में जवाखार तथा सैन्धा-नमक मिला कर सेवन करना चाहिए, यह ज्वर-नाशक तथा रेचक है ॥ ६१ ॥

मधूकसारादिनस्यम् (नसवार)

मधूकसार सिन्धूत्थ बचोषणकणाः समाः ।
श्लक्ष्णं पिष्ट्वाऽम्भसा नस्यं कुर्यात्संज्ञाप्रबोधनम् ६२

महुए का रस सैन्धा नमक वच सौंठ पीपल इन को पानी द्वारा बारीक पीस कर संज्ञा (ज्ञान) उत्पन्न करने के लिए नसवार देना चाहिए ॥ ६२ ॥

सैन्धवादि-नस्यम्

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपाः कुष्ठमेव च ।
वस्तमूत्रेण पिष्टानि नस्यं तन्द्रानिवारणम् ॥ ६३

सैन्धा-नमक सैंहजने के बीज सरसों कूठ इन को बकरे के मूत्र में पीस कर नसवार देने से तन्द्रा (ग़नूदगी) दूर हो कर संज्ञालाभ होता है ॥ ६३ ॥

जीर्णज्वर चिकित्सा

पिप्पली-चूर्णसंयुक्तः क्वाथश्छिन्नोद्भवः खलु ।
जीर्णज्वर-कफध्वंसी पंचमूलीकृतोऽथवा ॥ ६४

गिलोय अथवा पंचमूल के क्वाथ के साथ पीपल का चूर्ण सेवन करने से जीर्णज्वर (पुराना बुखार) तथा कफ नष्ट होता है । ६४ ॥

निदिग्धिकादिक्वाथः

निदिग्धिका नागरकामृतानां-
क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ।
जीर्णज्वरारोचककासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यार्दित-पीनसेषु ॥ ६५ ॥

जीर्णज्वर अरुचि कास शूल श्वास अग्निमन्द अर्दित तथा पीनस रोगों में छोटी कटेरी सौंठ गिलोय इन के क्वाथ में पीपल चूर्ण मिला कर सेवन करना चाहिए । ६५ ॥

विषमज्वर-चिकित्सा

मुस्तामलकगुडूचीविश्वौषधकण्टकारिकाक्वाथः ।
पीतः सकणाचूर्णःसमधुर्विषमज्वरं हन्ति ॥६६॥

नागरमोथा आमला गिलोय सौंठ छोटीकटेरी इन औषधियों के क्वाथ में पीपल चूर्ण तथा शहद मिला कर सेवन करने से विषमज्वर नष्ट होता है । ६६ ॥

तृतीयज्वर-चिकित्सा

महौषधामृतामुस्तचन्दनोदीच्यधान्यकैः ।
क्वाथस्तृतीयकं हन्ति शर्करामधुयोजितः ॥ ६७

सौंठ, गिलोय, नागरमोथा सुर्ख़ चन्दन सुगन्धवाला (नेत्रवाला) धनिया इन के क्वाथ में देशी चीनी तथा शहद मिला कर तृतीयकज्वर (तिजारी) में सेवन करना चाहिए । ६७ ॥

अपामार्गजटां कट्यां लोहितैः सप्ततन्तुभिः ।
बद्ध्वा वारे रवेस्तूर्णं ज्वरं हन्ति तृतीयकम् ॥६८

रविवार को सात सुर्ख़ धागों से चिरचिटे (अपामार्ग) की जड़ को कटि-भाग में बाँधने से शीघ्र तिजारी बुखार नष्ट होता है ॥ ६८ ॥

चातुर्थिक-चिकित्सा

वासाधात्रीस्थिराशुण्ठी धान्यपिप्पली साधितः ।
सितामधुयुतः क्वाथश्चातुर्थिक-निवारणः ॥६९

अड़ूसा आमला शालपर्णी सौंठ धनिया पीपल इन का क्वाथ मिश्री तथा शहद के साथ चातुर्थिक

(चौथय्या) ज्वर को नष्ट करता है ॥ ६९ ॥

अगस्तिनस्यम्

अगस्तिपत्रस्य रसो नस्यं चातुर्थिकापहम् ।

अगस्तिया की पत्तियों के स्वरस का नस्य चातुर्थिक-ज्वर को नष्ट करता है ।

धूपः

पलंकषा-वचा-कुष्ठ-निम्बपत्र-यवैः कृतः ॥ ७० पथ्यासिद्धार्थकै धूप उक्तः सर्वज्वरापहः ।

गूगल बच कूठ नीम की पत्तियां जौ बड़ी हरड़ का छिलका पीली सरसों इन औषधियों की धूप समस्त ज्वरों को नष्ट करती है ॥ ७० ॥

वैडालं वा शकृद्योऽयं वेपनानस्य धूपनं ॥७१॥

काँपते हुए रोगी को विलाव के मल की धूप देनी चाहिए । ७१ ॥

चातुर्थिकज्वरे पथ्यादिक्वाथः

पथ्यास्थिरानागरदेवदारु-
धात्रीवृषै रुत्क्वथितः कषायः ।
सितोपलामाक्षिकसंप्रयुक्तः
चातुर्थिकं हन्त्यचिरेण पीतः ॥ ७२ ॥

बड़ी हरड़ का छिलका शालपर्णी सौंठ देवदारु आमला अडूसा इन औषधियों का क्वाथ मिश्री और और शहद मिला कर चातुर्थिक-ज्वर (चौथय्या) में सेवन करना चाहिए ॥ ७२ ॥

पिप्पल्यादि-घृतम् *

पिप्पल्य श्चन्दनं मुस्तमुशीरं कटुरोहिणी ।
कलिंगका स्तामलकी शारिवातिविषा स्थिरा ॥७३
द्राक्षामलकनिम्बानि त्रायमाणा निदिग्धिका ।
सिद्धमेतद्घृतं सद्यो जीर्णज्वर-मपोहति ॥ ७४
क्षयं कासं शिरः-शूलं पार्श्वशूलं हलीमकम् ।
अर्शोऽभितापमग्निं च विषमं सन्नियच्छति ॥७५

पीपल सुर्ख-चन्दन नागरमोथा खस कुटकी इन्द्र-जौ भुई-आंवला अनन्तमूल अतीस शालपर्णी दाख आमला नीम की छाल त्रायमाणा छोटी कटेरी इन औषधियों का कल्क कल्क से ४ गुणा गौ का घी, घी से चौगुना जल सबको एकत्र कर पकाना चाहिए घृत-मात्र शेष रहने पर छानलें, इसके प्रयोग से जीर्ण-ज्वर (पुराना बुखार) क्षय खाँसी सिरदर्द पसलीदर्द हलीमक (कमलवाय का रूपान्तर) बवासीर जलन विषमाग्नि प्रभृति रोग नष्ट होते हैं । ७३—७४—७५

कल्याणकं षट्पलं वा घृतं जीर्णज्वरे पिबेत् ।

अथवा जीर्णज्वर में "कल्याणक" या "षट्पल" घृत सेवन करना चाहिए ।

यत्राधिकरणेनोक्ति गंणे स्यात्स्नेह-सम्विधौ ।
तत्रैव कल्कनिर्यूहाविष्येते स्नेहवेदिना ॥ १ ॥

* स्नेह प्रकरण में जहां पर गण विशेष से स्नेह सिद्ध करना निर्देश किया हो वहां पर कल्क क्वाथ के निर्देश नहीं होने पर उन गण-कथित औषधियों के क्वाथ व कल्क से स्नेह सिद्ध करना चाहिए साधारण-अवस्था में—गण विशेष के नहीं होने पर कल्क क्वाथ के न कहने पर केवल कल्क से स्नेह सिद्ध करना चाहिए । १ ॥

क्वाथ की औषधियों में चौगुणा जल गेर कर पकावें शेष रहने पर छानलें—इस क्वाथ से चौथाई स्नेह, स्नेह से चौथाई कल्क—से स्नेह सिद्ध करना चाहिए ।

पंचप्रभृति यत्र स्यु द्रवाणि स्नेह-सम्विधौ ।
तत्र स्नेह-समान्याहु रर्वाक् च स्या च्चतुर्गुणम् ॥ २॥

जिस स्नेह विधान में ५ या अधिक द्रव —जल दूध छाछ प्रभृति हों वहां पर सब स्नेह के बराबर लेने चाहिएँ । ५ से कम ४ या ३ हों तो सब स्नेह से चतुर्गुण लेने चाहिए । २ ॥

स्नेहपरीक्षा—जब स्नेह प्रक्षिप्त कल्ककी बत्तीसी बनने लगे, अग्नि पर गेरने से चट् चट् नहीं हो तैल में झाग उठने लगे तथा घी में झाग उठने बन्द होजाय गन्ध वर्ण रस की साधु निर्मिति हो जाय तब स्नेह सिद्ध (तय्यार) समझना चाहिए ।

शिशु-परिचर्या-शतक

लेखक—राजवैद्य पं० शीतलप्रसाद जैन

जन्म-समय—नव-जातक स्वस्थ-शिशु के शरीर की तोल ६ पौंड से ७ पौंड तक होती है और लंबाई १९ से २० इंच तक, पुत्रीकी अपेक्षा पुत्र का भार और लम्बाई कुछ अधिक होती है। १० दिन तक शरीर का भार प्रायः इतना ही रहता है। इस के बाद शिशु का वजन क्रमशः बढ़ने लगता है। जो ६ मास तक प्रति सप्ताह ४ औंस तक बढ़ता देखा गया है। यदि शिशु का वजन क्रमशः इससे घटता जाय और बढ़े नहीं तो जानना चाहिये कि या तो बालक को कोई रोग होगया है या पुष्टि का अभाव है। इस जांच पर हमेशा ध्यान रखना चाहिये। इसका विशेष विवरण यथा स्थान आगे लिखेंगे।

...जन्म लेने के समय शिशु के समस्त-शरीर पर एक श्वेत-स्निग्ध लहसदार-रतबत चिपटी रहती है—जो स्नान कराने पर स्वयं छूट जाती है यदि वह चिपकी रहे तो उसे बल-पूर्वक मलकर न उतारें वह खुश्क होकर दूसरे-तीसरे स्नान से स्वयं उतर जाती है।

शिशुका श्वासोच्छ्वास लेना—शिशु के जन्म ग्रहण करने के पश्चात उसके मुखमें उंगली डालकर मुह के अन्दर की सारी लहसदार रतूबत निकाल गले को तुरंत शुद्ध कर देना चाहिये-गले के साफ होते ही शिशु रुदन करने लगता है जो इस बात का प्रधान-लक्षण होता है-कि उसको सांस आने लग गया वह जीवित है। यदि बालक रुदन न करे तो फौरन श्वसन-क्रियाजारी करने के लिये निम्नलिखित-उपाय करने योग्य हैं।

१—शिशु के मुख पर फौरन ठण्डे जल के छींटे मारें-ऐसा करने से वह सुबकियां लेकर रोने लगे-तो ठीक है नहीं तो यह दूसरा यत्न करें।

२—बालक को ठण्डे जलमें गरदन तक डबोकर फौरन निकाल लें ऐसा करने से यदि वह सिसकियां लेकर रोने लगे तो खैर, वरना-यह तीसरा उपाय करें।

३—बच्चे को प्रथम-उष्ण जल में गरदन तक बिठावें फिर उसमें से निकालकर फौरन ठण्डे पानी में बिठावें ४—५ बार पुनः पुनः गरम और ठण्डे जल में बिठावें ऐसा करने से प्रायः शिशु सुबक ले कर रोना आरंभ कर देता है। नहीं तो यह चौथा यत्न करें।

४—यदि शिशु के मुख और नेत्रों में नीलापन कलौंस-लिये हुए दिखलाई दे, तो फौरन क़ायदे के साथ नाल को काटकर उसे बालक की नाभि की तरफ से ऊपर को सूंतकर १—२ तोला रक्त निकालदें और नाल यथा-विधि बाँध दें यदि बालक अब भी न रोए। तो इस अन्तिम विधि से कृत्रिम श्वास जारी करना चाहिये।

५—शिशु को इस प्रकार सीधा चित लिटावें कि उसके दोनों कन्धे शरीर से कुछ ऊंचे रहें किन्तु सिर ज़रा नीचा हो फिर दोनों कुहनियों से बालक की दोनों भुजाओं को पकड़कर ऊपर को सीधा सिर की तरफ खैंचें और बच्चे के मुंह में फूंक मारें जिससे वायु उसके फेफड़ों में चली जाय फिर उसकी दोनों भुजाओं

को छाती पर ले जाकर नरमी से दबादें-ताकि छाती पर दबाव पड़ने से उसके अन्दर की वायु दब कर बाहर निकल जाय–फिर इसी प्रकार भुजाओं को ऊपर सिर की तरफ उठाकर मुंह में फूंक मारें और फिर दोनों बाहुओं को उसी तरह छाती पर दबावें दो घंटेतक इस क्रिया को करने से यदि बालक को सांस आने लगे तो जीवित-अन्यथा मृत समझना चाहिये।

किसी का मत है कि नाल को अग्नि छुआने या थोड़ा गरम करने से तथा बालक की गुदापर बरफ का टुकड़ा लगाने से बच्चा रोने लगता है।

शिशु का नाल काटना—जब शिशु रुदन करे तो फौरन बालक की नाभि से चार अंगुल ऊपर नाल में एक सूत के धागे से मजबूत बन्धन लगादें फिर इस बन्धन से चार अंगुल की दूरी पर एक और वैसा ही बन्धन बांधदें फिर किसी तेज कैंची या चाकू से दोनों बन्धनों के बीच में से नाल को काट दें। और नाल का वह भाग जो काट देने के पश्चात् बालक की नाभि से जुड़ा रहता है उसमें कोई नरम फीता या धागा बांध कर बालक के गले में माला की तरह पहना दें। नाल को तैल से चिकना करके उसपर बारीक पिसा हुआ सुहागा बुर-बुरादें, नाल ४–५ दिन तक स्वयं सूख कर गिर जाता है।

कभी २ जब बालक के मुखपर फीकापन या निर्बलता झलकती हो तो प्रथम नालको बालक के पेट की तरफ जरा सूँतना चाहिये जिससे कि नालका रक्त शिशु के उदर में चला जाय फिर उपरोक्त-कर्तन-बन्धन-विधि करनी चाहिये।

जब शिशु के जन्म में साधारण से कुछ अधिक समय लगता है–या कष्ट होता है–या उसकी गरदन में नाल का फन्दा पड़ जाता है अथवा शिशु के सिर के साथ नाल बाहर निकल आती है तो बड़ी कठिनाई का सामना होता है। क्योंकि जिस नाल के मार्ग से बच्चे के अन्दर रक्त जाया करता है जिससे कि वह जीवित रह सकता है और जब कि उसी नाल पर किसी प्रकार का दबाव पहुंचे तो फिर बालक का दौरान-खून बन्द होकर वह मरणोन्मुख हो जाता है। ऐसी दशा में चतुर दाई का कर्तव्य है, कि वह तत्काल नाल के फन्दे को गले से अलग करदे अथवा पूर्वोक्तविधि से तुरन्त नाल को काट दे। नाल बांधने के अनन्तर गौर से देखलें कि उसमें रक्त तो नहीं आता।

नाल काटनेके पश्चात् शिशु को २ चावल सोने का बुरादा या वरक, १० बूका मोती-२ चावल बारीक पिसा हुआ आमला-२ चावल पिसी हुई ब्राह्मी बूटी, १० बूंद शुद्ध मधु सबको एकत्र करके तर्जनी उंगली से थोड़ा२ बालक को सायं प्रातः चटादें यह प्रयोग ३ दिन तक करें इसके सेवन से बालक सदैव स्वस्थ बलवान बुद्धिमान एवम् श्रीमान होगा।

जब नाल ४–५ दिन में सूख कर गिर जाय तो उसकी जड़ सूखने तक बारीक पिसा हुआ सुहागा बुरबुराते रहें।

नाल काटने से प्रथम गांठ लगाने का कारण यह है कि यदि नाल काटने से प्रथम गांठ न लगाई जाय तो नाल से रक्त बहकर बालक निर्बल हो जायगा यदि रक्त अधिक निकल गया तो बालककी मृत्यु भी हो सकती है। उधर आँवल का रुधिर निकलजानेसे उसका भार घट जायगा जिससे उसके बाहर आनेमें कठिनाई होगी जिस से कि जच्चा का मरण तक हो सकता है। यदि गर्भ में दूसरा बालक हुआ तो वह भी मर सकता है। इसलिये बिना दोनों बन्धन लगाए नालको कदापि नहीं काटना चाहिये।

शिशु का स्नान—नाल-बन्धनके प्राथमिक-कर्तव्यके अनन्तर शिशु की आँख-नाक-कान-मुख को भली भांति शुद्ध करके थोड़ा बारीक बेसन मलकर सुखोदकसे स्नान करावें। और एक साफ सुथरे नरम अंगोछे से बगलों-जंघासों एवं सम्पूर्ण शरीर को पोंछ कर खुश्क करके जरासा मीठा तैल मलदें। और उस के शरीर के सम्पूर्ण अवयवों को अच्छी तरह देखलें कि उन में कोई—अप्राकृतिक-दोष या विकार तो नहीं है। क्योंकि कभी २ देखने में आया है कि बालक के मूत्र या पुरीष के छिद्र यथा स्थान नहीं होते। ऐसी अवस्था में तत्काल किसी अनुभवी-चतुर वैद्य या डाक्टर से सहायता लेनी चाहिये।

इस देख-रेख के पश्चात् शिशु को एक हल्का मुलायम-गरम वस्त्र उढा कर या पहनाकर नरम विस्तर पर माताके पास उत्तम गृह में जहाँ गुल शोर शीतल वायु का संचार न हो तथा प्रकाश से बालक के नेत्रों को कष्ट न पहुँचे, सुलादें। नवजात शिशुके नेत्र इतने कोमल होते हैं कि अभी तेज प्रकाश को सहन नहीं कर सकते।

प्रथम-दिवस के स्नानके पश्चात जब नाल सूखकर गिर जाय तब से प्रति-दिवस एक या दो बार बालक को स्नान कराना स्वास्थ्य दृष्टि से परमावश्यक है। बालक चाहे कितनाही छोटा हो स्नान कराना उसे लाभदायक है। क्योंकि स्नान से रक्त-संचारको उत्तेजना प्राप्त होती है। जन्म ग्रहण करनेके पीछे कई सप्ताह तक तो बालक को सुखोष्ण जल से ही स्नान कराना मुनासिब है—अनन्तर बालक ज्यों २ स्याना होता जाय उसे ऋतु के अनुसार-उष्ण-सुखोष्ण-शीतल जलसे नरमीसे मलमल करमैल उतारते हुये स्नान कराना चाहिये, ध्यान रहै अत्यंत शैशव काल में शिशुओं को शीतका अधिक सहन नहीं होता है इसलिये शीत ऋतु में शिशु को वायु से बचा कर अग्निके निकट स्नान करावें और स्नान के पश्चात् जल्दी से वस्त्र पहनादें और ३-४ घंटे तक बाहर हवामें न ले जायँ। छोटे बालकों को बहुत सवेरे भी स्नान न करावें इस से ठण्ड लग जाना सहज है स्नान का विशेष वर्णन यथा स्थान होगा।

शिशु की उदर-शुद्धि— जन्म के किञ्चित् समय पश्चात् बालक को एक काले रंग का पतला-सा दस्त आ जाया करता है यदि ऐसा नहो तो बालक के पेट के अन्दर रहने वाला दोष-कारक मल जिस का उदर से बाहर निकल जाना बहुत जरूरी है उसको निकालने के लिये प्रयत्न करना चाहिये सब से अच्छा यत्न तो बालक का उदर शुद्ध करने के लिये माता का प्रथम पेवस दूध bolosbrum है जो स्वाभाविक छाती के दूध से अधिक पीला होता है और इसकी मृदु विरेचन शक्ति बालक के प्रथम मल को निकालने में बहुत सहायता करती है। जिसमें बालक के लिये दो प्रकारके lactalbume और ... Globuline सुखकर पदार्थ देवस्त होते हैं बालक को जहाँ तक हो सके ये ही मिलना चाहिये—किन्तु पहलोठी जच्चा को दूध तीसरे या चौथे दिन आता है—इसलिये ३ माशे अरण्डी का तेल और १॥ माशा मधु मिलाकर बालक को २-२ बूँद जबान पर डाल कर चटादें ताकि खुल कर एक दस्त आकर पेट साफ हो जाय अथवा यह घुट्टी पिलायें—अमलतास का गूदा सना-तिरायमान वावडंग वावखुम्बा नर कचूर सौंफ मुनक्का-दाख हड़ छोटी बड़ी हड़का वकल गुलाबके फूल-सब दो दो माशे मीठा खांड ६ माशे १० तोला जल में उबाले जब चौथाई रहे छानकर कपड़े की चुसनी से दिन भर में चार बार करके पिलादें।

नवजात शिशु को ४-५ दिवस तक स्याही मायल मल आया करता है जो पश्चात् पीला हो जाया करता है। बालक को प्रति दिन २ से ४ बार तक मल आना चाहिये इससे अधिक आना रोग है यदि एक अहोरात्री में दस्त न आवे तो अवश्य उपरोक्त घुट्टी पिलादें।

शिशु को दूध पिलाना—नवजात शिशु को स्नान के पश्चात् कई घंटे तक आराम से सोने दें इसी समय में उस की माता भी काफी सो चुकेगी—अब जच्चा के स्तनों को सुखोष्ण जल से भलीभाँति धोकर पोंछ कर दुग्ध-पान कराने की इच्छा से प्रेम और स्नेह से मुदित माता अपने शिशु को स्तनों में लगावे जिससे कि स्तनों के कठिन हो जाने से प्रथम ही बालक स्तन वृन्तों को खैंच कर बढ़ाले। इस से और भी अनेक लाभ हैं।

१—जब शिशु स्तन वृन्तों को चूसता है तो स्तनों में दुग्ध उत्पन्न करने वाली शक्ति की जागृति हो कर दुग्ध उत्पन्न होना आरम्भ हो जाता है—और माता अच्छी दुधैल हो जाती है।

२—चूँकि गर्भाशय और स्तनों का परस्पर स्नायविक-सम्बन्ध है, जब बालक स्तन-वृन्त को मुख में लेकर खैंचता है तो बढ़ा हुआ गर्भाशय संकुचित हो कर अपनी असली हालत पर आना शुरू हो जाता है जो प्रसूता को अत्यन्त लाभदायक है।

३—दुग्ध के निकलने से स्तनों में तनाव या कठिनता न हो कर जच्चा दूध के बुखार (Milk fever) से बच जाती है।

४—बालक को दूध न पिलाने से दुग्ध की रुकावट हो कर कभी २ छाती में एक प्रकार का फोड़ा हो जाता है जो महीनों और बरसों तक कष्ट देता है। इसका विशेष वर्णन जच्चा के रोगों में करेंगे।

५—पहला पेविस दुग्ध जो प्राकृतिक मृदु-रेचक गुणयुक्त होता है जिसको पान करने से-बालक के अनेक विषैले दोषों से उदर शुद्ध होकर बालक स्वस्थ और दीर्घ जीवी हो जाते हैं।

अतएव माता को उचित है कि प्रथम दिवस से ही अपने प्यारे शिशु को अपना ही दुग्ध पान करावे—क्योंकि यह उसका प्राकृतिक भोजन है। जो प्रकृतिदेवी ने बालक के जन्म ग्रहण करने के साथ साथ माता के स्तनों में भर दिया है। जब तक बालक पेट के अन्दर होता है। तब तक दुग्ध भी उत्पन्न नहीं होता किन्तु बालक के जन्म ग्रहण करते ही दुग्ध उत्पन्न होकर बहने लगता है। इस से विदित होता है कि माता को अपने बालक को अपना दुग्ध पान कराना प्रकृतिदेवी की आज्ञा का पालन करना है। जिस में कि माता और बच्चा दोनों ही का स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है।

नन्हे-बाल शिशु के लिये अपनी जन्म-दातृ माता के दुग्ध के समान ऐसा कोई भी सात्म्य-अनुकूल आहार नहीं है जो उसे स्वास्थ्य-तनदुरुस्त एवम् बलवान् बना सके क्योंकि प्रकृतिदेवी ने माता के दुग्ध ही में शिशु के स्वभाव के अनुकूल-जीवन-स्वास्थ्य बलदायक अनेक पोषण अंश निहित कर दिये हैं।

—अपूर्ण

जीवन-सुधा

लेखक—श्रीयुत पं० लालाराम जैन शास्त्री

यह शब्द दो शब्दों से मिल कर बना है एक जीवन दूसरा सुधा शब्द। इस जीव के जीवित रहने को जीवन कहते हैं और सुधा शब्द का अर्थ अमृत है। इस प्रकार जो जीवन के लिये अमृत के समान हो उसको जीवन सुधा कहते हैं।

जीवन के लिये अमृत के समान अनेक-औषधियां पौष्टिक-भक्ष्य-पदार्थ और औपचारिक उपाय हैं। जीवन-सुधा शब्दसे इन सबका संग्रह हो जाता है।

वास्तव में देखा जाय तो इस जीवके जीवित रहने का साधन शरीर और आयुःकर्म है। आयुःकर्म यद्यपि पौद्गलिक पिंड है, तथापि वह अत्यन्त सूक्ष्म है और इसी जीवके सूक्ष्म परिणामों द्वारा बंध अवस्था को प्राप्त हुआ है। अतएव उसकी बागडोर स्वयं उसके हाथ है, उसमें अन्य किसी का दखल नहीं है।

परंतु शरीर स्थूल पौद्गलिक-पिंड है स्थूल ही पौद्गलिक पिंडों से बना है, और स्थूल ही पौद्गलिक पिंडोंसे वृद्धिको प्राप्त हुआ है, इसलिये उसका उपकारक भी स्थूल पुद्गल और अपकारक भी स्थूल-पुद्गल पिंड है। यथा—अधिक भोजन करने से या अरुचिकारक एवं हानिकारक भोजन करने से, तथा शीत उष्ण की अधिक-बाधा सहने से, इस शरीर में अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न हो जाते हैं वे सब रोग उचित औषधियाँ देने से, समुचित-उपचार करनेसे शान्त भी हो जाते हैं। इसी प्रकार समुचित-पौष्टिक-पदार्थों से वा रस-सिद्ध-औषधियों से यह शरीर यथेष्ट बलवान और कान्तिमान भी बन जाता है। इससे सिद्ध होता है कि इस शरीर की रक्षा एवं नाश [illegible] पिंड के हाथ है।

पुद्गल द्रव्य का परिणमन अपने आप भी होता है और करने से भी होता है। जैसे आम स्वयं भी पकता है और पकाने से भी पकता है। जिन पुद्गल द्रव्योंका परिणमन मनुष्य-कृत उपायोंसे होता है उनके परिणमन द्वारा यह जीव अनेक शरीरों का अपकार वा उपकार कर सकता है। यही कारण है कि शरीर की रक्षा वैद्यों के हाथ में है। इस लिये यह कहने में भी कोई अत्युक्ति नहीं है कि एक प्रकार से जीवन-सुधा वैद्य ही है।

सुचतुर-अनुभवी वैद्य शरीरकी रक्षाके लिये जिन जिन सिद्ध रसायनादि औषधियों का प्रयोग करते है उनको भी जीवन-सुधा कहते हैं। इसी प्रकार जीवन रक्षा के लिये जो औपचारिक उपाय होते हैं उनको भी जीवन सुधा कहते हैं तथा उन सिद्ध रसायनादिक औषधियों के प्रयोगों को वा जीवन रक्षा के लिये

शास्त्री जी दर्शन शास्त्र के प्रकाण्ड-पण्डित हैं दार्शनिक-प्रवृत्ति से प्रेरित होकर ही यह रचना की गई है। —सम्पादक

समुचित-रूप में आने वाले औपचारिक-उपायों को बतलाने वाले जो ग्रन्थ हैं वा जो पत्र हैं उनको भी जीवन-सुधा कहते हैं।

परिचय से मालूम हुआ है इस पत्र में जीवन की रक्षा का उपदेश देने वाले अनेक अपूर्व निबन्ध ग्रन्थादिक प्रकाशित किये जायंगे, अनेक-अलभ्य-अनुभूत औषधियों के प्रयोग बतलाये जायंगे, अनेक-रोगों के निदान चिकित्साएँ बतलाई जायेंगी तथा अनेक ऐसे उपाय बताये जायंगे जिनको काममें लानेसे यह जीवन सदा नीरोग बना रहे। इन्हीं सब बातों का विमर्षण कर इस पत्रिका का नाम सार्थक "जीवन-सुधा" रखा है।

जीवन-सुधा का अर्थ जो कुछ ऊपर लिखा है वह सब औपचारिक या नाम निक्षेप-रूप है, वास्तव में जीवन सुधाका जो अर्थ है वह निराला ही है, और अत्यंत-संक्षेप से वह इस प्रकार है।

सुधा शब्द का अर्थ अमृत है जिससे फिर कभी भी मरण न हो उसको अमृत कहते हैं ऊपर जो कुछ अमृत की सामग्री बतलाई है उनसे यह जीवन सदा नहीं बना रहता किन्तु आयुःपूर्ण होनेपर नष्ट होता ही है। अत एव ऊपर कहे पदार्थों को सुधा कहने में संकोच करना पड़ेगा।

मरण का सर्वथा अभाव मोक्ष अवस्था में है, मोक्षका कारण रत्नत्रय-सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञान-विशिष्ट सम्यक्चारित्र है। इस लिये कहना चाहिये कि वास्तव में जीवन-सुधा सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान विशिष्ट सम्यक् चारित्र ही है।

सम्यक्-चारित्र आत्मा का स्वभाव है। काम-क्रोध माया-मोह राग-द्वेष आदि सब आत्मा के वैभाविक परिणाम हैं इन वैभाविक परिणामों को त्याग कर उत्तम-क्षमा मार्दव आर्जव शौच सत्य संयम तप त्याग आकिंचन्य-ब्रह्मचर्य आदि आत्मा के स्वभावोंका प्रकट होजाना सम्यक्चरित्र है वैभाविक-परिणामों का त्याग कर देने से तथा सम्यक् चारित्र को धारण करने से यह आत्मा सदा के लिये अजर अमर होकर परमात्मा बन जाता है। इसलिये वास्तव में जीवन-सुधा सम्यक् चारित्र ही है।

गृहस्थों के लिये जीवन सुधा सम्यक् चारित्र का अंशरूप सदाचार है। वास्तव में देखा जाय तो सदाचार पूर्वक अपना जीवन निर्वाह करने से शरीर में कोई रोग होता ही नहीं है, और होता है तो सदाचार से नष्ट हो जाता है। अतएव जीवन-सुधा अपने सहृदय पाठकों को आदेश देती है कि वे सदाचार पूर्वक ही अपना जीवन निर्वाह करें जिससे इस लोक में भी उनको कोई कष्ट न हो और परलोक में भी वे मोक्ष के समीपवर्ती होते चले जायँ। इति

नियम
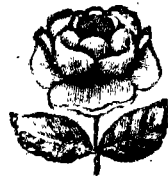
(१) यह पत्रिका प्रत्येक मास की पहली तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) रुपया, ६ मास का २) नमूना प्रति ।) है।

(३) प्रत्येक रोगी को रोग विषयक एक प्रश्न मुफ्त छपाने का अधिकार है, अधिक के लिए ।) प्रति प्रश्न के हिसाब से भेजना चाहिए।

(४) प्रश्नोत्तर, आयुर्वेदिक, यूनानी, एलोपैथिक, होम्योपैथी सम्बन्धि लेख, कविता, गल्प, प्रहसन आदि प्रकाशन-सम्बन्धि-सामग्री प्रत्येक व्यक्ति को भेजने का अधिकार है।

(५) उत्तमोत्तम लेख, कविता, अप्रकाशित ग्रन्थों पर उपहार देने का नियम है।

(६) लेख के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने, कब किस प्रश्न का उत्तर छपेगा इसका अधिकार सम्पादक को है।

(७) समालोचनार्थ पुस्तक औषधि पत्र आदि प्रति वस्तु की दो प्रति आनी चाहिये।

(८) रुपया चैक वगैरह मैनेजर वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के नाम भेजना चाहिए।

(९) प्रकाशन-सम्बन्धि सामग्री सम्पादक "जीवन सुधा" के नाम भेजनी चाहिए।

(१०) पत्र लिखते समय अपना ग्राहक नं० अवश्य लिखना चाहिए।

प्रबन्धकर्ता—

वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार

जौहरी बाजार, देहली।

Reg. No. L.

सर से पैर तक के दर्दों की एक मात्र औषधि

* वृहत समीर पन्नग वटी *

(रजिष्टर्ड)

— रोग —

(१) वायु का सर दर्द
(२) कफ का सर दर्द
(३) रक्त का सर दर्द
(४) आधा सीसी का दर्द
(५) शंखक कनपटी का दर्द
(६) पित्त का सर दर्द
(७) सन्निपात का सर दर्द
(८) क्षय का सर दर्द
(९) अनन्त वात का दर्द
(१०) वात व्याधि का दर्द
(११) सूर्य के साथ२ घटने बढ़ने वाला सर दर्द

अनुपान—किसी कारण से शरीर के किसी भाग में दर्द हो, रोगी दर्द से बेचैन बेकल तड़फता हो, १ गोली ताजा जल से सेवन कराइये ५ मिनट में आप के सामने ही दर्द दूर होगा रोगी का आप पर विश्वास जम जायगा इसके अतिरिक्त गौण रूप से ज्वर की तेजी तथा नन्ही जुरी को दूर करती है।

की० ॥) (१४ गोलियाँ) पोष्ट खर्च अलग।

नोट—वैद्य, धर्मार्थ औषधालय, तथा म्युनिसिपल डिस्पेन्सरी के साथ खास रियायत की जायगी।

वृहत आयुर्वेदीय औषध-भाण्डार

जौहरी बाजार, देहली

गयादत्त प्रेस, क्लोथ मारकेट देहली में छपा।

सितम्बर-अक्तूबर १९३०　　　Tele No, 5174

वर्ष १　भाद्रपद-आश्विन सम्वत् १९८७ विक्रम, वीरनिर्वाण सम्वत् २४५६　अंक ६,७

जीवन-सुधा

सचित्र-मासिक-पत्रिका

A Monthly Ayurvedic Magazine

सम्पादक—

आयुर्वेदाचार्य—प्रो० पं० लोकमणि मिश्र शास्त्री

प्रकाशक—

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाजार देहली।

संसारसे त्रयताप के संताप को हर लीजिये, विस्तार घर-घरमें प्रभो "जीवन-सुधा" का कीजिये।
शास्त्र सम्मत-ज्ञाननिर्मित योग-शुभ बतलायगी, राष्ट्रकी-हित-कामना युत स्वास्थ्यको फैलायगी॥

वार्षिक मूल्य ३)　　　नमूना प्रति ।)

प्रिंटर तथा पब्लिशर—पं० महावीरप्रसाद त्रिपाठी वैद्यराज।

रसायन शास्त्री राज वैद्य श्री शीतलप्रसाद जैन रईस देहली

Murari Art Press Delhi.

ॐ

दीर्घजीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः ।
पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम् ॥

वर्ष १ | भाद्रपद, आश्विन—वीर निर्वाण सं० २४५६, वि० सं० १९८७, सन १९३० सितंबर १ | अङ्क ६ ७

हा ! स्वर्गीय वैद्य शीतलप्रसाद जी !

गत ५ सितम्बर को प्रातः काल के समय ६५ वर्ष की अवस्था में पत्रिका के संस्थापक स्थानीय सम्भ्रान्त वृद्ध वैद्य श्री पं० शीतलप्रसाद रसायन शास्त्री जी का स्वर्गवास हो गया। वैद्य जी देहली के प्राण थे आपके न होने से पत्रिका एवं देहली को जो क्षति उठानी पड़ी है चिरकाल तक उसका पूर्ण होना कठिन है वैद्य जी की जीवन-घटनाओं के सम्बन्ध में हमें कुछ नोट्स प्राप्त हुए हैं उन्हीं के आधार पर उनका संक्षिप्त-परिचय प्रकाशित करते हैं।

वैद्यजी का बाल्य-काल और विद्यार्थी-जीवन—

वैद्यजी बाल्य-काल से ही चतुर साहसी बच्चों में थे आप का बाल खेल उज्ज्वल-भविष्य का परिचायक होता था आप अपने पिता स्वर्गीय श्रीयुत जमनादास जी जैन वैद्य को रोगी परीक्षा करते देख कर बच्चों में खेलते समय बच्चों की नाड़ी देखते थे यही खेल आप के अभिरुचित खेलों में था जो आप की भावी उन्नति का परिचायक था।

पढ़ने के समय स्कूल में सदा अच्छे लड़कों में गिने जाते थे आप के मास्टर्स आप से बहुत प्रेम करते थे। आप इंगलिश हिन्दी उर्दू संस्कृत के विद्वान थे परन्तु गुजराती मराठी भली भांति बोल सकते थे। आप ने आयुर्वेद का अध्ययन अपने पिता जी के पास एवं यूनानी का अध्ययन देहली के प्रसिद्ध विद्वान स्वर्गीय हकीम मौलवी खैर उल्लाबेग साहब के समीप समापन किया था। एक रोगी निरीक्षण के समय अपनी सम्मति के विरुद्ध अपने पिता जी की सम्मति को देख

कर शास्त्रार्थ करने के लिए आबद्ध हो गये और अपने मत को परिपुष्ट करने के लिये पुस्तकों के अवलोकन में इतने तल्लीन हुए कि भोजन समय तक सुधि नहीं रही अंत में अपनी बात को मनवा कर ही खुश हुए।

साहित्य और कविता प्रेम—

सम्पन्न-गृह में उत्पन्न होने पर भी आपको खान पान का विशेष शौक नहीं था आप के शौक की सामग्री थी, साहित्य ! सामाजिक धार्मिक राजनैतिक लेखकों की पुस्तकों के अध्ययन मे अति-अधिक-प्रेम था । अतिरिक्त समय में आप नित-नई पुस्तकों का अध्ययन करते रहते थे । अपनी आयका एक बड़ा भाग साहित्य-संचय में व्यय करते थे । एतत्स्वरूप बहुत-सी पुस्तकें पुस्तकालयों को दान देते हुए भी आपका एक बृहत् पुस्तकालय है जिसमें १६ , १७ वीं शताब्दी तक की प्रकाशित अप्रकाशित पुस्तकें आपको मिलेंगी, आप के यहाँ माधुरी चाँद त्यागभूमि आदि सभी हिन्दी के उत्कृष्ट पत्र आते थे ।

कविता से भी आप को अत्यधिक-प्रेम था समय समय पर बड़ेबड़े कवियों के साथ कविता विमर्श करते रहते थे आप की कविताएँ अधिकाँश धार्मिक होती थी जिन में भक्ति श्रद्धा करुणा का आभास मिलता था "जीवन सुधा" के टाइटिल पेज पर और प्रथम अंक में प्रकाशित कविता आप की कवित्व-चातुरी की परिचायक है ।

साथ में आप हिन्दी के ओजस्वी लेखक भी थे । आप के लेख, आयुर्वेद विषयक-कहानियां जैन गजट आदि पत्रों में प्रकाशित होती रहती थी "जीवन सुधा" के प्रथम और द्वितीय अंक में प्रकाशित "शिशु-परिचर्या-शतक" नामक रचना से पाठक परिचित हैं ।

आप ने जैनधर्म-शास्त्रों का बहुत-कुछ अध्ययन करने के बाद "अर्हन्त-प्रवचन-कोष" नामक-ग्रन्थ का सम्पादन किया है इस में जैन-शास्त्रों में सूत्र-रूप से व्याख्यात जीव, इन्द्रिय, सप्ततत्त्व, आदि शब्दों का सरल-सर्व-बोध हिन्दी भाषा में उदाहरण-सहित विवेचन किया है आप इसको पूर्ण कर द्वितीय बार विवेचन कर ही रहे थे कि इसी श्रम में आराम की परवा न करने के कारण रोग-पीड़ित हो गये । जिस से जीवितावस्था में आप की यह इच्छा पूर्ण नहीं हो सकी आपने इस के प्रकाशन एवं विविध धार्मिक-संस्थाओं पुस्तकालयों को धर्मार्थ वितरण के लिए २०००) रुपया और ५००) रुपया विविध संस्थाओं के लिए दान दिया है ।

राजनीति और देश प्रेम—

आप उन राजनीतिज्ञों में तो न थे जिन का एक मात्र लक्ष्य नेतृत्व होता है और जेल की यन्त्रणाओं से भयभीत हो कर माफी मांग कर चले आते हैं आप शान्त-कार्य-कर्ता देशभक्तों में थे हिन्दु-मुस्लिम फिसादों को आप घातक समझते थे स्वराज्य विषयक आपका एक सिद्धान्त था—खादी प्रचार ! आप साम्यवादी सिद्धान्तों के पूजक थे और उन के अनुसार चलने वाले भी थे । गरीब-अमीर राजा-फकीर सबको समान रूप से निरीक्षण करते थे । गान्धीजी को आप सच्चा महात्मा समझते थे पिछले दिनों में जब कि महात्माजी देहली पधारे थे आपने अपने सुपुत्र श्रीयुत राजवैद्य पं० महावीरप्रसाद त्रिपाठी वैद्यराज को विशेष आग्रह से उनके दर्शन के लिए भेजा था ।

सर्व-धर्म प्रेम—

यद्यपि आप दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के थे परन्तु अन्य धर्मों पर भी आप का समान अधिकार प्रेम था

हर एक धर्म में ईश्वरीय-सत्ता का समावेश समझने वाले थे । वेद और गीता का प्रेम तो आपका दर्शनीय था । समय समय पर स्वयं मेरे साथ वैदिक चर्चा होती रहती थी । आप उन धर्मान्ध पुरुषों में नहीं थे जिनका एकमात्र कर्तव्य धार्मिक-पक्षपात होता है। विद्याव्यसनियों का आदर करना जानते थे आप के समस्त कर्मचारी प्रायः वैदिक सिद्धान्त के अनुयायी हैं

सार्वजनिक-जीवन और सुधारप्रियता—

आप देहली की कितनी ही संस्थाओं के अन्तरंग मैम्बर थे कार्य अति-अधिक होने के कारण प्रेसीडैन्ट बनाये जाने पर भी आप ने इस से विरत होना ही अच्छा समझा । स्थानीय वैद्य सभा के अन्तरंग मैम्बर और हीरालाल जैन हाईस्कूल के चैयरमैन भी बहुत अर्से तक रहे, आखिर समय नहीं मिलने से उसमें भी विरत होगये समय समय पर संस्थाओं को बहुत-सा दान भी देते रहते थे ।

गत मास में आप ने स्थानीय हीरालाल जैन हाई-स्कूल को ५०) रुपया, समन्तभद्राश्रम करौलबाग देहली को १५०) एवं श्री गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धान्त विद्यालय मोरेना (ग्वालियर) को १०१) रुपया दान दिया था इसी तरह आप समय समय पर विविध धार्मिक-संस्थाओं शिक्षासंस्थाओंका दान देते रहते थे ।

यहाँ पर आपने एक धर्मार्थ औषधालय भी खोला हुआ है जिस से सर्व-साधारण को धर्मार्थ औषधि वितरण की जाती है जिसमें लगभग १५०—२०० रुपये मास का खर्च होता है ।

सुधार कार्यों में आप बहुत दिल-चस्पी लेते थे पर्दा प्रथा, स्त्रीशिक्षा विरोध, बाल विधुर विवाह के आप कट्टर विरोधी थे इन को मौजूदा परिस्थिति के लिए घातक समझते थे ।

शिक्षा प्रेम—

शिक्षा से आप को घनिष्ठ प्रेम था आप ने अपने पुत्रों को भी सुशिक्षित बनाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी, आप स्वर्गीय छोटे पुत्र श्रीयुत विमलप्रसाद के विद्या व्यसन को देखकर आप मुग्ध हो जाते थे परंतु आपकी जीवितावस्था में ही विमलप्रसाद का स्वर्गवास हो गया था इस समय आप के उत्तराधिकारी आपके बड़े पुत्र—जो आप की तरह सरल हँसमुख सुधार-प्रिय हैं, श्रीयुत राजवैद्य पं० महावीरप्रसाद त्रिपाठी वैद्यराज हैं आप इंगलिश हिन्दी उर्दू संस्कृत के विद्वान आयुर्वेद और यूनानी के प्रकाण्ड-पण्डित हैं आप की आयु इस समय ४५ वर्ष की है [illegible]—२५ वर्ष से आप चिकित्सा का कार्य करते हैं जिन को आप से मिलने, चिकित्सा कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है वे आपकी चातुरी, अनुभव एवं ज्ञान के उपासक हैं ।

अब हम आयुर्वेद विषय की आप के जीवन से घनिष्ठ-सम्बन्ध रखने वाली स्थानीय चन्द घटनाएँ प्रकाशित करते हैं यह घटनाएँ उन स्थानीय-महापुरुषों द्वारा मालूम हुई हैं जिन्हों के यहाँ वैद्यजी ने अपनी अद्भुत-चातुरी का परिचय दिया है ।

सन् [illegible] में स्थानीय लाला रामचन्द्र [illegible] की पुत्री—जिस की आयु [illegible] वर्ष की थी—के जाँघ में एकाएक दर्द होगया स्थानीय प्रसिद्ध प्रसिद्ध डाक्टरों की चिकित्सा करते रहने पर भी दर्द उग्ररूप धारण करता जाता था जब [illegible] मास तक किसी तरह भी लाभ न होता दिखाई दिया तो सिविल हॉस्पिटल में जाँघ का एक्सरे लिया गया और उस को देख कर सब डाक्टरों ने एक मत हो कर इस के खोलने की सम्मति की उनका कहना था कि यदि यह नहीं खोला गया तो लड़की का जीवन खतरे में है इस के

अंदर फोड़ा है" अंत में तीसरे दिन खोलना निश्चित हुआ। मित्र सम्बन्धी उपस्थित होने लगे लड़की के पिता के मित्र मि० रूपनारायण बार एट ला मजिस्ट्रेट बिना कुछ कहे वैद्य जी को दिखलाने के लिए ले गये लड़की को देखने के बाद अचानक वैद्यजी के अंतरात्मा से यह शब्द निकल गया कि "डाक्टरों ने गल्ती खाई है लड़की आज ही अच्छी हो जायगी"। अस्तु चन्द लड़की के रिश्तेदारों को इस बात का विश्वास नहीं होते हुए भी रूपनारायणजी को इस बात का पूर्ण भरोसा था और आप लड़की के पिता के खास मित्रों में थे। उनको निषेध करने का साहस नहीं होता था वैद्यजी का लेप* गर्म कर लगाया गया इसके दो घंटे बाद ही लड़की को नींद आ गई पुनः ८ घंटे बाद दूसरा लेप चढ़ाया गया सुबह को देखा तो लड़की अच्छी है वरम नाम मात्र को है बुखार कतई नहीं है और लड़की हँस रही है उधर डाक्टर खोलने के लिये शस्त्र आदि लेकर आगये आते ही लड़की को चलते देख कर चकित हो कर कहा—"यह क्या लड़की किस तरह अच्छी हो गई इतनी जल्दी किस जादूगर ने अच्छा किया।" लड़की के पिता ने कहा कि—"मि० रूपनारायण एक जादूगर को लाये थे उन्हीं से पूछिये।" अंत में वैद्यजी का नाम वगैरह पूछ कर समस्त डाक्टर वैद्य जी से मिलने आये।

वैद्य जी की उपस्थित बुद्धि—

लगभग १५-१६ वर्ष हुए स्थानीय सेठ कालूराम प्रभुदयाल मारवाड़ी का ५-६ वर्ष का बच्चा एक चाँदी के छल्ले को अपनी इंद्रिय में चढ़ा कर सो गया सुबह मालूम हुआ कि इन्द्रिय सूजी हुई है छल्ला इतना गड़ा हुआ है जिसका निकलना मुश्किल है बच्चा तकलीफ से तड़फ रहा है श्रीयुत डा० हेमचन्द्रसेन को बुलाया गया आपने छल्ले को काट कर निकालने की सम्मति दी सिवाय इस के और कोई सूरत उसके निकालने की हो भी नहीं सकती थी उधर सेठ साहब वैद्य जी को भी ले गये वैद्यजी ने देखते ही डाक्टर साहब के सामने कहा कि "अभी बिना काटे छल्ला निकल जायगा।" डाक्टर साहब ने कहा "निकाल कर दिखाओ" वैद्य जी ने उसी समय एक तोला पारा मंगाया और उस छल्ले पर सावधानी से गिराया पारा चाँदी को खा जाता है अतः अपने स्वभाव के अनुसार छल्ला जिधर पारा पड़ा था गल गया और निकल पड़ा। इसको देखते ही डा० हेमचन्द्रसेन वैद्य जी से लिपट गये और उनकी बहुत प्रशंसा की, गरज है ऐसी बहुत-सी घटनाएँ हैं जो नवीन चिकित्सकों के लिये शिक्षादायक भी हैं, जो भविष्य में पुस्तकाकार में प्रकाशित होंगी।

अंत में ईश्वर से प्रार्थना है उनकी स्वर्गीय आत्मा को शान्ति और उन के दुखी-परिवार मित्रों को असह्य कष्ट सहने का बल दें ....

दुखी—

लोकमणि मिश्र

---

* यह [illegible] लेप था।

बहुतों को मालूम नहीं है कि माता के भोजन का प्रभाव बच्चे के शरीर पर भी पड़ता है। यदि माता ने कोई काबिज पदार्थ खा लिया है तो बच्चे को क़ब्ज़ होते देखा गया है। बहुत बार बच्चे के बीमार पड़ने पर औषधि उसकी मां को दी जाती है। इसलिए माता जब तक बच्चे को दूध पिलाती रहे तब तक उस के भोजन पर विशेष लक्ष्य रखना चाहिए। माता के हलका तथा सुपाच्य भोजन करने ही में बालक का कल्याण है। जब तक माता बच्चे को दूध पिलाती रहे तब तक उसे प्याज लहसुन आदि उत्तेजक पदार्थ नहीं खाना चाहिए। क्यों कि उनके व्यवहार से उन की गन्ध माता के दूध में भी आजाती है। बालक इन गन्धों को पसन्द नहीं करते। हमारे यहाँ के कुछ लोगों का विचार है कि बच्चा जनने के बाद जच्चा को कुछ दिन तक शराब का व्यवहार कराना आवश्यक है क्योंकि शराब जच्चा की खोई हुई शक्ति को शीघ्र लौटा लाती है किन्तु यह धारणा भूल है, इस समय शराब पीने से माताओं को हानि हो चाहे नहीं किन्तु बच्चे के स्वास्थ्य पर उस का बड़ा बुरा असर पड़ता है शराब का कुछ हिस्सा दूध के साथ मिल जाता है जिसे पीकर बच्चे मतवाले बन जाते हैं। शराबी होने की आदत बच्चों को यहीं लगती है। जिस प्रकार माताओं के शराब पीने से बच्चे को हानि पहुँचती है उसी प्रकार माताओं का उत्तेजक मसाले या औषधियों * का खाना भी बालकों के लिए अहितकर है।

स्त्रियों के दूध में कौन कौन से पदार्थ कितने रहते हैं इस की तालिका ठीक ठीक नहीं दी जा सकती, भिन्न भिन्न देश की स्त्रियों के दूध में भिन्न भिन्न परिमाण में एक ही उपादान पाया जाता है। एक ही स्त्री के दूध में भिन्न भिन्न समय में भिन्न भिन्न पदार्थ भिन्न २ परिमाण में पाये जाते हैं। लड़का पैदा होने के बाद ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है त्यों त्यों दूध गाढ़ा होता जाता है। पहले महीने के अंत में, स्त्री के दूध में पीछे के दूध की अपेक्षा कम शकर रहती है। उस समय प्रोटीड ऐसी अवस्था में रहती है जो जल्दी पच जाती है। दूध पिलाने के आठ से दस महीने में शकर अधिक रहती है किन्तु 'केसिन' कम रहता है। किन्तु प्रथम दो मासों में केसिन की मात्रा अधिक रहती है स्त्री की उम्र पर भी दूध के उपादानों का परिमाण निर्भर करता है। पन्द्रह से २० वर्ष की स्त्रियों के दूध में प्रोटीड और मक्खन अधिक किन्तु लैक्टोज़ कम रहता है। बीस से तीस वर्ष की उम्र की स्त्रियों के दूध में ठीक इसके विपरीत अर्थात् लैक्टोज़ अधिक और प्रोटीड तथा मक्खन कम होते हैं यह भी देखा गया है कि छाती में दूध रहने के समय तथा बच्चे को दूध पिलाने के समय के अन्तर पर भी दूध के उपादानों में विभिन्नता पाई जाती है। जितनी ही अधिक देर दूध छाती में रहेगा या जितनी अधिक देर बाद बच्चा दूध पियेगा उतना ही गाढ़ा होता जायगा मक्खन की मात्रा अधिक होती जायगी। मानसिक उद्वेग, क्रोध, दुःख, चिड़चिड़ाहट, शारीरिक-उत्तेजना आदि माता के दूध में इतनी भिन्नता ला देते हैं कि कभी कभी वह बच्चों के पीने योग्य नहीं होता। यदि बच्चा उसे पीले तो उसकी आंत में दर्द होता है। इतने कारणों से दूध के उपादानों में फ़र्क़ पड़ने पर भी यह उचित जचता है कि माता के दूध में कौन कौन पदार्थ

* स्वर्ण सेना कास्टर आयल आरसनिक आयोडीन पारा आयोडाइड ब्रोमाइड सैलीसिलिक एसिड एट्रोपाइन क्लोरेल डिजिटेलिस एन्टी पाईरीन कोकेन अरगट बिस्मथ सुर्ख मिर्च गरम मसाला आदि। —लेखक

कितने हैं उसकी एक तालिका देदी जाय।

जल ८७'६१ भाग प्रति सैकड़ा
प्रोटीड २'९ ,, ,,
लैक्टोज (दुग्ध शकर) ६'२१ ,, ,,
मक्खन ३'७८ ,, ,,
नमक ०'३१ ,, ,,

बच्चे को दूध पिलाने के पहले और पीछे स्तनों को पानी से अच्छी तरह धो लेना चाहिए। स्त्रियाँ इस क्रिया की उपयोगिता को नहीं समझतीं इस लिए विषय को जरा बढ़ा कर लिखूँगा। पाठिकाओं में बहुत कम ऐसी हैं जिन्हें यह मालूम हो कि हवा में अनेक प्रकार के छोटे छोटे कीड़े विद्यमान हैं उन्हें हम खाली आँखों से नहीं देख सकते। अणुवीक्षण-यन्त्र से देखने पर भी उनमें बहुत-से दिखाई नहीं पड़ते। उनमें से कुछ अच्छे होते हैं कुछ बुरे वे सब समय घात लगाये बैठे रहते हैं और मौक़ा पाते ही अपने खाद्योपयोगी-पदार्थों पर आक्रमण करते हैं। दूध को खट्टा कर देना, ताड़ी को शराब में परिणत करना, ईख या गुड़ के रस को सिर्का बनाना इन्हीं का काम है पके हुए फल या मरे हुए जानवरों को ये कीड़े ही सड़ाते हैं। प्रायः सभी जगह अच्छे और बुरे कीड़े रहते हैं। दूध को दही में परिणत करना अच्छे कीड़ों का काम है किन्तु फल को सड़ाना बुरे कीड़ों का।

बच्चे के दूध पी लेने के बाद माता के स्तन पर दूध का कुछ हिस्सा या बालक के मुँह की लार लगी रह जाती है। इन पदार्थों पर भी वायु के कीड़े आक्रमण करते हैं और उसे विषाक्त पदार्थों में परिणत कर देते हैं। इस लिए बालक के दूध पी लेने के बाद यदि स्तन धो नहीं दिया जाय तो कीड़े वहाँ मन माना मचाते हैं। इस के बाद जब बच्चा दूध पीता है तब पहली घूँट वह विषैले पदार्थों युक्त दूध को ही निगलता है। क्या कोई माता अपने प्यारे बच्चे को इस प्रकार विष पिलाना चाहेगी? किन्तु अज्ञानतावश वह ऐसा करने से बाज़ नहीं आती। माताओं को इस विषय में सावधानी रखनी चाहिए। इस के अतिरिक्त बच्चे की लार से भीगे हुए स्तनों का जब मैले कपड़े, कुर्ते, बॉडिज, फ्रॉक आदि के साथ संसर्ग होता है तो कपड़े का कुछ मैल स्तनों पर लग जाता है। अज्ञानतावश माताएँ इधर ध्यान नहीं देतीं; इस लिए बच्चों को दूध पिलाने के पहले भी स्तन धो लेना श्रेयस्कर है। कुछ डाक्टरों का कहना है कि माताओं को समय समय 'बोरिक लोशन' (Boric Lotion) से भी स्तनों को धोते रहना चाहिए।

प्रथम मास में (दिन में) बच्चे को दो दो घण्टे के बाद दूध पिलाना चाहिए। रात में बच्चे को नींद से उठा कर दूध पिलाना ठीक नहीं है। जब तक वह सोता रहे उसे निश्चिन्त भाव से सोने देना चाहिए। इसके बाद बच्चे को इस प्रकार दूध पिलावेः—

दूसरे से चौथे महीने तक प्रति २॥ घण्टे बाद
चौथे से छठे ,, ,, ३ ,,
छठे से नवें ,, ,, ३॥ ,,
नवें से ग्यारहवें ,, ,, ४ ,,

एक बार में बच्चा पन्द्रह से बीस मिनट तक दूध पीता है। इतने समय में जितना दूध वह पीता है वह उसकी उदर पूर्ति तथा वृद्धि के लिए काफ़ी होता है। यदि शिशु इस से अधिक समय तक दूध पीता रहे तो समझना चाहिए कि दूध में पौष्टिकारक पदार्थों की कमी हो गई है। प्रश्न हो सकता है कि एक बार में शिशु को एक ही छाती से दूध पिलाना चाहिए या

या दोनोंसे ? इस का उत्तर यह है कि यह बालक की भूख तथा माता के स्तन के दूध पर निर्भर करता है। यदि बच्चे को एक ही स्तन का दूध पीने से सन्तुष्टि हो जाय तो दूसरे स्तन का दूध पिलाने की आवश्यकता नहीं होती किन्तु यदि एक के पीने से पेट न भरे तो दूसरा स्तन अवश्य देना चाहिए। जब बच्चे को दाहिने स्तन से दूध पिलाना हो तो माता को दाहिनी करवट और बाएँ स्तन से दूध पिलाने के समय बाईं करवट लेटना चाहिए। बच्चे का सिर माता की उसी बांह पर होना चाहिए जिस करवट वह सोई हुई हो। दूसरे हाथ से अपने स्तन को पकड़ कर बच्चे के मुँह में इस प्रकार दे जिस में बच्चे के मुँह या नाक पर उस का बोझ न पड़े और न उस के स्वांस लेने ही में कष्ट हो *।

यदि बालक दूध पीते पीते सो जाय तो उसे उठाने की कोई आवश्यकता नहीं। उसे उसी अवस्था में सो जाने देना चाहिए इसके कुछ देर बाद स्तन को धीरे से हटा लेने से बच्चे के जगने का डर नहीं रहता। अन्यथा एका-एक स्तन हटा लेने से बच्चा जग पड़ता है और पुनः पीना आरंभ कर देता है। दूध पिलाने के बाद बच्चे को प्यार करना भी ठीक नहीं है क्योंकि दूध पीने के बाद बच्चा साधारणतः सो जाता है और दूसरी बार दूध पीने के समय ही पर जागता है। यदि पहले उस की नींद टूट भी जाती है तो रोता नहीं है; चुपचाप पड़ा रहता है। ठीक समय पर दूध पिलाने की आदत डालने से माताएँ बार बार दूध पिलाने के झंझट से बच जाती हैं। ऐसी आदत डालना बच्चे और माता दोनों के लिए हितकर है।

कभी कभी देखा जाता है कि बच्चा दूध पीने के एक घण्टे बाद रोने लगता है। मूर्खा माताएँ समझती हैं कि भूख लगने के कारण ही बच्चा रो रहा है और वे उसे दूध पिलाने की व्यर्थ चेष्टा करती हैं। बच्चों का कुसमय रोना उसके भूखे होने की निशानी नहीं है। इसका कारण बच्चे के पेट में दर्द का होना है। बच्चे के पेट में दर्द होने का कारण विकृत दूध का पीना है। स्नायविक (Nervous) थकावट, मानसिक उत्तेजना, क्रोध, चिड़चिड़ाहट आदि माता के दूध को विकृत करते हैं। यदि माता के दूध में 'केसिन' या मक्खन की मात्रा अधिक हो जाय तो बच्चे के पेट में दर्द होना संभव है। बच्चे के पेट का दर्द प्रायः १५–२० मिनट तक रहता है। गरम सरसों का तेल पेट पर मलने से वह कम हो जाता है। यदि दूध में प्रोटीड अधिक हो गई हो तो माता को प्रति दिन थोड़ा थोड़ा शारीरिक परिश्रम करना चाहिए। इस से प्रोटीड कम हो जाती है। मक्खन की अधिकता को कम करने के लिए माता को प्रोटीड-जनित भोजन कम कर देना चाहिए। जल्दी जल्दी दूध पिलाने से माता का दूध गाढ़ा हो जाता है।

आज कल कुछ स्त्रियाँ जान बूझ कर अपने बच्चों को दूध नहीं पिलातीं। इसका असली कारण तो वे ही जानें किन्तु सुनता हूँ कि बच्चों को दूध पिलाना आज कल के फ़ैशन के खिलाफ़ है। मैं इन फ़ैशन पसन्द

* The child should be held by the arm of the side on which she is lying, with the other hand she should support the breast, allowing the nipple to protude between the index and middle fingers and preventing the breast from pressing upon the child's mouth and nostrils and so interfering with respiration.

Moores Family Medicine Hygine.

औरतों को यह बतला देना चाहता हूँ कि बच्चे को दूध नहीं पिलाने का कुफल बच्चे के साथ माताओं को भी भोगना पड़ता है। बच्चे को दूध पिलाते रहने से माताएँ दस मास तक इस योग्य नहीं होती कि उन्हें दूसरी सन्तान हो। इस लिए वे शीघ्र पुनः बच्चा जनने के भार से बचती रहती हैं इसके अतिरिक्त छाती को उस की प्राकृतिक क्रिया पालन करने देने ही में लाभ है। ऐसा करने से भविष्य में छाती की बीमारी नहीं होती *। इनके अतिरिक्त बालकों का इस में अशेष लाभ होता है।

× × ×

दान्त निकलते हुए लड़के को खिलाना।

जब तक लड़कों के दांत नहीं निकलें तब तक उन्हें कोई अन्न खिलाना ठीक नहीं है। बच्चे का दांत निकलना यह सूचित करता है कि अब बच्चे के आभ्यन्तरिक-पाचक-यन्त्र माता के दूध के अलावा अन्य खाद्य पदार्थों के पचाने में भी सक्षम हो रहे हैं। 'अन्य खाद्य पदार्थों' का अर्थ सभी खाद्य पदार्थ समझ लेना भूल है। बहुधा देखा जाता है कि दांत निकलने के पहले ही लोग बच्चे के मुँह में अन्न डाल दिया करते हैं किन्तु यह बड़ी बुरी आदत है। क्योंकि बालक अन्नों को चबा नहीं सकता इस लिए वह उसे ज्यों का त्यों निगल जाता है। उसे पचा न सकने के कारण वे प्रायः अपने असली स्वरूप में उन के पेट से निकल जाते हैं किन्तु इस से उनकी पाचन शक्ति को जो वृथा परिश्रम करना पड़ता है उस से वह सदा के लिए खराब हो जाती है। इस लिए आज कल पेट की बीमारी से पीड़ित मनुष्यों की संख्या इतनी बढ़ी हुई है। जब तक बच्चे का एक भी दान्त नहीं निकलता तब तक उसके लिए सर्व-श्रेष्ठ भोजन माता का दूध ही है। माता के दूध के अभाव होने पर दाई या गाय का दूध पीछे लिखे हुए तरीके से दिया जा सकता है। बतलाना नहीं होगा कि बच्चे के पैदा होने के समय से आरंभ कर उसके सभी दान्त निकलने के समय तक उस के पाचक यन्त्र इतनी शक्ति नहीं रखते कि सभी पदार्थ पचा सकें उनकी पाचन शक्ति, ज्यों ज्यों समय गुजरता जाता है, धीरे धीरे बढ़ती जाती है और वह पूर्णावस्था को तब प्राप्त होती है जब बच्चे के चहुए के सभी दान्त निकल जाते हैं। इस लिए बच्चों के जब तक चहुए के दान्त नहीं निकलें तब तक उन्हें कोई कठोर पदार्थ खाने के लिए नहीं देना चाहिए। चहुए के दांतों का निकलना यह प्रमाणित करता है कि सख्त पदार्थों को—जिन्हें अच्छी तरह दान्तों के बीच में कुचलने की आवश्यकता होती है—पाचक यन्त्र पचाने में सक्षम हुए।

साधारणतया जब बच्चा सात या आठ मास का होता है तब उस का पहला दान्त दिखाई देता है। यदि मां को यथेष्ठ दूध होता हो तो उसे एक वर्ष की अवस्था तक माता ही का दूध देना चाहिए। किन्तु

* The avoidance of this duty after reacts injuriously in various ways on the system of the mother: as nursing generally speaking, prevents conception upto the tenth month, so it prevents the ruin of the mother's constitution by too rapid child-bearing. Moreover, it is advantageous to his breast that their natural functious should be carried on and may probably prevent the future development of breast diseases.

यदि माता का दूध कम हो गया हो तो गाय का दूध देना चाहिए। गाय का दूध देने के समय यह ख़याल रखना पड़ेगा कि जब बच्चे को खूब भूख लगे तभी गाय का दूध दिया जाय। इसके लिए दूध पिलाने के समय के अंतर को बढ़ा देना चाहिये। किन्तु माता का दूध एकाएक बन्द कर गाय के ही दूध पर लड़कों को रखना उचित नहीं है पहले थोड़े से आरंभ कर गाय के दूध की मात्रा बढ़ाते रहना चाहिए और अन्त में केवल गाय का ही दूध देना चाहिए। कितने समय में गाय का दूध माता के दूध का स्थान ग्रहण कर सकता है यह कहना कठिन है। यों तो छः सात साल की उम्र के बच्चे भी दूध पीते पाए जाते हैं किन्तु साधारणतः तीन से चार साल की उम्र के बालक माता का दूध पीना छोड़ देते हैं। दस से बारह मास के लड़के को गाय का दूध उस की रक्षा तथा वृद्धि के लिए सभी सारवान पदार्थ दे सकता है। इसके बाद मांड जातीय पदार्थों (साबूदाना, बार्ली, अरारोट आदि) का पतला पानी * दूध के साथ थोड़ा थोड़ा मिला कर देना चाहिए, इस समय बच्चा कार्य्यशील होता है। वह अपने हाथ पैर को इधर उधर पटकता तथा फेंकता रहता है इस लिए इस समय उसे कुछ अधिक मांड जातीय भोजन की आवश्यकता होती है। किन्तु बहुत अधिक मांड वह पचा नहीं सकता, इस लिए अधिक मांड जातीय भोजन खिलाने से उन के पेट में दर्द होता है और हरे रंग का पैखाना होता है। एक वर्ष से कम उम्र के बच्चे को किसी भी हालत में मांड जातीय भोजन नहीं देना चाहिए।

१२ से १८ महीने के बालक की वृद्धि के लिए मांड जातीय भोजन की आवश्यकता होती है। पीसे हुए चावल, साबूदाना, बार्ली आदि को पानी के साथ खौला कर, छान कर उसका पतला पानी दूध के साथ मिला कर दिन में दो बार देना चाहिए किन्तु इस समय भी बालक का प्रधान भोजन दूध ही हो यह भी भूल नहीं जाना चाहिए। इस समय अधिक मांड जातीय भोजन देने से बालक की पाचन शक्ति कम हो जाती है और उसका रक्त विकृत हो जाता है।

इसी भोजन पर बालक को उस समय तक रखना चाहिए जब तक वह दो वर्ष की अवस्था तक न पहुँच जाय। दो वर्ष के बच्चों के दान्त पुष्ट हो जाते हैं उस समय से बालक कुछ कठिन पदार्थ खा सकते हैं। कठिन पदार्थों को चबाने से उनके दान्तों का कसरत होता है और वे मज़बूत होते जाते हैं। बालक को ठोस भोजन देने के समय भी इस पर ध्यान रखना चाहिए कि उसे भोजन के तीन प्रधान उपादान—मांड मक्खन और प्रोटीड—यथा परिमाण में मिल रहे हैं। उनका भोजन सादा जल्दी पचने वाला और सारवान होना चाहिए वह तुरन्त का बनाया हुआ और कुछ कुछ गरम होना चाहिए। मसाला युक्त तीता या उत्तेजक भोजन से बच्चों को सदा अलग रखना चाहिए।

बालकों के भोजन का समय नियत कर लेना चाहिए। तीन तीन घण्टे के अंतर पर दिन भर में चार या पाँच बार भोजन देना उन के लिये काफी होगा। रात में उन्हें कुछ भी भोजन नहीं देना चाहिए प्यास लगने पर पानी दिया जा सकता है। उम्र के साथ साथ उनके भोजन की मात्रा की वृद्धि होनी चाहिए।

मैं मनुष्यों के मांस या मछली खाने का विरोधी हूँ किन्तु जो पिता-माता अपने लड़कों को मांस मछली

* साबूदाना बार्ली आदि को पानी के साथ खौला कर उसका पानी बनाया जा सकता है।

खिलाना चाहें उन्हें रोक भी नहीं सकता क्योंकि वे खिलावेंगे ही। उन से इतना अवश्य कह सकता हूँ कि तीन वर्ष से कम उम्र के बालक को मांस मछली आदि न दें।

× × ×

बालकों को दूध कैसे पिलाना चाहिए?

बहुत-सी स्त्रियों को देखा जाता है कि बालक ने जहाँ रोना आरंभ किया कि वह उनके मुँह में बलात्कार अपना स्तन डाल देती हैं। एक क्षण चुप रह कर यह सोचने का कष्ट भी नहीं उठातीं कि शिशु के रोने का क्या कारण है। शरीर के किसी अंग में दर्द होने के कारण, भोजन न पचने के कारण या किसी प्रकार का रोग होने के कारण से भी बालक रो सकता है। किन्तु इस का ज्ञान मूर्ख माताओं को कुछ भी नहीं है। बालक जब रोये तभी उसको दूध पिलाना ठीक नहीं। दूध पिलाने का समय नियत कर लेना चाहिये और उसी समय उसे दूध पिलाना चाहिए। मनुष्यों के लिए बिना हाथ धोये खाना जितना हानिकारक है उतना ही हानिकारक बच्चों को बिना स्तन धोये दूध पिलाना है। स्तन के मुँह पर मैल बैठ जाना बहुत संभव है। इस लिए जो स्त्रियां बिना स्तन धोए बच्चों को दूध पिलाया करती हैं वे अपने हाथ अपने बच्चे को मैल रूप विष पिलाती हैं।

किसी प्रकार का भोजन कण्ठ से उतर कर एक नली द्वारा पाकाशय में जाता है। इस नली को अन्न नली या आहार नली कहते हैं। अन्न नली के सामने श्वास नली (Wihd Pipe) का मुँह है, इस में श्वास ली हुई वायु प्रवेश करती है। हमारा भोजन पहले श्वास नली के मुँह को पार करता है तब अन्न नली में प्रवेश करता है। यदि आहार का कोई अंश श्वास नली में चला जाय तो खांसी आने लगती है। उस समय हमें बड़ा कष्ट होता है और खांसते खांसते जब तक भोजन का हिस्सा बाहर नहीं निकल जाता तब तक हमारे कष्ट का अंत नहीं होता। श्वांस नली के मुँह पर एक जीभ होती है जिसे उपजिह्वा (Epiglotics) कहते हैं। भोजन निगलते समय यह जिह्वा श्वास नली के द्वार को बन्द कर देती है, इस लिये भोजन का कोई हिस्सा इस नली में प्रवेश न कर सीधे आहार नली द्वारा पाकाशय में चला जाता है। बोलने या रोने के समय श्वास नली का द्वार खुल जाता है। खाने के समय बोलना इसलिए मना है कि कहीं श्वास नली के द्वार के खुला रहने के कारण अन्न का कोई अंश उसमें न घुस जाय। खाने के समय खांसी आने का कारण श्वांस नली में आहार का प्रवेश कर जाना है यदि इस नली में आहार का कोई बड़ा हिस्सा चला जाय और खांसने से वह नहीं निकल सके तो श्वास के रुक जाने से मृत्यु तक हो जाती है। बहुत बार ऐसा देखा गया है कि स्त्रियां रोते हुए बच्चे को दूध पिलाती हैं और दूध का कुछ हिस्सा बच्चों की श्वास नली में चला जाता है, जिस से दुर्घटनाएँ हो जाती हैं—बालकों की मृत्यु हो जाती है। रोते हुए बालक के मुँह में किसी प्रकार का खाद्य पदार्थ डालना अनुचित है। क्योंकि उस समय श्वास नली का मुँह खुला रहता है। इसी लिए भोजन करते समय बात चीत करना भी मना है।

शिशुओं को अन्ततः घंटे डेढ़ घण्टे बाद दूध पिलाना चाहिए। यदि चम्मच आदि से दूध पिलाना हो तो कदापि रोते हुए बालकों को दूध नहीं पिलाना चाहिए।

शहर के रहने वालों को एक नियम कर लेना चाहिए कि एक वर्ष से कम के लड़कों को ग्वाले के घर का दूध न दिया जाय। क्यों कि उन के घर का दूध विशुद्ध न होने के कारण बच्चे की प्रकृति तो बिगड़ ही जाती है ऊपर से बहुत से लड़कों को "इन्फैन्टाइललीवर" हो जाता है। इस उत्कट व्याधि के कारण बहुत से लड़के असमय में मृत्यु के मुख में पड़ते हैं। साधारणतः एक वर्ष तक यह रोग होता है। यह रोग ऐसा है कि इस से सैकड़ों में एक ही बच्चा बचता है। यह रोग दूषित दूध पीने ही से होता है। शहर के ग्वाले दिन भर दूध बेचने के बाद यदि कुछ बचा रहता है तो उसे अच्छे दूध के साथ मिला देते हैं। इस से अच्छा दूध भी खराब हो जाता है। यदि वे असली दूध में केवल शुद्ध पानी मिला कर बेचते तो कोई हानि नहीं थी किन्तु वे ऐसा भी नहीं करते। एक तो बासी दूध मिलाते ही हैं और साथ ही अस्वच्छ जल भी मिलाते हैं इस से दुगना नुकसान होने की संभावना रहती है।

देहात के ग्वालों में उपरोक्त बातें बहुत कम पाई जाती हैं क्योंकि वे समझते हैं कि अभी ईश्वर है। इस लिए वे बहुत अनर्थ नहीं मचाते किन्तु वे बड़े अस्वच्छ रहते हैं उनसे भी सावधान रहना बुद्धिमानों का काम है। यह संभव नहीं कि सब कोई एक एक गाय रख सके यदि एक वर्ष तक स्वस्थ माता शिशु को दूध पिला सके तब तो कोई बात ही नहीं, किन्तु यदि माता का दूध न पिला सके तो गाय का दूध अपने सामने दुहा कर उस बालक को देना अच्छा है। इस में खर्च कुछ अवश्य अधिक पड़ेगा किन्तु "इन्फेन्टाइल लिवर" होने से जितना व्यय उठाना पड़ेगा उसे देखते हुए यह व्यय कुछ भी नहीं है।

जब माताएँ बच्चों को सितुहा द्वारा दूध पिलाने लगती हैं उस समय का दृश्य देखने ही योग्य होता है उस समय घर का कौन कहे पड़ोस के घर में भी इस की खबर बच्चे के चिल्लाने से पहुँच जाती है। माताएँ रोते हुए बालकों को जोर कर दूध पिलाती हैं। लड़का हाथ पैर जितना ही पटकता है और रोता है उतना ही माताओं का दूध पिलाने का संकल्प भी बढ़ता जाता है। इस मल्ल युद्ध की कभी प्रशंसा नहीं की जा सकती। मैं मानता हूँ कि कुछ लड़के आसानी से दूध पीना नहीं चाहते किन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि बालक का संशोधन करना और नई अभ्यास डलवाने की शक्ति माताओं में है। कभी कभी देखा जाता है कि बालक के मुँह में दूध डालने के समय वह अपना दान्त बन्द कर लेता है और दूध को मुँह में डालने नहीं देता। फल यह होता है कि चम्मच या सितुहे का सारा दूध गिर कर उस के कान में प्रवेश करता है। इस प्रकार बालकों को कान की बीमारी होती है। इसलिए दूध पिलाने के समय ऐसी व्यवस्था कर लेनी चाहिए कि बालक के मुँह में दूध गिरने पर भी वह उस के कान में प्रवेश नहीं कर सके। यह काम किसी तौलिये के व्यवहार से हो जाता है। धीरे धीरे गीत गा कर या अन्य किसी प्रकार शिशु का मनोरञ्जन कर दूध पिलाने से घर का एक बड़ा कलख बन्द हो जाता है। यह कलख जहाँ तक कम हो अच्छा है।

ऐसा भी देखा जाता है कि माताएँ अपने दस बारह वर्ष की लड़की या दाई पर शिशु को दूध पिलाने का भार दे कर निश्चिन्त हो जाती हैं। किन्तु माता को चाहिए कि वह सदा इस बात पर लक्ष्य रखें कि दूध पिलाने के सब नियम ठीक ठीक पाले जाते हैं। बच्चों को बासी दूध तो कभी पिलाना ही नहीं चाहिए। ताजा दूध भी पिलावे तो उसकी अच्छी प्रकार परीक्षा करले। बालकों को कभी इतना अधिक दूध नहीं पिला देना चाहिए कि उसकी पाचन शक्ति नष्ट हो जाय।

दूध पिलाने के बाद बच्चे का मुँह पानी से अच्छी तरह धो देना चाहिए। यदि बच्चे के मुँह में दूध लगा ही छोड़ दिया जाय तो उसके मुंह पर मक्खियां बैठती हैं; चींटियों का भी आक्रमण होता है और कभी कभी तो बिल्ली भी बच्चे का मुँह चाटने से बाज नहीं आती।

× × ×

सन् १९२४ के "चांद" मासिक पत्र से उद्धृत।

शक्तिवर्धक, प्रमेहनाशक नागभस्म

लेखक—श्रीयुत वैद्य कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी. ए. आयुर्वेदाचार्य

**"वंगोपम गुणो नागो युक्त्या संतत सेवितः ।
नागाधिकं बलं दत्ते हन्ति मेहं विशेषतः ॥"**

सीसा (नाग) के गुण रांगा के सदृश हैं । इसका सेवन यदि युक्ति पूर्वक किया जाय तो हाथी से भी अधिक बल प्राप्त होता है, अर्थात् यह अत्यंत शक्ति को बढ़ाने वाला है । इस के सेवन से रस से लेकर शुक्र तक समस्त शारीरिक धातुयें क्रमशः पुष्ट होती जाती हैं, तथा सर्व इन्द्रियां भी बलवान हो जाती हैं इसमें प्रमेह नाशक विशेष शक्ति है । आयुर्वेद प्रकाशकार भी कहते हैं:— " सीसं रंग गुणं ज्ञेयं विशेषान् मेह नाशकम् ।"

वैसे तो नागभस्म के विषय में कहा गया है कि वह कई व्याधियों (क्षय, वातविकार, गुल्म, पांडु इत्यादि) का नाशक, आयु स्थापक, जठराग्निदीपक आदि है * किन्तु हम यहाँ पर उस के केवल दो गुणों के विषय में लिखना चाहते हैं । आशा है पाठक इस पर विशेष ध्यान देंगे । आजकल चन्द सामयिक कुरीतियां एवं आधुनिक-शिक्षा के प्रभाव से मौजूदा नवयुवाओं के जीवन को भयंकर-व्याधि-प्रमेह से तुमुल युद्ध करना पड़ रहा है उनका हृदय उन निर्धन दरिद्रियों की तरह है जो अनिवार्य आवश्यकताओं के पूर्ण न ही होने पर मन मार कर रह जाते हैं—उन की स्थिति विकट और करुणास्पद है—उन के सहारे के लिए सर्वप्रथम नागभस्म के प्रमेहोपयोगिता शक्तिवर्धन गुण का वर्णन करेंगे ।

नागभस्म, लोहभस्म, सुवर्णभस्म और अभ्रकभस्म जीवनीय अर्थात् शारीरिक सुस्थिति के लिये महान उपकारक है । जैसे अन्न शरीर के लिये जीवनीय एवं पोषक कहा जाता है; किंतु वह शरीर के लिये जीवनीय तब ही तक हो सकता है जब तक कि उसका सत्वांश यथायोग्य प्रमाण में अंदर शोषित हो । यदि किसी कारणवश उसका सत्वांश ठीक ठीक प्रमाण में शरीर के अंदर नियोजित न हो तो वही अन्न जीवनीय न हो कर मारक सिद्ध हो जाता है । एवं नागभस्मादि से भी यह विशेष प्रभाव है कि वह शरीर के अंदर नवीन चैतन्य उत्पन्न कर, अन्नादिक आहार के सत्वांश को भली भांति शोषित करने का सामर्थ्य प्रदान करती हैं । यही जीवनीय औषधियों की विशेषता है । साथ साथ वे शारीरिक अन्यान्य निर्बलताओं को दूर कर पुष्टि पहुँचाती हैं । इन में भी नागभस्म विशेष कर स्नायु,

* क्षय पवन विकार गुल्म पाण्ड्वामयेषु,
भ्रम कृमि कफ शूल मेह कसा[illegible]येषु ।
ग्रहणी गुद गद नष्ट व[illegible] प्रशस्तैः शुभ-
विधि कृत नागः काम-पुष्टिं ददाति ॥

नागस्तु नागशत तुल्य बलं ददाति
व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति ।
वन्हिं प्रदीपयति कामबलं करोति
मृत्युं च नाशयति संतत सेवितः स[illegible] ॥
—आ० प्र० ।

मांसपेशी आदि के लिये जोवनोय एवं शक्तिदायक है।

मधुमेह के समान क्षीणता उत्पन्न करने वाले रोगों के कारण वीर्य अत्यंत क्षीण हो कर नपुंसकता प्राप्त हो गई हो; अथवा स्नायु की निर्बलता के कारण या अंडकोष ग्रंथिकी अशक्ति से पुरुषत्व नष्ट हो गया हो तो नागभस्म बहुत उत्तम लाभ पहुँचाता है। देखिये 'पुष्पधन्वा' * नामक रस में नागभस्म की योजना इसी उद्देश्य से की गई है; अर्थात् नागभस्म के युक्त होने से यह रस नपुंसकत्व को नष्ट करने में पूर्ण समर्थ हुआ है।

हाँ... माता पिता के दोष से जन्मतः षंढ—नपुंसक होने पर नागभस्म व्यर्थ सिद्ध हुई है।

अतिसार या ग्रहणी ग्रस्त रोगी का शारीरिक बल अत्यन्त घट जाने से रोग का समुचित प्रतीकार नहीं होता, तो रोग बढ़ता ही जाता है, तथा अनल्प काल तक बना रहता है। रोगी और भी क्षीण हो जाता है। ऐसी अवस्था में यदि ज्वर न हो तो नागभस्म का उपयोग बहुत श्रेयस्कर है ऐसी हालतों में नागभस्म का उपयोग शिलाजीत तथा सुवर्णादि के साथ कराना चाहिए। अशक्ति के कारण कब्जी बनी रहती हो तथा परिणाम स्वरूप अर्श की भी शिकायत हो गई हो तो नागभस्म का सेवन हितकर है। तथा स्नायवीय निर्बलता के कारण मल विसर्जन के समय जोर लगाना पड़ता हो, गुदा (कांच) बाहर निकल आती हो, बड़ी मुश्किल से अंदर जाती हो, तथा कांखने की भी शक्ति न रही हो तो नागभस्म का सेवन नागकेसर के चूर्ण के साथ कराना चाहिये। थोड़े ही दिनों में अर्श की शिकायत मिट कर स्नायु की निर्बलता दूर हो जाती है।

यदि यह अशक्ति, निर्बलता या कब्जी शुक्र के अत्यंत विपर्यस्त दुरुपयोग के कारण पैदा हुई हो तो नागभस्म के स्थान में बंगभस्म का सेवन कराना अधिक लाभदायक है।

वाजीकरणीय योगः—

नागभस्म ८ तोला, हिंगुल ८ तोला और मनसिल १ तोला, इन तीनों के सम भाग (१७ तो०) शुद्ध आमलासार गंधक मिला, नींबू के रस के साथ खूब मर्दन करें, फिर सुखाकर एवं सराव संपुट कर गजपुट में फूंक देवे। यह परमोत्तम नागेश्वररस सिद्ध होता है। इसका सेवन रात्रि के समय (मात्रा १ से दो रत्ती तक जायफल के चूर्ण के साथ) करे तो खूब कामेच्छा जागृत होती है। जो कि शीघ्र शमन न होते हुये, जैसे स्त्री सेवन किया जाय तैसे तैसे बढती जाती है *।

सर्व साधारण धातु क्षीणता में नागभस्म का सेवन माखन और मिश्री के साथ कराना चाहिये। अशक्ति, प्रमेह, उपदंशादि के कारण शिश्नादि गुह्येन्द्रियों में जो रोग हो जाते हैं उनके निवारणार्थ नागभस्म का केवल मिश्री के साथ सेवन करावे। ऐसा हस्ती नामक रससिद्ध का मत है:—

---

* द्रुत भुजग लौह चाभ्रकं बङ्ग चूर्णम्।
कनक विजय यष्टी शाल्मली नागबली॥
घृत मधुसित दुग्धं पुष्पधन्वा रसेन्द्रो।
रमयति शत रामा दीर्घ मायुर्बलञ्च॥
— भैं० रत्नाकर।

* पल द्वयं मृतनागं हिंगुलं च पलं द्वयम्। शिलाकर्षमिता-ग्राह्या सर्व तुल्यं हि गंधकम्। निंबुनीरेण समर्द्य ततो गजपुटे पचेत्। तदा नागेश्वरोदयस्याद्नागराजसुतोत्तमः॥ निशांते नागराजं यो सेवये ल्ललनेपुमान। सो यं नारीशतं भुक्त्वा तथाप्य बुज लोचने। तृप्तिं न याति कामस्य नित्यवृद्धि मवाप्नुयात्॥
—रस. चि.।

ससिता मृत नागंच योभजेद्द सितना मतम् ।
तस्य गुह्येन्द्रियोत्पन्न रोगजालं हरेद्ध्रुवम् ॥

प्रमेह पर—नागभस्म का उपयोग प्रमेह पर बहुत अच्छा होता है। इसमें भी मधुमेह जो कि सर्व प्रमेहों में भयंकर है, उसे भी यह नेस्त नाबूद कर देता है मधुमेह में तीनों दोष, मेद, मांस, रक्त, शुक्र, ओज, वसा, लसीका, मज्जा आदि सब विकृत हो जाते हैं तथा इन कीपारम्परिक प्रतिक्रिया के कारण यह घातक विकार उत्पन्न हो जाता है। शरीरांतर्गत सूक्ष्मतम क्रिया जिसमें चैतन्याणु (Living cells) बनते हैं; विकृत हो जाती हैं फिर धीरे धीरे रस से लेकर वीर्य तक समस्त धातुयें विकृत हो जाती हैं *।

इस की चिकित्सा में हमारा प्रथम कर्तव्य यह होना चाहिये कि जिससे त्रिदोष विकृति एवं चैतन्याणु भवन क्रिया की उक्त विकृति दूर होवे । कारण वात पित्तादि के रास्ते पर आ जाने से धातु विकृति का आप ही आप सुधार हो जाता है । प्रमेह में त्रिदोष दुष्टि दो प्रकार की होती है—एक अन्नादत्पादक दुष्टि तथा दूसरी अन्नधातुशोषक दुष्टि । मधुमेह में विशेष-तया प्रथम प्रकार की अर्थात् अन्नधातुत्पादक दुष्टि देखी जाती है, जो कि नागभस्म के सेवन से सहज ही में नष्ट हो जाती है । इस रोग में नागभस्म का प्रथम कार्य रोगी की प्यास (तृष्णा) को कम करना, तथा दूसरा कार्य पेशाब में जाने वाली शक्कर (मधु) को रोकना या कम करना है। नागभस्म का सेवन शिला-जीत के साथ कराना, और रोगी को केवल दूध पर ही रखना चाहिये शीघ्र ही रोगी मधुमेह एवं तज्जनित अन्यान्य उपद्रवों से मुक्त हो जाता है।

ध्यान रहे सब प्रकार के मधुमेह ग्रस्त रोगियों पर नागभस्म एक समान फायदा नहीं पहुँचाती । जो मेदस्वी या जिनका शरीर स्थूल है, ऐसे ही मधुमेहियों को इसके सेवन से विशेष लाभ प्राप्त होता है । यदि मधुमेही कृश हो, तथा साथ ही साथ उसे अम्लपित्त का विकार हो तो नागभस्म अधिक लाभ नहीं पहुँचा सकती, ऐसी हालत में जसदभस्म (जस्ते का कुश्ता) का प्रयोग श्रेयस्कर है। मधुमेह या और प्रमेह रोग के अंत में कभी कभी रोगी की दशा आभ्रप्रमी हो जाती है। वह किसी भी विचार को स्थिर नहीं कर सकता; कोई भी विचार करते करते एकदम उसके मन में शून्यत्व का भान होता है । इसे यहाँ तक भ्रांति होती है कि शारीरिक अनैच्छिक क्रियायें (Involuntary actions) जैसे पेशाब फिरना आदि भी वह भूल जाता है, पेशाब आदि की हाजत होने पर भी वह विचार में ही पड़ा रहता है। ऐसी हालतों में नागभस्म बहुत ही उत्तम एवं विचक्षण लाभ पहुँचाता है कभी तो इस की एक ही मात्रा से चित्त ठिकाने आ जाता है, तथा इन्द्रियाँ यथा योग्य अपने २ कार्यों में प्रवृत्त होने लगती हैं ।

* मधुमेह का विकार किन कारणों से होता है ? इस विषय पर आधुनिक वैद्यों में बहुत मत भेद है। कोई कहता है कि Pancreas क्लोम पिंड के संकुचित हो जाने से आभ्यंतरिक शर्करा का रूपान्तर न होने हुये वह जैसी की तैसी ही सर्व शरीर में फैल जाती है और मूत्र मार्ग से स्रवित होने लगती है। किसी का कहना है कि सर्व पंचेन्द्रियों में विकृति होने से, अन्नरस का विपाक शर्करात्मक होने पाता है आगे उसका विभोजन नहीं होने पाता अतएव वह मूत्र के साथ बाहर निकलने लगती है। किसी का मत है कि इसमें केवल मूत्र पिंड ही विकृत हो जाते हैं, इत्यादि भिन्न २ मत हैं। हमारे मत से आयुर्वेदोक्त कारण ठीक जँचता है। इसका विशेष ऊहापोह हम अपने सरल रोग विज्ञान निबन्ध में करेंगे

योजना —सर्व साधारणतया प्रमेह पर नाग-भस्म दो या तीन रत्ती (एक बाल) आमला चूर्ण और हल्दी चूर्ण सम भाग लगभग एक मासा में, शहद के साथ मिला कर दोनों शाम चटाते हैं। कहा भी है—

शुद्धस्य च मतस्याहं रजो वल्लमित लिहेत् ।
मनिशामलक क्षौद्रं सर्वमेह-प्रशान्तये ॥

—योग रत्नाकर ।

(आ) शुद्ध नागभस्म, सोहागा, पारा, गंधक और खपर (या जसद भस्म) ये पाँचों द्रव्य समभाग लेकर, प्रथम पारद और गंधक की कज्जली करे, फिर उसमें शेष द्रव्य मिला खूब मर्दन करे, पश्चात् पान के रस में खरल कर रत्ति प्रमाण गोलियाँ बना सेवन करें। इसे मेहारि रस कहते हैं। यह शीघ्र ही उपद्रव सहित सर्व प्रकार के प्रमेह को नष्ट कर देता है। *

(इ) पारद योग से बनी हुई नागभस्म को तिली और तरवट बीज (पमाड बीज) के समभाग चूर्ण के साथ, थोडा शहद मिला सेवन करावे, सर्वप्रमेह दूर हो जाते हैं।

अथवा:—रसेन्द्र नागरस इस प्रकार बना लेवे। शुद्ध सीसा को मटकी या सरावले में रख आग पर चढ़ा देवे, जब वह पिगल जाय, तब उस में इमली के छिलकों का क्षार या भस्म थोड़ी २ डालते हुये, लोह सलाका से चलाते जावें। साथ ही उसमें सम भाग शुद्ध पारद मिला लेवे। घोटते २ जब वह भस्म रूप हो जाय तब उतार कर शीशी में भर रक्खें। इसे उक्त प्रकार से तिली और तरपट बीज के चूर्ण के साथ शहद मिला सेवन करावे। ठीक पथ्याचरण पूर्वक यदि इसका सेवन किया जाय तो सर्व लक्षणों से युक्त प्रमेह रोग एवं कुष्ट, वात विकारादि भी शीघ्र नष्ट हो जाते हैं *।

(ई) शुद्ध सीसा को गला कर उसमें समभाग शुद्ध पारद मिला डमरू यंत्र में उड़ावे। पुनः उसी सीसे को गला तथा समभाग पारद मिला उड़ा लेवे। इस प्रकार डमरू यन्त्र में ३० बार उड़ाने पर सिंदूर वर्ण की भस्म प्राप्त होगी। इस भस्म में समभाग राजावर्त (रवटी मणी) की भस्म मिला, नीम पत्र रस की ३० बार भावनायें देकर, सुखाकर सीसी में भर रक्खें इस की मात्रा दो से तीन रत्ती, अनुपान—गाय की छाछ कुटकी चूर्ण मिलाकर पीवे। सब प्रकार के प्रमेह, मधुमेह, बहुमूत्र, स्वप्नदोषादि दूर होते हैं।

(उ) सुरामेह के नाशार्थ—नागभस्म, मृगशृंग भस्म, कपास के बीज (बिनौला) की गिरी और अंकोल सब समभाग एकत्र महीन चूर्ण कर सेवन करावें मात्रा १ मासा तक, छाछ के साथ।

(ऊ) सिकतामेह के नाशार्थ :—नागभस्म, दारु हल्दी, बेर की मज्जा, आमला, लता कस्तूरी और शुद्ध धतूरे के बीज ये सब समभाग ले, एकत्र खरल कर एक २ रत्ती की गोलियां बना लेवे। इनका सेवन हल्दी के चूर्ण के साथ या गिलोय सत के साथ शहद मिला करावे ×।

---

* टङ्कणंच रसराज गन्धकं सीसकंच रस[illegible] संयुतम् ।
नागवल्लिज रसेन मर्दितं सर्वमेह-कृन्त-रोगनाशकम् ।

रसेन्द्र नागरस :—नागं कपाल मध्ये कृत्वा चाग्नि विशोधयेत् क्रमशः चिंचकत्वचाक्षारं स्वल्पं स्वल्पं विकीर्य कुन्तेन ॥ पारद भागं सीसं घृष्ट्वा घृष्ट्वा विचूर्णितं सम्यक् । तिलयुं खादन् मधुना तरपट बीजेन मिश्रित क्रमशः । मेह गणांस्ति विशेषं संश्लिष्टकं कुष्टमनिलंच । हन्त्यस्य द्वितीया सात्मुपथ्य योगान्द्र सेन्द्रनागोऽयम् ॥

—र० चंडांशु०।

× अप्रकाशित 'औषधिगुणधर्म विवेचन' नामक निबन्ध से उद्धृत। —लेखक

हैज़ा

[लेखक—श्री० नागेश्वरप्रसाद वर्मा, प्रयाग.]

घर का काम-काज समाप्त करने के बाद कमला विमला और उनकी माता बैठी हुई आपस में बातें कर रहीं थी, कि इतने में मदन बाहर से आया और कहने लगा— "कुछ मुहल्ले की भी खबर है या बैठी बैठी बातें बनाया करती हो।"

माता ने उत्सुकता से पूछा—"क्या कोई नई बात है रे मदन।"

मदन—हाँ चुन्नू के दादा मर गये और चुन्नू भी बीमार है।

विमला—(घबरा कर) भैया! क्या हुआ? कैसे मर गए? अरे कल शाम को तो वे लालाजी से मिलने आये थे, उस समय तो वे खासे अच्छे थे।

मदन—उन को हैज़ा हो गया था।

कमला—हैज़ा क्या होता है, भय्या?

माता—अरी, इतनी बड़ी हो गई, यह भी नहीं जानती। यह एक बीमारी होती है जिस में कै और दस्त लग जाते हैं।

विमला—पर यह बीमारी होती कैसे है?

माता—लो, मैं बताती हूँ। हैज़ा एक छूत की बीमारी है जो छोटे छोटे कीड़ों से उत्पन्न होती है। ये कीड़े इतने छोटे होते हैं कि बिना खुर्दबीन के हम लोग नहीं देख सकते।

क०—खुर्दबीन क्या, भय्या?

म०—यह एक यन्त्र का नाम है, जिस में ऐसे शीसे लगे होते हैं जो छोटी चीज़ को बहुत बड़ा कर के दिखाते हैं। हाँ तो ये कीड़े खाने पीने के पदार्थों के साथ किसी प्रकार पेट में चले जाते हैं और सारे पेट में उसी प्रकार के लाखों कीड़े उत्पन्न कर देते हैं, जिस से दस्त आने लगते हैं और बहुत कै (उलटी) होती है। हैज़ा के रोगी के कै और दस्त में हैज़ा के कीड़े यदि खुर्दबीन से देखा जाय तो हजारों की तादाद में दिखाई पड़ेंगे।

वि०—ये बीमारी के कीड़े आते कहाँ से हैं?

म०—ये एक स्थान से जहाँ यह बीमारी हो रही हो दूसरी जगह पहुँच जाते हैं।

क०—यह कैसे?

म०—जिस स्थान पर हैज़ा के रोगी का कै और दस्त पड़ा रहता है वहाँपर मक्खियाँ बहुधा बैठती हैं। और यदि गौर से देखा जाय तो मक्खियों के पैर और पङ्ख में रोगी का कै और दस्त लग जाता है। जब ये मक्खियाँ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर कहीं खाने या पीने के पदार्थों पर बैठ जाती हैं तो उस पदार्थों पर रोगी का दस्त और कै लग जाता है जिस में कि हैज़े के कीड़े मिले रहते हैं। और जब उन पदार्थों को तन्दुरुस्त पुरुष खा लेता है तो उस के पेट में हैज़ा के कीड़े पहुँच जाते हैं और उस को हैज़ा की

बीमारी पैदा कर देते हैं।

रोगी के पास जो बर्तन और वस्त्र इत्यादि पड़े रहते हैं, यदि उनमें से किसी ऐसे बर्तन को कुए में डाल दिया जाता है जिस पर कि रोगी के क़ै और दस्त के छींटे पड़ गये हों तो हैज़ा के कीड़े उसी बर्तन के साथ कुए में पहुँच जाते हैं और सारे कुए के पानी में हैज़े का विष फ़ैला देते हैं। फिर जो मनुष्य उस पानी को पीता है वह रोगी हो जाता है।

रोगी के वस्त्र को कुए या तालाब पर लोग अक्सर धो लेते हैं। उस वस्त्र पर रोगी के क़ै या दस्त अवश्य पड़े रहते हैं यदि वस्त्र के छांटते समय पानी कुए या तालाब के भीतर चला जाता है तो वहाँ के सारे पानी में हैज़े के कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं और जो पुरुष उस कुए का पानी पीते हैं उन्हें हैज़ा हो जाता है।

नंगे पैर चलने वाले लोग भी बहुधा इस रोग को फैलाने में सहायता करते हैं। वह नंगे पैर रोगी को देखने जाते हैं और वहाँ रोगी का दस्त और क़ै उनके पैरों में लग जाता है। ऐसे लोग यदि कुए या तालाब पर जाकर अपने पैर धोते हैं तो वहाँ का पानी हैज़ा के कीड़ों से (जो कि उस आदमी के पैर में लग कर आये थे) खराब हो जाता है और जो मनुष्य उस पानी का सेवन करता है हैज़ा से बीमार पड़ जाता है।

मा०—अरे, झूठा! शहर में तो कहीं हैज़ा की बीमारी है ही नहीं। अब बताओ कि चुन्नू के दादा के पेट में हैज़ा के कीड़े कैसे पहुँचे?

म०—हाँ, इस का और भी कारण होता है। लोग तीर्थ यात्रा करने जाते हैं और स्थान स्थान की खाने की वस्तुएँ या प्रसाद लाते हैं जो कि हैज़ा फैलाने में विशेष सहायता देते हैं।

वि०—भय्या! यह बात तो अवश्य सच है, कल ही तो चुन्नू की दादी हरिद्वार से आई है, जहाँ कि हैज़ा फैला हुआ था। वे अपने साथ बहुत सा प्रसाद और मिठाई व फल इत्यादि लाई थीं; खरबूज़ा, तरबूज़ और आम तो बिलकुल सड़ गए थे। आते ही उन्हों ने चुन्नू और चुन्नू के दादा को वह प्रसाद बड़े प्रेम से दिया था दोनों ने श्रद्धा से खूब खाया। अवश्य ही इसी कारण उन को हैज़ा हुआ और उन्हें इस संसार से हमेशा के लिए बिदा होना पड़ा।

क०—भैय्या यह कैसे मालूम होता है कि हैज़ा हुआ है या मामूली दस्त व क़ै हो रहे हैं।

म०—आज तो हम मैडिकल कालेज के लैक्चरर बन रहे हैं। अच्छा सुन यह बीमारी कमज़ोर, डरपोक या जिन को खाना देर में पचता है जिन का जी फ़िक्र में रहता है जो बहुत रात तक जागते हैं, खाने पीने में बहुधा सड़ा गला मांस, मछली, फल, जैसे तरबूज़, खरबूज़ा, आड़ू, केला, खीरा, मलाई की बरफ़ इत्यादि का सेवन करते हैं, गन्दी जगह में रहते हैं उन को यह रोग विशेष करके हुआ करता है। पहले दस्त और क़ै (उलटी) होती हैं। दस्त हमेशा की तरह होते हैं, क़ै में जो कुछ खाया हुआ होता है वही गिरता है। इस के बाद चावल के धोवन की तरह दस्त होता है। क़ै सुफ़ेद पानी की तरह गिरती है। बहुत कमज़ोरी मालूम होती है; आँखें बैठी जाती हैं। चेहरे का रंग उड़ गया-सा मालूम होता है; सिर और पेट में विशेष कर हाथ पैर में बहुत ऐंठन और दर्द होता है; पेट में बहुत पीड़ा रहती है। रोगी पानी बहुत पीता है उसे पेशाब कम होता है या बिल्कुल बन्द हो जाता है देह ठंडी रहती है। वह इतना कमज़ोर हो जाता है कि उस से बोला भी नहीं जाता; उस की नब्ज़ बहुत

कमजोर हो जाती है।

माता—मदन! यह तो बताओ कि इस रोग से बचने के लिए क्या उपाय करना चाहिए?

म०—बीमारी से बचने के लिए जो कुछ किया जाय वही अच्छा ही है। कुछ बातें बताता हूँ:—

१—हैजे के दिनों में घर में और घर के बाहर खूब सफाई रखनी चाहिये।

२—जब शहर में हैजा फैला हुआ हो तो भोजन कुछ कम करना चाहिये और ठीक समय पर करना चाहिए। बासी खाना बिल्कुल मना है।

३—खाने पीने की चीजें खूब ढांप कर रखनी चाहिए। मक्खियों से खाने पीने के पदार्थों को बहुत बचाना चाहिए।

४—घर की नालियाँ व पैखाने साफ रहने चाहिएँ

५—तालाब और कुएं के पानी को गर्म कर के एक स्वच्छ सुराही में रखना चाहिए और वही पीना चाहिए।

६—भीगा कपड़ा या भीगा जूता नहीं पहनना चाहिए।

७—खाली पेट न रहना चाहिए।

८—जो लोग हैजा के रोगी की देख भाल करते हैं उन्हें भी खाली पेट नहीं रहना चाहिए और खाने पीने के पहले स्वच्छ पानी से अपने हाथ पाँव धो लेना चाहिए।

९—हैजा के दिनों में कुए का पानी स्वच्छ रखने के लिए परमॉंगनेट आफ पुटास डालना चाहिए। इस से हैजा के कीड़े मर जाते हैं।

१०—बहुत काम काज करना और रात में बहुत देर तक जागना अच्छा नहीं है।

११—कच्चा दूध सेवन नहीं करना चाहिए। उस को गर्म और ठण्डा कर सेवन करना चाहिए।

१२—रात में चावल नहीं खाना चाहिए। खरबूजा खाने के बाद गर्म दूध न पीना चाहिए।

१३—हैजा के दिनों में कुल्फी मलाई या मलाई का बर्फ या बाजार की चटपटी चीजें या मिठाई नहीं खाना चाहिए।

१४—प्याज, नींबू और सिरके का सेवन करना चाहिए।

१५—कोई तेज जुल्लाब नहीं लेना चाहिए।

१६—आत्मिक, शारीरिक या मानसिक परिश्रम अधिक नहीं करना चाहिए।

१७—हृदय को कमजोर नहीं करना चाहिए। यदि बहुत डर लगता हो तो हैजा के रोगी को देखने नहीं जाना चाहिए।

१८—कच्चे या देर में हजम होने वाले फल जैसे खीरा, फूट, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, केला इत्यादि या सड़ी गली तरकारी या सड़े गले फल नहीं सेवन करना चाहिए। कच्चा फल खाना और कच्ची तरकारी को इस लिए मना किया गया है कि अनपढ़ लोग उन को अशुद्ध पानी में धोते हैं जिसमें हैजे के कीड़े होने की संभावना रहती है।

१९—खाने-पीनेके वर्तन गर्म पानी से अगर धोए जायँ तो बहुत ही अच्छा है। अगर ऐसा न हो सके तो पुटास परमांगनेट को साधारण पानी में डाल दें और उसी पानी को वर्तन धोने और सब कार्यों मे लावें।

२०—पीने के लिये उबाला हुआ स्वच्छ पानी न मिल सके तो मामूली पानी में थोड़ा सा परमांगनेट आफ पुटास डाल कर पीना चाहिए।

२१—हैजे के दिनों में छोटे बच्चों के गले में तांबे का एक टुकड़ा लटका देना चाहिए जो पेट के ऊपर तक पहुँच सके। बड़ों को तांबे की अंगूठी पहनना चाहिए।

२२—अर्क काफूर दो बून्द सुबह और दो बून्द शाम को मिश्री, बताशा, या चीनी के साथ सेवन करना चाहिए।

२३—हैजे के रोगी के कै और दस्त पर तुरन्त राख डाल देनी चाहिए और इन्हें जमीन में गड़वा देना चाहिए।

२४—हैजे के रोगी का कपड़ा कुआं या तालाब पर या खाने-पीने के पदार्थों के पास नहीं धोना चाहिए

२५—उसके पास रक्खे हुए खाने-पीने के पदार्थों को नहीं सेवन करना चाहिए। और जिस कमरे में वह पड़ा हो उस कमरे में खाने-पीने की चीजें बनाना ही नहीं चाहिए।

वि०—भैय्या, इससे तो स्पष्ट है कि हैजे के कीड़े खाने पीने के पदार्थों के साथ ही पेट में जाकर हैजे का विष उत्पन्न कर देते हैं।

क०—भैय्या, तुम ने यह तो बताया ही नहीं कि यदि किसी को हैजा हो जाय तो रोगी की देखभाल कैसे करना चाहिए।

म०—इतना ही बता कर मैं चुन्नू को देखने चला जाऊँगा। गौर से सुन लो—

रोगी को चुपचाप बिछौने पर लेटा रहना चाहिए दस्त और कै के आते ही रोगी को हर प्रकार का परिश्रम करने से रोकना चाहिए। रोगी का हृदय प्रसन्न रखना चाहिए और हर प्रकार से रोगी को ढाढ़स देना चाहिए। रोगी का कमरा स्वच्छ हवादार और गर्म होना चाहिए।

रोगी के कमरे में केवल वही बर्तन बिछौना इत्यादि रहना चाहिए जिसको कि रोगी सेवन कर सके।

रोगी के पास बहुत शोर गुल न करना चाहिए; वहाँ अधिक भीड़भाड़ न लगाना चाहिए। जब रोगी की देह बहुत ठण्डी हो जाय तो गर्म रखने के लिए मालिश करना चाहिए—या बोतलों में गर्म पानी भर कर देह के ठण्डे हिस्से पर लगाने से देह में गर्मी आती है। रोगी को पीने के लिए बर्फ से ठण्डा किया हुआ पानी अवश्य मिलना चाहिए। इस को कभी भी बन्द नहीं करना चाहिए। हैजे के रोगी को खाने को कुछ भी नहीं देना चाहिए।

रोगी को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना बहुत ही हानिकारक है विशेषकर जब कि रोग अच्छी तरह से व्याप चुका हो क्योंकि ऐसी दशा में रोगी की सांस यकायक बन्द हो सकती है—इसी को कोलैप्स कहते हैं। अच्छा अब मैं जाता हूँ।

× × ×

* 'उषा' से उद्धृत।

गठिया (Rheumatism)

लेखक—श्रीयुत पं० चेतराम शर्म्मा वैद्यशास्त्री L.M.S. (Home)

(गतांक से आगे)

यह रोग कितने ही भेदों से विभिन्न है जो संक्षेप से इस तरह समझने चाहिएँ।

(१) खोपड़ी की गठिया (Rheumatism of the skull)—इस में सिर में एक प्रकार का दर्द होता है जो हिलाने जुलाने से अधिक होता है।

(२) टर्टीकोलिस—(गरदन की गठिया) अधिक शीतल वायु में लेटे रहने के कारण गर्दन का एक तरफ का पट्ठा अकड़ जाता है जिस के कारण गर्दन दुखती है जिधर का पट्ठा अकड़ा रहता है उधर की तरफ को उसको ढीला रखनेके लिए लालायित रहता है दूसरी तरफ झुकाने वेदना के कारण असह्य कष्ट होता है।

(३) छाती की गठिया—इस का असर छाती तथा दाईं बाईं तरफ की पसलियों पर होता है छींकने-खांसने हँसने-श्वास लेने में अधिक कष्ट होता है प्रायः बाईं तरफ बगल के नीचे बहुत दर्द होता है दबाने पट्टी बांधने से कुछ आराम महसूस होता है।

(४) कमर की गठिया— इसमें कमर के इधर उधर के पट्ठे ग्रसित होते हैं पीठ तन जाती है मुश्किल से सीधा खड़ा हुआ जाता है बैठ कर उठते समय विशेष दर्द बोध होता है अधिकांश इसका आक्रमण कठिन होता है कभी कभी किसी किसी रोगी में धीमा भी देखा जाता है हिलने जुलने हर्कत करने से एकदम शूलसा चुभ जाता है।

यद्यपि और कुछ रोगों में भी कमर में दर्द होता है लेकिन सूक्ष्म-दृष्टि से देखने पर परस्पर कुछ विभिन्नता अवश्य पाई जाती है जैसे ज्वर के पूर्व रूप में कमर में दर्द होता है उस में हर्कत करने से दर्द नहीं बढ़ता और इस में बढ़ता है। गुर्दे के रोग के कारण उत्पन्न दर्द में मूत्र में परिवर्तन हो जाता है इस में कोई परिवर्तन नहीं होता और बेकली बिना हिले जुले तीव्र दर्द होना आदि लक्षण जो गुर्दे के दर्द के प्रधान लक्षण हैं इस में नहीं पाये जाते।

(क) सोजाकी गठिया—(गनोरियल रूमाटिज्म) यह गठिया प्रायः सोजाकके बाद हुआ करती है जिस समय सोजाकी पुरुष को किसी कारण से सर्दी लग जाय तो जोड़ों में दर्द हो जाता है अन्य सन्धियों की अपेक्षा घुटने पर इस का विशेष असर होता है और वरम हो जाता है सोजिश के कारण तनाव दर्द होता है परन्तु जोड़ों में पीप नहीं पड़ती सोजिश कभी कम हो जाती है पुनः बढ़ जाती है और अन्तमें जोड़ कड़ा तथा बेकाम हो जाता है जोड़को हिलाने से करकराहट की आवाज आती है।

(ख) आतशक की गठिया—(सिफलिटिक रुमाटिज्म) यह रोग नाम से ही इस बात को साबित करता है कि इसकी उत्पत्ति आतशक के कारण होती है इस में सन्धियों की अपेक्षा लम्बी तथा चपटी अस्थियों का प्रदेश अधिक ग्रसित होता है दिन की अपेक्षा रात को दर्द अधिक बढ़ता है सोजाक की तरह जोड़ बेकाम हो जाता है।

रुमेटिक आर्थोइटिस

यह गठिया से कुछ कुछ मिलती जुलती कष्टदायक जोड़ो के शोथ की व्याधि है इस में जोड़ों में रक्तवत सञ्चित हो जाती है जिस के कारण जोड़ बेडौल बेकाम हो जाते हैं यह कार्य छोटे बड़े सभी जोड़ों में हुआ करता है।

कारण—सर्दी लगना भीगना ऋतु बदल आदि कारणों से २० से ४५ वर्ष तक की आयु वाले निर्बल तथा शराब का पान करने वाले को प्रायः इसका आक्रमण होता है पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में इसका आक्रमण विशेषतया देखा जाता है।

लक्षण—यदि इसका कठिन आक्रमण होता है, तो अधिकांश जोड़ एक साथ इस में ग्रसित हो जाते हैं ज्वर हो जाता है, प्रथम एक जोड़ पर इस का असर होता है वह सूज जाता है दर्द अधिक होता है कुछ दिन के बाद जोड़ का वरम तथा दर्द जाता रहता है परन्तु कुछ दिन के अनन्तर पुनः आक्रमण हो जाता है और उसी तरह वरम दर्द हो जाता है इस तरह दो तीन बार विनाश उद्भव के कारण जोड़ बेकाम हो जाता है जब रोग बढ़ा हुआ होता है तो अन्य जोड़ भी ग्रसित हो जाते हैं और उनमें भी उसी तरह वरम दर्द होता है जबड़े और कनपटी के जोड़ गरदन के ऊपर के मुहरे (पृष्ठ वंश के मुहरे) के जोड़ भी ग्रसित हो जाते हैं जबड़ा नहीं खुलता सिर को हिलानेसे कष्ट होता है पैरों की अपेक्षा हाथ इस रोग में शीघ्र बेकाम हो जाते हैं जोड़ों में असह्य दर्द होता है रोगी निर्बल खून की कमी का शिकार हो जाता है।

विभिन्नता—यह रोग गठिया गौट * से बहुत कुछ मिलता है परस्पर अधिकांश लक्षण एकसा होते हैं। अतएव रोग परीक्षा के लिए बड़ी सावधानी की आवश्यकता है इस में तेजाबी कैफियत के पसीने नहीं आने से गठिया से विभेदन हो जाता है तथा छोटे बड़े जोड़ों में परिवर्तन हो जाने से गौट से विभिन्नता जाँची जाती है सोजाक की गठिया से रोगी के इतिहास द्वारा विभेदन करना चाहिए जिन मनुष्यों को पूर्व में सोजाक हो चुका है उन्हीं को सोजाकी गठिया का आक्रमण होता है।

कठिन आक्रमण में जब कि अधिकांश जोड़ एक साथ रोग ग्रसित होते हैं अच्छा उपचार चिकित्सा करने से लाभ हो जाता है परन्तु जब फैलाव का आक्रमण होता है तो आराम होना कठिन होजाता है हाँ... अच्छी चिकित्सा करते रहने से कुछ कष्ट की शान्ति अवश्य मिलती है।

गौट *

यह एक पैतृक रोग माना गया है सहज विष के कारण इस का प्रादुर्भवन स्वीकार किया गया है सहज विष से छोटे जोड़ों में एक विशेष प्रकार की सूजन हो जाती है जिस में विनाश उद्भव होता रहता है जोड़ोंमें जिन में वरम हुआ है यूरेट आफ सोडा एक प्रकार

* यह एक पैतृक रोग है इस में जोड़ोंमें विशेष प्रकार का शोथ हो जाता है विशेष वर्णन आगे देखो। लेखक—

की खड़िया मिट्टी के समान जमा हो जाता है अतएव आम पाश्चात्य विद्वान् रुधिर में यूरिक एसिड अथवा यूरेट आफ सोडा होना स्वीकार करते हैं कभी कभी इसका जोड़ों पर असर नहीं आन्तरिक असर होता है।

कारण—शीत देशों में जब स्वेद कम निकलता है तो इसका आक्रमण भी अधिकता में होता है।

परन्तु गर्म देशों में पसीना अधिक आने के कारण रक्त के अन्दर से यह विष बहुत कुछ बाहर निकल जाता है जिस से इस का आक्रमण भी कम होता है पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में इस का आक्रमण कमी के साथ होता है पुरुषों में भी ३०–३५ वर्ष की अवस्था में आराम सुख पसन्द कसरती काम नहीं करने वालों में बहुधा होता है अधिक मस्तिष्क कार्य करने वालों में भी जो मस्तिष्क के थक जाने पर शराब आदि पान कर पुनः मस्तिष्क कार्य करते हैं, अधिक पाया जाता है अजीर्ण भी इस रोग का प्रवर्तक कारण है यदि यूरिक एसिड पथ्य आदि नहीं मिलने के कारण रक्त में मिल जाय और गुर्दे उस को साफ करने में असमर्थ हों तो यह रोग उत्पन्न हो जाता है शीशा धातु के कारखानों में कार्य करने वालों को भी बहुधा इस का आक्रमण होता है।

उद्भावक कारण—सर्दी लगना भीगना जोड़ों में चोट लगना थकन मानसिक परिश्रम की अधिकता क्रोध शोक कुपथ्य आदि कारण रोग को प्रकट करने वाले कारण माने गए हैं।

यह रोग (१) आर्टीक्यूलर (२) **रैट्रौसी डैन्ट भेद** से दो तरह का होता है।

(१) **आर्टीक्यूलर गौट**— इस में प्रायः छोटे छोटे जोड़ ग्रसित होते हैं रोग के आक्रमण से पूर्व छाती पर जलन हौलदिली अजीर्ण दुर्बलता जिगर में रक्त का जमाव सिर दर्द चक्कर नजर में अन्तर सुस्ती काहिली निद्राल्पता उन्निद्रता पिंडलियों का फड़कना ऐंठना पित्ती उछलना दम फूलना मूत्र अधिक या कम होना आदि पूर्व रूप के लक्षण हैं।

लक्षण—पूर्व रूप के बाद सर्व प्रथम एकाएक रात के पिछले पहर में एक अथवा दोनों पैर के अँगूठों की जड़ दर्द होता है कि मधुर निद्रा से उठ जाता है किसी २ रोगी में एड़ी और टखनों से भी आरम्भ होता देखा जाता है हिलाने जुलाने उठाने-धरने की शक्ति नहीं रहती कपकपी होकर ज्वर हो जाता है कब्ज मितली बेचैनी प्यास आदि ज्वर के लक्षण प्रकट होजाते हैं मूत्र में फास्फेट (Ph-osphate) यूरेट (Urate) और कभी कभी (Albumen) भी मिला होता है सुबह के समय रोगी को स्वेद आता है जिसमें चिपकन एवं शीतलता होती है पसीना आने के बाद रोगी को निद्रा आ जाती है सोकर उठने पर दर्द वाली संधियों में वरम होजाता है वरम होजाने से तनाव के कारण जोड़ों में चबक मालूम होती है और उस प्रदेश की शिरा उठी हुई मालूम होती है दिन की अपेक्षा रोगी रात को कष्ट के कारण अधिक बेचैन रहता है दिन में कुछ आराम दिखाई देता है रात को पुनः अधिक कष्ट होजाता है इसी तरह एक सप्ताह तक लाभ अधिकता होती रहती है ज्वर आदि लक्षण नष्टहोजाते हैं जोड़ पर नई त्वचा निकल आती है और अपनी पूर्व दशा को प्राप्त हो जाता है परन्तु कभी सोजिश ही रह जाती है।

यह रोग का स्वभाव है जिसको एक बार इसका आक्रमण होजाय पुनः बार बार उसको इसका आक्रमण हो सकता है अधिकाँश पुनर्वार इसका दौरा १ वर्ष

आधा वर्ष बाद भी हुआ करता है परन्तु कहीं कहीं शीघ्र ही पुनर्वार इसका दौरा हो जाता है। कोई कोई रोगी ऐसा भी देखने में आया है जिसका कोई न कोई जोड़ सदा ही बीमार रहता है प्रथम एक संधि रोगिल होकर पुनः दूसरी तीसरी इसी तरह जोड़ जोड़ में वरम होजाता है समस्त जोड़ कड़े होजाते हैं तन जाते हैं जोड़ों के ऊपर सुफेद सख्त दाने यूरि आफ सोडा के जम जाते हैं ज्वर होजाता है यदि समस्त जोड़ एक साथ रोगी हो जाते हैं तो ज्वर भी कठिन होता है और मूत्र सुर्ख उसमें यूरेट आफ सोडा अधिक पाया जाता है।

सन्धियों की दशा—रोग की शुरूआत में जोड़ सुर्ख गर्म सूजा हुआ होता है उसमें दर्द होता है शिरायें उभरी हुई और उनमें चबक सी पैदा होती है दर्द के कारण रोगी बेचैन रहता है दबाने से रोगी प्रदेश को हिलाने जुलाने से दर्द बढ़ता है यदि अंगूठे से रोगी प्रदेश को दबाये तो उसमें गढ़ा पड़ जाता है परन्तु कुछ ही समय बाद पुनः पूर्वदशा को प्राप्त हो जाता है दर्द रात को अधिक एवं सुबेरे कम हो जाता है किसी जोड़ में जल जाने के समान दर्द किसी में तोड़ने किसी में कील ठोकने एवं किसी में लोहे से दागने के समान दर्द होता है रोग की शुरूआत में यूरेट आफ सोडा केवल जोड़ों की कुर्रियों पर जमा होता है पुनः सूत्रमय कार्टिलेज (Fibro cartilage) तथा साइनोवियल नामक झिल्ली पर जमा हो जाता है अतएव ऊपर की सतह ऊंची नीची होजाती है यह जमी हुई चीज देखने में खरिया मिट्टी जैसी मालूम होती है जब सोजिश दूर होने लगती है तो खारिश उठने लगती है रोगी प्रदेश (जोड़) से त्वचा उतरने लगती है।

यह रोग प्रत्येक दशा में एकसा नहीं रहता किन्तु विभिन्न समय तक सताता है, बहुधा४,५ दिन अथवा कुछ सप्ताह तक बारी रहकर उतर जाता है लेकिन जब रोग क्रानिक होता है तो बारी जल्दी जल्दी आने लगती है और अन्त में इतनी जल्दी आती है कि कुछ सप्ताह तक आराम रहता है वरन गर्मी और चन्द दिनों के अतिरिक्त दिन दिन सताया करती है।

क्रॉनिक—जिस जोड़ पर पहले रोगका प्रभाव हो चुका है वह तथा अन्य जोड़ एक साथ कठिन सोजिश में ग्रसित हो जाते हैं इस दशा में जोड़ बेडौल और उन की बनावट में बहुत ही बिगाड़ हो जाता है यानी ऊँचा नीचा बेडौल बढ़ा हुआ हो जाता है और जोड़ के ऊपर की त्वचा नीली तथा तन जाती है अ-त्यधिक तनाव के कारण फट जाती है और उसमें से यूरेट आफ सोड़ा (एक प्रकार की खड़िया मिट्टी-सी) निकलती है अगर त्वचा नहीं फटती है तो यूरेट आफ सोडा के खराश के कारण रोगिल जोड़े में पस पड़ जाती है जो भयङ्कर होती है।

यदि रोग पुराना है तो रोगिल जोड़ों की निर्माण क्रिया में भी अन्तर आ जाता है रोगी जोड़ोंके अति-रिक्त स्क्लिराटिक परदा नेत्र के पपोटे कान की लो नाक में भी यूरेट आफ सोडा पाया जाता है यह एक प्रकार की खड़िया जिस स्थान पर जमना चाहती है उस पर सर्व प्रथम एक पतली रतूबत संचित होती है यदि इस अवस्था में पतली रतूबत के जमने के समय वहाँ एक एक छेद कर दिया जाय तो सुफेद रतूबत की शकल में यूरेट आफ सोडा निकल जाता है, यही रतूबत यदि नहीं निकले तो कड़ी होकर छोटे बड़े दाने से हो जाते हैं इसी को चाक स्टोन (खड़िया) के समान पदार्थ कहते हैं।

रोगी निर्बल पस्त हिम्मत बेचैन होजाता है चेहरा फीका सुस्त और गमगीन मालूम होता है अपच हृदय दुर्बलता हृदय की संचालन क्रिया में अंतर आजाता है ऐंठन सिर में दर्द शरीर में भबकी मालूम होती है यदि गुर्दे के रोग का असर हो तो मूत्र हल्का कुछ पीला जिसमें अव्यमन का अंश भी दिखाई पाया जाता है निकलता है।

(२) रेट्रासी डैट गॉट— इसमें सर्व-प्रथम सोजिश होने से पूर्व आन्तरिक विभाग में अंतर हो जाता है पुनः बन्द जोड़ों में सोजिश होजाती है यदि इस रोगमें किसी जोड़ में सोजिश नहीं होकर शुरू से ही आन्तरिक विभाग में विकृति उत्पन्न होजाती है रोग के बाहरी लक्षण प्रकट नहीं होते इस अवस्था को आन्तरिक गौट कहते हैं इसमें प्रदेशानुसार लक्षण हुआ करते हैं—

सिर दर्द चक्कर उन्माद अपस्मार पट्ठों में दर्द पैरों में भड़कन अन्यान्य स्थानों—अंगों का फालिज सन्यास मस्तिष्क झिल्लयों में वरम आदि लक्षण उस समय प्रकट होते हैं जब रोग का असर नर्वस सिस्टम की तरफ होता है जिस जिस अंग प्रत्यंग पर इसका असर होता है उस उस पर उसी के समान लक्षण प्रकट होते हैं।

(क) पाचकेन्द्रिय-लक्षण—शारीरिक-कष्ट फिकर उन्माद ऐंठन शरीर शीतल होना अतिसार जिगर तथा अन्त्र सम्बन्धी अन्यान्य लक्षण दिखाई देते हैं ये लक्षण उसी समय प्रकट होते हैं जब गौट के असर से पाचन कर्मेन्द्रिय में सोजिश हो जाती है।

(ख) हृदय—यद्यपि हृदय पर इसका असर होने के कारण वरम तो नहीं होता परन्तु उसके उपरिथ झिल्ली या अथवा उसकी किवाड़ियों पर एक सुफेद-सा पदार्थ जम जाता है अतएव हृदय की संचालन क्रिया अप्रबन्धित हो जाती है हृदय की क्रिया कभी धीरे कभी तेज और कभी दुर्बलतायुक्त होती है इस कारण रोगी को मूर्छा (Coma) का भय रहता है हृदय के स्थान पर दर्द अथवा तनाव-सा रहता है अतएव श्वासोच्छ्वास में कष्ट होता है।

(ग) श्वासेन्द्रिय पर रोग का असर होने से दमा खाँसी न्यूमोनिया प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

(घ) मूत्रेन्द्रिय— यदि शुरू में ही गुर्दे की तरफ रोग का असर हो तो ट्यूब्यूलाई यूरेन फ्राई के अन्दर खड़िया मिट्टी जैसा पदार्थ जम जाता है जिसके कारण पेरामड़ तथा प्यापली की नौक तक सफेद सीधी रेखा सी मालूम देने लगती है और अन्त में जब गुर्दा सिकुड़ जाता है तो कड़ापन होजाता है। वृद्ध मनुष्यके मूत्राशयमें वरम होजाता है किसी किसी रोगी में पथरी भी दीखने में आई है इसके अतिरिक्त पित्ती उछलना अर्कपिका पामा आदि रोग हो जाते हैं।

गॉट और रूमाटिज्म में भेद

रूमाटिज्म

(क) पैत्रिक दोष से कमी के साथ इसका आक्रमण होता है।

(ख) इसका आक्रमण प्रायः गरीब श्रमीदल पर होता है।

(ग) यह ३० वर्ष की आयु वाले अर्थात युवाओं को विशेषतया होता है।

(घ) स्त्री पुरुष दोनों के होता है।

(ङ) सर्दी लगना इसका प्रधान कारण है।

(च) बड़े बड़े तथा मध्यम जोड़ इस रोग में ग्रसित

होते हैं उनमें दर्द मन्द मन्द होता है आराम होने के बाद रोगी प्रदेश की त्वचा नहीं उड़ती और न जोड़ों में कोई रतूवत पाई जाती है हाँ—वरम दूसरे अंगों की तरफ प्रवृत्त हो जाती है।

(छ) ज्वर तेज तथा एकसा बना रहता है।

(ज) पसीना अधिक तथा उसमें तेजाबी कैफियत पाई जाती है।

(झ) रोग के द्वितीयबार लौटने का कोई नियत समय नहीं है।

(ञ) रोग विष के व्याप्त होने पर हृदय तथा फेफड़ों में सोजिश हो जाती है।

(ट) रक्त में यूरिक एसिड नहीं पाया जाता है।

(ठ) ज्वर के समान मूत्र स्राव होता है इसमें कुछ एल्ब्यूबन भी मिल सकता है।

गौट

(क) यह पैतृक दोष से ही उत्पन्न होता है।

(ख) यह अमीर सुख पसन्द को अधिकांश, गरीबों को भी हो सकता है।

(ग) ३०-४० वर्ष में आरम्भ होता है।

(घ) इसका आक्रमण बहुधा पुरुषों पर ही देखा गया है।

(ङ) कब्ज होना रोग का प्रभाव है प्रत्यक्ष कारण नहीं दिखाई देता।

(च) शरीर के छोटे छोटे जोड़ पर विशेषतया पैर के अंगूठे के मूल में इसका असर होता है दर्द से रोगी बेचैन बेबस हो जाता है जोड़ चमकीला तथा सूजा हुआ और उसके ऊपर शिरायें उठी हुई दिखाई देती हैं रोगिल जोड़ों में सुफेद रतूबत पाई जाती है आराम होने के समय रोगी प्रदेश में खारिश होती है खाल उखड़ जाती है और देखने में रोगावस्था सी मालूम होती है।

(छ) ज्वर होता है परन्तु प्रातः कम होजाता है।

(ज) पसीने में कोई मुख्य कैफियत नहीं पाई जाती।

(झ) यह बहुधा कम नियत समय में लौटता है।

(ञ) जिस जिस अवयव विभाग पर इसका असर होता है उस उस स्थान पर उस उस स्थान के अनुकूल लक्षण उत्पन्न होते हैं जैसे हृदय आमाशय श्वासेन्द्रिय आदि—

(ट) रक्त में यूरिक एसिड पाया जाता है तथा हृदय कपाटों पर यूरेट भी पाया जाता है।

(ठ) मूत्र द्वारा यूरेटस बहुत कम निकलता है हाँ-बिश्राम की दशा में एल्यूमन अधिक निकलता है इसके अतिरिक्त यूरिनरीकास्ट भी मूत्र में पाये जाते हैं।

❀

नोटः—चिकित्सा रचना अग्रिम अंक में प्रकाशित होगी।

(गतांक के आगे)

तिल भल्लातकं पथ्या गुडश्चेति समांशकम् ।
दुर्नाम श्वास कासघ्नं वात रोगो दरापहम् २२

काले तिल, शुद्धभिलावा, हैड़, गुड़ प्रत्येक सम भाग मिलाकर सेवन करने से बवासीर श्वास, कास, बातरोग तथा उदर रोग नष्ट होते हैं ॥ २२ ॥

असितानाँ तिलानाँ प्राक् प्रकुञ्चं शीत वारिणा
खादतो ऽर्शांसि नश्यन्ति तथा चापि सुपुष्टिदम् २३

४ तो० काले तिलों को मुख में चबाकर शीतल जल पान करने से अर्श नष्ट होता है। तथा पुष्टि कारक है ॥ २३ ॥

शालि षष्टिक गोधूमयवान्नं संस्कृतं घृतैः ।
अजाक्षीरेण वा निम्ब पटोलानां रसेनवा ॥ २४
मांसै मांसरसैर्वापि कन्द वार्ताक मूलकैः ।
जीवन्त्युपोदिका शाकैस्तण्डुलीयक वास्तुकैः २५
अन्यैर्वासृष्ट विण्मूत्र मरुद्भिर्वह्निदीपनैः ॥

साँठी चावल गेहू जौ के पदार्थों को यथा विधि घृत में संस्कृत कर बकरी के दूध के साथ अथवा नीम परबल के रस के साथ, माँस से, माँस रस से बैगन मूली के रस से, जीवन्ती पोई के शाक से अथवा चौलाई बथुए के शाक से या अन्यान्य मल, मूत्रगीह खारिज करने वाले अग्निदीपक शाकों से सेवन करना चाहिए इससे बवासीर नष्ट होती है ॥२४,२५,२६ ॥

कुटजत्वक् निर्यूहः सनागरः स्निग्ध रक्त संग्रहणः
त्वग्दाडिमस्य तद्वत्सनागरश्चन्दन रसश्च ॥ २६
चन्दन किरात तिक्तक धन्वयासः सनागरः क्वथितः
रक्तार्शसां प्रशमनः दार्वीत्वगुशीर निम्बाश्च २७

(१) कूड़े की छाल के क्वाथ में सौंठ का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से खूनी बवासीर का रक्त बन्द होता है।

(२) अनार का बक्कल व सुर्ख चन्दन के क्वाथ में सौंठ चूर्ण मिला कर सेवन करना रक्त को बन्द करता है।

(३) सुर्ख चन्दन, चिरायता, जवासा, सोंठ का क्वाथ एवं दारू हल्दी, खस, नीम की छाल का क्वाथ रक्त को बन्द करता है ॥ २६, २७॥

रक्तार्शसि प्रयोगः

नवनीत तिलाभ्यासात्केशरनवनीत शर्कराभ्यासात्
दध्नोमथिताभ्यासाद्गुदजाःशाम्यन्तिरक्तवहाः २८

मक्खन तिल, केशर मक्खन खाँड, दही का घोल का सेवन रक्तज बवासीर के मस्सों का पातन करने वाला है ॥ २८ ॥

मधुकं *सपञ्चवल्कं बदरी त्वगुदुम्बरधवपटोलम्
परिषेचने विदध्याद्वृष ककुभयवास निम्बाश्च २९

मुलैठी, पंच वक्कल बेरी, गूलर, धव, अर्जुन, नीम की छाल अडूसा, परवल की पत्तियाँ, जवासा इनके क्वाथ को खूनी बवासीर के मस्सों के प्रक्षालन के लिए प्रयुक्त करना चाहिए ॥ २९ ॥

कूटज-रस-क्रिया

कूटज त्वचोविपाच्यं पलशतमार्द्रस्य मेघ सलिलेन
अष्टावशेषाद्रसस्तद्रव्य सारस्तथा ग्राह्यः ॥ ३०
मोचरस ससमंगः फलिनीच समांशकैस्त्रिभिस्तैश्च
वत्सक बीजं तुल्यं चूर्णीकृत मत्र दातव्यम् ॥ ३१
पूतः क्वथितः सान्द्रः सरसोदार्वी प्रलेपनो ग्राह्यः ।
मात्रा कालोपहिता रस क्रियेषा जयति रक्तम् ३२

कूड़े की गीली छाल ४०० तोला एक द्रोण वारिश के जल में पकालें अष्टमांश शेष रहने पर छान मोच रस, मजीठ, फूल प्रियंगु ४-४ तो० इनके बराबर इन्द्र-जौ सबका कपड़ छन चूर्ण उस क्वाथ में मिलाकर पकावें गाढा लेप सदृश होने पर उतार लेना चाहिए इसको अवस्था समय के अनुसार सेवन करने से सवेग बहता हुआ बवासीर का रक्त शीघ्र बन्द होजाता है ॥३०, ३१, ३२॥

समंगादि-क्षीरम्

समंगोत्पल मोचाह्व तिरीट तिल चन्दनैः ।
सिद्धं क्षीरं प्रयोक्तव्यं गुदजे शोणितात्मके ॥३३

मजीठ, नीलोफर, मोचरस, पठानी लोध, काले तिल, सुर्ख चन्दन इनसे सिद्ध किया दूध रक्तार्श को नष्ट करता है ॥ ३३ ॥

अर्शोघ्नलेपाः

ज्योतिष्का बीज कल्केनलेपो रक्तार्शसां हितः
स्नुह्यग्नि त्रिफलादन्ति लेपोरक्तार्शसां हितः ॥३४
तद्वत्कणा शिरीषाग्नि स्नुक् क्षीरेण प्रलेपनम् ।
कृष्णां वासनिशां पिष्ट्वा गोपित्तेनप्रलेपयेत् ३५

(१) माल कंगुनी (२) थूहर, चित्ता, त्रिफला, दन्ती की जड़ (३) पीपल, सिरस, चित्ता, थूहर का दूध (४) पीपल, हल्दी, गौका पित्ता यह चारों योग लेप द्वारा प्रयुक्त करने से रक्तार्श नष्ट होता है -३४ ३५

कोशातकी-रस-पानान्निपतन्ति गुदोद्भवाः ॥

कोशातकी का रस पीने से बवासीर के मस्से गिर जाते हैं ।

आर्क पयः स्नुही काण्ड कटुकालाबु पल्लवाः ३७
करञ्ज वस्तमूत्रेण लेपनश्रेष्ठं मर्शसाम् ॥

आक का दूध, सेहुन्ड की लकड़ी, कुड़वी तुम्बी के पत्ते करञ्ज के बीज इनको बकरे मूत्र मे लेप करने से बवासीर के मस्से नष्ट होते हैं ॥३७॥

निशा कोशातकी चूर्ण स्नुक् पयः सैंधवान्वितम् ३८
गोमूत्रेण समायुक्तो लेपो दुर्नाम नाशनः ।

हल्दी, कोशातकी का चूर्ण, सेहुण्ड का दूध, सैंधा नमक इनको गोमूत्र में पीसकर लेप करने से बवासीर के मस्से नष्ट होजाते हैं ॥ ३८ ॥

तोये कालक मुष्ककस्य विपचेद्भस्माढकं षड्गुणे-
पात्रे लोहमये दृढे विपुलधी दर्व्या शनैर्घट्टयेत् ।
दग्ध्वाग्नै बहुशंखनाभि शकलान् पूतावशेषे क्षिपेत्

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थ पारीष प्लक्ष पादपाः ।
पञ्चैते क्षीरिणोवृक्षा स्तेषां त्वक् पंच वल्कलम् ॥

* बरगद, गूलर, पीपल, पारीखपीपल, पिलखन—इन वृक्षों को पञ्चक्षीरी एवं इन की छाल के उपादान को पंचवल्कल कहा जाता है । पंच वल्कल के कहने पर इन की छाल लेनी चाहिए ।

यवेरण्डजनालमेष दहतिक्षारोऽवरोवाक् शतात्

काले मोखे की एक आढक भस्म को छः गुणे जल में कलछी द्वारा भली भांति मिलाकर पकावें तीसरा भाग शेष रहने पर छान कर शंख की भस्म मिलाकर लोह पात्र में पुनः पकावें इसमें यदि एरण्ड की नाल डालने से १०० तक गिनती गिनते वक्त तक गल जाय तो क्षार सिद्ध हुआ समझें, इसको विधि पूर्वक लगाने से मस्से गिर जाते हैं।

क्षार सूत्रम्

स्नुह्यर्क निभृते क्षीरे भल्लातक समन्विते।
ज्योतिष्मत् त्रिफला दन्ती कोशातक्यग्निसैंधवैः
चूर्णं रेतैः समघृतं लेपयेत्सूत्रकं दृढम्।
सूत्रं तत्पातयेदर्शः छिन्न मूल इव द्रुमम् ॥४१॥

सेहुंड का दूध, आक का दूध, भिलावा, माल कंगुनी, त्रिफला, दन्ती, राम तरई, चित्ता, सैंधा नमक

* क्षार का निर्माण सरल है परन्तु इस का प्रयोग करना कठिन है। क्षार पातन के लिये सुश्रुत सूत्र स्थान देखना चाहिए।

क्षार-सूत्र-बन्धन विधिः—
प्राग्दक्षिणं ततो वामं पृष्ठजं चाग्रजं क्रमात्।
पञ्चतिक्तेन संस्नेह्य दहेत्क्षारेण वह्निना॥
वातजं श्लेष्मजं चार्शः क्षारेणास्रजपित्तजे।
महान्ति तनु मूलानि च्छित्वैवज्वलिनो दहेत्॥

* यदि अर्श रोगी की गुदा के चारों तरफ मस्से हों तो पहले पञ्च तिक्त नामक घृत की बलानुसार मात्रा सेवन कराकर रोगी को स्निग्ध करे पुनः क्रमशः दाहिनी बाम तथा पीठ की तरफ के तदनन्तर सामने के मस्सों को क्षार, क्षारसूत्र वा अग्नि से दग्ध करे एक साथ एक दिन में चारों तरफ के मस्सों को नहीं दग्ध करना चाहिए। वात तथा कफ की बवासीर के मस्सों को क्षार तथा अग्नि कर्म द्वारा खूनी और पित्त की बवासीर के मस्सों को केवल क्षार द्वारा दग्ध करना चाहिए। यदि बवासीर के मस्से लम्बे मूल में पतले हों और रोगी बलवान हो तो शस्त्रोपचार करना चाहिए और पुनः क्षार द्वारा दग्ध करे ताकि उनका पुनर्भाव न हो। इसी तरह चर्म कील का उपचार करना भी श्रेय है।

इनमें बराबर का घी मिलाकर धागे पर लेप करें और उसको छाया में सुखाकर मस्सों पर बांधने से मस्से गिर जाते हैं॥ ४०, ४१॥

कासीस दन्तीसिन्धूत्थ करवीरानलैः पचेत्।
तैलमर्कपयोमिश्रमभ्यंगात्पायुकीलजित् ॥४२

कसीस, दन्तीमूल, सैंधा नमक, कनेर, चित्ता आक का दूध द्वारा सिद्ध तैल की मस्सों पर मालिश करने से मस्से गिर जाते हैं॥ ४२॥

दन्त्यश्वमार कासीस विडंगैलाग्निसैंधवैः।
सार्क क्षीरैः शृतं तैल मभ्यंगात्पायुकीलजित् ॥४३

दन्ती, कनेर, कसीस, वाय विडंग, इलायची, सैंधानमक, आक का दूध से सिद्ध किया तैल मस्सों पर लगाने से मस्से गिर जाते हैं॥ ४३॥

पिप्पल्याद्यं तैलम्

पिप्पली मधुकं बिल्वं शताह्वां मदनं वचां।
कुष्ठं शठीं पुष्कराख्यं चित्रकं देवदारु च ॥४४॥
पिष्ट्वा तैलं विपक्तव्यं द्विगुणं क्षीर-संयुतम्।
अर्शसां मूढवातानां तच्छ्रेष्ठमनुवासनम् ॥४५॥
गुद निस्सरणं शूलं मूत्रकृच्छ्र प्रवाहिकाम्।
कट्यूरुपृष्ठ दौर्बल्य मानाह वंक्षणाश्रयम् ॥ ४६
पिच्छास्रावं गुदे शोफं वात वर्चो विनिग्रहम्।
उत्थानं बहु दोषं च जयेत्तस्यानुवासनात् ॥ ४७

क्षार दग्ध की परीक्षा

पक्व जम्ब्वपमो वर्णः क्षारदग्धः प्रशस्यते॥

क्षार दग्ध स्थान यदि पके जामुन के वर्ण का हो जाय तो उत्तम माना गया है।

छोटी पीपल, मुलहठी, बेल कागूदा, सौंफ, मैनफल, बच, कूठ, कचूर, पुहकरमूल चित्ता, देवदारू इनका कल्क, कल्क से चतुर्गुण तैल, तैल से द्विगुण दूध, दूध के बराबर जल मिलाकर तैल सिद्ध करें इसका अनुवासन करने से काच निकलना, शूल, मूत्र कृच्छ्र, पेचिश, कमर, पीठ की दुर्बलता, अफारा, जघासों की पीड़ा, गुदा का शोथ, वात, मल का रोध अधिक दस्तों का आना नष्ट होता है ॥ ४४, ४५, ४६, ४७॥

प्राणदा गुटिका

त्रिपलं शृंगवेरस्य चतुष्कं मरिचस्य च।
पिप्पल्याः कुडवार्धंच चव्यस्य पलमेव च ॥ ८
तालीश पत्रस्य पलं पलार्धं केशरस्य च।
द्वे पलेपिप्पली मूलादर्द्धकर्षं च पत्रकात ॥४९॥
सूक्ष्मैला कर्षमेकं च कर्षं च त्वङ्मृणालयोः।
अजमोदा यवानी च सूक्ष्माण्येकत्र चूर्णयेत् ५०
गुडात्पलानि त्रिंशच्च चूर्णमेकत्र कारयेत।
अक्ष-प्रमाणा गुटिका प्रा देतिच सास्मृता ॥ ५१
पूर्वं भक्तेतु पश्चाच्च भोजनस्य यथा बलम्।
मद्यं मांसरसं क्षीरं यूषं तोय पिबंदन् ॥ ५- ॥
हन्यादर्शांसि सर्वाणि सहजान्यस्र जानि च।
क्रिमिहृद्रोगिणां चैव गुल्मशूलार्तिनां तथा ॥ ५३
छर्द्यतीसारग्रस्तानां कामलाहिध्मरोगिणाम्।
श्वास-कास-परीताना मेतरस्यादमृतं यथा ॥५४
अनुपानस्य विधिरयं यथा दोष विचारतः।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं व्याधौ श्लेष्मभवे पलम् ५५
पलद्वयं त्वनिलजे पित्तजे च पलत्रयम्।
फलाम्ल धान्याम्ल रसोदकं च,
मद्यं मरुद्रोगिणि चानुपानम्।
इक्षो रसः क्षीर हिमाम्बु पित्ते,
उष्णाम्बु यूषं कफजे विदध्यात् ५६
गण्डूष मात्रया देयं मृदौ क्रूरे च पंच च।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं देश काल मवेक्ष्य च ॥५७
यथा गतं जले तैलं तत्क्षणादेव सर्पति।
तथा भैषज्य मंगेषु प्रसर्पन्त्यनु पानतः ॥ ५८ ॥

अद्रक १२ तो० मिर्च १६ तो० पीपल ६ पल चव्य ४ तो० तालीसपत्र ४ तो० केशर २ तो० पीपलामूल ८ तो० तेजपात ६ मा० छोटी इलायची १ तो० दारचीनी, मृणल, अजमोद, अजवायन, १-१ तो० सबका कपड़छन चूर्ण गुड़ १२० तो० मिला कर १-१ तोला की गुटिका बनावें। इनको भोजन के प्रथम अथवा पश्चात् मद्य, मांसरस, दूध, यूष, जल के अनुपान से सेवन करें इसके प्रयोग से समस्त बवासीर क्रिमि, हृदय रोग, गुल्म, शूल, वमन, अतिसार, कामला, हिचकी, श्वास, कास प्रभृति नष्ट हो जाते हैं इनको दोषानुकूल अनुपान के साथ सर्वत्र सेवन कर सकते हैं। कफज रोगों में ४ तो० वायु रोगों में ८ तो० और पित्त रोगों में १२ तो० यह अनुपान की मात्रा है वायु रोगों में फलों की कांजी धान्य कांजी, मांस रस अथवा यूष रस, शराब, जल, पित्त रोगों में ईख का रस, शीतल जल, दूध और कफज रोगों में गर्म जल तथा यूष का अनुपान करना चाहिए। देश, काल, अवस्था का विचार करते हुए मृदु कोष्ठ में गण्डूष मात्रा परिमित क्रूर कोष्ठ में ५ गंडूष मात्रा परिमित अनुपान देना चाहिए। जैसे पानी में तेल की १-२ बून्द डालते ही फैल जाती है एवं अनुपान बल से

औषधि शरीर में तुरन्त फैल जाती है ॥४८, ४९, ५० ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८।

बृहत्सूरण मोदकम्

सूरण षोडश भागा वन्हे रष्टौ महौषधस्याथ ।
अर्द्धेन भाग युक्तिर्मरिचस्य ततोऽपि चार्द्धेन ॥५९
त्रिफला कणासमूला तालीशा रुष्करकृमिघ्नानाम्
भागा महौषध समादहनांशास्तालमूलीच ॥ ६०
भागः सूरण तुल्या दातव्योवृद्धदारुकस्यापि ।
भृगैले समीर चांश सर्वाण्येकत्र संचूर्ण्य ॥ ६१॥
द्विगुणेन गुडेन युतः सेव्योऽयं मोदकः प्रकामघनैः
गुरु वृष्य भोज्य रहितैष्वितरेषु पद्रवं कुर्य्यात् ॥ ६२
भस्मक मनेन जनितं पूर्व मगस्त्यस्य योगराजेन
भीमस्य मारुते रपितेन महाशनौ जातौ ॥६३॥
अग्नि बल वृद्धि हेतुना केवलसूरणो महावीर्य्य।
प्रभवति शस्त्र क्षाराग्निभि र्विनाप्यर्शसामेषः ॥६४
श्वयथु श्लीपद जिद्ग्रहणींच तथा कफानिलनाम्
नाशयति वलि पलितं मेधां कुरुते वृषत्वंच ॥६५
हिक्कां सश्वासं सराजयक्ष्म प्रमेहांश्च ।
प्लीहानं वा ग्रहण्या मेनद्रसायनं पुंसाम् ॥६६।

जिमीकन्द १६ भाग चीते की जड़ ८ भाग सौंठ ४ भाग मिर्च २ भाग त्रिफला, पीपल, पीपलामूल, तालीस पत्र, शुद्ध भिलावा, वाय विडंग, प्रत्येक ४-४ भाग मूसली ८ भाग, विधारा १६ भाग, दालचीनी २ भाग, छोटी इलायची २ भाग सबका कपड़ छन चूर्ण, चूर्ण से द्विगुण गुड़ मिलाकर पाक करें (आधे तोले से १ तोला तक) मोदक तय्यार कर इनके सेवन के उपरांत पौष्टिक खाद्य, दुग्ध, घृतादि अधिक प्रमाण में सेवन करने चाहिए। इस योग के सेवन करने से अगस्त्य को भस्मक रोग होगया था, भीम और हनुमान सदा के लिए बहु भोजी, बलवान बन गये थे, यह अग्नि वृद्धि करने केलिए प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त शस्त्रोपचार क्षार, अग्निदाह के बिना भी अर्श नाश करने में श्रेष्ठ है। शोथ, श्लीपद, ग्रहणी, झुर्रियां पलित, हिचकी, दमा, खांसी, दिक, प्रमेह तिल्ली को नष्ट करता है, बुद्धि, स्मृति, मेधा, मैथुन शक्तिवर्धक है ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६ ॥

सूरण मोदकम्

चित्रकस्य पलश्चैव द्विपलं सूरणस्य च ।
पलार्धं नागरस्यापि मरिचं कोल मात्रकम् ॥६७
भल्लातकं कणामूलं विडंगं त्रिफला कणा ।
तालीश सहितान्सर्वान् अक्षमात्रान् प्रयोजयेत् ६८
द्वे पले वृद्ध दारस्य तालमूल्याः पलं भवेत् ।
त्वगेला मारिचांशं च सर्वानेकत्र चूर्णयेत् ॥ ६९
गुडेन मर्दयित्वा तु द्विगुणेनेह बुद्धिमान ।
मोदकः सूरणोनाम अक्षमात्रा प्रमाणतः ॥ ७०
उपयुक्तो निहन्त्याशु गुदकीलान संशयम् ।
अग्नि बृद्धिकरः पुसां सेव्यमानो महागुणः ॥ ७१

चीते की जड़ ४ तो० जमीकन्द ८ तो० सौंठ २ तो० मिर्च ८ मा० शुद्ध भिलावा, पीपलामूल, वायविडंग, त्रिफला, पीपल, तालीस पत्र प्रत्येक ६-६ मा० विधारा ८ तो० स्याह मूसली ४ तो० दारचीनी, इलायची छोटी ८-८ माशा सबका कपड़छन चूर्ण, चूर्ण से द्विगुण गुड़ मिलाकर पाक करें और १ तो० से ६ मा० तक के मोदक बनाले इनको ६-६ मा० सेवनकरने से अग्नि की वृद्धि, बवासीर का नाश होता है और बल वीर्य बर्द्धक है। ६७, ६८, ६९, ७०, ७१।

रस-सार (गोविन्दाचार्य-कृत) प्रत्येक पटल का प्रारम्भिक-मूल भाग

१ पटलः—

अलोक्य सर्व शास्त्राणि अनुभूय यथास्थितिः ।
सारात्सारं समुद्धृत्य संक्षेपा दर्थगौरवात् ॥ १
रससारं प्रवक्ष्यामि नानासिद्धैश्च भाषितम् ।

३ पटल :—

रसोपरस शुद्धि श्च लोहशुद्धि स्तथैव च ।
सत्वाकृष्टि द्रावणं च स्थिरीकरणमेव च ॥१ ॥
द्रुतिपातश्च सर्वेषां गोल्कृष्टिः सुशोभना
रत्नानां लक्षणं सम्यक् द्रावणं च विशेषतः॥२
भेदनं सर्वरत्नानां रत्नमेलापकं तथा ।

रस उपरस लोहादि शोधन सत्वपातन तथा उस का द्रावण (प्रत्येक धातु के सत्व को पारे के समान तरल बनाना) पारद को अग्नि स्थायी करना द्रुतिपात—हर एक धातु को तरल करना, द्रुति—तरल को रंगना (पारा तथा अन्यान्य धातु तरल को रंगना) रत्नों के लक्षण, रत्न (बिल्लौर हीरा मोती माणिक पन्ना आदि) को तरल करना रत्नोंका भेदन रत्न-तरल अन्य धातु तरल को पारद आदि में मिश्रित करना, रंगना आदि२ तृतीय पटल में व्याख्यान है। १,२.

७ पटल :—

अनेनैव प्रकर्तव्यं स्थिरत्वं गन्धकस्य च ।
अथवा गन्धकं शुद्धं नरसार समन्वितम् ॥ १॥
रक्त वर्गेण सम्भाव्य चक्रयंत्रे स्थिरी भवेत् ।

इस तरह गन्धक को स्थायी बनाना चाहिए अथवा शुद्ध गंधक में नौसादर मिला कर रक्तवर्ग—(मूल लेखक ने इस वर्ग की औषधियाँ आगे गिनादी हैं) के स्वरस में भावना देकर चक्रयंत्र—(इसका वर्णन भी यंत्र प्रकरण किया जा चुका है)द्वारा स्थायी करना चाहिए गन्धक उड़ने वाली धातु है अत एव इस की भस्म नहीं बनाई जाती परन्तु मूल लेखक ने इस को स्थायी करने का सरल साधन बतलाया है। १,

८ पटल :—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्रुतिपातं सुशोभनम् ।
रसोपरस सत्वानां संक्षेपा ल्लोहजं तथा ॥ १ ॥

इस पटल में—रस उपरस लोह आदि के पूर्व विधान द्वारा निर्मित सतों का तरल वर्णन है। १,

९ पटल :—

निम्बपत्ररसं ग्राह्यं मध्ये रत्नानि मोचयेत् ।
शोषयेद्रवितापेन द्रवो विंशद्दिने भवेत् ॥ १ ॥

नीम की पत्तियों के स्वरस में पूर्व-विधि से शोधित रत्नों को भिगोवें और प्रति दिन धूप में सुखाया करें इस तरह २० दिन तक करनेसे रत्न तरल हो जाते हैं।

इस तरह पारद संस्कार, सत्त्व-पातन, धातु-तरल विधान, पारद-रंजन, तरल-रंजन, आदि विषयों पर मूल लेखक ने २५ पटलों का वर्णन किया है हर एक पटल में ४० से ९० तक श्लोक हैं।

इन चन्द श्लोकों से पुस्तक के वर्णित-विषय का अंदाजा लगाया जा सकता है हर एक पटल में हर विषय का खुलासा सरल व्याख्यान है तिस पर सरल भाषा टीका हो जाने से संस्कृतज्ञ असंस्कृतज्ञ सभी समान रूपसे लाभ उठा सकेंगे—हमने स्वयं इस ग्रंथ के अनुसार अनेक धातु तरल बनाकर देखे हैं—स्वर्ण तरल के लिए गन्धक को स्थायी कर रहे हैं।

इस ग्रन्थ की प्रति लिपि जो कि हमारे पास है विक्रम संवत् १७४६ नेवाजिराम कायस्थ द्वारा की गई है यदि आप सको शीघ्र से शीघ्र हिन्दी व्याख्या सहित देखना चाहें तो-"अनिवार्य निवेदन" सूचना के कूपन को भर कर भेजदें और अपने इष्ट मित्रों से भी भिजवावें, ५०० पत्र आते ही हम इसका प्रकाशन प्रारम्भ कर देंगे और लगभग दो मासों के अन्दर ही प्रकाशित कर सेवामें वी.पी. द्वारा भेज देंगे। विनीत—अनुवादक

लोकमणि मिश्र

गयादत्त प्रेस, क्लोथ मारकेट देहली में छपा।